माननीय प० जवाहरलालजी नेहरू

देश और आदर्शों के लिए मर-मिटने वाले

भारतीय इतिहास के अद्वितीय वीर

पृथ्वीराज

की अमर कीर्त्तिगाथा

और

पुरानी हिन्दी का एक सब से उज्ज्वल रत्न

पृथ्वीराज रासउ

अपने प्रस्तुत वैज्ञानिक सस्करण के रूप में

नव भारत के निर्माता

और

उसके सर्वोच्च आदर्शों के प्रतीक

माननीय पं० जवाहरलालजी नेहरू

को

समस्त श्रद्धा के साथ समर्पित है

—माताप्रसाद गुप्त

विषयानुक्रमणिका

विषय

प्रस्तावना

१९५३ की बात है। पंजाब यूनीवर्सिटी में पी एच० डी० के लिए 'पृथ्वीराज रासो की लघु वाचना' पर वहाँ के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष स्वर्गीय डॉ० बनारसीदास जैन की प्रेरणा से और उनके निर्देशन में उनके एक शोध-छात्र श्री वेणीप्रसाद शर्मा ने पी एच० डी० के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया। किन्तु अकस्मात् १९५४ के अप्रैल में डॉ० जैन का देहावसान हो गया। तदनन्तर पंजाब यूनीवर्सिटी ने मुझसे अनुरोध किया कि श्री शर्मा का निर्देशन मैं करूँ। स्वर्गीय डॉ० जैन मुझ पर बड़ा स्नेह रखते थे अतः मैंने उसके लिए स्वीकृति भेज दी। लघु वाचना की प्रतियाँ बीकानेर में प्राप्त थी। उन्हें मँगाकर श्री शर्मा ने काम आरम्भ कर दिया। उस समय रचना की दो और वाचनाएँ प्राप्त हो चुकी थी जो उस वाचना से भी छोटी थी जिस पर श्री शर्मा कार्य कर रहे थे, और इन सब के पूर्व रचना की मध्य और बृहत् वाचनाओं के कई छोटे-बड़े रूप प्राप्त हो चुके थे। इसलिए मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि लघु वाचना के पाठ-निर्णय मात्र से समस्या का हल नहीं होगा, रचना का प्रामाणिक पाठ उसकी समस्त वाचनाओं की सहायता से ही निर्धारित हो सकेगा। किन्तु यह कार्य श्री शर्मा के न बस का ही था और न उनके कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत आता था, इसलिए मैंने स्वयं इस पर कार्य करने का संकल्प किया। यह संकल्प निरन्तर लगे रहने पर पाँच वर्षों में पूरा हुआ। गत चार वर्षों से रचना प्रेस में रही है, और अब वह पाठकों के सम्मुख आ रही है, यह देखकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। श्री शर्मा का कार्य १९५७-५८ में पूरा हो गया था, और पंजाब यूनीवर्सिटी से उन्हें पी-एच० डी० की उपाधि उक्त कार्य पर प्राप्त हो गई थी। अब उनका कार्य विश्वभारती प्रकाशन, चण्डीगढ़ से प्रकाशित भी हो गया है यह समस्त रासो-प्रेमियों के लिए हर्ष का विषय होगा।

'पृथ्वीराज रासो' के सम्पादन की समस्याएँ अत्यन्त जटिल थी। पाठालोचन के मेरे दीर्घकालीन अनुभव में हिन्दी की एक भी रचना ऐसी नहीं आई है जिसका पाठ निर्धारण इतना उलझा हुआ हो। किंतु मुझे उसके इसी उलझाव ने एक ऐसी नई दृष्टि प्रदान की है जो मुझे पाठालोचन के अपने शेष समस्त कार्य से भी नहीं प्राप्त हो सकी थी। इसलिए मुझे इस कार्य के सम्पन्न होने में और अधिक प्रसन्नता है।

इस महान् यज्ञ में सबसे बड़ा सहयोग मुझे प्रति-दाताओं से प्राप्त हुआ है, और उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं। मैं डॉ० नामवर सिंह तथा मुनि जिनविजय जी का कृतज्ञ हूँ जिनसे मुझे लघुतम वाचना की सामग्री प्राप्त हुई, मैं उपर्युक्त डॉ० वेणीप्रसाद शर्मा और श्री अगरचन्द नाहटा का कृतज्ञ हूँ जिनसे मुझे लघु वाचना की प्रतियाँ प्राप्त हुईं, मैं प्रयाग के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिकारियों का कृतज्ञ हूँ जिनसे मुझे मध्य वाचना की प्रतिलिपि प्राप्त हुई, और मैं भाण्डारकर ओरिएंटल इंस्टीट्यूट, पूना, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई, नेशनल गैलेरी आव् मॉडर्न आर्ट, नई दिल्ली तथा इलाहाबाद यूनीवर्सिटी लाइब्रेरी के अधिकारियों का कृतज्ञ हूँ, जिनसे मुझे रचना की बृहत् वाचना की सामग्री प्राप्त हुई। इन महानुभावों और संस्थाओं के सहयोग के अभाव में यह यज्ञ किसी प्रकार भी पूरा नहीं हो सकता था।

इस संस्करण की एक पाण्डुलिपि तैयार करने मे पाठालोचन विषय मे इलाहाबाद यूनीवर्सिटी के मेरे तीन पूर्ववर्ती छात्रो श्री कन्हैया सिंह, श्री हरिमोहन शर्मा, और श्री रामपाल उपाध्याय से मुझे सहायता प्राप्त हुई, इसलिए मैं उनका भी कृतज्ञ हूँ।

प्रकाशकों ने रचना को अपनी विवशताओ के कारण कुछ विलंब में मुद्रित और प्रकाशित करते हुए भी छपाई की दृष्टि से ऐसी दुर्गम और दुरूह कृति को अधिक से अधिक शुद्ध रूप मे प्रकाशित करने का प्रयास किया है, इसलिए वे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं। फिर भी, पाठको को कुछ न कुछ अशुद्धियाँ मिलेंगी, अत संस्करण के अन्त मे एक शुद्धि-पत्र दिया जा रहा है, जिसके अनुसार वे यथास्थान अपनी प्रतियो मे संशोधन करने का कष्ट करेंगे।

किन्तु सबसे अधिक मैं कृतज्ञ हूँ स्वतन्त्र भारत के निर्माता माननीय प० जवाहरलाल जी नेहरू के प्रति, जिन्होने हिन्दी के आदिकाल के इस सर्व श्रेष्ठ काव्य-पुष्प की मेरी भेंट को ग्रहण करना स्वीकार किया। उनकी इस स्नेहपूर्ण कृपा के लिए मैं आजीवन आभारी रहूँगा।

दो एक बातें और। भूमिका मे रचना का नाम 'पृथ्वीराज रासो' मिलेगा और रचना मे 'पृथ्वीराज रासउ'। रचना का नाम कृति के केवल अतिम छन्द मे आया है और वहाँ पर लघुतम वाचना की दो प्रतियो मे पाठ क्रमश 'रासु' और 'रासउ' है, तथा शेष प्रतियो मे 'रासो' है। 'रासु' जिस प्रति मे है, उसमे उ की मात्रा का प्रयोग—जैसा आप भूमिका मे देखेंगे—अउ, ओ, और औ के लिए भी हुआ है। लघुतम वाचना की दूसरी प्रति में पाठ 'रासउ' है, इसलिए उक्त 'रासु' के 'रासउ' होने की ही सभावना सबसे अधिक है। भूमिका मे कृति के नाम मे 'रासो' का प्रयोग केवल इसके अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित होने के कारण किया गया है। शेष ग्रथ मे वह सर्वत्र 'रासउ' है। पाठक कृपया 'रासो' को भी 'रासउ' ही पढेंगे।

रचना बारह सर्गों में विभाजित मिलेगी। सर्ग-विभाजन का आधार मैंने यथास्थान भूमिका मे स्पष्ट कर दिया है। किन्तु सर्गों का नामकरण मेरा किया हुआ है, और इसलिए कल्पित कहा जा सकता है। लघुतम वाचना मे न सर्गों का विभाजन है और न उनका नामकरण। शेष वाचनाओ मे उनके जो नाम मिलते हैं उनमे परस्पर साम्य बहुत कम है, और विषय-वस्तु को देखते हुए वे *प्रायः* अनुपयुक्त भी हैं, इसलिए इन नए नामो की कल्पना करनी पड़ी है। भविष्य मे यदि संभव हुआ तो कुछ अधिक ठोस आधारो पर सर्गों का नामकरण किया जा सकेगा।

हिन्दी विभाग,)
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।
११.५.६३ ई०

माताप्रसाद गुप्त

भूमिका

१. पृथ्वीराज रासो
की
प्रयुक्त प्रतियाँ और उनका पाठ

'पृथ्वीराज रासो' की प्राप्त प्रतियों की संख्या सौ से ऊपर है। इनकी एक अच्छी सूची डॉ॰ मोतीलाल मेनारिया के 'राजस्थानी पिंगल साहित्य' में दी हुई है।[1] उस सूची में ६० के लगभग प्रतियों के प्राप्ति-स्थान दिए हुए हैं। इनके अतिरिक्त नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के वार्षिक और त्रैवार्षिक हिन्दी हस्त लिखित पुस्तकों के खोज-विवरणों, 'राजस्थान में हिन्दी हस्त लिखित ग्रन्थों की खोज' के विभिन्न भागों तथा विभिन्न पुस्तकालयों और व्यक्तियों के संग्रहों से जिन प्रतियों की सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं, उनकी संख्या भी ४०-४५ से कम नहीं है। किन्तु ये अलग अलग आकार-प्रकार में उन प्रतियों में से किसी न किसी प्रति से मिलती जुलती हैं जिनका उपयोग इस संस्करण के प्रस्तुत करने में किया गया है, और ये प्रयुक्त प्रतियाँ अपने आकार-प्रकार की प्रतियों में अनेक दृष्टियों से प्रायः सबसे अधिक महत्व की भी हैं, इसलिए नीचे इन्हीं का विवरण दिया जा रहा है।

(१) धा० : यह प्रति धारणोज, तालुका पाटन, गुजरात में बारोट वीराजी पंथूजी के पास बताई जाती है। मैंने १९५३ के अन्त में उन्हें पत्र लिखा था, तो उन्होंने लिखा था कि उनके पास एक बहुत पुरानी पुस्तक है जो संस्कृत में लिखी हुई है, और जिसे वे पढ नहीं पाते हैं किंतु उनके स्वर्गीय पिता पथूवजा जी कहा करते थे कि वह पोथी 'पृथ्वीराज रासो' की है। उन्होंने मुझे पुस्तक दिखाने के लिए तत्परता भी प्रकट की, किन्तु जो समय उन्होंने दिया था वह मुझे अनुकूल नहीं पड़ रहा था, और उनके पत्र से यह भी निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हो रहा था कि जिस पोथी के बारे में उन्होंने लिखा था वह 'पृथ्वीराज रासो' की ही थी, इसलिए मैंने उन्हें लिखा कि यदि वे कुछ दिनों के लिए वह पोथी प्रयाग विश्वविद्यालय के पुस्तकालय को भेज सकें तो अच्छा हो। इसका उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। इसके बाद भी मैंने उन्हें तीन पत्र डाले, और स्पष्ट लिखा कि यदि वे उसे विश्वविद्यालय के पुस्तकालय को न भेज सकते हों, तो मैं स्वतः वहाँ पहुच कर उसे देखूँ, किन्तु फिर भी किसी पत्र का उत्तर उनसे न मिला। एक अनिश्चित वस्तु के लिए गुजरात की यात्रा और वह भी उसके एक देहात की, व्यावहारिक न समझ पड़ी; अतः मूल प्रति का उपयोग मैं नहीं ही कर सका। गुजरात के विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्यापन हो रहा है। वहाँ के विश्वविद्यालय, उनके कोई उत्साही अध्यापक या अन्वेषण-छात्र इस प्रति की फोटोग्राफ प्राप्त कर सकें तो वह बहुत उपयोगी होगा।

इस प्रति का पता कई वर्ष हुए प्रसिद्ध प्राचीन प्रतियों के संग्रहकर्ता मुनि पुण्य विजय जी को लगा था। उन्होंने उसी समय इसकी एक प्रतिलिपि करा ली थी। उनसे यह प्रतिलिपि श्रीअगरचंद नाहटा ने ले ली थी। मूल प्रति के न मिलने पर मैंने मुनिजी को लिखा कि वे इस कार्य के लिए मुझे

[1] मोतीलाल मेनारिया : राजस्थानी पिंगल साहित्य, पृ० ४४।

कुछ समय के लिए उक्त प्रतिलिपि भिजवा दें, और मुनि जी ने नाहटाजी को इसलिए लिखा भी, किन्तु नाहटाजी ने सूचित किया कि उक्त प्रतिलिपि श्री नरोत्तमदास स्वामी के पास थी, और गुम हो गई; उसकी एक प्रतिलिपि स्वामीजी के पास अवश्य थी, जो उन्हीं की की हुई थी। किन्तु स्वामी जी ग्रंथ के 'लघुतम रूपान्तर' का संपादन कर रहे थे, इसलिए वे उसे देने में असमर्थ रहे।

कुछ समय पीछे मुझे यह ज्ञात हुआ कि स्वामी जी के द्वारा की हुई प्रतिलिपि की भी एक प्रतिलिपि डॉ० नामवरसिंह ने अपने 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' नामक खोज-प्रबंध के लिए की थी। मेरे अनुरोध पर इस कार्य के लिए उन्होंने उसे कृपापूर्वक मुझे दे दिया, जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। सं० १६६७ को लिखी प्रति की तीसरी पीढ़ी की यह आधुनिक प्रतिलिपि ही उक्त प्रति और उसकी प्रथम और द्वितीय प्रतिलिपियों के अभाव में उपयोग में आ सकी है।

मुनिजी के द्वारा कराई गई प्रतिलिपि और उसकी अपनी प्रतिलिपि का परिचय देते हुए श्री नरोत्तमदास स्वामी ने लिखा है, "प्रतिलिपिकार ने बड़ी सावधानी से प्रतिलिपि तैयार की थी, पर 'रासो' की भाषा और भाषा शैली से परिचित न होने के कारण अनेक अशुद्धियाँ रह गयीं। मूल प्रति का पाठ भी संभवतः शुद्ध नहीं था, ऐसा प्रतीत होता है। फिर भी प्रति बड़ी महत्वपूर्ण थी। इस प्रतिलिपि पर से मैंने एक संशोधित प्रतिलिपि बहुत वर्षों पूर्व तैयार की थी। संशोधन प्रधानतया शब्दों की वर्त्तनी (Spelling) से ही सम्बन्ध रखने वाले थे जो छन्दानुरोध के कारण किए गए थे।"[1] इससे यह प्रकट है कि स्वामी जी के द्वारा की हुई प्रतिलिपि 'संशोधित प्रतिलिपि' थी और संशोधन 'प्रधानतया' शब्दों की वर्त्तनी के सम्बन्ध के किए गए थे। किन्तु स्वामी जी प्राचीन हिन्दी और राजस्थानी साहित्य के मान्य विद्वान हैं, इसलिए ये संशोधन पर्याप्त सावधानी से किए गए होंगे, यह हमें मान लेना चाहिए।

डॉ० नामवरसिंह के द्वारा की हुई इस प्रति-प्रतिलिपि की प्रतिलिपि अवश्य ही सावधानी से ही हुई है—उन्हें 'रासो' की भाषा पर कार्य करना था। किन्तु ऐसा लगता है कि उक्त आदर्श के कुछ उल्लेख, जो पाठ-निर्धारण की दृष्टि से महत्व के थे, उनके कार्य की दृष्टि से महत्व के न होने के कारण अथवा अनजाने ही छूट गए। संयोग से मुझे स्वामी जी की प्रतिलिपि भारतीय हिन्दी परिषद् के जयपुर अधिवेशन के अवसर पर १९५४ के दिसम्बर में हस्त लिखित ग्रन्थों की प्रदर्शिनी में उलट पुलट कर देखने को मिल गई थी। उस समय मैंने अपनी दृष्टि से उसकी एकाध महत्व की बातें लिख भी ली थीं। उन बातों के सम्बन्ध में डॉ० नामवरसिंह की प्रतिलिपि का मिलान करने पर एक दो स्थलों पर अन्तर दिखाई पड़ा। स्वामी जी की प्रतिलिपि में निम्नलिखित दो दोहों के बीच में "तथा अउर पाठान्तर" शब्दावली मुझे मिली थी, जो डॉ० नामवर सिंह की उस प्रतिलिपि में नहीं मिली :—

> सुनि वर सुन्दर उभय हुव स्वेद कंप सुर भंग।
> मनु कमलिनि कल सम हरि अग्नित करने तन रंग॥
> सुनि रव प्रिय मिथिराज रउ उभद् राम तिन अंग।
> सेद कंप सुर भंग भयउ सपत भाइ तिहि अंग॥[2]

डॉ० सिंह की प्रतिलिपि में बाद वाला दोहा चौकोर कोष्ठकों के अन्तर्गत रक्खा हुआ है और उसकी क्रम संख्या भी नहीं दी हुई है, किन्तु पाठालोचक के लिए 'तथा अउर पाठांतर' की शब्दावली स्वतन्त्र महत्व की थी, जो प्रतिलिपि में छोड़ दी गई है। इसी प्रकार स्वामी जी की प्रतिलिपि में निम्नलिखित उल्लेख पुष्पिका के रूप में मिलते हैं :—

[1] राजस्थान भारती, अप्रैल १९५४, 'पृथ्वीराज रासो का लघुतम रूपान्तर', पृ० ३।
[2] नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण, ६१. ११५९।

" इति श्री कवि भट्ट चंदवरदायी कृत राजा श्री प्रिथीराज चहूआण रासउ रसाल संपूर्ण। सं० १६६७ वर्षे शाके १५३२ प्रवर्तमाने आषाढ मासे शुक्ल पक्षे पंचमी तिथौ महाराजाधिराज महाराजा श्री कल्याण मल्ल जी तत्पुत्र राजा श्री भाव जी तत्पुत्र राजा श्री भगवानदास जी पाठनार्थ।

यह रासो की बुक धारणोजग्राम निवासी बारोट पथुवजा की है। और वह धारणोज निवासी सेठ किशोरदास हेमचंद शाह के द्वारा कॉपी करने को प्राप्त हुई है।"

डॉ० सिंह की प्रतिलिपि में केवल प्रथम वाक्य आता है, शेष नहीं।

डॉ० सिंह की प्रतिलिपि के साथ एक और कठिनाई हुई—कन्नौज-प्रयाण तथा कन्नौज-युद्ध सम्बन्धी उसका सम्पूर्ण अंश मुद्रित रूप में ही मुझे प्राप्त हो सका, क्योंकि उस अंश की प्रतिलिपि प्रेस कापी के रूप में प्रेस चली गई थी और अप्राप्त हो गई थी। स्वाभाविक है कि इस मुद्रित अंश में मुद्रण-जनित कुछ पाठ-विकृतियाँ भी आ गई होंगी। किन्तु इन त्रुटियों के होते हुए भी चूँकि डॉ० सिंह ने अपनी ओर से पाठ-संशोधन का कोई प्रयास नहीं किया था इसलिए यह प्रतिलिपि उतनी ही विश्वसनीय थी जितनी सामान्यतः कोई भी हस्तलिखित प्रतिकृति हो सकती थी, इसलिए मूल प्रति तथा उसकी प्रथम और द्वितीय प्रतिलिपियों के अभाव में इसका उपयोग बिना किसी हिचक के किया जा सका है।

इस प्रति के पाठ की विशेषता यह है कि रचना के प्राप्त समस्त पाठों में यह सब से छोटा है, यद्यपि पूर्ण है। इसमें न खण्ड-विभाजन है और न छन्दों की क्रम संख्या दी हुई है—कहीं कहीं वार्ताओं के रूप में वर्णित कथा की सूचना मात्र दे दी गई है। गिनने पर कुल रूपक[१]-संख्या ४२२ ठहरती है। प्रति भी पूर्ण है, यह प्रसन्नता की बात है। इसकी पुष्पिका ऊपर दी दी जा चुकी है।

(२) मो० : यह प्रति प्रसिद्ध जैन विद्वान् मुनि जिनविजय के समक्ष की है। यह 'रासो' के सबसे छोटे पाठ की एक मात्र अन्य प्राप्त प्रति है, और उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी धा० है। इस प्रति के लिए मुनि जी को जब मैंने लिखा, वह श्री अगरचन्द नाहटा के पास थी। कदाचित् प्रति की जीर्णता के ध्यान से नाहटा जी ने मूल प्रति न भेजकर उसकी एक फोटो-स्टेट कापी मुझे भेज दी। इस बहुमूल्य प्रति के उपयोग के लिए मैं मुनि जी का अत्यन्त आभारी हूँ। प्रस्तुत कार्य के लिए इसी फोटो-स्टेट कापी का उपयोग किया गया है। मूल प्रति मैंने १९५६ के जून में डा० दशरथ शर्मा के पास दिल्ली में देखी थी। फोटो-स्टेट होने के कारण यह कॉपी प्रति की एक वास्तविक प्रतिकृति है।

इस प्रति के प्रारम्भ के दो पन्ने नहीं हैं, शेष सभी हैं। इसमें भी खण्ड-विभाजन और छन्दों की क्रम-संख्या नहीं है। इसमें वार्ताओं के रूप में इस प्रकार के संकेत भी प्रायः वहाँ दिए हुए हैं जैसे धा० में हैं। प्रारम्भ के दो पन्ने न होने के कारण इसकी निश्चित छन्द संख्या कितनी थी, यह नहीं कहा जा सकता है, किन्तु इन त्रुटित दो पत्रों में से प्रथम पृष्ठ रचना के नाम का रहा होगा, जैसा अनिवार्य रूप से मिलता है, और शेष तीन पृष्ठ ही रचना के पाठ के रहे होंगे। तीसरे पन्ने के प्रारम्भ में जो छन्द आता है वह धा० १७ है, जिसका कुछ अंश पूर्ववर्तीय द्वितीय पत्र पर रहा होगा और धा० की तुलना में इसमें ३०—३१ प्रतिशत रूपक अधिक हैं, इसलिए धा० के १६ रूपकों के स्थान पर इसके प्रथम दो पत्रों में २०—२१ रूपक रहे होने चाहिए। फलतः इन निकले हुए दो पत्रों में २० छन्द मान लेने पर प्रति की कुल रूपक संख्या ५५२ ठहरती है। यह प्रति अत्यन्त सुलिखित है और उपर्युक्त दो पत्रों के अतिरिक्त पूर्णतः सुरक्षित भी है। इसका आकार ६'२५"×३" और इसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

[१] ना० प्र० स० संस्करण में प्रारम्भ में रूपक और छन्द-संख्या दोनों दी गई है, किन्तु पीछे केवल छन्द-संख्या दी गई है। छन्द-संख्या छन्द के एक वृत्त में जितने चरण होने चाहिए, उनके आधार पर दी जाती है; किन्तु कुछ छन्द मालाओं के रूप में भी चलते हैं, यथा भुजंगी, पद्धडी आदि। ऐसे छन्दों के सम्बन्ध में पूरी माला की गणना एक रूपक के रूप में की जाती है। पुरानी प्रतियों में सामान्यतः रूपक गणना ही मिलती है।

"इति श्री कविचन्द विरचिते प्रथीराज रासुं संपूर्ण। पंडित श्री दान कुशल गणि। गणि श्री राजकुशल। गणि श्री देव कुशल। गणि धर्म कुशल। मुनि भाव कुशल लपितं। मुनि उदय कुशल। मुनि मान कुशल। सं० १६९७ वर्षे पौष सुदि अष्टम्यां तिथौ गुरु वासरे मोहनपूरे।"

यह एक काफ़ी सुरक्षित पाठ-परम्परा की प्रति लगती है, क्योंकि इसमें पाठ-त्रुटियाँ बहुत कम हैं, और अनेक स्थलों पर एक मात्र इसी में ऐसा पाठ मिलता है जो बहिरंग और अंतरंग सभी सम्भावनाओं की दृष्टि से मान्य हो सकता है। फिर भी श्री नरोत्तमदास स्वामी ने कहा है कि इसका "पाठ बहुत ही अशुद्ध और भ्रष्ट है।"[1] उन्होंने यह धारणा इस प्रति के सम्बन्ध में कैसे बनाई है, यह उन्होंने नहीं लिखा है। किन्तु इस प्रकार की धारणा के दो कारण संभव प्रतीत होते हैं, एक तो यह कि इसमें वर्त्तनी-विषयक कुछ ऐसी विशिष्ट प्रवृत्तियाँ मिलती हैं जिनके कारण शब्दावली और भाषा का रूप विकृत हुआ लगता है, दूसरे यह कि इसका पाठ अनेक स्थलों पर अपनी सुरक्षित प्राचीनता के कारण दुर्बोध हो गया है, और उन स्थलों पर अन्य प्रतियों में बाद का प्रक्षिप्त किन्तु सुबोध पाठ मिलता है। कहीं कहीं पर ये दोनों कारण एक साथ इकट्ठा होकर पाठक को और भी अधिक उलझा देते हैं।

वर्त्तनी सम्बन्धी इसकी सबसे अधिक उलझन में डालने वाली प्रवृत्तियाँ आवश्यक उदाहरणों के साथ निम्नलिखित हैं:—

[१] इसमें 'इ' की मात्रा का अपना सामान्य प्रयोग तो है ही, 'अइ' के लिए भी उसका प्रयोग प्रायः हुआ है, यथाः

गुन तेज प्रताप ति वर्णि 'कहि'। दिन पंच प्रजंत न अंत लहइ। (मो० ९५.५१-५२)
महा बेद नदि चवि अछप युधिष्ठिर 'बोलि'।
जु सायर (सागर) जल 'तजि' मेर मरजादह छोडइ। (मो० २२४.३-४)
रहि गय उर झंपेन उरह मि (=मइ) अवर न सुझइ।
सुछ न जीवइ कोइ मोहि परमपर 'सूझि'। (मो० ५४५.३-४)
किरणाटी राणी 'कि' (=कइ) आवासि राजा विदा मांगन गयु। (मो० १२२ अ)
'पछि' (=पछइ) राजा परमारि आवासि विदा मांगन गयु। (मो० १२३ अ)
'पछि' (=पछइ) राजा परमारि सुपुली विदा मांगन गयु। (मो० १२४ अ)
'पछि' (=पछइ) राजा वाघेली कै अवास विदा मांगन गयु। (मो० १२५ अ)

तुलना कीजिये:—

'पछइ' राजा कछवाही 'कइ' आवासि विदा मांगन गयु। (मो० १२६ अ)
मनु अल्हन रहीम पहार 'पछि' (=पच्छइ) सूटि मसाह। (मो० २२६.२)
तिन 'मि' (=मइ) दसि 'सि' (=सइ) अरि दलन 'उप्पारि' (उप्पारइ) गज दंत। (मो० ४३८.२)
तिन 'मि' (=मइ) कवि गन पंच सिहिं (=सइहिं) साप माप दिठउ काज।
चिन 'मि' (=मइ) दिवगति देवन समह तिम महि पुहु प्रथीराज। (मो० ४३९)
जे कछू साध मन 'मि' (=मइ) गइ सब इंछा रस दीन्ह। (मो० ५१३.२)
'असमि' (=असमइ) सोइ मग्गु सुकवि नृपति 'विचार' (=विचारइ) सब। (मो० ५३०.२)

इस प्रवृत्ति की पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि कहीं कहीं 'इ' की मात्रा को 'अइ' के रूप में पढ़ा गया है:—

तम 'सरवगइ' (=सरवगि) सु कवि राज गुर राज सम। (मो० ४०२.३)

[२] 'इ' की मात्रा का प्रयोग पुनः 'ऐ' के लिए भी हुआ मिलता है, यथाः ऊपर मो० १२२ अ, १२३ अ, १२४ अ, तथा १२५ अ के उद्धरणों में आए हुए 'कि' की तुलना कीजिए:—

[1] 'पृथ्वीराज रासो का लघुतम रूपान्तर', राजस्थान भारती, अप्रैल १९५४, पृ० १।

पछइ राजा भटिआनी कै आवासि बिदा मांगन गयु ।   (मो० १२७ अ)
भरी भोज 'भाजि' (=भाजइ) नही सारि मागि ।
भरि मल मानै नही छोह लागै ।   (मो० १२७.१३-२०)
सुनि त पंग चहुआन कुं मुष जंपि इह 'विन' (=वैन) ।
बोल सूर सामंत सब कहु पच्छु सेन (=सेन) ।   (मो० २२९)
सल बिन भट सुभट भो करि अपहि भुज 'विन' (=वैन) ।
परमतत्व सूक्षि (=सूक्षइ) नृपति मगि मगि फरमांनन (<फरमानेन) ।   (मो० ५४७)
'ति' (=तै) रापु हींदुआन गज गोरी गाहंतु ।
'तं' रापु जालोर चपि चालुक चाहतु ।
'ति' रापु, पगुरु भीम भटी 'दि' (=दै) मशु ।
'सि' रापु रणथम राय जादव 'सि' (=सइ) हिथु ।   (मो० ३०८.१-४)
भये तोमर मतिहीन करीय किल्ली 'ति' (=तै) ढिली ।   (मो० ३३.४)
'ति' (=तै) जीतु गजंनु गंजि अपार हमीरह ।
'ति' (=तै) जीतु चालुक विहरि सनाह सरीरह ।
'ति' (=तै) पहुपंग सू गहु इदु जिम गहि सू रहह ।
'ति' (=तै) गोरीय दल दहु धारि कठ जिन मन दहह ।
तुव तुंग तेग तव उचमन ति (=तै) सो पोशन मिलयु ।   (मो० ४२४.१-५)
भरे देव दानव जिम 'विर' (वैर) चीतु ।   (मो० ४२४.४१)

इस प्रवृत्ति की पुष्टि भी इस प्रकार होती है कि कहीं-कहीं पर 'इ' की मात्रा को 'ऐ' के रूप में पढा गया है, यथा :—

विद्वजन 'बोलै' (=पोलि) दिन धरहु आज ।   (मो० ४०.५४)

[३] कहीं-कहीं 'इ' की मात्रा का प्रयोग 'अय' के लिए भी हुआ मिलता है, यथा —

'किमास'	(मो० ७३.४)
वही	(मो० ७७.१)
वही	(मो० ८२.२)
वही	(मो० ९९.२)
वही	(मो० १०१.२)
वही	(मो० १०५.१)
वही	(मो० १०८.३)
वही	(मो० ११६.१)
वही	(मो० १२१.१)
वही	(मो० ५४८.३)

तुलना कीजिए :—

सामंत्री 'कयमास' कांम अधा देवीविहदा गति ।   (मो० ७४.४)
हि (=हइ) 'कयमास' कहू कोइ जानहुं ।   (मो० ९८.४)

[४] 'इ' की मात्रा का प्रयोग 'ए' की मात्रा के लिए भी हुआ है, यथा:—

दुहु राय रपत ति रत 'उठि' ।
बिहुरे जन पापस अभ उठे ।   (मो० २१४.५-६)
तीर्थ देह दिपि बिरपि ससाने ।

जिते मोह मज्जा लगये 'आसमानि'। (मो० ४९८.३५-३६)
दाकुंने मरंने जनंने विहाने।
चजे दहुं दुंमिदे विभू 'मनि'। (मो० ४९८.३९-४०)

इस प्रवृत्ति की पुष्टि भी कहीं-कहीं 'इ' की मात्रा के 'ए' की मात्रा के रूप में पढ़े गए होने से होती है, यथा :—

विनि गंडु गुप अर्पनिसा सम दासी 'सुरिआते' (सुरिआति)।
देव धरइ जल घन अनिल कहिग चंद कवि प्रात॥ (मो० ८७)
पहिचानु जयचंद इहत ढिल्लीसुर पेपे।
महिन चंद अनुहारि दुसह दारुण तब दिपे। (मो० २२१.१-२)
गहीय चंदु रह गजने जाहां सजन जु 'नरेंद'।
कवहुं नयन निरपहुं मनहुं रवि अरविंद। (मो० ४७४)

[५] 'इयइ' या 'इये' के स्थान पर प्रायः 'ईइ' लिखा गया है यथा :—

सोइ एको बान संभरि धनी बीड बान नह 'संधीइ'।
धरिआर एक लग मोगरीअ एक बार नृप हुकीयें। (मो० ५४४.५-६)
इसं बोल दिहि कलि अंतरि देहि स्वामि 'पारथीइ' (=पारथियइ)।
अरि असीइ रूप को अंगमि परणि राय 'सारथीइ' (=सारथियइ)। (३०५.५-६)
मंगल वार हि मरन की ते पति सधि तन 'पंडीइ' (=पंडियइ)।
जेत चढि सुध कमधज सु मरन सब सुप 'मंडीइ' (=मंडियइ)। (मो० ३०९.५-६)
छिनु इक दाहि 'विलंबीइ' (विलंबियइ) कवि न करि मनु मंडु। (मो० ४८८.२)
सह सहाव दर 'दिपीइ' (=दिपियइ) सु कहु भूमि पर मिल। (मो० ४७९.२)
सीरताज साहि 'सोभीइ' (=सोभियइ) सुदेसि। (मो० ४९२.१७)
'सुनीइ' (=सुनियइ) पुन्य सम मत्र राज। (मो० ५९.५)

[६] 'इयउ' के स्थान पर प्रायः 'ईउ' लिखा मिलता है :—

इम जंपि चंद 'विरदीउ' (विरदियउ) सु प्रथीराज उनिहारि एहि। (मो० १८९-६; १९०.६)
इम जंपि चंद विरदीउ (=विरदियउ) पट त कोस चहुआंन गयु। (मो० ३३५.६)
इम जंपि चंद 'विरदीउ' (=विरदियउ) दस कोस चहुआंन गउ। (मो० ३४३.७)
जिम सेत धज 'साजीउ' (=साजियउ) पथ। (मो० ४९२.२४)

[७] 'उ' की मात्रा का प्रयोग प्रायः 'अउ' के लिए हुआ है, यथा :—

तब ही दास कर हथ सुवंध सुनाययुउ।
धानावलि वि दहु बांन दोस रिस 'दाहयु'।
मनहु नागपति पतिन अप 'जगाइयु'। (मो० ८०.२-४)
पायक धनु धर कोटि गनि असी सहस हयनंत जहु।
पंगुर किहि सामंत सुह जु जीवत ग्रहि प्रथीराज 'कुं'। (मो० २३०.५-६)
निकट सुनि सुरतान वांम दिसि-उच हथ 'सु' (सउ)
जस अवसर सतु सचि अछि लूटीय न करीय 'भू' (भउ)। (मो० ५३३.३-४)
'सु' (= सउ) बरस राज सप अंत किन। (मो० २१ की अंतिम अर्द्धाली)
'सु' (= सउ) उपरि 'सु' (= सउ) सहस दीह अगनित लप दइ। (मो० २८३.२)
कन [उ] ज छाडि पहिलि दिवसि 'छु' (= छउ) सिं सात निवडिया। (मो० २९८.६)

[८] कभी-कभी 'उ' की मात्रा से 'ओ' की मात्रा का भी काम लिया गया है :—

निशपख पंच घटीए वोई 'घायु'।
आखेटकसंखे नृप आयो। (मो० ९२.३-४)

[९] और कभी-कभी 'उ' की मात्रा से 'ओ' की मात्रा का काम लिया गया है:—
कवि देवत कवि कु मन 'रत्तु'।
स्याय नयन कन [उ] जि पहुत्तो। (मो० १७६.१-२)

इसकी पुष्टि एकाध स्थान पर 'उ' के स्थान पर 'ओ' की मात्रा मिलने से भी होती है:—
प्रात राउ संप्रापतिग जाहां दर देव 'अमोघ'।
सयन करि दरबार जिहि सात सहस अंस भूप ॥ (मो० २१४)

[१०] इसी प्रकार कहीं कहीं 'उ' वर्ण का प्रयोग 'ओ' के लिए हुआ मिलता है —
सुरंत जू तुज तराजुन्ह गोप।
मनु घन मझि तडितइ 'उप'। (मो० १६१.२७-२८)
गंग जल जिमन धर हकि 'उजे'।
पंगरे राय राठुर फौजे। (मो० २८४.१५-१६)

प्रति की वर्त्तनी-सम्बन्धी ऐसी ही प्रवृत्तियों का यहाँ उल्लेख किया गया है जो हिंदी की प्रतियों में प्रायः नहीं मिलती है, और इसीलिए हिंदी पाठक को ऐसा लग सकता है कि ये प्रतिलिपिकार की अयोग्यता के कारण हैं। किन्तु ऐसा नहीं है। नारायणदास तथा रतरंग रचित 'छिताईवार्त्ता' की भी एकप्रति में, जो इस प्रति के कुछ पूर्व की है, वर्त्तनी-सम्बन्धी ये सारी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं, यद्यपि वे परिमाण में कम हैं;[1] पश्चिमी राजस्थानी तथा गुजराती की इस समय की प्रतियों में तो ये प्रवृत्तियाँ प्रचुरता से पाई जाती हैं।[2] फलतः वर्त्तनी-सम्बन्धी इन प्रवृत्तियों का परिहार करके ही प्रति के पाठ पर विचार करना उचित होगा। और इस प्रकार के परिहार के अनन्तर मो० का पाठ किसी भी प्रति से बुरा नहीं रहता है, वरन् वह प्रायः प्राचीनतर—और इसलिए कभी-कभी दुर्बोध भी—प्रमाणित होता है, यह सम्पादित पाठ और पाठांतरों पर दृष्टि डालने पर स्वतः स्पष्ट हो जायगा।

(३) अ० : अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर में रचना की तीन महत्व की प्रतियाँ हैं, जिन पर पुस्तकालय की संख्याएँ ५९, ६० तथा ६२ पड़ी हुई हैं। तीनों प्रतियाँ एक ही पूर्वज आदर्श की हैं—क्योंकि अनेक स्थलों पर तीनों में समान अशुद्धियाँ हैं, और तीनों में छन्द-भेद के आधार पर छन्दों की क्रम-संख्या देने की पद्धति, छन्दों का क्रम तथा दो-चार अपवादों को छोड़ कर छन्द-संख्या भी वही है। अन्तर तीनों में यह है कि ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियों में त्रुटित स्थल बहुतायत से हैं, जब कि ६० संख्यक प्रति में त्रुटित स्थल इने-गिने हैं। इससे सामान्यतः यह समझा जाता है कि ६० संख्यक प्रति उक्त पूर्वज आदर्श की उस समय की हुई किसी प्रतिलिपि की परम्परा में आती है जब वह अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित थी और ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियाँ उसकी उस समय की हुई किसी प्रतिलिपि की परम्परा में आती हैं जब वह कीटभक्षण से अथवा अन्य किसी प्रकार से स्थान स्थान पर कुछ कट-फट

[1] दे० 'छिताईवार्त्ता', सम्पा० माताप्रसाद गुप्त, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, १९५८।
[2] दे० 'षष्टि शतक प्रकरण', सम्पा० भोगीलाल ज० सांडेसरा, बड़ोदा, १९५४,
'वसन्त विलास फागु', सम्पा० कान्तिलाल व्यास, बंबई, १९४२,
'औक्तिक प्रकरण' [प्राचीन गुजराती गद्य सन्दर्भ], सम्पा० मुनि जिन विजय, अहमदाबाद सं० १९८६,
'सम्यक्त्व कथाओ' ,, ,, ,,
'जिन वल्लभसूरि गुरु गुण वर्णन' ,, ,, ,,
'कान्हड दे प्रबन्ध', सम्पा० कान्तिलाल व्यास, जयपुर, १९५३।

गया था।[1] तथ्य यह है कि ५९ तथा ६२ का सामान्य पूर्वज तथा ६० का पूर्वज लगभग एक ही समय उक्त पूर्वज आदर्श से उतारे गए और उस समय ही वह पूर्वज कोटादि के द्वारा क्षत-विक्षत था। किन्तु पूर्वज आदर्श की उक्त प्रतिलिपि तथा ६० संख्यक प्रति के बीच की किसी पीढ़ी में इन क्षत-विक्षत स्थलों पर त्रुटित पाठ को पूरा करने के लिए काफ़ी मात्रा में प्रक्षेप-क्रिया हुई, जिसके परिणाम-स्वरूप देखने में ६० संख्यक प्रति ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियों की तुलना में अवश्य अधिक त्रुटिहीन लगती है, किन्तु ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियाँ प्रायः प्रक्षेपहीन हैं, जो निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट हो जावेगा, इसीलिए इस शाखा के पाठ के पुनर्निर्माण की दृष्टि से ये ६० की अपेक्षा कहीं अधिक विश्वसनीय और महत्वपूर्ण हैं:—

खण्ड १. मोती० ८(=स० २.३५५) इसके दूसरे तथा तीसरे चरणों का पाठ अन्य प्रतियों में है:—

कमोदनि कुद्दह केतुकि बील। कनैर कर्सौदिय केवर कोह।

५९ में 'कमोदनि' से 'कनेर' तक की शब्दावली छूटी हुई है। प्रति ६० में चरण २ तथा ३ को मिला कर निम्नलिखित शब्दावली रख दी गई है:—

करिकै सब क्यारिनि हुंदे फिरि एक परस्पर अप्पत कोह।

६२ यहाँ खण्डित है।

२. भुजंग (= स० १.५—१०) के पूर्व ५९ में निम्नलिखित शब्दावली और आती है—

लाल माली कवित्तं।
जिनै उचरी बुद्धि गंगा पवित्तं।
गिरा शेष वाणी कवि काव्व वदे।

अन्तिम छूटे हुए चरण के स्थान पर ६० में है:—

नाम बल्याणनं चन्द छन्दे।

और ६२ में है:—

प्ररूपं ति वाणी भली कव्वि चन्दे।

वास्तव में ये त्रुटित चरण पूरे रूपक के अन्तिम चार चरण हैं, जो इन प्रतियों में भी अन्यत्र प्रायः इसी प्रकार आते हैं:—

सतं दंडमाली सुलाली कवित्तं। जिन बुद्धि सारंग गंगा पवित्त।
गिरा शेष वाणी कवि कव्वि वंदे। तिनै हि वुछि उचिष्ट कवि चंद छंदे।

ये चरण इन प्रतियों के पूर्वज आदर्श में किसी प्रकार से रूपक के प्रारम्भ में भी त्रुटित रूप में आ गये थे, और ५९ में उसी प्रकार उतरे रहे, किन्तु ६० तथा ६२ के बीच के किन्हीं पूर्वजों में मनमाने ढंग से ठीक कर लिए गए।

उपर्युक्त रूपक में ही अन्य प्रतियों में आने वाला अन्त का निम्नलिखित चरण ५९ तथा ६२ में नहीं है:—

जिनै सेत बंध्यौ सु भोज प्रबन्धं।

६० में इसकी अभावपूर्ति निम्नलिखित चरण द्वारा की गई है:—

अनेक भगे अन्त हुए अमह'।

उपर्युक्त रूपक में ही अन्य प्रतियों में आने वाला अन्त का निम्नलिखित चरण ५९ में नहीं है:—

गिरा शेष वाणी कवि कव्वि वंदे।

[1] श्री अगरचन्द नाहटा: 'पृथ्वीराज रासो और उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ', राजस्थानी, भाग १, अंक २, पृ० २३।

६० में इसकी अभावपूर्ति निम्नलिखित चरण द्वारा की गई है :—

कवि एम रच्यो जु अगे सु चरे।

६२ यहाँ पर खण्डित है।

२. उघोर ८ (= स० १८४१—५६) : इस छन्द के चरण २९—३० अन्य प्रतियों में निम्नलिखित हैं :—

चढि वनसपति सोहति दंति। मानहुँ इंद्रधनु की पंति।

५९ तथा ६२ में 'चढि बनसपति' मात्र शेष है, ६० में वह भी निकाल दिया गया है।

३. दो० ५ (= स० ४५.२१७): इस दोहे का प्रथम चरण अन्य प्रतियों में है :—

चढि बढि केलि कनउज्जनी पेम स दीरघ होत।

५९ तथा ६२ में 'केलि' के बाद की शब्दावली नहीं है, जब कि ६० में यह है :—

कलिंग अवर देस कहुं केन।

३. कवि० ७ (=स० ४६.१११) का चतुर्थ चरण अन्य प्रतियों में है :—

छिति छितान घर धर्म कर्म हिय मरतिहि रोचन।

५९ तथा ६२ में यह चरण छूटा हुआ है, और ६० में है :—

सूर वीर गम्भीर धीर छत्रिय मन रोचन।

४. कवि० २ (= स० १२.५४) का प्रथम चरण अन्य प्रतियों में है:—

आसोजै रानिंग राव परबत बेहानै।

५९ तथा ६२ में यह चरण छूटा हुआ है, जबकि ६० में है:—

होलाराइ हमीर धीर वहि कहुं बखानौ।

४. कवि० ७ (= स० १२-१६९) का अन्तिम चरण अन्य प्रतियों में है:—

वेदलइ घाइ वष्पाइयां बोल उंचा उचा भरी।

५९ तथा ६२ में यह चरण छूटा हुआ है, जबकि ६० में है:—

जो चढत दलह बद्धयौ सुबल धरा धुंधु मिलि घरहरां।

४.कवि० ९ (स० १३.३५) के अन्तिम दो चरणों का पाठ अन्य प्रतियों में है:—

उत्तंग ढाल की बैरपह की हंके भट्टारहां।

निसि जाम तीनि वित्तेयविय पंजू राग सुढारहां।

५९ तथा ६२ में 'वैरपह' तथा 'पजू' के बीच की शब्दावली नहीं है, जबकि ६० में एक और चरण गढ़कर अभावपूर्ति निम्नलिखित प्रकार से की गई है:—

उत्तंग ढाल की बैरपह पजू राग सुढारहां।

गय थट्ट हया हेपारवां चलियारइ हज्जारहां।

५. नारा० १ (= स० १२.२२८) का अन्तिम चरण अन्य प्रतियों में है:—

चरीत्त चाह चालुकं नरिंद को नरथ्थही।

५९ तथा ६२ में यह छूटा हुआ है, ६० में इसके स्थान पर है:—

गजथ्थटं हयथ्थटं नरथ्थटं नरप्पति।

५. दो० ११ (= स० १२.१५५) के दूसरे चरण का पाठ अन्य प्रतियों में है:—

वीरंदाइ वलीठियो द्वे हिंदू सुलतान।

५९ तथा ६२ में यह चरण छूटा हुआ है और ६० में इसका पाठ है:—

धर धरयौ छीनी धरा जियौं भीम पर्रान।

६. पद्ध० २ (= स० ४८.४९-६१) के चरण ७-१० का पाठ अन्यों में है:—

मुक्कले दूत तव तिहि रिसाइ। असमथ्थ सेव किम भूमि पाइ।
वधौ समेत सामन्त सथ्थ। उत्तरे आनि दरबार तथ्थ।

५९ तथा ६२ में 'असमथ्थ' के बाद 'सथ्थ' तक की शब्दावली छूटी है। किन्तु ६० में इन चरणों के स्थान पर दो चरण निम्नलिखित कर लिये गए हैं:—

मुक्कले दूत तव तिहि समथ्थ। रिसाइ उत्तरे अग्गि दरबार तथ्थ।

१०. कवि० ५ (= स० ६१.१५३३) का चरण ३ अन्य प्रतियों में है:—

परयो चंद पुंडीर चंद पिथ्थौ मारंतौ।

५९ तथा ६२ में प्रथम 'चंद' के बाद दूसरे 'चंद' तक के शब्द छूटे हुए हैं, ६० में इनके स्थान पर 'पुन्नपामार' शब्द रख दिये गए हैं।

११. कवि० ९ (= स० ६१.१८३१) के चरण १ और २ का पाठ अन्यों में है :—

हय हय हय आयास वेलि सज्जी सुब्बोम सिर।•
किल विलंत कामक्कि दवक वज्जी सुहम हर।

५९ तथा ६२ में 'सज्जी' के बाद 'वज्जी' तक की शब्दावली छूटी हुई है। ६० मे दोनों चरणों का पाठ इस प्रकार है :—

हय हय हय आयास वेलि सज्जिय सुहस हरि।
कहुं गधरिग कहुं परिग अरिग धरहरिग सुदह भर।

१२. कवि० ३ (= स० ६१.२१६४) के चरण २ और ३ अन्यों में हैं:—

हय तुम दुस्सह मिलन स्वामि हुज्जै सुभय घर।
हौं रविमंडल भेदि जीव लगि सत्त न छंडौं।

५९ तथा ६२ में 'मिलन' के 'मिल' के बाद 'लगि' के 'ल' तक का अंश छूटा हुआ है, ६० में दोनों चरण इस प्रकार कर दिए गए हैं :—

हम तुम दुसह मिलगि सत्त न छंडयौ सद्दर।
इमह वंस भज्जिग नरेस करि चंह विहंडयौ।

ये उदाहरण भी ग्रंथ के पूर्वार्द्ध मात्र से हैं, उत्तरार्द्ध में ६० में इस प्रकार के प्रक्षेप और भी अधिक हैं; ५९ तथा ६२ उत्तरार्द्ध मे भी वैसे ही हैं, जैसे ऊपर पूर्वार्द्ध में मिले हैं। प्रकट है कि ६० अपनी शाखा के पाठ की वास्तविक प्रतिनिधि नहीं रह गई है, ५९ तथा ६२ ही में उसकी प्रतिनिधि होने की योग्यता है। पुनः ५९ और ६२ मे से, जैसा हमने ऊपर देखा है, ६२ की अपेक्षा ५९ कम प्रक्षिप्त है। वह कुछ कम खण्डित भी है—केवल प्रारम्भ के ३½ रूपक इसमें नहीं है, जबकि ६२ में प्रारम्भ के १७ रूपक नहीं हैं। इसलिए अ० के पाठ के लिए ५९ संख्यक प्रति का ही उपयोग किया गया है, केवल प्रारम्भ के उस अंश के लिए जो ५९ संख्यक प्रति में खण्डित है, ६० संख्यक प्रति का उपयोग किया गया है। इस शाखा के पाठ में कुल १९ खण्ड है, और कुल रूपक-संख्या १११० के लगभग है।

अ० परिवार की ये प्रतियाँ मुझे लुधियाना के श्री वेणीप्रसाद शर्मा के द्वारा प्राप्त हुई थीं, जिन्होंने इन्हें इस शाखा के पाठ संपादन के लिए प्राप्त किया था। इस कृपा के लिए मैं उनका आभारी हूं।

५९ संख्यक प्रति सुलिखित है। इसका आकार १०'५"×६'२५" है। इनमें प्रतिलिपि-तिथि नहीं दी हुई है। अन्त में निम्नलिखित दोहा अवश्य आता है जो ६० तथा ६२ में नहीं है :—

महाराज नृप सूर सुव पूरमचंद उदार।
रासौ पृथीराज कौ राख्यौ लगि संसार॥

किन्तु यह दोहा पुष्पिका का नहीं लगता है, बल्कि निम्नलिखित पूर्ववर्ती छन्द पर आधारित उसका विस्तार मात्र लगता है :—

प्रथम वेद उद्धरिय बंभ मच्छह तनु किन्नव ।
दुतीय वीर वाराह धरनि उद्धरि जसु लिन्नो ।
कौमारिक भदेस धम्म उद्धरि सुर सथ्थिय ।
कूरम सूर नरेस हिंदु हद उद्धरि रथ्थिय ।
रघुनाथ चरितु हनुमंत कृत भूप भोज उद्धरिय जिमि ।
प्रथिराज सुजसु कविचंद्र कृत चंद्रसिंह उद्धरिय तिमि ॥

यह छन्द ६२ में भी है।

६० संख्यक प्रति में इसी प्रकार निम्नलिखित दोहे आते हैं :—

मन्त्रीश्वर मण्डन तिलक बच्छा वंश भरभाण ।
कामचंद सुत करम यह भागचंद सब जाण ॥१॥
तसु कारण लिखियो सही पृथ्वीराज चरित्र ।
पढता सुख संपत्ति सकल मन सुख होवे मित्र ॥२॥

इन कर्मचन्द तथा भागचन्द का ठीक पता लग गया है। कर्मचन्द कल्याणमल्ल के अमात्य थे, जिनके प्रयत्नों से कहा गया है कि अकबर ने कल्याणमल्ल को जोधपुर की अधीशता प्रदान की थी। इन कर्मचन्द के दो पुत्र थे, भागचन्द और लक्ष्मीचन्द। कर्मचन्द का यह वंश उनके एक पूर्वपुरुष 'वत्सराज' के नाम पर 'वच्छावत' कहलाता था। भागचन्द जहाँगीर के शासन काल में थे और कहा जाता है कि बीकानेर-नरेश सूरसिंह ने इन्हें सपरिवार बीकानेर लाकर धोखे से मरवा डाला था।[1] इसी प्रकार सूरसिंह सुत चन्द्रसिंह कूर्मवंशीय का भी पता लग गया है। ये चन्द्रसिंह कूर्म वंशी सूरसिंह के पुत्र थे जो प्रायः तीन सौ वर्ष पूर्व विद्यमान थे।[2] अतः यह प्रमाणित हो जाता है कि तीनों प्रतियाँ परस्पर बहुत आस-पास की हैं और इनमें ६० संख्यक प्रति—जिसमें भागचन्द का उल्लेख होता है—कुछ पूर्व की और ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियाँ उसके कुछ बाद की हैं। फलतः ६० संख्यक प्रति प्रायः सवा तीन सौ वर्ष और ५९ तथा ६२ संख्यक प्रतियाँ प्रायः तीन सौ वर्ष पुरानी होनी चाहिए और इन प्रतियों की जीर्णता देखने में भी इतनी ज्ञात होती है।

(४) फ० : यह प्रति मूलतः उसी आदर्श की है जिसकी अ० परिवार की प्रतियाँ हैं, क्योंकि उस परिवार का पाठ-त्रुटियों में से अधिकतर इसमें भी पाई जाती हैं। फिर उस परिवार की ६० संख्यक प्रति कि भाँति इसमें भी प्रक्षेप के द्वारा त्रुटि-परिहार का यत्न किया गया है। नीचे दिए हुए उदाहरणों से यह बात देखी जा सकती है :—

२. उपोर ८ : अ० परिवार की प्रतियों की भाँति इसमें भी चरण २१ नहीं था किन्तु इस त्रुटि का परिहार फ० में इस प्रकार किया गया कि चरण २३ के अंतिम शब्द बदल दिए गए जिससे उसका तुक चरण २२ से मिल जावे और फिर चरण २४ के बाद निम्नलिखित चरण अर्द्धाली पूरी करने के लिए बढ़ा लिया गया :—

सोभित भृकुटि भामिनि सोइ ।

२. कवि० ३ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण २ तथा ३ परस्पर स्थानांतरित थे, जिसके कारण अन्वय-वैषम्य था, फ० में मूल के चरण ३ तथा ४ के अन्त के शब्दों को बदल कर इसे ठीक कर लिया गया।

३. कवि० ४ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण ४ नहीं था, उसके स्थान पर इसमें निम्न लिखित नया चरण गढ़ लिया गया :—

[1] दे० श्री शिवदत्त शर्मा : 'मन्त्री कर्मचन्द', नागरी प्रचारिणी पत्रिका, १९८१ पृ० २९५।
[2] दे० श्री नरोत्तमदास स्वामी : 'पृथ्वीराज रासो', राजस्थान भारती, वर्ष १, अंक १, पृ० ६।

तू कविंद्र दिष्षहि करै जू प्रीतम दाउन।

३. कवि० ७ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण ४ का अधिकांश नहीं था। उसके स्थान पर इसमें निम्नलिखित चरण गढ़ लिया गया :—

धंस गध्य बर बीस अरिद सग्राम अरोचन।

४. कवि० २ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण १ नहीं था; उसके स्थान पर इसमें यथा चरण २ निम्नलिखित नया चरण गढ़ लिया गया :—

पुहकरद्द पम्मार जइत सब जगही जानै।

४ कवि० ७ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण ६ नहीं था, उसके स्थान पर यथा चरण ५ निम्नलिखित नया चरण गढ़ लिया गया :—

सावंत सकल सूरति मिलति इह स बात दढ़ाँद करी। '

४. कवि० ९ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण ५ तथा ६ की शब्दावली छूटी हुई थी जो एक चरण की शब्दावली के लगभग थी, इस त्रुटि को ठीक करने के लिए इसमें निम्नलिखित नया चरण गढ़ कर यथा चरण ६ रख लिया गया —

सुलतान साह प्रथीराज तनु छिपग्गि जेन प्रौढारहद्द।

५. नारा० १ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण ४ नहीं था; इसकी पूर्ति निम्नलिखित नवनिर्मित चरण ४ से कर ली गई :—

श्लोक सोक मंहरं सुता सुपाद संमक्री।

५. दो० ११ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण २ नहीं था, जिसकी पूर्ति निम्नलिखित नवकल्पित चरण से कर ली गई :—

इच्छन इच्छइ नन भूरि ता भीम नृप मानु।

९. कवि० ३ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण १ नहीं था; इसकी पूर्ति यथा चरण ३ निम्नलिखित नवनिर्मित चरण बढ़ा कर कर ली गई :—[1]

इच्छन इच्छा इच्छनन भूरि ता भीम नृप मानु।

१३ दो० १७ : अ० परिवार की भाँति इसमें भी चरण १ की शब्दावली छूटी हुई थी, उसकी पूर्ति निम्नलिखित नवकल्पित चरण २ जोड़ कर कर ली गई :—

पृथ्वीराज चहुवान की तौ जिनु भपै मोहि।

ये सभी प्रक्षेप अ० परिवार के ६० रूपक प्रति के प्रक्षेपों से भिन्न हैं, इसलिए दोनों का प्रक्षेप-सम्बन्ध नहीं है।

इस प्रकार के प्रक्षेपों के अतिरिक्त इसमें लगभग ९० रूपक और मिलते हैं, जो परिवार अ० की किसी प्रति में नहीं मिलते हैं; लगभग ये सभी छन्द आगे उल्लिखित ना० तथा स० में मिल जाते हैं, और फ० में उसकी अपनी क्रम संख्याओं के बाहर पड़ते हैं। इसलिए यह प्रकट है कि ये छन्द फ० में बाद में मिलाए गए, और प्रक्षेप अथवा पाठ मिश्रण के द्वारा उसमें आए।

इन दृष्टियों से देखने पर फ० प्रति अ० परिवार की प्रतियों के होते हुए महत्वहीन और भ्रामक प्रमाणित होती है, और इसलिए यह अ० परिवार की प्रतियों का स्थान नहीं ग्रहण कर सकती है। फिर भी इसमें अनेक ऐसे स्थल हैं जो अनुदित हैं और अ० परिवार की प्रतियों में त्रुटिपूर्ण अथवा प्रक्षिप्त हैं :—

२. भुजं० १, चरण १५

२. उधोर ८, चरण २८–२९

[1] यह द्रष्टव्य है कि उद्धरण ५, दो० ११ की त्रुटि-पूर्ति भी इसी नवकल्पित चरण द्वारा की गई है।

२. दो० ३, चरण २
३. दो० ५, चरण १ के कुछ शब्द
६. पद्ध० २, चरण ७–१०
९. कवि० ३, चरण १
१२. दो० १२ के पूर्व का कवित्त, चरण १, २ के कुछ शब्द
१५. कवि० ८, चरण ३, ४
१५. कवि० १६, चरण १, २
१६. कवि० १६, चरण २
१७. कवि० ४ के बाद की विज्जुमाला, चरण ७, ८
१७. कवि० १५, चरण ४
१७. त्रोटक ५, चरण १४, १५
१८. कवि० २, चरण ३, ४
१८. दो० ११ के कुछ शब्द
१९. दो० १४, चरण २

इन पूर्ण पाठों के सम्बन्ध में जो कि प्रक्षिप्त नहीं हैं—क्योंकि अन्य शाखाओं की प्रतियों में भी मिलते हैं—दो बातें सम्भव हो सकती हैं : एक तो यह कि फ० उस समय की प्रतिलिपि है जबकि इसका और अ० परिवार का पूर्वज आदर्श और इतना त्रुटित नहीं था जितना अ० परिवार की प्रतियों की प्रतिलिपि के समय हो गया : दूसरा यह कि फ० में किसी अन्य शाखा के पाठ की सहायता से त्रुटियाँ दूर कर दी गई । किन्तु अब भी फ० में ऐसे बहुतेरे स्थल हैं जहाँ पर पाठ उसी प्रकार त्रुटित है जिस प्रकार अ० परिवार की प्रतियों में है; अतः यदि पाठ त्रुटियों को दूर करने के लिए किसी अन्य शाखा की प्रति या प्रतियों का सहारा लिया गया होता तो इस पिछले प्रकार की त्रुटियाँ भी अधिकतर दूर हो गई होतीं, जैसा कि नहीं हुआ है । इसलिए यही सम्भावना अधिक प्रतीत होती है कि इसकी प्रतिलिपि अ० परिवार की प्रतियों के कुछ पूर्व हुई थी जब इन सबका सामान्य मूलादर्श क्षत-विक्षत होते हुये भी इतना क्षत-विक्षत नहीं हुआ था जितना अ० परिवार की प्रतियों की प्रतिलिपि के समय हो गया था । अतः अ० परिवार की प्रतियों के होते हुए भी इस प्रति का महत्व है, विशेष रूप से उन स्थलों पर अपनी शाखा का पाठ-निर्धारित करने के लिए जो अ० परिवार की प्रतियों में त्रुटित अथवा प्रक्षिप्त हैं ।

इसका आकार लगभग १२″×७·२५″ तथा इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है :—

"सं० १७२८ मार्गसिर सुदि १ बुधवासरे फतेपुरा मध्ये लिपतं अमरा आत्मार्थं।"

यह महत्वपूर्ण प्रति श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह की है और उन्हीं से मुझको प्रस्तुत कार्य के लिए प्राप्त हुई थी, जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ ।

(५) म० : यह भाण्डारकर आरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट की १४५५ (१८८४–९५) संख्यक प्रति है । इसका पत्रा २ से ४२ तक का अंश खण्डित है । इसका पाठ खण्डों में विभाजित है । छन्दों की क्रम-संख्या कुछ दूर तक छन्द-भेद के अनुसार प्रायः उसी प्रकार चलती है जिस प्रकार अ० या फ० में पूरे पाठ में चला है, किन्तु तदनंतर वह एक सम्मिलित संख्या के रूप में चलने लगती है, जैसे वह ना० या स० में चली है, जिनका उल्लेख आगे होगा ।

खण्डों के नामों में भी इसी प्रकार की अनेकरूपता परिलक्षित होती है । प्रथम खण्ड को 'अध्याय' कहा गया है, दूसरे को प्रारम्भ में 'पर्व' किन्तु अन्त में 'खण्ड' कहा गया है । इसके बाद एक अंश आता है जिसके न प्रारम्भ में कोई शीर्षक दिया गया है और न अन्त में कोई पुष्पिका ही दी गई है । अ० तथा फ० में यह अंश दूसरे ही खण्ड में सम्मिलित है जबकि ना० तथा स० में यह अंश स्वतन्त्र है

और तीन भिन्न-भिन्न खण्डों मे बँटा हुआ है। इस दृष्टि से देखने पर यह अंश अ० और फ० के साथ सादृश्य रखता हुआ प्रतीत होता है, और उपर्युक्त दूसरे खण्ड का परिशिष्ट सा लगता है। इसके अनन्तर जो खण्ड आता है उसके प्रारम्भ में कोई शीर्षक नहीं दिया हुआ है और वह पन्नों के निकल जाने से खण्डित है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि इसे क्या कहा गया था। इस खण्ड के प्रारम्भ के दो रूपकों तक क्रम सख्या छन्द भेद के अनुसार मिलती है किन्तु तदनन्तर पद्धति बदल जाती है और प्रति के अन्त तक वह एक सम्मिलित क्रम-सख्या के रूप मे चलती है। इस खण्डित अश के बाद दो खण्ड आते हैं जिन्हें 'प्रस्ताव' कहा गया है, दो खण्ड आते हैं जिन्हें पर्व-खण्डादि कुछ नहीं कहा गया है, एक खण्ड आता है, जिसे 'खण्ड' कहा गया है, तीन खण्ड आते हैं जिन्हें पर्व-खण्डादि कुछ नहीं कहा गया है और एक खण्ड आता है जिसे 'प्रस्ताव' कहा गया है और यही प्रति का अन्तिमखण्ड है। 'अध्याय', 'पर्व', 'खण्ड' और 'प्रस्ताव'—चार भिन्न भिन्न नामों के आधार क्या हैं, यह स्पष्ट नहीं होता है। इस प्रकार के अध्याय, पर्व, खण्ड और प्रस्ताव कुल मिलाकर इस प्रति में १० होते हैं। इस प्रति का आकार लगभग ८'१"×४'५" तथा इसकी प्रति की पुष्पिका इस प्रकार है :—

"सवत् १८०५ वर्षे मागसिर सुदि ११ तिथौ शनिवासरे ग्राम मथाणीया लिपत प० उदैराज।"

इस प्रति मे कन्नौज-युद्ध के अनन्तर पृथ्वीराज के दिल्ली-आगमन तथा उसकी केलि-विलास तक की कथा आती है। इतने अश में यद्यपि यह खण्ड-विभाजन और कथा-क्रम में प्रायः अ० और फ० के साथ सादृश्य रखती है, किन्तु इसमें 'हासी प्रथम युद्ध' तथा 'हासी द्वितीय युद्ध' नाम के दो खण्ड ऐसे हैं जो अ० और फ० मे नहीं हैं, ना० और स० में हैं और शेष खण्डों में भी अनेक छन्द अ० और फ० की तुलना में अधिक हैं, जो प्रायः सपूर्ण रूप से केवल स० परिवार की प्रतियों में मिलते हैं, ना० परिवार की प्रतियों में नहीं। फलत. जबकि अ० में कथा के इस अश में कुल ६८३ रूपक हैं, इसमें प्रति के प्राप्त १८५ पन्नों में हो लगभग १८१० रूपक हैं, और यदि खण्डित २२ पन्नों में उसी अनुपात से २२० रूपक के लगभग मान लिये जावें तो इस प्रति की कुल रूपक-सख्या २०७० के लगभग पहुँचती है। फलतः इस प्रति के पाठ का आकार अ० की तुलना में लगभग तिगुना है।

यह प्रति इस प्रकार अपने ढग की अकेली है। ऐसा लगता है कि इसका कोई पूर्वज प्रायः उसी आकार-प्रकार का था जिस आकार-प्रकार का अ० का था, किन्तु पीछे उसमें इतनी पाठ-वृद्धि की गई कि छन्दों की क्रम-सख्या देने में कुछ दूर तक, गलत-सही, पूर्ववर्ती विधि का निर्वाह करने के बाद यह असभव दिखाई पडा कि और आगे भी उसको चलाया जा सके, इसलिए उक्त दूसरी पद्धति को अपना लिया गया। इस प्रक्रिया के अवशेष म० के खण्ड १० तथा ११ में अभी तक सुरक्षित हैं। खण्ड १० में १४२ तक छन्द संख्या लिखी जाकर पुनः १२५ से प्रारम्भ हुई है और ११ में ९८ तक छन्द-संख्या पहुँचकर ९० से और पुनः ९७ तक पहुँच कर ९२ से प्रारम्भ हो गई है।[1]

इस प्रति में खण्ड १ में ही निम्नलिखित छन्द-लक्षण आते हैं :—

अ० १. नारा० ६ के बाद : पढमो बारह मत्ते बीयां अठारह साहिणा भट्टो।
जहां पढम तहां तीयौ दह पचमि भूसीयं गाहा ॥१॥

" " : जॉ पढम नाम पंचम सत्तम असेम होइ गुरुइग।
गुडिवणो जिण पईणा गाहा दोस पदासई ॥२॥

अ० १. दो० ४ के बाद : सगुणा जिह क्यान पढंत परी।
ठचि सोलहमत्त विसासु करी।
मुणि प्पंगलिणा जहि धीर इयं।

[1] दे० आगे 'म० के क्रम-सख्या के बाहर के छ द' उपशीर्षक 'रचना का मूल रूप' शीर्षक के अन्तर्गत।

यह सोलह जाणहु पायहिय ॥

अ० १. दो० ५ के बाद : पयोहर च्यारि पलटिय ठाम।
ति सोलह मत्तह सुत्तीयदाम।
जगुयह हार भरे हय अंत।
सि अट्ठ सगह छप्पण मंत ॥

अ० १. दो० २२ के पूर्व : पढ पदह हरण धहसह हरण फुनि वसु हरणं पट्ठ हरण।
अ ते गुर मोहिं ससहुयन मोहिं सिठि सरोहि परसोहि।
जे परय मनोहर हरई मनोहर सा सकर।

ये छन्द 'प्राकृत पैंगल' में क्रमशः १.५४, १.६५, २.१२९, २.१३३ तथा १.१९४ हैं। किन्तु 'प्राकृत पैंगल' में इन लक्षण के छन्दों के साथ 'पृथ्वीराज रासो' का एक भी छन्द उदाहरण में नहीं दिया गया है, इसलिए 'रासो' के इस पाठ में ये छन्द 'प्राकृत पंगल' से आए होंगे और इस पाठ को अन्तिम रूप 'प्राकृत पैंगल' के बाद मिला होगा।

यह मूल्यवान् प्रति मुझको इन्स्टीट्यूट से ही प्राप्त हुई थी, जिसके लिए मैं उसका अत्यन्त आभारी हूँ।

(६) ना० : यह प्रति श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह में है, जिसकी एक प्रतिलिपि हिन्दी साहित्य सम्मेलन संग्रहालय, प्रयाग के लिए उन्होंने करा दी थी। मूल प्रति के लिए मैंने नाहटाजी को लिखा था, किन्तु उसकी जीर्णावस्था के कारण उन्होंने भेजने में असमर्थता सूचित की। अतः इसकी उक्त प्रतिलिपि का ही उपयोग किया जा सका है।

इस प्रति का पाठ भी खण्डों में विभाजित है—कुल ४६ खण्डों में रचना समाप्त हुई है। यह प्रति आदि से अन्त तक पूर्ण है। कुल मिलाकर इसमें ३२९७ रूपक हैं।

इसके पाठ में दो बातें ऐसी हैं जिनसे ज्ञात होता है कि इसके पूर्व की किसी पीढ़ी में न खण्ड-संख्या इतनी थी और न छंद संख्या ही और दोनों में वृद्धि हुई है। खण्डों के वर्तमान पाठ में भी कुछ खण्डों की पुष्पिकाओं में उनकी पुरानी क्रम संख्या पड़ी रह गई है जो उनकी वर्तमान स्थिति से बहुत पिछड़ी हुई है, यथा,—

पुष्पिका में दी हुई खण्ड संख्या	वर्तमान पाठ में खण्ड-स्थिति
पृथ्वीराज वंशावलि राजजन्म कथा : ३	२
मुगलपराजय पृथ्वीराज विजय : ७	८
कान्हपाटी बन्धन कथा : ८	१०
दिल्ली राज्याभिषेक चामण्ड राय हस्तेन पतिसाह ग्रहण : ९	१२
कनवज गमन जयचन्द द्वारे संप्राप्तो : २१	३१

इस सूची में से प्रथम ही ऐसा खण्ड है जो पुष्पिका के अनुसार वर्तमान स्थिति से आगे बढ़ा हुआ लगता है, शेष सभी वर्तमान स्थिति से पिछड़े हुए हैं। किन्तु प्रथम भी वर्तमान स्थिति में कदाचित् इसलिए तृतीय से द्वितीय हो गया है कि पहले वंशावली के सम्बन्ध का जो द्वितीय खण्ड था, वह वर्तमान पाठ में प्रथम के साथ मिला दिया गया, जैसा प्रथम खण्ड की पुष्पिका की वर्तमान शब्दावली "आदि प्रबन्ध मंगलाचरण वंशावलि वर्णन" से प्रकट है। पूर्ववर्ती ७,८, ९ क्रमश वर्तमान ८, १०, १२ हैं। अतः इनके बीच में वर्तमान खण्ड ९ तथा ११ पीछे किसी समय मिलाये गए, यह प्रकट है। छन्द-संख्या के बारे में भी यही बात दिखाई पड़ती है : बीच बीच में अनेक छन्द ऐसे मिलते हैं जो दी हुई क्रम-संख्या के बाहर पड़ते हैं। वर्तमान खण्ड ३१ में तो १४ तक रूपक-संख्या एक बार चल लेने के बाद पुनः १ से प्रारम्भ होकर ६४ तक चलती है।

इस प्रति की पुष्पिका निम्नलिखित है :—

"सम्वत १७९२ वर्षे मार्ग शीर्ष मासे शुक्ल...श्री तोलीयासर ग्रामे वाचक श्री पुन्योदय जो गणि शिष्य...श्रीरस्तु ॥ शुभम्"

इस प्रति का आकार १३.७५" × ९.५" है।

इस पाठ की और भी कुछ प्रतियाँ मिलती हैं, और एकाध कुछ पहले की भी हैं, किन्तु वे खण्डित हैं। यह प्रति पूर्ण और अत्यन्त सुरक्षित है। इस महत्वपूर्ण प्रति का उपयोग मैं सम्मेलन के अधिकारियों की कृपा से कर सका, इसलिए उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

(७) द० : यह रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, लन्दन के टॉड संग्रह की ८२ सख्यक प्रति है। यह रचना की प्राचीनतम प्राप्त प्रतियों में से है और सं० १६९२ की है। इसमें कुल ३६ खण्ड है। यह 'बान बेध खण्ड' के पूर्व ही समाप्त हो गई है। इसके अतिरिक्त चौथे 'नाहर राय कथा' खण्ड के छन्द ५-१२, सत्ताईसवें 'शुक वाक्य खण्ड' के दो पत्रे (छन्द ५–४८) तथा छत्तीसवें 'पृथ्वीराज ग्रहण खण्ड' का एक पत्रा (छन्द ४-१९) त्रुटित हैं, और सातवाँ खण्ड 'देवगिरि युद्ध' अपूर्ण छूटा हुआ है : केवल ९ रूपक उसके उतारे गए हैं। टॉड संग्रह की ६० तथा १५७ सख्यक प्रतियाँ भी मूलतः इसी परिवार की हैं, किन्तु उनमें 'शुकवाक्य' तथा 'देवगिरि' खण्ड नहीं है। इसलिए उपर्युक्त त्रुटित अंशों में से शेष तीन के सम्बन्ध में ही उनका सहारा लिया जा सकता है। नागरी प्रचारिणी सभा के संस्करण तथा उस संस्करण के पाठ वाली प्रतियों में 'देवगिरि समय' में द० के ९ रूपकों के बाद ४१ रूपक आते हैं और 'बानवेध खण्ड' में टॉड संग्रह की ६० सख्यक प्रति में २८६ रूपक हैं। द० के प्राप्त रूपकों में इतने और रूपक जोड़ने पर उसकी कुल रूपक-संख्या लगभग ३४७० होती है।

द० का आकार १३.८" × ९.५" है। इसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

"संवत् १६९२ वर्ष चैत्र मासे शुक्ल पक्षे २ द्वितीया रविवारे लखितं।"

इसके अनंतर कुछ और लिखा हुआ है जिस पर इस समय कुछ पोता हुआ है और इसलिए वह अपाठ्य हो गया है। उसके बाद आता है :—

"संवत् १९२६ वर्षे काती सुद ५ सो ये पोथी दसोरा कृपाराम सीताराम कने सी मोल लीधु रुपीया २५ आकरा दीधा पोथी बणारणजी थी रूपचन्द जी...जी री उदेपुर मध्ये लीधी।"

इस पाठ में भी बाद में की हुई पाठ वृद्धि के लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं : 'रितु वर्णन' नामक ३४ वें खण्ड के प्रथम पाँच रूपकों के बाद ५१ रूपकों का 'शुकचरित्र' रख दिया जाता है, और तदनन्तर पुनः 'रितु वर्णन' खण्ड के रूपकों की क्रम-संख्या ५ से प्रारम्भ होकर १४० तक चलती है।

इस महत्व पूर्ण प्रति का माइक्रोफिल्म इलाहाबाद यूनिवर्सिटी पुस्तकालय से मुझे प्राप्त हुआ था, जिसके लिए मैं पुस्तकालय के अधिकारियों का अत्यन्त आभारी हूँ।

टॉड संग्रह में इस परिवार की और भी कुछ प्रतियाँ हैं, किन्तु वे प्रायः खण्डित हैं, ऊपर जिस अन्य प्रति का उल्लेख किया गया है, उसका भी आदर्श कीटादि से बहुत क्षत-विक्षत हो गया था जिसके कारण प्रतिलिपिकार को स्थान-स्थान पर त्रुटित पाठ को छोड़ना पड़ा है। अतः इस प्रति का महत्व अपने परिवार का प्रतियों में सबसे अधिक है।

(८) शा० : यह प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के पुस्तकालय में है। यह दो मोटी जिल्दों में है। यह प्रति रचना के सबसे बड़े पाठ की सब से प्राचीन प्रति है। इसमें खण्डों की संख्या तथा रूपक-संख्या प्रायः वही है जो सभा के संस्करण की है, केवल 'महोबा खण्ड' इसमें नहीं है। इसमें कुल रूपक-संख्या अन्त में १०७०९ दी हुई है।—

इसका आकार १२" × १०" के लगभग है, और इसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

"रासारो पोथी रा रूपक संख्या १०७०९ बत्तीस अक्षर मोलने श्लोक ग्रन्थ जे दो छे। ए पोथी

भो दीवाणजी रे यी उतरी छे। लिषत गणि ज्ञान विजये। श्री वड़ा तलाब मध्ये लिषतं। सव...४७वर्षे आश्विन मासे।"

'४७' के पूर्व के अङ्क तथा अक्षर पूर्ववर्ती पन्ने के यहाँ पर चिपक जाने के कारण मिट गए हैं।

इस प्रति की एक आधुनिक प्रतिलिपि, जो मशीन के कागज़ पर की हुई है, सौभाग्य से उस समय की की हुई मिल गई है जब यह विकृति नहीं हुई थी। यह प्रति रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई में है और उसकी पी. डी. २७४ है। इसके कुछ खण्डों के अन्त या प्रारम्भ में निम्नलिखित शब्दावली आती है, जो आदर्श की है:—

खण्ड २ अन्त: "महामहोपाध्याय श्री १०६ श्रीअमर विजय गणि। शिष्य चेला गणि ज्ञान विजय लिषतं आत्मार्थे श्री उदयपुर मध्ये स० १७४७ रा भाद्रवा सुदि २ दिने।"

खण्ड ३ अन्त: "लिषतं गणि ज्ञान विजयै आत्मार्थे।"

खण्ड ४ अन्त: "गणि ज्ञान विजय लिषतं।"

खण्ड ७ अन्त: "सम्वत १७४७ वर्षे सकल वाचक शिरोमणि महामहोपाध्याय श्री अमर विजय गणि। तत् शिष्य ज्ञान विजय गणि लिषतं आत्मार्गे। सकल मासोत्तम भाद्रमासे।"

खण्ड २१ प्रारम्भ: "अथ सकल वाचक शिरोमणि महामहोपाध्याय श्री ५ श्री अमर विजय गणि गुरुभ्यो नमः।

खण्ड २१ अन्त: गणि गिर्नान विजय लिषत श्री उदयपुरे।

खण्ड २२ अन्त: सम्वत १७४७ वर्षे आसू सुदि १० दिने।

इधर बहुत दिनों से यह विवाद रहा है कि सभा की प्रति सं० १६४७ की है या १७४७ की। इस प्रतिलिपि से यह प्रवाद समाप्त हो जाता है।

खेद है कि सभा के अधिकारियों से सभा की प्रति न प्राप्त हो सकी, अतः इस प्रतिलिपि का ही उपयोग प्रस्तुत कार्य के लिए करना पड़ा है। इस प्रतिलिपि के लिए मैं रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई के अधिकारियों का अत्यन्त आभारी हूँ।

(९) उ०: यह प्रति पहले आगरा कालेज में थी और अब भारतीय सरकार की नेशनल गैलेरी आव् मॉडर्न आर्ट में है। यह रचना के सबसे बड़े पाठ की एक अत्यन्त सुरक्षित और मूल्यवान् प्रति है। यह चार जिल्दों में है और १६०० पृष्ठों में समाप्त हुई है। यह प्रति आगरा कालेज को १८६१ में उदयपुर के महाराजा ने भेंट की थी, यह उक्त प्रति के मुखपृष्ठ पर उस समय के प्रिंसिपल श्री पियर्सन द्वारा सितम्बर २, १८६१ की तिथि देते हुए लिखा हुआ है।

इसमें खण्डों या प्रस्तावों का क्रम और उनकी संख्या वही है जो उपर्युक्त श० अथवा नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण में है, केवल 'महोबा समय' इसमें भी नहीं है और कुछ खण्ड सभा के संस्करण की तुलना में इसमें कुछ आगे पीछे मिलते हैं। प्रस्तुत संस्करण में सुविधा के लिए उनकी क्रम संख्या वही दी गई है जो सभा के संस्करण में है।

प्रति का आकार लगभग १२"×१०" है। इतनी बड़ी प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी है, केवल अन्त के दो पन्ने अन्य व्यक्ति के लिखे हैं। सम्भावना यह प्रतीत होती है कि पूर्ववर्ती पत्रों के जीर्ण होकर निकल जाने के बाद वे फिर से जीर्ण पत्रों से ही उतारकर लगाए गए हों। वर्त्तमान अन्तिम पत्र पर पुष्पिका के नाम पर केवल इतना है:—

"ह० गोकुललाल पुरोहित ॥"

कुछ खण्डों की पुष्पिकाएँ दी हुई हैं, किन्तु प्रतिलिपि सम्बन्धी कोई उल्लेख कहीं नहीं है। 'राजा रतन सी समय' और 'विवाह समय के' बीच 'विज्ञप्ति' शीर्षक के साथ निम्नलिखित छन्द अवश्य आते हैं, जो सभा के संस्करण में नहीं हैं:—

मिलि पंकज ग (गुन ?) उदधि वरद कागद कातरणी।
कोटी कवीका जरद कमल कटि कने करनी।
इहि तिथि संख्या गुनित कहे कका कवि यानै।
इह श्रम लेपन (लेपन) हार भेद भेदै सो जानै।
इन कष्ट ग्रंथ पूरन करय मन वंछा हुव ना लहय।
पालियै जतन पुस्तक पवित्र लिखि लेखक विनती करय ॥१॥
गुन मनियन रस पोइ चंद कवियन करि दिद्धीय।
छन्द गुनि ते तुट्टि मंद कवि भिन भिन किद्धीय।
देस देस बिप्परिय मेळ गुन पार न पावय।
उद्दिम करी मेलवत आदिवन आलय आवय।
चित्रकोट रान अमरेस नृप हित श्री मुख आयस दयौ।
गुन विन करुना उदधि लिखि रासो उद्दिम कीयो ॥२॥
लघु दीरघ ओछो अधिक जो कछु अन्तर होय।
सो कवियन मुख सुद्ध ते कहो आप बुद्धि सोइ॥
॥ इति विज्ञप्ति ॥

विज्ञप्ति के ये छन्द आदर्श के ज्ञात होते हैं; इनमें राणा अमरसिंह के आदेश से चन्द के बिखरे हुए छन्दों को इकट्ठा कर उसके पाठ के पुनर्निर्माण का उल्लेख हुआ है। राणा अमरसिंह का राज्यकाल सं० १६५३ से १६७६ तक है। छन्दों का पाठ कुछ विकृत हो जाने के कारण ठीक तिथि नहीं ज्ञात हो रही है, यह सम्भवतः १६७३ है जो 'गुन' 'उदधि' के उलट कर पढ़ने से बनती है। किन्तु इतना तो स्पष्ट ही है कि किन्हीं कका कवि ने उक्त राणा के आदेश से यह आदर्श विभिन्न प्रतियों की सहायता से बनाया जिससे यह प्रति या इसकी कोई पूर्वज प्रति उतारी गई। अन्य साक्ष्यों के अभाव में इसे २ सितम्बर, १८६१ (=सं० १९१८) के कुछ पूर्व की प्रतिलिपि मानना चाहिए।

यह महत्वपूर्ण प्रति मुझे भारतीय सरकार की नेशनल गैलेरी आव् मॉडर्न आर्ट, नई दिल्ली के क्यूरेटर, श्री मुकुल डे से प्राप्त हुई थी, इसलिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। इसे मेरे उपयोग के लिए प्रयाग विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वाइस चांसलर श्री भैरवनाथ झा ने मँगा दिया था, इसलिए मैं उनका भी आभार मानता हूँ।

पिछली शा० तथा यह लगभग एक ही पाठ देती हैं, इसलिए रचना के पूर्वार्द्ध के पाठ के लिए एक तथा उत्तरार्द्ध के पाठ के लिए दूसरी का उपयोग कर लिया गया है।

(१०) स० : यह नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा कई जिल्दों में प्रकाशित रचना का प्रसिद्ध संस्करण है, जो श्री मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या द्वारा संपादित होकर कई वर्षों में १९१० ई० तक प्रकाशित हुआ था। इसका आधार वही है जो शा० का है, जो इस संस्करण का मुख्याधार है। शा० परिवार की कुछ अन्य प्रतियों का भी उपयोग इसके संपादन में किया गया है। इसमें 'महोबा समय' भी अन्त में जोड़ दिया गया है, जो इस पाठ की भी प्रति में नहीं मिलता है, केवल अलग स्वतन्त्र खण्ड के रूप में मिलता है। यह संस्करण सावधानी से तैयार किया गया है, और मुद्रण की भूलों के अतिरिक्त शा० परिवार के पाठ को प्रायः ठीक-ठीक प्रस्तुत करता है। अब यह संस्करण दुर्लभ हो गया है। इसकी प्रति मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय पुस्तकालय से प्राप्त हुई थी, जिसके लिए मैं उसके अधिकारियों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

—:०:—

२. पृथ्वीराज रासो के मूल रूप के निकटतम प्राप्त पाठ

ऊपर जिन प्रतियों का परिचय दिया गया है, उनमें रूपक-संख्या, हमने देखा है, निम्नलिखित है :—

(१) धा० : ४२२, (२) मो० : ५५२, (३) अ० : १११०, (४) फ० : १२००, (५) म० [अ० परिवार के ६८३ रूपकों के स्थान पर] : २०७०, (६) ना० : ३३९७, (७) द० : ३४७०, (८) शा० : १०७०९, (९) उ० : यथा शा०, (१०) स० : यथा शा०। साथ ही यह भी हम देखते हैं कि धा० के प्रायः सभी छन्द मो० में, मो० के लगभग सभी छन्द अ० में, अ० के सभी छन्द फ० में, फ० के लगभग सभी छन्द म० में, म० के अधिकतर छन्द ना० में किन्तु प्रायः सभी छन्द शा० उ० स० में; ना० के अधिकतर छन्द शा० उ० स० में, और द० के सभी छन्द शा० उ० स० में पाये जाते हैं।[1] अतः पहला प्रश्न यह उठता है कि इस पूरी पाठ-परम्परा में क्या निरन्तर पाठ-वृद्धि होती रही है, और आकार की दृष्टि से मूल या उसके सब से अधिक निकट पाठ धा० का रहा होगा, अथवा मूल या उसके सब से अधिक निकट पाठ शा० उ० स० का पाठ रहा होगा और उत्तरोत्तर संक्षेप होते-होते उस का आकार धा० का हुआ होगा; अथवा मूल पाठ की स्थिति बीच में कहीं पड़नी चाहिए और एक ओर जहाँ उसमें उत्तरोत्तर पाठ-वृद्धि हुई, दूसरी ओर उसका उत्तरोत्तर संक्षेप भी हुआ। ये विकल्प विचारणीय हैं। इन विकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात् ही यह निश्चय किया जा सकेगा कि रचना के मूल पाठ का आकार क्या था। रचनाओं में पाठ-वृद्धि होना ही सामान्यत देखा जाता है, संक्षेप-क्रिया अपवाद के रूप में ही मिल सकती है, इसलिए धा० को आधार मान कर पहले हमें यह देखना चाहिए कि अधिकाधिक छन्द-संख्या वाली प्रतियों के पाठों में उत्तरोत्तर पाठवृद्धि के प्रमाण मिलते हैं या नहीं; इस विकल्प के लिये सन्तोषजनक प्रमाण न मिलने पर ही अन्य दो विकल्पों के विषय में विचार करना आवश्यक होगा।

उक्ति शृंखला

यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यह दिखाई पड़ेगा कि धा० में अनेक स्थलों पर एक रूपक में—प्रायः उसके अन्त में—जो उक्ति आई है उसकी कुछ न कुछ शब्दावली बाद वाले रूपक में—प्रायः उसके प्रारम्भ में—भी है और इस प्रकार एक उक्ति-शृंखला बनी हुई है, यथा निम्नलिखित रूपकों के बीच। जिन प्रतियों में उक्ति-शृंखला बीच में अन्य रूपकों के आने के कारण त्रुटित हुई है, उनका उल्लेख धा० का पाठ देते हुये नीचे दाहिने सिरे पर किया जा रहा है :—

(१) धा० ५१ : जो थिर रहै सु कहहुं किन हुं पुछ तुम्ह सोइ।
धा० ५२ : थिर चाहै वल्लभ मिलनु जउ जोवन दिन होइ।

१ देखिये विभिन्न परिशिष्ट।

(२) धा० ६८ : तदित करिग अंगुलि धरह बान भरिग प्रिथिराज।
धा० ७० : भरिग बान चहुवान जानि दुर देव नाग नर।
(धा० मा० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(३) धा० ७४ : तउ मानउं रवामिनि सकल जइ तुंसी छोड़परतक्खि।
धा० ७५ : भइ परतक्खि कवी मनि आइय। (शा० उ० स०)

(४) धा० ८१ : तिहूं पुर परगवानी असो आउ राय आयेसु।
धा० ८२ : आइसु सुनि सुनि अग्गे दियो मानकर अप्पु। (शा० उ० स०)

(५) धा० ८६ : कै बनाउ कैवास मोहि कै हर सिद्धि घर छंडि।
धा० ८७ : जो छंडइ सपताप करि वर छंडै कवि चन्द। (शा० उ० स०)

(६) धा० १०१ : अतिबल सूं बल मा कहूयौ किम चल्लइ भूआल।
धा० १०२ : चलौं चन्द सत्थइ सेवग सुअ।

(७) धा० १२१ : अरि नयर नीर उत्तर कहे स।
धा० १२२ : भुल्लि भट्ट पुच्छहि चदयो कहि उत्तर कनवज्ज।
(धा० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(८) धा० १२९ : कंचन करस झकोलति गगह जलु भरहि।
धा० १३० : भरंति नीर सुन्दरी। (धा० म० ना० द० शा० उ० स०)

(९) धा० १४१ : अगम हट्ट पट्टन नयर रतन मोति मनियार।
धा० १४२ : अमग्गति हट्टति पट्टन मंझ। (शा० उ० स०)

(१०) धा० १४९ : जु पुच्छत चन्द गयो दरबार।
धा० १४६ : पुच्छत चन्द गयो दरबारह।
(धा० गो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(११) धा० १६१ : एक चहुवान प्रिथिराज टारे।
धा० १६२ : सुनि नृपत्ति रिपु कै सवद तामस नयन सुरत्त। (ना०)

(१२) धा० १६६ : बरनइ चइ उनिहारि इह ज्यूं चहुवान संवत्त।
धा० १६७ : इम जपइ चन्द घरदिया प्रिथीराज उनिहारि इहि।

(१३) धा० १७४ : सुमनु भट्ट सत्थइ अछै जिह करति प्रिय लाज।
धा० १७५ : एक कहइ विहिय सुभट इह न सथि प्रथिराज। (म० शा० उ० स०)

(१४) धा० १८३ : पुप्फांजली पंग सिर नाइ जयति पिय कामदेव।
धा० १८४ : पुप्फंजलि सिर गंहि मयु गुरु लग्गी फिरि वाइ।

(१५) धा० १८६ : किहु कामिनि मुख (सुख-दोष में) रति समर नृप निय निंद विसारि।
धा० १८७ : सुकरं सुवल म्रिदंग तार जयनै रागे कला कोकिलै।...
प सह सुवख सुलाइ तार सहिता जै राय राग्य गता॥ (धा० म० शा० उ० स०)

(१६) धा० १८८ : तहने प्रान कटापट प्पगयरा जइ राय संप्राप्तित।
धा० १८९ : प्राप्ति राइ संपरपतिग जइ दर देव अनूप। (म० शा० उ० स०)

(१७) धा० १९१ : द्रव्य दरिस बहु संग लिए भट्ट समप्पन जाइ।
धा० १९२ : गयो राज मिदलान चन्द वरदिइइ समप्पन। (म० शा० उ० स०)

(१८) धा० १९२ : ... ... पान देहि दिढ़ हथ्थ गहि। :
धा० १९३ : सुनि तमूल सा पट्टि करि वर उठिय दिठि चंक। (धा० म० ना० शा० उ० स०)

(१९) धा० १९३ : सुनित मूल सा पट्टि करि वर उट्ठिय दिठि चंक।

धा० १९५ : भुव पंकिय करि पंगु नृप अप्पिग हाथ तंबोल ।
(धा० मो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(२०) धा० १९८ : जउ मुक्कहि सत सत्यभनु तो कत लीन्हसि सत्थ ।
धा० १९९ : जउ मुक्कहँ सत सत्थिभनु सो संभरि कुल लाज ।

(२१) धा० २०० : मनु अकाल तिडिय सघन चवया तु छुट्टि प्रवाह ।
धा० २०१ : प्रवासी [प्रवाहे-पाठां०] त तउजी न तउजी अहारे ।
(मो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(२२) धा० २०२ : जल छंडहि अच्छहि करइ मीन चरित्तनु भुल्ल ।
धा० २०३ : भुल्लयो पुहवि नरिंद त सुद्द विसुद्द सद्द । (म० शा० उ० स०)

(२३) धा० २०३ : भुल्लयो पुहवि नरिंद त सुद्ध विसुद्ध सद्द ।
धा० २०४ : भुल्यो रंग सुमीन नृप पंगु चढ्यो हय पुट्टि । (म० ना० शा० उ० स०)

(२४) धा० २०४ : सुनि सुन्दरि पर पज्जने चढ्ढी अवासन उट्टि ।
धा० २०५ : दिक्खति सुन्दरि दर वरुनि धमकि चढंति अवास ।

(२५) धा० २०५ : नर कि देउ किंधुं काम हर गंग हसंत अयास ।
धा० २०६ : इक्कु कहै दुर देव है इक कइ इंदु फनिन्द । (म० ना० शा० उ० स०)

(२६) धा० २०६ : इक्क कहै असि कोटि नर इहु प्रिथिराज नरिंद ।
धा० २०७ : सुनि वर सुन्दर उभय हुव स्वेद कंप सुरभंग । (ना० द०)

(२७) धा० २११ : मनो दान दुज मंप समप्पति अंजुलिय ।
धा० २१२ : अपंति अंजुलीय दान जान सोम लागए । (म० ना० द० शा० उ० स०)

(२८) धा० २१८ : मिलत हथ्य (हत्थ-पाठां०) कंकम (कंकन-पाठां०) लखिउ कइहिकन्द बहु काहु ।
धा० २१९ : इह अपुब्ब धीरत्त तुहि कंकन हथ्य नरिंद ।

(२९) धा० २१७ : सथ रिपु दिल्लियनाथो स पुव आला आय धुंसनं ।
धा० २३८ : सुनि स्रवननि प्रिथिराज कहु भयो निसानह घाउ ।

(३०) धा० २४२ : [मनुह लंक विग्रह करन चलउ रघुप्पति राउ-पाठां०]
धा० २४४ : [रामदल बंनर सबल] औहि रक्खण बहु बंध ।
(धा० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(३१) धा० २४५ : ... ... सहु दिक्खइ मयमत्त ।
धा० २४६ : दिक्खयहि मंत मयमत्त मत्त । (म० ना० द० उ० स०)

(३२) धा० २४६ : जु कहि जु कहि पिथिराज गहियो ।
धा० २४० : गहि गहि कहि सेनान सब चलि हयगय मिलि एक ।

(३३) धा० २४७ : जाणूं पावस झुम्मइ (घुम्मइ-पाठां०) अनिल हलि बद्दल बहु भेक ।
धा० २४८ : हयं गयं नरं भरं उने विये जलद्दर (जलद्दरं-पाठां०) ।

(३४) धा० २६३ : [रावत कइ स रथरथ्थनउ] रखत रक्खहि राव तिह ।
धा० २६४ : तैं रक्खे हिंदुवाण गजि गोरी साहंतो । (म० ना० द० शा० उ० स०)

(३५) धा० २६४ : पहु परनि जाहु दिल्ली ऊगै जु होइ घरे घर मंगुली (मंगली-पाठां०)
धा० २६५ : सूर मरन मंगली सार (स्यार-पाठां०) मंगली प्रिह आये । (म० शा० उ० स०)

(३६) धा० २६५ : जित चढ्ढि राइ राठौर सउं मरण सनंमुख मंडियइ ।
धा० २६६ : मरन दिजइ प्रिथिराज दसहि छत्रिय करि पयठो ।

(३७) धा० २६९ : दल छिंबियत नयक तउक्क (ठउक्क-पाठां०) परी ।

धा० २७० : उठक्की सेन सभि मीर मिल्ले । (धा० म० ना० द० शा० उ० स०)

(३८) धा० २७० : चढे चाहि चहुवान हरि सिंघ नायो ।
धा० २७१ : हरि जुहार दर सिंघ नयो चहुवान पहिल्लो । (मो० म० शा० उ० स०)

(३९) धा० २७६ : निडर निसंक जुझत रन भाठ कोस चहुवान गड ।
धा० २७७ : सम रठौरनि राठवर निडर जुज्झ गिरि जाम ।
(मो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(४०) धा० १७७ : दिनयर दल प्रिथिराज कूं चरिउ पंग सम साम ।
धा० २७८ : चंपति पिठोरिय गति चप्पइ हय पट्टन सहु देस । (म० शा० उ० स०)

(४१) धा० १७९ : जब लगि सहु दल रुक्कियो तब सुकन्ह हयवर चढ्यो ।
धा० २८० : चढत कन्ह सामंत हय जय जय कहै सहु देव । •(ना० शा० उ० स०)

(४२) धा० १८१ क : सिर अर्धौ वर स्वामिकै हनौ गयंदन जोट ।—मो०]
धा० २८२ : सिर सुंडे संधयो गयद कढ्ढ्यो कट्टारो । (म० ना० शा० उ० स०)

(४३) धा० २८३ : तिम यहि सो लोयन गंगधर तिमतिम संकर सिर धुन्यो ।
धा० १८४ : सुनि सीस ईस सिर अदहनइ धन धन कहि प्रिथिराज । (म० शा० उ० स०)

(४४) धा० २८७ : सामंत पंच खित्तहि खपिग गिरत मति भइ बिक्खहर (विप्पहर-पाठा०) ।
धा० २८८ : विप्पहर (विपहर-पाठा०) पहट्ट परयं हय गय नर भार सार हथ्थेन ।
(म० शा० उ० स०)

(४५) धा० २९० : सामंत निघट तेरह परिग नरवि सुवट्टिअ पंच सर ।
धा० २९३ : संग्र सपट्टिय नृपति रण दिय पारस परिकोट ।
(धा० मो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(४६) धा० ३०१ : मरन जानि मन मज्झ रिउ गिर लक्खिनह बघेल ।
धा० ३०० : जिने समर लषखन बघेल आहनति खग्गवर । (म० शा० उ० स०)

(४७) धा० ३०४ : सामत सत्त जुज्झे प्रथम ढिल्लीपति प्रिथिराज मड ।
धा० ३०५ : ढिल्लीपति ढिल्लीय संपत्तउ ।
(मो० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स०)

(४८) धा० ३०६ : जस मंडन नरभर सयल महि मंडन महिलानु ।
धा० ३०७ : पहिल्लहि (महिलहि—पाठा०) मंडन त्रिपति मिह कनकंति छलनानि । (मो०)

(४९) धा० ३१३ : गुरबंधघन (बंधव-पाठा०) श्रुति लोइ भई विपरीत गति ।
धा० ३१४ : सकल लोक पुच्छत गुरु दुच्छहिं ।
(मो० अ० फ० ना० द० शा० उ० स०)

(५०) धा० ३१९ : मरन छंडि महिला मन मोह्यो ।
धा० ३२० : विहि महिला महिला निसराई ।

(५१) धा० ३२० : सुनि सुनि समो राजगुरु नाई ।
धा० ३२१ : समउ जानि गुरराज रहि कहि कहि कवि सहु यत्त ।

(५२) धा० ३२७ : उभय उभय रिस उप्पज्यो मिलिय चंद गुरराज ।
धा० ३२८ : मिलिय चंद गुरराज विराजहि राज दर । (ना० द० शा० उ० स०)

(५३) धा० ३३२ : कहा पयपइ त्रिपति सुं कहो चंद गुरु भाखि ।
धा० ३३३ : कागद अप्पहि राजगुरु मुख जंपइ इहु यत्त ।

(५४) धा० ३३३ : कागद अप्पहि राजगुरु मुखि जंपइ इहु यत्त ।

धा० ३३४ : अन्य महिल दासी निरखि परखि पर्यंयन जोतु। (अ०फ०ना०द०शा०उ०स०)
(५५) धा० ३४० : सत्रन मंडि कनवज्जिनी स सुपनंतरि सथ्य ।
धा० ३४१ : सपनंतरि सुंदरिय रंभ लग्गी परिरंभह । (मो०)
(५६) धा० ३४२ : तिहि दिवस देव प्रिथिराज वर संम सुवर भर महल दिय (किय-पाठां०) ।
धा० ३४३ : करि महल मंत मंड्यो छंडहि चामंडराय घर बंद्री । (द० शा० उ० स०)
(५७) धा० ३४६ : जे भर भीर समुद्द सहहि ते बत्तीस हजार ।
धा० ३४७ : लग्या घर तिणि धरि गणहि ते पहु पंच हजार ।
(५८) धा० ३४७ : लग्या घर तिणि धरि गणहि ते पहु पंच हजार ।
धा० ३४८ : पंच हजारह मंहि जुडइ जे अग्या वर स्वामि ।
(५९) धा० ३४८*: कर पग्गी पज्जह सहइ ते सौ पंच अठामि ।
धा० ३४९ : तिनमंहि सौ जे भयहरण सीलसत्त जसजित्त ।
(६०) धा० ३४९ : तिनमंहि दसवारण दलण उप्पारहिं गयदन्त ।
धा० ३५० : तिनमंहि पंच प्रपंच से लखिय न गति तिन काज ।
(६१) धा० ३५९ : मिले सुरा पच्छिम हुतो चाहुवान सुरताण ।
धा० ३६० : मिले जाइ चहुवान सुरताण लग्गे । (धा० मो० ना० द० शा० उ० स०)
(६२) धा० ३६५ : दुह दुज्जो दुजो घरी दिन पलट्यो (पलट्यो-पाठां०) चहुवान ।
धा० ३६६ : दिन पलट्टं पलट्यो न मनु भुज बाहे सब साथ ।
(६३) धा० ३६६ : अरि भिर्यो (मिड्यो-पाठां०) मिटै न को लख्यो जु धाता पत्र ।
धा० ३६७ : विधात्रा लिखितं यस्य न तेन मुच्चंति मानवा ।
(६४) धा० ३६९ : तजि पुत्र मित्र माया सकल गहिय चन्द गज्जनह रहि ।
धा० ३७० : गहिय चन्द रह गज्जने जह सजन नूं नरिंद। (अ०फ०ना०द०शा०उ०स०)
(६५) धा० ३७५ : भवन भोग रहु छंडिकै किम जोगे (जोगी-पाठां०) रहु भट्ट।
धा० ३७६ : बहु संजोगी बहु संजोगी जमन परदाह ।
(६६) धा० ३७७ : इन इक दरहि विलंबिय मन न करिय कवि मंदु ।
धा० ३७८ : तिहि विठग्ग बविग्गन करिग सुरंचि अप्पतिय इच्छ । (शा० उ० स०)
(६७) धा० ३८१ : वर अनन्य (अन्यन-पाठां०) दीधो असीस ।
धा० ३८२ : दहत असीस न सिर नयो वन अच्छयो फुरमान ।
(धा० अ० फ० ना० द० शा० उ० स०)
(६८) धा० ३८३ : जिहि बहुत चन्द महिमान कीन ।
धा० ३८४ : करहि चन्द महिमान सब अगर धूप दिय देह ।
(मो० अ० फ० ना० द० शा० उ० स०)
(६९) धा० ३८५ : सुलत चन्द मन मरनसूं हम इच्छ्यो सुविहानु ।
धा० ३८६ : भड विहान दर धजे ता दुज्र निसान । (शा० उ० स०)
(७०) धा० ३९१ : [दौरि चंदि संमुह चले वे सुल्ले सुरतान ।—मो०]
धा० ३९२ : बोल्यौ सु चंद हजूर गाहि । (मो० ना० द० शा० उ० स०)
(७१) धा० ३९१ : जोगहि विरद्ध हम मिलण मत्ति ।
धा० ३९३ : हमहि मिलहि वे चंद सुनि विरहि दखिद सकोभ। (ना० द० शा० उ० स०)
(७२) धा० ३९९ : जोगहि विरद्ध हम मिलण मत्ति ।
धा० ३९४ : जोग भोग रह रीति सब सब जाणउ सुविहान ।

(७३) धा० ३९८ : सु [दु] रोग मन होग भो कढन करूं सु विहान ।
धा० ३९९ : जू कढ्ढग कूं पतिसाह दुही । (शा० उ० स०)
(७४) धा० ४०० : अखि हीन बलहीन तउ (भउ-पाठां०) को (का-पाठां०) मग्गह मति मह ।
धा० ४०१ : अखि विनट्ठी बल घट्यो मति नही सुलतान ।
(७५) धा० ४०५ : पहिचानि चंद घर धुनिग सीस । सिर नयो नहीं मन भई रीस ।
धा० ४०७ : रिस धुनि सीसु निषेधु कीय जिय लुभि चंद सुहाल । (ना०द०शा०स०उ०)
(७६) धा० ४०६ : समरि नरेस करि रीस सीस धुनहि न धनु सज्जहि ।
धा० ४०७ : रिस धुनि सीस निषेधु कीय जिय लुभि चद सुहाल ।
(७७) धा० ४१६ : हनौं रिपू घरियार सउ जउ अप्पइ विप बान ।
धा० ४१७ : इक्क बाण चहुवाण राम रावण उब्भविय । (ना०)
(७८) धा० ४२० : सुलताण परयो सो पुकरयो त दिन चंद राजन मरण ।
[धा० ४२२ : मरन चंद बरदिया राज पुनि सुनिग साह हनि ।—मो०] ।
(धा० अ० फ० ना० द० शा० उ० स०)

उपर्युक्त को देखने से ज्ञात होगा कि उक्ति-शृंखला के ७८ स्थलों में से ५४ स्थलों पर विभिन्न प्रतियों में ऐसे अंश आते हैं जो उस शृंखला को त्रुटित करते हैं, और अलग-अलग प्रतियों में इस शृंखला-त्रुटि की संख्या है : धा० : ११, मो० : १५, अ० फ० : १५, म० : २९,[1] ना० : ३३, द० : २७, शा० उ० स० : ४९ । शृंखला-त्रुटि उपस्थित करने वाले छन्द इन समस्त प्रतियों में अन्यथा भी सदोष हैं और प्रसङ्ग में अनावश्यक हैं, यह स्वतः देखा जा सकता है ।[2]

उपर्युक्त विश्लेषण से तीन बातें ज्ञात होती हैं :—

[१] धा०, मो० तथा अ० फ० में उक्ति शृंखला प्रायः सब से कम स्थलों पर त्रुटित है, ना० और द० में उसके प्रायः दूने स्थलों पर त्रुटित है, म० में तिगुने और शा० उ० स० में साढ़े तीन गुने । उक्ति-शृंखला के इस प्रकार अधिकाधिक त्रुटित होने का एक मात्र कारण ऐसे व्यक्तियों के द्वारा की हुई पाठ-वृद्धि होनी चाहिये जो इसे जान नहीं सके और इसलिए इसे सुरक्षित रखते हुए पाठ-वृद्धि न कर सके । अतः यह प्रकट है कि धा०, मो० तथा अ० फ० रचना के मूल पाठ के सबसे अधिक निकट हैं, ना० तथा द० अपेक्षाकृत दूर और म० तथा शा० उ० स० सब से अधिक दूर । यदि संक्षेप-क्रिया हुई होती तो परिणाम इसका ठीक उलटा मिलता—शा० उ० स० म० के पाठ सब से अधिक सुशृङ्खलित मिलते, उनसे कम ना० तथा द० के और इनसे भी कम अ० फ०, मो० तथा धा० के ।[3]

[1] ऊपर हम देख चुके हैं कि म० में रचना का दो-तिहाई पाठ ही है, पूरा पाठ होता तो यह संख्या कदाचित् ४४ के लगभग होती ।

[2] आगे 'पृथ्वीराज रासो का मूल रूप' शीर्षक के अन्तर्गत धा० में मिलने वाली उक्ति-शृंखला-त्रुटियों पर विचार किया गया है ।

[3] कई वर्ष पूर्व जब मुझे रचना के अन्य पाठ प्राप्त नहीं हुए थे, इस समस्या पर विचार मैंने प्राप्त तीन पाठों अ०, ना० तथा स० में मिलने वाले अत्युक्ति-सूत्र की सहायता से किया था । (पृथ्वीराज रासो के तीन पाठों का आकार-सम्बन्ध—हिन्दी अनुशीलन पौष-चैत्र, सं० २०१२) उक्त पाठों में प्राप्त हुए संख्यात्मक विवरणों की तुलना के अनन्तर मैं इस परिणाम पर पहुँचा था कि ना० और तदनन्तर स० में उत्तरोत्तर अ० की तुलना में अत्युक्ति-वृद्धि हुई दिखाई पड़ती है, इस लिये वे उत्तरोत्तर अ० के अधिकाधिक प्रक्षिप्त रूपांतर होंगे, यह नहीं कि ना० और फिर अ०

[२] पहले हमने देखा है कि मो० पाठ आकार में धा० का लगभग सवाया है, अ० फ० पाठ मो० का लगभग दूना है, म० ना० तथा द० पाठ अ० के लगभग तिगुने हैं, और श० उ० स० पाठ अलग-अलग म० ना० द० का भी तिगुना है। किन्तु यहाँ हम देखते हैं कि विभिन्न पाठों में शृंखला-त्रुटि इस अनुपात में नहीं मिलती है, यद्यपि मोटे ढंग पर धा०, मो० तथा अ० फ० की तुलना में वह ना० तथा द० में अधिक है, और ना० तथा द० की तुलना में वह म० तथा श० उ० स० में अधिक है। प्रश्न हो सकता है कि इसका कारण क्या है। इसका कारण यही है कि पाठ-वृद्धि मुख्यतः दो दिशाओं में हुई है: एक तो नए-नए प्रसङ्गों और नई-नई कथाओं की कल्पना की दिशा में और दूसरे प्राप्त प्रसंगों और कथाओं को कुछ और विवरणों के साथ प्रस्तुत करने की दिशा में। ऊपर शृंखला-त्रुटियों पर जो विचार किया गया है उसमें इस दूसरी दिशा में की हुई पाठ-वृद्धि ही ली जा सकी है, पहली दिशा में की हुई पाठ-वृद्धि नहीं, क्योंकि उसमें ऐसे ही कथा-प्रसंग देखे जा सके हैं जो रचना के सब से छोटे पाठ धा० तक में मिलते हैं, शेष कथा-प्रसंग छूट गए हैं।

[३] रचना के जो सब से छोटे पाठ धा० तथा मो० हैं, वे भी इस प्रकार किए गये प्रक्षेपों से मुक्त नहीं हैं। दो-एक स्थलों तक इस प्रकार की कोई बात होती, तो यह समझा जा सकता था कि धा० तथा मो० में पाई जाने वाली वह उक्ति-शृखला-त्रुटि अन्यों के द्वारा की हुई पाठ-वृद्धि के अतिरिक्त किसी और प्रकार से भी हुई हो सकती है, किन्तु एक दर्जन के लगभग स्थलों पर मिलने वाली यह उक्ति-शृखला-त्रुटियाँ प्रक्षेप पूर्ण पाठ-वृद्धि के कारण ही हुई हो सकती हैं, किसी अन्य प्रकार से नहीं।

छंद-शृंखला

ऊपर हमने जिस प्रकार धा० के छंदों को लेकर देखा है कि मूल रचना में आदि से अन्त तक उक्ति-शृंखलाएं रही होंगी, जो बीच में नवीन छंदों के रखने से उत्तरोत्तर त्रुटित होती रही हैं, उसी प्रकार यदि हम धा० के छंदों को लेकर पुनः ध्यान से देखें और विभिन्न पाठों का मिलान करें तो ज्ञात होगा कि पहले अनेक छंद या रूपक एक और अविभक्त थे किन्तु बाद में उनको विभक्त कर बीच-बीच में नए छंद रख दिए गए, जिससे पूर्ववर्ती छंद-शृखला रचना में अनेक स्थलों पर त्रुटित हो गई। नीचे धा० में आने वाले ऐसे रूपक दिए जा रहे हैं, जो रचना की किन्हीं भी प्रतियों में त्रुटित हुए हैं। उनकी रूपक-संख्या धा० से देते हुए, जिन प्रतियों में वे त्रुटित हुए हैं उन का उल्लेख किया जा रहा है।

(१) धा० ३३-३४ : छंद पद्धडी है। अ० फ०, ना० तथा द० में यह एक ही रूपक है किन्तु धा० तथा मो० में यह दो रूपकों में बँटा हुआ है, जिनके छंद अलग-अलग बताए गए हैं, यद्यपि बीच में कोई अन्य रूपक नहीं आते हैं। म० यहाँ खंडित है। श० उ० स० में धा० और मो० के दो रूपकों के बीच तीन अन्य रूपक भी आते हैं जो अन्य किसी प्रति में नहीं हैं।

(२) धा० ३६ . छंद पद्धडी है। धा० तथा अ० फ० में यह एक रूपक है। मो० में यह दो

उत्तरोत्तर स० के संक्षिप्त रूपांतरों के रूप में निर्मित हुए हों, क्योंकि संक्षेप-क्रिया में छन्द कम किए जा सकते हैं, पंक्तियाँ कम की जा सकती हैं, किन्तु यह नहीं हो सकता है कि संख्याएं घटा-बढ़ा दी जावें। संख्याओं में परिवर्तन केवल प्रक्षेप की दृष्टि से किए जा सकते हैं, और अ० की तुलना में ना० में और ना० की तुलना में स० में जो पाठ-भेद संख्यात्मक विवरणों में मिलता है उसमें अत्युक्ति-मूलक प्रक्षेप की प्रवृत्ति उत्तरोत्तर अधिकाधिक प्रबल दिखाई पड़ती है, इसलिए अ० पाठ की तुलना में ना० पाठ तथा ना० पाठ की तुलना में स० पाठ को परवर्ती होना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि उक्त परिणाम की पुष्टि उक्ति-शृंखला त्रुटियों के इन अधिक दृढ़ प्रमाणों द्वारा हुई है।

रूपकों में बँट गया है और दोनों के बीच में तीन नए रूपक आ गए हैं। म० संक्षिप्त है। द० शा० उ० स० में यह तीन तथा ना० में यही पाँच रूपकों में बँट गया है और इन खंडों के बीच अनेक छंद आते हैं जो धा० अ० फ० में नहीं मिलते हैं।

(३) धा० ४० : छंद पद्धडी है। धा० तथा अ० फ० में यह एक रूपक है। मो० में यह दो रूपकों में बँट गया है, और दोनों के बीच धा० ३९ (=अ० ६. दो० १) को रख दिया गया है। म० संक्षिप्त है। ना० द० शा० उ० स० में भी यह दो रूपकों में बँटा हुआ है, और बीच में धा० ३९ (अ० ६. दो० १) के अतिरिक्त एक अन्य रूपक भी रख दिया गया है।

(४) धा० १९३ : छंद दोहा है। यह धा० मो० अ० फ० ना० द० में एक रूपक है, किन्तु म० शा० उ० स० में दो और पंक्तियों को मिला कर दो रूपकों में बाँट दिया गया है।

(५) धा० २४१ : छंद भुजंगी है। यह धा० मो० अ० फ० में एक ही रूपक है, किन्तु म० ना० द० शा० उ० स० में दो रूपकों में बँट गया है, और उनके बीच में कुछ अन्य रूपक भी रख दिए गए हैं जो धा० मो० अ० फ० में नहीं हैं।

(६) धा० २६९ : छंद त्रोटक है। यह धा० अ० फ० म० ना० द० शा० उ० स० में एक ही रूपक है। मो० में इसे दो रूपकों में बाँट कर धा० २३९ को रख दिया गया है।

(७) धा० २९१ : छंद दोहा है। यह धा० मो० अ० फ० द० में एक ही रूपक है, किन्तु म० ना० शा० उ० स० में दो रूपकों में बँट गया है जिनके बीच में एक और रूपक रख दिया गया है।

(८) धा० २७० : छंद त्रोटक है। यह धा० अ० फ० में एक ही रूपक है, किन्तु मो० म० न० द० शा० उ० स० में इसे दो रूपकों में बाँटकर बीच में धा० २८७, २८८, २८९, २९०, २९१, २९२, २९३, २९४ तथा २९५ को तथा कुछ ऐसे रूपकों को भी रखा गया है जो धा० अ० फ० में नहीं हैं।

(९) धा० ३६०-३६२ : छंद भुजंगी है। यह मो० ना० द० उ० स० में एक ही रूपक है किन्तु धा० में दो रूपकों में और अ० फ० में तीन रूपकों में बँट गया है, जिनके बीच में अनेक रूपक ऐसे आते हैं जो धा० मो० में नहीं हैं, यद्यपि वे ना० द० शा० उ० स० में अन्यत्र आते हैं।

(१०) धा० ३६९ : छंद कवित्त है। यह केवल धा० में एक रूपक है, शेष समस्त अर्थात मो० अ० फ० ना० द० शा० उ० स० में दो रूपकों में बँट गया है : कवित्त के प्रथम चार चरणों के साथ अन्य दो चरण मिलाकर एक रूपक बना लिया गया है, बीच में अन्य अनेक रूपक और रख दिए गए हैं, तदनंतर पूर्ववर्ती कवित्त के शेष दो चरण एक स्वतन्त्र रूपक के रूप में आते हैं।

(११) धा० ३८३ : छंद पद्धडी है। यह धा० मो० अ० फ० ना० द० में एक ही रूपक है। शा० उ० स० में दो रूपकों में बँट गया है जिसके बीच में एक अन्य रूपक भी रख दिया गया है।

(१२) धा० ४०३-४०५ : छंद पद्धडी है। यह अ० फ० में एक रूपक है, धा० में यह दो रूपकों बँट गया है, मो० ना० द० शा० उ० स० में यह तीन रूपकों में बँट गया है, और बीच-बीच में दूसरे रूपक भी आ गए हैं, जिनमें से कुछ धा० अ० फ० में मिलते हैं और कुछ नहीं मिलते हैं।

इन छंदों को प्रसंग-शृंखला की दृष्टि से स्वतः देखा जा सकता है।[१] उपर्युक्त में द्वितीय अर्थात् धा० ३६ ही एक मात्र ऐसा छंद है जिसमें संयोगिता और उसकी सखियों की वसंतागमन में हर्षोत्फुल्लता का वर्णन करके अन्त के चार चरणों में एक भिन्न विषय-पृथ्वीराज के सामन्तों का मिलकर कन्नौज पर चढाई करने के निश्चय—का उल्लेख है। शेष छंदों में आदि से अन्त तक एक ही विषय है और उनकी छंद-शृंखला त्रुटित होने के साथ साथ प्रसंग-शृंखला भी त्रुटित हुई है।

[१] धा० के छंद-शृंखला-अतिक्रमण पर विचार 'पृथ्वीराज रासो का मूलरूप' शीर्षक के अन्तर्गत आगे किया गया है।

विभिन्न प्रतियों में उपयुक्त बारह छंद-त्रुटियाँ इस प्रकार आती हैं :—

धा० : १
अ० फ० : २
मो० : ६
म० : ४[1]
ना० : ७
द० : ७
शा० उ० स० : १०

यह ध्यान देने योग्य है कि विभिन्न प्रतियों के पाठों के बारे में जिस परिणाम पर हम ऊपर उक्ति-शृखला-त्रुटियों के आधार पर पहुँचे हैं, लगभग उसी परिणाम पर हम ही यहाँ छंद-शृंखला त्रुटियों के आधार पर भी पहुँच रहे हैं। अन्तर केवल मो० के सम्बन्ध में पड़ा है : वहाँ मो० प्रति धा० तथा अ० फ० के साथ दिखाई पड़ी थी, और यहाँ वह म० ना० द० के साथ है।

सब से कम शृंखला त्रुटि वाली प्रतियों में पूर्वापर सम्बन्ध

अब प्रश्न यह उठता है कि जब धा० मो० तथा अ० फ० में उक्ति-शृखला लगभग समान रूप से कम त्रुटित है, और छन्द-शृंखला धा० अ० फ० में सबसे कम त्रुटित है, फिर भी तीनों की रूपक-संख्या भिन्न भिन्न है, तो इन चारों के पाठों में कोई पूर्वापर सम्बन्ध भी है या नहीं, और यदि है तो वह किस रूप में है।

यदि हम अ० फ० के पाठ को लें, तो देखेंगे कि उसमें निम्न-लिखित उल्लेख-वैषम्य मिलते हैं :—

(१) अ० ८, भुज० १ में अचलराय, जयसिंह चन्देल, देवराज बारर, बरनराय, भीकम कमधुज्ज, रूपरायदाहिमा, सदाशिव, सारन तथा सेनचन्द्र पृथ्वीराज के साथ कन्नौज जाते हैं, किन्तु तदनन्तर न इनका उल्लेख उन योद्धाओं में होता है जो वहाँ युद्ध में मारे जाते हैं, और न वहाँ से लौटे हुए योद्धाओं की नामावली (अ० १२, पद्ध० ३) में होता है।

(२) अ० ९, भुजं० ३=धा० १६१ में जिन स्थानों के जयचन्द द्वारा विजित होने का उल्लेख है, उनमें से अधिकतर का उल्लेख, अ० ३, दो० २, ३, तथा नारा० १ में उसके पिता विजयपाल के द्वारा विजित स्थानों में उसके पहले ही मिलता है, यथा कर्णाट, गूर्जर, गुंड और मिथिला।

(३) अ० ६, साट० १=धा० ४७ में मंडोवर को पृथ्वीराज द्वारा दलित कहा गया है, और अ० ६, साट० २=धा० ४८ में उसी को जयचन्द द्वारा भी दलित कहा गया है।

(४) अ० १०, कवि० ५=धा० २५६ में गोविंदराय गुहलौत के मारे जाने का उल्लेख है, जब कि बाद में अ० १४, कवि० २९ में शहाबुद्दीन के अन्तिम युद्ध के समय की गोष्ठी में उसके सम्मिलित होने का भी उल्लेख हुआ है।

(५) अ० ११, कवि० २=धा० २८९ में पट्टन का शासक मान भट्टी (एक राजपूत) बताया गया है, जब कि अ० १४, कवि० १२ में उसके ब्राह्मण शासक का चामंडराय द्वारा पराजित किया जाना कहा गया है।

(६) अ० ११, कवि० ८ में पट्टन का स्वामी प्रतापराय कहा गया है, जो कन्नौज के युद्ध में जयचन्द की ओर से लड़ता है; अ० १८, कवि० ९ में इसका स्वामी सावलिंग सिंह बताया गया है, जो पृथ्वीराज की ओर से शहाबुद्दीन से लड़ता है।

[1] किन्तु म० में पूरी कथा का केवल दो-तिहाई आता है, इसलिए संपूर्ण कथा के अनुपात से यह संख्या ६ होगी।

(७) अ० ९. भुजंगी १ में० मारूराम कन्नौज गया है और वहाँ लड़ा भी है (अ० ११. कवि० ४ =धा० २९२); पीछे वह पुनः पृथीराज की ओर से शहाबुद्दीन के साथ के उसके अन्तिम युद्ध में भी लड़ता है (अ० १५. कवि० १९, १७. कवि० ७, कवि० ९, कवि० १०, दो० २)। फिर भी उन योद्धाओं की सूची (अ० १२. पद्ध० ३) में इसका नाम नहीं है जो पृथ्वीराज के साथ कन्नौज-युद्ध के अनन्तर वापस होते हैं।

(८) अ० २. पद्ध० ७ में मोरीराज के दल को सोमेश्वर ने नष्ट किया था, यह कहा गया है, अ० ६. साट० १ में पुनः पृथ्वीराज के सम्बन्ध में यही बात कही गई है, फिर भी अ० १५. कवि० १८ में वह पृथ्वीराज की ओर से शहाबुद्दीन से लड़ा है।

(९) अ० १३. कवि० १८ तथा अ० १४. वार्त्ता ४ में शहाबुद्दीन को जलालुद्दीन नन्दन कहा गया है, जबकि अ० १९. कवि० १३ में जलालुद्दीन स्वयं शहाबुद्दीन है।

(१०) अ० १६. दो० ४ तथा पूर्ववर्ती कुण्डलिया में जैत के मारे जाने का उल्लेख है, किन्तु अ० १७. साट० ३ तथा अ० १७. भुजं० ३ में उसे शहाबुद्दीन के विरुद्ध लड़ता हुआ दिखाया गया है।

(११) १८. कवि० १० में 'वदी' (=कृष्णपक्ष) का उल्लेख है, जबकि उसके पूर्व ही अमावास्या का उल्लेख हुआ है (१६. कवि० ७, १७. गो० ५)।

(१२) अ० १४. दो० २९ में चामंड राय को मानपुंडीर के कुल का कहा गया है, किन्तु अ० १४. दो० ३१ और दो० ३२ में उसे दाहिमा कहा गया है जब कि दाहिमा तथा पुंडीर दो भिन्न-भिन्न राजपूत जातियाँ हैं (अ० १४. दो० २९)।

(१३) अ० खण्ड ४ में जिन योद्धाओं का उल्लेख गोरी-पृथ्वीराज युद्ध में होता है वे हैं:— चामंडराय, प्रसंगराय खीची, देवराय बागरी, मदनसिंह परिहार, जाज यादव, जामानी यादव, सलप पँवार, तथा आजानु बाहु लोहाना। किन्तु बाद में (अ० ७. गो० २) में जिन सामन्तों को उक्त युद्ध में विजय का श्रेय दिया जाता है वे हैं: नीडुर, पहाड़राय तोमर और अल्ह, जिनका नाम भी खण्ड ४ में कहीं नहीं आता है।

(१४) अ० खण्ड ५ में जिन योद्धाओं का उल्लेख भीम-पृथ्वीराज युद्ध में होता है, वे हैं:— देवराय बागरी, जामानी यादव, जाज यादव, रामराय बड़गूजर, जैत पँवार, गोविन्दराय गुहलौत, गाजी गौड़, अतारा‍व हाड़ा, लंगा लंगरीराय, बलीराय, कहरराय कूरंभ, नियराय, गजू, अजू, अजूत, पहाड़ पारारि, और हमीर: किन्तु बाद में (अ० ७. गो० २) में जिन सामन्तों को उक्त युद्ध में विजय का श्रेय दिया जाता है, वे हैं दरसिंह तथा विझराज, जिनका कोई उल्लेख खण्ड ५ में नहीं होता है।

(१५) अ० ११. कवि० २७ (= धा० २६६) में अपने सामन्तों में यह विश्वास दिलाने पर कि वे कन्नौज से दिल्ली के 'पंच घाटि सौ कोस' के मार्ग भर एक-एक करके जूझते हुए जिस प्रकार भी सम्भव होगा पृथ्वीराज और संयोगिता को दिल्ली पहुँचा देंगे, पृथ्वीराज दिल्ली की ओर मुड़ पड़ता है। अ० १२. कवि० २३ (=धा० ३०४) में उन सामन्तों की नामावली मार्ग की उस दूरी के साथ दी गई है जो उन्होंने जूझते हुए पृथ्वीराज और संयोगिता को तै कराई है, और इसका योग पूर्वोक्त छन्द में दी हुई कन्नौज से दिल्ली की दूरी से मिलती है। अ० फा० के विभिन्न अतिरिक्त छन्दों में, जो धा० में नहीं मिलते हैं, अ० १२. कवि २३ (=धा० ३०४) में उल्लिखित सामन्तों के अतिरिक्त निम्नलिखित के भी लड़ते हुए जूझ जाने का विवरण मिलता है, और वह भी अ० १२. कवि० २३ (= धा० ३०४) के ठीक पूर्व:—

अ० १२. कवि० १६: पट्टन के चालुक कचरा राय का,
अ० १२. कवि० १७, तथा कवि० २०: जंघारा राव भीम का,
अ० १२. भुज ० तथा कवि० १: सिंह (सादूल) बारर का,

अ० १२ कवि० २० : अजमेर के सागर गौड़ का,
अ० १२ कवि० २० : एक जाँगरा झूर का।

प्रकट है कि यह विस्तार प्रक्षिप्त है।

इस उल्लेख-वैषम्य के अतिरिक्त अ० फ० में तीन ऐसे इतिहास-प्रसिद्ध व्यक्तियों के उल्लेख भी आते हैं जो पृथ्वीराज के बहुत पीछे हुए हैं :—

(१) अ० ११. कवि० ६ : महाराष्ट्रपति चन्द्रराय,
(२) अ० १४. कवि० ६—अ० १६. कवि० २ : चित्तौर नरेश रावल समरसी,
(३) अ० १५. कवि० ८ : हम्मीर देव।

कन्नौज के युद्ध में महाराष्ट्रपति चन्द्रराय जयचन्द की ओर से सम्मिलित हुआ है, जब कि उसका राज्य-काल सं० १२०४ से १२१७ तक था।[1] गोरी और पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से रावल समरसी सम्मिलित हुआ है, जब कि उसके शिलालेखादि सं० १३३० से १३५८ तक के मिलते हैं।[2] वर-प्राप्ति के लिए हमीर के द्वारा देवी को अपना सिर काट कर भेंट करने की बात कही गई है,[3] जब कि उसने सं० १३५८ में अलाउद्दीन से लड़ कर वीर गति प्राप्त की थी।

किन्तु इनमें से एक भी धा० या मो० में नहीं है, यह तथ्य भी इसी ओर संकेत करता है कि अ० फ० पाठ धा० तथा मो० पाठों के बाद का है।

यहाँ पर यह शंका उठाई जा सकती है कि यदि अ० फ० पाठ धा० तथा मो० के बाद का है तो अ० फ० पाठ में भी लगभग उतनी ही उक्ति-शृंखला-त्रुटि क्यों मिलती है जितनी धा० अथवा मो० में मिलती है और छन्द शृंखला त्रुटि भी प्रायः बराबर ही किन्तु मो० से बहुत कम मिलती है। इसका समाधान यही है कि अ० फ० के प्रक्षेपकार ने मुख्यतः नवीन प्रसङ्ग तथा कथा-कल्पना की दिशा में प्रक्षेप किया, प्राप्त प्रसंगों में विवरण विस्तार का यत्न बहुत कम किया, जिससे कि पूर्व प्राप्त पाठ की उक्ति और छन्द शृंखलाएँ बहुत कुछ सुरक्षित रह सकीं; यह भी असम्भव नहीं है कि उक्ति और छन्द-शृंखलाओं को जान कर पाठवृद्धि करते हुए उसने उन्हें बचाने का यत्न किया हो।

कुछ समय पूर्व[4] 'पृथ्वीराज-रासो का लघुतम रूपान्तर (?)' शीर्षक एक लेख लिखते हुए मैंने धा० तथा मो० में कुछ ऐसी बातें दिखाई थीं कि जिनसे धा० और मो० रचना के पूर्ण पाठ की प्रतियाँ न ज्ञात होकर किसी प्रक्षेपयुक्त छन्द-चयन या संक्षेप मात्र की प्रतियाँ प्रतीत होती हैं। ये बातें तीन प्रकार की थीं। एक तो धा० पाठ के अन्त में मिलने वाले दोहे और उसकी पुष्पिका के सम्बन्ध की थी, जिनमें रचना को 'पृथ्वीराज रासउ रसाल' कहा गया है, दूसरी उन प्रसङ्ग-त्रुटियों के सम्बन्ध की थी जो धा० और मो० के पाठों में ही मिलती हैं, अन्य पाठों में नहीं, और तीसरी उन पाठ और प्रसङ्ग-त्रुटियों के विषय की थीं जो धा० और मो० के अतिरिक्त अ० फ० में भी मिलती हैं। नीचे उक्त लेख के आवश्यक अंश दिए जा रहे हैं :—

ऊपर उद्धृत [धा० तथा मो० का] पुष्पिकाओं को ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि यद्यपि मो० में रचना का नाम "पृथ्वीराज रासु (रासौ)" दिया गया है, धा० में उसे "राजा श्री प्रिथीराज चहुआण रासु रसाल" कहा गया है। अभी तक जितनी भी अन्य प्रतियाँ रचना की प्राप्त हुई हैं,

[1] भांडारकर : अर्ली हिस्ट्री ऑव दि डेकन, पृ० २०९।

[2] ,, : इन्स्क्रिप्शन्स ऑव नॉर्दर्न इण्डिया, पृ० ८२-५२।

[3] तुलना० 'हीं रनथभउर नाँह हमीरू। कलपि माथ जेहँ दीन्ह सरीरू।' जायसी-ग्रंथावली (हिन्दुस्तानी एकेडेमी) 'पद्मावत' ४९१.३।

[4] दे० हिन्दी अनुशीलन, जुलाई-सितम्बर, १९५७, पृ० ९-१५।

उनमें से किसी में उसे "रसाल" नहीं कहा गया है। इतना ही नहीं, इस प्रति के पाठ के अन्त में एक दूहा आता है, और इसमें भी रचना का नाम यही है:—

सा... ... ...मरणहु चंद नरिंद।
रासउ रसाल नवरस निबंधि अघरिज इंदु फणिंद॥

और यह दूहा भी अन्य पाठ या प्रति में नहीं मिलता है। अतः उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने से पूर्व इस 'रसाल' शब्द पर विचार कर लेना आवश्यक होगा।

कोशों में इस शब्द के आम, ईख, गेहूं आदि कुछ अर्थ मिलते हैं, जिनमें से कोई यहां संगत नहीं है। इससे मिलता हुआ एक शब्द 'रसालु' मिलता है, जिसका प्रयोग प्राकृत ग्रंथों में हुआ है, और 'पाइअ सद्द महण्णवो' में इसका अर्थ "मज्जिका या राज-योग्य पाक विशेष" देते हुए बताया गया है कि यह घृत, मधु, दही, मिर्च तथा चीनी से बनता है। इस अर्थ से भी हमें कुछ अधिक सहायता नहीं मिलती है। किन्तु इस शब्द का एक और प्रयोग भी मिलता है—वह है संकलन या चयन-ग्रंथ के अर्थ में। एक अज्ञात लेखक द्वारा संकलित 'उपदेश रसाल' नामक एक ग्रन्थ है, जिसमें जैन धर्मोपदेश को लक्ष्य करके अनेक कथा-कहानियाँ रत्नमन्दिर कृत 'उपदेश तरंगिणी' तथा अन्य ग्रन्थों से उद्धृत की गई हैं। उसकी पुष्पिका में लिखा है:—

"इति श्री उपदेश रसाल नामा ग्रन्थ उपदेश तरंगिणी २४ प्रबन्धादि बहु शास्त्राण्यऽवलोक्यउ [द्] धृतः[१]

यह अवश्य है कि 'रसाल' शब्द का यह प्रयोग पाक-विशेष अर्थ वाले 'रसाल' का ही एक साहित्यिक उपयोग प्रतीत होता है। मुझे ऐसा लगता है कि ऊपर 'पृथ्वीराज रासो' के साथ आए हुए 'रसाल' शब्द का अभिप्राय भी कुछ इसी प्रकार का है: 'पृथ्वीराज रासो' के विविध प्रसंगों से कुछ उत्कृष्ट छंद लेकर उक्त पाठ को तैयार किया गया, इसीलिए उसे 'पृथ्वीराज रासउ रसाल' कहा गया।

'रासउ रसाल' के छन्द-संकलन पर दृष्टि डालने पर यह तथ्य प्रमाणित हो जाता है।

(१) 'रासउ रसाल' में खट्टू में द्रव्य-प्राप्ति प्रकरण[२] का केवल एक छन्द है:—

[खट्टू आखेटक रवन] भट्टिम सुरस्थल थांनु।
नागवरी गवरी सुरन मति निम्मल परधांन॥ (धा० २६=स० २४.१)

कथा में इस छन्द की संगति क्या है, यह उक्त प्रकरण के अन्य छन्दों के अभाव में ज्ञात नहीं होता है।

(२) 'रासउ रसाल' में दिल्ली-दान प्रकरण[३] के केवल निम्नलिखित दो छन्द हैं:—

जोगिनिपुर चहुवान लिय सुतिय पुत्त नरेस।
अनंगपाल तोंवर तिरण किय तीरथ परवेस॥ (धा० २८=स० १८.९६)
पटदह सह सामन्त सजि बजै निरघोष सुनिंद।
सोमेसुर नन्दन अटल दिल्ली सुथिर नरिंद॥ (धा० २९=स० १८.१०४)

स्वभावतः यहाँ पर प्रश्न उठता है कि योगिनीपुर (दिल्ली) को चहुवान पृथ्वीराज ने किस प्रकार लिया। अतः यह प्रसंग भी उसमें अधूरा रह जाता है।

[१] दे० 'कैटेलॉग आव् टॉड कलेक्शन इन दि रॉयल एशियाटिक सोसाइटी लाइब्रेरी,' जर्नल ऑव् दि रायल एशियाटिक सोसाइटी, अप्रैल १९४०, पृ० १३२।

[२] अ० २, साट० ३ से अ० २, कवि० ४ तक; स० खंड २४।

[३] अ० २, दो० १७ से अ० २, दो० २२ तक; स० खंड १८।

(३) 'रासउ रसाल' में जयचन्द तथा संयोगिता के पूर्व-परिचय,[1] भीम चौलुक्य तथा शहाबुद्दीन गोरी से पृथ्वीराज के संघर्ष और इंछिनी विवाह[2] के एक भी छन्द नहीं हैं। उसमें दिल्ली-दान प्रकरण के बाद ही 'कनवज्ज के राजा की बात' प्रारम्भ हो जाती है और हमें संयोगिता प्रथम दर्शन में मृगों को अपने हाथों से मवाकुर चुगाती हुई दिखाई पड़ती है।[3] यह संयोगिता कौन है, न इस छंद में कहा जाता है और न इसके पहले कहीं। इसी प्रकार आगे कैंवास-वध प्रकरण[4] में पट्टराज्ञी इंछिनी के ही बुलाने पर आखेट से आकर पृथ्वीराज कैंवास का वध करता है और 'रासउ रसाल' में वहाँ इंछिनी पट्टराज्ञी होते हुये भी[5] एक ऐसे पात्र के रूप में हमारे सामने आती है जिससे पहले से हम बिलकुल परिचित नहीं हैं। 'रासउ रसाल' की कथा में जयचन्द, संयोगिता और इंछिनी के पूर्व-परिचय का अभाव इसलिए प्रबन्ध-त्रुटि लगता है। कथा में भीम चौलुक्य और शहाबुद्दीन गोरी से संघर्ष की कथायें इंछिनी विवाह की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती हैं।

(४) 'लघु पाठ' (अ० फ०) में जयचन्द ने संयोगिता के पास उसकी कुछ सखियों को इसलिए भेजा है कि वे उसे पृथ्वीराज के अनुराग से विरत करें, और इस प्रकरण में जयचन्द की उन दूतियों तथा संयोगिता का एक अच्छा संवाद है।[6] 'रासउ रसाल' में इस प्रकरण के कुछ स्फुट छन्द ही हैं, जिनमें उक्त संवाद सुशृंखलित और उत्तर-प्रतिउत्तर पूर्ण नहीं है। उदाहरण के लिए दूतियाँ प्रेम की तुलना में यौवन की जो महत्ता प्रतिपादित करती हैं,[7] उसका कोई उत्तर संयोगिता की ओर से नहीं है, जो प्रसंग में अनिवार्य है।

(५) कैंवास-वध प्रकरण में 'लघु पाठ' (अ० फ०) के वे छन्द 'रासउ रसाल' में नहीं हैं जिनमें इंछिनी ने पृथ्वीराज को कैंवास को कर्नाटी के कक्ष में दिखाया है।[8] उक्त प्रकरण में इस प्रकार के संकेत के अभाव में पृथ्वीराज का कैंवास को बाण का संधान कर मारना, जैसा बाद के छन्दों में आया है, किसी प्रकार संभव नहीं लगता है।

(६) 'रासउ रसाल' में पृथ्वीराज के साथ जाने वाले १०६ योद्धाओं की वह संक्षिप्त परिचय-युक्त सूची नहीं है जो 'लघु पाठ' (अ० फ०) में है।[10] इन योद्धाओं में से अधिकतर के नाम 'रासउ रसाल' में भी बाद में आने वाले कन्नौज-युद्ध प्रकरण में आते हैं। अतः इस सूची के अभाव में उक्त योद्धाओं का उल्लेख अत्यन्त आकस्मिक लगता है, और कभी-कभी तो वहाँ तक नहीं पता चलता है कि कौन किस ओर से युद्ध कर रहा है।

इन प्रबन्ध-त्रुटियों से 'रासउ रसाल' का एक चयनात्मक संक्षेप मात्र होना प्रमाणित है। यह चयन किस पाठ से हुआ, यह दूसरा प्रश्न है जो विचारणीय है। ऊपर हम यह बता ही चुके हैं कि 'रासउ रसाल' के प्रायः समस्त छन्द 'लघु पाठ' (अ० फ०) में आते हैं। पुनः 'लघु पाठ' (अ० फ०)

[1] अ० खंड १; स० खंड ४५—४७।

[2] अ० खंड ४—५, स० खंड १२—१३।

[3] धा० ३५, अ० ६, रासा १, स० ४८, ७१।

[4] अ० खंड ७, स० खंड ५७, धा० ४८—१०६।

[5] धा० ६१।

[6] अ० ६, दो० ४—खंड के अन्त तक; स० खंड ५०।

[7] धा० ५३; अ० ६, दो० ८; स० ५०.४४।

[8] अ० ७, दो० ६—दो० १०, स० ५७, ८२—८६।

[9] अ० ७, दो० ११; स० ५७, ८७; धा० ६८।

[10] अ० ८, भुजं० १; स० ६१, १०९—१२२।

के भी समस्त छन्द, आधे दर्जन के लगभग छन्दों को छोड़कर, उस पाठ में आते हैं जिसे 'मध्यम'(ना०) कहा जाता है, और 'मध्यम' के भी अधिकतर छन्द उस पाठ मे आते हैं जिसे 'वृहद' (ना० उ० स०) कहा जाता है। किन्तु 'रासउ रसाल' में तीन-चार छन्दों को छोड़ कोई छन्द ऐसे नहीं हैं जो 'मध्यम' या 'वृहद' में हों और 'लघु' में न हों, इसलिए यह प्रकट है कि 'रासउ रसाल' 'लघु' का ही एक संकलित संक्षेप हैं।

इस तथ्य की पुष्टि एक और प्रकार से भी होती है। 'रासउ रसाल' में जो पाठ-भ्रंश आदि के स्थल हैं, उनमें से कुछ 'लघु पाठ' (अ० फ०) में भी पाए जाते हैं। नीचे इस प्रकार के दो प्रमुख उदाहरण दिये जा रहे हैं :—

(१) 'रासउ रसाल' में नीचे लिखी गद्य-वार्ता आती है[1] :—

"पात्र नाम श्रृपंकांगी नेतचंगी कुरंगी कोकाक्षी कोकिला रागीमें भागवतानी अंगाल लोल ढोल एक बोल अमोल पुष्पांजली पग सिर नाइ जयति पिय कामदेव।"

मो० में भी पाठ लगभग यही है, केवल साधारण पाठांतर के अतिरिक्त अन्त में आए हुये 'पिय' के स्थान पर पाठ 'बिअ' है।

प्रकट है कि यह केवल पातरों (नर्तकियों) की नामावली नहीं है, यह किसी छन्द का एक त्रुटित रूप है, जिसमें नर्तकियों के नाम गिनाकर कहा गया है कि उन्होंने पंग (जयचन्द) के सिर पर पुष्पांजलि डालते हुये एक स्वर से कहा, "हे प्रिय (मो० पाठ के अनुसार 'दूसरे') कामदेव, तुम्हारी जय हो!"

'लघु पाठ' (अ० फ०) में भी इस छन्द की स्थिति यही है, केवल इसे उसमें 'वार्ता' नहीं कहा गया है, न 'पात्र नाम' का शीर्षक दिया गया है, और अन्त में आये हुए 'पिय' या 'बिअ' के स्थान पर पाठ 'तुव' है।[2] केवल एक प्रति 'लघु पाठ' की ऐसी है जिसमें यह अंश एक साटक (शार्दूल विक्रीडित) के रूप में इस प्रकार आता है[3] :—

दीपांगी चन्द्रनेत्रा नलिन अलि मिलो नैनरंगी कुरंगी।
कोकाषी दीर्घनासा सुरसरि कलिरवा नारिदं सारवंगी।
इंद्रानी लोल ढोला चपल मतिधरा एक बोली अबोली।
वृहवा बानी विसाला सुभ गिरवरा जैतरभा सुबोली॥

मेरा अपना अनुमान कि पाठभ्रंश के पूर्व 'लघु पाठ' में छन्द कुछ इस प्रकार रहा होगा :—

दीपांगी चन्द्रनेत्रा नेत्रचंगी कुरंगी।
कोकाक्षी कोकिलानी राग मे भागवानी।
अगोलं लोल ढोलं एक बोलं अमोलं।
पुष्पांजलि पंग सिर नाइ जयति बिअ कामदेव॥

और किसी प्रकार पत्र-क्षति के कारण जब इस छन्द के कुछ अंश त्रुटित हो गए, 'रासउ रसाल' तथा 'लघु पाठ' (अ० फ०) की प्रतियों में इसका त्रुटित पाठ ही उतरा। तदनंतर छन्द का रूप तथा आशय पूरा स्पष्ट न होने के कारण 'रासउ रसाल' में इसे 'वार्ता' कह कर 'पात्र नाम' का शीर्षक दे दिया गया, जब कि 'लघु पाठ' की प्रतियों में इसे यथावत् रहने दिया गया; केवल 'लघु पाठ' की उपर्युक्त

[1] धा० १८४ के पूर्व; स० ६१.८४४।

[2] आ० ९, साट० ३।

[3] स० १०.४०८; यह प्रति पूना के भांडार ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट की संख्या १४५५ [१८८१-९५] (उपर्युक्त स०) है।

अपवाद वाली प्रति (म०) के आदर्श में त्रुटित पाठ को प्रक्षेप करके एक भिन्न छन्द के रूप में पूरा कर लिया गया।

(२) 'रासउ रसाल' में एक—निम्नलिखित में से प्रथम—तथा 'लघु पाठ' की समस्त प्रतियों (अ० फ०) में निम्नलिखित दो छन्द 'मध्यम' (ना०) तथा 'वृहद्' पाठ (शा० उ० स०) में मिलनेवाली 'दिल्ली किल्ली कथा' के ऐसे हैं जो उस कथा के अन्य छन्दों के अभाव में बिलकुल बेतुके लगते हैं।[1] इन छन्दों में जगजोति व्यास ने अनंगपाल से [दिल्ली की] कीली को ढीली कर देने का भावी दुष्परिणाम घोषित किया है :—

अनंगपाल चक्कवै बुद्धि जो इसी उकिल्लिय।
भयौ तुअर मतिहीन करी किल्लीय तैं ढिल्लिय।
कहै व्यास जगजोति अगम आगम हौं जानौं।
तुअर तैं चहुआन अंत हुवै हैं तुरकानौं।
तुंअर सु अवट्टि मंडव धरह इक्क राय बलि विक्कवै।
नवसत्त अन्त मेवात पति इक्क छत्त महि चक्कवै॥ (धा० २७=स० ३.२६)
सोरै सै सयोचरै विक्रम साक वदीत।
दिल्ली धर मेवासपति लैहि पग बल जीत॥
(अ० २. दो० २=स० ३.४४)

यह जगजोति व्यास कौन था, दिल्ली की यह कीली अनंगपाल ने क्यों और कैसे ढीली की—आदि बातों का इनमें कोई उल्लेख नहीं होता है। अतः ऐसा लगता है कि 'लघु पाठ' (अ० फ०) के आदर्श के इस प्रकरण में बुरी तरह से खण्डित हो जाने के कारण 'लघु पाठ' की प्रतियों (अ० फ०) में केवल दो छन्द आ पाए और 'रासउ रसाल' में इनमें से भी एक ही लिया गया।

इन दो पाठ-त्रुटियों में से कोई भी 'वृहद् पाठ' (शा० उ० स०) नहीं आती है और 'मध्यम पाठ' (ना०) में केवल प्रथम आती है, दूसरी नहीं; अतः इन पाठ-त्रुटियों से यह भी स्पष्ट ज्ञात होता है कि 'रासउ रसाल' का संकलन 'लघु पाठ' (अ० फ०) से किया गया है, 'मध्यम' (ना०) या 'वृहद्' (शा० उ० स०) से नहीं।

यह 'लघुतम रूपान्तर' (धा० मो०) प्रक्षेपों से भी शून्य नहीं है। इसका एक प्रक्षेप तो अति प्रकट है। 'पृथ्वीराज रासो' के 'षट ऋतु वर्णन' के छन्द[2] संयोगिता के साथ पृथ्वीराज के दिल्ली-आगमन के अनन्तर के नवदंपति के संभोग शृंगार के हैं, यह भली भाँति प्रमाणित है, क्योंकि इनमें से एक छन्द में 'संयोग भोगायते' शब्दावली आती है,[3] और 'संजोगि' ग्रन्थ भर में संयोगिता के लिए आया है। किन्तु धा० और मो० में यह छन्दावली पृथ्वीराज के कन्नौज प्रयाण के पूर्व आती है, और मो० में यहाँ तक कथा गढ़ ली गई है कि पृथ्वीराज की छः रानियाँ हैं जो कन्नौज-प्रयाण से उसे कम से कम एक वर्ष तक—प्रत्येक अलग-अलग एक-एक ऋतु की रमणीयता की ओर उसका ध्यान दिलाते हुए—रोक लेती हैं। इस प्रसंग में विचारणीय यह है कि 'पृथ्वीराज रासो' के समस्त पाठों में इस ऋतु-वर्णन के बहुत पूर्व यह कहा जा चुका है कि जयचंद के राजसूय यज्ञ और उसके साथ ही होने वाले संयोगिता के

[1] धा० २७; अ० २. कवि० ६ तथा २. दो० २ आ; स० ३.२६ तथा ३.४४।
[2] धा० १०७-११२, अ० १३. मा० २-सा० ७; स० ६१.९; ६१.१८; ६१.२७, ६१.३९; ६१.४९; ६१.६२।
[3] अ० १३. सा० २; स० ६१.९; धा० १०७ [धा० में यह शब्दावली छूटी हुई है, किन्तु मो० में है]।

स्वयंवर के लिए एक विशिष्ट योग युक्त मुहूर्त निश्चित हो गया और उस मुहूर्त को ध्यान में रखते हुए पृथ्वीराज ने कन्नौज पर चढ़ाई कर दी :—

सैंयंवर संग अद जग्गु काज।
विद्वज्जन सुधि दिनधरहु आज ॥[1]
रवि जोग पुष्य ससि तीय धाम।
दिन धरिग देउ पंचमि प्रमान ॥[2]
पर बछह देखित भयो मलान।
विग्रहन देस चढ़ि चाहुआन ॥

अतः यह प्रकरण न केवल सर्वथा असंगत है, यह कल्पना भी कि उक्त मुहूर्त के साल भर आगे-पीछे तक पृथ्वीराज जयचन्द के यज्ञ-विध्वंस और संयोगिता के अपहरण के लिए कन्नौज जा सकता था, नितान्त हास्यास्पद है।

यह अवश्य है कि वे गद्य-वार्ताएँ जो मो० में विभिन्न रानियों का इस प्रसंग में उल्लेख करती हैं धा० में नहीं हैं, किन्तु गद्य-वार्ताओं के विषय में, जैसा ऊपर कहा है, इन प्रतियों के प्रतिलिपिकार बहुत सावध नहीं ज्ञात होते हैं, क्योंकि दोनों में ऐसी अनेक गद्य-वार्ताएँ आती हैं जो एक में हैं तो दूसरी में नहीं हैं, इसलिए दोनों के इस पाठांतर पर अधिक बल नहीं दिया जा सकता।

फलतः (१) 'लघुतम रूपान्तर' की दोनों प्राप्त प्रतियाँ (धा० मो०) 'पृथ्वीराज रासो' के एक छन्द-चयन मात्र की प्रतियाँ हैं,

(२) यह छन्द-चयन 'पृथ्वीराज रासो' के 'लघु पाठ' (अ० फ०) से किया गया है, तथा

(३) छन्द-चयन के अनन्तर भी इस पाठ (धा० मो०) में प्रक्षेप किया गया है।

इसलिए इस पाठ (धा० मो०) को 'पृथ्वीराज रासो' का 'लघुतम पाठ' या उन्हीं अर्थों में 'लघुतम रूपान्तर' कहना और यह समझना कि इसे 'पृथ्वीराज रासो' का मूल—या कम से कम प्राचीनतम—पाठ माना जा सकता है, ठीक नहीं है।

किन्तु इधर और अधिक अध्ययन करने पर उक्त लेख में उठाई गई शंकाओं में से कुछ के किंचित् भिन्न समाधान मुझे स्वयं मिले, जिनका उल्लेख यथाक्रम नीचे किया जा रहा है।

धा० पाठ का अंतिम दोहा तथा उसकी पुष्पिका में दिया हुआ रचना का "प्रिथीराज चहुआण रासु (=रासउ) रसाल" नाम किसी भी अन्य प्रति में—मो० तक में—नहीं मिलते हैं। धा० के इस अन्तिम दोहे के स्थान पर जो छन्द समस्त पूर्ण पाठ की प्रतियों में समान रूप से मिलता है, वह [मो० के अनुसार] निम्नलिखित है :—

मरन चंद बरदीआ राजधुनि साह हन्युं (=हण्यउ) सुनि।
पुष्पांजलि असमांन सीस छोडि (=छोडी) स देवतनि।
मेछ्छ अवध्धित धरणि धरणि नव ग्रीय सुहसिग।
तिनहि तिहीं सं योति (=जोति) योति (=जोति) योतिहि (=जोतिह) संपत्तिग।
रासु (=रासउ) असंभु नवरस सरस चंदु चंदु (छन्दु ?) षीश अमीश सम।
शृंगार वीर करुण विभक्षु (विभच्छु ?) भय रुद्र सूत (सांत ?) हसांत शम (सम)॥

धा० के उक्त अन्तिम दोहे का भाव प्रायः वही है जो इस छन्द का है, दोहे की प्रथम पंक्ति की शब्दावली तक इस छन्द की भी प्रथम पंक्ति में मिलती है : दोहे के 'मरण', 'चंद' तथा 'नरिंद' इस

[1] धा० ३३; अ० ६, पद्य० २ : स० ४८. ७१।

[2] धा० ३६; अ० ६, पद्य० ४; स० ४८. ९९-१०० तथा ४८. ११७।

छन्द की प्रथम पंक्ति में मिलते ही हैं—केवल दोहे के 'नरिंद' के स्थान पर छन्द में उसका पर्याय 'राज' शब्द आता है; दोहे की दूसरी पंक्ति का पूर्वार्द्ध भी इस छन्द की अन्तिम पंक्ति के पूर्वार्द्ध के रूप में मिलता है, केवल दोहे के 'रसाल' के स्थान पर छन्द में 'असंभु' तथा उसके 'निबंधि' के स्थान पर इसमें 'सरस' शब्द आते हैं। ऐसा लगता है कि धा० के किसी पूर्वज में उसके अन्तिम पत्र के क्षत-विक्षत होने के कारण छन्द इस प्रकार त्रुटित हो गया था कि उसके प्रथम चरण के 'मरन चन्द बरदिआ राज' तथा पंचम चरण के 'रासउ असभु नवरस' मात्र शेष रह गये थे और इन्हीं से, कुछ घटा-बढ़ा कर, सार्थक पाठ देने की दृष्टि से धा० पाठ का उक्त दोहा बना लिया गया, क्योंकि इतने बड़े और सुनियोजित काव्य का उपसंहार मूल में 'रासउ रसाल नवरस निबंधि अचरिज इहु फणिंद' मात्र शब्दों के द्वारा हुआ हो, कथा-नायक पृथ्वीराज का मरण एक अति सामान्य घटना के रूप में 'मरणहु चन्द नरिंद' शब्दों से उल्लिखित मात्र हुआ हो, और गोरी के बध पर कवि ने कोई टिप्पणी उसमें न की हो यह भी सम्भव नहीं ज्ञात होते हैं। धा० का पाठ प्रक्षेप मुक्त नहीं है, यह जैसा हमने ऊपर देखा है त्रुटित उक्त-शृंखलाओं से प्रमाणित है, इसलिए इस समाधान के सम्बन्ध में शंका के लिए कोई कारण न होना चाहिए।

पुष्पिका में आए हुए 'रसाल' शब्द का समाधान भी उपर्युक्त ही ज्ञात होता है। धा० के किसी पूर्वज आदर्श में उसके अंतिम पन्ने के क्षत-विक्षत हो जाने के कारण यदि पुष्पिका निकल गई हो और प्रतिलिपि-परम्पराओं में वहीं वह भी उपर्युक्त दोहे की भाँति गढ़ ली गई हो तो कुछ आश्चर्य नहीं।

जहाँ तक 'रसाउ' के 'चयन' या 'संग्रह' ग्रन्थ के लिए प्रयुक्त होने की बात है, वह अपनी जगह पर ठीक लगती है, किन्तु दोहे में 'रसाल' शब्द 'नवरस' के प्रसंग में 'रसपूर्ण' के अर्थ में यदि प्रयुक्त हुआ हो, और उसी से वह उस दोहे के साथ गढ़ी गई पुष्पिका में भी आ गया हो तो असम्भव नहीं है।

धा० की प्रसंग-त्रुटियों के जो उल्लेख किए गए हैं, उनमें से प्रथम और द्वितीय 'द्रव्य प्राप्ति' और 'दिल्ली दान' प्रकरणों की हैं। विवेचन की सुविधा के लिये इन्हीं के साथ धा० की उस प्रसंग-त्रुटि को भी लेना होगा जिसका उल्लेख उक्त लेख में धा० मो० तथा अ० फ० की सामान्य प्रसंग-त्रुटि के रूप में बाद में किया गया है, जो 'ढिल्ली किल्ली' प्रकरण की है और उपर्युक्त दोनों के बीच में पड़ती है। ये छन्द ऐसा लगता है कि पहले धा० परम्परा के पूर्वागत पाठ में नहीं थे, पीछे पाठमिश्रण के द्वारा उसमें आए : उक्त अन्य प्रति में ये छन्द एक ही प्रकरण के रूप में या एक साथ पृथ्वीराज के 'वंशोत्पत्ति प्रकरण' के बाद दिए हुये थे, और उससे मिलान करने पर मिलान करने वाले को जब यह दिखाई पड़ा कि धा० के उसको उपलब्ध पूर्वज में ये नहीं हैं, उसने इन्हें धा० के उक्त पूर्वज में रख लिया। पुनः ऐसा लगता है कि यह अन्य प्रति अथवा इसका कोई पूर्वज किसी ऐसे पाठ के छन्द-चयन के द्वारा तैयार किया गया था जिसमें ये समस्त छन्द एक ही प्रकरण में आते थे। ऊपर हमने देखा है कि म० में उसके दूसरे खण्ड 'अर्बुद खण्ड' के बाद ही बिना किसी अथ-इति के कुछ छन्द आते हैं जो अ० फ० में उपर्युक्त दूसरे खण्ड में पूर्ण रूप से सम्मिलित कर लिये गये हैं: अ० फ० में न केवल म० की निम्नलिखित 'अर्बुद खण्ड' विषयक पुष्पिका नहीं रह गई है :—

"इति श्री कवि चन्द विरचिते श्री पृथ्वीराज रासके अर्बुद खण्ड द्वतीयर[२] ॥

इन अतिरिक्त छन्दों की क्रम संख्या भी उसी क्रम में कर दी गई है जिसमें पर्ववर्ती छन्द आते हैं। धा० २५, २६ इस अंश के प्रारम्भ के हैं, धा० २७ इस अंश के मध्य का है और धा० २८, २९ तथा ३० इस अंश के अन्त के हैं। धा० २६ ऊपर दिया जा चुका है, धा० २५ निम्नलिखित है :—

राजउं अजमेर केहि कथिहं मिता रता समरी।
दुधारा भर भार मीर वहनो दहनो दुरम भरी।

सोमेसो सुर नद वद गहिला वहिला वन वासिन।
निरमान विघनार जानि कविता दिल्लीपुर भासिन ॥

धा० २७, २८ तथा २९ भी उद्धृत हैं। धा० ३० निम्नलिखित है —

एका दस सय पच दह विक्रम साकु अनन्द।
तिहि पुर रिपु जय हरण भयो प्रिथिराज नरिन्द ॥

अत. उक्त पाठ-चयन की प्रति यदि म० अथवा ल० प० परम्परा की किसी प्रति से तैयार की गई हो तो आश्चर्य न होगा। यहाँ पर यह शंका अवश्य उठाई जा सकती है कि छन्द-चयन की यह परम्परा विचित्र सी लगती है, किन्तु इस प्रकार की एक परम्परा के प्रमाण 'पृथ्वीराज रासो' के ही पाठों में मिलते हैं। रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, लन्दन की दो प्रतियाँ इसी प्रकार की हैं ये हैं टॉड संग्रह की प्रति संख्या १६० तथा १६१।[1] इन दोनों में छन्द-संकलन मनमाने ढंग से किया गया है।

उक्त संग्रह की १६० संख्यक प्रति के प्रथम खण्ड में, जिसे 'आदि पर्व' कहा गया है, केवल दस रूपक हैं और ये दस रूपक ठीक ठीक वे ही हैं जो शा० उ० स० के प्रथम दस हैं। प्रथम चार रूपकों तक आदि देव, धर्म, कर्म तथा मुक्ति की स्तुति है, पाँचवें रूपक में पूर्ववर्ती कवियों की स्तुति है, जिसमें चंद द्वारा अपनी रचना को उनका 'उच्छिष्ट' कहा गया है, रूपक ६ तथा ७ में उसके 'उच्छिष्ट' कहने पर चंद की स्त्री शंका करती है, रूपक ८ में चंद उसका समाधान करता है, रूपक ९ में वह पुन उसी सम्बन्ध में शंका करती है, और रूपक १० में चंद उसका समाधान करता है, यहीं पर 'आदि पर्व' की 'इति' की जाती है। ग्रन्थ का विषय क्या है और किस प्रकार उसके रचयिता को ग्रन्थ रचना के लिए प्रेरणा मिली, यह सब कुछ नहीं कहा जाता है। इस प्रकार प्रकट है कि इस पाठ में खण्ड के प्रारम्भ के ही रूपक देकर उसकी इति दे दी गई है।

द्वितीय खण्ड में भी उस पाठ के उस खण्ड के केवल प्रारम्भ के तीन रूपक हैं और वे उसी क्रम में दिए हैं जिस क्रम में वे शा० उ० स० में मिलते हैं, तीसरा रूपक तो पूरा दिया भी नहीं गया है जिससे कृष्ण कथा तक भी पूरी नहीं हो पाई है, और स० २. ५७ पर खण्ड समाप्त कर दिया जाता है यद्यपि पुष्पिका में खण्ड को 'दशावतार वर्णन खण्ड' कहा जाता है। किन्तु इसीलिए नवें तथा दसवें अवतारों का नामोल्लेख तक नहीं हो पाता है।

तृतीय खण्ड में 'दिल्ली कीली' कथा है। इस खण्ड के प्रथम २० रूपक वे ही हैं जो शा० उ० स० के इस खण्ड के हैं और ठीक उसी क्रम में भी हैं। बीसवें रूपक में कीली को दोबारा शुभ मुहूर्त में गाड़ने का उल्लेख होता है और उसके अनन्तर ही खण्ड का २१वां रूपक (स० ३.४४)—जो बीच का एक रूपक है और जिसमें स० १६०७ में मेवातपति के द्वारा दिल्ली की धरा को जीते जाने की भविष्यवाणी है—दे दिया जाता है। यह भविष्यवाणी किसने की, क्यों की, आदि के सम्बन्ध का कोई विवरण नहीं है। यहीं पर खण्ड की 'इति' दे दी जाती है।

चौथा खण्ड 'कन्हपट्टी समय' है जो उस पाठ में पाँचवाँ है। इसमें खण्ड के प्रारम्भ के १६ रूपक शा० उ० स० पाठ के अनुसार ही आते हैं, जिनमें प्रताप सी के पृथ्वीराज की सभा में आने तक की कथा आती है, आगे क्यों कन्ह ने उसे मार डाला और इस पर किस प्रकार रुष्ट होकर पृथ्वीराज ने उसकी आँखों पर पट्टी बँधने का दण्ड दिया, जो कथा का सबसे आवश्यक भाग है, नहीं आता है।

इस प्रति का पाँचवाँ खण्ड 'लोहाना आजान बाहु समय' है जो उस पाठ का चौथा खण्ड है। अपवाद स्वरूप यह खण्ड पूरा है और शा० उ० स० के खण्ड के समान है।

[1] इन प्रतियों के माइक्रोफिल्म प्रयाग विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में हैं।

प्रति के शेष खण्डों की दशा यही है जो इन पाँच खण्डों की बताई गई है। कहने को इसमें शा० उ० स० पाठ के प्रायः समस्त खण्ड हैं, किन्तु है यह छन्द-संकलन मात्र, पूर्ण पाठ नहीं है।

टॉड संग्रह की १६१ संख्यक प्रति प्रथम खण्ड में द० के पाठ का अनुसरण करती है और तदनन्तर ना० परिवार की किसी प्रति के पाठ का।

इसके प्रथम खण्ड के रूपक ३५ (स० १. ११२) तक परीक्षित को सर्पदंशन से मृत्यु का शाप मिलने तक की कथा आती है, जो कि पिंगल-कर्त्ता नाग के अवतार प्रसंग में कही गई है।' किन्तु इसी रूपक के अनन्तर 'इति दुंढा राक्षस कथा' उल्लेख मिलता है, जिससे यह प्रकट है कि बीच के अनेक छन्द, जिनमें दुंढा राक्षस की कथा तक पृथ्वीराज के पूर्वजों की कथा आती थी, छोड़ कर उस कथा की 'इति' मात्र दे दी गई है।

इसके अनन्तर बीसलदेव के छत्र धारण करने से कथा फिर चलती है—यह प्रति के आदर्श का रूपक ९७ (स० १.२४०) है, और बीसल की कथा भी पूरी नहीं हो पाती कि प्रथम खण्ड समाप्त कर दिया जाता है; पृथ्वीराज के शेष पूर्वजों तथा उसके जन्म आदि की कथा छोड़ दी जाती है, यद्यपि इस खण्ड की पुष्पिका है "इति..... अर्बद उतपति चहुआन उतपती ढुंढा उतपती प्रीथीराज जन्म नाम कथा प्रथम खण्ड समाप्त।"

इसके बाद 'दशावतार वर्णन खण्ड' आता है, किन्तु कथा वाराह अवतार तक (स० २.१५८) ही आकर रुक जाती है; राम तथा कृष्ण अवतारों तक की कथा नहीं आती है। किन्तु तदनन्तर पुनः अनेक छन्द और कोई खण्ड भी छोड़कर इति 'ढोली बीली कथा' की दी जाती है।

इसके अनन्तर 'अथ हुसेन कथा' लिखकर वह कथा दी जाती है जो स० के खण्ड ११ में आती है, किन्तु स० ११.२५ तक के ही छन्द आते हैं, जिनमें किस प्रकार अरब खां से शहाबुद्दीन गोरी को चित्ररेखा मिलती है, यहां तक भी कथा पूरी नहीं कही जाती है और इति 'चित्ररेखा पात्र कथा' की दे दी जाती है।

यही दशा प्रति के अन्य खण्डों के पाठ की भी है, यद्यपि प्रति पूर्ण है और 'बाणवेध खण्ड' तक के छन्द इसमें आते हैं।

इन दो उदाहरणों से यह प्रकट है कि रचना की कुछ ऐसी प्रतियाँ भी तैयार की जाती थीं जिनमें प्रत्येक खण्ड के कुछ छन्द रख लिए जाते थे। किसलिए ऐसा होता था, यह एक भिन्न प्रश्न है, जिस पर विचार करना यहां आवश्यक नहीं है।

धा० मो० की प्रसंग-त्रुटियों में से वे जो लेख में संख्या (३) पर दी गई हैं, अ० फ० के खण्ड ३, ४, ५ से सम्बन्धित हैं। अ० फ० खण्ड ३ में जयचन्द तथा संयोगिता का पूर्व-परिचय है; खण्ड ४ में पृथ्वीराज-गोरी युद्ध है, और खण्ड ५ में पृथ्वीराज-भीम चौलुक्य युद्ध है।

जहाँ तक खण्ड ३ की बात है उसमें, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, विजयपाल की दिग्विजय में (अ० ३. नारा० १, दो० २, दो० ३) भी उन में से अनेक देशों का उल्लेख होता है, जिनकी पीछे जयचन्द की विजयों में (अ० ६. साट० २, ९ भुजं० ३=क्रमशः धा० ४८, १६१) हुआ है, यथा : तिरहुत, गुंड, तिलिंग, गोवाल-कुंड कर्णाट और गूर्जर।

जहाँ तक खण्ड ४ तथा ५ की बात है, ऊपर हम देख चुके हैं कि जिन सामंतों के उल्लेख इनमें वर्णित युद्धों में होते हैं, उनसे सर्वथा भिन्न सामंतों को पीछे (अ० ७. ओ० २=धा० ८०) को इन युद्धों में विजय का श्रेय दिया जाता है। इससे प्रकट है कि अ० के खण्ड ४ तथा ५ की रचना अ० ७. ओट० २=धा० ८० की रचना के भी बाद—जो स्वतः एक प्रक्षेप प्रतीत होता है जैसा हम आगे देखेंगे—किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा की गई जिसका ध्यान कैंवास-वध प्रकरण के इस छन्द पर नहीं गया था।

धा० मो० की प्रसंग-त्रुटियों में से वे जो लेख में संख्या (४) पर बताई गई हैं, सयोगिता के पृथ्वीराज-प्रेम विषयक उसके और उसकी सखी के बीच हुए संवाद से सम्बन्धित हैं। अन्य प्रतियों में इस प्रसंग में धा० मो० के अतिरिक्त जो छन्द आते हैं, उन पर विचार करना आवश्यक है। धा० ४६ तथा धा० ४७ के बीच धा० मो० के अतिरिक्त समस्त प्रतियों में एक ही छन्द आता है, जो निम्नलिखित है :—

अथवा राजन राजगृह अथवा माइ लुहानि।
विधि बंधिय पट्टल सिरह मुष कहि मदी जानि॥ (अ० ६. दो० ६)

अर्थात् सयोगिता ने कहा, "चाहे वह (पृथ्वीराज) राजन्य और राजगृह में [उत्पन्न] हो चाहे, हे सखी, वह लुहान (लघु या हीन) हो, जो कुछ भी विधाता ने सिर (भाग्य) के पट्ट पर बाँध दिया, [उसके सम्बन्ध में] मुख से कुछ कह कर तुम मानो मंद (बुरा) करती हो।"

इस कथन का भाग्यवाद बाद में आए हुये छन्द धा० ४७ के पृथ्वीराज स्तवन के विरुद्ध पड़ता है, जिसमें सयोगिता ने पृथ्वीराज को एक पराक्रमी वीर बताया है, जिसने अनेक देशों पर विजय प्राप्त की है।

धा० ४७ तथा धा० ४८ के बीच केवल अ० फ० में तीन छन्द आते हैं, जो अन्य समस्त प्रतियों में इनके बहुत पूर्व आते हैं; ये छन्द पूर्ववर्ती वर्णन के हैं भी, संवाद के नहीं हैं। इनका वही स्थान सम्भव है जो इनका अ० फ० के अतिरिक्त प्रतियों में है। इस प्रकार वास्तव में धा० ४७ तथा धा० ४८ के बीच कोई छन्द किसी भी प्रति मे नहीं आते हैं। धा० ४८ तथा धा० ५२ के बीच अ० में भी वे ही छन्द आते हैं जो धा० मो० में हैं। धा० ५२ तथा धा० ५३ के बीच धा० मो० के अतिरिक्त सभी प्रतियों में निम्नलिखित दो दोहे आते हैं :—

तुव सम मात न तात तन गात सु रतरियाइं।
जुब्बनु धन अथिर रहै अंजु कि अजुरियाइं॥ (अ० ६. दो० ९)
ताहि अनुग्रह तुम करहु जौ तुम सषी समान।
हौं लज्जा करि का कहौं तुम मो तात प्रमान॥ (अ० ६. दो० १०)

इनमें से प्रथम ही पूर्णतः सङ्गत और सुनिर्मित है : सखी ने धा० ५२ में यौवन की जिस महत्ता का प्रतिपादन किया है, उसका अच्छा उत्तर इस दोहे में है, और इसकी आवश्यकता है, क्योंकि अन्यथा, जैसा लेख में कहा गया है, सयोगिता सखी के उक्त कथन को सुन कर निरुत्तर रहती है। दूसरा दोहा अवश्य अनावश्यक ही नहीं प्रक्षिप्त भी लगता है : सखी से अनुग्रह न करने का जो अनुरोध सयोगिता करती है, और फिर उसे "तात (पिता ?) समान" कहती है, ये दोनों बातें एक असमर्थ प्रक्षेपकार के प्रयास की ओर स्पष्ट सकेत करती हैं।

धा० ५३ और ५४ के बीच केवल अ० फ० में दो छन्द आते हैं, जो संवाद के नहीं हो सकते हैं। ये दोनों छन्द अन्य समस्त प्रतियों में संवाद से कुछ पहले आते हैं और वहीं सगत हो सकते हैं।

इस प्रकार (४) सख्यक प्रसग त्रुटियों में एक मात्र धा० ५२ तथा ५३ के बीच की प्रसंग-त्रुटि मान्य लगती है, किन्तु उनके बीच में आया हुआ केवल अ० ६. दो० ९ प्रसंगसम्मत है, दूसरा स्पष्ट प्रक्षेप लगता है।

(५) सख्यक प्रसग त्रुटि योद्धाओं की उस नामावली के अभाव के विषय की है जो पृथ्वीराज के साथ कन्नौज जाते हैं और कन्नौज-युद्ध में उसके साथ भाग लेते हैं। किन्तु ऊपर दिखाया जा चुका है कि इस नामावली मे ऐसे अनेक नाम आते हैं जिनका तदनन्तर कोई उल्लेख नहीं होता है, न जिनके सम्बन्ध में यही कहा जाता है कि वे कन्नौज-युद्ध में मारे गए अथवा वे पृथ्वीराज के साथ दिल्ली लौटे (अ० १२, पद्० ३)। अतः यह नामावली भी प्रक्षिप्त लगती है।

इस प्रकार धा० तथा मो० पाठों की जो प्रसग-त्रुटियाँ लेख में (३), (४), (५), (६)

संख्याओं पर ही दी गई हैं, उनमें से एक ही—जो यौवन की महत्ता विषयक कथोपकथन से सम्बन्धित है—वास्तव में प्रसंग-त्रुटि है, शेष के स्थान पर जो छन्द धा० मो० के अतिरिक्त प्रतियों से मिलते हैं, वे प्रसंग-सम्मत नहीं हैं और प्रक्षिप्त लगते हैं।

जहाँ तक धा० मो० में पाई जाने वाली नर्तकियों की नामावली विषयक छन्द की उस पाठ-त्रुटि की बात है, जो अ० फ० में भी पाई जाती है, वह सक्षेप-सम्बन्ध के कारण ही नहीं, अन्य प्रकार से भी धा० मो० के अ० फ० संबन्धित होने पर आ सकती थी।

उक्त लेख में धा० मो० के प्रक्षेपों की जो बात कही गई है, वह ठीक है और उनमें पाई जाने वाली उक्ति-शृंखला सम्बन्धी त्रुटियों से और भी पुष्ट हुई है।

अतः उक्त लेख में प्रस्तुत किए गए परिणामों को अब संशोधित रूप में इस प्रकार रखना अधिक उचित होगा :—

(१) 'लघुतम पाठ' की दोनों (प्रतियाँ) प्राप्त धा० तथा मो० मूलतः किसी पूर्ण पाठ की प्रतियाँ थीं किन्तु बाद में उस में कुछ छन्द एक ऐसी प्रति से लेकर मिला लिए गए जो ग्रन्थ के छन्द-चयन के किसी पाठ की थी;

(२) इस अन्य प्रति का छन्द-चयन रचना के 'लघु पाठ' की म० या अ० फ० जैसी किसी प्रति से किया गया था।

(३) धा० तथा मो० के पाठों में प्रक्षेपों का भी अभाव नहीं है।

(४) फिर भी, धा० तथा मो० के पाठ समस्त प्राप्त पाठों में से मूल के सबसे अधिक निकट पहुँचते हैं।

अब प्रश्न धा० और मो० के पाठों के बीच शेष रहा। दोनों में अन्तर अधिक नहीं है : फिर भी मो० में ऐसे छन्द हैं जो प्रक्षेप-पूर्ण पाठ-वृद्धि के परिणाम हैं और धा० में नहीं हैं। उदाहरणार्थ : आबू-राज सलप कन्नौज के युद्ध में लड़ता हुआ मारा जा चुका है (मो० ३५०=धा० २९९, मो० ३५१=धा० ३०१), उसका पुत्र जैत भी 'आबूपति' होकर गोरी-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो चुका है (मो० ४५४=धा० ३६२), फिर भी मो० में सलप को गोरी-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में सम्मिलित किया गया है (मो० ४५६, ४५७, ४५८, ४५९)। धा० में यह उल्लेख-वैषम्य नहीं है; इसके अतिरिक्त ऐसे कोई भी उल्लेख-वैषम्य नहीं हैं जो धा० में हों और मो० में न हों। और, यह कहा जा चुका है कि धा० के प्रायः सभी छन्द मो० में आते हैं। अतः यह सुगमता से जाना जा सकता है कि धा० स्थूल रूप में मो० की तुलना में एक पूर्वतर स्थिति का पाठ देती है।

फिर भी हम ऊपर देख चुके हैं कि धा० का पाठ सर्वथा मूल का नहीं हो सकता है। अधिक से अधिक यही कहा जा सकता है कि आकार-प्रकार में वह मूल के सबसे अधिक निकट है एवं उत्तरोत्तर उससे बड़े पाठ मूल से उत्तरोत्तर दूर और दूरतर होते गए हैं।

—:*:—

३. पृथ्वीराज रासो
का
मूल रूप (आकार)

हम देख चुके हैं कि धा० पाठ भी रचना के मूल आकार में सुरक्षित नहीं है, यद्यपि वह मूल के निकटतम प्रमाणित होता है, अतः रचना का मूल आकार निर्धारित करने की आवश्यकता बनी रही जाती है। प्रश्न यह है कि वह किस प्रकार निर्धारित हो सकता है। किसी लेखक की अपनी प्रति अथवा उसकी प्रमाणित प्रतिलिपि के अभाव में उसकी रचना का मूल रूप तभी सुगमता से निर्धारित हो सकता है जबकि उसकी दो या अधिक ऐसी प्रतियाँ उपलब्ध हों जो परस्पर विकृति-सम्बन्ध से सम्बन्धित न हों, अर्थात् जो अलग-अलग प्रतिलिपि परम्पराओं की हों। किन्तु 'पृथ्वीराज रासो' की ऐसी कोई भी दो प्रतियाँ उपलब्ध नहीं हैं। उदाहरण के लिये जिन छन्दों के द्वारा ऊपर उल्लिखित निम्नलिखित छन्द-शृंखलायें त्रुटित होती हैं, वे सभी प्रतियों में समान रूप से पाये जाते हैं :—

(१) धा० ६८ तथा ७० के बीच,
(२) धा० १४२ तथा १४६ के बीच,
(३) धा० १९३ तथा १९९ के बीच, और
(४) धा० २९० तथा २९३ के बीच।

प्रश्न यह है कि ऐसी स्थिति में रचना के मूल आकार तक पहुँचना किस प्रकार संभव है : इसकी एक मात्र व्यावहारिक विधि यही प्रतीत होती है कि मूल के निकटतम प्राप्त पाठ धा० से किसी प्रकार से प्रक्षेपों को अलग किया जाये; और इस दृष्टि से हम निम्नलिखित उपायों का अवलंबन कर सकते हैं :—

(१) ऊपर हम देख चुके हैं कि रचना में अनेक स्थलों पर उक्ति-शृंखला मिलती है; धा० के जो छन्द या वार्तायें इन शृंखलाओं को अतिक्रांत करते हों, उन्हें बिना इसके विपरीत प्रमाण के मिले प्रक्षिप्त मान लेना चाहिये।

(२) ऊपर हम यह भी देख चुके हैं कि रचना में अनेक स्थलों पर छन्द-शृंखला मिलती है; धा० के जो छन्द या वार्तायें इन शृंखलाओं का अतिक्रमण करती हों, उन्हें भी बिना इसके विपरीत प्रमाण के मिले प्रक्षिप्त मान लेना चाहिए।

(३) धा० में जहाँ पर दो छन्द एक ही वृत्त—या लगभग एक ही वृत्त—के हों और उनकी शब्दावली और उनके अर्थों में इतना ही अन्तर हो जितना 'पाठांतर' में हो सकता है, वहाँ पर दो में से एक ही छन्द को स्वीकार करना चाहिए।

(४) धा० के जो छन्द शेष अन्य प्रतियों में न मिलते हों, बिना विपरीत प्रमाण के मिले उन्हें प्रक्षिप्त मान लेना चाहिए।

(५) धा० के जो छन्द या छन्दांश किसी भी प्रति में किसी भी छन्द या छन्दांश की पुनरावृत्तियों के बीच में आते हों, उन्हें विपरीत प्रमाण के अभाव में प्रक्षिप्त मान लेना चाहिये। अन्तिम के सम्बन्ध में कुछ विस्तार से हमें समझ लेना चाहिए।

किसी भी पहले से प्रस्तुत प्रतिलिपि के पाठ में जब पाठ-वृद्धि की जाती है, तब यथास्थान हंस पद बनाकर या तो पाठ-वृद्धि का अंश हाशिए में लिख दिया जाता है और या तो—यदि वह अंश कुछ बड़ा हुआ–अलग कागज पर लिख कर उस प्रति में रख दिया जाता है। हंस पद कभी-कभी भूल से नहीं बनाया जाता है, हाशिए में लेख यों ही लिख दिया जाता है, अथवा उक्त संशोधित प्रति से प्रतिलिपि करने वाले का ध्यान हंस पद पर नहीं जाता है। इसके अतिरिक्त, हाशिया कम ही चौड़ा होता है, जिससे एक छोटे से छन्द का भी लेख उसमें किसी एक ही पंक्ति के सामने समाप्त न होकर कई पंक्तियों के सामने लिखा जाकर पूरा होता है। परिणाम यह होता है कि यदि हंसपद न बनाया गया अथवा उसपर प्रतिलिपिकार का ध्यान न गया, तो हाशिए के उक्त लेख के सामने पड़ने वाला छन्द या छन्दांश प्रतिलिपि में कभी-कभी दो बार लिख उठता है : एक बार तो उक्त बढ़ाये गये लेख के पूर्व और पुनः उक्त लेख के अनन्तर। अतः छन्दों की पुनरावृत्तियों के बीच आने वाले अंशों के बाद में बढ़ाए हुए होने की संभावना बहुत होती है।

(६) धा० के जो छन्द किसी भी प्रति के छन्दों की क्रम-संख्या में व्यवधान उपस्थित करते हों, उन्हें विपरीत प्रमाण के अभाव में प्रक्षिप्त मान लेना चाहिए।

आगे इन्हीं उपायों की सहायता से धा० के प्रक्षिप्त छन्दों का निर्धारण किया जा रहा है।

उक्ति-शृंखला का अतिक्रमण

धा० में निम्नलिखित स्थलों पर उक्ति-शृंखला का अतिक्रमण मिलता है :—

(१) धा० ६८ तथा ७० के बीच; (२) धा० १२१ तथा १२२ के बीच;
(३) धा० १२९ तथा १३० के बीच; (४) धा० १४२ तथा १४६ के बीच;
(५) धा० १८६ तथा १८७ के बीच; (६) धा० १९२ तथा १९३ के बीच;
(७) धा० १९३ तथा १९५ के बीच; (८) धा० २४२ तथा २४४ के बीच;
(९) धा० २६९ तथा २७० के बीच; (१०) धा० २९० तथा २९३ के बीच;
(११) धा० ३५८ तथा ३६० के बीच; (१२) धा० ३८१ तथा ३८२ के बीच; तथा
(१३) धा० ४२० तथा ४२२ के बीच।

नीचे आवश्यक अंश उद्धृत करते हुए अन्तर्साक्ष्य की दृष्टि से क्रमशः इन पर विचार किया जा रहा है।

(१) धा० ६८ : रतिपति मुदित्य छण्डि तनु तरनी रवन वय काज।
तडित करिग अंगुल धरइ वान फरिग (भरिग-पाठां०) प्रिथीराज॥

वार्त्ता—एक वाण सो राजा चूक्यो। चांद नैं वांस विचि आघात भयो। कइमास परन डारि दिये। कदवाहेनोक्तं।

धा० ६९ : अहजनो नाम नास्ति दसरथो नैव दृश्यते।
स्वामिनो धाखेटस्पतो वाणो न चतुरो नरो॥

वार्त्ता—दूसरउ बाण आग दियउ।

धा० ७० : भरिग बान चहुवान जानि दुर देव भाग नर।
मुट्ठि दिट्ठि रस हुलित सुफिक निक्करिग इक्क सर।
समय आनि दिय हथिय पुठि पावारि पचारयो।
बानी चर तरकंत छुट्टि धार धर उपारयो।

इय बत्थु सब्बु सरसइ मुनित फुणि त कह्यो कविचंद सव ।
इम परयो प्रवास 'सयासतें जिम निस......मट्टपयति ॥

यहाँ हम देखते हैं कि धा० ६८ का 'भरिग बान प्रिथिराज' तथा धा० ७० का 'भरिग बान चहुवान' सर्वथा एक हैं, और बीच में आई हुई दो वार्त्ताओं तथा श्लोक में वे ही बातें कही गई हैं जो धा० ७० में आती हैं, और वह भी उपर्युक्त 'भरिग बान चहुवान' के अनन्तर। वार्त्ताएँ तो इस विषय में स्पष्ट हैं, किन्तु श्लोक धा० ६९ का कथन भी पृथ्वीराज के द्वारा छोड़े हुए प्रथम बाण के चूक कर निकल जाने पर ही कहा जा सकता था, इसलिए उसकी स्थिति भी वही है जो ऊपर उद्धृत वार्त्ताओं की है। फलतः यह प्रकट है कि धा० ६९ तथा ७० के बीच आया हुआ सम्पूर्ण अंश प्रक्षिप्त है।

(२) धा० १२१ : नृप भमिग कइगि (कहिग-शेष में) पहु पुव्व देस ।
अरिय नीर (अरिनयर-शेष में) नीर उत्तर कहेस ।
सर सिंधु विंधु कनवज्ज राउ ।
तिहि चढिउ स्वर्ग धुरि धर्म चाउ ॥

धा० १२२ : रवि तुम्हइ समुद्द उइइ इह तुम्ह मग्ग समुज्झ ।
भुल्लि भट्टि इच्चहि चल्यौ कहि उत्तर कनवज्ज ॥

उद्धरण की प्रथम दो पंक्तियों तथा अंतिम दो पंक्तियों में उक्ति-श्रृंखला स्पष्ट है; बीच की दो पंक्तियाँ सर्वथा निरर्थक और असंगत लगती हैं और उक्ति-श्रृंखला को भंग करती हैं। ये पंक्तियाँ वस्तुतः धा० ३१ के प्रथम दो चरणों से बनी हैं, जो हैं :—

कलि अथ्य पथ्य कनवज्ज राज। सतपित्त सेव धरि धम्म चाउ ॥

(३) धा० १२९ : चप चंचल तन सुद्धि त सिद्धिहु मनु हरिह ।
कचन कलस हकोलति गंगह जलु भरहि ।

वार्त्ता—ते किसी एक पनिहारी है।

धा० १३० : भरंति नीर सुन्दरी ।
ति पानि पद्म अंगुरी ।

धा० १२९ के 'गंगह जलु भरहि' तथा धा० १३० के 'भरति नीर सुन्दरी' में उक्ति-श्रृंखला प्रकट है; बीच में आने वाली वार्त्ता उस उक्ति-श्रृंखला को भंग करती है और साथ ही क्षेपक प्रकृति की तथा अनावश्यक भी है। म० ना० द० उ० स० में बीच में कुछ छन्द आते हैं जो इस उक्ति-श्रृंखला को और भी अधिक त्रुटित करते हैं।

(४) धा० १४२ : दह दिग्गि देखि हअग्गय भार ।
सु दिक्खत (पुच्छत-पाठां०) चंद गयो दरबार ।

धा० १४३ : मारुत भाख सुमिल्लहि सि देह सिसिर बन इंद ।
रथनवै नवि रस्स अरु जोध सुपंग नरिंद ॥

धा० १४४ : निसि नौबति पल प्रात मिलि हय गय दिक्ख्यो राज ।
विरंचि सुहरु करिवर गह्यो जिनहि कह्यो प्रिथिराज ॥

धा० १४५ : कहे चंद दंदु न करहु रे सामन्त कुमार ।
तिन लख्ख निसि दिन रहहि इह जैचन्द दुआर ॥

वार्त्ता—चांद राजा के दरबार ठाढ़ो रह्यो ।

धा० १४६ : पुच्छन (पुच्छत—शेष में) चंद गयो दरबारह ।
हेजम जह रघुवंस कुमारह ।

यहाँ हम देखते हैं कि धा० १४२ का 'पुच्छत चन्द गयो दरबार' और धा० १४६ का 'पुच्छत

चन्द गयो दरबारह' एक हैं; बीच में आए हुए धा० १४३ की सार्थकता और संगति स्पष्ट नहीं है; शेष के सम्बन्ध में यहाँ पर दर्शनीय यह है कि समय प्रभात का नहीं था। सूर्य तो (धा० १२२) उदित हो चुका था, उसके बाद पृथ्वीराज और उसके साथी गंगातट के प्रातः कालीन दृश्यों को देखते हुए (छन्द १२९) नगर-दर्शन करने लगे थे और (छन्द १४२) उन्होंने कन्नौज की हाटों का निरीक्षण कर लिया था। फिर, इसी छन्द के अन्त में आता है कि "पूछता-पूछता चन्द के दरबार को गया।" पृथ्वीराज को 'सामंत कुमार' कहना भी कुछ ठीक नहीं लगता है। वार्ता के बाद आए हुए छन्द धा० १४६ में 'पुच्छत चन्द गयो दरबारह' द्वारा चन्द के दरबार की ओर जाने मात्र की बात कही गई है, किन्तु वार्ता में कहा गया है "चन्द राजा (जयचन्द) के दरबार में पहुँचकर खड़ा हो रहा।" इन उल्लेख-विरोधों से भी प्रकट है कि धा० १४२ तथा धा० १४६ के बीच का अंश प्रक्षिप्त है। इनमें से धा० १४३ अ० फ० में नहीं है, शेष में है, और धा० १४४ तथा १४५ सभी में है। वार्ता धा० के अतिरिक्त किसी में नहीं है।

(५) धा० १८६ : जाम एक इनि रास घटि सत्तिहु सचि न वारि।
किहु कामिनी सुष (सुख-दोष में) रतिसमर नृप निय निंद विसारि॥

वार्ता— राजा कइसी नींद विसारी।

धा० १८७ : सुक्ख सुक्ख मिदंग तार जयन रागं कला कोकिलं।
कंठी कंठ सुवासितं मनधितं कामंकला पोखनं।
उर्भी रंभ पिता गुना हरिहरी सुश्रीय पवनापता।
ए सह सुक्ख सुखाइ सार साहिता जै राय रायं गता॥

दोनों छन्दों में उक्ति-शृंखला प्रकट है : धा० १८६ के 'सुख' को लेकर धा० १८७ में उसका विस्तार दिया गया है। दोनों के बीच धा० में एक वार्ता आती है; वार्ता-कार को यह ध्यान नहीं था कि धा० १८७ में धा० १८६ के 'सुख' का विस्तार किया गया है, न कि 'नींद' का। इसलिए वार्ता स्पष्ट ही प्रक्षिप्त है। म० ना० उ० स० में धा० १८६, तथा धा० १८७ के बीच कुछ छन्द आते हैं। वे भी इसी प्रकार प्रक्षिप्त हैं।

(६) धा० १९२ : थिर रहै यवाहंन (यवाइस-दोपमें) बिज्जुकर छंडि सिरनहि
... ... पान देहि दिढ़ हत्थ गहि॥

मो० था इन पंक्तियों का अनुदित पाठ है :—

थिर रहिहि यवाइत वज्र कर छंडि सीकारह पिनु परिहि।
जिहि असो रूप पल्लाणिइहि तिन पान देहि दिढ हथ्थ गहि॥

वार्ता—राजा आइसुते गीत सोपा चहुवान को भट्ट आयो है ताहि इतनो दयो।

धा० १९३ : सुनि तमूल सा पट्टि करि वर वट्टिय छिछि यंक।
मनो मोहनि सुमन मलिन मनु नव उदित मयंक॥

यहाँ पर धा० १९२ के अन्तिम शब्दों 'पान देहि दिढ हथ्य गहि' तथा धा० १९३ के 'सुनि तमोल' का उक्ति-सम्बन्ध प्रकट है, और बीच में आई हुई वार्ता उस उक्ति-शृंखला को भंग तो करती ही है साथ ही असंगत और निरर्थक भी है। म० ना० द० उ० स० में यहाँ कुछ छन्द आते हैं; वे भी उक्त उक्ति-शृंखला को इसी प्रकार भंग करते हैं।

(७) धा० १९३ : सुनि तमूल सा पट्टि करि वर वट्टिय छिछि यंक।
मनो मोहनि सु मन मलिन मनु नव उदित मयंक॥

धा० १९४ : तुलसाह चित्र हस्तेपु विमूतिः वर योगिनां।
चंदिय पुष तंबोरह श्रीणि देयानि सादरं॥

धा० १९५ : भुव वंकीय करि पंगुपुष अप्पिग हाथ तमोल।
मनहु बज्जपति बज्ज गहि सह अप्पिया सजोर ॥

यहाँ हम देखते हैं कि धा० १९३ की पर 'उट्ठिय डिठि पंक' और धा० १९५ की 'भुव वंकिय करि' की शब्दावली एक है, और बीच में जो आर्या आती है वह सर्वथा असगत है; उसमें कहा गया है : "तुलसी-दल विप्र के हाथ में, विभूति श्रेष्ठ योगी के हाथ में, और ताम्बूल चंडीपुत्र के हाथ में सादर देना चाहिये।" किन्तु जयचन्द किन अर्थों में 'चंडी पुत्र' है, यह नहीं ज्ञात होता है : 'चण्डी पुत्र' का अर्थ 'चण्डी का भक्त' या 'चण्डी का उपासक' ही हो सकता है, किन्तु जयचन्द एक राजा के रूप में अपने अतिथि चन्द के सामने उपस्थित हुआ है, चण्डी के उपासक के रूप में नहीं और न उसे रचना भर में कहीं भी चण्डी-भक्त कहा गया है। इसके अतिरिक्त इस आर्या के कथन की प्रतिक्रिया पृथ्वीराज में क्या दिखाई पड़ी, धा० १९५ में इसका कोई उल्लेख नहीं किया जाता है। अतः यह प्रकट है कि धा० १९३ तथा धा० १९५ के बीच आई हुई आर्या प्रक्षिप्त है।

(८) धा० २४२ धा० का पाठ प्रथम चरण के पूर्वार्ध के बाद किसी प्रतिलिपिकार की भूल से वही हो गया है जो धा० २०० का है और धा० २४४ का पाठ त्रुटित है; २४३, तथा धा० २४४ का पाठ अतः मो० से दिया जा रहा है :—

धा० २४२ : सुनि वचन रजन चढ़िग बहु पव्वर समहाउ।
मनहु लंक विग्गह करन चलु (चलउ) रघुप्पति राय॥

धा० २४३ : चढ़िय सूर सामंत सहु नृप धमंड कुल काज।
सह समूह दिक्खिय नयन थिणवर गिन प्रिथिराज॥

धा० २४४ : राम दल चंवर सघल उहि रव्वण बहु बंधु।
असी एच्च सु(सउ)सम भिरिग सु धनि प्रथिराज नरिंद॥

धा० २४२ के दूसरे तथा धा० २४४ के प्रथम चरण में उक्ति-शृंखला स्पष्ट है—धा० २४४ में कवि ने धा० २४२ की उक्ति पर भी एक विशेषोक्ति जड़ने की चेष्टा की है; बीच में आया हुआ धा० २४३ उसे त्रुटित करता है और असगत भी है।

(९) धा० २६९ : सर एक स विज्जत (विज्जत-शेष में) सत्त करी।
दल खिल्लिय नयक तठक (टठक्क-शेष में) परी।
जहँ जानहु सूरन भीर परी।
ठिल्लहु कहुथान सु अप्प धरी।
धा० २७० : टठक्की सेन सुनि मीर मिरले।
विहुरिय सेन सम्भे नकिल्ले (निकल्ले-पाठां०)।

धा० २६९ से उद्धृत दूसरी 'दल...ठठक्क परी' तथा धा० २७० की प्रथम पंक्ति के 'ठठक्की सेन' में उक्ति-शृंखला प्रकट ही है, बीच की दो पंक्तियाँ उस शृंखला को भंग करती हैं और स्पष्ट ही अनावश्यक तथा असगत हैं : विपक्षी दल का पृथ्वीराज के शौर्य से ठिठक पड़ना उसकी एक निश्चित समय की मनस्थिति की सूचना देता है, जिसके बाद उसका 'विहुरना' एक सलग्न परवर्ती क्रिया के रूप में प्रारम्भ हो जाता है। इन दोनों के बीच में उस दल का पृथ्वीराज के दल पर आक्रमण करते रहना और पृथ्वीराज का उन्हें पिछड़ाते रहना एक भिन्न और अधिक व्यापक समय की अपेक्षा करते हैं।

(१०) धा० २९० : अरि अरन रस कौतुक कलह भयो न मवह भिरन भर।
सामंत निघट तेरह परिग नृपति सुपहिअ पंच सर॥

धा० २९१ : दुइ सर अस्व सि पक्खरह दुइ नृप इक सजोगि।
जुरि धर भरिय मरथि करि अव जगलचै भोगि॥
धा० २९२ : रयन राल (राम) रावत्त रनइ रन रग रंग रग रस।
उठत पकु धावत्त पंच धाइस्स वीर दस।
षलि चालुत मोहिल्ल मयंदु मारत्र मुह मंघड।
अहन भरि छंधिया पग पारस दल रघड।
नारयन मीर बघड बरन दिय दिवान गो देवरड।
कलहत जीव सामंत मुअ रहित स्वामि सिर सेहरड।
धा० २९३ : लंस सपत्तिम (सुपट्टिम पाठा०) नृपति रत दिय वारस परि कोटि।
रहे सूर सामत जकि दिखिय नृपति तन चोट॥

धा० २९० की अन्तिम शब्दावली 'नृपति सुपट्टिय पंच सर' और धा० २९३ की प्रारम्भ की शब्दावली 'सम सुपट्टिय नृपतिरन' में साम्य यथेष्ट है। बीच में धा० २९१ में 'प चसर' का जो विवरण प्रस्तुत किया गया है, वह सर्वथा अग्राह्य है। 'सपट्टिअ' का अर्थ धा० २९० तथा २९३ दोनों में 'अलंकृत' या 'विभूषित' प्रतीत होता है [दे० पाइअ स द् महण्णवो]। धा० २९० में कहा गया है कि 'नृपति (पृथ्वीराज) पाँच वाणों से अलकृत हुआ।' और धा० २९३ में कहा गया है कि "सध्या को [इस प्रकार] अलंकृत नृपति.... " कि तु धा० २९१ में पाँच वाणों से अल्कृत होने के स्थान पर उसे दो वाणों से अल कृत कहा गया है, शेष तीन में से दो वाण उसके अस्व के पक्खर में और एक स योगिता को लगे कहे गए हैं। यहाँ पर कथन वैषम्य स्पष्ट है। धा० २९२ में धराशायी सामतों की सूची मात्र खड़ी करने का प्रयास है। इसलिए प्रकट है कि धा० २९० तथा २९३ के बीच आने वाले छन्द उनकी उक्ति-शृखला को भङ्ग करते हैं और उनके विरुद्ध भी जाते हैं।

(११) धा० ३५८ . दरस दल बद्दल विषम राग लाग अलि निसान।
मिले पुब्ब पच्छिम हुति चाहुवान सुरताण॥
धा० ३५९ : दुह दल ढोल सुमाल हलि दुहु दल सिन्धुसराग।
जु रहिति सुभग सुभाग तिन मुरि कायरह अभाग।
धा० ३६० : मिले जग्इ चहुवान सुरताण खग्गे।
मनो वारुणी छचे वारुणी लग्गे।

धा० ३५८ के दूसरे चरण की शब्दावली धा० ३६० के प्रथम चरण में आई है, इसलिए दोनों में उक्ति-शृखला प्रकट है। धा० ३५९ इस शृ खला को भंग करता ही है और असंगत भी है : अभी तो युद्ध प्रारम्भ भी नहीं हुआ है, केवल दोनों ओर से सेनाएँ इकठ्ठी हुई हैं, अत सैनिकों के युद्ध में 'जुटने' या युद्ध से 'मुड़ने' का कोई प्रसग नहीं है।

(१२) धा० ३८१ बन बहु विभूति अवधूत दीस।
कर अनम्य (अनयन—मो०) दीधी असीस॥

वार्ता— विरदावली किसी दीन्ही।
साहि हार साहिब सार।
वरिया साहि कथ कुदार।
सबर साहि मान मर्दन।
निवर साहि थापना चार।
दुरी साहि धारी तरक्क।
नारी साहि मस्तक त्रिसूल।

ढीली माहि पूर्व साहि।
पश्चिम माहि दक्षनी साहि।
स्याहि पाहि पेड़ा चौधारित वल्लेस्वर।

धा० ३८२ : इहव असीस न मिर नयौ यह करद्यौ फुरमान।
सुमइ भट्ट पिथ्थौ नयन के पुच्छ्यौ सुरतान॥

धा० ३८१ के अन्तिम चरण के 'दीधी असीस' तथा धा० ५८१ के प्रथ
सीध' में उक्ति-शृंखला स्पष्ट है, बीच की समस्त पंक्तियां इस उक्ति शृंखला से
बंधा अनावश्यक और बहुत-कुछ निरर्थक है। वे स्पष्ट ही बाद में रखी गई
शीर्षक 'बिरदावली किसी दीन्ही' से प्रकट है।

(१३) धा० ४२० : छह दसण रमण दम रघ्र हुई बहु करद विविध
सुलताण पर्यौ खां पुबकीयौ व दिन चंद राजन म
धा० ४२१ : परत भूमि सुलताण खान मिलि पलक सिंहि
महं षरजित बहु बार साहि दुसमन
मोग छडि कार जोग भट्ट आयौ सु कवि
बचन विविध तिहि समय लियौ गोरीह संदि।
दुक मंझि दुंद दुकरे करहु सबसु साहि गोरी
इजि जाण खाण इम उच्चरिय भव कवित्त कोइ
धा० ४२२ : सो ... ... मरणहु चंद
रासउ रसाल नवरस निबंधि भचरिज हूं

धा० ४२० के 'चंद राजन मरण' और धा० ४२२ के 'मरणहु चंद
खला प्रकट है। धा० ४२१ में केवल धा० ४२० के 'सुलताण पर्यौ खां
विस्तार किया गया है, जिसके कारण उक्ति-शृंखला समाप्त हो जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन तेरह स्थलों पर पाठवृद्धि के कारण
अतिक्रमण मिलता है, वह प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के कारण है।

परिणामस्वरूप उक्ति-शृंखलाओं को भंग करने वाले धा० के निम्नलि
होते हैं :—

(१) धा० ६८ के अनन्तर की वार्त्ता, धा० ६९ तथा धा० ६१ के
(२) धा० १२१ के अन्तिम दो चरण,
(३) धा० १२९ के बाद की वार्त्ता,
(४) धा० १४३, धा० १४४, धा० १४५ तथा धा० १४६ के
(५) धा० १८६ के बाद की वार्त्ता,
(६) धा० १९२ के बाद की वार्त्ता,
(७) धा० १९४,
(८) धा० २४३,
(९) धा० २६९ के अन्तिम दो चरण,
(१०) धा० २९१, धा० २९२,

छंद-शृंखला-अतिक्रमण

धा० में छंद-शृंखला के अतिक्रमण का एक ही स्थल है, जो निम्नलिखित प्रकार से मिलता है :—

धा० ४०२ : छन्द—सुरतान जमन फुरमान दीन। (१)
सब नयर छोरि परियार लीन। (२)
मुस्किलिउ चंद राजनहि पास। (३)
तुम गहहु हम दिखवहि तमास। (४)

धा० ४०३ : दस हत्थ रष्षि दीनी असीस। (५)
सिर नयो नयो नहि मान रीस। (६)
राजन है सुरति इक्क। (७)
परियार सत्त सर निद्द भेक्क। (८)

वार्ता : इम तमास गीर हा भाई वे हुज[१]व सा इवसी इमके साहिब कूं दस हथ हालि गहही कराउ राजा इह दिखाउ किस्यो देस्यो।

धा० ४०४ : दूहा—चवखहीन दुब्बल नृपत भमन रहियो पासि।
रोस अगनि तन नृप जरइ अरि चिंतइ चिंता स॥

वार्ता : राजा हे समस्या माहि आसीर्वाद दीन्हउ।

धा० ४०५ : धर पग राइ आजान बाह।
दुज्जने राइ घर बीर दाह।
चालुक्क राइ पर पंगु पारि।
पंगुरे राइ जग जग्गु हारि।

धा० ४०३ की पुनरुक्ति पर आगे विचार किया गया है : यहाँ हम देखते हैं कि कदाचित् पाठ मिश्रण के कारण धा० ४०३ में धा० ४०५ की स्फुट पंक्तियाँ आ गई हैं। शेष पाठ में से प्रथम वार्ता धा० ४०२ के चरण ३ और ४ के भाव का अधिकांश में विस्तार करती है, द्वितीय वार्ता धा० ४०५ का शीर्षक मान देती है। अन्य अनेक प्रतियों में धा० ४०२ तथा धा० ४०५ एक ही रूपक के दो अंश है जो बीच की इन पंक्तियों के द्वारा जुडे हुए हैं :—

गयउ चंद तब तेहि ठाहि।
नृप मिच्च चयहुउ जहां चाहि।

धा० ४०४ के 'भमन रहियो पासि' की कोई संगति प्रसंग में नहीं है और किसी ब्राह्मण की समक्षता में पृथीराज और चन्द की गोरी का प्राणांत करने के सम्बन्ध की कोई बात होना असंभव भी थी, अतः धा० ४०४ स्पष्ट ही प्रक्षिप्त है। धा० पाठ में पृथ्वीराज के पास चन्द के जाने का भी कोई उल्लेख नहीं होता है, जैसा बीच की ऊपर उद्धृत पंक्तियों द्वारा कुछ अन्य पाठों में हुआ है। इन दृष्टियों से विचार करने पर धा० में जो छन्द-शृंखला का अतिक्रमण हुआ है, वह स्पष्ट ही धा० ४०२ तथा धा० ४०५ के बीच प्रक्षिप्त सामग्री को रखने के लिए किया गया है।

पाठांतर-ग्रहण

धा० १५० तथा १५२ :—

धा० १५० : ति कवि आइ कवियहि सपत्ते।
नवरस भाख ज पुच्छन रत्ते।
कवि अनेक बहु बुधि गुन रत्ते।
कहि न एक कवि चन्द समत्ते।

कोली साहि पूर्व साहि ।
पश्चिम साहि दक्षनी साहि ।
च्यारि पाहि बैठा सीधाकित पलेस्वर ।

धा० ३८२ : दइत असीस न सिर नयो वन अच्छयो फुरमान ।
हुसह भट्ट पिख्यो नयन के पुछ्यो • सुरतान ॥

धा० ३८१ के अन्तिम चरण के 'दीधी असीस' तथा धा० ५८२ के प्रथम चरण के 'दइत असीस' में उक्ति-शृंखला स्पष्ट है, बीच की समस्त पंक्तियां इस उक्ति शृंखला को भंग करती हैं, और सर्वथा अनावश्यक और बहुत-कुछ निरर्थक हैं। वे स्पष्ट ही बाद में रखी गई लगती हैं, जैसा उनके शीर्षक 'विरदावली किसी दीन्ही' से प्रकट है।

(१३) धा० ४२० : कइ दुसण रसण दुसरम हुई बहु कपट विधिघुन सघण ।
सुलताण पर्यो सो पुकर्यो त दिन चंद राजन मरण ।

धा० ४२१ • परत भूमि सुलताण सान मिछि पलक विढि सिर ।
मइ बाजिड बहु बार साहि दुसमन असभ वर ।
भोग छड्डि कार जोग भट्ट आयो जु सधि करि ।
वचन विधिध तिहि समय लियो गोरीह नरिंद हरि ।
टुक मक्ति टुट टुकरे करहु सवसु साहि गोरी धरउ ।
इति जाण साण इम उच्चरिय भव कवित्त कोइ कवि करउ ।

धा० ४२२ : सो ... ... मरणहु चंद नरिंद ।
रासउ रसाल नवरस निवधि अचरिज हुहु फणिंद ॥

धा० ४२० के 'चद राजन मरण' और धा० ४२२ के 'मरणहु चद नरिंद' में उक्ति-शृंखला अति प्रकट है। धा० ४२१ में केवल धा० ४२० के 'सुलताण पर्यो सा पुकर्यो' का अनावश्यक विस्तार किया गया है, जिसके कारण उक्ति शृंखला समाप्त हो जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन तेरह स्थलों पर पाठवृद्धि के कारण धा० में उक्ति-शृंखला का अतिक्रमण मिलता है, वह प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के कारण है।

परिणामस्वरूप उक्ति-शृंखलाओं को भग करने वाले धा० के निम्नलिखित अंश प्रक्षिप्त प्रमाणित होते हैं :—

(१) धा० ६८ के अनन्तर की वार्त्ता, धा० ६९ तथा धा० ६९ के अनन्तर की वार्त्ता,
(२) धा० १२१ के अन्तिम दो चरण,
(३) धा० १२९ के बाद की वार्त्ता,
(४) धा० १४३, धा० १४४, धा० १४५ तथा धा० १४५ के बाद की वार्ता,
(५) धा० १८६ के बाद की वार्त्ता,
(६) धा० १९२ के बाद की वार्त्ता,
(७) धा० १९४,
(८) धा० २४३,
(९) धा० २६९ के अन्तिम दो चरण,
(१०) धा० २९१, धा० २९२,
(११) धा० ३९९,
(१२) धा० ३८१ के बाद की वार्त्ता, तथा
(१३) धा० ४२१ ।

छंद-शृंखला-अतिक्रमण

धा० में छंद-शृंखला के अतिक्रमण का एक ही स्थल है, जो निम्नलिखित प्रकार से मिलता है :—

धा० ४०२ : छन्द—सुरतान जमन फुरमान दीन। (१)
सब नयर छोरि घरियार कीन। (२)
मुक्किलिउ चंद राजनहि पास। (३)
तुम गहहु हम दिखवहि तमास। (४)

धा० ४०३ : दस हत्थ रक्खि दीनी असीस। (५)
सिर नयो नयो नहि मान रीस। (६)
राजन है सुरति इक्क। (७)
घरियार सत्त सर निद्ध नेवक। (८)

वार्ता : इम तमास गीर हा माई ये हुज [।]व खा हवसी इसके साहिब कूं दस हत्थ राखि गहही कराउ राजा छह दिखाउ किरयो देख्यो।

धा० ४०४ : दूहा—चखहीन दुब्बल निपत्त बम्मन रहियो पासि।
रोस अगनि तन निप जरइ अरि चिंतइ चिंता स ॥

वार्ता : राजा हे समस्या माहि आसीर्वाद दीन्हउ।

धा० ४०५ : धर पथ राइ आजान बाहु।
दुज्जने राइ घर वीर दाए।
चालुक्क राइ पर पंगु पारि।
पगुरे राइ जग जग्गु टारि।

धा० ४०३ की पुनरुक्ति पर आगे विचार किया गया है : यहाँ हम देखते हैं कि कदाचित् पाठ मिश्रण के कारण धा० ४०३ में धा० ४०५ की स्फुट पंक्तियाँ आ गई हैं। शेष पाठ में से प्रथम वार्ता धा० ४०२ के चरण ३ और ४ के भाव का अविकाश में विस्तार करती है, द्वितीय वार्ता धा० ४०५ का शीर्षक मात्र देती है। अन्य अनेक प्रतियों में धा० ४०२ तथा धा० ४०५ एक ही रूपक के दो अंश हैं जो बीच की इन पंक्तियों के द्वारा जुड़े हुए हैं :—

गयउ चंद तब तेहि ठाहि।
नृप मित्त वयट्ठउ जहां चाहि।

धा० ४०४ के 'बंमन रहियो पासि' की कोई संगति प्रसंग में नहीं है और किसी ब्राह्मण की समक्षता में पृथीराज और चन्द की गोरी का प्राणांत करने के सम्बन्ध की कोई बात होना असंभव भी थी, अतः धा० ४०४ स्पष्ट ही प्रक्षिप्त है। धा० पाठ में पृथ्वीराज के पास चन्द के जाने का भी कोई उल्लेख नहीं होता है, जैसा बीच की ऊपर उद्धृत पंक्तियों द्वारा कुछ अन्य पाठों में हुआ है। इन दृष्टियों से विचार करने पर धा० में जो छन्द-शृंखला का अतिक्रमण हुआ है, वह स्पष्ट ही धा० ४०२ तथा धा० ४०५ के बीच प्रक्षिप्त सामग्री को रखने के लिए किया गया है।

पाठांतर ग्रहण

धा० १५० तथा १५२ :—

धा० १५० : ति कवि आइ कथियहि सप्ते।
नवरस भाख ज पुच्छन लत्ते।
कवि अनेक बहु बुधि गुन रत्ते।
कहि न एक कवि चन्द समत्ते।

धा० १५२ : ते कवि आइ कवियहि संवत्तउ।
गुण व्याकरणइ रहि रस रत्तउ।
थकि प्रवाह गंगा सुप्र मंती।
सुर नर स्रवण सहि रहि चंती।

दोनों छन्दों में अन्तर होते हुए भी प्रथम चरण के विषय में पूर्ण साम्य है, और दोनों छन्द एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आते हैं, केवल एक छन्द बीच में पड़ता है, इसलिए दो में से एक धा० में अपने कुल के पाठ के अनुसार तथा दूसरा पाठ-मिश्रण के कारण किसी अन्य कुल के पाठ के अनुसार आया होगा। धा० १५२ सभी प्रतियों में समान रूप से मिलता है, जबकि धा० १५० की स्थिति विभिन्न प्रतियों में भिन्न-भिन्न है। मो० में धा० १५० है नहीं, अ० फ० में उसके केवल चरण २, ३, ४ हैं, दोनों पाठों में पहला चरण एक ही होने के कारण उसे फिर नहीं लिखा गया है, और म० ना० द० उ० स० में केवल प्रथम दो चरण हैं, शेष दो चरण नहीं हैं। इसलिए धा० १५० धा० १५२ का 'पाठांतर' मात्र लगता है जो हाशिए की भूल के कारण कुछ पहले लिख उठा।

(२) धा० १५५—५६ इस प्रकार हैं :—

अहो चंद बरदायि यहूँ हूँ। (१)
बनवज्जइ दिख्खन आय हूँ। (२)
जे सरसइ जवनहुं निप सचउ। (३)
गजपति गरुव गेह किमि गंजहु। (४)
किंनि गुनि पंगु राइ मन रंजहु। (५)
जो सरसइ जानहु पर रंचउ। (६)
तो अद्रिस्ट वरनहि निप संचउ। (७)

उपर्युक्त तीसरी तथा छठवीं पंक्तियाँ एक ही हैं, जिनमें पुनरावृत्ति हो गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि ४ थी तथा ५वीं पंक्तियाँ ६ठी-७वीं पंक्तियों के 'पाठांतर' के रूप में हाशिए में लिखी थीं—आशय दोनों पाठों का बहुत-कुछ एक है, किन्तु इन पाठांतर की पंक्तियों को सम्मिलित करते हुए उपर्युक्त तीसरी पंक्ति को प्रतिलिपिकार ने दो बार लिख डाला। विभिन्न प्रतियों में उपर्युक्त ४थी तथा ५वीं पंक्तियों की स्थिति इस प्रकार है : मो० में ये पंक्तियाँ नहीं हैं, अ० फ० में ५वीं पंक्ति नहीं है, म० ना० द० उ० स० में ५वीं का एक और पाठ है : 'श्रीधर बरनि पंग मन रंजहु' और इस पाठ को लेकर पंक्ति ५ म० उ० स० में पंक्ति ४ के साथ दो बार आई है। म० द० उ० स० में पंक्तियाँ ४ और ५ पुनः उपर्युक्त पंक्तियाँ १, २ के स्थान पर भी आई हैं।

(३) धा० २०७ तथा धा० २०८ :—

धा० २०७ : सुनि मर सुन्दर उभय हुव स्वेद कंप सुर-भंग।
मनु कमलिनि कक समहरि अमृत करने तंन रंग॥
धा० २०८ : सुनि रव प्रिय प्रिथीराज कउ उत्तर रोस तिन अंत।
सेद कंप सुरभंग भयउ सपत भाइ तिहि अंग॥

धा० में इन दो छन्दों के बीच लिखा हुआ है "तथा अउर पाठांतर"। मो० में इनमें से केवल धा० २०७ है, अ० फ० में भी धा० की भाँति दोनों छंद हैं, केवल पाठांतर विषयक उल्लेख नहीं है। म० उ० स० में धा० २०७ के चरण १ का पूर्वार्द्ध तथा धा० २०८ के शेष अंश हैं; ना० में म० उ० स० की भाँति एक दोहा की शब्दावली तो है ही, उसके बाद धा० २०७ का दूसरा चरण भी दे दिया गया है। इसलिए प्रकट है कि धा० २०८ धा० २०७ का 'पाठांतर' मात्र है।

पाठांतर-ग्रहण के कारण परिणामतः धा० के निम्नलिखित छंद पाठ वृद्धि के हैं :—
धा० १५०, १५६, २०८।

मो० अ० फ० म० ना० द० उ० ग्रा० स० में छन्दाभाव

धा० के निम्नलिखित छन्द मो० अ० फ० म० ना० द० उ० शा० स० में नहीं हैं :—

(१) धा० १५७ : यह छंद धा० के अतिरिक्त किसी प्रति में नहीं है। यह प्रहेलिका के रूप में दिया गया नारी का नख-शिख है। यह जयचन्द को सम्बोधित किया गया है (चरण ५), किन्तु अभी चन्द जयचन्द के सामने पहुँचा नहीं है, जयचन्द के पंडितगण उसकी परीक्षा लेने आए हैं, और उन्होंने अदृष्ट जयचन्द का वर्णन करने को चन्द से कहा है। इसमें 'सुजानगिरि' की छाप (चरण ५) आती है, इसलिए यह छन्द चन्द का हो भी नहीं सकता है। यदि कहा जावे कि 'सुजान गिरि' जयचन्द का विशेषण है :

जयचन्द राय सुज्जान गिरि राठौर राय गुन जानिहे।

तो यह कथन ठीक नहीं हो सकता है : 'गिरि' शब्द का इस प्रकार का प्रयोग कहीं नहीं देखा जाता है। अतः धा० १५७ प्रक्षिप्त है।

(२) धा० ४२२: यह छन्द भी धा० के अतिरिक्त किसी प्रति में नहीं है। यह निम्नलिखित है:—

दूहा—सा ... ... मरणहु चन्द नरिंद।
रासउ रसाल नव रस नियधि अधरिज हुदु फणिंद॥

निम्नलिखित कवित्त इसी विषय का है, जो शेष सभी प्रतियों में मिलता है (मो० पाठ) :—

कवित्त—मरन चंद बरदीआ राज सुनि सा हन्युं (= हन्यउ) सुनि।
पुष्पांजलि असमान सीस छोडि (= छोडी) त देवतनि।
मेछ अवधि त धरनि धरणि नव ग्रीव सुहलिग।
तिन हि तिहो स योति योति योतिहि सवत्तिग।
रासु (=रासउ) असंभु नवरस सरस चंद चदु (छदु ?) कीअ अमीअ सम।
शृंगार वीर करुण विभछु (=विभछु) भय रुद सूत (संत ?) हसंत सम॥

दोहे के अधिकतर शब्द इस कवित्त में मिलते हैं, केवल अन्त के कुछ शब्द नहीं मिलते हैं। 'रासउ रसाल' शब्दावली पर विचार करते हुए इसलिए, जैसा पहले भी कहा जा चुका है, ऐसा लगता है कि कवित्त के किसी त्रुटित पाठ से धा० के दोहे की रचना की गई है।

मो० अ० फ० म० द० उ० ग्रा० स० में छन्दाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द मो० अ० फ० म० द० उ० शा० स० में नहीं है :—

(१) धा० ३५९ : ऊपर धा० की उक्ति-शृंखला-त्रुटियाँ दिखाते हुए यह दिखाया जा चुका है कि धा० ३५८ तथा ३६० में स्पष्ट उक्ति शृंखला है, जिसको धा० ३५९ त्रुटित करता है जो प्रसंग में संगत भी नहीं है। अतः धा० ३५९ प्रक्षिप्त है।

मो० अ० फ० म० ना० में छंदाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द मो० अ० फ० म० ना० में नहीं है :—

(१) धा० ३६१ : धा० ३६० तथा ३६२ में स्पष्ट छन्द-शृंखला है, धा० ३६१ जिसको त्रुटित करता है। धा० ३६० में केवल निम्नलिखित पंक्तियाँ हैं:—

मिले जाइ चहुवान सुरतान लग्गे।
मनो वारुनी छके वारुनी लग्गे।

यह छन्द अधूरा है यह प्रकट है। यह भुजंगी है, जिसे धा० में गलत ही 'निबंधु' कहा गया है, और भुजंगी रचना भर में कहीं भी दो चरणों का नहीं आया है, कम से कम चार चरणों का आया है। फिर इस छन्द का कथन भी अधूरा रह जाता है, वह धा० ३६१ के अनन्तर आई हुई भुजंगी धा० ३६२ में चलता रहता है। अतः धा० ३६१ प्रक्षिप्त है।

म० ना० द० उ० ज्ञा० स० में छन्दाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द म० ना० द० उ० ज्ञा० स० में नहीं है:—

(१) धा० १२३ : आगे हम देखेंगे कि यह छन्द ना० की पुनरावृत्तियों के बीच आता है और प्रसंग में अनावश्यक भी है। अतः यह छन्द प्रक्षिप्त है।

अ० म० में छन्दाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द अ० म० में नहीं है :

(१) धा० १ : इसकी प्रथम पंक्ति है :

प्रथम मंगल मूल श्रुत बीय ।

और धा० २ की प्रथम पंक्ति है :

प्रथम भुजंगी सुधारी ग्रहण्णं ।

अतः दोनों छन्दों को प्रामाणिक मानने पर 'प्रथम' विषयक पुनरुक्ति होती है, जिसका मूल रचना में इस प्रकार होना संभव नहीं लगता है। धा० २ सभी प्रतियों में मिलता है और धा० २ में प्रथम, द्वितीय आदि सख्या-शृंखला भी है, जो धा० १ में नहीं है। धा० १ वंदना का है भी नहीं, उसमें श्रुतियों, पुराणों आदि की उत्पत्ति विषयक उक्ति मात्र है, जो कि ग्रंथारंभ में उपयुक्त नहीं है। अतः धा० १ प्रक्षिप्त लगता है।

मो० में छन्दाभाव

धा० के निम्नलिखितछन्द मो० में नहीं है :—

(१) धा० १५० : यह, जैसा हम ऊपर देख चुके हैं, धा० १५२ का 'पाठांतर' मात्र है और धा० १५२ सभी प्रतियों में है, इसलिए यह प्रक्षिप्त लगता है।

(२) धा० १५६ : यह जैसा हम ऊपर देख चुके है, धा० १५५ का 'पाठांतर' मात्र है और धा० १५६ सभी प्रतियों में मिलता है, इसलिए यह प्रक्षिप्त लगता है।

(३) धा० २०८ : यह, जैसा हम ऊपर देख चुके हैं, धा० २०७ का 'पाठांतर' मात्र है और धा० २०७ सभी प्रतियों में मिलता है, इसलिए यह प्रक्षिप्त लगता है।

(४) धा० २२४ : यह सुभाषित के ढंग का एक श्लोक है, जिसके न होने पर भी प्रसंग को कोई क्षति नहीं पहुँचती है, इसलिए यह प्रक्षिप्त लगता है।

(५) धा० २४३ : ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० २४२ तथा २४४ में उक्ति-शृंखला है, जो धा० २४३ से त्रुटित होती है, अतः धा० २४३ प्रक्षिप्त है।

(६) धा० ३९६ : ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० ३९५ तथा ३९७ में उक्ति-शृंखला है जो, धा० ३९६ से त्रुटित होती है, और धा० ३९६ प्रसंग-विरुद्ध भी है, क्योंकि पृथ्वीराज के पूर्व पराक्रम का, जो इस दोहे में आता है, यहाँ कोई प्रसंग नहीं है, अतः यह प्रक्षिप्त है।

(७) धा० ४२१ : ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० ४२० तथा ४२२ में उक्ति-शृंखला है, जो धा० ४२१ से त्रुटित होती है, फिर उसमें आया हुआ 'तब सु साहि गोरी राउ' सर्वथा असंगत भी है, इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त है।

अ० फ० में छन्दाभाव

धा० के निम्नलिखित छन्द अ० फ० में नहीं हैं :—

(१) धा० ११४ : ना० के षड्ऋतु-व्यतिक्रम के छन्दों पर विचार करते हुए आगे देखेंगे कि यह छन्द प्रक्षिप्त है।

(२) धा० १२० : यह छन्द प्रसंग में आवश्यक है, क्योंकि पूर्ववर्ती छन्द में दिन का उल्लेख है और परवर्ती में प्रभात का, अतः बीच में रात्रि और उसके अनंतर प्रभात होने का उल्लेख होना चाहिए जो इसी छन्द में होता है। इसलिए यह छन्द अ० फ० में भूल से छूटा लगता है।

(३) धा० १४३ : हम ऊपर देख चुके हैं कि धा० १४२ तथा धा० १४६ के बीच स्पष्ट उक्ति-शृंखला है, इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त है।

(४) धा० १७० : प्रसंग में यह छन्द आवश्यक है। धा० १६९ में जयचन्द ने चन्द को पान अर्पित करने के लिए और उसके बहाने उसके अनुचर (पृथ्वीराज) का रहस्य जानने के लिए आदेश किया है कि कुमारियाँ तांमूल के साथ प्रस्तुत हों; धा० १७० उन्हीं कुमारियों के सम्बन्ध में कहता है कि ऐसी कुमारियाँ जिनके हाथों के लिए राजाओं ने याचना की थी, चन्द को पान अर्पित करने के लिए चल पड़ीं; धा० १७१ में कहा गया है कि उन षोडश वर्षीया सुन्दरियों ने चतुर दासियों को साथ लेकर धवल-गृह छोड़ा। अतः धा० १७० इस प्रसंग में संगत लगता है और प्रक्षिप्त नहीं प्रतीत होता है।

(५) धा० २३२ : धा० २३१ तथा २३२ में स्पष्ट प्रसंग-शृंखला है : धा० २३१ में युद्ध में न प्रवृत्त हुए पृथ्वीराज को आता देखकर संयोगिता ने यह कह कर सिर पीट लिया है कि 'जिस प्रियजन के लिए लोगों उँगलियाँ उठें, उस प्रियजन का क्या प्रयोजन?' धा० २३२ में कहा गया है कि संयोगिता के इस वाक्य को सुनकर पृथ्वीराज के सामंतों ने कहा कि '[पृथ्वीराज यहाँ युद्ध से भयभीत होकर आया है उसे यह न समझना चाहिए, क्योंकि]' इसके साथ जो सामंत-भट हैं, वे हाथियों को भी ठेल देते हैं।' अतः धा० २३२ प्रसंग में आवश्यक है और प्रक्षिप्त नहीं लगता है।

(६) धा० २०८ : इस छन्द में 'कामाग्नि-भोग' की बात कही गई है, जो युक्ति-औचित्य की दृष्टि से ठीक नहीं है, अग्नि भोग की वस्तु नहीं हो सकती है, 'सरद नि खलु लगत पलिवि निप नयनन ति संयोग' के उत्तरार्द्ध का शेष वाक्य से कुछ सम्बन्ध भी नहीं ज्ञात होता है, फिर इस प्रसंग में केवल सामान्य विलास-वैभव का वर्णन किया गया है (धा० २०६—२१२), उसके बीच संयोगिता और पृथ्वीराज के प्रेम की बातें लाना असंगत लगता है। अतः धा० २०८ प्रक्षिप्त ज्ञात होता है।

(७) धा० २५७ : मो० की पुनरावृत्तियों के प्रसंग में हम देखेंगे कि यह छंद उनके बीच आता है और प्रक्षिप्त है।

म० में छंदाभाव

धा० के निम्नलिखित छंद म० में नहीं हैं :—

(१) धा० १५ : आगे हम देखेंगे कि यह छंद ना० की पुनरावृत्तियों के बीच आता है और प्रक्षिप्त है।

(२) धा० ५२ : धा० ५१ के साथ इसकी उक्ति-शृंखला है, यह हम ऊपर देख चुके हैं, अतः यह छंद प्रक्षिप्त नहीं है।

(३) धा० ६१ : इसमें कैवाँस-करनाटी केलि के प्रसंग में 'निसि भद्दव' कहा गया है किंतु आगे इसी प्रसंग में धा० ८४ में 'उदित अगस्त' कहा गया है और कन्नौज-प्रयाण इसी घटना के बाद होता है, इसलिए धा० ६१ प्रक्षिप्त लगता है।

(४) धा० ८२ : आगे स० की पुनरावृत्तियों पर विचार करते हुए हम देखेंगे कि यह उसकी पुनरावृत्तियों के बीच आता है और प्रक्षिप्त है।

(५) धा० १३७ : यह छन्द धा० १३८ से प्रसंगतः संबद्ध है; धा० १३७ में कहा गया है :—

यह चरित कब लगि गिनै चलउ सदेह दुवार।

और धा० १३८ की प्रथम पंक्ति है :—

देखियं जाइ सदेह सोइ।

अतः धा० १३७ प्रक्षिप्त नहीं हो सकता है।

(६) धा० २८० : धा० २७९ तथा इस छन्द में उक्ति शृंखला हम ऊपर देख चुके हैं, अतः यह छन्द प्रक्षिप्त नहीं लगता है।

ना० में छंदाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द ना० में नहीं है :—

(१) धा० ८ : ना० की पुनरावृत्तियों में, आगे हम देखेंगे, यह उन छन्दों में आता है जो प्रक्षिप्त माने गए हैं।

द० में छंदाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द द० में नहीं है —

(१) धा० २१ . यह छन्द ग्रन्थ की छन्द संख्या विषयक है, जिसमें "सहस्र पच (या 'सहस्र सत्त') नवसिष" इसका आकार बताया गया है, किन्तु यह छन्द-संख्या ग्रन्थ के किसी पाठ में नहीं मिलती है, अतः छन्द प्रक्षिप्त लगता है।

उ० शा० में छंदाभाव

धा० का निम्नलिखित छन्द उ० शा० में नहीं है :—

(१) धा० ८१ : म० की पुनरावृत्तियों पर विचार करते हुए आगे हम देखेंगे कि यह छन्द उनमें आता है और प्रक्षिप्त है।

उपर्युक्त छन्दों के अतिरिक्त धा० में अनेक वार्त्ताएँ भी आती हैं, जिनमें से कुछ के सम्बन्ध में हम ऊपर उक्ति शृंखला-त्रुटियों का विवेचन करते हुए हम विचार कर चुके हैं। शेष भी प्रायः उसी प्रकार की हैं, और इनमें से एक भी समान रूप से शेष समस्त प्रतियों में नहीं पाई जाती है, अतः इन पर विचार करना अनावश्यक होगा। इस प्रकार धा० की समस्त वार्त्ताएँ प्रक्षिप्त लगती हैं।

परिणामतः हम देखते हैं कि विभिन्न प्रतियों में न मिलने वाले धा० के छन्दों में से निम्नलिखित प्रक्षिप्त प्रमाणित होते हैं :—

मो० अ० फ० म० ना० द० उ० शा० स० में अप्राप्य		:	धा० १५७।
मो० अ० फ० म० द० उ० शा० स०	,,	:	धा० ३५९।
मो० अ० फ० म० ना०	,,	:	धा० ३६१।
म० ना० द० उ० शा० स०	,,	:	धा० १२६।
अ० म०	,,	:	धा० १।
मो०	,,	:	धा० १५०, १५६, २०८, २२४, २४३, ३९६, ४२१।
अ० फ०	,,	:	धा० ११४, १४३, ३०८, ५७।
म०	,,	:	धा० १५, ६१, ८२।
ना०	,,	:	धा० ८।
द०	,,	:	धा० २१।
उ० शा०	,,	:	धा० ८१।

धा० भ० फ० ना० म० ह्ना० उ० स० में पुनरावृत्ति

(१) धा० २१९ के चरण २१ तथा ३६ :—

धा० २३९, २१ : निृप जोह कवज्जनि वट्टि लियं।

धा० २३९, ३६ : निृप जोह कवज्जह वंट लियं।

ये दोनों चरण एक-दूसरे से इतने अभिन्न और दूर हैं कि कोई भी किसी के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण न किया गया होगा। मो० के अतिरिक्त सभी प्रतियों में ये पंक्तियाँ इसी प्रकार दो बार आती हैं, केवल मो० में धा० २३९.३६ के स्थान पर है :—

निृप इक इक योजन वंटि लियं।

किन्तु यहाँ पर कन्नौज और दिल्ली की दूरी को एक-एक योजन करके बाँट लेने का कोई प्रसंग नहीं है, यह प्रसंग तो काफी बाद में आता है; और 'निृप' (पृथ्वीराज) ने 'एक-एक योजन बाँट लिया' यह वास्तविक भी नहीं है, कन्नौज से दिल्ली की दूरी को उसके सामन्तों ने आपस में बाँटा है (धा० २६१)। इसलिए मो० का पाठ अग्राह्य है, और दूसरे स्थान पर भी धा० का पाठ ही ग्राह्य है, यह प्रकट है। प्रश्न यह है कि ऐसी पुनरावृत्ति क्यों हुई। यह पुनरावृत्ति पाठ-वृद्धि के कारण ही हुई ज्ञात होती है। पुनरावृत्ति के बीच की पंक्तियों में चामंडराय के सेना के मुख पर नियुक्त होने का उल्लेख होता है, किन्तु पूरे कन्नौज-युद्ध में चामंडराय का उल्लेख पुनः कहीं नहीं मिलता है; इसी प्रकार आरम्भ, कुरम्भ, और मोरीराज की भी नियुक्तियाँ इन पंक्तियों में उल्लिखित हुई हैं, किन्तु कहीं भी इनका उल्लेख कन्नौज-युद्ध में अन्यत्र नहीं होता है। इसके विपरीत मोरीराज को सोमेश्वर और पृथ्वीराज दोनों ने अलग-अलग पहले दलित किया है (धा० १७, ४७), इस लिए उसका पृथ्वीराज के पक्ष में लड़ना असम्भव ही है। धा० में पूरे कन्नौज-युद्ध में ४६ योद्धाओं के नाम आए हैं।[1] इन पंक्तियों में कुल छः नाम ही आते हैं, और उनमें भी तीन इस प्रकार गलत हैं यह प्रमाणित करता है कि ये पंक्तियाँ प्रक्षिप्त हैं और पुनरावृत्ति प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के कारण हुई है।

धा० मो० ना० ह्ना० उ० स० में पुनरावृत्ति

(१) धा० ४०२ : दस हथ्थ रक्खि दीनी असीस।
सिर नयो नयो नहि मान रीस।
राजन......है सुरति इक्क।
घरियार सत्त सर विद्ध नेक्क।

धा० ४०५ : राजन सुदान है सुरत इक्क।
घरिआर सत्त सिर विधन इक्क।...
पहिचानि चंद वर धुनिग सीस।
सिर नयो नयो नहि मान रीस॥

दोनों छन्दों में साम्य इतना अधिक है कि 'पाठांतर' के नाते दोनों में से किसी एक को न लिया गया होगा। धा० ४०३ जहाँ पर है, वहाँ पर सर्वथा असंगत है: धा० ४०२ में गोरी ने चंद से कहा है कि वह पृथ्वीराज से घड़ियालों के वेधने की बात कहे और यदि पृथ्वीराज स्वीकार करे तो वह तमाशा देखे, धा० ४०२ के बाद एक वार्ता आती है, जिसमें गोरी हुजाबखाँ हबसी को हुक्म देता है कि वह चंद को पृथ्वीराज से दस हाथ दूर रख कर उससे बातें कराये, धा० ४०४ में आता है कि चंद ने राजा को दुर्बल और

[1] दे० धा० २५३, २५६, २८९, २९०, २९२, ३०४।

उदास पाया, इसके अनन्तर धा० में एक शीर्षक जैसी वार्ता आती है कि चंदने राजा को आशीर्वाद दिया, धा० ४०५ मे उसका राजा को आशीर्वाद देना और उसे उस के वचन की स्मृति कराना आता है जिसमें उसने सात घड़ियालों को एक शर से वेधने की बात कही थी। ऐसी दशा में प्रकट है कि धा० ४०३ की पंक्तियाँ अपने स्थान पर सर्वथा असंगत हैं। ये इतनी फुटकल भी हैं कि इनमें कोई एकसूत्रता नहीं है। लगता है कि किसी प्रति के क्षत-विक्षत हो जाने के अनंतर एक पूरे रूपक की येही पंक्तियाँ ठीक-ठीक पढ़ी जा सकती थीं और मिलान करते समय धा० ४०५ से इन्हें भिन्न छंद की पंक्तियाँ समझकर उसी प्रति से ये उतारी गईं। इसलिए धा० ४०३ उसमें पाठ-वृद्धि के रूप में आया, यह प्रकट है।

धा० में पुनरावृत्तियाँ

(१) धा० १२० तथा १८० :—

धा० १२० : भइस निसा दिस मुदित तिम उडनिप तेज विराज।
कथित सार्थि वयहे कथा सुक्ख सयन मिथिराज ॥

धा० १८० : भयस निसा दिसि मुदित यहु उड निप तेज विराज।
कथिक सत्य (सत्य) कथहित कथा सुक्ख सयन मिथिराज ॥

पाठ की दृष्टि से दोनों छन्द प्रायः परस्पर अभिन्न हैं और स्थान की भी दृष्टि से एक दूसरे से बहुत दूर हैं, इसलिए कोई भी किसी के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है।

अ० फ० के अतिरिक्त शेष प्रतियों में धा० १२० के स्थान पर (मो० पाठ) है :—

त्रयत याम वासर विसर घटिग हंस तनु रात।
सुक्ख इच्छि षच्छनु तूलि (तुली) से सव दिषव प्रभात ॥

प्रसंग से यह प्रकट है कि धा० १२० के स्थान पर प्रभात होने का उल्लेख होना चाहिए जैसा मो० आदि हुआ मे है, क्यों कि धा० १२१ में प्रभात-कालीन दृश्यों का वर्णन है, और धा० १८० के स्थान पर, जैसा सभी प्रतियों में है, रात्रि होने का उल्लेख होना चाहिए, क्यों कि धा० १८१ में जयचन्द के 'अवसर' (नृत्य-संगीत-समाज) का वर्णन है। इसलिए यह स्पष्ट है कि धा० में छन्द अपने वास्तविक स्थान के अतिरिक्त एक गलत जगह पर भी आ गया है। प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों हुआ होगा। एक सम्भावना तो यह है धा० में भी यहाँ वही दोहा था जो मो० आदि में है और उसके 'त्रयत' को 'भइत' पढ़कर—क्यों कि पुरानी राजस्थानी लिपि के त्र और भ में किंचित साम्य मिलता है—प्रतिलिपिकार ने स्मृति-भ्रम से उस दोहे के स्थान पर भी धा० १८० को लिख डाला। दूसरी संभावना यह है कि धा० के किसी पूर्वज में पत्र त्रुटित होने के कारण इस छन्द का 'भइत' मात्र शेष था, उसको 'भइत' पढ़कर स्मृति-प्रमाद से धा० १८० को यहाँ भी लिख डाला गया। इसलिए यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित नहीं हो सकती है।

(२) धा० २०० तथा २४२ :—

धा० २०० : भय टामक दिसि विदिसि हुइ कोह पवर तिह राह।
मनु अकाल तिडिय सघन चंहया तु छूटि प्रवाह ॥

धा० २४२ : सुनिम षयण राजन चढिय बहु पक्खर भर राहु।
मनु अकाल तेडिय सघन पवय छूटि परवाहु ॥

दोनों छन्दों में पाठ-भेद केवल दोनों के प्रथम चरणों के पूर्वार्द्ध में है, शेष छन्द दोनों में एक ही है। किन्तु दोनों परस्पर इतने कम भिन्न होते हुए भी एक दूसरे से इतने दूर हैं कि कोई भी एक दूसरे के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। वस्तुस्थिति क्या रही होगी, यह विचारणीय है।

मो० तथा अन्य प्रतियों में धा० २०० तो अपने स्थान पर है, किंतु धा० २४२ के स्थान पर (मो० पाठ) है :—

सुनि वजन रजन चढ़िग बहु पव्वर समहाउ।
मनुह लंक विग्रह करन चलु (=चलउ) रघुप्पति राय ॥

धा० २०० तथा २०१ में उक्ति-शृंखला प्रकट है :—

धा० २०० : मनु अकाळ तिड़िय सघन चल्या तु छुटि प्रवाह।

धा० २०१ : प्रवासो (प्रवाहे—शेष में) त लज्जी न लज्जी भहारे ॥

इसी प्रकार धा० २४१ तथा २४२ (मो० पाठ) में प्रसंग-शृंखला है। धा० २४१ में रण-वाद्यों के बजने का वर्णन है, और फिर कहा गया है :—

उप्पमा खंड नव नयन सग्गी।
मनो राम रावन्न इथ्ये विलग्गी॥

धा० २४२ (मो० पाठ) में वाद्यों को सुनकर चढ़ाई करने का उल्लेख है, और कहा गया है कि पृथ्वीराज जयचन्द से विग्रह करने उसी प्रकार चल पड़ा जैसे रावण से विग्रह करने राम चल पड़े थे। इसलिए प्रकट है कि धा० २४२ के स्थान पर भी गलत ढङ्ग पर धा० २०० आया हुआ है।

यह पुनरावृत्ति भी पूववर्त्ती की भाँति स्मृति-भ्रम से हुई लगती है : प्रथम चरण के उत्तरार्द्ध में दोनों में 'बहुपव्वर' आता था और एक का 'समहाउ' तथा दूसरे का 'भरराहु' (महराउ—शेष में) भी एक से थे, इसलिए धा० २४२ के लिखते समय प्रतिलिपिकार ने 'बहु पव्वर' तक तो ठीक प्रतिलिपि की किंतु उसके बाद वह बहँक गया और शेष शब्दावली स्मृति-भ्रम से उसने धा० २४२ के स्थान पर भी धा० २०० की लिख डाली। अतः प्रकट है कि यह पुनरावृत्ति भी पाठवृद्धि-जनित नहीं हो सकती है।

मो० में पुनरावृत्तियाँ

(१) मो० २५२ तथा मो० २७२ :—

मो० २५१ : आलोक्य नृप नयनं वचनं धर्मस्य कातरं।
स्वामि दोस भई कावे सेमि निद्रा स उदये ॥

मो० २७२ : आलोकित नृप नयनं वचनं जिह्वा सु कातरा।
श्रवन सुनत सामंतया सुर आमि निद्रा उदिमं तया॥

दोनों पाठों में पर्याप्त साम्य है, किन्तु एक दूसरे से दोनों काफी दूर पड़े हैं इसलिए यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित हो सकती है, और न 'पाठांतर'-ग्रहण जनित। ऐसा लगता है कि पहले छंद मो० में उपर्युक्त दो में से एक ही स्थान पर था, किन्तु किसी अन्य प्रति से मिलान करने पर मिलान करने वाले को यह छंद भिन्न स्थान पर मिला और उसने यह समझा कि उसकी प्रति में यह छंद नहीं है, इस लिए उक्त अन्य प्रति से इस भिन्न स्थान पर भी उसने छंद को उतार लिया।

(२) मो० ३१४ तथा मो० ४४८ :—

दोनों छंद सर्वथा एक ही हैं, पाठ भी दोनों का सर्वथा एक ही है, यहाँ तक कि दोनों में निम्न-लिखित गलत पंक्ति अन्त में रूपान्तर से आती है :—

नृप इक इक योजन बांटि लियं।

और दोनों एक दूसरे से बहुत दूर भी हैं, एक कन्नौज-युद्ध में और दूसरा गोरी-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में; अतः दो में से कोई भी पाठ 'पाठांतर' समझ कर न उतारा गया होगा। इस छंद में निर्वाने चन्देल के पृथ्वीराज के द्वारा सेना में एक विशिष्ट स्थान पर नियुक्त किए जाने की बात कही गई है,

और मो० ३१९ (= धा० २८९) में निर्वान वीर के युद्ध में धराशायी होने का भी उल्लेख हुआ है, अतः यह निश्चित है कि छंद का वास्तविक स्थान मो० ३१९ (=धा० २८९) से पूर्व होना चाहिए, और मो० ४५० इसका वास्तविक स्थान नहीं हो सकता है। इसके अतिरिक्त इसके द्वितीय तथा पंचम चरण क्रमशः इस प्रकार है :—

दुहु राय महा भर थं मिलियं।
दुहु राय रपत्त ति रत्त उठे।

इस लिए भी यह छद पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध का होना चाहिए, पृथ्वीराज-गोरी युद्ध का नहीं। अब प्रश्न है कि मो० ४५० के स्थान पर यह पुनः कैसे लिख उठा। धा० में यह मो० ३१४ के स्थान पर ही है, किन्तु मो० के अतिरिक्त शेष प्रतियों में यह मो० ४५० के स्थान पर है। ऐसा लगता है कि पहले मो० में यह पहले स्थान पर ही था किन्तु बाद में किसी अन्य प्रति के अनुसार दूसरे स्थान पर भी रख लिया गया। यह अन्य प्रति भी मो० के ही कुल की लगती है, क्योंकि छन्द के अन्तिम चरण का उपर्युक्त गलत पाठ मो० में दोनों स्थानों पर आता है। फलतः यह पुनरावृत्ति भी पाठवृद्धि-जनित नहीं लगती है।

(३) मो० ४४६ के चरण ११, १२ तथा उसी के २९, ३० :—

चरण ११, १२ : प्रजरि (=प्रज्जरइ) पंथ पट्टनि ति सिंध।
मिलि चलहि सग आरम्भ गिधि॥
चरण २९, ३० : प्रजलहि पथ पट्टनि (= पट्टनइ) सिंधु।
मिलि चलिग ध अरंभ गिधु॥

ये चरण दो बार 'पाठांतर'-ग्रहण के परिणाम-स्वरूप आए हुए नहीं हो सकते हैं, क्योंकि दोनों स्थान एक दूसरे से दूर हैं। धा० अ० फ० में ये चरण बाद वाले स्थान पर हैं और ना० शा० स० में पहले स्थान पर हैं; ऐसा लगता है कि मो० में पहले स्थान पर ये चरण अपने पूर्ववर्ती पाठ के कारण बने रहे, और दूसरे स्थान पर किसी अन्य प्रति के पाठ-मिश्रण के परिणाम-स्वरूप आ गए। फलतः यह पुनरावृत्ति भी पाठवृद्धि-जनित नहीं लगती है।

(४) मो० ४४६ के अन्तिम दो चरण तथा मो० ४५० :—

मो० ४४६ के अन्तिम दो चरण :

उचरहि चंद भर भरन काज।
रापीउ (=रापिउ) आज प्रथीराज राज॥

मो० ४५० : उचरइ चद भर भरन काज।
रषिउ (=रषिअउ) आज प्रथीराज राज॥

दोनों स्थानों पर इन चरणों का पाठ बहुत-कुछ एक ही है और ये दोनों स्थान एक दूसरे से कुछ दूर हैं, इस लिए यह पुनरावृत्ति 'पाठांतर'-ग्रहण के कारण हुई नहीं लगती है। दूसरे स्थान पर छन्द के केवल दो चरण हैं, चार भी नहीं—पूरा छंद मो० में ४० चरणों का है। इस लिए यह भी सम्भव नहीं है कि छद को किसी अन्य प्रति में दूसरे स्थान पर देख कर वहाँ भी उतार लिया गया हो। यहाँ स्पष्ट ही पाठ वृद्धि जनित पुनरावृत्ति दिखाई पड़ती है। मो० ४४६ और ४५० के बीच आए हुए मो० ४४७, ४४८, ४४९ में से मो० ४४८ के विषय में कुछ ऊपर विचार किया जा चुका है। उसके साथ और दो छद (मो० ४४७, ४४९ = धा० ३५६, ३५७) इस स्थान पर मो० के आदर्श में बढ़ाए गए, इसी कारण मो० में यह पुनरावृत्ति हो गई।

(५) मो० ५२२.४ तथा मो० ५२६.४ :

मो० ५२२.४ : सिर नाइ नहीं तिहि करीय रीस।

मो० ५२६.४ : सिर माद नही मंन भई रीस ।

दोनों का पाठ बहुत-कुछ समान है, और दोनों एक दूसरे से काफी दूर भी हैं, इस लिए दोनों में से कोई भी दूसरे का 'पाठांतर' समझ कर ग्रहण नहीं किया गया होगा। दोनों के बीच जो छंद मो० में आते हैं, वे अन्य प्रतियों में भी आते हैं और प्रसंग में आवश्यक हैं। इस लिए लगता यह है कि मो० में पहले बीच के छंद छूट गए थे, बाद में वे किसी अन्य प्रति के आधार पर बढ़ाए गए, जिससे पुनरावृत्ति हो गई। फलतः यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित नहीं लगती है।

(६) मो० ५२६ २ तथा मो० ५२९.३ :—

मो० ५२६.२ : अंपि पांन मनु चितह लग ।
मो० ५२९.३ : अंपि पांन मनु चितह लग ।

ये दोनों एक दूसरे से कुछ दूरी पर हैं, इस लिए यह सम्भव नहीं है कि दोनों मे से कोई अन्य का 'पाठांतर' समझ कर ग्रहण किया गया हो। दोनों के बीच में जो छंद मो० में आते हैं, वे अन्य प्रतियों में भी आते हैं और प्रसंग में आवश्यक हैं, इस लिए ऊपर की पुनरावृत्ति की भांति यहाँ भी, ऐसा लगता है, मो० में कुछ छंद छूट गए थे जिन्हें किसी दूसरी प्रति की सहायता से जब उतारा गया, उस अन्य प्रति का 'पाठांतर' भी उतर आया, यद्यपि वह 'पाठांतर' समझ कर नहीं उतारा गया। अतः यह पुनरावृत्ति भी पाठवृद्धि-जनित नहीं लगती है।

अ० फ० में पुनरावृत्ति

(१) अ० १. अन्त तथा अ० २. भुज० १ : अ० फ० में अ० २. भुजं १ के कुछ चरण अ० खण्ड १ के अन्त में भी आ गए हैं। दोनों के बीच में कोई छन्द नहीं है और पाठ भी दोनों का एक ही है, इसलिए लगता है कि अ० फ० के किसी पूर्वज में इस छन्द की पंक्तियाँ भूल से दो बार लिख उठी थीं।

फ० में पुनरावृत्ति

निम्नलिखित पुनरावृत्ति फ० में ही है, अ० में नहीं है :—

(१) अ० फ० १४. कवि० १० के बाद फ० में आया हुआ दोहा तथा अ० फ० १४. दो० ३५ : अ० फ० १४. कवि० १० के बाद फ० में है :—

तब सावंत स सिर धरीय भुप जंपी इह बेनु ।
तुम काहू के नृपति हौ बिभीक गोरी सैन ॥

अ० फ० १४. दो० ३५ : तब साबंत जु सिर धरी भुप जंपयिहु बैन ।
का सिर पर प्रिथिराज है कभौ गोरी सैनु ॥

दोनों छन्द एक दूसरे से काफी दूर हैं और दोनों के पाठों में भी अधिक अन्तर नहीं है, इसलिए इनमें से किसी के भी 'पाठांतर' के रूप में गृहीत हुए होने की सम्भावना नहीं है। अतः यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित ही लगती है।

इस पुनरावृत्ति के बीच में धा० ३४४, तथा ३४५ आते हैं।

म० स० में पुनरावृत्ति

(१) म० १२. ५८६ तथा १२. ६०७ और स० ६१. २४५७ तथा ६१. २४८९ :—
म० १२. ५८६, स० ६१. २४५७ :

एक अंग तिय सकल विकल उच्चरिय राजगुप ।
भृकुटि अंक धंकुरिय सुतिहि लिपिय मदि रूप ।
बिय विमान उप्पारि देव छुल्लिय मिलि चल्लिय ।

भ्रम भ्रमकि आयास प्रान ति अच्छरि मिलीय।
दस एक चवै कवि कवि कमल असि सुमति धू म करि करिय नृप।
तन राज काज जाजह मिरिग सुमति सीह मई देव धप॥

म० १२.६०७, स० ६१.२४८९
एक अंग तिय सकल विकल विचरीय राज सुप।
भृकुटि भ्रम अकुरिय प्रमान तह लपित मद्धि रूप।
विय विमान उचरीय देव डुलिलय मिछि वल्लीय।
भामा भ्रम कीय आय पंति अछरीय सु मिटिलय।
दस एक चववकवि कवि कमल अस मग तिन भ्रम करिय नृप।
तन राज काज जाजह मिरिग मिस सीह मिछि देव विय॥

दोनों छन्द एक दूसरे से दूर हैं, और दोनों के पाठ लगभग एक हैं, इसलिए इनमें से कोई भी किसी के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया गया होगा, इसकी सम्भावना नहीं है। पाठवृद्धि के कारण हुई पुनरावृत्ति की भी सम्भावना नहीं है, क्योंकि दूसरे स्थान पर युद्ध का कोई प्रसग ही नहीं है, वहाँ तो युद्ध से लौटे हुए पृथ्वीराज और सयोगिता का केलि-विलास वर्णन प्रारम्भ हुआ है। इसलिए प्रकट है कि दूसरे स्थान पर यह छंद किसी प्रकार भूल से पहुँच गया है।

स० में दूसरे स्थान पर अन्तिम दो चरण भिन्न हैं। ऐसा लगता है कि छंद को उस प्रसग में खपाने के लिए जाज के धराशायी होने की बात ठीक न समझ कर पाठ-परिवर्तन किया गया है। स० में इनका पाठ है :

स० ६१.२४८९ : सजोग जोग रचि व्याह मन गुरु जन सुत अरु निगम धन।
प्रोहित्त पग अरु हस रिपि प्रसव सुख्प घर दुख्प मन।

किन्तु व्याह की बात तो बहुत पीछे आती है, और यह शब्दावली कुछ न कुछ वही की है :

स० ६१ २५३७ : हेम हयग्गय अंबरह दासि सहस सत दीन।
प्रोहित पग सुमझ रिपि व्याहु विद्धि बहु कीन॥

म० ना० स० में पुनरावृत्ति

(१) म० ५ १ तथा ग० ८ १ (= धा० ५८), ना० २०.४० तथा २८.७२ के बाद का छद और स० ५० १, ५५.१२२ तथा ५७ ३६ :—

सभी स्थानों पर इस छद का पाठ प्रायः एक ही है और निम्नलिखित है :

तिहि तर आखेटक भमै थिर न रहै चहुवान।
वर प्रधान जोगिनि पुरह घर रख्पै घर बान॥

सभी स्थल एक दूसरे से बहुत दूर हैं, इसलिये 'पाठांतर'-ग्रहण के कारण पुनरावृत्ति हुई, यह सम्भव नहीं है। म० ८.१, स० ५७.३६, ना० २८.७२ के बाद के छद के स्थान पर इसकी सगति प्रकट है, वहाँ प्रसग कैंवास करनाटी केलि का है : प्रधान अमात्य (कैंवास) का इसीलिए इस छद में उल्लेख होता है और जहाँ म० ५.१ है और वहाँ कैंवास का कोई प्रसग नहीं आता है, केवल पृथ्वीराज के आखेट का प्रसंग आता है, इसलिए छन्द पूरा पूरा उक्त स्थल पर संगत नहीं है। इसी प्रकार ना० २० ४०, स० ४५ १२२ के पूर्व जयचन्द की दिल्ली पर चढाई वर्णित है, जिसका कैंवास-करनाटी-केलि से कोई सम्बन्ध नहीं है जो परवर्त्ती स्थल पर मिलती है। केवल सामान्य प्रसग साम्य के कारण यह छन्द वहाँ भी रख लिया गया होगा, ऐसा लगता है; पाठवृद्धि के कारण यह पुनरावृत्ति हुई नहीं ज्ञात होती है।

म० में पुनरावृत्ति

(१) म० ९ २४ तथा म० १२.६२० (= धा० २१२) :—

म० ९.२४ : अह निसि सुधि न जानिय मानिय प्रौढ रति ।
गुर बधव भूत भोय भइय रीति गति ॥

म० १२ ६२० : अह निसि सुधि न जानिय मानिय प्रौढ रति ।
गुर बंधव भूत भोइ भई रीति गति ॥

दोनों छन्द एक दूसरे से बहुत दूर हैं, और पाठ दोनों का सर्वथा एक है यहाँ तक कि 'लोइ' और 'विपरीत' के स्थान पर दोनों में गलत पाठ 'भोइ' तथा 'रीति' है, इसलिए यह प्रकट है कि दोनों में से कोई दूसरे के 'पाठांतर' के रूप में नहीं ग्रहण किया गया होगा। किंतु यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित भी नहीं हो सकती है, क्यों कि प्रथम स्थान पर छन्द सर्वथा असंगत है : छन्द के प्रथम दो चरणों में कहा गया है :—

इन विधि विलसि आसर (असार) सुसार कीय ।
दै सुष जोगि संजोगि भोगि प्रथिराज पीय ॥

किंतु म० खण्ड ९ में तो पृथ्वीराज ने कन्नौज के लिए प्रयाण तक नहीं किया है, संयोगिता को संयोग-सुख देने की बात तो दूर है। इसलिए किसी प्रकार भूल से यह छन्द म० खण्ड ९ में भी पहुँच गया है।

ना० द० उ० स० में पुनरावृत्ति

(१) ना० १३.५७ तथा १३.३०, द० १५.२८ तथा २६.७७, और स० १४.१६२ तथा ४६. ११२ :—

तीनों प्रतियों में दोनों स्थानों पर इस छन्द का पाठ प्रायः एक ही है, और निम्नलिखित है :

सुनत कथा अछि बत्तरी गइ रत्तरी विहाइ ।
दुज्ज कही दुजि संभरइ जिहि सुप सवन सुहाइ ॥

और दोनों छंद एक-दूसरे से काफी दूरी पर हैं, इसलिए यह प्रकट है कि दो में से कोई भी 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। तीनों प्रतियों में ये 'इछनी विवाह' तथा 'विनय मंगल' के समयों के अन्त में आते हैं, और दोनों स्थानों पर संगत है। अत यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित लगती है।

ना० में इस पुनरावृत्ति के बीच धा० के कोई छन्द नहीं पड़ते हैं, किंतु द० तथा स० में धा० २८ तथा २९ पड़ते हैं। ये दोनों छन्द क्रमश अनंगपाल द्वारा पृथ्वीराज को दिल्ली दान तथा पृथ्वीराज के *दिल्ली-सिंहासनारोहण विषयक हैं, और अन्यथा भी प्रक्षिप्त जान पड़ते हैं।* स० में इनके अतिरिक्त धा० २६ भी पड़ता है, जो 'धन कथा' का है, और यह भी प्रक्षिप्त जान पड़ता है।

ना० उ० स० में पुनरावृत्ति

(१) ना० १३. ५७ तथा १६. ३४ और स० ४६. २७ तथा ४८. १०१ —

दोनों स्थानों पर छन्द का पाठ लगभग एक ही है और निम्नलिखित है :

अन्यथा नैव विद्यति द्विजस्य वचनं यथा ।
प्राप्ते च जुगिनी नाथे संयोगिता तत्र गच्छसि ॥

दोनों छन्द एक दूसरे से दूर भी हैं, इसलिए कोई छन्द शेष अन्य के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण न किया गया होगा, यह प्रकट है। प्रथम स्थल पर छन्द 'विनय मंगल' खण्ड के अन्तर्गत द्विज-द्विजी संवाद में आता है और संगत लगता है, द्वितीय स्थल पर छन्द ना० में शुकवर्णन प्रसंग में

आता है और संगत नहीं लगता है। स० में भी प्रथम स्थल पर यह संगत है, जहाँ यह 'विनय मंगल' खण्ड में द्विज-द्विजी संवाद में आता है; द्वितीय स्थल पर इसके बाद आने वाले छन्दों का प्रथम स्थल पर इसके पूर्व आने वाले छन्दों से कोई सम्बन्ध नहीं है : वे पृथ्वीराज के दूत के द्वारा अपने अपमान की बात सुनकर कन्नौज आक्रमण की तैयारी से सम्बन्धित हैं। इसलिए यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित नहीं है।

ना० में पुनरावृत्तियाँ

(१) ना० १.१६ तथा २.१२४ :—

छन्द का पाठ दोनों स्थलों पर प्रायः एक है और निम्नलिखित है :

छंद प्रबंध कवित्त जुति साटक गाह दुअथ्थ।
लहु गुरु मंडित खंडियह पिंगल अमर भरथ्थ ॥

और दोनों छन्द एक-दूसरे से काफी दूर हैं, इसलिए यह प्रकट है कि उपर्युक्त में से कोई भी शेष अन्य के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। प्रथम स्थान पर यह ग्रन्थ के मंगलाचरण के अनन्तर उसकी भूमिका के प्रारम्भ में आता है। इन दोनों स्थानों के बीच में ५७ छन्द आते हैं जिनमें पृथ्वीराज के कुल का इतिहास है, और वे भूमिका के नहीं हो सकते हैं। अतः यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित है, यह प्रकट है।

इस पाठवृद्धि के अन्तर्गत धा० के जो छंद आते हैं, वे हैं धा० ३ से धा० १९ तक।

(२) ना० २८.१ तथा ना० ३० के प्रारम्भ का संख्याहीन छंद :—

दोनों स्थानों पर इस लम्बे छंद का पाठ प्रायः एक ही है, केवल बाद वाले स्थान पर प्रथम स्थान के पाठ के चरण ५, ७, तथा ८ नहीं हैं; और दोनों स्थल एक-दूसरे से दूर भी हैं। इसलिए यह सम्भव नहीं लगता है कि दोनों स्थलों में से किसी स्थल का पाठ शेष अन्य के 'पाठांतर' होने के कारण ग्रहण किया गया हो। यह छन्द जयचन्द के राजसूय यज्ञ से सम्बन्धित है और ना० के खण्ड २८ के प्रारम्भ में ही आ सकता है। ना० खंड ३० 'दुर्गा केदार समय' है, जिसमें कहा गया है कि शहाबुद्दीन के दुर्गा केदार भट्ट और पृथ्वीराज के राज कवि चंद में पृथ्वीराज के तत्वावधान में तन्त्र-मंत्रोपचार तथा वाद-विवाद प्रतियोगिता होती है, जिसमें दोनों तुल्य प्रमाणित होते हैं, और जब दुर्गा केदार लौटकर जाता है, शहाबुद्दीन पृथ्वी पर आक्रमण करता है। प्रकट है कि इस कथा से विवेच्य छन्द का कोई सम्बन्ध नहीं है। ना० खंड ३० के प्रारम्भ में यह छन्द-संख्या-हीन भी है, इसलिए यह निश्चित है कि यह वहाँ किसी प्रकार बाद में सम्भवतः किसी भूल के कारण पहुँच गया।

(३) ना० २९. १० तथा ३९. १५१ :—

ना० २९. १० :
हे बेरी चोहान गेह चामंड सपत्तौ।
धरि अग्गें चामुंड दिष्षि प्रज्जरि चित चित्तौ।
कहै राइ चामंड सुनौ चोहान तुम्ह घर।
नृप आग्या सिर सज्जुं नतरु जानौं तुम्ह हित हर।
नीय स्यामि धर्म छंडु नहीं हीय आरोहीय सद्दर।
लिन्नी सु बेरि चामंड विहसि पय आरोहीय अप्प कर ॥

ना० ३९. १५१ :
हे बेरी चोहान गेह चामंड सपत्तौ।
धरि अग्गें चामुंड ... ...
... ... सुनो चोहान तुम्ह घर।
नृप आज्ञा सिर संजु नतरु जानहु तुम हित हर।

नीय स्वामिधर्मं छंदु नहीं हरव आरोहीय सद दर।
जिम्मी सु वैरि चामंड विहसि पच आरोही अप्प कर॥

दोनों छन्दों का पाठ एक ही है, और दोनों एक दूसरे बहुत दूर भी हैं, इसलिये यह प्रकट है कि इनमें से कोई किसी के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। ना० खड २९ कैंवास-वध विषयक है। वहाँ इस छंद की कोई सगति नहीं है। यह ना० खंड ३९ का ही हो सकता है, जिसके अन्य कुछ छंदों में भी (ना० ३९ १०९—१११) चामंड की बेड़ी का प्रसंग आता है। ना० खंड २९ में यह छद अतः भूल से किसी प्रकार चला गया लगता है और पाठवृद्धि के परिणाम-स्वरूप गया हुआ नहीं प्रतीत होता है।

(४) ना० २९. ८६ के बाद का साटक और ना० ४१.१० :—
दोनों छंदों का पाठ प्रायः एक है और निम्नलिखित है :

सोमग्गं कल धूत मूत मिचरे मधुरेहि मधु वेष्टिता।
घाता सीत सुगंद मंद सरसा आलोल सा चेष्टिता।
कंठी कूल कुलाहले मुकलया कामस्य उद्दीपनो।
रत्ते रत्त बसंत पत्त सरसा संजोगि भोगाइते॥

दोनों छन्द एक दूर से भी हैं इसलिए कोई किसी के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। यह छंद पहले स्थान पर असंगत है, क्यों कि तब तक संयोगिता के 'भोगाइत' होने की कोई बात नहीं है और न तब तक उसकी प्राप्ति के लिए कन्नौज-प्रयाण ही पृथ्वीराज ने किया है। पहले स्थान पर यह संख्या-हीन भी है, जिससे यह वहाँ बाद में रखा गया लगता है, और इस लिए यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि-जनित नहीं ज्ञात होती है।

(५) ना० ३१.२८ तथा ३१.३७ :—
दोनों छन्दों का पाठ प्रायः एक ही है, और निम्नलिखित है :

हो सामंत सु मंह कहु सुहरि चित तजि काज।
त्रिपय लोक प्रिथिराज सुनि नमसकार किय साज॥

और ये छन्द एक-दूसरे से दूरी पर भी हैं, इसलिए 'पाठांतर' समझ कर इनमें से कोई भी ग्रहण न किया गया होगा। यह छन्द ना० ३१.२८ के पूर्ववर्ती तथा ना० ३१.३७ के परवर्ती छन्दों के प्रसग में हैं, इसलिए पुनरावृत्ति पाठ-वृद्धि जनित ज्ञात होती है।

इस पुनरावृत्ति के बीच धा० १२५ और धा० १२६ आते हैं जो धा० १२७ के होते हुए प्रसग में आवश्यक भी नहीं है, क्योंकि धा० १२७ में भी गंगा की स्तुति है जैसी इन छन्दों में है। इसलिए ये छन्द प्रक्षिप्त लगते हैं।

(६) ना० ३३.१०७ तथा ३५.५ (= धा० २४०) :—

ना० ३३.१०७ :
जदिन रोस राठौर चंपि चहुआन गहन कहुं।
सै दप्परि सै सहस विवह अगनित्त छप्प दह।
टुटि डूंगर जल सुरिग भजिग जलरंग प्रवाहहि।
सह अच्छरि अच्छहि विवान सुरलोक नाग तिहि।
कहि चंद दंद हुटु दल भयो घन जिम सिर सारह हरिगु।
धर सेस हार हर महातन ब्रिहु समाधि लहिन टरिगु॥

ना० ३५.५ :
जदिस रोस राठौर चंपि चहुआन गहन कहुं।
सैं दप्परि से सहस विवह अगनित्त छप्प दह।

दुटि हू गर जल भरिग कुट्टि जल थलति प्रवाहिग।
सह अच्छरि अच्छहि बिवान सुरलोक बनाइग।
कहि चंद दंद हुहु दल भयौ घा जिम सिर सारह छरिग।
घर सेस हार हर मग्ग तन निटु' समाधि तहिन टरिग॥

दोनों पाठों में अन्तर अवश्य है, किन्तु इतना नहीं है कि किसी के 'पाठांतर' के रूप में अन्य ग्रहण किया गया हो। दोनों छन्द एक दूसरे से काफी दूर हैं, यह तथ्य भी इसी बात पुष्टि करता है। साथ ही, कुछ प्रतियों में यह छन्द पहले स्थान पर है और कुछ में दूसरे। इस यही सम्भावना प्रतीत होती है कि ना० में एक स्थल पर छन्द अपने कुल के पाठ के अनुसार था दूसरे स्थल पर किसी अन्य कुल के पाठ मिश्रण के कारण आया। प्रसग से छन्द की स्थिति कोई निश्चित प्रकाश नहीं पड़ता है।

(७) ना० ३४६१ तथा ना० ३६५ :—

ना० ३४६१
घुरि निसान गत भान कलाहर मुद्दयउ।
सुनि सामत नरेस छिनकु धर धुक्कयउ।
विप्प पगदल दिट्ठि मिट्ठि निहारयउ।
अचरि अमा सजोग रेन मझारयौ॥

ना० ३५.९
घुरि निसान उगि भान कलाकर मुद्दयउ।
सम सामत नरिंद छिनकु धर धुक्कयउ॥
सपिप पग दल दिट्ठि सरोस निहारयउ।
अंचर अमी सजोगि रेन मझारयउ॥

ये छद एक दूसरे से दूर हैं, और इनके पाठ में अ तर साधारण है। इस लिए इनमें कोई अन्य के 'पाठांतर' के रूप में ग्रहण किया हुआ नहीं हो सकता है। साथ ही कुछ प्रतियों में यह पहले स्थान पर है और कुछ में दूसरे, इसलिए सम्भावना यही लगती है कि एक स्थान पर छद कुल की परम्परा के अनुसार है और दूसरे स्थान पर पाठ मिश्रण के कारण किसी अन्य कुल की पर के अनुसार आया है। प्रसग के अनुसार यह छन्द पहले स्थान पर ही आना चाहिए, क्यों कि दिनांत का वर्णन है, दूसरे स्थान पर दिन उगने का वर्णन आता है। इसलिए छद वहाँ नहीं है। छद में दूसरे स्थान पर 'गत भान' के स्थान पर इसीलिए 'उगि भान' किया गया है, दूसरे चरण में सामतों और पृथ्वीराज के थमित हो कर धरा पर धुकने का उल्लेख होता है, चतुर्थ चरण में अचल द्वारा संयोगी के पृथ्वीराज की रेणु झाड़ने की बात आती है, जो प्रभात-का परिस्थितियों में असंभव है।

(८) ना० ३५१९ तथा ना० ३५२० —

ना० ३५१९
सझ सपत्तिय नरपति रज किरि सज्जे दलपग।
चलिग पग पहु पति मिलि सौ भर नि किय अगु॥

ना० ३५२०
सझ सपत्तिय रत्त भर कहि सज्जे दल पग।
चलिग पग पहुपति मिलि सौ भर नि किय अगु॥

दोनों छन्दों में जो पाठ-सादृश्य है, उससे यह नहीं लगता है कि कोई भी छन्द किसी के 'पाठ के रूप में ग्रहण किया गया होगा और दोनों के बीच के अश के निकल जाने पर प्रसग को कोई भी नहीं पहुँचती है, इसलिए यह पुनरावृत्ति पाठवृद्धि जनित लगती है।

इन पुनरावृत्ति के बीच धा० २९१ तथा २९२ आते हैं। धा० २९० तथा धा० २९३ में उक्ति-प्र प्रकट है, धा० २९१ में धा० २९० के 'नृपति सपद्दिय पचसर' का जो विस्तार किया गया है

दो ही पृथ्वीराज को, शेष दो अश्व के पाखर, में तथा एक संजोगी को लगे बताये गए हैं, जो स्पष्ट ही धा० २९० से भिन्न कल्पना है। अतः धा० २९१ तथा २९२ प्रक्षिप्त हैं।

द० में पुनरावृत्तियाँ

(१) द० १३.१ तथा २६.७८ :—

दोनों स्थानों पर छन्द का पाठ प्रायः एक ही और निम्नलिखित है :

अठतालीसा सुक्रवार पन्नह पंग वारीय।
गोरे साह भीमंग सोर सिवपुरी प्रजारिय।
भाज साह सब्बर राज संमरि संभारिय।
चाहुवान सामंत मंति कयमास पुकारिय।
घुर जात पवांरां पट्टनह बोले वंक दुराह दिलि।
कै बार कथ्य नायह तनी पगे राज क्रिवान पक॥

यह छन्द द० खण्ड १३ के प्रारम्भ में तो संगत है, द० खण्ड १३ पृथ्वीराज-भीम युद्ध का है, किन्तु खण्ड द० २६ के अन्त में संगत नहीं है, क्योंकि द० खण्ड २६ संयोगिता के 'विनय मगल' का है। ना० में 'विनय मगल' खण्ड 'भीम युद्ध' खण्ड के ठीक पहले आता है। द० भी मूलतः उसी परिवार की है, इसलिए यदि इसमें भी वह उसी प्रकार पहले आता रहा हो तो आश्चर्य नहीं होगा। ऐसा लगता है कि पीछे किसी समय 'विनय मंगल' खण्ड को द० परम्परा में बाद में रखने का जब निश्चय हुआ तो इसलिए मैं जो तत्सम्बन्धी सकेत लिखा गया वह 'विनय मगल' खण्ड के अन्त और 'भीम युद्ध' खण्ड के प्रथम छन्द–दोनों के सामने पडता था, इसीलिए द० में यह पुनरावृत्ति हो गई। फलतः इस पुनरावृत्ति के बीच में जो छन्द पडते हैं, पाठवृद्धि के कारण द० में आए नहीं माने जा सकते हैं।

उ० ह्रा० स० में पुनरावृत्तियाँ

(१) स० ५७. १७१ तथा ५७.२१९ :—

दोनों स्थानों पर छन्द का पाठ प्रायः एक ही है और निम्नलिखित है :।

मद्धि पह्‌र पुच्छै प्रभु पंडिय।
कहि कवि विजै साहि निहि मंडिय।
सकल सूर बैठवि सभ मंडिय।
आसिष आनि दीय कवि चंडिय॥

दूसरे तथा तीसरे चरणों में 'मंडिय' 'मडिय' का तुक पुनरुक्तिपूर्ण तो है ही, दूसरे चरण में 'मडिय' पाठ असम्भव भी है: आशय शाह के विजय माडने का नहीं है, बल्कि पृथ्वीराज के द्वारा शाह पर मांडी हुई उस विजय का है जिसमें शाह दंडित हुआ था। इसलिए अन्य प्रतियों का 'दंडिय' ही द्वितीय चरण का अन्तिम शब्द हो सकता है। इस प्रकार स० के दोनों पाठ प्रायः सर्वथा एक हो हैं— क्योंकि दोनों में अशुद्धि तक एक ही है। स० ५७.१७१ के पूर्व तथा ५७.२१९ के बाद के छंद प्रसंग द्वारा सम्बन्धित भी हैं: ५७.२१९ के बाद उस सभा का वर्णन है जिसको ५७.१७१.३ में मॉडा गया है। इसलिए बीच के छन्द पाठवृद्धि के हैं और पुनरावृत्ति पाठवृद्धि जनित है।

इस पुनरावृत्ति के बीच धा० ७९, ८०, ८१, तथा ८२ आते हैं।

परिणामतः विभिन्न प्रतियों में मिलने वाली पुनरावृत्तियों से प्रक्षिप्त प्रमाणित होने वाले धा० के छन्द निम्नलिखित हैं :—

धा० अ० फ० ना० म० ह्रा० उ० स०: धा० २३९ चरण ११-३५।

धा० मो० ना० ह्रा० उ० स०: धा० ४०३।

मो० : धा० ३५६, धा० ३५७।
अ० फ०: ×
फ० : धा० ३४४, धा० ३४५।
म० उ० ब० : ×
म० ना० उ० स० : ×
म० : ×
ना० द० उ० स० : धा० २६, धा० २८, धा० २९।
ना० उ० स० : ×
ना० : धा० ३—१९, धा० १२५, धा० १२६, धा० २९१, धा० २९२।
द० : ×
उ० स० : धा० ७९—८२।

नीचे विभिन्न प्रतियों में आने वाले छन्द-संख्या व्यतिक्रम और उनके कारणों का विश्लेषण किया जा रहा है।

अ० फ० में छन्द-संख्या-व्यतिक्रम

धा० तथा मो० में छन्दों की क्रम-संख्याएँ नहीं दी हुई हैं, यह बताया जा चुका है, इसलिए इस दृष्टि से उनके छन्दों पर विचार नहीं किया जा सकता है, शेष प्रतियों के छन्दों पर ही विचार किया जा सकेगा।

अ० फ० में छन्दों की क्रम-संख्या छन्द (वृत्त) भेद के आधार पर दी गई है, यथा किसी खण्ड में आए हुए कवित्त की क्रम संख्या एक है, दोहा की दूसरी, गाथा की तीसरी, किन्तु वे छन्द जिनकी मालाएँ मिलती हैं, अर्थात् जिनके चरणों के सम्बन्ध में यह प्रतिबन्ध नहीं माना गया है कि उनकी संख्या सर्वत्र एक सी हो, यथा भुजंगी, त्रिभंगी, त्रोटक, पद्धड़ी, वे सभी एक सम्मिलत क्रम-संख्या में डाल दिए गए हैं और उनकी क्रम-संख्या छन्द (वृत्त) भेद के आधार पर नहीं चली है।

इस दृष्टि से देखने पर धा० के निम्नलिखित छन्द जो अ० फ० में उपर्युक्त संख्या विधान के बाहर पड़ते हैं, विचारणीय हैं :—

(१) धा० २८, २९; ३० : ये छन्द अ० फ० के उन पाँच दोहों में से हैं जो उसके खण्ड २ के अन्त में आते हैं। इनके पूर्व जो दोहा अ० फ० में मिलता है वह ॥ २० ॥ है, किन्तु अ० में धा० २८ को ॥ २ ॥, धा० २९ को ॥ २२ ॥ तथा धा० ३० को ॥ २२ ॥ की क्रम-संख्या दी गई है। ॥ २० ॥ के अनन्तर इसी प्रकार फ० में इन छन्दों की संख्या ॥ १ ॥ से प्रारम्भ कर दी गई है और इस नवीन संख्या-विधान में धा० २८ ॥ १ ॥ है, धा० २९ ॥ ४ ॥ है और धा० ३० ॥ ५ ॥ है। यह ध्यान देने योग्य है कि अ० में केवल ॥ २१ ॥ नहीं हैं और ॥ २२ ॥ की संख्या दो दोहों को समान रूप से की गई है, जब कि फ० में इन सभी की क्रम-संख्या नई कर दी गई है। प्रश्न यह है कि धा० २८ को ॥ २ ॥ क्रम संख्या अ० में किस प्रकार दी गई है। इसका स्पष्ट समाधान यह है कि जब अ० फ० में पूर्ववर्ती दोहा ५ तथा दोहा ६ के बीच एक दोहा बढ़ाया गया और उसके साथ ही अ० फ० दोहा २० के बाद कुछ दोहे बढ़ाए गए, तो प्रथम स्थान की पाठवृद्धि को ॥ १ ॥ तथा द्वितीय स्थान की पाठवृद्धि को ॥ २ ॥ की संख्याएँ देकर छोड़ दिया गया, और इन्हीं के साथ अ० फ० के ॥ २१ ॥ की क्रम-संख्या भी बदल कर ॥ २ ॥ कर दी गई। इसके बाद किसी समय एक और दोहा जोड़ा गया और ऊपर के तीन दोहों में लगातार ॥ २ ॥ क्रम-संख्या देखकर इस नवीन दोहे को पूर्व-

वर्ती दोहा ॥ २२ ॥ के अनुसरण में ॥ २२ ॥ की क्रम-संख्या दे दी गई। इस दृष्टि से देखने पर धा० २८ तथा धा० ३० अ० फ० में बाद में रक्खे गए लगते हैं।

(२) धा० १५८, धा० १८७, धा० १८८ : अ० फ० खण्ड ९. त्रोटक १ (=धा० १५१) के बाद उसमें ये तीन त्रोटक और आते हैं जिनकी क्रम-संख्या नहीं दी हुई है। किन्तु ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० १८६ तथा १८७ और इसी प्रकार धा० १८८ तथा १८९ में स्पष्ट उक्ति-शृंखला है, अतः धा० १८७ तथा धा० १८८ प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के नहीं हैं। धा० १५८ की स्थिति इतनी स्पष्ट नहीं है।

(३) धा० १९३ : अ० फ० खण्ड ९ में यह दोहा संख्याहीन है, और इसके पूर्व अ० फ० खण्ड ९ दोहा ॥ ४३ ॥ तथा बाद में दोहा ॥ ४४ ॥ आता है, अतः यह प्रकट है यह दोहा अ० फ० की क्रम-संख्या के बाहर पड़ता है। किन्तु हम ऊपर देख चुके हैं कि धा० १९२ तथा १९३ और इसी प्रकार धा० १९३ तथा १९५ के बीच उक्ति-शृंखला है। अतः यह प्रकट है कि धा० १९३ प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(४) धा० २४८, धा० २५० : अ० फ० खण्ड १० में ये दोनों छन्द एक रूपक के अन्तर्गत हैं और संख्याहीन हैं। ये उस प्रकार की छन्दमाला में आते हैं जिनकी अ० फ० में सम्मिलित-क्रम-संख्या दी गई है : इनके पूर्व भुजंगी ॥ २ ॥ है और बाद में रसावला ॥ ४ ॥ है। ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० २४७ तथा २४८ में स्पष्ट उक्ति-शृंखला है। और अ० फ० में धा० २५० अलग छन्द नहीं है, वह धा० २४८ के सिलसिले में ही आता है, इसलिए दोनों की सम्मिलित संख्या ॥ ३ ॥ होनी चाहिए थी, जो किसी प्रकार छूट गई है। अतः धा० २४८ तथा धा० २५० प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के नहीं हैं।

(५) धा० ३१०-३१३ : ये रासा अ० फ० में १३. दो० ७ के बाद आते हैं और पूर्व या बाद में इस खण्ड में और रासा नहीं आते हैं। इन छन्दों का संख्या-व्यतिक्रम अतः स्पष्ट नहीं है। किन्तु ये छन्द एक वर्णन-शृंखला के हैं और इनमें से अन्तिम का उक्ति-शृंखला सम्बन्ध, जैसा हमने ऊपर देखा है, धा० ३१४ से है, अतः ये प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के नहीं हैं।

(६) धा० ३४३ : यह दोहा अ० में १४. कवि० ५ के बाद आता है। इसकी संख्या अ० में ॥ १ ॥ और फ० में ॥ २१ ॥ दी हुई है, यद्यपि पूर्ववर्ती दोहा ॥ १९ ॥ है और अ० फ० का दोहा ॥ २१ ॥ बाद में ही आता है, इसलिए संख्या-व्यतिक्रम स्पष्ट है। किन्तु धा० ३४३ की धा० ३४४-३४५ से प्रसंग-शृंखला है, और धा० ३४४-३४५ फ० की पुनरावृत्तियों के द्वारा प्रक्षिप्त प्रमाणित हो चुके हैं, अतः यह छन्द भी प्रक्षिप्त ज्ञात होता है।

(७) धा० ३८६ : यह छन्द अ० में संख्याहीन है, फ० यहां पर खण्डित है। यह अ० में १९. दो० १९ के बाद आता है और इसके बाद दो दोहे और आते हैं तब १९. दो० २२ आता है। किन्तु हम ऊपर देख चुके हैं धा० ३८६ धा० ३८५ से उक्ति-शृंखला से सम्बद्ध है। इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं हो सकता है।

(८) धा० ३९० : यह छन्द भी अ० फ० खंड १९ में क्रम-संख्या के बाहर पड़ता है। यह दोहा है और इसके पूर्व का दोहा ॥ २३ ॥ तथा बाद का ॥ २४ ॥ है। यह तातार खाँ और गोरी के संवाद का है, और इसके पूर्व तथा इसके बाद के दोहों अर्थात् धा० ३८९ तथा ३९१ में परस्पर प्रसंग-शृंखला स्पष्ट है : धा० ३८९ में गोरी का आदेश है, और धा० ३९१ में कहा गया है :

यह सहाब सुप उच्चरिय ... ...

इन दोनों के बीच धा० ३९० के रूप में तातार खाँ का कोई कथन आना असंगत है। अतः यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का लगता है।

म० में छन्द-संख्या-व्यतिक्रम

(१) धा० ५९ : म० में ८.२ और ८.३ के बीच यह छन्द आता है। धा० ५८ के साथ यह प्रसंगतः सम्बद्ध है। धा० ५९ में कहा गया है कि पृथ्वीराज "अपने श्रेष्ठ प्रधान (प्रधानामात्य) कैंवास को धरा (राज्य) की रक्षा के लिए दिल्ली छोड़ कर आखेट के लिए चला गया था।' इस छंद में कैंवास के सम्बन्ध में कहते हुए कहा गया है, 'राजं जा प्रतिमा' अर्थात् 'जो राजा का प्रतिनिधि था ... ...।' इस लिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं लगता है।

(२) म० खण्ड १० में छन्द-संख्या १४२ तक चल कर पुनः १२५ से प्रारम्भ होती है, और खण्ड के अन्त तक चलती है। इस व्यतिक्रम का एक कारण तो यह हो सकता है कि दूसरी बार की १२५ से १४२ तक की संख्याओं के छन्द पीछे बढ़ाए गए हों और उनकी क्रम-संख्या भी १२४ के बाद दे दी गई हो, दूसरी सम्भावना यह है कि १४२ को भ्रम से ४ तथा २ को विपर्यय से १२४ समझ कर संख्या १४२ के बाद पुन. १२१ से प्रारम्भ कर दी गई हो। दूसरी सम्भावना अधिक युक्ति-संगत लगती है क्योंकि प्रथम के विरुद्ध यह कहा जा सकता है कि यदि बढ़ाए हुए छन्दों की संख्या १४२ तक ही गई होती तो बाद के छन्दों की क्रम संख्याओं में भी संशोधन किया गया होता। इसलिए इस खण्ड की १२१ से १४२ तक की संख्या विषयक पुनरावृत्ति इस प्रसंग में विचारणीय नहीं है।

(३) धा० १९६ : म० में १० ४६४ के अनन्तर यह छन्द पुनः ॥ ४६४ ॥ की संख्या देकर आता है। किन्तु प्रसंग में यह आवश्यक है, धा० १९५ में पृथ्वीराज के द्वारा जिस भंगिमा से जयचंद को तांबूल अर्पित करने की बात कही गई है, उसका परिणाम यही होना चाहिए जो इस छन्द में वर्णित है—कि जयचन्द पहिचान गया हो कि पान देने वाला पृथ्वीराज है। अतः यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(४) धा० २०६ म० में छन्द का उत्तरार्द्ध मात्र आया है और ११.९० के बाद उसकी कोई संख्या नहीं दी हुई है। ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० २०५ तथा धा० २०७ के साथ इसका उक्ति शृंखला सम्बन्ध है, इसलिए यह छंद प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं हो सकता है।

(५) म० में ११ ९८ के अनन्तर छन्द-संख्याएँ ॥ ९० ॥ से ॥ ९७ ॥ तक दुहरा उठी हैं: यह ९८ को विपर्ययभ्रम से ८९ पढ़ने के कारण हुआ ज्ञात होता है, जैसा हमने ऊपर इस प्रति की एक अन्य संख्या-सम्बन्धी पुनरावृत्ति के विषय में भी देखा है। अतः इस पुनरावृत्ति के बीच में आए हुए छन्दों पर पाठवृद्धि की दृष्टि से विचार करना उचित न होगा।

(६) म० में उपर्युक्त पुन आने वाले ११.९७ के अनन्तर की छन्द-संख्याएँ ॥९२॥ से ॥९८॥ तक दुहरा उठी हैं, और तदनंतर खण्ड की छंद-संख्याएँ इस संख्या के क्रम में चली हैं। यह भी ९७ के ७ को १ पढ़ने की भूल के कारण हुई प्रतीत होती है—७ की नोक यदि कुछ आगे तक खींच कर न बनाई जावे तो उससे १ का भ्रम हो सकता है। अतः क्रम संख्या सम्बन्धी इस पुनरावृत्ति के बीच आए छन्दों पर भी प्रक्षिप्त पाठवृद्धि की दृष्टि से विचार करना उचित न होगा।

(७) धा० २४५ : म० में १२ २८ के बाद पुनः ॥२८॥ की संख्या के साथ यह छन्द दे दिया गया है। किन्तु धा० २४६ के साथ इसकी उक्ति शृंखला ऊपर देखी जा चुकी है, इसलिए यह छंद प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं हो सकता है।

(८) धा० २९७ : म० में १२ ५३३ के अनन्तर पुनः ॥५३३॥ की संख्या के साथ यह छन्द दिया गया है। धा० २९८ में सिंह चालुक्य के धराशायी होने पर जयचन्द के दल की प्रतिक्रिया वर्णित है, धा० २९७ में उसका युद्ध करना और धराशायी होना वर्णित है, उसके पूर्व के एक छन्द में जो

धा० २८९ है, जिस का युद्ध में प्रवृत्त होना कहा गया है, अतः यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं हो सकता है।

ना० में छंद-संख्या-व्यतिक्रम

(१) धा० १९ : ना० में २. १२२ के अनन्तर यह छन्द भी ॥ १२२ ॥ करके दिया गया है। इसमें चन्द के जन्म ग्रहण करने का उल्लेख है। धा० १८ में पृथ्वीराज के जन्म ग्रहण करने तथा धा० २० में 'रासो' की विविध छन्दों में रचना करने की प्रस्तावना है। धा० १९ दोनों के बीच में अतः खटकता है और प्रक्षेप के रूप में रक्खा गया लगता है।

(२) धा० ६६ : ना० में २०.३३ के अनन्तर यह छन्द भी ॥ ३३ ॥ की संख्या के साथ दिया गया है। इसमें पट्टराज्ञी की दूती के साथ कैंवास वध के *लिए पृथ्वीराज के आने का उल्लेख किया गया है*। धा० ६५ में केवल उसकी दूती के द्वारा पृथ्वीराज के जगाए जाने का कथन है, और धा० ६७ में कैंवास के ऊपर उसके बाण-संधान का; अतः बीच का धा० ६६ का उल्लेख प्रसंग में आवश्यक है, और प्रक्षिप्त नहीं है।

(३) धा० ६७ अ (छन्द ६७ के बाद वार्त्ता के साथ आया हुआ छन्द का अवशेष) : ना० में २९.३२ के बाद यह छन्द भी ॥ ३२ ॥ करके दिया गया है। इसमें पृथ्वीराज का इस विषय में आश्चर्यान्वित होना कहा गया है कि दनुज, देवता या गन्धर्व कौन करनाटी के साथ विलास-*लिप्त था। किन्तु यह तो पट्टराज्ञी को ज्ञात हो था कि उक्त व्यक्ति कैंवास था और पृथ्वीराज ने भी* यही जान कर उसे मारा था, इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त लगता है। धा० में यह छन्द कुछ भिन्न और त्रुटित पाठ के साथ आता है और छन्द के पूर्व एक वार्ता भी आती है जिसमें कहा जाता है कि पट्टराज्ञी ने चित्रशाला में काम-रत कैंवास की ओर संकेत किया।

(४) धा० ७६ : ना० में २९.४६ के बाद यह छन्द भी ॥ ४६ ॥ करके दिया गया है। धा० ७५ *निम्नलिखित है :—*

भइ परतषिय कवी मनि आइय।
उकति कंठ करह समझाइय (समुहाइय—पा॰ना॰)।
धाइम हंस हस (अंस—पा॰ना॰) सुखदाइय।
सय तिहि रूप चंद कवि धाइय (गाईयं—पा॰ना॰)।

धा० ७६ में सरस्वती के इसी रूप का ध्यान वर्णित है और उसका शिख-नख निरूपित है। अतः धा० ७६ प्रसंग में आवश्यक लगता है।

(५) *धा० ९२ : ना० में यह छन्द २९.६५ के अनन्तर पुनः ॥ ६५ ॥ करके दिया गया है।* धा० ९० में चंद ने कैंवास-वध का रहस्योद्घाटन पृथ्वीराज की सभा में किया है। धा० ९१ में उसके अनन्तर रात्रि में सभा के विसर्जन की बात कही गई है। धा० ९३ में प्रातः ही कैंवास की स्त्री का चंद के पास उसकी सहायता से पति का शव प्राप्त करने के लिए आगमन कहा गया है। धा० ९२ में कहा गया है कि चंद के उक्त रहस्योद्घाटन के अनन्तर कैंवास के वध की बात घर-घर फैल गई थी, *अतः यह छन्द प्रसंग में आवश्यक लगता है।*

(६) धा० ११३ : *यह छन्द ना० में ३१. १ के बाद पुनः ॥ १ ॥* की संख्या देकर रक्खा गया है। इसमें पृथ्वीराज के कन्नौज के लिए प्रस्थान करने की तिथि सं० ११५१, चैत्र तृतीया, रविवार दी गई है। यह तिथि असंभव तो है ही—सं० ११५१ में पृथ्वीराज जन्मा भी नहीं था—इस छन्द के न रहने से पूर्वापर के प्रसंग-क्रम में कोई व्याघात नहीं होता है। इसलिए यह छन्द प्रक्षेपपूर्ण पाठवृद्धि का लगता है।

(७) धा० ११४ : यह छन्द ना० में ३१.४ के बाद पुनः ॥ ४ ॥ करके दिया गया है। इसमें कहा गया है कि पृथ्वीराज ने 'एक सौ सुभटों को लेकर कन्नौज के लिए प्रस्थान किया, (फिर भी वे कहां जा रहे थे) यह या तो चन्द जानता था या पृथ्वीराज।' किन्तु साथ में सौ योद्धा हों और उन्हें यहाँ तक न बताया गया हो कि उन्हें किधर ले जाया जा रहा है, यह प्रायः असम्भव है; फिर कन्नौज पहुँचने पर इन योद्धाओं ने इस पर कोई आश्चर्य भी नहीं प्रकट किया है कि वे कहाँ ले आए गए हैं। अतः यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का लगता है।

(८) धा० १४६ : यह छन्द ना० में ९.४ के अनन्तर पुनः ॥४॥ की संख्या देकर रक्खा गया है, किन्तु ऊपर हम देख चुके हैं कि धा० १४२ के साथ इसका उक्ति-शृंखला सम्बन्ध है, अतः यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(९) धा० १४७ : यह छन्द ना० में ९.६ के अनन्तर पुनः ॥६॥ की संख्या देकर रक्खा गया है। धा० १४६ में चन्द ने हेजम को अपना परिचय दिया है, धा० १४७ में हेजम जयचन्द को उसके आगमन की सूचना देने गया है, और धा० १४८ में उसने जयचन्द को उक्त सूचना दी है। अतः धा० १४७ प्रसंगतः पहले तथा पीछे के छन्दों से निकट रूप से संबद्ध है, और प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(१०) धा० २०७ : ऊपर दिखाया जा चुका है कि धा० २०७ तथा २०८ एक ही छन्द के दो भिन्न-भिन्न पाठ हैं; ना० में धा० २०८ यथा ३३.३९ है और धा० २०७ का दूसरा चरण भी उसमें ॥ ३९ ॥ संख्या देकर 'पाठांतर' के रूप में सम्मिलित कर लिया गया है।

(११) धा० २८१ : ना० में ३६.२८ के अनन्तर यह छन्द भी ॥ २८ ॥ संख्या देकर दिया गया है, किन्तु धा० २८० तथा २८२ से प्रसंगतः यह सन्निकट रूप से संबद्ध है : धा० २८० में कन्ह घोड़े पर युद्ध के लिए चढ़ा है, धा० २८१ में वह लड़ता हुआ मारा गया है, और धा० २८२ में कन्ह के मरने पर जयचन्द के दल की प्रतिक्रिया वर्णित है। इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(१२) धा० ३५२ : ना० में ४३.५५ के अनन्तर यह छन्द पुनः ॥ ५५ ॥ की संख्या देकर दिया हुआ है। किंतु यह पूर्ववर्ती छन्द धा० ३५२ से प्रसंगतः सम्बन्ध है: धा० ३५२ में गोरी ने तातार खाँ तथा रुस्तम खाँ से कुरान की सौगन्ध लेकर पृथ्वीराज का सामना करने और उसे पकड़ कर बन्दी करने के लिए कहा है, और धा० ३५३ में तातार खाँ तथा रुस्तम खाँ ने सौगन्ध लेकर तदनुसार प्रतिज्ञा की है। इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(१३) धा० ४०६ : ना० में ४६.१२७ के अनन्तर यह छन्द पुनः ॥ १२७ ॥ की संख्या देकर दिया गया है। किन्तु ऊपर हम देख चुके हैं कि यह छन्द धा० ४०७ के साथ उक्ति-शृंखला द्वारा संबद्ध है, इसलिए यह प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

द० में छंद-संख्या-व्यतिक्रम

(१) धा० १६ : द० में १.१२५ के अनन्तर पुनः वही संख्या देकर यह छन्द दिया गया है। इसमें ढुंढा के द्वारा आनल्ल को राज्य मिलता है। ढुंढा की शेष कथा इसके पूर्व आती है, और धा० १७ की प्रथम पंक्ति में ही आता है कि आनल्ल ने राजा होकर अजमेर में निवास किया। अतः यह छन्द प्रसंग में आवश्यक है, और इस प्रति में पाठवृद्धि के परिणाम स्वरूप नहीं आया है, यद्यपि ढुंढा की पूरी कथा के छन्द—जैसा हमने ऊपर ना० स० की पुनरावृत्तियों में देखा है—प्रक्षिप्त पाठवृद्धि के हैं।

(२) धा० १०९ : द० में ३४.५ के अनन्तर 'शुकचरित्र' के छन्द आते हैं, जो स्पष्ट ही बाद में

रक्खे गए हैं, क्योंकि उनकी क्रम-संख्याएँ इस खण्ड के बीच होते हुए भी स्वतन्त्र हैं और उनके बाद पुनः पूर्ववर्ती क्रम-संख्या में छन्द दिए जाते हैं। किंतु इस बार का प्रथम छन्द भी ॥ ५ ॥ ही है, जब कि पिछली बार का अन्तिम छन्द ॥ ५ ॥ था। फिर भी यह छन्द धा० के षट ऋतु वर्णन के छः छन्दों में से है और इसके अभाव में एक ऋतु का वर्णन ही नहीं रह जाता है, इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं हो सकता है।

(३) धा० १४० : द० में ३३.६१ के अनन्तर पुनः वही संख्या देकर यह छंद दिया गया है। पूर्ववर्ती छन्द धा० १३९ में नगर-वर्णन के अन्तर्गत नायिकाओं के गीत-नृत्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उनके भाव का वर्णन करना कठिन लगता है। यह कह कर कहा गया है कि 'उस पट्टन के यह सँवारे हुए दिखाई पड़े।' इससे ज्ञात होता है कि नायिकाओं का वर्णन धा० १३९ में ही समाप्त कर दिया गया। अतः धा० १४० में पुनः उनके गीत-नृत्यादि का वर्णन प्रक्षिप्त लगता है।

(४) धा० १४५ : द० में ३३.६७ के अनन्तर पुनः वही संख्या देकर यह छन्द दिया गया है। इसके पूर्व धा० १४४ में कहा गया है कि 'पृथ्वीराज ने किसी से कहा कि वह सुभट [दरबार तक पहुँचने के लिए] युक्ति पूर्वक कोई श्रेष्ठ हाथी पकड़ लावे।' इस छन्द में कहा गया है कि यह सुन कर चन्द ने मना किया कि 'यहाँ पर झगड़ा करना ठीक नहीं है, क्योंकि जयचन्द के द्वार पर तीन लाख सैनिक दिन-रात रहते हैं' और इसके अनन्तर हाथी पकड़े जाने का कोई उल्लेख नहीं होता है। प्रकट है कि धा० १४५ धा० १४४ से प्रसंगतः संबद्ध है, अतः यह धा० १४४ के बाद की पाठवृद्धि का नहीं है, यद्यपि दोनों प्रक्षेपपूर्ण पाठवृद्धि के छन्द हैं, यह हम धा० की उक्ति-शृंखला की त्रुटियों पर विचार करते हुए देख चुके हैं।

(५) धा० २६३ : द० में ३३.३५५ के अनन्तर पुनः वही संख्या देकर यह छन्द दिया गया है। धा० २६३ में धा० २६२ में पृथ्वीराज के इस कथन का उत्तर है कि 'वह अपने सामन्तों का यह बोझ (अहसान) नहीं चाहता कि, वे अपनी जान गँवा कर इसे बचावें और वह युद्ध छोड़ कर दिल्ली जावे।' धा० २६३ के निकल जाने पर उसके इस कथन का कोई उत्तर नहीं रह जाता है यद्यपि वह सामन्तों के द्वारा उपस्थित की गई इसी युक्ति का अनुसरण करता है, इसलिए यह छन्द प्रक्षिप्त पाठवृद्धि का नहीं है।

(६) धा० २९५ : द० में ३३.४१४ के बाद पुनः वही संख्या देकर यह छन्द दिया गया है। इसमें कन्नौज के युद्ध में सोलह धराशायी शूरों के नाम देने की बात कही गई है :

परे सूर सोलह तिके नाम आनं।

किन्तु कुल मिला कर केवल बारह ऐसे शूरों के नाम इस छन्द की सूची में आते हैं; ये हैं : मेहलीराय, माल्हन हंस, जावल, आल्ह, वाघराय बागरी, बलीराय यादव, सारंग गाजी, पावरी राय परिहार, चाकुला सिंह, सिंहली राय (सिंघ सिंघा—धा०), सातल मोरी, भोज तथा भुआल राय। इसलिए इस छन्द की स्थिति संदिग्ध लगती है। यह अवश्य असम्भव नहीं है कि ऊपर जो बारह नाम दिए गए हैं, उनमें से किन्हीं चार में दो-दो नाम मिल गए हों। पूर्ववर्ती छन्द धा० २०४ में भी सोलह सामंतों-शूरों के धराशायी होने की बात कही गई है, और जहाँ-जहाँ धराशायी शूरों-सामंतों की संख्या दी गई है, उनकी नामावली भी दी गई है, इसलिए यह छन्द मूल रचना का भी हो सकता है।

परिणामतः विभिन्न प्रतियों की छन्द-संख्या-व्यतिक्रम से धा० के निम्नलिखित छन्द प्रक्षिप्त ठहरते हैं :—

अ० फ० : धा० २८, ३०, ३४३, ३९०।
ना० : धा० ६७ ग, ११३, ११४।
द० : धा० १४०।

धा० के प्रक्षिप्त छंद

ऊपर विभिन्न उपायों का अवलम्बन करके हमने देखा है कि धा० में वार्त्ताओं के अतिरिक्त निम्नलिखित छन्द और छन्दांश प्रक्षिप्त ठहरते हैं :—

धा० १, ३ १९, २१, २६, २८-३०, ६१, ६७ अ, ६९, ७९-८२, ११३, ११४, १२१ के अंतिम दो चरण, १२५, १२६, १४०, १४३, १४४, १४५, १५०, १५६, १५७, १९४, २०८, २२४, २३९ के चरण २२ ३१, २४३, २६९ के अंतिम दो चरण २९१, २९२, ३०८, ३४३ ३४५, ३५६, ३५७, ३५९, ३६१, ३९०, ३९६, ४०३, ४०४, ४२१।

उपर्युक्त के अतिरिक्त धा० का केवल निम्न लिखित छद और प्रक्षिप्त ज्ञात होता है :—

(१) धा ० २७ : यह ढीली कीली कथा का एक मात्र छंद है जो धा० में आया हुआ है : इसमें जागजोतिन्नास के द्वारा अनगपाल को [ढीली की] कीली ढीली करने का परिणाम यह बताया गया है कि तोमरों के बाद चहुवान और चहुवानों के बाद तुर्क दिल्ली के अधीश्वर होंगे। किन्तु अनगपाल तोमर ने कीली किस प्रकार ढीली की, और वह कीली कैसी थी आदि किसी बात का उल्लेख धा० के अन्य किसी छद में नहीं होता है। अनगपाल तोमर और दिल्ली-दान के सबध के धा० के अन्य छद भी (धा० २६, २८, ३०) ऊपर प्रक्षिप्त प्रमाणित हो चुके हैं। इसलिए धा० २७ भी प्रक्षिप्त ज्ञात होता है। प्रक्षेप-क्रिया के समस्त चिह्न प्राप्त प्रतियों से किसी न किसी में सुरक्षित हैं, यह नहीं माना जा सकता है, इसलिए इस प्रकार के एकाध अपवाद के लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

धा ० में छूटे हुए छंद

धा० में केवल निम्न लिखित दो छद छूटे जान पड़ते हैं, जिन्हें प्रसंग की दृष्टि से मूल का मानना आवश्यक जान पड़ता है :—

(१) मो० ३४५ : यह छद धा० के अतिरिक्त सभी प्रतियों में है। इसमें कन्ह के धराशायी होने पर चन्द्द के युद्ध मे प्रवृत्त होने का उल्लेख होता है। धा० २८३ में उसके लड़ते हुए धराशायी होने का उल्लेख है। इसलिए उसके युद्ध में उतरने के सबध का मो० ३४३ भी प्रसग अनिवार्य है।

(२) अ० ६. दो० ९ : यह छन्द धा० मो० में नहीं है, शेष समस्त प्रतियों में है। इसमें जयचन्द की दूती द्वारा यौवन की महत्ता प्रतिपादित करने वाले कथन का संयोगिता द्वारा दिया गया उत्तर है। यह उत्तर प्रसग में नितान्त आवश्यक है क्योंकि अन्यथा उक्त दूती का कथन उत्तरहीन रह जाता है, यद्यपि सवाद आगे चलता है, और सयोगिता उसका उत्तर न दे इस बात का कोई कारण नहीं दिखलाई पड़ता है। अतः यह छद भी मूल पाठ का प्रतीत होता है।

एक प्रति में एक छन्द का छूटना साधारण बात है, और दो प्रतियों में भी किसी एक छोटे छन्द का स्वतंत्र रूप से अलग-अलग छूट जाना असंभव नहीं है, इसलिए इन दोनों छदों को मूल का स्वीकार करना चाहिए।

उपर्युक्त प्रक्षिप्त छन्दों और वार्त्ताओं को निकाल देने तथा इन दो छन्दों को सम्मिलित कर लेने पर धा० का आकार प्रसग-शृखला, उक्ति-शृखला, प्रबंध-शृखला आदि की समस्त दृष्टियों से इतना सुगठित हो जाता कि वह मूल का प्रतीत होने लगता है।[१] आगे हम देखेंगे कि वह अन्य प्रकारों से भी प्रायः मूल का ही प्रमाणित होता है।

[१] इन छदों की ग्रंथ की विभिन्न प्रतियों में पाठ स्थिति के लिए दे० आगे 'पृथ्वीराज रासो के निर्धारित मूल रूप की छंद-तालिका' शीर्षक।

४. पृथ्वीराज रासो
का
मूल रूप (पाठ)

मूल रचना में कौन-कौन से छंद रहे होंगे यह निर्धारित कर लेने के बाद पाठभेद के स्थलों पर कौन से पाठ स्वीकृत होने चाहिए और कौन-से नहीं, यह निर्धारित करना रह जाता है। इस प्रकार के पाठ निर्धारण का कार्य संतोषजनक रूप से तभी संभव हो सकता है जब विभिन्न प्रतियों का पाठ संबंध निर्धारित हो जावे। यह अवश्य है कि इस प्रकार का संबंध-निर्धारण हम विभिन्न प्रतियों के उन्हीं अंशों तक सीमित रख सकते हैं जो ऊपर निर्धारित मूल के अन्तर्गत आते हैं, क्यों कि हमारा अभीष्ट इसी मूल का पाठ-निर्धारण है। ये प्रतियाँ अपने अन्तिम रूपों में परस्पर किस प्रकार संबद्ध हैं, यह निश्चय करना प्रस्तुत कार्य के लिए आवश्यक नहीं है।

इस पाठ संबंध निर्धारण के लिए हमें विभिन्न प्रतियों में इन्हीं छंदों में आने वाली ऐसी समस्त पाठ विकृतियों का लेखा लेना होगा जो किन्हीं भी दो या अधिक प्रतियों के पाठ संबंध पर प्रकाश डाल सकें। केवल सुनिश्चित पाठ-विकृतियों को ही यहाँ लिया जा सकेगा। ये प्रायः संपादित पाठ में निर्दिष्ट स्थलों को देखने पर स्वतः स्पष्ट हो जावेंगी, इसलिए नीचे संपादित पाठ और उसके अनंतर विकृत पाठ देते हुए इनके संबंध में वहीं पर कुछ विस्तार से कहा जावेगा जहाँ इनके संबंध में संकेत करना मात्र पर्याप्त न समझा जाएगा।

धा० मो० म० ना० उ० ज्ञा० स०

(१) धा० २०३. ३' हर हथ्थहि हरि गहहि बाम रब्बिहि हनि बारहि।
प्रसंग पहाड राय तोमर द्वारा किये हुए भयानक युद्ध का है। इन प्रतियों में 'हर हथ्थहि' के स्थान पर धा० मो० में 'हरि हथ्थहि', ना० में 'हरि हथ्थह' और शेष म०उ०स० में 'हरि हथ्था' है।

(२) धा० ३२४. २ संजोगि जोबन जग्ग।
सुनि श्रवण दे गुरराजनं।
प्रसंग संयोगिता के नख-शिख वर्णन का है। इन प्रतियों में 'श्रवण दे' के स्थान पर पाठ 'सर्वदा' है।

(३) धा० ३२४.७ नग हेम हीर जु अप्पनं।
गय हंस मग्ग उथप्पनं।
प्रसंग संयोगिता के चरणों के वर्णन का है। इन प्रतियों में 'हीर' के स्थान पर पाठ 'हंस' है।

धा० मो०

(४) धा० १३६'२२ : रोहि आरोहि मजीर रुंद।
मन्द मृदु तेज परवीर वंद।

प्रसंग संयोगिता के नूपुरों की ध्वनि के वर्णन का है। धा० मो० में परकीर (<प्रवीर) के स्थान पर 'प्राकार' है।

(५) धा० १६९.२ : जे प्रिय पुरष रस परस बिनु उठिग राय सुर सान।
घवल गृह ते अनसरई भट्टहिं अप्पन पान॥

प्रसंग स्वतः प्रकट है। धा० और मो० में 'भट्टहि अप्पन' के स्थान पर क्रमशः है 'रिपु मंगन सू' तथा 'रिपु मंगन मह'।

(६) धा० १८८.१ : काती भार पुरा पुनर्विगलित शाताग गंट स्थल।
उच्चं तुच्छ सुरा स शशिक्रमन करि कुंभ निद्राडियं।

प्रसंग प्रातः की वेला के वर्णन का है। धा० मो० में 'काती भार' के स्थान पर पाठ 'काता भार' है।

(७) धा० १९३.२ : सुनि तंबोल पट्टिय सुकर बर उठि दिढिभ यंक।
मनु रोहनि सु यमुन मिलिग मनु विनि उदित मयंक॥

प्रसंग यवाइत वेषधारी पृथ्वीराज के द्वारा जयचन्द को पान अर्पित किए जाने का है। धा० और मो० में 'मनु रोहनि सु यमुन मिलिग' के स्थान पर क्रमशः है 'मनो मोहनि सु मन मलिग,' तथा 'मन मोहनि सुं मन मिलिग'।

मो० ना० उ० शा० स०

(८) धा० ३४७–३५० : सहहिं मीर निप पां जिहिं जिन सिर हारहिं हुथार।
छाज धरहि तिनवरि गाजहिं ते पुहु 'पंच हजार'॥
'पंच हजार' ति मद्धि 'दुइ' जे अगवा घर सामि।
कर धज्जइ वज्जइ सहइ ते 'से पंच' अहुट्ठामि॥
तिन महि 'सौ' जे भय हरण सील सन्त जस जित्त।
तिन महि 'दस' वारण दलण उप्पारहि गयदन्त॥
तिन महि 'पंच' प्रपंच सं लखिय न गति तिन काज।
देवगति देवानसट तिन महि पहु प्रथिराज॥

प्रसंग पृथ्वीराज की सेना-वर्णन का है। इन प्रतियों में उपर्युक्त (१) 'पच हजार', (२) 'दुइ' [हजार], (३) 'सै पच', (४) 'सौ', (५) 'दस' तथा (६) 'पंच' के स्थान पर क्रमशः (१) 'बीस हजार' (२) 'दस [हजार]', (३) 'पच [हजार]', (४) 'दोइ [हजार]' मो०, 'बीस से'—ना०, 'पञ्च से'—शा० (५) 'दस' सइं, (६) 'पञ्च सइ' है।

(९) धा० ३६२.२७ : परे सहस 'सोरह' सह सेन गोरी।

प्रसंग गोरी पृथ्वीराज युद्ध में गोरी की सेना के संहार का है। इन प्रतियों में 'सोरह' के स्थान पर 'पचीस' है।

(१०) धा० ३८६ : भय विहान 'सुरितान' दर पज्जि निसांन निसांन।
सम धूमन जूरण किरणि त प्रगटि दिसांन दिसांन॥

इन प्रतियों में 'सुरितान' के स्थान पर 'सु विहान' है, जब कि पूर्ववर्ती शब्द भी 'विहान' है।

मो० ना०

(११) धा० १४७ : सुनत बोल हेजमइ उठत दिग्गित चन्द हित ताहि।
त्रिय आगइ सुदरस गयउ जहां पंगु त्रिय आदि॥

ना० मो० में इसके पूर्व निम्नलिखित दोहा आता है (ना० पाठ) :—

सुनत हेत हेजम उच्चौ कह्यो चन्द कवि भाउ।
वलि समान वलि करन सुत इह भौमी पान राउ॥

ना० में धा० १४७ के दोहे को इस दोहे का 'पाठांतर' बना दिया गया है।

(१२) धा० २९७.६ : वलि गयउ न मदिर दिसि रहउ मरण जाणि जुइसउ भनी।
विंझ लगि दाग तिलक मिलि 'बहु बहु बहु भग्गुल घनी'॥

प्रसंग पृथ्वीराज की रक्षा के लिए हुए 'विंझराज' के युद्ध का है। इन प्रतियों में 'बहु बहु बहु भग्गुल घनी' के स्थान पर पाठ है : मो० 'बहुल भगि समरि घनी' ना० [बा] हु भंग संमर घनी'। विंझ ने पृथ्वीराज की ओर से युद्ध किया था (धा० ३०४) इसलिए 'बहुल भगि समरि घनी' अथवा '[बा] हु भंग संमरि घनी' पाठ असम्भव है।

(१३) धा० ३१६.१ : तब 'गुरराज राज कवि' बुझइ।
तुहि बरदाइ तिम्न गुरु सुझइ।

इन प्रतियों मे 'गुरराज राज कवि' के स्थान पर पाठ है : मो० 'गुरु राज राज गुरु' और ना० 'व विराय राजगुर'। दूसरे चरण से प्रकट है कि प्रश्न बरदाई से राजगुरु ने किया है।

(१४) धा० ३२४.४५ : 'मणि बन्ध' पुच्च सु दीसये।
जानु वन्द कालीय सीसये।

प्रसंग सयोगिता के नख-शिख वर्णन का है। इन प्रतियो मे 'मणि बन्ध' के स्थान पर 'मणि विंध' है।

(१५) धा० ३७६.१ : 'इउं सु जोगिय इउं सु जोगिय' जमन परिहार।

प्रसंग गोरी के दरबान के द्वारा चंद से किए गए 'किमि तइं जोगी भयु भट्ट' विषयक प्रश्न के उत्तर का है। इन प्रतियों में 'इउं सु जोगिय इउं सु जोगिय' के स्थान पर है : मो० 'तव पेष्यु', ना० 'तव पिष्पै'। किन्तु दरबान चन्द को पहले ही देख चुका है (धा० ३७५.३), यहाँ तो दरबान के प्रश्न का उत्तर चन्द के द्वारा दिया जाना चाहिए था।

धा० अ० फ० म० ना० उ० ज्ञा० स०

(१६) धा० १०५.१ : आनंदउ 'कविचंदु जिय' नृप रिय सच विचार।

प्रसंग कन्नौज ले चलने के लिए चन्द से पृथ्वीराज द्वारा किए गए अनुरोध पर चद के आनंदित होने का है। इन प्रतियों में 'कवि चन्दु जिय' के स्थान पर पाठ है : धा० 'कवि कव्वयनु', अ०फ '०कवि सुनि वयनु', म० 'कवि वयन विनु', ना० 'कवि इक वयन', उ०स० 'कवि के वयन'। इस छन्द के पूर्व सभी प्रतियों में पृथ्वीराज के वाक्य आते हैं, इसलिए इन प्रतियों के पाठ सम्भव नहीं हैं।

(१७) धा० १२१.१३.१४ : पुह फटिग घटिग सरवरि सरीर।
झलकंति कनक दिष्प गम नीर।

इन प्रतियों में ठीक इसके पहले और है :—

घर हरिग सीत सुर मंद मंद।
उप्पज्जो जुद्ध आवध्ध दंद॥

किन्तु यहाँ प्रसंग पृथ्वीराज के कन्नौज पहुँचने मात्र का है, युद्ध के द्वन्द तो बहुत बाद में प्रारम्भ होते हैं।

(१८) धा० १७२.१० : धनुष्य भउंह अंकुरे।
नयन्न बान संकुरे।

प्रसंग जयचन्द की दासियों के नख-शिख का है। इन प्रतियों में 'नयन्न बान' के स्थान पर पाठ 'मनो नयन्न' है, किन्तु 'नयन' भौंहों के उपमान नहीं हो सकते हैं।

(१९) धा० १९६.६ : पारस्त मंडि प्रथिराज वउ कहइ भले रजपूत सउ ।

प्रसंग छद्मवेशी पृथ्वीराज को जयचन्द के पहचानने और उसको पकड़ने की आज्ञा देने पर पृथ्वीराज के सामंतों की प्रतिक्रिया का है। इन प्रतियों में पाठ है : धा० म० उ० स० 'सावत सूर हथि राजसू(सौ—म०)', अ० फ० 'सावत सूर हरि परसपर', ना० 'भर भरणि आउ पुजीय परीय'। 'पारस्व मडि प्रथिराज कउ' (=पृथ्वीराज के पार्श्व में आकर) के एक दुर्बोध पाठ को हटाकर इन प्रतियों में एक सरल पाठ को रक्खा गया है।

(२०) धा० २१०.१ : जड इम लष्यन सर सहित विचार न तत्त करि।

प्रसंग संयोगिता के अपनी दासी को मोतियों का थाल लेकर पृथ्वीराज के पास भेजने का है। इन प्रतियों में 'सहित' शब्द नहीं है। 'इन लष्यन' शब्दों से प्रकट है कि 'सहित' होना चाहिए।

(२१) धा० २११.३ : कमलिति कोमल पांनि कलिकुल अंगुलिय।

प्रसंग उपर्युक्त दासी के मोती अर्पित करने का है। इन प्रतियों में 'कलि कुल' (=कलिका-कुल) के स्थान पर 'केलि कुल' है, जो उँगलियों के लिए निरर्थक है।

(२२) धा० २२९.२ : बहुत जतन संजोगी समवै।
सोम अमृत कमल तुम्ह तु छवै।
इह कहि बाल गवष्यिन पत्तिय।
पति देषत मन गहि नहि रत्तिय।

प्रसंग संयोगिता को वरण करके पृथ्वीराज के चले जाने पर उसके विरह का है। इन प्रतियों में दूसरे चरण का पाठ है : धा० अ० फ० 'सोम कमल अम्रित दरसाए,' म० ना० उ० स० 'सोम कमल दिनयर दरसाए'। कहा गया है "[उस विरह-दाह को शांत करने के लिए] संयोगिता ने बहुत से उपाय किए, [किन्तु कोई लाभ न होता देखकर] वह कहने लगी, 'हे सोम, अमृत और कमल तुम्हें [कोई] न छुवे।' और यह कह कर वह गवाक्षों तक गई...।" इन प्रतियों का पाठ चरण तीन के 'इह कहि' को निरर्थक कर देता है। 'दरसाए' तो निरर्थक है ही—कमल और अमृत के दरसाने से कोई शीतलता नहीं प्राप्त होती है।

(२३) धा० २२९.३ : ऊपर के छन्द में तीसरे चरण का पाठ इन प्रतियों में है : 'उसकि झंकि दिष्षउ पन पत्तिय'। यह परिवर्तन पूर्ववर्ती से संबद्ध है।

(२४-२५) धा० २३९.२०, २२ : दरसी दल बादल झल्लरियं। (१९)
समरे भर कायर चल्लरियं। (२०)
जिनके मुप मुच्छ ति मच्छरियं। (२१)
निरषे तिनके तन अच्छरियं। (२२)

इन प्रतियों में २० तथा २२ वें चरण नहीं है, स्पष्ट है कि वे छूटे हुए हैं।

(२६) धा० २९०.३ : मीच ऊंचे 'प्रही' सोम सीसं।

प्रसंग मीर वंदन के वर्णन का है। इन प्रतियों में 'प्रही' के स्थान पर पाठ 'तुच्छ' है। 'प्रही' का अर्थ 'छड़े हुए' होता है और वही संगत लगता है। यहाँ अर्थ की दुर्बोधता के कारण सरल पर्याय रख दिया गया है।

(२७) धा० २६२.१ : मति घट्टी सामंत मरण 'डउ' सोहि दिखावहु।

इन प्रतियों में 'डउ' के स्थान पर 'भय' है। 'डउ' 'भय' का अपभ्रंश रूप है, किन्तु 'भय' की अपेक्षा 'डउ' (<डउआ) अधिक उपयुक्त शब्द है। 'डउ' दुर्बोध होने के कारण बदल दिया गया, और कर उसके स्थान पर 'भय' कर दिया गया है।

(२८) धा० २६९.९ : धर पेइ मक्क्ष त पीत पनी। (९)
दिपि छ्ज्जति रेण सरद तनी। (१०)

चरण ९ का पाठ इन प्रतियों में है : धा० अ० फ० 'हरिपरिय हिमाउत पीत पनी', ना० उ० स० 'हरिपच्छ हुमा (हमा–स०, उमा–उ०) उपवीत (उअपीत–स०, पतिपीत–उ०) बनी (पनी–ना० उ०)'। प्रसंग सेना के प्रयाण का है। निर्धारित पाठ का आशय है : 'धरा की धूल [उड़कर] सूर्य की किरणों में [ऐसा] पीलापन ला रही है.........' इन प्रतियों के पाठ निरर्थक हैं।

(२९) धा० २७०.२ : 'विजे सब सेन' खिनके नकरे।

इन प्रतियों में 'विजे सब सेन' के स्थान पर पाठ है : धा० अ० फ० ना० 'विडुरिय सेन', ना० उ० स० 'इरं विड्डुरी सेन'। 'विज्' का अर्थ भागना होता है, उसके स्थान पर उसकी दुर्बोधता के कारण प्रसंग से समझकर 'विड्डुरिय' शब्द दे दिया गया है।

(३०) धा० २७३.१ फुनि प्रथिराज अच्छि 'देह' चलु रट्ठिवर नरेस।
सिर सरोज चहुआंन कढ अमर सस्त्र सम भेस ॥

इन प्रतियों में 'देह' के स्थान पर 'दल' है। संपादित पाठ के प्रथम चरण का अर्थ है : 'फिर पृथ्वीराज को आँखों से देखकर राठौर नरेश [जयचन्द] घूम पड़ा।' 'देह' का अर्थ देखना है, उसको न समझ कर प्रसंग के सहारे पाठ 'दल' कर दिया गया है।

(३१) धा० २८५.३ : मच्छ विहंवर फुरहि कच्छ गज कुंभ 'विदारहि'।
उम्रहंस उड़ि चलहि हंसमुख कमल विराजहि ॥

इन प्रतियों में 'विदारति' के स्थान पर भी 'विराजति' है जो उसके तुक में बाद की ही पंक्ति में आता है।

(३२) धा० ३२७ : उहि उहि उभय रस उप्पजउ मिले चन्द गुरुराज।
कइ बन्धव सउं मनसिनउ कइ धन तिरिप्पयति राज ॥

इन प्रतियों में द्वितीय चरण का पूर्वार्द्ध है : धा० 'के वयनन अयनन' मिलहि, अ० फ० 'के पिय वहि अवनिहि मिलै', ना० 'के वयन अयन न मिलनि', शा० स० 'कम वयनन आनन मिलै'। प्रसंग पृथ्वीराज की विलास-मग्नता का है; दूसरे चरण में गुरु राज तथा चंद का यह सम्मिलित अनुमान दिया गया है कि 'या तो राजा बान्धवों से मनसिन (उनका ध्यान रखने वाला) होगा, और या तो वह अपनी स्त्री (संयोगिता) को ही देखेगा (उसी पर ध्यान देगा)।' प्रकट है कि इन प्रतियों का पाठ निरर्थक है, और एक दुर्बोध पाठ के स्थान पर इनमें एक सरल पाठ प्रसंग की सहायता से रखने का प्रयास किया गया है।

(३३) धा० ३३१.१ : 'आसन आइस सुप्पि दिय' कच झारिय तइ रेनु।
सुभ सिंगार सुंदरिय 'अंगे आभरनेन' ॥

प्रथम चरण के पूर्वार्द्ध का पाठ इन प्रतियों में है : धा० 'आसन असु दिय चरन की', अ० फ० 'आसन दिय असु चरन (चरनि) परि', ना० 'आसन असु दिय चरन किय' शा० स० 'आसन असु दिय चरन रज'। किंतु चरण पड़ने की बात तो पूर्ववर्ती छंद में आ चुकी है :

तब कुटिल भोह चप सोह ति मोहन दास दम।
कछु हसि पछु पय लगि पर्यपइ त्रीय रसि ॥

(३४) धा० ३३१.२ : पूर्वोल्लिखित दोहे के ही द्वितीय चरण का उत्तरार्द्ध इनमें है : धा० अ० फ० शा० स० 'आदर आभर नैन (आमरनेन–धा०)' ना० 'आभर आभ नैन'।

इन प्रतियों का पाठ निरर्थक है यह प्रकट है।

(३५) धा० ३३८.२ : कहु सु पियह पउमिनिय कंत घनुं धरउ तउ न धन ।
सुप सुप मार आरोहु 'असर' संसार मरण मन ॥

इन प्रतियों में द्वितीय चरण के 'असर' के स्थान पर पाठ 'सार' है। 'असर' का अर्थ है अ+स्मर =काम विहीन है, और वही सार्थक है। 'सार' प्रसंग में निरर्थक है। 'असर' का अर्थ न समझ पाने के कारण पाठ-परिवर्तन किया गया है।

(३६) धा० ३१४.२ : मैछ्छ मसूरति सत्ति किय बंचि कुलांन कुरान।
'वीर चिक्कु वततिह कियव' दिभउ मिलांन मिलांन ॥

इन प्रतियों में दूसरे चरण के पूर्वार्द्ध का पाठ है : 'वीर विचार ति (त—अ०) रत्त (रत्ति—धा० शा० स० दुअ)'। स्वीकृत पाठ का अर्थ होगा 'तथैव उन वीरों ने बातें थोड़ी कीं।' 'चिक्क (< स्तोक)'[१]को न समझ पाने के कारण पाठ-परिवर्तन किया गया है।

(३७) धा० ३६०.५ : उडे सो ओलग्गी बजी धार धारं।
भयी सेन दुस्सह दुह मार मार ।

उद्धृत प्रथम चरण का पाठ इनमें है : धा० शा० स० 'वढ़ी राग लग्गी (लज्जी-धा०, लागी—शा०)', अ० फ० 'वढ़ी अंग लग्गी', ना० 'वढी रिंग लग्गी'। ये सभी पाठ निरर्थक हैं, और 'ओलग्गि (<अवलग्न) भृत्य' के अर्थ को न समझने के कारण पाठ-परिवर्तन किया गया है।

(३८) धा० ३३८.१ : तिहि आयउ तुहि आस करि तुहितु पास चहु आंन।
सोइ दुरोग लग्गहुँ मनह कढ्ढन कउ सु विहान ॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण का पाठ है : 'अप्रमान (दा सुनत शा० स०) कंप्यो (करवरो-धा०) हियो दिल न रह्यो (रहै—धा० ना० थिर थान (काम—धा०)'। ये पाठ प्रसंग में निरर्थक हैं, यह स्वतः देखा जा सकता है।

धा० अ० फ० ना०

(३९) धा० २८३.४ : अमिय कलस आयास लिअउ अच्छरी उछंगह।
तय सु भई परतक्खि 'अरीत अरीत कहत कह' ॥

उद्धृत दूसरे चरण के उत्तरार्द्ध का पाठ इन प्रतियों में है 'यह जय जय सु यह कह'। 'अरीत (<अरिक्त)' का अर्थ न समझने के कारण यह पाठ-परिवर्तन किया गया है : दुर्बोध पाठ को निकाल कर प्रसंग से अनुमोदित एक सुगमतर पाठ दे दिया गया है।

(४०) धा० ३८०.२ : हदफ साह खेलन चढउ मनुहु 'उदयउ अरुणन'।

इन प्रतियों में 'उन्यउ अरुणन' के स्थान पर पाठ है 'उदधि अरान।' हदफ (=लक्ष्यवेध) खेलने के लिए घोड़े पर सवार हुए शाह की कल्पना 'उदित अरुण' के अप्रस्तुत के साथ ही संगत लगती है, 'उदधि अरान' की उक्ति तो किसी 'सेना' के ही अग्रसर होने के सम्बन्ध में संगत हो सकती थी।

धा० अ० फ०

(४१) धा० ५७.३,.४ : 'जिउ' सूर तेज तुच्छत जल मीनह।
'तिउ' पंगह भय दुज्जन भय पीनह।

इन प्रतियों में दोनों चरणों में 'जिउ' और 'तिउ' नहीं हैं। इनके न होने से अर्थ दुरूहता से लगता है; केवल छन्द में मात्राधिक्य समझ कर इन शब्दों को निकाल दिया गया है।

(४२) धा० १०२.२ : चढउ भट्ट सेवग होइ सध्यहं।
पढ बोल्उं 'त हथ्थु तुह मथ्यह'।

इन प्रतियों में दूसरे चरण का उत्तरार्द्ध है 'अरिय हुरले सुव', जो निरर्थक है। यह 'तुम्हारे मस्तक पर मेरा हाथ है' की सौगंध न समझ पाने के कारण बदल कर किया गया है।

(४३) धा० १९०.१ : मिसि वेज्जहि गंगह रचनि 'दान कवि पति लेइ'।
चढ़ित सुपासन समुद्द हुअ सब सामंत समेव ॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण का उत्तरार्द्ध है : 'वा०.....मोह, अ० फ० 'कनि पति भूत (भूति-अ०) समूह (मूह—अ०)'। धा० त्रुटित है किन्तु उसके पाठ के अन्तिम अक्षर 'मोह' 'समूह' का ही कोई अंश है—उकार, ऊकार और ओकार मे प्रायः भ्रम किया जाता रहा है।[१] यह पाठ असंगत और अर्थहीन है,यह स्पष्ट है, स्वीकृत पाठ ही सार्थक है।

(४४) धा० २२१.३ विन उत्तर 'तु मौन' सुप रष्षी।
जिम चातुक्कि पावस रति नष्षी।

उद्धृत प्रथम चरण के 'तु मौन' के स्थान पर धा० अ० मे है 'मोहन'; फ० में यह चरण छूटा हुआ है। 'मोहन' प्रसंग में निरर्थक है।

(४५) धा० २४७.१,.२ : गहि गहि कहि सेना ति सह 'चलि हय गय मिलि तब्ब।'
जिम पावस पुव्वइ अनिल 'हलि गत चद्दल सब्ब ॥'

इन प्रतियों में प्रथम तथा द्वितीय चरणों के उत्तरार्द्ध क्रमशः हैं 'चलि (हलि–फ०) हय गय मिलि इक्क,' तथा 'हलि चद्दल (चद्दल–फ०) बहु मिष्प (मेष—धा०, मष्पि—फ०)'। 'इक्क'—पाठ प्रसंग में सर्वथा निरर्थक है, यह प्रकट है। दूसरे चरण में पाठ-परिवर्तन 'हलिगत = हिलगते हैं —आस-पास आ जाते हैं' को न समझ पाने के कारण किया गया है।

(४६) धा० २६०.१ : यतो नीरं ततो नलिनी यतो नलिनी ततो नीरं।
त्यजति ग्रह न यत्र ग्रहनी यतो नलनी ततो ग्रहं।

इन प्रतियों में प्रथम चरण का उत्तरार्द्ध भी वही है जो पूर्वार्द्ध है : 'यतो (जेतो–अ० फ०) नीर ततो नलिनी'। अशुद्धि प्रकट है।

(४७) धा० २८७.६ : सामंत पच पेतह परिग भिरइ भंति भए 'बिपहर।'
इन प्रतियों में 'बिप्पहर' = दो पहर, के स्थान पर 'विप्पहर' है। अशुद्धि प्रकट है।

(४८) धा० ३०४.२ : 'काम' बान हर नयन निडर नीडर सोइ सुझ्झर।
इन प्रतियों में 'काम' के स्थान पर पाठ 'इक्क' है। प्रसंग विभिन्न सामंतों के पृथ्वीराज को कन्नौज से दिल्ली की दिशा में आगे बढ़ाने की दूरी का है। धा० २७६ मे नीडर के सम्बन्ध में कहा गया है :

नीडर निमक झुझझत रण अट्ठ कोस चहुआन गयु।

इस 'अठ' की संख्या के लिए 'काम बाण (५)+हर नयन (३)' पाठ ही ठीक है, 'इक्क बाण हर नयन' स्पष्ट ही अशुद्ध है।

(४९) धा० ३११.१ दादुर 'सादुर' सोर नव धुर नारि घन।
इन प्रतियों में 'सादुर' शब्द नहीं है। 'दादुर' से वर्ण-साम्य होने के कारण प्रतिलिपि करते समय यह शब्द छूट गया है, यह स्वतः प्रकट है।

(५०) धा० ३१८.२ : 'जिहि' धन त्रिअ सरणु त्रिजि वर जाने।
सो काम देव त्रिअ वनि करि माने ॥

इन प्रतियों में 'जिहि' शब्द नहीं है। छंद का मात्राधिक्य ठीक करने के लिए यह निकाल दिया गया है, यद्यपि इससे वाक्य अपूर्ण रह जाता है।

[१] देखिए इसी भूमिका में 'प्रयुक्त प्रतियाँ और उनके पाठ' शीर्षक के अन्तर्गत मो० सम्बन्धी विवेचन।

(५१) धा० ३५३.१, २ तव पांन पुरासान ततार पांन रुस्तम कर जोरह।
आन साहि मरदान खान सुविहान विछोरहि।

इन दो चरणों के स्थान पर धा० तथा अ० में एक ही चरण है :

धा० सबहि पान पुरसान पान रुस्तम विच्छोरहि।
अ० फ० पां पुरसान ततार पान सुविहान विछोरे।

ऐसा लगता है कि प्रथम चरण के 'कर' से लेकर द्वितीय चरण के 'आन' तक का अंश निकला हुआ था, धा० या उसके किसी पूर्वज में दूसरे चरण के 'सुविहान' तथा अ० या उसके किसी पूर्वज में 'रुस्तम' को निकाल कर पंक्ति की मात्राएँ ठीक करली गईं। फ० में यह भूल नहीं है, किंतु फ० के परिचय में ऊपर हम चुके हैं कि उसमें ऐसे लगभग ९० छंद हैं जो अ० के छंदों की क्रम-संख्या के बाहर पड़ते हैं और ना० तथा स० में मिलते हैं। इस लिए यदि का फ० का पाठ उक्त पाठ-मिश्रण के अनंतर ठीक कर लिया गया हो तो आश्चर्य न होगा।

(५२) धा० ३६२.१९ : परे चाइ चालुक्क ते सारिदूने।
मुरे मोरिआ सव्व भये जात सूने॥

अ० फ० में उद्धृत प्रथम चरण की 'साठि' तक की शब्दावली नहीं है। धा० में इस छूटी हुई शब्दावली के स्थान पर है : 'निने नूप सा सूप भालेन' जो कि सर्वथा निरर्थक है, और केवल चरण पूर्ति के लिए गढ़ ली गई है।

(५३) धा० ३९३.२ : हमहि मिलइ जि चंद सुनि परह दलिद्दी लोभ।
अरु जि इनी महि संचरइ हम सउं मिलत न सोभ॥

द्वितीय चरण का उत्तरार्द्ध इन प्रतियों में है : धा० 'हय गय गहि न सोभ', अ० फ० 'हय गय महि सन सोभ'। संभवतः पूर्व में पाठ त्रुटित होगया था, उसके स्थान पर प्रसंग के अनुकूल एक नवीन पाठ की कल्पना कर ली गई।

(५४) धा० ३९९.३ : बहुन वड पतिसाहि तुही।
मन मझ्झ रहउ कवि साल सु ही।
गयउ तु आज करि पइज तुही।
चनि जाउं साहि सुरतान सही।

तीसरे चरण का पाठ इनमें है : 'दे अज्ज किधौं करि हे (करिहुं–अ०, करिहौं फ०) जु (कि–अ०, के–फ०) नहीं'। प्रथम तथा द्वितीय चरणों के साथ स्वीकृत पाठ ही संगत है। प्रसंग यहाँ पर 'साल' = 'शल्य' का है। चंद गोरी से कहता है कि "(१) उस शल्य को काढ़ने में तूही समर्थ है [२] यह जो शल्य कवि के मन में [खटकता] रहा है, [३] वह आज गया ही है यदि तू [उसके निकालने की] प्रतिज्ञा कर, [४] और (तदनंतर) हे सुल्तानों के शाह, मैं चला जाऊं [यही मेरे मन में है]।" प्रकट है कि इस प्रसंग में गोरी से 'नहीं' कराने की बात, जो इन प्रतियों के पाठ में आती है चंद मुख पर भी ला नहीं सकता था।

स० फ० म० ना० उ० ज्ञ० स०

(५५) धा० २४२.१ : सुनि वज्जन राजन चढ़िग 'बहुप्पवर समदाउ।'
मनुह छंक विग्रह करन चलउ रघुप्पतिराउ॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण के उत्तरार्द्ध के रूप में है : 'सरस संध धुनि चाव (चाय–म०, चाउ ना०, चाइ–उ० स०)'। इन प्रतियों में आगे शंखध्वनि नाम के योगी दल का प्रक्षिप्त प्रसंग है। हो सकता है कि इन प्रतियों के इस पाठांतर का संबंध उक्त प्रक्षेप से हो। अन्यथा युद्ध के प्रसंग में शंखध्वनि का उल्लेख ग्रंथ में नहीं हुआ है।

(५६) धा० २१२.४ : केवर भाव पराक्रति संकति देव सुर।
के गुन ग्यान सुजान विराजहि राजवर।

उद्धृत दूसरे चरण का पाठ इन प्रतियों में है : 'के वरवीन विराजहि वीर वर', फ० 'के वरि वीन प्रवीनु विराजहि वीर वर', म० 'के वर वीन विराजत राज दरवार वर', उ० स० 'के वर वीन विराजित राजहि वार पर'। किंतु वीणा में प्रवीण दासियों का उल्लेख इसके पूर्ववर्ती छंदमें हो हो चुका है।
तहं तहं अप्पि सुवीन प्रवीन ति दासि दस।
इस लिए इन प्रतियों की पाठ विकृति प्रकट है।

(५७) धा० ३२६.१ : किय अचिरज तब राजगुरु न्यायनु राज रस रत्त।
जस भावी नर भोगवइ तस विधि अप्पइ मत्त।

इन प्रतियों में प्रथम चरण का पाठ है: 'मानि (मन्नि-शा० स०) राजा गुरु राजरस (रवि-फ०) सैं कवि (कविवर-ना० शा० स०) बरनी (चरनी-फ०) सत्ति।' 'न्यायनु राज रसरत्त' में पृथ्वीराज के भावी पतन की जो व्यंजना है, वही चरण २ के साथ संगत है, इन प्रतियों के पाठ में वह संगति नहीं है।

म० फ० ना०

(५८) धा० ३०२ : परत पवेल सु मेल किय इन शहहर सु भार।
'नव दसकोस ढिल्लिय रही' फिरि तोमर पाहार॥

इन प्रतियों में द्वितीय चरण के पूर्वार्द्ध के स्थान पर है 'दस योजन दिल्लीय रहि (दिल्ली परइ—ना०)'। कुल दूरी कन्नौज और दिल्ली के बीच 'पांच घाट सौ कोस' कही गई है (धा० २६६.३), और इस दूरी को ग्यारह सामन्तों ने निपटाया है, जिनमें से अन्तिम पाहाड़ तोमर है (धा० ३०४)। प्रकट है कि यह दूरी जिसे पाहाड़ तोमर ने तै कराया दस कोस की ही हो सकती है, दस योजन की नहीं।

म० ना० उ० शा० स०

(५९) धा० ४५ ३-४ : षट छह जिहि सामंत सोइ प्रथीराज कोइ।
दान पग्ग सय मानि न मुक्कइ तात सोइ॥

इन चरणों के स्थान पर इन प्रतियों में है :
सत्त सेन सामंत सूर छह मंडलिय,।
धरन इच्छ वर मो हिम ऐति अखंडलिय॥

'षट+दह'=सोलह के स्थान पर सामन्तों की संख्या १०० करने के लिए उद्धृत प्रथम चरण में पाठ-परिवर्तन किया गया लगता है, किन्तु इन प्रतियों का चरण का शेष पाठ अर्थहीन हो गया है; उद्धृत द्वितीय चरण का उत्तरार्द्ध भी इसी प्रकार इन प्रतियों में अर्थहीन हो गया है।

(६०) धा० ६३ : सं साहिस्स 'सहाव' साहि सबल इच्छामि दुद्धाइने।

इन प्रतियों में 'साहिस्स सहाव' के स्थान पर म० 'साहि साहि', द० 'बसाह', उ० स० 'बसाह बाह' ना० 'बसाहि बह' पाठ हैं। ऐसा लगता है कि पूर्ववर्ती पाठ 'साहिस्स [सहा] व साहि' का 'सहा' निकल गया था, इसलिए इन प्रतियों में यह पाठ-विकृति हुई : म० में प्रक्षेप का प्रयास कदाचित् नहीं किया गया, शेष में प्रसंग से 'बसाहि' के बाद 'साहि' जोड़ कर पाठ पूरा कर लिया गया।

(६१) धा० १७८.१ : जायस रावन सथ्थि चढि 'असिअ सहस' तिहि सथ्थ।

इन प्रतियों में 'असिय सहस' के स्थान पर 'अयुत एक' है, जो स्पष्ट प्रक्षेप है और संख्या बढ़ा कर बताने के लिए किया गया है।

(६२) धा० २८४.१ : पुष्पंजलि 'सिरि मंडिप्रभु' फिरि छगी गुर पाय।

'सिरि मडि प्रभु' के स्थान पर इन प्रतियों में है 'दिसि वाम कर' जो कि सर्वथा अर्थहीन है। पूर्व के छन्द से इस छन्द की उक्ति-शृंखला है और उसका अन्तिम चरण स्वीकृत पाठ का ही समर्थन करता है :

पुष्फांजलि पंग सिर णाइ जयति विश्व कामदेव।

(६३) धा० १८६.१ : जाम एक छनदा घटित 'ससि हु सत्ति' निवारि।
कहुं कामिनि सुख रति समर नृपति हु नींद विसारि॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण के 'ससि हु सत्ति' के स्थान पर पाठ 'सप्तमि सत्त' है। सप्तमी को केवल एक प्रहर रात्रि गत होने से उसके सत्व का निवारण नहीं हो जाता है, सप्तमी को लगभग दो प्रहर रात्रि तक उसका सत्व बना रहता है, उसके अनन्तर उसमें परिवर्तन आता है। इसलिए इन प्रतियों का पाठ विकृत है।

(६४) धा० १९२.३ : 'बहुत किअउ आलाव' आउ कनयज्ज मुकट मनि।
इह ढिल्लिअसुर दत्त विसअ नन कहूं तुइस गिनि॥

उद्धृत प्रथम चरण के पूर्वार्द्ध का पाठ इन प्रतियों में है 'कवि आदर बहु कियौ'। किन्तु इस पाठ में आगे आए हुए कथन के विषय में 'कहा' अर्थ वाची कोई क्रिया नहीं आती; 'बहुत किअउ आलाव' में यह त्रुटि नहीं है। अतः इन प्रतियों का पाठ विकृत लगता है।

(६५) धा० १९७.१ : सुनउ सबे सामंत हो कहइ निृपति प्रथीराज।
जउ अछूछउ बिन पेत मइ तउ हुक्सिन नयर विराज॥

प्रथम चरण के स्थान पर इन प्रतियों में है :

सकल सूर सामंत सम वर बुल्यौ प्रथीराज।

इस पाठ में एक तो कोई सम्बोधन नहीं है, दूसरे 'सूर' शब्द अनुपयुक्त है : केवल सूर सामन्तों से नहीं, पृथ्वीराज ने सभी सामन्तों से कहा होगा; फिर 'वर' शब्द भी भरती का है। स्वीकृत पाठ में ये त्रुटियाँ नहीं हैं।

(६६) धा० २३३.१ : मदन सराल ति विवद्दा 'निमिप दइत' प्रांन प्रानेन।
नयन प्रवाह ति विवद्दा दिवा कथय कथा॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण के 'निमिप दइत' के स्थान पर 'जिह्वा रटयोति' है। स्वीकृत पाठ का अर्थ है 'मदन के शर रूपी काल से विनष्टा [संयोगिता] के प्राण एक निमिष के लिए दयित (प्रिय पति) के प्राणों से [अभिन्न] हो रहे।' प्रकट है कि 'निमिप दइत' स्थान पर 'जिह्वा-रटयोति' शब्द सर्वथा निरर्थक हैं, और पूरे वाक्य के अर्थ को *छिन्न भिन्न* करते हैं।

(६७) धा० २३४.४ : मोहि कंप सुरलोक 'कंप तप्पिय तह' नाग नर।

इन प्रतियों 'कंप तप्पिय तह' के स्थान पर पाठ है : 'पन्न (पति—म० उ० स०) पन्नग अरु (पंग नरु—म० पंनगरु—उ० स०)'। 'नाग' ठीक बाद में आता ही है, इसलिए 'पन्नग' वाले कोई भी पाठ सम्भव नहीं हैं।

(६८) धा० २४६.१९ : 'सिंधु सा बंध' बधे धुरंगा।
संग संगीत हरि बेम संगा।

'सिंधु सा बंध' स्थान पर इन प्रतियों में है। 'विरद (विरुद—ना०) वरदाइ'। प्रसंग युद्ध में लाए गए हाथियों का है। प्रथम चरण का आशय है 'सिंधु देश के धुरंगे (हाथी) बन्धनों से बँधे हुए हैं'। यहाँ पर 'विरद वरदाइ' सर्वथा निरर्थक है।

(६९) धा० २७८.१ : 'चंपत पिच्छोरिय गति' चपइ अपन तन दिप्प।

सन तुरंग तिलु ति तिलु कर मयउ कन्ह मन भिन्न ॥

प्रथम चरण पूर्वार्द्ध का पाठ इन प्रतियों में है : म० उ० स 'चपत अन्छरि रिंढ (रिंढ–उ०) लगि', ना० 'चंपित अन्छरि डिंम लगि' जो सर्वथा अर्थहीन है; अप्सरा का कोई प्रसंग यहाँ नहीं है।

(७०) धा० २८२.२ : धरणी कन्ह परत प्रगट चढ़ि पंगु निप हंकि।
मनु अकाल 'अवली जरल' गहि मतुहि धनु रंक ॥

इन प्रतियों में 'अवली जरल' के स्थान पर है 'संकरह हसि'। अकाल के समय शंकर का हँसना एक भद्दी कल्पना है, जो कि पूर्ववर्ती पाठ की दुर्बोधता के कारण उसको हटाकर रक्खी गई है; स्वीकृत पाठ का आशय है : मानो अकाल में [रंक-] अवली ने, जो रो-चिल्ला रही थी, अटूट धन प्राप्त किया हो।'

ना० उ० शा० स०

(७१) धा० ३४७ : सहहिं मीर निप पीर जिहिं 'जिन सिर झरहिं दुधार।'
लाज धरहिं तिन परि गनहिं ते पुहु पंच हजार ॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण के 'जिन सिर झरहिं दुधार' के स्थान पर है, 'लज्या धर (धरन–शा०) भर भार', तथा दूसरे चरण के 'लाज धरहिं' के स्थान पर है 'धरनि (भिरण–ना०) धरणि।' 'धरनि धरणि' असम्भव है, और 'भिरण धरणि' निरर्थक। स्वीकृत पाठ ही सम्भव है।

(७६) धा० ३९२.५ : तिहिं गहन इच्छ इच्छहूं 'सुमन सच्च' करतार करं।
समगहु अगम भूत संगहहु धरहुं छज्ज छज्जहुं न भर ॥

इन प्रतियों में 'सुमन सच्च' के स्थान पर है 'साच झूठ'। यहाँ गोरी अपने सामंतों को आक्रमण का उद्देश्य बताता हुआ कह रहा है कि 'उसी पृथ्वीराज को मैं पकड़ना चाहता हूँ, मेरे मन की वह बात कर्त्तार सच्ची (पूरी) करे।' यहाँ पर 'साच' के साथ 'झूठ' असंगत है, 'झूठ' कहने से सामंतों से वह उत्साहपूर्ण सहयोग की अपेक्षा नहीं कर सकता है।

(७३) धा० ३६५.२ : सहउं न बोल्ल संमुह हम्मउ बान पांन सुरात्तन।
'दुहु दुल्लन पुजिअ घरी' दिन पल्लव चहुआन ॥

इन प्रतियों में दूसरे चरण के पूर्वार्द्ध के स्थान पर है 'इह अपुब्व सजोगि मुनि'। संयोगिता यहाँ पर कहीं नहीं आती है, युद्ध-विषयक विमाई–संयोगिता सम्वाद के प्रक्षेप को रचना में पिरोने के लिए यह प्रक्षेप किया गया है।

म० उ० स० शा०

(७४) धा० ११५.३-४ : चहुआंन राठवर जाति पुंडीर गुहिल्ला।
बड गूजर पांमार कुरंभ जांगरा रोहिल्ला।
इत्ते सहित भुअ पति चलउ उडी रेन किन्नउ भुभउ।
एक एकु सत्थ वह लख्खह चले सच्च रजपुत्त सउ ॥

उद्धृत प्रथम दो पंक्तियों का पाठ इन प्रतियों में है :

चाहुआन कूरंम गौर गाजी षदगुज्जर।
जादव रा रघुवंस पार पुंडीर ति पष्षर॥

'रा' 'राज' के लिए आता है, किन्तु यहाँ किसी राजा या सामंत का प्रसंग नहीं है, यहाँ तो उन राजपूत जातियों का प्रसंग है जो पृथ्वीराज के साथ कन्नौज गई थीं; 'पार पुंडीर ति पष्षर' तो सर्वथा निरर्थक है।

(७५) धा० १८४ अ. ३-४ : अंगोछे लोल बोलं पृह घोलं अमोल।
पुष्पांजलि पंग सिर-नाह जयति मिथ कामदेव।

इन प्रतियों के स्थान पर इन प्रतियों में है :

दुम्रानी डोल डोला चपल मतिधरा एक बोली अमोली।
पूहपा (दुहवा-म०) वानी विसाला सुभग (सुभ-म०) गिरवरा जैतरंभा सुबोली।

स्वीकृत पाठ का अर्थ है : 'उन [नर्तकियों की] अंगूठियाँ [उनकी घूमती-फिरती उँगलियों के साथ] चपलता पूर्वक डोल रही थीं और [उनके मुखों में] एक ही अमूल्य बोल था, पग (जयचन्द) के सिर पर पुष्पाञ्जलि डाल कर [वे कह रही थीं] "हे दूसरे कामदेव, तुम्हारी जय हो!" इन प्रतियों के पाठ में 'सुबोली' अन्तिम चरण में पुनः आता है, किन्तु 'एक बोली अमोली' और 'जैत रंभा सुबोली' का कोई अर्थ नहीं है। 'पूहपा बानी विसाला सुभग गिरवरा' तो निरर्थक है ही।

(७६) धा० १९१ : 'दस हथ्थिय' मुत्तिय सघन 'सत तुरंग जिति माय।'
दब्ब सरस बहु संगि किय भट्ट समप्पण जाय॥

इन प्रतियों में प्रथम चरण के 'दस हथ्थिय' के स्थान पर है 'तीस करिय' (करी—म० उ०) और 'सत तुरंग जिति माय' के स्थान पर है : म० 'द्वै सै चपल तुरंग', उ० स० 'द्वै सै तुरंग बनाय'। इसके अतिरिक्त म० में द्वितीय चरण के 'जाय' के स्थान पर 'अग' है। प्रक्षेप-क्रिया अति प्रकट है।

(७७) धा० २०४.२ : सुनि सुंदरि वर वज्जने 'चढ़ी अवासह उट्ठि'।

इन प्रतियों में चरण के उत्तरार्द्ध का पाठ है : 'अई अपुब्ब कोइ (कौ—म०) दिठ (दुट्ठ-उ०, दुट्ठि-म०)'। प्रसग में इस पाठ की कोई सार्थकता नहीं है। वाक्यों को सुनकर 'अई (!) अपूर्व कोई दिखाई पड़ा' सगतिहीन भी लगता है।

(७८) धा० २२७४ : विन उत्तर तु मौनमुष रष्षी।
जिम चातुकि पावस रति नष्षी॥

उद्धृत दूसरे चरण का पाठ इन प्रतियों में है : 'मन वच क्रम प्रीतम रस कष्षिय' (चषीय-म०)। ऐसा लगता है कि अन्तिम चरण किसी प्रकार नष्ट हो गया था, इसलिए उसके स्थान पर प्रसग के अनुसार एक सर्वथा नवीन चरण की कल्पना कर ली गई।

(७९) धा० २२८.४ : दे अंचल चंचल द्रिग मुदइ।
कुल सुभाउ तुरी जिम कुदइ।

इन प्रतियों में उद्धृत दूसरे चरण का पाठ है 'विरहायन दाहन रवि उदहि'। यह पाठ सर्वथा असंगत है। प्रथम मिलन के अनन्तर पृथ्वीराज के चले जाने पर संयोगिता की जो दशा होती है, उसी का इन पंक्तियों में वर्णन है। स्वीकृत पाठ का अर्थ है, 'वह अञ्चल देकर अपने चञ्चल नेत्रों को मूदती [किन्तु वे न मान रहे थे] जैसे अपने कुल-स्वभाव के कारण बाँधने पर भी घोड़ा कूदा-उछला करता है।' विरह का भाव कुछ और तीव्रता के साथ लानेके लिए यह प्रक्षेप किया गया लगता है।

(८०) धा० २६७.८ : मिटयउ न जाइ कहनो कय कवि चंद सार सा मंत।
प्राची हय गय वहनो रहनो गत चिंता नरेंद्र तह॥

इन प्रतियों में दूसरे चरण का पाठ है : 'प्राची क्रम्म विधान नामान गावई गत्त।' किन्तु यहाँ 'कर्म विधान' का कोई प्रसंग नहीं है : 'प्राची' को प्राचीन समझ लिया गया है। स्वीकृत पाठ ही सार्थक और सगत है, जिसका आशय है 'जब कि प्राची (पूर्व—कन्नौज) के हय, गय, वाहन, रथादि तथा नरेन्द्र (जयचन्द) गतचिंता हो रहे हैं'।

उपर्युक्त विवेचन से निम्नलिखित पाठ सम्बन्ध स्थापित होते हैं :—

१—धा० मो० म० ना० उ० शा० स०
२—धा० मो०

३—मो० ना० उ० शा० स०
४—मो० ना०
५—धा० अ० फ० म० ना० उ० शा० स०
६—धा० अ० फ० ना०
७—धा० अ० फ०
८—अ० फ० म० ना० उ० शा० स०
९—अ० फ० ना०
१०—म० ना० उ० शा० स०
११—ना० उ० शा० स०
१२—म० उ० शा० स०

इन पाठ-सम्बन्धों को हम स्थूल रूप से निम्नांकित रेखाचित्र द्वारा व्यक्त कर सकते हैं :—
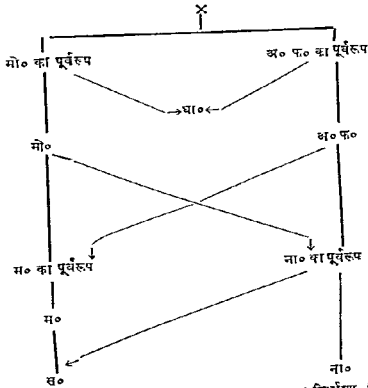
यहां पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह पाठ-सम्बन्ध-निर्धारण विभिन्न प्रतियों के उन्हीं अंशों के आधार पर किया गया है जो रचना के मूल रूप के लिए स्वीकृत हुए हैं।

पाठ-निर्धारण के आधार और सिद्धान्त

ऊपर के पाठ-सम्बन्धों को देखने पर ज्ञात होगा कि रचना के समस्त पाठ स्थूल रूप से मो० तथा अ० फ० के पूर्वरूपों से विकसित हुए हैं, और पाठ की दृष्टि से स्वतन्त्र शाखाओं का निर्माण

केवल मो० तथा अ० फ० के ये पूर्वरूप ही करते हैं, शेष समस्त पाठ उक्त दोनों के मिश्रण से निर्मित होते हैं। इसलिए पाठ-निर्धारण की दृष्टि से मो० तथा अ० फ० सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। धा० पाठ मो० तथा अ० फ० के उक्त पूर्वरूपों के मिश्रण से निर्मित है, उनके प्राप्त पाठों से नहीं, इसलिए उसका भी महत्व है, यद्यपि पाठ-मिश्रण के कारण वह महत्व पाठ-निर्धारण के लिए घट गया है। रचना के प्रारम्भ के जिन अंशों में मो० का पाठ अप्राप्य है, उन अंशों के लिए धा० का महत्व प्रकट है। मो० के अन्यत्र के त्रुटित पाठों के लिए भी धा० की सहायता ली जा सकती है। इसी प्रकार अ० फ० के त्रुटित पाठों के स्थलों पर धा० की सहायता ली जा सकती है। एक बात और धा० के मिश्र पाठ से प्रमाणित होती है, वह यह है कि मो० तथा अ० फ० के वे पूर्वरूप जिनके मिश्रण से धा० तैयार हुआ, धा० से बड़े नहीं थे। ऊपर रचना के मूल रूप का जो आकार निर्धारित हुआ है, वह धा० से भी कुछ छोटा है, यह हम देख चुके हैं।

अतः पाठ-निर्धारण के लिए निम्नलिखित सिद्धान्त निकलते हैं :—

अपने मूल रूपों में मो० तथा अ० फ० पाठ मात्र स्वतन्त्र हैं, इसलिए जहाँ पर इन दोनों में एक पाठ मिलता है, अन्य कोई पाठ मान्य नहीं होना चाहिए।

जहाँ पर मो० तथा अ० फ० भिन्न-भिन्न पाठ देते हों, और एक दूसरे से विकृत हुआ प्रमाणित होता हो, वहाँ वही पाठ स्वीकृत होना चाहिए जिससे अन्य पाठ विकृत हुआ प्रमाणित होता है।

जहाँ पर मो० तथा अ० फ० एक दूसरे से सर्वथा भिन्न पाठ देते हों, वहाँ पर समस्त प्रकार की सम्भावनाओं पर ध्यान रखते हुए दोनों में से जो पाठ मूल का लगता हो उसे स्वीकार करना चाहिए।

कहना नहीं होगा कि प्रस्तुत कार्य में इन सिद्धान्तों का पूर्ण रूप से पालन किया गया है। किंतु प्रतिलिपि-परंपरा में भाषा निरन्तर अधिकाधिक आधुनिक होती जाती है, केवल इसी बात को ध्यान में रखते हुए मो० तथा अ० फ० पाठों में जहाँ पर समान किन्तु अपेक्षाकृत बाद का रूप मिलता है, और धा० या किसी अन्य प्रति में प्राचीनतर रूप मिलता है, वहाँ पर अपवाद स्वरूप इस प्राचीनतर रूप को स्वीकार किया गया है।

—:#:—

५. पृथ्वीराज रासो के निर्धारित पाठ की छंद-सारिणी

संपादित	धा०	मो०	अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
१.१	२१	३०	१.साट० १	१. साट०१	१ १	१.८	१.५४
१.२	२४	२९	१.साट० २	१. साट०२	१.२	१.७	१.५३
१.३	२२	२७	१_त्रिरा० १	१. त्रिअ०	१.५	१.११	१.७०-७५
१.४	२	ख०	२. भुज० १	२. भुजं०	१.८	१.३	१.५.१०
१.५	२०	२५	२. दो० ९	२. दो० ९	१.१६/ २.१२४	१.१६	१.८१
१.६	२५	३१	२. साट० ३	२. साट०	४.१	३.१	३.१
२.१	३१	३८	६. पद्ध० १	खं०	२८.३	२८.५	४८.१९-३२
२.२	३२	३९	६. गाथा १	खं०	२८.५	२८.७	४८.९
२.३	३३-३४	४० ४१	६. पद्ध० २	ख०	२८.६	२८८	४८.४९-७४
२.४	३५	४२	६. रासा १	ख०	२८.९	२८.११,	४८.७९
२.५	३६/१	४३	६. पद्ध० ४/१	ख०	२८.११, १३,१५,१६	२८१३, १५	४८ ८१-८२, ८४ ८५,९१-९८
२.६	३६/२	४७	६. पद्ध० ४/२	ख०	२८.२६	२८.१७/ २८.२८	४८.९९-१००/ ४८.१२७
२.७	३७	४८	६. भुज० ५	ख०	२८.४२	२९.१	४८.२२५.२६७
२.८	३८	४९	६. दो० १	ख०	२८.४३	२९.२	४८.२७१
२.९	३९	५१	६. दो० ३	४.३	२८.४७	२९.६	४९.२२
२.१०	४०	५० ५२	६. पद्ध० ६	ख०, ४,४	२८.४५, ४८	२९.५, २९.७	४९.१२,२३, २६
२.११	४१	५३	६. दो० ४	५.२३	२८.४९	२९.८	५०.२७
२.१२	४२	५४	६. दो० ५	५.२५	२८.५०	२३.९	५०.२८
२.१३	४३	५७	६. नारा० ७	५.१६	२८.५३	२९.११	५०.१६-२०
२.१४	४४	५८	६. रासा २	५.१८	२८.५४	२९.१३	५०.२२
२.१५	४५	५९	६. रासा ३	५.२७	२८.५६	२९.१५	५०.३०
२.१६	४६	६०	६. गाथा २	५.३०	२८.५७	२९.१६	५०.३३

२.१७	४७	६१	६. शाट० १	५.३३	२८.५९	२९.१८	५०.३६
२.१८	४८	६२	६. शाट० २	५.३४	२८.६०	२९.१९	५०.३७
२.१९	४९	६३	६. अनु० २	५.३५	२८.६१	२९.२०	५०.३८
२.२०	५०	६४	६. साट० ३	५.४३	२८.६२	२९.२२	५०.४७
२.२१	५१	६५	६. दो० ७	५.३८	२८.६३	२९.२३	५०.४१
२.२२	५२	६६	६. दो० ८	—	२८ ६४	२९.२४	५०.४२
२.२३	—	—	६. दो० ९	५.४०	२८.६६	२९.२६	५०.४४
२.२४	५३	६७	६. साट० ४	५.४१	२८.६७	२९.२७	५०.४५
२.२५	५४	६८	६. अनु० ३	५.४५	२८.६८	२९.२८	५०.४९
२.२६	५५	६९	६' दो० ११	५.४८	२८.६९	२९.२१.	५०.५२
२.२७	५६	७०	६. दो० १४	५.५२	२८.७१	२९.३०	५०.५६
२.२८	५७	७१	६. अडि०	५.५५	२८.७१	२९.३१	५०.६६
३.१	५८'	७२	७. दो० १	५.१/ ८.१	२०.४०/ २०.७२अ	३०.४०	५०.१/ ५७.१२२,५७.३६
३.२	५९	७४	७. शाट० २	८.२आ	२९.२	३१.२	५७.५८
३.३	६०	७५	७. दो० २	८.३	२९.१८	३१.१६	५७.४५
३.४	६२	७७	७. कवि० २	८.५	२९.२६	३१.२४	५७.६२
३.५	६४	७८	७. गाथा १	८.६	२९.२९	३१.२७	५७.७०
३.६	६३	७९	७ साट० ३	८.७	२९.३०	३१.२८	५७.७१
३.७	६५	८०	७. रासा १	८.९	२९.३३	३१.३१	५७.७४
३.८	६६	८१	७. रासा२	८.११	२९.३३अ	३१.३३	५७.७९
३.९	६७	८२	७. दो० ५	८.१२	२९.३४	३१.३४	५७.८०
३.१०	६८	८३	७. दो० ११	८.१८	२९.४०अ	३१.४१	५७.८७
३.११	७०	८५	७. कवि० ३	८.२०	२९.४२	३१.४३	५७.९०
३.१२	७१	८६	७. गाथा२	८.२१	२९.४३	३१.४४	५७.९१
३.१३	७२	८७	७. दो० १२	८.२३	२९.४४अ/१	३१.४५/१	५७.१०२
३.१४	७३	८८	७. दो० १३	८.२५	२९.४४अ/२	३१.४५,२	५७.११४
३.१५	-७४	८९	७. दो० १४	८.२६	२९.४५	३१.४७	५७.१०१
३.१६	७५	९०	७. अडि० १	८.२७	२९.४६	३१.४८	५७.११८
३.१७	७६	९१	७. नारा० १	८.२८	२९.४६अ	३१.४९	५७.११९-१३४
३.१८	७७	९२	७. अडि० २	८.२९.१	२९.४७	३१.५०	५७.१३७
३.१९	७८	९३	७. अडि० ३	८.२९.२	२९.४९	३१.५२	५७.१५१ ५७.२११
३.२०	८३	९८	७. अडि० ४	८.३०	२९.५४	३१.५९	५७.२२४
३.२१	८४	९९	७. दा० १६	८.३४	२९.५५	३१.५८	५७.२२५
३.२२	८५	१००	७. दो० १७	८.३५	२९.५६	३१.५९	५७.२२७
३.२३	८६	१०१	७. दो० १८	८.३६	२९.५९	३१.६०	५७.२२८
३.२४	८७	१०२	७. दो० १९	८.३७	२९.५८	३१.६१	५७.२३०
३.२५	८८	१०३	७. दो० २०	८.३८	२९.५९	३१.६२	५७.२३१

३.२६	८९	१०४	७.दो० २१	८.३९	२९.६०	६१.६३	५७.२३३
३.२७	९०	१०५	७. कवि० ४	८.४१	२९.६२	६१.६५	५७.२३६
३.२८	९१	१०६	७. अडि० ५	८.४३	२९.६४	६१.६७	५७.२४०-२४८
३.२९	९२	१०७	७. वरि० ५	८.४४	२९.६५अ	३१.६८	५७.२४९
३.३०	९३	१०८	७.भुज० [ ]	८.४५	२९.६७	३१.७०	५७.२५९
३.३१	९४	१०९	७. कवि० ६	८.४७	२९.७३	३१.७६	५७ २६७
३.३२	९५	११०	७. कवि० ७	८.४८	२९.७४	३१.७७	५७.२६९
३.३३	९६	१११	७. कवि० ८	८.४९	२९.७५	३१.७८	५७.२७१
३.३४	९७	११२	७.गाथा० ६	८.५१	२९.७७	३१.८०	५७.२७३
३.३५	९८	११३	७. दो० २२	८.५२	२९.७८	३१.८१	५७.२७४
३.३६	९९	११४	७.कवि० ९	८.५३	२९.७९	३१ ८२	५७.२७५
३.३७	१००	११६	७.दो० २२	८.५५	२१.८१	३१.८४	५७.३०८
३.३८	१०१	११७	७.दो० २३	८.५६	२९.८२	३१.८५	५७.३०९
३.३९	१०२	११८	७.अडि० ६	८.५७	२९.८३	३१.८६/१	५७.३१०
३.४०	१०३	११५	७. दो० २४	८.५४	२९.८०	३१.८३	५७.३०७
३.४१	१०४	११९	७.अडि० ७	८.५८	२९.८४	३१.८६/२	५७.३११
३.४२	१०५	१२०	७. दो० २५	८.५९	२९.८५	३१.८७	५७.३१२
३.४३	१०६	१२१	७.रासा ४	८.६०	२९.८६	३१.८८	५७.३१३
४.१	११५	१३२	८.कवि० १	१०.३४	३१.४अ	३३.५	६१.२०५
४.२	११६	१३३	८. दो० ११	१०.६१	३१.२०	३३.१६	६१.१८१
४.३	११७	१३४	८. दो० १०	१०.६१	३१.२१	३३.१७	६१.१८२
४.४	११८	१३५	८. दो० ९	१०.६१	३१अ.१७	३३.१८	६१.१८३
४.५	११९	१३६	८. दो० १२	१०.१०५	३१अ.२०	३३.२१	६१.२७२
४.६	१२०	१३७	—	—	३१अ.२१ क	३३.२२	६१.२७५
४.७	१२१	१३८	८. पद्ध० २	१०.११९	३१अ.२३	३३.२४	६१.२९०-२९८
४.८	१२२	१३९	८.दो० १३	१०.१२२	३१अ.२५	३३.२६	६१.३०१
४.९	१२३	१४०	८. दो० १४	१०.१२३	३१अ.२६	३३.२७	६१.३०२
४.१०	१२४	१४१	८. भुजं० ३	१०.१२६	३१अ.२७	३३.२८	६१.३०५-३१०
४.११	-१२७	१४३	८. त्रिभं० ५	१०.१३६	३१अ.२८	३३.३५	६१.३२६-३२९
४.१२	१२८	१४५	८. साट० १	१०.१३४	३१अ.४१	३३.३८	६१.३२४
४.१३	-१२९	१४६	८.रासा१	१०.१३९	३१अ.४२	३३.३९	६१.३२५
४.१४	१३०	१४७	८.नारा० [ ]	१०.१४१	३१अ.४४	३३.४०	६१.३३९-३४१
४.१५	१३१	१४८	८. दो० १८	१०.१२५अ	३१अ.४६	३३.४२	६१.३४९
४.१६	१३२	१४९	८. दो० १९	१०.१२१ अ	३१ अ. ४७	३३.४३	६१.३५०
४.१७	१३३	१५०	८. दो० २०	१०.१२८अ	३१अ.४९	३३.४५	६१.३५२
४.१८	१३४	१५१	८. दो० २१	१०.१२९अ	३१अ.५०	३३.४६	६१.३५३
४.१९	१३५	१५२	८. दो० २२	१०.१३१अ	३१अ.५२	३३.४८	६१.३५५
४.२०	१३६	१५३	८. भुजं० १७	१०.१३३अ	३१अ.५५	३३.५०	६१.३५८-३६९
४.२१	१३७	१५४	८. दो० २३	—	३१अ.५७	३३.५२	६१.४४६

४.२२	१३८	१५५	८. भुजं०८	१०.१५२	३१अ.५८	३३ ५३	६१.३८८ ३९४
४.२३	१३९	१५७	८. रुजं०९	१०.१६९	३१अ.६५	३३.६०	६१.४२५-४३०
४.२४	१४१	१६०	८दो०२५	१०.१७२	३१अ.६८	३३.६२	६१.४३५
४.२५	१४२	१६१	८. मोती०[ ]	१०.१७३	३१अ.६९	३३.६५	६१.४३६-४४५
५.१	१४६	१६५	९.मुडि०१	१०.१९२	३२.४आ	३३.६८	६१.४६४
५.२	१४७	१६८	९. दो०६	१०.२०६	३२ ६अ	३३.७३	६१.४७८
५.३	१४८	१६९	९. रड्डा १	१०.२०९	३२.९-१०	३३.७४	६१.४८१
५.४	१४९	१७२	९. मुडि०२	१०.२१८	३२.१३	३३.७७	६१.४९०
५.५	१५२	१७३	९. अडि०१	१०.२२१	३२.१५	३३.७९/१	६१ ४९७
५.६	१५३	१७४	९मुडि०[५]/१	१०.२२२	३२.१६	३३.७९,२	६१.४९८
५.७	१५१	१७५	९. साट०१	१०.२२८	३२.२२	३३.८०	६१.५०४
५ ८	१५४	१७६	९.मुडि०[५]/२	१० २२९	३२ २४	३३.८१	६१.५०५
५.९	१५५	१७८	९ मुडि०४	१०.२३४/ १०.२३७	३२.२५	३६ ८२,८५	६१.५१०, ६१.५१३
५.१०	१५८	१८०	९. साट०२	१० २४१	३२ ३०	३३.८८	६१.५२४
५.११	१५९	१८१	९.दो०२८	१० २४४	३२ ३१	३२ ८९	६१.५२७
५.१२	१६०	१८२	९ दो०११	१० २४५	३२.३२	३३.९०	६१.५४९
५.१३	१६१	१८३	९. भुज०३	१० २६७	३२.३३	३३ ९४	६१.५७१-७७
५.१४	१६२	१८४	१. दो०१२	१०.२६८	३२ ४२	३३.९५	६१.५७८
५.१५	१६३	१८५	९. दो०१३	१०.२७७	३२.४४	३३.१००	६१.५८८
५.१६	१६४	१८६	९. दो०१४	१०,३१२	३२.७६	३३.१३२	६१.६४८
५.१७	१६५	१८७	९. दो०१५	१०.३१४	३२.७७	३३ १३३	६१.६५०
५.१८	१६६	१८८	९. दो०१६	१०.३१७	३२.७९	३३.१३५	६१.६५३
५.१९	१६७	१८९	९. घवि०२	१०.३१८	३२.८०	३३.१३६	६१.६५४
५.२०	१६८	१९०	९. दो०१७	१०.३२१	३२.८२	३३.१३८	६१.६५७
५.२१	१६९	१९२	९. दो०२३	१०.३३१	३२.८३	३३.१३९	६१.६८७
५.२२	१७०	१९३	—	१०.३३४	३२ ८५	३३.१४१	६१.६९०
५.२३	१७१	१९४	९. दो०२४	१०.३३५	३२.८६	३३.१४२	६१.६९१
५.२४	१७२	१९५	९. पवा०[ ]	१०.३३६	३२.८७	३३.१४३	६१.६९२-७१२
५.२५	१७३	१९६	९. अडि० ३	१०.३३८	३२.८८	३३ १४४	६१.७१४
५.२६	१७४	१९७	९. दो० २५	१०.३४१	३२.९१	३३.१४६	६१ ७१७
५.२७	१७५	१९८	९. दो० २६	१०.३४६	३२.९०	—	६१.७२२
५.२८	१७६	१९९	९. दो० २७	१०.३४७	३२.९२	३३.१४७	६१.७२३
५.२९	१७७	२००	९. दो० २९	१०.३४८	३२.९३	३३.१४८	६१.७२४
५.३०	१७८	२०१	९. दो० ३०	१०.३४९	३२.९४	३३.१४९	६१.७२५
५.३१	१७९	२०२	९. दो० ३१	१०.३८२	३२.११७	३३.१६९	६१.७९०
५.३२	१८०	२०४	९. दो० ३२	१०.३९७	३२.१२७	३३.१७७	६१.८२४
५.३३	१८१	२०६	९. दो० ३६	१०.४०४	३२.१३०	३३.१८०	६१.८३२

५.३४	१८२	२०७	[९. दो० ३७]*	१०.४०६	३२.१३१	३३.१८१	६१.८३४
५.३५	१८३	२०८	[९. दो० ३८]*	१०.४०७	३२.१३२	३३.१८२	६१.८३५
५.३६	१८३ ग	२०९	९. [पाठ० ३]	१०.४०८	३२.१३३	३३.१८३	६१.८४४
५.३७	१८४	२१०	९. दो० ३९	१०.४०९	३२.१३४	३३.१८४	६१.८४५
५.३८	१८५	२११	९. नारा० ६	१०.४१२	३२.१३५	३३.१८५	६१.८४८-८५८
५.३९	१८६	२१२	९. दो० ४०	१०.४१३	३२.१३६	३३.१८६	६१.८५९
५.४०	१८७	२०५	९. पाठ० [४]	१०.४१५	३२.१३७	३३.१८७	६१.८६१
५.४१	१८८	२१३	९. पाठ० [५]	१०.४१६	३२.१३८	३३.१८८	६१.८६२
५.४२	१८९	२१४	९. दो० ४१	१०.५१९	३२ १३९	३३.१८९	६१.८६५
५.४३	१९०	२१५	९. दो० ४२	१०.४३०	३२.१४०	३३.१९०	६१.८८७
५.४४	१९१	२१६	९ दो० ४३	१०.४३४	३२ १४१	३३.१९१	६१.९००
५.४५	१९२	२१७	९. कवि० ४	१०.४४२	३२.१४२	३३.१९२	६१.९१३
५.४६	१९३	२१८	९. दो० [ ]	१० ४४८ १	३२.१४८	३३.१९३	६१.९१९/१,
				१०.४४५/२			६१.९१६/२
५.४७	१९५	२२२	९. दो० ४५	१०.४५६	३२.१५३	३३.१९९	६१.९२७
५.४८	१९६	२२३	९. कवि० ५	१०.४६४ अ	३२.१५९	३३ २००	६१.९७५
६.१	१९७	२२६	९. दो० ४६	११.३३	३३.१०	३३.२०७	६१.१०४७
६.२	१९८	२२७	९. दो० ४७	११.३५	३३.११	३३.२०८	६१.१०५०
६.३	१९९	२२८	९. दो० ४८	११.३६	३३.१२	३३.२०९	६१.१०५१
६.४	२००	२३१	९. दो० ५०	११.५६	३३.२५	३३.२२२	६१.१०७८
६.५	२०१	२३५	९. भुज० [ ]	११.५७	३३.२६	३३.२२३	६१.१०७९-१०८०
६.६	२०२	२३७	९. दो० ५३	११.८६	३३.२८	३३.२५	६१.११३६
६.७	२०३	२३८	९. रासा [ ]×	११.९०	३३.२९	३३.२६	६१.११४४
६.८	२०४	२३९	९. दो० ५४	११.९३	३३.३१	३३.२७	६१ ११४७
६.९	२०५	२४०	९. दो० ५५	११.९४	३३.३२	३३.२९	६१.११४८
६.१०	२०६	२४१	९. दो० ५६	११.९०क	३३.३३	३३.२३०	६१.११५८
६ ११	२०७	२४२	९. दो० ५७	११.९१क/१	३३.३९अ	३३.२३७	६१.११५९/१
६.१२	२०९	२४३	९. मुद्दि० ११	११.९६क	३१.४३	३३.२४१	६१.११६८
६.१३	२१०	२४४	९. रासा० २	११.९८क	३३.४५	३३.२४३	६१.११७१
६.१४	२११	२४५	९. रासा० ३	११.९४ख	३३.४७	३३.२४५	६१.११७४
६.१५	२१२	२४६	९. नारा० ८	११.९७ख	३३.५०	३३.२४८	६१.११७७-११८५
६.१६	२१३	२४७	९. दो० ५९	११.११३	३३.५६	३३.२५०	६१.१२०६
६.१७	२१४	२४८	९. गाथा १	११.११५	३३.५८	३३.२५१	६१.१२०८
६.१८	२१५	२४९	९. दो० ६०	११.१४४	३३.६१	३३ २५४	६१.१२४३
६.१९	२१६	२५०	९. दो० ६१	११.१४५	३३.६२	३३.२५५	६१.१२४४
६.२०	२१७	२५३	९. दो० ६३	११.१४७	३३.६४	३३.२५७	६१.१२४६
६.२१	२१८	२५४	९. दो० ६४	११.१४९	३३.६५	३३.२५८	६१.१२४८

* ये छन्द अ० फ० में नहीं है किन्तु उसी कुल की उस प्रति में है जो नागचन्द के लिए लिखी गई थी।

× यह छन्द अ० में नहीं है, किन्तु ना० में बाद वाले दोहे के पूर्व 'रासा' शब्द है; फ० में यह छन्द है।

६.२२	२१९	२५५	९. दो० ६५	११.१५०	३३.६६	३३.२५९	६१.१२४९
६.२३	२२०-२२३	२५६-२५९	९. चौ० १ ३	११.१५३,	३३.७१	३३.२६१	६१.१२५३,
				१५४,१५६	७४-	२६२,२६४	१२५४, १२५६
६.२४	२२५	२६०	९. दो० ६६	११.१६०	३३.७६	३३.२६५	६१.१२६०
६.२५	२२६	२ १	९. मुद्दि० १३	११.१६२	३३.७८	३३.२६७	६१.१२६२
६.२६	२२७	२६२	९. अडि० १४	११.१६४	३३.८०	३३.२६९	६१.१२६४
६.२७	२२८	२६३	९. मुडि० ४	११.१६३	३३.७९	३३.२६८	६१.१२६३
६.२८	२२९	२६४	९. मुडि० १५	११.१६७	३३.८१	३३.२७०	६१.१२६७
६ २९	२३०	२६५	९. अनु० ४	११.१७२	३३.८७	३३.२७५	६१.१२७२
६.३०	२३१	२६६	९. दो० ७०	११.१७३	३३.८८	३३.२७६	६१.१२७३
६.३१	२३२	२६८	—	११.१७८	३३.९१	३३.२७८	६१.१२७८
६.३२	२३३	२६९	९. गाथा ५	११.१७९	३३.९२	३३.२७९	६१.१२७९
६.३३	२३४	२७३	९. कवि० १७	११.१९५	३३.१०२	३३.२८४	६१.१२९५
- ६.३४	२३५	२७४	९. रासा ४	११.२२०	३३.१०४	३३.२८६	६१.१३२२
७.१	२३६	२७५	९. दो० ८१	१२.१३	३३.१०६	३३.२९५	६१.१३४०
७.२	२३७	२८१	९. गाथा ७	१२.१८	३४.९	३३.२९९	६१.१३४५
७.३	२३८	२८२	९. दो० ७८	१२.१९	३४.१०	३३.३०० .	६१.१३४६
७.४	२३९	३१४/४५२	१५ गम० [ ]	—	४३.९५	—	६६.८७६-८८५
७.५	२४०	२८३	१२ कवि० १९	१२.२१८	३३.१०७/	३३.२८८	६१.१७०६
				—	३५.३		
७.६	२४१	२८४	१०.गुजं० १	१२.२०,२६	३४.११,	३३.३०१,	६१.१३४७ १३५६,
					१३	३३.३०३	६१.१३६२-१३६६
७.७	२४२	२८५	९. दो० ७९	१२.२७	३४.१५	३३.३०४	६१.१३६७
७.८	२४४	२८६	९. दो० ८०	१२.२८	३४.१६	३३.३०५	६१.१३६८
७.९	२४५	२८७	१०. दो० २	१२.२८अ	३४.१७	३३.३०६	६१.१३६९
७.१०	२४६	२८८	१०. मुज० २	१२.३०	३४.१९	३३.३०८	६१.१३७१-७७
७.११	२४७	२८९	१०. दो० ३	१२.३१	३४.२०	३३.३०९	६१.१३७८
७.१२	२४८	२९०	१०. प्रबा० [ ]	१२.३२	३४.२१	३३.३१०	६१.१३७९-१३८५
७.१३	२४९	२९१	१०. दो० ४	१२.४१	३४.२३	३३.३१२	६१.१४०१
७.१४	२५०	२९२	१०. [मुज०]	१२.५३	३४.३२	३३.३२१	६१.१४१३
७.१५	२५१	२९३	१०. रसा० ४	१२.५४	३४.३३	३३.३२२	६१.१४१४-१४१९
७.१६	२५२	२९४	१०. अद्दि० १	१२.५५/१	३४.३४/१	३३.३२३/१	६१.१४२०
७.१७	२५३	२९५	१०. मुज० ५	१२.५५/२,	३४.३४/२,	३३.३२३/२	६१.१४२१ १४२२,
				१२.१०६	३४.३६		६१.१५११-१५२१
७.१८	२५४	२९६	१०. गाथा १	१२.११२	३४.५०	३३.३३१	६१.१५३१
७.१९	२५५	२९७	१०. दो० १०	१२.११५	३४.५१	३३.३४०	६१.१५३४
७.२०	२५६	२९८	१०. पवि० ५	१२.११४	३४.५३	३३.३४२	६१.१५३३
७.२१	२५७	२९९	१०. कवि० ७	१२.१२०	३४.५५	३३.३४४	६१.१५४३
७.२२	२५८	३००	१०. रासा १	१२.१२५	३४.५९	३३.३४८	६१.१५४८

७.२३	२५९	३०१	१०. गाथा १	१२.२२६	३४.६०	३३.३४९	६१.१५४९
७.२४	२६०	३०२	१०. अनु० १	१२.१२७	३४.६२	३३.३५०	६१.१५५०
७.२५	२८७	३१७	१०. कवि० १	१२.२३०	३५.६	३३.३८९	६१.१७३३
७.२६	२८८	३१८	१०. गाथा १	१२ २२०	३५.७	३३.३९०	६१.१७०८
७.२७	२८९	३१९	११. कवि० २	१२.२२४	३५.८	३३.३९१	६१.१७१८
७.२८	२९०	३२०	११. कवि० ३	१२.२२५	३५.९	३३.३९२,	६१.१७१९
७.२९	२९३	३२३	११. दो० ३	१२.२४१	३५.१४	३३.३९७	६१.१७७०
७.३०	२९४	३२६	११. कवि० १२	१२.३११	३५.२८	३३.४०९	६१.१९२६
७.३१	२९५	३२७	११. भुजं० ६	१२.३२०	३५.२४	३३.४१४अ	६१.१९२७ १९३२
८.१	२६१	३०५	११ कवि० २२	१२.१३७	३४.६६	३३.३५४	६१ १५६१
८.२	२६२	३०६ •	११. कवि० २३	१२.१४०	३४.६७	३३.३५५	६१.१५६४
८.३	२६३	३०७	११. कवि० २४	१२.१४३	३४.७०	३३.३५५अ	६१.१५६७
८.४	२६४	३०८	११. कवि० २५	१२.१४८	३४.७४	३३.३५९	६१ १५७२
८.५	२६५	३०९	११. कवि० २६	१२.१५०	३४.७५	३३.३६०	६१.१५७४
८.६	२६६	३१०	११. कवि०२७	१२.१५१	३४.७६	३३.३६१	६१.१५७५
८.७	२६७	३११	११. गाथा २	१२.१६४	३४ ७७	३३.३६२	६१.१५८८
८.८	२६८	३१२	११. गाथा ३	१२.१८७	३४.९०	३३.३७१	६१.१६२८
८.९	२६९	३१३, ३१५	११. मोट० ९	१२.१९५	३४.९७	३३.३७८	६१.१६४० —१६४९
८.१०	२७०	३१६, ३३१	१२. छंद १	१२.२१६, १२.४५३/१	३५.४, ३६.१२/१	३३.३८७, ३३.४६४	६१.१६९५-१७४२, ६१.२१४३
८.११	२७१	३३२	१२. कवि० १	१२.४५८	३६.१३	३३.४६५	६१.२१६१
८.१२	२७२	३३३	१२. दो० ६	१२.४५९	३६.१५	३३.४६७	६१.२१६२
८.१३	२७३	३३४	१२. दो० ७	१२.४६०	३६.१६	३३.४६८	६१.२१६३
८.१४	२७४	३३५	१२. कवि० ३	१२.४६० अ	३६.१७	३३.४६९	६१.२१६४
८.१५	२७५	३३६	१२. दो० ८	१२.४६५	३६.१८	३३.४७०	६१.२१७८
८.१६	२७६	३३७	१२. कवि० ४	१२.४७४	३६.१९	३३.४७१	६१.२२०८
८.१७	२७७	३३९	१२. दो० १०	१२.४७३	३६.२२	३३.४७४	६१.२२०७
८.१८	२७८	३४०	१२. दो० ११	१२.४७८	३६.२३	३३.४७५	६१.२२१२
८.१९	२७९	३४१	१२. कवि० ५	१२.४७९	३६.२४	३३.४७६	६१.२२१३
८.२०	२८०	३४२	१२. दो० १२	—	३६.२७	३३.४७७	६१.२२१७
८.२१	२८१	३४३	१२. कवि० ६	१२.४९८	३६.२८ अ	३३.४७९	६१.२२४७
८.२२	२८२	३४४	१२.दो० [१३]	१२.५१३	३६.२९	३३.४८०	६१.२२८३
८.२३	—	३४५	१२. दो० १४	१२.५१४	३६.३०	३३.४८१	६१.२२८४
८.२४	२८३	३४६	१२. कवि० ७	१२.५१७	३६.३२	३३.४८२	६१.२२९७
८.२५	२८४	३४७	१२. दो० १५	१२.५१९	३६.३३	३३.४८३	६१.२२९९
८.२६	२८५	३४८	१२. कवि० ८	१२.५२५	३६.३४	३३.४८४	६१.२३१२
८.२७	२८६	३४९	१२. दो० १६	१२.५२७	३६ ३५	३३ ४८५	६१.२३१४
८।२८	२९७	३५०	१२. कवि० ९	१२.५३३ अ	३६.३६	३३.४८६	६१.२३४५

८.२९	२९८	३५१	१२. दो० १७	१२.५३४	३६.३७	३३.४८७	६१.२३४६
८.३०	२९९	३५२	१२.कवि० १०	१२.५४२	३६.३९	३३.४८९	६१.२३।६२
८.३१	३०१	३५३	१२. दो० १९	१२.५४३	३६.४०	३३.४९०	६१.२३६३
८.३२	३००	३५४	१२.कवि० ११	१२.५४६	३६.४१	३३.४९१	६१.२३७२
८.३३	३०२	३५५	१२. दो० २०	१५.५५०	३६.४२	३३.४९२	६१.२३७६
८.३४	३०३	३५६	१२.कवि० १२	१२.५५७	३६.४३	३३.४९३	६१.२३८३
८ ३५	३०४	३६३	१२.कवि०२३	१२.५६५	३६.४५	३३.४९५	६१.२४०३
८.३६	२९६	३५७	१२. दो० २८	१२.४१६	३७.२०	३३.४५५	६१.२०९२
९.१	३०५	३६५	१३.अडि० १	१२ ६०५/२	३८.७	३३.५२५	६१.२४८७
९.२	३०६	३६६	१३.दो० ५	१२.६१८	३८.१०	३३.५२७	६१.२४९२
९ ३	३०७	३६९	१३ दो० ६	१२.६११	३८.११	३३.५२८	६१.२४९३
९.४	३०९	३७१	१३ दो० ७	१२.६२५	३८.१३	३३.५३०	६१.२५४०
९.५	३१०	३७२	१३.[राधा १]	१२.६२७	३८.१४/१	३३.५३१ १	६१.२५४२
९.६	३११	३७३	१३.[राधा २]	१२.६२८	३८.१४/२	३३.५३१,२	६१.२५४३
९.७	३१२	३७४	१३.[राधा ३]	१२.६२९	३८.१४/३	३३.५३१/३	६१.२५४४
९.८	३१३	३७५	१३ [राधा ४]	९.२४, १२.६३०	३८.१४/४	३३.५३१/४	६१.२५४५
९.९	१०७	१२३	१३. साट० २	९ २०	२९.८६ आ/ ४१.१०	३४.१७८	६१.९
९.१०	१०८	१२४	१३. साट० ३	९.१	३९.२	३४.१	६१.१८
९.११	१०९	१२५	१३. साट० ४	९.५	३९.६	३४.५ अ	६१.२७
९.१२	११०	१२६	१३. साट० ५	९.१०	३९.१३	३४.१६८	६१.३९
९.१३	१११	१२७	१३. साट० ६	९.१३	४१.३	३४.१७१	६१.४९
९.१४	११२	१२८	१३. साट० ७	९.१६*	४१.६	३४.१७४	६१.६२
१०.१	३१४	३८६	१४. मुडि० १		४२.४१	३६.३५	६६.१९२
१०.२	३१५	३८७	१४. दो० २		४२.४२	३६.३६	६६.१९३
१०.३	३१६	३८८	१४. मुडि० २		४२.४३	३६.३७	६६.१९४
१०.४	३१७	३८९	१४. दो० ३		४२.४४	३६.३८	६६.१९५
१०.५	३१८	३९०	१४. अडि० १		४२.४५	३६.३९	६६.१९६
१०.६	३१९	३९१	१४. मुडि० ३		४२.४६	३६.४०	६६.१९७
१०.७	३२०	३९२	१४. अडि० २		४२.४७	३६.४३	६६.१९८
१०.८	३२१	३९३	१४. दो० ४		४२.४८	३६.४४	६६.१९९
१०.९	३२२	३९४	१४. दो० ५		४२.४९	३६.४५	६६.२००
१०.१०	३२३	३९५	१४. गाथा ३		४२.५०	३६.४६	६६.२०१
१०.११	३२४	३९६	१४. गीता० १		४२.५१	—	६६.२०३-२५
१०.१२	३२५	३९७	१४. दो० ६		४२.५२	३६.४७	६६.२१७
१०.१३	३२६	३९८	१४. दो० ७		४२.५३	३६.४८	६६.२१८

* स० प्रति यहीं पर समाप्त हो जाती है।

१०.१४	३२७	३९९	१४.दो०८	४२.५४	३६ ४३	६६.२१९
१०.१५	३२८	४००	१४.राधा१	४२ ५९	३६.५५	६६ २२७
१०.१६	३२९	४०१	१४.दो०९	४२.६०	३६.५६	६६.२२८
१०.१७	३३०	४०२	१४.राधा २	४२.६१	३६.५७	६६.२३२
१०.१८	३३१	४०३	१४.दो०१०	४२.६२	३६.५८	६६.२३३
१०.१९	३३२	४०५	१४.दो०११	४२.६४	३६.५९	६६.२३६
१०.२०	३३३	४०६	१४.दो०१२	४२.६५	३६.६०	६६.२३७
१०.२१	३३४	४०७	१४ दो०१४	४२.६९	३६.६४	६६ २४१
१०.२२	३३५	४०८	१४.दो०१५	४२.७०	३६ ६५	६६.२४२
१०.२३	३३६	४०९	१४.कवि०२	४२.७१	३६ ६६	६६.२४४
१०.२४	३३७	४१०	१४.दो०१६	४२.७२	३६ ६७	६६.२४५
१०.२५	३३८	४११	१४.कवि०३	४२.७६	३६.७०	६६.२४९
१०.२६	३३९	४१२	१४.दो०१७	४२.७३	३६.६८	६६ २४७
१० २७	३४०	४१४	१४.दो०१९	४२.७८	३६ ७२	६६.२५१
१०.२८	३४१	४१६	१४.कवि०४	४२.७९	३६ ७३	६६ २५२
१०.२९	३४२	४१७	१४.कवि०५	४२ ८०	३६ ७५	६६ ३५४
११.१	३४६	४३५	१५.दो०१७	४३.४७	३६.२३८	६६.७६८
११.२	३४७	४३६	१५ दो०१८	४३.४८	३६ २३९	६६.७६९
११.३	३४८	४३७	१५.दो०१९	४३.४९	३६ २४०	६६ ७७०
११.४	३४९	४३८	१५.दो०२०	४३.५०	३६.२४१	*
११.५	३५०	४३९	१५ दो०२१	४३.५१	३६.२४२	६६.७७१
११.६	३५१	४४१	१५.दो०२२	४३ ५२	३६.२४३	६६.७७४
११.७	३५२	४४२	१५.कवि०१५	४३.५४	३६.२४४	६६.७७५
११.८	३५३	४४३	१५.कवि०१६	४३ ५५अ	३६.२४५	६६ २४८
११.९	३५४	४४५	१५.दो०१५	४३.७७	—	६६.८२८
११.१०	३५५	४४६, ४५०	१५.छंद०[ ]	४३.७९	—	६६.८३५
११ ११	३५८	४५२	१५.दो०२५	४३ १०४	३६.२९०	६६.९३०
११ १२	३६२ ३६२	४५४	१६.भुज०१	४३.१०६, ४३.१११	३६ २९४	६६.९३२ ९३४, ६६ ९३८ ९४५
११.१३	३६३	४५५	१८.दो०६	४५.७	३६.४१०	६६ १५२४
११.१४	३६४	४६५	१८.दो०७	४५.९	३६ ४१३	६६.१५२७
११.१५	३६५	४६६	१८.दो०८	४५.१०	३६.४१४	६६.१५२८
११.१६	३६६	४६७	१८.दो०९	४५.११	३६.४१५	६६.१५२९
११.१७	३६७	४६८	१८.अनु०१	४५.१२	३६.४१६	६६.१५३०
११.१८	३६८	४६९	१८.कवि०२४	४५.४७	३६.४५१	६६.१६१०
१२.१	३६९	४७०	१८ कवि०२७	४५.५१	३६ ४५५×	६६.१६२६

* यह छन्द स में नहीं है किंतु या० में ६२.४१० है।

× द० प्रति खंड १६ पर समाप्त हो जाती है। खंड १७ के स्थल-निर्देश टॉड १० के अनुसार है।

		४७३	१८. दे० १४	४६.९	३७.१५	६७.१९
१२.२	३७०	४७४	१९. दो० २	४६.१७	३७.२२	६७.९३
१२.३	३७१	४७५	१९ दो० ३	४६.१६	३७.२३	६७.७६
१२.४	३७२	४७६	१९. दो० ४	४६.२१	३७.३४	६७.८९/९५
१२.५	३७३	४८४	१९. दो० १२	४६.३८	३७.५८	६७.१४१
१२.६	३७४	४८५	१९. दो० १३	४६.३९	३७.५९	६७.१४३
१२.७	३७५	४८६	१९. वथू० १	४६.४१	३७.६६	६७.१७३
१०.८	३७६	४८७	१९. वथू० २	४६.४२	३७.६७	६७.१७४
१२.९	३७७	४८८	१९. दो० १४	४६.४४	३७.७४	६७.१८२
१२.१०	३७८	४८९	१९. दो० १५	४६.४५	३७.७५	६७.१८७
१२.११	३७९	४९०	१९. भुजं० ४	४६.४७	३७.७६-७९	६७.१८९-१९६
१२.१२	३८०	४९१	१९. दो० १६	४६.४८	३७.८०	६७.१९८
१२.१३	३८१	४९२	१९. पद्ध० ५	४६.४९	३७.८१ ८८	६७.२०२-२१९
१२.१४	३८२	४९३	१९. दो० १७	४६.५१	३७.९०	६७.२२१
१२.१५	३८३	४९४	१९ पद्ध० [ ]	४६.५३	३७.९१	६७.२२४-३६
१२.१६	३८४	४९६	१९. दो० [१८]	४६.७२	३७.११४	६७.२३९
१२.१७	३८५	५००	१९. दो० १९	४६.७७	३७.१२७	६७.२४१
१२.१८	३८६	५०१	१९. दो० [ ]	४६.७८	३७.१२८	६७.२९५
१२.१९	३८७	५०२	१९. पद्ध० ९	४६.८०	३७.१२७	६७.२९९
१२.२०	३८८	५०३	१९. दो० २२	४६.८३	३७.१३९	६७.३०७
१२.२१	३८९	५०४	१९. दो० ३	४६.८१	३७.१४०	६७.३०८
१२.२२	३९१	५०७	१९. दो० २४	४६.९१	३७.१४२	६७.३१९
१२.२३	३९२	५१०	१९. पद्ध० १०	५६.९७	३७.१५७-१६६	६७.३३२-३४१
१२.२४	३९३	५११	१९. दो० २५	४६.१०५	३७.१६७	६७.३५७
१२.२५	३९४	५१२	१९. दो० २६	४६.१०६	३७.१६८	६७.३६४
१२.२६	३९५	५१३	१९. दो० २७	४६.१०७	३७.१८२	६७.३६५
१२.२७	३९८	५१४	१९. दो० २९	४६.१०९		६७.३६६
१२.२८	३९८	५१५	१९. दो० ३०	४६.११०/	३७.१८४	६७.३६७/
				४६.१११		६७.३६८
१२.२९	३९९	५१६	१९. त्रोट० ११	४६.११२	३७.१८५	६७.३७०
१२.३०	४००	५१७	१९. दो० ३१	४६.११४	३७.१८६	६७.३७१
१२.३१	४०१	५१८	१९. दो० ३२	४६.११५	३७.१८७	६७.३७२
१२.३२	४०२	५२१	१९. पद्ध० १२	४६.११६		६७.३७७
१२.३३	४०३,	५२१,५२३	१९. पद्ध० १४/४	४६.१२७,	३७.१९२-१९४	६७.३९१ ३९५,
	४०५	५२६,५२९		४६.१३१	३७.२०६	६७.४०२
१२.३४	४०७	५३२	१९. दो० ३४	४६.१३५	३७.२१०	६७.४०८
१२.३५	४०६	५३३	१९. कवि० १	४६.१३७अ	३७.२५२	६७.४०३
१२.३६	४०८	५२५	१९. दो० ३५	४६.१२८	३७.२०१	६७.३९६

१२.३७	४१०	५२७	१९. दो० २६	४६.१३२	३७.२०७	६७.४०५
१२.३८	४०९	५३४	१९. कवि० ३	४६.१३८	३७.२१९	६७.४११
१२.३९	४११	५२८	१९. [चउ०]१	४६ १३३	३७.२०८	६७.४०६
१२.४०	४१२	५३७	१९. कवि० ४	४६.१४५	३७.२४४	६७.४३५
१२.४१	४१३	५३८	१९. कवि० ५	४६.१४६	३७.२४५	६७.४३६
१२.४२	४१५	५४२	१९. कवि० ६	४६.१५०	३७ २४८	६७.४५५
१२.४३	४१४	५३९	१९. दो० ३८	४६.१४७	३७.२२५	६७.५३८
१२.४४	४१६	५४३	१९. दो० ३९	४६.१६५	—	६७.५१४
१२.४५	४१७	५४४	१९. कवि० ७	४६.१६७	३७.२५०	६७.५१५
१२.४६	४१८	५४८	१९. कवि० ९	४६.१७१	३७.२५३	६७.५२४
१२.४७	४१९	५३५	१९. दो० ४०	४६.१६४	३७.२२२	६७.४८८
१२.४८	४२०	५५१	१९. कवि० १०	४६.१७४	३७.२७९	६७.५४९
१२.४९	४२२	५५२	१९. कवि० १२	४६ १७६	३७.२८३	६७.५५६

६. पृथ्वीराज रासो
का
कथा-सार

नीचे रचना के प्रस्तुत संस्करण की कथा का सार दिया जा रहा है। यह सार जान-बूझ कर कुछ विस्तारों के साथ दिया जा रहा है, जो कि सामान्यतः छोड़े जा सकते थे। ऐसा इसलिए किया जा रहा है कि रचना की कथा के समस्त तत्व पाठक की दृष्टि में एक-साथ आ सकें और इस सार को देखकर ही वह न केवल प्रबन्ध की दृष्टि से रचना के सम्बन्ध में धारणा बना सके, वरन् उसके ऐतिहासिक, अर्द्ध ऐतिहासिक और इतर तत्वों के सम्बन्ध में भी पूर्ण रूप से अवगत हो सके। इसलिए आशा है कि यह विस्तार रोचक और उपयोगी सिद्ध होगा। विभिन्न सर्गों का सार देते हुए नीचे कोष्ठकों में दी हुई संख्याएँ उनके छन्दों की हैं।

१. मंगलाचरण और कथा की भूमिका

गणेश (१) और सरस्वती (२) की वन्दना करने के अनन्तर शिव को नमस्कार करके (३) अपने पूर्व के कवियों को 'पृथ्वीराजरासो' के कवि ने स्मरण किया है, और ये हैं शिव, यम, व्यास, शुकदेव, श्रीहर्ष, कालिदास तथा दण्डी (४); छन्द-प्रबन्ध के प्रसंग में उसने पिंगल[1], [के छन्द-सूत्र] भरत [के नाट्य सूत्र] तथा महाभारत को भी [पीछे ?] छोड़ने का संकल्प किया है (५) और इसके अनन्तर उसने कथारंभ किया है।

पृथ्वीराज का पूर्व-परिचय देते हुए उसने कहा है कि उसको कपिल (धूल-धूसरित) केलि अजमेर में हुई थी, रक्त (राग पूर्ण) जीवन के क्षण साँभर में हुए थे, वह सोमेश्वर का पुत्र और यहिला वन का निवासी था और दिल्लीपुर में आश्रित होने के लिए ही मानो वह विधाता द्वारा निर्मित हुआ था (६)।

२. जयचन्द का राजसूय और संयोगिता का प्रेमानुष्ठान

इसी समय जयचन्द कन्नौज का शासक था जो धार्मिक था तथा हय-गजादि से सम्पन्न था; उसने कीर्ति-वर्धन के लिए राजसूय यज्ञ करने की ठानी; उसने पृथ्वीतल के अनेक राजाओं को जीत लिया (१)। उसने पृथ्वीराज के पास दूत भेजे कि वह भी उसके राजसूय यज्ञ में सहयोग करे; पृथ्वीराज की सभा में उसके इन दूतों ने जयचन्द का सन्देश सुनाया; पृथ्वीराज चुप रहा किन्तु उसके एक गुरुजन गोविन्दराज ने जयचन्द के इस प्रस्ताव का विरोध किया; यह गोविन्दराज यमुना तटवर्ती [कुरु] जांगल का निवासी था, उसने कहा कि वह तो जरासंध के वंश के उस पृथ्वीराज को ही

[1] यह सम्भव नहीं है कि कवि का 'पिंगल' से तात्पर्य 'प्राकृत पैंगल' से हो, भरत के भी पूर्व पिंगल का नाम लेने से उसका तात्पर्य उन छन्द-सूत्रों के रचयिता से ही ज्ञात होता है जो पिंगल के नाम से प्रसिद्ध रहे हैं।

राजा मानता था जिसने तीन बार शहाबुद्दीन को बन्दी किया था और जिसने भीमसेन (भीम चौलुक्य) [की शक्ति] को नष्ट किया था; उसने कहा कि जब तक उस (पृथ्वीराज) के कन्धे पर सिर था, राजसूय यज्ञ नहीं हो सकता था; उसके इन वचनों को सुनकर कन्नौज के दूत लौट गए; कन्नौज-राज ने इस समय पृथ्वीराज से झगड़ा न करके यज्ञ सम्पन्न करने का निश्चय किया; उसने द्वारपाल के रूप में पृथ्वीराज की एक सोने की प्रतिमा स्थापित की और उसने यज्ञ और उसके साथ ही अपनी कन्या संयोगिता के स्वयंवर की तिथि निश्चित करदी (१)। सूर्य के पुष्य नक्षत्र में तथा चन्द्रमा के तीसरे स्थान पर होने का देव पंचमी का दिन निर्धारित हुआ; [यह सुनकर] पृथ्वीराज ने कन्नौज पर चढ़ाई करने का निश्चय किया (६)।

पृथ्वीराज ने खोखन्द (कोहकन्द) और बलख के राजाओं को परास्त किया था, गजनी में विक्षोभ उपस्थित कर दिया था (८) और उसने मरुधरा को दण्डित किया था (९), [इस पृष्ठभूमि में] पृथ्वीराज के वैमनस्य की बात सुनकर जयचन्द के उक्त आयोजन का रंग फीका पड़ गया था, और जयचन्द की पुत्री संयोगिता ने पृथ्वीराज के वरण के लिए व्रत लिया था, यह समाचार पृथ्वीराज को मिला (१०)। उसने सुना कि संयोगिता ने पिता के वचन और उक्त आयोजन की उपेक्षा कर यह निश्चय किया है कि वह या तो पृथ्वीराज का पाणिग्रहण करेगी, अन्यथा गंगा में कूद कर प्राण दे देगी (११)। यह सुनकर पृथ्वीराज को उसके अनुराग का विश्वास हो गया (१२)। उधर जयचन्द ने संयोगिता को उसके इस संकल्प से विचलित करने के लिए कुछ दासियाँ उसके साथ रख दीं (१३)। उन्होंने उससे प्रश्न किया कि वह अपने पति के रूप में किसे चाहती थी (१४)। संयोगिता ने बताया कि वह पृथ्वीराज को चाहती थी, जिसके साठ (?) सामन्त थे (१५)। उन दासियों ने कहा कि वह तो लघु (हीन) कुल का था (१६)। इस पर संयोगिता ने कहा कि पृथ्वीराज की ही कृपाण ने अजमेर में धूम मचा रखी थी, मण्डोवर को तहस-नहस कर डाला था, मरुस्थल के मोरी राजा को दण्डित किया था, रणस्तम्भपुर (रंथंभोर) को आग की लपटों के समान दग्ध किया था, कालिंजर को जलमग्न कर दिया था, और गोरी-धरा पर वह घन बनकर घहराई थी, क्या फिर भी उसे लघु (हीन) कहा जा सकता था (१७)? इस पर उन दासियों ने कहा कि उसे स्मरण रखना चाहिए कि वह ऐसे महाराज (जयचन्द) की पुत्री है जिसने महाराष्ट्र, पट्टा, नीमच, और वैरागर को भ्रष्ट किया, कर्णाट, कश्मीर, गुण्ड और गुर्जर की कांति को राहु के समान ग्रस लिया और मालव, मेवाड़ और मण्डोवर को निर्माल्य के समान हस्तगत किया; उसकी सेवा में रहने वाले देव-तुल्य राजाओं में से वह किसी को क्यों नहीं वरण करती थी (१८)। संयोगिता ने उत्तर दिया कि वह किन्हीं भी बातों में नहीं आ सकती थी, और उसने संकल्प कर लिया था कि चाहे सौ जन्म ग्रहण करने पड़ें, वह पृथ्वीराज को ही वरण करने वाली थी (१९)। जब अनेक प्रकार से संयोगिता को समझाने पर भी वे दूतियां कृतकार्य नहीं हुईं तो जयचन्द ने रुष्ट होकर उसको गंगातटवर्ती एक आवास में भिजवा दिया (२०)।

२. कैंवास-वध

[संयोगिता के इस विरह-] ताप में पृथ्वीराज का मन स्थिर नहीं रहता था, इसलिए वह राजधानी में प्रधान अमात्य कैंवास को छोड़कर आखेट में फिरने लगा था (१)। इधर कैंवास पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में उसकी कर्नाटी दासी पर अनुरक्त होकर एक रात्रि उसके कक्ष में पहुँच गया (३)। पटरानी की तांबूल वाहिका सखी ने यह देख लिया और उसने पटरानी को इसकी सूचना कर दी; यह सुनते ही पटरानी ने भूर्जपत्र पर पत्र लिखकर एक दासी को पृथ्वीराज के पास भेजा और पृथ्वीराज को दो घड़ियों के भीतर आने के लिए लिखा (५)। जिसने जयचन्द की विशाल सेना से भय नहीं माना था, शहाबुद्दीन से साहस और इच्छापूर्वक युद्ध किए थे, और जो जिस समय चौलुक्य भीम को मन्त्री कैंवास ने बन्दी किया था, स्वतः दूर शिविर में रहा था, खेद कि ऐसे पृथ्वीराज

को भी वह कैंवास नहीं जान पाया था (६)। पत्र पाते ही पृथ्वीराज दो घड़ियों में आ गया (८)। कैंवास और कर्नाटी को लक्ष्य करके उसने रात्रि के अन्धकार में ही एक वाण छोड़ा; किन्तु वह वाण क्रोध के कारण उसकी मुट्ठी के हिल जाने से चूक गया; तदनन्तर [पटरानी] परमारिनी ने उसे दो वाण और दिए; उन वाणों के लगते ही कैंवास धराशायी हो गया (११)। दासी के साथ कैंवास को रातोरात पृथ्वीराज ने गड्ढा खनवा कर गड़वा दिया (१३), और वह आखेट के लिए वन फिर चला गया (१४)। यह घटना और किसी को ज्ञात नहीं होने पाई, केवल चन्द को इसे सरस्वती ने स्वप्न में बताया (१४)। पृथ्वीराज सबेरा होने पर राजधानी को लौट आया (१८)। मध्य के प्रहर में उसने पण्डित [जयानक] को बुलाकर उससे शहाबुद्दीन पर प्राप्त अपनी विजय-गाथा के कहने [लिखने] के लिए कहा, और तदनन्तर उसने सभा बुलाई, जिसमें चन्द ने आकर उसे आशीर्वाद दिया (१९)। उस सभा में पृथ्वीराज ने पहले शूरों [सामन्तों] से कैंवास के बारे में पूछा, किन्तु कोई बता नहीं सका कि वह कहाँ था (२०)। तदनन्तर उसने चन्द से यही प्रश्न किया (२१)। चन्द ने पहले उत्तर न देना ही ठीक समझा, किन्तु पृथ्वीराज के हठ करने (२५) पर उसने उत्तर दिया (२६)। उसने उस रात्रि की सारी घटना सुना दी (२७)। सभा विसर्जित हुई (२८)। कैंवास की स्त्री को जब यह ज्ञात हुआ, उसने चन्द से मृत पति का शव दिलाने के लिए कहा; चन्द के बहुत कहने पर पृथ्वीराज ने कैंवास का शव दिलाना इस शर्त पर स्वीकार किया कि चन्द उसे जयचन्द का दर्शन करावेगा (३७)। पृथ्वीराज अनुचर के रूप में चन्द के साथ जाने को प्रस्तुत हुआ (३९); दोनों कसकर गले मिले और रोए और पृथ्वीराज ने कहा कि उस अपमानपूर्ण जीवन से मरण अच्छा था (४०)। कवि ने उसके इस विचार का समर्थन किया (४२) और कैंवास का शव उसकी विधवा स्त्री को दिया गया (४३)।

४. पृथ्वीराज का कन्नौज-गमन

पृथ्वीराज ने चंद के साथ कन्नौज के लिए प्रयाण किया, साथ में अनेक शूर सामन्त भी थे, कुछ सौ राजपूत थे (१)। तीन दिन, तीन रात और एक पल कम तीन प्रहर में वे इक्कीस योजन पहुँच गए (५)। रात्रि के अनंतर प्रभात होने पर वे कन्नौज पहुँच गए (८)। उन्होंने गंगा का दर्शन किया और उसकी स्तुति की (११)। घाटों पर उन्हें जल भरती हुई सुन्दरियाँ दिखाई पड़ीं (१३)। उन्होंने जाकर गंगेह देवी के दर्शन किए; पृथ्वीराज को देख कर उसने आशीर्वाद दिया कि विजय उसके पक्ष में हो (२२)। वे लोग तदनंतर नगर-दर्शन करते हुए आगे बढ़े (२३-२५)।

५. पृथ्वीराज का कन्नौज में प्राकट्य

दरबार को पूछता-पूछता चंद कन्नौज के कोटपाल के पास पहुँचा (१)। उसने जयचंद को चंद के आने की सूचना दी (३)। जयचन्द ने अपने गुणीजन को चन्द की परीक्षा ले [कर उसे ला] ने को भेजा (४)। चन्द से मिल कर उन्होंने उसके बिना देरी ही जयचन्द का वर्णन करने के लिए कहा (९)। जयचन्द (१०) तथा उसकी सभा (१२) का वर्णन करते हुए चन्द ने उसकी विजय-गाथा कही: उसने कहा कि जयचन्द ने सिंधु [नदी] का अवगाहन कर तिमिर (म्लेच्छ-दल) को भगाया, उसने हिमालय में स्थित राज्यों को ढहाया और एक दिन में आठ सुलतानों को वश में किया, तिरहुत में जाकर उसने सेना स्थापित की, उसने डाहल के कर्ण को दो बार बंदी किया, [गूर्जर के] सोलंकी (चौलुक्य) सिद्ध (जैन) राजा को कई बार खदेड़ा; उसने तिलंग और गोवलकुण्ड को तोड़ा, गुण्ड के जीरा शासक को बंदी करके छोड़ा, वैरागर के सब हीरे लिए, गजनी के शाह शहाबुद्दीन के सेवक निसुरत्त खाँ को बंदी किया, भूल कर लंका जा पहुँचा और विभीषण से कलह कर बैठा, और खुरासान के अमीर को बंदी किया; ऐसा विजयपाल का पुत्र जयचन्द

था (१३)। इसके अनन्तर वे गुणीजन चन्द को जयचन्द की सभा में लिवा ले गए (१४)। जयचन्द ने कवि का आदर करने के अनन्तर उससे पृथ्वीराज के शौर्य तथा रण-कौशल के बारे में पूछ कर (१५-१७) उसकी उनहार पूछी (१८)। चन्द ने बताया कि पृथ्वीराज उस समय ३६ वर्ष तथा ६ मास का था, दुर्जनों के लिए राहु के समान था, और चारों दिशाओं के हिन्दू उसकी मुट्ठी में थे (१९)। इस समय जयचन्द ने चन्द के अनुचर (अनुचर-वेशी पृथ्वीराज) को स्थिर दृष्टि से देखा तो नेत्रों-नेत्रों में बल पड़ गया (२०)। जयचन्द ने चन्द को पान अर्पित करने के लिए राज-भवन की कुमारी दासियों को बुलवाया (२१) और वे सुंदरियाँ एक साथ भट्ट (चन्द) को पान अर्पित करने के लिए चल पड़ीं (२२)। इनमें एक पहले पृथ्वीराज की दासी रह चुकी थी, और वहाँ से लुप्त होकर जयचन्द की सेवा में आ गई थी; वह बाल खोले रहा करती थी; किन्तु [अनुचर-वेशी] पृथ्वीराज को देखते ही उसने सिर ढँक लिया (२५)। दासी का यह कृत्य देखकर जयचन्द को शंका हुई कि वह पुरुष जो चन्द के साथ उसके अनुचर के रूप में था, कदाचित् पृथ्वीराज था (२६), किन्तु किसी ने कहा कि चन्द पृथ्वीराज का अभिन्न सखा था इसलिए दासी ने चन्द को देखकर इस प्रकार लज्जा की (२७)। तदनन्तर एक सुवासित आवास में चन्द को ठहराया गया (२८)। उस आवास में पृथ्वीराज की सभा लगी (३१) और तदनन्तर उसने शयन किया (३२)। इसी समय जयचन्द का अक्खर (संगीत-समारोह) नियोजित हुआ (३३)। सवेरा होने पर जयचन्द चन्द के लिए उपहारादि लेकर उसके समक्ष उपस्थित हुआ (४४), किन्तु जब वहाँ पहुँच कर उसने सिंहासन और उस पर अनुचर वेशी पृथ्वीराज को बैठा देखा, वह ठमक गया; चन्द ने उसका स्वागत करते हुए उसे बताया कि यह सिंहासन पृथ्वीराज से उसको मिला था और इसके अनन्तर उसने अपने अनुचर (पृथ्वीराज) से जयचन्द को पान अर्पित करने के लिए कहा (४५)। अनुचर ने उसको पान देने के लिए हाथ आगे बढ़ाया और वक्र दृष्टि से उसे देखा (४६)। जयचन्द ने पहचान लिया कि यह पृथ्वीराज है और उसने आदेश किया कि संगठित रूप में पृथ्वीराज पर आघात (आक्रमण) किया जावे, ताकि वह भाग न सके (४८)।

६. संयोगिता-परिणय

इधर पृथ्वीराज अपने साथी सामंतों से युद्ध-क्षेत्र में होने (जाने) के लिए कह कर नगर की प्रदक्षिणा के लिए निकल पड़ा (१)। वह गङ्गा तट पर पहुँच कर मछलियों की क्रीड़ा में लीन हो रहा और उन्हें मोती चुगाने लगा (७)। उधर सैनिक वाद्यों को सुनकर संयोगिता जब अपने आवास [की छत] के ऊपर चढ़ी, वह गंगा तट पर इस नवागंतुक को देखकर विस्मय में पड़ गई कि यह कौन था (८–९)। तदनंतर उसने एक अनुचरी को थाल भर मोतियाँ देकर उस नवागंतुक के पास भेजा, और कहा कि यदि वह इन मोतियों के सम्बन्ध में कुछ न पूछे, तो वह दासी समझ ले कि वह नवागंतुक पृथ्वीराज था और तब वह (संयोगिता) उसे इस शरीर से ही वरण कर ले (१३)। दासी ने वैसा ही किया, और जब थाल के मोती समाप्त हो गए, उसे वह अपनी कण्ठ-माला तोड़ कर उसकी पोतें अर्पित करने लगी; पृथ्वीराज ने जब मोतियों के स्थान पर हाथ में पोतें देखीं, उसने दृष्टि फेरी और उस सुन्दरी दासी को देखा; प्रश्न करने पर उस दासी ने बताया कि वह जयचन्द के घर की दासी थी, और उसकी पुत्री (संयोगिता) के द्वारा भेजी हुई थी जो कि जीवन का मोह छोड़ कर उस पर अनुरक्त थी; यह सुनकर पृथ्वीराज ने घोड़ा मोड़ दिया और संयोगिता से जा मिला; दोनों का पाणिग्रहण हुआ, और तदनंतर संयोगिता को वहीं छोड़कर युद्ध के लिए पृथ्वीराज लौट पड़ा। रात्रि हो गई थी, उसके सामंत उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे (१९)। कन्ह नामक सामंत ने जब उसके हाथ में पाणिग्रहण का कंगण बँधा हुआ देखा, तो वह समझ गया कि पृथ्वीराज संयोगिता का परिणय करके आया है (२१)। उसके सामंतों ने उसकी धीरता की

प्रशंसा की (२२), किन्तु उन्होंने उससे कहा कि परिणय करके वह सुन्दरी को छोड़ कर आ सकता था, ऐसा वे नहीं समझते थे (२३)। तदनंतर वे सब उसके साथ संयोगिता के आवास पर पहुँचे (२४)। संयोगिता पृथ्वीराज के विरह में व्यथित हो रही थी (२५-२७), किन्तु जब उसने पृथ्वीराज को लौटते देखा तो [युद्ध छोड़ कर अपने पास आते हुए देख कर] वह [वीर क्षत्राणी] उस पर प्रसन्न नहीं हुई (२८) और सिर पीट कर सखियों से कहने लगी कि जिस प्रियजन की ओर लोगों की उँगलियाँ उठें, उस प्रियजन से क्या प्रयोजन (३०)? यह सुनकर सामंतों ने उसे समझाने का यत्न किया (३१)। किन्तु उस विनष्टा के नेत्र-प्रवाह उस विषय की कथा कहते ही रहे (३२)। यह देख कर नरनाह कन्ह ने कहा कि यद्यपि कोटि कादर भृत्य अपने स्वामी जयचन्द के साथ चढ़ाई कर चुके हैं, वह अकेला अपनी भुजाओं के बल से कन्नोज को दिल्ली कर सकता था, और पृथ्वीराज को दिल्ली का सिंहासन दिला सकता था (३३)। [युद्ध के इस उन्माद को देखकर] संयोगिता हर्ष से पूरित हो गई; इसी समय पृथ्वीराज ने उसकी बाँह पकड़ कर उसे अपने साथ घोड़े की पीठ पर बिठा लिया (३४)।

७. पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध (पूर्वार्द्ध)

संयोगिता का परिणय करके पृथ्वीराज ने दिल्ली की ओर प्रस्थान करने की आशा की; इसी समय चन्द ने जयचन्द को ललकार कर बताया कि उसका शत्रु पृथ्वीराज यज्ञ-ध्वंस करने आया था, और उसकी पुत्री का परिणय करके उसके आभूषणों के रूप में जयचन्द से युद्ध माँग रहा था (१-२)। यह सुन कर जयचन्द के धौंसों पर चोट पड़ी (३)। पृथ्वीराज के सौ राजपूतों के ऊपर जयचन्द के सौ हजार सैनिक टूट पड़े; उसकी इस सेना की अगणित पंक्तियों में तो दस लाख सैनिक थे (५)। जयचंद की इस विशाल वाहिनी के विरुद्ध पृथ्वीराज के सौ योद्धाओं का चल पड़ना वैसा ही था जैसे रावण की विशाल सेना के विरुद्ध राम की वानरी सेना का प्रयाण करना (७)। किन्तु राम के दल में भी वानरों की एक विशाल संख्या थी, यहां तो अस्सी लाख सेना से केवल सौ योद्धा भिड़ रहे थे (८)।

जयचन्द ने मीर बदन को पृथ्वीराज को पकड़ने का आदेश किया (१३)। पृथ्वीराज की ओर से कन्ह ने मोर्चा लिया और उसके प्रहार से मीर कट कर गिरने लगे (१७)। दो हजार घोड़े-हाथियों और सात हजार गोरों को मार कर चहुवान (कन्ह) ने रण-स्थल को ढक दिया (१९)। प्रथम दिन के इस युद्ध में गोविन्दराज गहलोत, नागोर निवासी नरसिंह दाहिमा, चन्द पुंडीर, सारंग सोलंकी तथा पाल्हन देव कूरंभ अपने दो बांधवों के साथ गिरे : इस प्रकार सौ में से सात योद्धा घट गए (२०)। भरणी के भोग में अष्टमी, शुक्रवार को यह युद्ध हुआ (२१)।

शनिवार के युद्ध में पृथ्वीराज के सामन्तों ने धावा किया (२५) और दोपहर तक में उनमें से पाँच खेत रहे (२५)। ये थे : गुर्जर धरा का माल चंदेल, थट्टा का भूपाल भाल भट्टी, सामल सूर अल्ह पमार तथा धार का निरवान वीर (२७)। दोपहर से पृथ्वीराज-पक्ष में जंगलीराय ने युद्ध किया, किन्तु वह भी खेत रहा; इस प्रकार अब तक पृथ्वीराज के तेरह सामंत खेत रहे थे और पृथ्वीराज को भी पाँच बाण लग चुके थे (२८)। संध्या तक पृथ्वीराज के सोलह और सामंत खेत रहे (३०)। इनके नाम इस प्रकार थे : मण्डलीराय मालन हंस, जावला, जाल्ह, बाघ बागरी, बलीराय यादव, सारंग, गाजी, माधरी राय, परिहार राणा, सापुला, सिंह [राय], सिंहली राय, सातल मोरी, भोज, मल्ल तथा भोआल राय (३१)।

८. पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध (उत्तरार्द्ध)

पृथ्वीराज के सामंतों ने अब उससे अनुरोध किया कि वह दिल्ली की ओर बढ़े और उसके मार्ग की रक्षा उनमें से एक-एक भट करे; इस प्रकार वे उसे युद्ध से बचाते हुए दिल्ली पहुँचा देते, अन्यथा अस्सी लाख शत्रु-सेना को कौन झेल सकता था (१)? पृथ्वीराज ने सामंतों के इस प्रस्ताव का

विरोध करते हुए कहा कि मरण से उसे भयभीत नहीं किया जा सकता था, क्योंकि बिना काल के किसी का मरण नहीं होता है; वे भीम [चौलुक्य] को नष्ट करने के गर्व से मदमत्त होकर ऐसा कह रहे थे, किन्तु उसने भी तो सरवर में शहाबुद्दीन गोरी को वश में किया था; जिसकी शरण में हिन्दू और तुर्क दोनों हो चुके थे, उसे वे शरणागत करना चाहते थे (२)। किन्तु सामंतों ने कहा कि राजा और रावत अन्योन्याश्रित हैं : वह उनकी रक्षा करता है, तो वे भी उसकी रक्षा करते हैं (३)। उन्होंने कहा, "तुमने शहाबुद्दीन गोरी को बन्दी कर हिन्दुओं की रक्षा की, विजयाकांक्षी [भीम] चौलुक्य का दमन कर जालोर की रक्षा की, भीम भट्टी को हार देकर पंगुर (?) की रक्षा की, यादवराज से रणथम्भ (रथभौर) की रक्षा की, यह युद्ध जयचन्द की मरण-कीर्त्ति और तुम्हारी जीवन-कीर्ति का है, [हमारी कामना है कि] प्रभु संयोगिता का परिणय करके दिल्ली पहुँचें और घर-घर मंगल हो (४)।" पचानवे कोस दूर दिल्ली तक स्वामी को पहुँचाने के लिए क्रमशः एक-एक वीर जयचन्द की सेना से मोर्चा लेकर कट मरे—यह कहते हुए चन्द ने भी इस योजना का समर्थन किया (६)। फलतः पृथ्वीराज ने इसे स्वीकार किया (७) और नवमी को उसने दिल्ली की दिशा में अपने घोड़े की बाग मोड़ी (१०)।

पृथ्वीराज-पक्ष का पहला योद्धा जो [इस योजना में] आगे आया हरसिंह चहुआन था; उसके जूझते-जूझते तक पृथ्वीराज चार कोस आगे निकल गया (११)। इसके अनन्तर कनक बड़गूजर आगे आया; उसके जूझते-जूझते तक पृथ्वीराज छः कोस और आगे निकल गया (१४)। इसके अनन्तर निड्डर राठौर आगे आया, जो वर सिंह का पुत्र था; उसके जूझते-जूझते तक पृथ्वीराज आठ कोस और आगे निकल गया (१६)। तदनन्तर कन्ह आगे आया (१८), और वह मारा गया (२२)। तदनन्तर अल्हन आगे बढ़ा (२३), और वह मारा गया (२४)। तदनन्तर अचलेस आगे आया (२५), जो वाहड़ [राय] का पुत्र था (२६), और वह मारा गया। तदनन्तर पट्टनपति और पट्ट प्रभु को छलने वाला विंझ आगे आया (२७), और वह मगुल पति विंझ चालुक्य भी मारा गया (२८-२९)। तदनन्तर आबूपति सलष पमार आगे बढ़ा (३०), और वह भी मारा गया; तदनन्तर लषन बघेल आगे बढ़ा (३१), और वह भी मारा गया (३२)। इस समय तक दिल्ली दस कोस रह गई थी जब पाहार तोमर आगे आया (३३) [और वह भी मारा गया]। इस प्रकार हरसिंह ने ४ कोस, कनक बड़गूजर ने ६ कोस, निड्डर ने ८ कोस, कन्ह ने १० कोस, अल्हन ने १२ कोस, अचलेस ने १४ कोस, विंझ ने १६ कोस, सलष ने ५ (?) कोस, लषन ने १० (?) कोस, तथा पाहार ने १० कोस पृथ्वीराज को आगे बढ़ाया; और इतने शूरों के जूझते-जूझते पृथ्वीराज दिल्ली पहुँच गया (३५)।

९. पृथ्वीराज-संयोगिता का केलि-विलास

पृथ्वीराज दिल्ली पहुँचा, तो जयचन्द कन्नौज लौट गया (१)। इसके अनन्तर पृथ्वीराज विलास में पड़ गया और अपनी शक्ति को उसने नष्ट कर दिया : निरन्तर उसके मन में [एक मात्र] संयोगिता को सुख देने की कामना रहती थी और उसकी प्रौढ़ रति में पड़ कर उसे दिन-रात की सुधि नहीं रहती थी; परिणाम स्वरूप उसके गुरु, बान्धवों, भृत्यों और प्रजा में असन्तोष उत्पन्न हो गया था (८)। ऋतुएँ आती थीं और चली जाती थीं किंतु संयोगिता ने पृथ्वीराज को इस प्रकार अपने वश में कर लिया था कि उसको छोड़ कर कहीं जाना उसके लिए असम्भव हो गया था—[यहाँ छः छन्दों में कवि ने सुन्दर ढङ्ग से षड् ऋतु-वर्णन करते हुए नायिका के प्रेमानुरोधों का उल्लेख किया है (९-१४)]।

१०. पृथ्वीराज का उद्बोधन

सारी प्रजा राजगुरु से पूछती कि राजा छः महीने से नहीं दिखाई पड़ा था, इसका क्या कारण था; अतः गुरु इस प्रश्न को लेकर चन्द के पास आए (१) और उससे उन्होंने यही प्रश्न

किया (३)। चन्द ने बताया कि जिस कामिनी के लिए पृथ्वीराज ने कलह किया था, अब उसी कामिनी का वह भोग कर रहा था (४)। गुरु को इस पर विश्वास नहीं हो रहा था; उन्होंने कहा "जिसने [सदैव] धन, स्त्री और जीवन को तृण के समान गिना था, उसने काम की वश्यता किस प्रकार स्वीकार की ?" (५)। चन्द ने संयोगिता के नख-शिख का वर्णन कर उसकी इस शंका का समाधान किया (११)। गुरु ने समझ लिया कि जैसी मनुष्य की भावी होती है, वैसी ही विधाता उसे मति भी अर्पित करता है (१३)। इस वार्तालाप के अनन्तर गुरु और चन्द ने पृथ्वीराज के उद्बोधन का संकल्प किया—उन्होंने कहा या तो वह बांधवों से मनविन् (उनका ध्यान रखने वाला) होगा, और या तो अब वह उस संयोगिता को ही देखेगा (१४)।

गुरु और चन्द राजद्वार पर पहुँचे, जहाँ संयोगिता का आदेश चलता था (१५)। दासियों के द्वारा उन्होंने राजा को एक पत्रिका भेजी और उन्हें मौखिक रूप से यह कहने के लिए कहा, "गोरी तेरी धरा पर अनुरक्त है और तू गोरी (संयोगिता) पर अनुरक्त हो रहा है (२०) !" उस पत्र की पहली पंक्ति पढ़ते ही राजा लज्जित होकर भूमि पर जा पड़ा (२२)। पत्र में लिखा था, "शहाबुद्दीन की आज्ञा से उसकी अपूर्व सेना [पुनः] एकत्रित हुई है और वह उससे आदर प्राप्त कर दिल्ली की दिशा में बढ़ रही है; उसमें दस हजार हाथी तथा दस लाख घोड़े हैं, इसी प्रकार उसके अनेक सुभट तथा योद्धा अमीर भी हैं जो गम्भीर और अविचलित रहने वाले हैं; हे चहुआन, गुन, बाण तो अपने अधीन है, अतः उद्योग करके प्राणों की रक्षा कर और सामन्तों से यह मन्त्र कर कि तेरे कारण दिल्ली की धरा डूब न जावे (२३)।" इस पत्र को सुनते ही [वह विलास-निद्रा से जग गया और] उसने तरकस सँभाला (२४)।

यह देख कर संयोगिता ने जीवन में काम-सुख का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए उसे उसके संकल्प से विरत करना चाहा (२५), किन्तु पृथ्वीराज ने प्रिया का मुख देखा और जी को निर्भय (कठोर) बना कर कहा, "तुमने हे श्रेष्ठ स्त्री, मेरे बाहुओं की पूजा की है, और वही तुम मुग्धा इस समय काम की बातें कर रही हो (२६) !" इसके अनन्तर पृथ्वीराज ने उसे अपने स्वप्न की कथा सुनाई (२७)। उसने कहा, स्वप्न में एक सुन्दरी उससे आरम्भ-परिरम्भ करने लगी; उस समय उसका पति भी उसके साथ था, जिसका तेज ग्रीष्म के रवि का था; उस पुरुष ने मुझसे झगड़ा किया और वह मेरा हाथ पकड़कर बड़बड़ाने लगा; इस प्रकार वहाँ पर एक संकट उपस्थित हो गया और मैं ने देखा कि वह पुरुष [रोष में] दांतों को दाब रहा है। किन्तु तदनन्तर न मैं था, और न वह सुन्दरी थी; 'हर-हर' का स्वर उत्पन्न हुआ; पता नहीं देवगण का क्या अभिमत है, और वे किस उद्देश्य से क्या करना चाहते हैं (२८)।" संयोगिता ने यह सुन कर गुरु और कवि को बुलाया; उन्होंने स्वप्न के अनिष्टकारी प्रभाव के शमन के लिए उपचार किए; तदनन्तर उसी दिन संध्या समय पृथ्वीराज ने सुभटों की सभा की।

११. शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज युद्ध

पृथ्वीराज की सब सेना सत्तर हजार थी, जिनमें से पचीस हजार आगे बढ़ रहे थे (१)। इनमें पाँच हजार ऐसे थे जो राजा के लिए समस्त संकट सहने को तैयार थे (२)। इनमें भी दो हजार स्वामी की आज्ञा से सब कुछ कर सकते थे, और इन दो हजार में भी पाँच सौ ऐसे थे जो वज्र सहन कर सकते थे (३)। इनमें भी सौ शील और सत्य में यम को जीतने वाले थे और इनमें भी दस हाथियों के दाँत उखाड़ने वाले थे (४)। इनमें भी पाँच ऐसे थे कि उनके कार्यों की गति अगम्य थी; पृथ्वीराज इन्हीं में (इन्हीं से परिवेष्टित) था (५)। पावस के आगमन पर जब धरा अगम्य हो रही थी, तुर्क और हिन्दू सेनाएँ सुसज्जित हुईं (६)।

• सिन्धु पार कर शहाबुद्दीन ने खुरासान खाँ, तातार खाँ और रुस्तम खाँ से कहा कि वह उस पृथ्वीराज पर आक्रमण कर रहा था जिसने उसे बन्दी बना कर छोड़ दिया था, और जिसे उसे सात बार कर दिया था : उसने उनसे मार्ग में और भी मुल्लों को संग्रह करने के लिए कहा (७)। उन्होंने उसे पूर्ण आश्वासन दिया (८)।

दोनों दलों में युद्ध आरम्भ हुआ (११)। दोपहर तक में चामण्ड (?) वीर ढाई सौ खेत रहे, चालुक्य योद्धा एक सौ बीस गिरे, कूरंभ शूर छः हजार गिरे, खीची गिरे, आबूराज जैत पमार गिरा, पच्चीस सौ चहुवान गिरे और अन्त में केवल चौदह सौ योद्धा पृथ्वीराज के साथ शेष रहे; शहाबुद्दीन के सोलह हजार सैनिक गिरे; पृथ्वीराज की सेना रण-क्षेत्र से लौट पड़ी और शहाबुद्दीन विजयी हुआ (१२)। पृथ्वीराज को शत्रुओं ने घेर लिया (१३), उन्होंने उसे खुरासान खाँ की बाहों में सिंगिनी अर्पित करने को कहा (१४)। इस बात को पृथ्वीराज सहन न कर सका और उसने खुरासान खाँ को एक बाण से समाप्त कर दिया, किन्तु पृथ्वीराज के दिन अब दिन दूसरे आ गये थे (१५)। अन्त में एक म्लेच्छ सरदार के द्वारा वह बन्दी हुआ (१७)।

१२. शहाबुद्दीन तथा पृथ्वीराज का अन्त

पृथ्वीराज को बन्दी कर शहाबुद्दीन गजनी गया; उसने दिल्ली का राज्य उसके पुत्र को दिया और छः महीने बाद ही शहाबुद्दीन ने पृथ्वीराज को नेत्रहीन कर दिया, यह बात जब चन्द ने सुनी, उसने गजनी की राह पकड़ी (१)। उसने एक अवधूत की वेष-भूषा बनाई और इस प्रकार [चल कर] वह गजनी पहुँचा (३)। तीसरे पहर शहाबुद्दीन हदफ़ (लक्ष्य वेध) खेलने के लिए निकल रहा था (१२)। आगे आगे निसुरत खाँ चल रहा था; शहाबुद्दीन की कटि में तूणीर था और हाथ में सिंगिनी थी; कवि ने दौड़ कर उसका मार्ग रोका, और उसे बाएँ हाथ से आशीर्वाद दिया (१३)। चन्द को अवधूत के उस वेष में देख कर शाह ने उससे पूछा (१४) तो चन्द ने अपना परिचय दिया; उसने बताया कि उसने पृथ्वीराज के साथ अवतार (जन्म) लिया था; उसके बन्दी हो जाने से वह अनाथ हो गया था और जब उसने सुना कि वह बिना आँख का कर दिया गया था, उसने बदरिकाश्रम में जाकर तप करने का निश्चय किया था; शाह ने कहा कि पृथ्वीराज अंधा होने पर भी अपनी वक्र दृष्टि नहीं छोड़ रहा था, इसलिए उसे थाने में रख दिया गया था; इस समय वह (शहाबुद्दीन) हदफ़ (लक्ष्य वेध) खेलने जा रहा था, दूसरे दिन वह उससे बातें कर सकता था (१५)।

दूसरे दिन शाह ने चन्द को निसुरत खाँ के द्वारा बुलवाया (१९)। तातार खाँ ने कहा कि चन्द बड़ा चतुर व्यक्ति था, उसका विश्वास न करना चाहिए था (२०)। किन्तु शाह ने कहा कि वह (चन्द) तपस्या करने जा रहा था तो अतः यदि वह चाहता था तो उससे दो बातें कर सकता था या कुछ दान ले सकता था (२१)। तदनुसार चन्द शाह के समक्ष बुलाया गया (२२)। सुल्तान ने पूछा कि योगी-विरागी को उससे मिलने की क्या आवश्यकता हो सकती थी (२३)? चन्द ने कहा कि योग-भोग की बातें वह दूसरे दिन उसे बतावेगा (२५)। इस समय उसे एक अन्य बात कहनी थी—बचपन में पृथ्वीराज उसकी सब साधें पूरी करता था (२६) और उसी समय उसने कहा था कि बिना फल के बाण से ही वह सात घड़ियालों को सिंगिनी लेकर बेध सकता था (२७); उसी को देखने की इच्छा शेष थी, इसलिए उसके पास वह आया था; वह (शहाबुद्दीन) चाहता तो उसकी यह साध पूरी हो सकती थी (२८), और फिर इस साध के पूरी होते ही वह (चन्द) बन चला जाता (२९)। शाह को इस पर विश्वास नहीं हुआ कि इस अवस्था में भी पृथ्वीराज यह कर सकता था (३०), फिर भी उसने चन्द को इसकी स्वीकृति दे दी (३१)। चन्द अब पृथ्वीराज के पास गया और आशीर्वाद देते हुए उसने उससे कहा, "तुमने चौलुक्य राज (भीम) पर अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया, जयचन्द के यज्ञ का विध्वंस किया, ···तुम साँभर नरेश, और सोमेश्वर के

दुःख हो; क्या तुम्हें स्मरण है कि तुमने सात घड़ियालों को [एक] बाण से बेधने का सुरो वचन दिया था।" चन्द का यह कथन सुनकर एक बार उसका स्थूल देह मानो नवीन हो गया, किन्तु फिर [निराशा से] उसका सिर झुक गया (३३)। चन्द ने पुनः उसे उत्तेजना दी, और कहा कि शाह निकट ही बाईं ओर पर सौ हाथ ऊपर सुन रहा था; इस समय मानो सब अवसर एक साथ आन उठे थे और उसे निर्भय होकर अर्ग-साधन करना चाहिए था (३५)। बड़ी कठिनाई से किसी प्रकार राजा को तैयार कर चन्द शाह के पास गया, और उसने कहा कि राजा को कठिनाई से उसने तैयार किया था किन्तु केवल शाह का फ़र्मान पाने पर वह बाण पकड़ने पर तैयार हुआ था (४०)। तातार खाँ ने कहा कि राजा से कुछ हो नहीं सकता था इसलिए यह उसका बहाना मात्र था, शाह तो तीन फ़र्मान देने को तैयार था (४१)। चन्द प्रसन्न होकर राजा के पास लौट गया (४२)। राजा ने कहा इस कार्य के लिए उसे दो बाण चाहिए थे (४४)। चन्द ने समझा-बुझा कर उसे एक बाण से ही यह कार्य करने को तैयार किया (४५)। उसने कहा कि जो कुछ उसने कैमास के साथ किया था अब उसका फल उसे मिलने वाला था (४६)। राजा प्रस्तुत हुआ (४७)। शाह ने फ़र्मान दिए; तीसरा फ़र्मान होते ही शाह बाण से बिद्ध हुआ भूमि पर पड़ा था; राजा का भी अन्त हुआ (४८)। देवताओं ने इस घटना पर आकाश से पुष्प-वर्षा की (४९)। इस प्रकार नव रस से सरस और अपूर्व इस 'रासो' की चन्द ने रचना की (४९)।

—:o:—

७. पृथ्वीराज रासो
को
ऐतिहासिकता

पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता पर विचार करने की दृष्टि से नीचे उसके प्रस्तुत संस्करण में आए हुए ऐतिहासिक व्यक्तियों और घटनाओं से सम्बन्धित उल्लेखों का विवेचन किया जा रहा है।

(१) कर्ण : डाहल के कर्ण के विषय में कहा गया है कि जयचन्द ने उसे दो बार बन्दी किया था :

करण डाहल्ल दु बार बंध्यउ। (५.१२)

डाहल का सब से अधिक प्रतापी शासक लक्ष्मी कर्ण कर्ण नाम से प्रसिद्ध था। इसका समय सं० १०९७-११२७ के बीच पड़ता है।[1] सं० ११३० से इसके उत्तराधिकारी और पुत्र यश कर्णदेव के अभिलेख मिलने लगते हैं।[2] प्रकट है कि लक्ष्मी कर्ण जयचन्द का समकालीन नहीं था। किन्तु उसके दो उत्तराधिकारियों—यशः कर्ण और गय कर्ण—के नामों में भी 'कर्ण' लगा रहा है, इसलिए असम्भव नहीं कि कवि का आशय यहाँ डाहल के जयचन्द के समकालीन कलचुरि शासक से हो, वैसे जयचन्द के समकालीन डाहल के कलचुरि शासक क्रमशः नरसिंह (सं० १२१२ १२२७), जयसिंह (सं० १२३२), तथा विजयसिंह (सं० १२३७-१२५२) थे।[3]

(२) कैंवास : प्रस्तुत संस्करण का एक पूरा सर्ग तृतीय कैंवास की कथा से सम्बंधित है। कहा गया है कि यह पृथ्वीराज का प्रधान अमात्य था, और और पृथ्वीराज की एक करनाटी दासी पर अनुरक्त था और पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में यह उस दासी के कक्ष में पहुँच गया था, पृथ्वीराज को ज्यों ही इस बात की सूचना मिली, उसने आकर कैंवास और दासी का वध किया। रचना के अन्त में भी एक प्रसंग में (१२.४६) इस वध के संबन्ध में संकेत हुआ है।

जयानक रचित 'पृथ्वीराज विजय' में मन्त्री कदम्ब वास का उल्लेख है, और कहा गया है कि उसी के संरक्षण में पृथ्वीराज बालक से युवा हुआ था।[4] 'विजय' की प्राप्त प्रति इसके कुछ ही आगे खण्डित है, इसलिए उससे इसके आगे का वृत्त नहीं प्राप्त होता है। जिनपाल उपाध्याय (सं० १२६२) द्वारा लिखित 'खरतर गच्छ पट्टावली' में मण्डलेश्वर कैंवास का उल्लेख है, और कहा गया है कि जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ में पृथ्वीराज के विश्राम काल में इसने मध्यस्थता का कार्य

[1] हेमचन्द्र रे : डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव् नॉर्दर्न इण्डिया, भाग २, पृ० ८१८।
[2] वही, पृ० ७८९।
[3] वही, पृ० ८१८।
[4] पृथ्वीराज विजय, सपा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, सर्ग ९, श्लो० ४४।

किया था।[1] कैंवास के पृथ्वीराज के प्रधान अमात्य होने और पृथ्वीराज के द्वारा उसके निकाले जाने की एक कथा 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह' के पृथ्वीराज-प्रबन्ध में है, यद्यपि उसके निष्कासन का कारण भिन्न बताया गया है, और यह कहा गया है कि वह इसी कारण शहाबुद्दीन से मिल गया था, और पृथ्वीराज की पराजय का वह कारण बना।[2] इस प्रबन्ध के सम्बन्ध में अन्यत्र विस्तार से विचार किया गया है।[3] फलतः कैंवास का पृथ्वीराज का अमात्य होना ऐतिहासिक प्रतीत होता है। किन्तु 'रासो' में उसके वध की जो कथा आती है, वह भी ऐतिहासिक है या नहीं, यह कहना कठिन है।

(३) गोविंदराज : यह पृथ्वीराज के मुख्य सामंतों में से है और जयचन्द के राजसूय यज्ञ का निमन्त्रण लेकर जब उसके दूत पृथ्वीराज के पास आते हैं, यह उसके निमन्त्रण का उत्तर देता है : वहाँ यह अपने को [कुरु] जाङ्गल का निवासी बताता है (२.३)। यह पृथ्वीराज-जयचन्द के युद्ध में मारा जाता है (७.२०)। मिनहाजुस्सिराज की 'तबक़ात-ए-नासिरी' के अनुसार, जिसकी रचना सं० १३०६ में हुई थी, गोविंदराय—जो कि दिल्ली का था—शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में मारा गया था।[4] यदि 'रासो' का गोविंदराय वही हो जो 'तबक़ात-ए-नासिरी' का है, तो दोनों उल्लेखों में अन्तर स्पष्ट है, यद्यपि उसका पृथ्वीराज का सामंत होना ऐतिहासिक प्रमाणित होगा।

(४) जयचन्द : रचना के सर्ग २ और ४ से ८ पृथ्वीराज तथा जयचन्द के संघर्ष के हैं, जो कि जयचन्द के राजसूय यज्ञ तथा उसकी पुत्री संयोगिता के कारण हुआ है। एक छन्द (५.१३) में जयचन्द के सम्बन्ध में कहा गया है कि उसने सिंधु नद पार कर म्लेच्छों को भगा दिया था, हिमालय के राज्यों को तहस-नहस किया था और आठ सुल्तानों को वश में किया था, तिरहुत में थाना स्थापित किया था, दक्षिण में सेतुबन्ध तक गया था, डाहल के कर्ण को दो बार बन्दी किया था, सोलंकी (चौलुक्य) सिद्धराज को कई बार खदेड़ा था, तिलिंग और गोवाल कुण्ड को तोड़ा था, गुण्डके जीरा को बाँध कर छोड़ा था, सैरागर के हीरे लिए थे, गज़नी के शहाब शाह के सेवक मिसुरतखाँ को बन्दी किया था [लङ्का जाकर] विभीषण से भिड़ गया था, खुरासान के अमीर को बन्दी किया था, विजयपाल का पुत्र जयचन्द इस प्रकार का था। इतिहास जयचन्द्र को विजयपाल का नहीं, विजयचन्द्र का पुत्र बताता है।[5] इस प्रकार दोनों नामों में कुछ अन्तर है। जयचन्द्र पृथ्वीराज का समकालीन था, यह इतिहास से प्रमाणित है। अपने पिता विजयचन्द्र के साथ यह दिग्विजय में सम्मिलित था, यह सं० १२२४ के कमौली के दान-पत्र से प्रमाणित है जो वाराणसी से विजयचन्द्र तथा युवराज जयचन्द्र के द्वारा प्रदत्त है और जिसमें 'भुवन दलन हेला' शब्दावली आती है।[6] किंतु ऊपर उल्लिखित समस्त राजाओं को उसने परास्त किया था, इसके प्रमाण नहीं मिलते हैं; लगता है कि कुछ नाम केवल सूची-वृद्धि के लिए सम्मिलित किए गए हैं; लङ्का के विभीषण से जा भिड़ना तो एक अनर्गल

[1] अगर चन्द नाहटा : पृथ्वीराज की सभा में जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ, हिन्दुस्तानी, भाग १०, पृ० ७१।

[2] पुरातन प्रबन्ध संग्रह, संपा० मुनि जिनविजय, पृ०८३-८७।

[3] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।

[4] इलियट और डाउसन, भाग २, पृ० २९६-२९७।

[5] भांडारकर : इंस्क्रिप्शंस ऑव नॉर्दर्न इंडिया, अभिलेख सं० ३३३, ३३६, ३३७, ३४०, ३४५।

[6] इपिग्राफिया इंडिका, भाग ४, पृ० ११७।

कल्पना मात्र है। जिन राजाओं के सम्बन्ध के ऐतिहासिक उल्लेख प्राप्त हैं, उनके साथ हुए उसके संघर्ष पर उन राजाओं के नामों से अलग विचार किया गया है।

'रासो' में आए हुए पृथ्वीराज-जयचन्द संघर्ष तथा पृथ्वीराज-संयोगिता विवाह के सम्बन्ध में इतिहास मौन है। गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का कथन है कि जयचन्द एक बहुत दानी राजा था, जो उसके दिए हुए अनेक दान-पत्रों से प्रकट है, किंतु किसी दान-पत्र में भी राजसूय यज्ञ का उल्लेख नहीं है; नयचन्द्र सूरि ने सं० १४६० के लगभग लिखते हुए 'हम्मीर महाकाव्य' तथा 'रंभा मंजरी नाटिका' में, पृथ्वीराज-जयचन्द के संघर्ष अथवा जयचन्द के राजसूय यज्ञ और संयोगिता-स्वयंवर का कोई उल्लेख नहीं किया है, यद्यपि 'हम्मीर महाकाव्य' में उसने पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन के संघर्ष की कथा विस्तार से दी है, और 'रंभा मंजरी' में, जिसका नायक जयचन्द है, जयचन्द की प्रशंसा में पन्ने रँगते हुए भी उसके द्वारा किए हुए किसी राजसूय यज्ञ अथवा संयोगिता-स्वयंवर का उल्लेख नहीं किया है, इसलिए 'रासो' के ये विवरण अनैतिहासिक हैं। किंतु जहाँ तक दानपत्रों की बात है, 'रासो' के अनुसार पृथ्वीराज ने आरम्भ में ही उक्त राजसूय यज्ञ का विध्वंस किया था, इसलिए तत्सम्बन्धी दानपत्रों का न मिलना आश्चर्यजनक नहीं है। 'हम्मीर महाकाव्य' और 'रंभा मंजरी' को, जो सं० १४६० के लगभग लिखे गए, और काव्य की दृष्टि से लिखे गए, ऐतिहासिक महत्व प्रदान करना उचित नहीं है। 'हम्मीर महाकाव्य' के पृथ्वीराज चरित्र में पृथ्वीराज और परमर्दि देव के भी युद्ध का भी उल्लेख नहीं है, जो उस युग की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना थी, जिसके स्मारक में सं० १२३९ का मदनपुर का शिलालेख है।[१] 'रंभा मंजरी' में तो जयचन्द को मल्लदेव का पुत्र कहा गया है, और कहा गया है कि वह लाट के मदन वर्मा की पुत्री रंभा से विवाह करता है।[३] जयचन्द का पिता विजयचन्द्र था, न कि कोई मल्लदेव, यह इतिहास प्रसिद्ध है, मदनवर्मा एक ही ज्ञात है जो चेदि का चंदेल शासक था। लाट से, जो गुर्जर देश का एक प्रान्त रहा है, इसका कोई सम्बन्ध नहीं था। इस मदन वर्मा का अन्तिम अभिलेख सं० १२१९ का एक दानपत्र है,, और इसके उत्तराधिकारी परमर्दि देव का प्रथम अभिलेख सं० १२२३ का प्राप्त है।[४] इसलिए यह जयचन्द का समकालीन अवश्य था। फलतः जयचन्द्र के उक्त दोनों काव्यों के आधार पर उपर्युक्त प्रकार का कोई परिणाम निकालना उचित नहीं माना जा सकता है।

दूसरी ओर, डॉ० दशरथ शर्मा का कथन है कि पृथ्वीराज से जयचन्द की कन्या के विवाह की भी घटना इतिहास-सम्भव ज्ञात होती है, क्योंकि 'पृथ्वीराज विजय' में पृथ्वीराज के तिलोत्तमा के चित्र पर मुग्ध होने और उसके विरह में व्यथित होने की जो कथा है, वह बाद में किसी राजकुमारी से होने वाले उसके विवाह की भूमिका मात्र है, और यह राजकुमारी गङ्गा-तटवर्त्ती किसी स्थान की थी, यह उक्त काव्य के अंतिम प्राप्त सर्ग के ७८ वें त्रुटित श्लोक के 'नाक नदी तट स्थित.' शब्दावली से ज्ञात होता है, इसलिए यदि 'विजय' में इस कथा के अनन्तर 'रासो' में वर्णित पृथ्वीराज-संयोगिता अथवा 'सुर्जन चरित' में वर्णित पृथ्वीराज कांतिमती के विवाह की बात आई हो तो आश्चर्य न होगा।[१] जैसा अन्यत्र दिखाया गया है, 'सुर्जन चरित महाकाव्य' में वर्णित पृथ्वीराज का समस्त चरित्र 'रासो' के प्रस्तुत संस्करण का अनुसरण करता है, इसलिए उसमें आई हुई कांतिमती

[१] पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सं० १९८९, पृ० ५८।

[२] भांडारकर : इन्स्क्रिप्शन्स ऑव नॉर्दर्न इंडिया, पृ० ५८।

[३] ए० ए० उपाध्ये : जयचन्द ऐंड हिज रंभा मंजरी, जर्नल ऑव् यू० पी० हिस्टॉरिकल सोसाइटी, भाग १९, पृ० ९०।

[४] भांडारकर : इन्स्क्रिप्शन्स ऑव् नॉर्दर्न इंडिया, पृ० ४७, ४९।

के साथ पृथ्वीराज के विवाह की कथा 'रासो' में वर्णित पृथ्वीराज-संयोगिता विवाह के सम्बन्ध में स्वतंत्र साक्ष्य के रूप में नहीं रक्खी जा सकती है। 'पृथ्वीराज विजय' में आई हुई 'नाक नदी तट स्थितः' शब्दावली ही उसके पक्ष में रक्खी जा सकती है, किंतु वह जयचन्द की कन्या के सम्बन्ध की ही रही होगी, यह निश्चयपूर्वक कहना कठिन है।

समसामयिक मुसलमान इतिहास-लेखकों मिनहाज उस्सिराज तथा हसन निज़ामी के अनुसार[1] शहाबुद्दीन के दोनों आक्रमणों के समय—मुसलमान इतिहास लेखक पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन में दो ही युद्ध हुए मानते हैं—पृथ्वीराज अजमेर का शासक था; दिल्ली का शासक गोविंदराय या खांडेराय था जो उसकी ओर से दोनों युद्धों में लड़ा था। जयचन्द और पृथ्वीराज के संघर्ष की कथा 'रासो' के अनुसार शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के इन दोनों संघर्षों के बीच में पड़ती है; जयचन्द के विरुद्ध अतः पृथ्वीराज ने दिल्ली से प्रयान किया था और जयचन्द-पुत्री संयोगिता को लेकर दिल्ली लौटा था, यह काल्पनिक लगता है।

(५) पृथ्वीराज : दिल्ली के शासक होने के पूर्व का पृथ्वीराज का चरित्र 'रासो' के प्रस्तुत संस्करण में अति संक्षेप में है। उसे एक ही छन्द में देते हुए कहा गया है कि उसका शैशव अजमेर में व्यतीत हुआ था, उसके जीवन के अनुरागपूर्ण वृत्त साँभर में हुए थे, वह बहिला वन का निवासी था, और वह सोमेश्वर का पुत्र दिल्ली में भासित होने के लिए विधाता द्वारा निर्मित हुआ था (१.६)। बहिला वन के सम्बन्ध में निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है, किन्तु शेष उल्लेख इतिहास-सम्मत ही हैं।

कहा गया है कि उसने बलख के शासक को हराया था और गजनी के शाह शहाबुद्दीन को हराया था (२.७)। बलख के शासक को हराने की बात इतिहास-सम्मत नहीं प्रतीत होती है। गोरी को पराजित करने के सम्बन्ध में अलग विचार किया गया है। कहा गया है कि मुर (मरु) धरा को उसने विजित किया था (२.९), मंडोवर को तहस-नहस किया था (२.१७), मरुमंड [मरु स्थल] के मोरी राजा को दंडित किया था (२.१०), रंथंभौर को आग की लपटों के समान जलाया था (२.१७) और कालिंजर को जलमग्न किया था (२.१७)। अन्यत्र कहा गया है कि उसने भीमभट्टी से पंगुर और यादवराज से रंथंभौर की रक्षा की (८.४) थी। पृथ्वीराज अपने युग का एक अति पराक्रमी शासक था, और उसने अनेक लड़ाइयाँ लड़ी थीं, कालिंजर के चन्देल शासक परमर्दि पर उसकी विजय-गाथा मदनपुर के सं० १२३९ के शिलालेख में अंकित है। असम्भव नहीं कि ये अन्य विजयें भी जिनका उल्लेख ऊपर हुआ है, उसको प्राप्त हुई हों, किन्तु यह भी असम्भव नहीं है कि कुछ नाम कल्पना से रख दिए गए हों; इस प्रकार के काव्यों में सूची-वृद्धि एक सामान्य बात रही है।

(६) भीम चौलुक्य : 'रासो' में कहा गया है कि पृथ्वीराज ने युद्ध करके भीम की शक्ति को नष्ट किया (२.३;१२-३३); वह दूर के विश्वास में था, जब उसने मन्त्री (कँवास) को भीम को बन्दी करने भेजा था (३.६); उसके सामन्तों ने ही भीमसेन को पराजित किया था (८.२) और भीमसेन से पृथ्वीराज ने जालौर की रक्षा की थी (८.४)।

गुर्जराधिपति भीम (सं० १२३५-१२९८)[2] पृथ्वीराज का समकालीन था, यह प्रमाणित है। 'पृथ्वीराज विजय' में शहाबुद्दीन के भीम पर किए गए आक्रमण की ओर संकेत करते हुए कदम्ब वास

[1] दे० इलियट और डाउसन : भाग २, पृ० २९५-२९७; तथा हेमचन्द रे : डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव नॉर्दर्न इंडिया, पृ० १०८७-१०९२।

[2] हेमचन्द रे : डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव् नॉर्दर्न इंडिया', पृ० १०४८।

द्वारा कहलाया गया है कि "जैसे तिलोत्तमा के लिए सुंद और उपसुंद नष्ट हुये थे, वैसे ही मनोज्ञा लक्ष्मी के उद्देश्य से आपके शत्रु स्वयं नष्ट हो जायेंगे।[1]" प्राह्लादन के 'पार्थ पराक्रम व्यायोग' में भीम के सामन्त आबू के परमार धारावर्ष पर जांगल-नरेश पृथ्वीराज के किए हुए एक असफल सौप्तिक प्रस्ताव (रात्रि कालीन आक्रमण) का उल्लेख हुआ है।[2] जिनपाल उपाध्याय (सं० १२६२) द्वारा रचित 'खरतर गच्छ पट्टावली' में पृथ्वीराज और भीम चौलुक्य के सेनापति जगद्देव प्रतिहार के बीच कठिनाई से हो पाई एक संधि का उल्लेख हुआ है।[3] इस प्रकार भीम चौलुक्य और पृथ्वीराज में पारस्परिक वैमनस्य और छेड़-छाड़ के प्रमाण मिलते हैं। जालोर की रक्षा के लिए भी दोनों में कोई युद्ध हुआ था यह ज्ञात नहीं है।

(७) शहाबुद्दीन गोरी : शहाबुद्दीन और पृथ्वीराज के बीच हुए केवल एक ही—अंतिम युद्ध—का वर्णन 'रासो' के प्रस्तुत संस्करण में मिलता है, इसके पूर्व के युद्धों के सम्बन्ध में कहा गया है कि पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को तीन बार बाँधा था (२.३), अन्यत्र यह कि उसने शहाबुद्दीन को सरवर में परास्त किया था (८.४)। एक स्थान पर आता है कि भीम को जब मन्त्री (कैंवास) ने बन्दी किया था, पृथ्वीराज दूर विरवासर में था (३.६); असम्भव नहीं कि 'सरवर' से तात्पर्य इसी विरवासर से हो अन्यत्र यह कि उसने गजनी कोनष्ट किया (२.१७)। एक स्थान पर शहाबुद्दीन से कहलाया गया है :

जिहि इउँ गहि छंडियउ बार सत हउं अप्पउ कर। (११.७)

जिसके कम से कम दो अर्थ सम्भव हैं : एक तो यह कि 'जिसने मुझे सात बार पकड़ा और छोड़ा और जिसे मैंने कर अर्पित किया', दूसरा यह कि 'जिसने मुझे पकड़ कर छोड़ा और जिसे मैंने सात बार कर अर्पित किया।' मुसलमान इतिहासकारों के अनुसार शहाबुद्दीन के दो ही युद्ध पृथ्वीराज से हुए थे : एक जिसमें शहाबुद्दीन पराजित हुआ था, और दूसरा जिसमें पृथ्वीराज पराजित हुआ और और मारा गया था।[4] 'रासो' में सरवर और विरवासर का उल्लेख हुआ है। मुसलमान इतिहासकारों ने स्थान का नाम 'तबर हिन्द' : या 'सर हिन्द' दिया है। सरवर (सर हिंद ?) के युद्ध के अतिरिक्त अन्तिम युद्ध से पूर्व के युद्धों का कोई विवरण 'रासो' में नहीं मिलता है, और न तत्कालीन इतिहास में मिलता है; वे काल्पनिक ही प्रतीत होते हैं।

'रासो' के प्रस्तुत संस्करण में पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन के बीच हुए केवल अन्तिम युद्ध का वर्णन हुआ है। कहा गया है कि शहाबुद्दीन ने पावस में आक्रमण किया था (११.६), युद्ध में पृथ्वीराज पराजित और बन्दी हुआ (११.१७), तदनंतर शहाबुद्दीन उसे गजनी ले गया (१२.१), दिल्ली का इय-गज-भांडार उसके पुत्र को सौंप दिया (१२.१) और कुछ समय बाद उसने पृथ्वीराज की आँखें निकलवा लीं (१२.१); यह सुनकर चन्द ने गजनी की राह पकड़ी (१२.१), उसने वहाँ जाकर शहाबुद्दीन से कहा कि पृथ्वीराज बिना फल के बाण से घड़ियालों को वेध सकता था, यह उसने उससे किसी समय कहा था, और अब चन्द तप के लिए जाना चाहता था, इसलिए इसके पूर्व उस साध को पूरी कर लेना चाहता था, जो कि केवल शाह की अनुमति से ही संभव था (१८.२७-२८); शाह को भी इस कौतुक को देखने की उत्सुकता हुई अतः उसने इसके आयोजन की अनुमति दे दी (१२.३१); चन्द ने पृथ्वीराज को भी इस योजना के लिए तैयार कर लिया, और शाह से उसने

१ 'पृथ्वीराज विजय', सर्ग ११, प्रारम्भ।

२ 'पार्थ पराक्रम व्यायोग', गायकवाड़ ओरिएंटल सीरीज, पृ० ३।

३ अगरचन्द नाहटा : जगद्देव और पृथ्वीराज की संधि, हिन्दुस्तानी, भाग १०, पृ० ९८।

४ मिनहाजुस्सिराज : 'तबकात-ए-नासिरी', इलियट और डावसन, भाग २, पृ० २९५-२९७ तथा हेमचन्द रे, डायनैस्टिक हिस्ट्री आव नॉर्दर्न इण्डिया, पृ० १०८८-१०९२।

कहा कि उसके तीन मौखिक फरमान प्राप्त करके ही पृथ्वीराज लक्ष्य वेध करने के लिए तयार हुआ था (१२.४०), अतः शाह ने इसे भी स्वीकार कर लिया, और जब उसने तीसरा फरमान सुनाया, पृथ्वीराज का बाण उससे वेधता हुआ निकल गया (१२.४८); तदनन्तर राजा का भी मरण हुआ (१२.४८)। प्रायः समसामयिक मुसलमान इतिहासकारों मिनहाजुस्सिराज तथा हसन निजामी के अनुसार[1] पृथ्वीराज अजमेर में शासन करता था, दिल्ली का शासक गोविन्द राय था खांडे राय था जो पृथ्वीराज की ओर से शहाबुद्दीन से दोनों युद्धों में लड़ा था; हसन निजामी के अनुसार शहाबुद्दीन ने दूसरे आक्रमण के पूर्व अजमेर एक दूत भेजा था और कहलाया था कि वह इस्लाम और उसकी अधीनता स्वीकार करे। चौहान के रोषपूर्ण उत्तर के अनन्तर उसने उस पर आक्रमण किया था। हसन निजामी ने यह भी कहा है इस आक्रमण के समय पृथ्वीराज ने कहला भेजा था कि यदि सुल्तान अपने राज्य की सीमाओं में चला जावे तो वह उसका पीछा नहीं करेगा; इस पर सुल्तान ने उत्तर भेजा कि वह अपने बड़े भाई के आदेश से कठिनाइयाँ झेलता यहाँ आया था, और उससे आदेश लेकर ही लौट सकता था जिसके लिए समय अपेक्षित था; पृथ्वीराज ने यह मान लिया तो रात में सारी तैयारी करके दूसरे दिन प्रातःकाल ही जब राजपूत अपने नित्य कर्म में लगे हुए थे सुल्तान ने आक्रमण कर दिया; पृथ्वीराज की सेना इसके लिए तैयार नहीं थी और शीघ्र ही वह पराजित हुआ इसके अनन्तर अजमेर का शासक पृथ्वीराज का पुत्र बनाया गया। दोनों के अनुसार पराजित होने पर पृथ्वीराज भागता हुआ सरस्वती के निकट पकड़ा गया और मार डाला गया। प्रकट है कि 'रासो' की उपर्युक्त कथा काल्पनिक ही है।

(८) सलष और जैत पमार: 'रासो' के अनुसार सलष आबू-नरेश था और जयचन्द से हुए पृथ्वीराज के युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ता हुआ मारा गया (८.३०)। इसी प्रकार उसमें कहा गया है कि उसका पुत्र जैत [जो उसके अनन्तर आबू-नरेश था], शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से युद्ध करता हुआ मारा गया (११.१२)।

किन्तु पृथ्वीराज के समय में धारावर्ष परमार आबू-नरेश था[2], जो कि भीम का सामन्त था, जैसा उसके अभिलेख[3] तथा प्राह्लादन के 'पार्थ पराक्रम व्यायोग'[4] से प्रमाणित है। सलष और जैत के आबू-नरेश होने का उल्लेख इतिहास-विरुद्ध है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त 'रासो' के प्रस्तुत संस्करण में पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध के प्रसंगों में पृथ्वीराज पक्ष के अनेक योद्धाओं के नाम आते हैं; ये हैं: कन्ह (८.१८ २२), नागोर-निवासी नरसिंह दाहिमा (७.२०), चन्द्र पुण्डीर (७.२०), सारंग सोलंकी (७.२०, ७.३१), पाल्हनदेव कूरम (७.२०), गुर्जर का माल चन्देल (७.२७), भट्टा का भूपाल मान भट्टी (७.२७), सामला शूर (७.२७), अच्छ परमार (७.२७), धार का निरबान वीर (७.२७), जंगली राय (७.२८), मडली-राय माल्हन हंस (७.३१), जावला (७.३१), जाल्ह (७.३१), बाघ बागरी (७.३१), बलीराम यादव (७.३१), गाजी (७.३१), पाधरी राय (७.३१), परिहार राणा (७.३१), साँखुला (७.३१), सींह (७.३१), सिंहली राव (७.३१), भोज (७.३१), मल्ल (७.३१), भोआल राय (७.३१), हरसिंह चहुआन (८.११), कनक बड़ गूजर (८.१४), निढर राठौर (८.१६), अल्हन (८.२३-२४),

[1] इलियट और डाउसन, भाग २, पृ० २९५-२९७ तथा हेमचन्द्र रे: डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव् इंडिया, भाग २, पृ० १०८८-१०९१।

[2] हेमचन्द्र रे: डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव् इण्डिया, भाग २, पृ० ९१९।

[3] भांडारकर: इंस्क्रिप्शन्स ऑव नार्दर्न इंडिया, अभिलेख संख्या ४५४ तथा ४८८।

[4] 'पार्थ पराक्रम व्यायोग', गायकवाड ओरीएंटल सीरीज, पृ० १।

बाहर सुत अचलेस (८.२५), मुगुल पति बिरा चालुक (८.२७-२९), ल्पन बधेल (८.३१) और पाहार तोमर (८.३३)।

इसी प्रकार शहाबुद्दीन पृथ्वीराज के युद्ध में शहाबुद्दीन के तीन योद्धाओं के नाम आते हैं : खुरासानखाँ (११.७; ११.१४), तातारखाँ (११.७) तथा रुस्तमखाँ (११.७); शहाबुद्दीन-वध के प्रसंग में भी दो नाम आते हैं : तातारखाँ (१२.१०,१२.४१) तथा निसुरतखाँ (१२.१३, १२१९)।

इन नामों के सम्बन्ध में ऐतिहासिक साक्ष्य अप्राप्य है। युद्ध-विषयक ऐतिहासिक काव्यों में इस प्रकार की नामावली प्रायः कल्पित होती और वैसी ही कदाचित् यह भी है।

परिणामतः हम देखते हैं कि 'रासो' संपूर्ण रूप से ऐतिहासिक रचना नहीं है, उसके अनेक उल्लेख या विस्तार अवश्य ही कल्पना-प्रसूत हैं, और इतिहास से समर्थित नहीं हैं। फिर भी अपने व्यापक रूप में वह एक ऐसे जिम्मेदार कवि की रचना प्रतीत है जिसने हिंदू सूत्रों से प्राप्त सामग्री का यथेष्ट सावधानी के साथ उपयोग किया, और कथा-नायक के समय के बाद की किसी घटना अथवा किसी व्यक्ति का घाल-मेल कथा में नहीं किया। 'रासो' के कवि की इन दोनों विशेषताओं पर विचार करने पर ज्ञात यह होता है कि निस्सन्देह यह पृथ्वीराज का समकालीन तो नहीं था, किन्तु बहुत बाद का भी नहीं था, और उसने रचना यद्यपि काव्य की दृष्टि से अधिक और इतिहास की दृष्टि से कम की, फिर भी सुलभ सामग्री का उपयोग जिम्मेदारी और कुशलता के साथ किया है।

यह कहना अनावश्यक होगा कि हमें सम्पूर्ण रचना को प्रायः उसी दृष्टि से देखना चाहिए जिस दृष्टि से हम मध्य युग में लिखे गए एक अच्छे से अच्छे ऐतिहासिक कथा-काव्य को देख सकते हैं, और इस दृष्टि से देखने पर 'पृथ्वीराज रासो' प्रस्तुत रूप में, मेरी अपनी राय में, एक सफल रचना मानी जा सकती है।

—:*:—

८. 'पृथ्वीराज विजय' और 'पृथ्वीराज रासो'

सन् १८७५ ई० में प्रसिद्ध विद्वान् डा० बूह्लर का संस्कृत ग्रन्थों की खोज में काश्मीर 'पृथ्वीराज विजय' की एक अति खंडित प्रति प्राप्त हुई थी,[१] जिसने चन्द के 'पृथ्वीराज रासो' ऐतिहासिक प्रतिष्ठा को एकदम समाप्त कर दिया। तब से उसकी ऐतिहासिक प्रतिष्ठा को पु स्थापित करने के प्रयास होते आ रहे हैं, किन्तु यह मानना पड़ेगा कि वे असफल ही रहे हैं। अ 'रासो' के प्राप्त रूपों में से किसी के आधार पर भी उसकी ऐतिहासिक प्रतिष्ठा को पुनः स्था करना कभी भी सम्भव होगा, यह आशा नहीं करनी चाहिए क्योंकि 'रासो' के प्राप्त सभी रूपों चित्य अनैतिहासिक तत्व मिलते हैं। कुछ विद्वानों ने उसकी इस त्रुटि का समाधान यह बता करना चाहा है कि वह काव्य है, इतिहास नहीं है। किन्तु 'विजय' भी तो काव्य है, फिर भी उ 'रासो' जैसे अनैतिहासिक तत्व नहीं मिलते हैं। उदाहरण के लिए 'पृथ्वीराज विजय'[२] के प्रथम सर्गों में पृथ्वीराज के पूर्व-पुरुषों की कथा देते हुए उसके पूर्व-पुरुषों की जो वंशावली दी गई है इस प्रकार ठहरती है :—
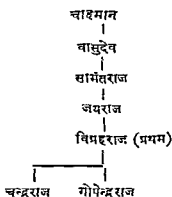
चाहमान
|
वासुदेव
|
सामंतराज
|
जयराज
|
विग्रहराज (प्रथम)
|
चन्द्रराज — गोपेन्द्रराज

[१] 'डिटेल्ड रिपोर्ट आव् ए टूअर इन सर्च, आव् संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट्स मेड इन काश्मीर, राजपूता ऐंड सेन्ट्रल इंडिया'—लेखक डॉ० बूह्लर, पृ० ६३।

[२] 'पृथ्वीराज विजय महाकाव्य'—संपा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, सं० १९९७।

दुर्लभराज
|
गोविंदराज
|
गुवाक
|
चंदनराज
|
वाक्पति
|
सिंहराज
├── विग्रहराज (द्वितीय)
└── दुर्लभराज
    |
    गोविन्दराज
    |
    वाक्पति राज (द्वितीय)
    ├── वीर्यराम
    │   ├── दुर्लभ
    │   └── विग्रहराज (तृतीय)
    │ |
    │   पृथ्वीराज
    │ |
    │   अजयराज
    │ |
    │   अर्णोराज
    │   ├── ०
    │   │   └── पृथ्वीभट
    │   ├── विग्रहराज (चतुर्थ)
    │   │   └── अपरगांगेय
    │   └── सोमेश्वर
    │   └── पृथ्वीराज
    └── चामुण्ड
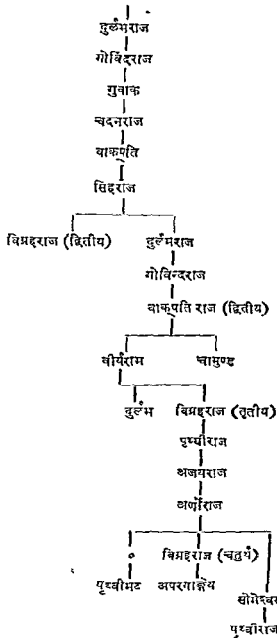
'रासो' के इतिहास प्रेमी आलोचकों को दिखाई पड़ा कि 'रासो' (नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण) में प्राप्त पृथ्वीराज के पूर्व पुरुषों की वंशावली इससे बहुत भिन्न और अनैतिहासिक है। अब 'पृथ्वीराज रासो' के बड़े-छोटे कई रूप मिलते हैं और उनमें तदनुसार वंशावली भी बड़ी-छोटी

मिलती है। कहा गया है कि 'रासो' के इन विभिन्न रूपों में से जो सबसे छोटा है, वही उसका मूल रूप होगा, और उत्तरोत्तर जो बड़े रूप हैं वे अधिकाधिक प्रक्षिप्त होंगे। इसलिए इस सबसे छोटे रूप को जिसे 'लघुतम रूपान्तर' कहा गया है सम्पादित करके प्रकाशित भी किया जा रहा है।[१] उसके अनुसार पृथ्वीराज के पूर्व-पुरुषों की वंशावली निम्नलिखित है:—

मानिक्कराय
|
बीसल
|
सारंग
|
आनल्ल
|
जयसिंहदेव
|
आनन्द
|
सोमेश्वर
|
पृथ्वीराज

चहुवान वंश की पृथ्वीराज तक की वंशावली के लिए सबसे प्रामाणिक साक्ष्य तीन शिला-लेखों से प्राप्त है: एक है सं० १०३० वि० का हरस का,[२] दूसरा है सं० १२२६ का बीजोल्यों का[३] और तीसरा है सं० १२३९ का मदनपुर का[४]। 'पृथ्वीराज विजय' में जो वंशावली आती है, वह लगभग वही है जो इन शिलालेखों में आई है, किन्तु 'पृथ्वीराजरासो' में आई हुई वंशावली इस वंशावली से बहुत भिन्न है। 'रासो' के सबसे छोटे रूप की वंशावली के सात नामों में से तीन ही 'पृथ्वीराज विजय' और इन शिला-लेखों की वंशावली में आते हैं— बीसल, आनल्ल और सोमेश्वर; शेष उसमें नहीं मिलते हैं। कहना नहीं होगा कि 'रासो' के बड़े पाठों में जो अतिरिक्त नाम आते हैं, वे भी इसी प्रकार भिन्न ठहरते हैं।

यह सब होते हुए भी जो बात आश्चर्य में डालने वाली है—फिर भी जो अभी तक 'पृथ्वीराज रासो' के पारखियों की दृष्टि में नहीं आई है—वह यह है कि 'रासो' के लेखक को 'पृथ्वीराज विजय' का यथेष्ट ज्ञान था, और उसने 'विजय' की रचना का अपने काव्य में उल्लेख भी किया है। उसका यह उल्लेख कैंवास-वध-प्रकरण में हुआ है।[५] पूरा प्रसंग 'रासो' में इस प्रकार है।

कैंवास पृथ्वीराज का मन्त्री है—जैसा वह (कदंबवास) 'पृथ्वीराज विजय' में भी है। वह पृथ्वीराज की कर्नाट देश की एक दासी पर आसक्त हो जाता है, और एक दिन जब पृथ्वीराज आखेट के लिए बाहर जाता है, वह अवसर पा कर रात्रि के प्रारंभिक प्रहर में उस दासी के कक्ष में

[१] पृथ्वीराज रासो का लघुतम रूपान्तर'—संपा० नरोत्तमदास स्वामी, 'राजस्थान भारती' भाग ४, अंक १, पृ० १२-३५ तथा परवर्ती कुछ अंक।

[२] देखिए भांडारकर: 'इंस्क्रिप्शन्स ऑव् नार्दर्न इंडिया', अभिलेख संख्या ८२।

[३] वही ,, संख्या ३४४।

[४] वही ,, संख्या ३९८।

[५] दे० प्रस्तुत संस्करण का सर्ग ३।

हुए जाता है। यह रानी को जब इस बात की सूचना मिलती है, वह पृथ्वीराज को बुलवा भेजती है। पृथ्वीराज रात्रि में ही आकर कैंवास का वध करता है, और उसको भूमि में गड़वा कर पुनः आखेट पर वह चला जाता है। सबेरा होने पर वह राजधानी लौटता है। यहीं पर 'विजय' के सम्बन्ध का निम्नलिखित कथन आता है[1] :—

मझ्झ पहर पुच्छह तिहि पंडिय।
कहि कवि 'विजय' साह जिह दंडिय।
सकल सूर बोलवि सभ मंडिय।
आसिष जाय दीय तब चंडिय॥

अर्थात्—प्रहर के मध्य में पंडित से वह (पृथ्वीराज) पूछता (कहता) है, "हे कवि, तुम [मेरी] विजय (का काव्य) कहो, जिस प्रकार मैंने [युद्ध में] शाह (शहाबुद्दीन) को दण्डित किया है।" [तदनन्तर] समस्त सूरों को बुलवा कर उसने सभा मांडी (की) [जिसमें] जाकर तब चण्डी-भक्त [चन्द] ने आशीर्वाद दिया।

इस उल्लेख में 'विजय' के सम्बन्ध की कुछ बातें अत्यन्त प्रकट हैं :—

१. 'विजय' की रचना पृथ्वीराज के आदेश से हुई।
२. 'विजय' का कर्त्ता कोई 'पण्डित' कवि था।
३. 'विजय' में शाह (शहाबुद्दीन) पर प्राप्त पृथ्वीराज की विजय की कथा कही गई।
४. यह 'पण्डित' कवि चन्द नहीं था, चन्द तो इस प्रसंग के बाद आता है। और 'रासो' भर में चन्द 'भट्ट' है, 'पण्डित' नहीं है।

'पृथ्वीराज विजय' की जो प्रति प्राप्त हुई है, वह पृथ्वीराज के राज्य ग्रहण प्रकरण के कुछ ही पीछे खण्डित हो जाती है। उसके प्राप्त अन्तिम अंशों में पृथ्वीराज की सभा में काश्मीर के कवि पण्डित जयानक का आगमन होता है[2] और इसकी शैली काश्मीरी काव्यों की शैली का अनुसरण करती है, इसलिए विद्वानों ने अनुमान किया है कि 'विजय' का कवि यही पण्डित जयानक है।[3] इस काव्य के प्रारम्भ में ही कहा गया है कि पृथ्वीराज ने ['विजय' के] कवि का आदर किया था, और उसी ने यह काव्य लिखने के लिए उसे प्रेरित किया था,[4] इसलिए और इसलिए भी कि इस ग्रन्थ से कुछ उदाहरण स० १२०० ई० के लगभग होने वाले जयार्थ के द्वारा लिखित राजानक रुय्यक के 'अलंकार सर्वस्व' की 'अलंकार विमर्शिणी' नाम की टीका तथा उसी के द्वारा लिखित 'अलंकारोदाहरण' में दिए गए हैं अनुमान किया गया है कि इसकी रचना पृथ्वीराज के जीवन-काल में (सन् ११९३ में उसका देहान्त हुआ) हुई होगी।[5] इसमें ११९१ ई० में प्राप्त शहाबुद्दीन पर पृथ्वीराज के विजय की कथा कही गई थी, यह भी अनुमान किया गया है।[6] उपर्युक्त प्रथम तथा तृतीय अनुमानों की पुष्टि 'रासो' की ऊपर उद्धृत पंक्तियों से भली भाँति हो जाती है। द्वितीय अनुमान बहुत युक्ति-संगत नहीं लगता है, और 'रासो' से उसकी पुष्टि भी पूर्ण रूप से नहीं होती है। 'रासो' के प्राप्त समस्त रूपों के अनुसार शहाबुद्दीन पर पृथ्वीराज के विजय की घटना कैंवास-वध के पूर्व

[1] प्रस्तुत संस्करण, सर्ग ३, छन्द १९।
[2] 'पृथ्वीराज विजय', सर्ग १२, छन्द ६३ तथा ६८।
[3] वही, प्रस्तावना, पृ० २।
[4] वही, सर्ग १, छन्द ३१-३५।
[5] 'पृथ्वीराज विजय', प्रस्तावना, पृ० २।
[6] वही, पृ० २।

आती है, तदनन्तर कैंवास-वध आता है, फिर संयोगिता के लिए पृथ्वीराज और जयचन्द का सघर्ष आता है, जिसमें सफलता पृथ्वीराज को प्राप्त होती है, और अन्त में पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन का वह युद्ध आता है जिसमें पृथ्वीराज पराजित और बन्दी होता है। 'रासो' के अनुसार 'विजय' 'पण्डित' को काव्य कहने का आदेश कैंवास-वध प्रकरण में होता है, और यह असम्भव नहीं है कि उसने 'विजय' काव्य पृथ्वीराज के जीवन-काल में अर्थात् पृथ्वीराज-शहाबुद्दीन के अन्तिम युद्ध के पूर्व समाप्त कर लिया हो। किन्तु 'रासो' में पुनः किसी प्रसग में पण्डित से 'विजय' काव्य सुनने की या उसकी रचना के लिए उसे पुरस्कृत किए जाने का उल्लेख नहीं होता है, इसलिए 'रासो' के आधार पर यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि उसके कवि 'पण्डित' ने उसे उक्त अन्तिम युद्ध के पूर्व पूर्ण भी कर लिया था।

'पृथ्वीराज रासो' से 'पृथ्वीराज विजय' के सम्बन्ध में जो यह निश्चित प्रकाश पड़ता है, वह अत्यन्त महत्व का है, और इस प्रकाश के लिए हमें 'रासो' के कवि का अत्यन्त कृतज्ञ होना चाहिए। प्रकट है कि जब 'रासो' के कवि को 'विजय' का ऐसा निकट का परिचय था, तो 'रासो' के मूल रूप में हमें—अन्य अनैतिहासिक उल्लेखों को यदि छोड़ दिया जाय—ऐसे उल्लेख न मिलने चाहिए 'विजय' के विरुद्ध जाते हैं। और यह बतलाना अनावश्यक होगा कि 'रासो' के प्रस्तुत पाठ-निर्धारण के अनंतर इस परिणाम की पुष्टि पूर्ण रूप से हुई है।

'विजय' के उपर्युक्त उल्लेख से यह भी प्रमाणित होता है कि 'रासो' अपने मूल रूप में निरा 'भट्ट भणत' नहीं था, जैसा प्रायः समझा जाता है; वह एक ऐसे जिम्मेदार कवि की कृति था, जो भले ही कथा-नायक का समसामयिक न रहा हो, पर जिसने उसकी जीवन-गाथा से परिचित होने का यत्न किया था, और जो उसकी सबसे अधिक पूर्ण और प्रामाणिक जीवन-कथा 'पृथ्वीराज-विजय' से भली भाँति परिचित था।

—:*:—

९. 'हम्मीर महाकाव्य' और 'पृथ्वीराज रासो'

हम्मीर महाकाव्य', जैसा रचना के अन्त में कहा गया है,[१] जयसिंह सूरि के शिष्य नयचन्द्र सूरि द्वारा तोमर नरेश वीरम के समय में रचा गया था। तोमर वीरम की निश्चित तिथि ज्ञात नहीं है, किन्तु सं० १६८८ का रोहतास (जिला–झेलम, पंजाब) का एक शिलालेख तोमर मित्रसेन के समय का है, जिसमें उसके पूर्व-पुरुषों की नवीं पीढ़ी में गोपाचल (ग्वालियर) नरेश तोमर वीरम आते हैं।[२] यह वंशावली इस प्रकार है :—

वीरम
|
गणपति
|
डूँगुंसिंह (डूँगरसिंह ?)
|
कीर्तिसिंह
|
कल्याण साहि
|
मानसाहि
|
विक्रमसाहि
|
रामसाहि
|
शालिवाहन
|
श्यामसाहि — मित्रसेन
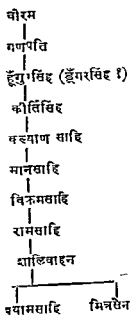
१ 'हम्मीर महाकाव्य', संपा० नीलकंठ जनार्दन कीर्तने, मुद्रक एजुकेशन सोसाइटी प्रेस, बम्बई, पृ० १३३-१३५।

२ देखिए भांडारकर : 'इंस्क्रिप्शन्स आव् नार्दर्न इंडिया', अभिलेख संख्या ९८८ तथा 'जर्नल ऑव् एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल' भाग ८, पृ० ६९५।

इन नौ पीढियों के लिए, यदि प्रत्येक पीढी के लिए २५ वर्ष के हिसाब से, २२५ वर्ष मान लिये जायें तो तोमर वीरम का समय सं० १४६३ के लगभग होना चाहिये। इसका समर्थन गोपाचल नरेश डूँगर सिंह के समय के एक अभिलेख से भी होता है जो सं० १५१० का है और अलवर (राजपूताना) की एक मूर्ति पर अङ्कित है।[1] अत: प्रकट है कि 'हम्मीर महाकाव्य' का रचना-काल सं० १४६० के आस पास होना चाहिए।

इस रचना में हम्मीर के पूर्व पुरुष होने के नाते पृथ्वीराज तथा उनके भी पूर्व-पुरुषों का चरित अङ्कित हुआ है। पृथ्वीराज के पूर्व-पुरुषों की वंशावली इसमें इस प्रकार मिलती है[2] :—

चाहमान
|
वासुदेव
|
नरदेव
|
चंद्रराज
|
जयपाल चक्री
|
जयराज
|
सामन्त सिंह
|
गुयाक
|
नन्दन
|
वप्रराज
|
हरिराज
|
सिंहराज
|
भीम
|
विग्रहराज
|
गङ्गदेव
|
वल्लभराज
|
राम
|

[1] भांडारकर : 'इंस्क्रिप्शन्स ऑव नॉर्दर्न इंडिया', अभिलेख सं० ८१२।

[2] 'हम्मीर महाकाव्य', उपर्युक्त, संपादकीय वक्तव्य, पृ० १४-१५।

चामुण्डराज
|
दुर्लभराज
|
दुसाल
|
विश्वल
|
पृथ्वीराज (प्रथम)
|
अल्हण
|
अनल
|
जगद्देव
|
विसल
|
जयपाल
|
गङ्गपाल
|
सोमेश्वर
|
पृथ्वीराज (द्वितीय)

पृथ्वीराज के इन पूर्व-पुरुषों के वृत्त अति संक्षेप मे देकर कवि ने पृथ्वीराज का वृत्त कुछ विस्तार पूर्वक कि है, जो संक्षेप में इस प्रकार है :—

गङ्गदेव के देहान्त के अनन्तर सोमेश्वर राजा हुआ। उसका विवाह कर्पूर देवी से हुआ, जिसने एक पुत्र को जन्म दिया। इस पुत्र का नाम पृथ्वीराज रखा गया। दिन-दिन शिशु बढ़ता रहा और एक पुष्ट तथा स्वस्थ बालक हो गया। जब उसने पढ़ने और शस्त्रास्त्र के प्रयोग में क्षमता प्राप्त कर ली, सोमेश्वर ने उसे सिंहासनासीन कर दिया और स्वयं वन में जाकर योग द्वारा शरीर त्याग कर दिया। जिस प्रकार पूर्वांचल दिनकर की किरणों से प्रकाश पा कर चमक उठता है उसी प्रकार पृथ्वीराज अपने पिता से राज्य प्राप्त कर चमका।

इसी समय शहाबुद्दीन पृथ्वीराज को वश में करने का यत्न कर रहा था। पश्चिम के राजागण ने उसके द्वारा त्रस्त होकर गोविंदराज के पुत्र चन्द्रराज को अपना प्रमुख बनाया और मिलकर वे पृथ्वीराज के पास आए। पृथ्वीराज ने उनके मुखों पर विषाद की रेखायें देख कर उनके विषाद का कारण पूछा। चन्द्रराज ने कहा कि एक मुसल्मान, जिसका नाम शहाबुद्दीन था, राजागण के विनाश के लिए उदित हो गया था, जिसने उनके अधिकतर नगरों को लूट लिया और जला दिया था, उनकी स्त्रियों को भ्रष्ट कर दिया था, और उन्हें सर्वथा एक दयनीय दशा को पहुँचा दिया था। उसने मुलतान में अपनी राजधानी स्थापित कर ली थी। वे उसी नृशंस शत्रु और उसके अत्याचारों से पीड़ित होकर पृथ्वीराज की शरण में आए थे।

पृथ्वीराज ने जब शहाबुद्दीन के इन दुष्कृत्यों को सुना, वह रोष से भर गया, भावावेश के कारण उसका हाथ स्वत उसकी मूछों पर पहुँच गया और उसने आगत राजागण से कहा कि वह इस शहाबुद्दीन को घुटने टेके, हाथ जोडे और पैरों में बेड़ियाँ पहने हुए उनसे क्षमा याचना के लिये विवश कर देगा, नहीं तो वह सच्चा चौहान नहीं।

कुछ दिनों बाद एक अच्छी सेना लेकर पृथ्वीराज मुल्तान पर आक्रमण करने के लिए चल पड़ा और कई पड़ावों के बाद शत्रु के देश में प्रविष्ट हो गया। जब शहाबुद्दीन को राजा के पहुँचने का समाचार मिला, वह भी उसका सामना करने के लिए बढा। उस युद्ध में जो इस समय हुआ, पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को बंदी किया, और इस प्रकार उसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की, उसने इस अभिमानी मुसलमान को विवश किया कि वह इन राजागण से, जिन्हें उसने बरबाद कर दिया था, घुटने टेककर क्षमा याचना करे। प्रतिज्ञा पूरी हो जाने पर, पृथ्वीराज ने शरणागत राजाओं को बहु-मूल्य उपहार देकर विदा किया और शहाबुद्दीन को भी उसी प्रकार उपहार देकर उसने मुल्तान जाने की अनुमति दी।

शहाबुद्दीन इस प्रकार सद्व्यवहार प्राप्त करके भी प्राप्त पराजय के कारण अत्यधिक लज्जित हुआ। इसके बाद सात बार वह अपनी पराजय का प्रतिशोध लेने के लिए पृथ्वीराज पर चढ आया, और प्रत्येक बार पूर्ववर्ती बार की अपेक्षा अधिक तैयारी करके आया, किन्तु वह उस हिन्दू राजा के द्वारा हर बार पूर्ण रूप से पराजित हुआ।

जब शहाबुद्दीन ने देखा कि वह पृथ्वीराज को शस्त्रास्त्र के बल अथवा नीति बल से परास्त नहीं कर सकता था, उसने घटैक देश के शासक को अपनी बार बार की पराजय का विवरण लिख भेजा और उससे सहायता की याचना की। यह उसको उस राजा के घोड़ों तथा सैनिकों के रूप में प्राप्त हुई। इस प्रकार से शक्ति-सवर्द्धन करके शहाबुद्दीन ने द्रुत गति से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और उसे शीघ्र ही ले लिया। वहाँ के निवासी इससे भयभीत हो उठे और वे चारों दिशाओं में भागने लगे। पृथ्वीराज को यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ और उसने कहा कि यह शहाबुद्दीन एक नटखट बालक के समान आचरण कर रहा था, क्योंकि पहले ही कई बार उसके द्वारा पराजित हो चुका था और हर बार अपनी राजधानी को जाने के लिए सर्वथा निरापद छोड दिया जाता था। पृथ्वीराज शत्रु पर प्राप्त अपनी पूर्ववर्ती विजयों के कारण भूला हुआ केवल उस छोटी सी सेना को इकट्ठी कर जो उसके आस पास थी आक्रमण कर्त्ता का सामना करने के लिए आगे बढा।

राजा की सेना यद्यपि छोटी ही थी, उसके आगमन का समाचार पाकर शहाबुद्दीन अत्यधिक भयग्रस्त हुआ, क्योंकि उसे अपनी पूर्ववर्ती पराजयों और दुर्गतियों का स्मरण अत्यन्त स्पष्ट था। रात में, इसलिए, उसने अपने कुछ विश्वस्त भृत्यों को राजा के शिविर में भेजा, और उनके द्वारा प्रचुर धन देने का प्रलोभन देकर उसने राजा के अश्वस्थानिक और वादकों को मिला लिया। उसने तब बहुत से मुसलमानों को गुप्त रूप में शत्रु के शिविर में भेज दिया, जो इसमें बहुत तड़के, जबकि चन्द्रमा पश्चिम के क्षितिज पर पहुँच ही पाया था, और सूर्य ने पूर्व को ज्योतिर्मय करना प्रारम्भ ही किया था प्रविष्ट हो गए।

यह देखकर राजा के शिविर में बड़ा हल्ला हुआ और गड़बड़ी मच गई। जब कि राजा के भृत्य आक्रान्ताओं का सामना करने को सन्नद्ध हो रहे थे, राजा का विश्वासघाती अश्वस्थानिक, जैसा कि उससे उसके मिलाने वालों ने कह रखा था, राजा के उस घोडे को जीन कस कर लाया जो नाट्यारम्भ कहलाता था, वादक भी जो अपना अवसर देख रहे थे, जब राजा घोडे पर सवार हो गया, अपने वाद्यों पर वे वे राग बजाने लगे जो राजा को प्रिय थे। इस पर राजा का घोड़ा

वादकों के संगीत पर ताल देता हुआ गर्वोन्मत्त होकर नाचने लगा। राजा का चित्त कुछ देर के लिए इस खेल में लगा रहा, और उस क्षण के सर्वाधिक महत्त्व के कार्य को वह भूल गया।

मुसलमानों ने राजा की असावधानी का लाभ उठाया और जोरों का आक्रमण किया। इस दशा में राजपूत कुछ न कर सके। पृथ्वीराज यह देखकर घोड़े से उतर पड़ा। हाथ में तलवार लेकर उसने अनेक मुसलमानों को काट डाला। इसी बीच एक मुसलमान ने पीछे से पीछे की ओर से उसके गले में धनुष डाल कर राजा को गिरा दिया, जब कि अन्य मुसलमानों ने उसे बन्दी कर लिया। इसी समय से बन्दी राजा ने भोजन और विश्राम छोड़ दिया।

शहाबुद्दीन का सामना करने के लिए निकलने के पूर्व पृथ्वीराज ने उदयराज को आदेश दे रक्खा था कि वह उसके पीछे आकर शत्रु पर आक्रमण करे। उदयराज रणक्षेत्र में लगभग उस समय पहुँचा जब मुसलमान राजा को बन्दी करने में सफल हो चुके थे। शहाबुद्दीन उस समय उदय-राज से युद्ध करने में हार की आशंका करके बन्दी राजा को साथ लिए नगर के भीतर चला गया।

जब उदयराज ने पृथ्वीराज के बन्दी होने का समाचार सुना, उसका हृदय अत्यधिक पीड़ित हो उठा। राजा को अपने भाग्य के सहारे छोड़ कर वह लौटना नहीं चाहता था, क्योंकि यह करना उसके निर्मल यश के लिए उसके गौड़ देश में कलंक माना जाता। इसलिए उसने शत्रु के नगर (योगिनीपुर—दिल्ली) के चारों ओर घेरा डाल कर उसके फाटक पर युद्ध करता एक मास तक डटा रहा।

इस घेरे के बीच एक दिन शहाबुद्दीन का एक भृत्य उसके पास गया और उससे कहने लगा कि उसे एक बार उस पृथ्वीराज को मुक्त करना चाहिए था जिसने उसे अनेक बार बन्दी किया था और आदरपूर्वक मुक्त किया था। शहाबुद्दीन इस भले मानस की बात से प्रसन्न नहीं हुआ और उसने बोला कि उसके जैसे परामर्शदाता ही राज्यों के पतन के कारण होते हैं। तब क्रुद्ध शहाबुद्दीन ने आज्ञा दी कि पृथ्वीराज को दुर्ग के भीतर ले जाया जावे। जब यह आदेश दिया गया, वीरों ने लज्जा से अपनी गर्दनें नीची कर लीं, और धर्मनिष्ठों ने आँखों में आते हुए आँसुओं को रोकने में अपने को असमर्थ पाकर नेत्रों को आकाश की ऊपर उठा लिया। पृथ्वीराज इसके कुछ दिनों बाद देह त्याग कर स्वर्ग-वासी हुआ।

जब उदयराज ने अपने मित्र के देहान्त की बात सुनी, उसने सोचा कि अब उसके लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान वही था जहाँ उसका मित्र जा चुका था। उसने इसलिए अपने समस्त अनुचरों को एकत्र किया और उनको लेकर घमासान युद्ध करते हुए अपनी समस्त सेना के साथ वहीं गिरा और अपने तथा उनके लिए स्वर्ग का शाश्वत सुख प्राप्त किया।

'हम्मीर महाकाव्य' की इस समस्त कथा का आधार क्या है, यह उसके लेखक ने नहीं कहा है। यह तो प्रकट ही है कि 'पृथ्वीराज रासो' का कोई भी रूप इसका आधार नहीं है, क्योंकि न इसमें दी हुई उपर्युक्त वंशावली उसमें मिलती है और न इसमें दी हुई पृथ्वीराज की उपर्युक्त कथा ही। इसकी वंशावली प्रायः 'पृथ्वीराज विजय' तथा शिला-लेखों में आई हुई वंशावली का अनुसरण करती है, केवल कुछ नाम इसमें अधिक हैं।[1] इसकी कथा पूर्णतः किसी ज्ञात ग्रन्थ की कथा से नहीं मिलती है, केवल पृथ्वीराज के अन्त की जो कथा 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज-प्रबन्ध[2] में दी हुई है वह इस ग्रन्थ की तत्संबंधी कथा से कुछ मिलती है। दोनों में शहाबुद्दीन पराजित होने के

[1] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र आया हुआ 'पृथ्वीराज विजय और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।
[2] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र आया हुआ 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।

अनन्तर बन्दी हुआ और पृथ्वीराज के द्वारा मुक्त किया गया है—मुसलमान इतिहास-लेखक मिनहाजुस्सिराज के अनुसार उसकी सेना युद्ध-स्थल छोड़कर भाग गई थी और वह भी अपने एक गुलाम के द्वारा युद्ध-स्थल से दूर हटा लिया गया था, बन्दी नहीं हुआ था;[१] दोनों में शहाबुद्दीन के सात बार असफल आक्रमण करने की बात आती है—मिनहाजुस्सिराज के अनुसार शहाबुद्दीन ने केवल एक असफल आक्रमण किया था।[२] दोनों में नाट्यारंभादव पर सवार होने के कारण राजा का पराभव हुआ है, यद्यपि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज-प्रबन्ध में उस पर सवार कराने का षड्यन्त्र कदम्बवास के द्वारा किया गया लगता है और इस ग्रन्थ में वह शहाबुद्दीन के भृत्यों द्वारा पृथ्वीराज के अश्वाधानिक और वादकों को मिलाकर किया गया है। इसी प्रकार पृथ्वीराज को मुक्त किए जाने के विषय में शहाबुद्दीन से दोनों रचनाओं में कहा गया है, यद्यपि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज प्रबन्ध में यह स्वयं पृथ्वीराज से कहलाया गया है जब कि इस रचना में किसी अन्य के द्वारा। फलतः आंशिक रूप में दोनों रचनाओं में साम्य प्रकट है।

अन्यत्र हम देखते हैं कि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' का पृथ्वीराज-प्रबन्ध निस्सदेह 'पृथ्वीराज रासो' के बाद की रचना है—उसमें 'रासो' के दो छन्द उद्धृत हैं जो कि किसी सुनियोजित प्रबन्ध-काव्य के अंश हैं और उसमें आई हुई कथा भी अंशतः इस ग्रन्थ की कथा का भी अनुसरण करती है।[३] यहाँ हम देखते हैं कि यह अंशतः इस ग्रन्थ की कथा का भी अनुसरण करती है। और 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज-प्रबन्ध का इन दोनों की अपेक्षा निकटतर साम्य किसी प्राचीन रचना से ज्ञात नहीं है। इसलिए यह प्रतीत होता है कि उसकी रचना 'रासो' तथा 'हम्मीर महाकाव्य' अथवा उसके आधार-सूत्रों की सहायता से, जो अब उपलब्ध नहीं हैं, हुई। 'रासो' के विभिन्न पाठों में समान रूप से मिलने वाली कथा सादी है और लगभग उतनी ही सादी कथा 'हम्मीर महाकाव्य' की भी है जो हमें ऊपर मिली है, जब कि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज प्रबन्ध की कथा काफी पेचीली बनावट-बिनावट की है।[४] इसलिए यह किसी प्रकार संभव नहीं लगता है कि 'हम्मीर महाकाव्य' की कथा 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज-प्रबन्ध की कथा के आधार पर लिखी गई हो। उसको लेकर निर्मित किए जाने पर उसके कैंवास और चन्द का भी इसमें किसी न किसी मात्रा में आना प्रायः अवश्यंभावी होता।

—:#:—

[१] दे० इलियट और डाउसन, भाग २, पृ० २९५-९७।
[२] दे० वही।
[३] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र आया हुआ 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।
[४] दे० वही।

१०. 'पुरातन प्रबंधसंग्रह' और 'पृथ्वीराज रासो'

इक्कीस वर्ष हुए प्रसिद्ध जैन विद्वान् श्री मुनि जिनविजय ने 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' नाम से कुछ जैन लेखकों द्वारा लिखे हुए कथा-प्रबन्धों का एक संग्रह प्रकाशित किया था,[1] जिन में अन्य प्रबन्धों के साथ 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' तथा 'जयचन्द प्रबन्ध' भी थे। इन प्रबन्धों के अन्तर्गत क्रमशः पृथ्वीराज तथा जयचन्द की कथाएँ दी हुई हैं, और साथ ही दो-दो छप्पय भी उद्धृत किए गए हैं जो चन्द बलिद्दिक (बरदाई) के रचे हुए कहे गए हैं। इन प्रबन्धों से चन्द बरदाई और एक अन्य कवि ल्हह के समय पर नया प्रकाश पड़ा है।[3] यहाँ हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि उसमें दिए हुए पृथ्वीराज प्रबन्ध से चन्द की पृथ्वीराज सम्बन्धिनी रचना के स्वरूप पर क्या प्रकाश पड़ता है। यह प्रबन्ध-संग्रह संस्कृत में है, इसलिए नीचे इसके पृथ्वीराज प्रबन्ध का एक हिन्दी भाषांतर दिया जा रहा है और साथ ही इसमें उद्धृत चन्द के छप्पयों का अर्थ भी पाद टिप्पणी में यथास्थान प्रस्तुत किया जा रहा है। कोष्ठकों में आई हुई शब्दावली आशय के स्पष्टीकरण के लिये प्रस्तुत लेखक द्वारा दी जा रही है।

"शाकंभरी नगरी में चाहमान वंश में श्री सोमेश्वर नामक राजा था। उसका पुत्र पृथ्वीराज था और उस (पृथ्वीराज) का भाई यशोराज था। उस (पृथ्वीराज) का शस्त्रहस्त श्रीमाल जाति का प्रताप सिंह था और मन्त्री कैंवास था। इन दोनों में परस्पर विरोध था। वह राजा पृथ्वीराज योगिनीपुर (दिल्ली) में राज्य करता था। उसके धवलगृह के द्वार पर न्याय का घंटा था। वह महा बलवान और धनुधरों का धुरीण राजा था। यशोराज आशी (हाँसी) नगर में कुमारभुक्ति (जागीरदार) था। उस (पृथ्वीराज) का वाराणसी अधिपति जयचन्द से वैर था।

एक बार गर्जनक (गजनी) के तुर्काधिपति (शहाबुद्दीन) ने पृथ्वीराज से वैर रखते हुए योगिनीपुर (दिल्ली) पर चढ़ाई की। पृथ्वीराज का अमात्य दाहिमा जाति का कैंवास नाम का मन्त्रीश्वर था। उसकी अनुमति (मन्त्रणा) से राजा (पृथ्वीराज) दो लाख घोड़े तथा पाँच सौ हाथी लेकर (तुर्क सेना के) सामने चल पड़ा। तुर्क सेना से युद्ध हुआ। शक (तुर्क) सेना छिन्न-भिन्न हो गई। सुल्तान (शहाबुद्दीन) जीवित पकड़ा गया। थाने की बेड़ियों में डाला जाकर वह योगिनीपुर (दिल्ली) लाया गया और [पृथ्वीराज की ?] माता के कहने पर छोड़ दिया गया। इसी प्रकार वह सात बार बँध बँध कर मुक्त हुआ और करद बना लिया गया।

[1] पुरातन प्रबंध संग्रह, प्रकाशक सिंघी जैन ज्ञानपीठ, कलकत्ता, १९३६ ई०।

[2] वही, पृ० ८६–८७ तथा ८८–९०।

[3] देखिए अन्यत्र 'पृथ्वीराज रासो का रचना काल' शीर्षक।

[शल्यहस्त] प्रतापसिंह कर वसूल करने गर्जनक (गजनी) जाया करता था। एक बार वह एक मसजिद देखने गया और वहाँ दरवेश आदि को उसने एक लक्ष स्वर्ण टंकक (सिक्के) दिए। [इस पर] मन्त्री (कैंवास) ने राजा से कहा, 'देव, गर्जनक (गजनी) के [कर के] धन से [राजकार्य का] निर्वाह होता है [और उसे] यह (प्रतापसिंह) इस प्रकार बर्बाद कर रहा है।' राजा ने [प्रतापसिंह से] पूछा, तो उसने कहा 'देव की ग्रहविषमता जान कर ही उस समय मैंने [यह धन] धर्म में व्यय किया था। ज्योतिषियों से मैंने पूछा था, उन्होंने आप को कष्ट बताया था।'

इधर शल्यहस्त (प्रताप सिंह) ने राजा के कानों में लगकर कहा, 'मन्त्री कैंवास ही बार बार तुर्कों को लाता (बुलाता) है।' राजा [यह सुनकर] रुष्ट हुआ, और इसलिए उसने मन्त्री (कैंवास) को मारने की ठानी। इसके बाद रात्रि में सर्व अवसर (दरबार-ए-आम) के उठने पर मन्त्रीव(कैंवास) जब प्रतोली (मुख्यद्वार) से निकल रहा था, राजा ने दीपक के अभिज्ञान से बाण छोड़ा। वह (बाण) मन्त्री (कैंवास) की कक्ष (काँख) के नीचे से होता हुआ दीपधर के हाथ में जा लगा और [उसके] हाथ से दीपक गिर गया। कोलाहल होने पर राजा ने पूछा, 'अरे, यह (कोलाहल) क्या (क्यों) है?' [लोगों ने कहा,] 'देव, घातक के द्वारा मन्त्री (कैंवास) पर बाण छोड़ा गया था।' [पृथ्वीराज ने पूछा,] 'अरे! क्या मन्त्री [कैंवास] जीवित है?' [लोगों ने कहा,] 'देव, वे कुशल पूर्वक हैं।' इसके बाद रात्रि के पिछले भाग में द्वारभट्ट चन्द बलिद्दिक (बरदाई) ने राजा [पृथ्वीराज] से कहा—

(१)
इक्कु बाण पहुवीसु जु पइं कैंवासह मुक्कओ।
उर भितरि खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कउ।
बीअं करि संधीउं भंमइ सूमेसर नंदण।
एहु सु गडि दाहिमओ खणइ खुद्दइ सइंभरि वणु।
फुड छंडि न जाइ इहु लुब्भिउ वारइ पलकउ खल गुलह।
नं जाणउं चंद बलद्दिउ किं न वि छुट्टइ इह फलह॥[1]

(२)
अगहु म गहि दाहिमओ [राय !] रिपु राय खयंकरु।
कूडु मंत्र मम ठवओ एहु जंबूय मिलि जग्गरु।
सह नामा सिक्खवउं जइ सिक्खिवउं बुज्झई।
जंपइ चंद बलिद्दु मज्झ परमक्खर सुज्झइ।
पहु पहुविराय सइंभरि धणी सयंभरि सउणइ संभरिसि।
कइंबास बिआस बिसट्ठ विणु मच्छि बंधि बद्धओ मरिसि॥[2]

[1]. अर्थात् 'हे पृथ्वीश (पृथ्वीराज), तुमने जो एक (पहला) बाण कइंबास को [लक्ष्य करके] छोड़ा, उस बाण ने [उसके] हृदय के भीतर खलबली कर दी और धीर (कइंबास) की काँख के नीचे से वह चूक [कर निकल] गया। हे सोमेश्वरनन्दन, तुमने दूसरा बाण हाथ में साँधा तो [उसके लगने से] वह भ्रमित हो गया। इस प्रकार वह दाहिमा (कइंबास) [पृथ्वी में] गड़कर साँभर के वन को खन खोद रहा है। इस लोभी और पलक्क (लंपट) से इस बार (समय) [पृथ्वी का] यह खल गुड (कवच) स्फुट रूप में नहीं छोड़ा जा रहा है। बलिद्दिक चन्द कहता है, न जाने क्यों यह (कइंबास) [अपने कर्मों के] इस फल से नहीं छूट पा रहा है।'

[2] अर्थात् '[हे राजा,] रिपुराज (शहाबुद्दीन) को क्षय (नष्ट) करने [की सामर्थ्य रखने] वाला दाहिमा (कइंबास) अगह (अग्राह्य अथवा अगाध) मार्ग में [जा चुका] है [जिससे वह वापस नहीं बुलाया जा सकता है]। [तुम] कूट मन्त्र मत स्थित करो [क्योंकि] इस प्रकार [तुम्हारा शत्रु] जम्बू [-पति] से

राजा (पृथ्वीराज) ने भेद के भय से अन्धकार करा दिया। पहले प्रहरिक काल में सर्व अवसर (दरबार-ए-आम) में [जब] मंत्री (कैंवास) आया, तो वह विलुंचित (अलग) कर दिया गया। भट्ट (चंद बलिद्दिक) निष्कासित कर दिया गया। उस (चंद) ने कहा, 'पुनः तुम्हारे कल्याणमत के परे मैं [कुछ] नहीं कर रहा हूँ। मैं सिद्ध सारस्वत (सरस्वती-पुत्र) हूँ। तुम म्लेच्छ के द्वारा बँधकर शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होगे।' [ऐसा कहता हुआ] वह निकल कर वाराणसी चला गया। [वहाँ पर] राजा जयचन्द ने [उससे] कहा, 'मैंने तुम्हें बुलाया, किंतु तुम नहीं आए।' [चंद ने उत्तर दिया,] 'देव, तुम भी मृत्यु के निकट हो, इसलिए मैं यहाँ भी नहीं ठहरूँगा।'

इधर कैंवास के हटने पर नया मन्त्री हुआ। राजा ने [शल्यहस्त] प्रताप सिंह के भतीजे को अत्यधिक शक्तिसम्पन्न समझकर कारागार में डाल दिया। मन्त्री (कैंवास) अलग होने पर भी [राजा को] छोड़ नहीं (चैन लेने नहीं दे) रहा था। वह सुल्तान (शहाबुद्दीन) से मिला। उसने शकों (तुर्कों) का कटक बुलाया। [तुर्कों को] आया सुनकर पृथ्वीराज सामने निकल आया। तीन लाख घोड़े, दस सहस्र हाथी, पन्द्रह लाख मनुष्य, इस प्रकार......। आशी (हाँसी) का अतिक्रमण करके [तुर्क] कटक आगे चला गया। इसके अनन्तर सुल्तान (शहाबुद्दीन) की मन्त्री (कैंवास) से बातें हुईं। उसने कहा, 'समय आने पर बुलाऊँगा।'

अब पृथ्वीराज दस दिन तक सोया-रहा, परन्तु कोई उसे जगाता नहीं था, [क्योंकि] जो उसे जगाता था, उसी को वह मार डालता था। इसी समय प्रधान (कैंवास) के द्वारा सुल्तान बुलाया गया। राजा जागता नहीं था। धीरे धीरे कितने ही सामंत युद्ध करके मारे गए। कुछ भाग भी गए। सहस्र अश्वों......के शेष रहने पर बंदिन ने कहा, 'तुम अपने ही लोगों को मारते हो। तुम्हारे सोते सोते [तुम्हारा] सारा कटक मारा गया।' राजा [पृथ्वीराज] ने कहा, 'मैं मंत्री (कैंवास)...।' उसके विनष्ट होने पर राजा (पृथ्वीराज) शाकंभरी [देवी] को स्मरण करके नाटारंभाश्व पर चढ़कर भागा। भाई (यशोराज) सहित वह पीछा करने वाले तुर्कों के हाथ में नहीं आया।

इधर आशी (हाँसी)......देश में दो पर्वतिकाओं के बीच में भट्ट [चन्द] था। [वहाँ] राजा (पृथ्वीराज) को भेजकर जसराज (यशोराज) खड़ा हो गया। वह [सुल्तान के] कुछ कटक को [काट कर] खलिहान कर चुका था [जब,] वह वहीं मारा गया। सुल्तान साहबदीन (शहाबुद्दीन) ने उस मन्त्री (कैंवास) को......। '[राजा] पूँछ रहित सर्प के समान कर दिया गया है, [अपने] स्थान पर पहुँच जाने पर यह किस प्रकार पकड़ा जा सकेगा?' उस [मन्त्री] ने कहा, 'छल से।' जैसे ही घोड़ा [नाटारंभाश्व] नाचने लगा, बाजा बजाया जाने लगा, ऐसा करने से घोड़ा [नाटारंभाश्व] नाचता ही रह गया, चला नहीं [और] राजा के गले में सिंगिनी डाल दी गई। सुल्तान ने राजा को पकड़ लिया। स्वर्ण की बेड़ियों में [उसे] डाल कर और योगिनीपुर (दिल्ली) लाकर [सुल्तान ने उससे] कहा, 'राजा, यदि तुम्हें जीवित छोड़ दूँ तो तुम क्या करोगे?' राजा (पृथ्वीराज) ने कहा, 'मैंने तुम्हें सात बार मुक्त किया है; क्या तुम मुझे एक बार भी नहीं छोड़ रहे हो?'

मिलकर झगड़ रहा है। मैं तुम्हें सब परिणाम सिखा रहा हूँ कि तुम सीख कर भी जान सको। बंदिर चन्द कहता है, मुझे परम अक्षर (ज्ञान) सूझ रहा है। हे प्रभु पृथ्वीराज, सांभरपति, साँभर के ठकुर को सँभालो (स्मरण करो)। व्यास (बुद्धिमान) और वशिष्ठ (श्रेष्ठ) कइंवास के बिना तुम [शत्रु द्वारा] मत्स्यबंध (मछली की भाँति जाल) में बँधकर मृत्यु को प्राप्त होगे।'

अंध जिसकी [आँखों की] पुतलियाँ निकाल ली गई थीं, ऐसे राजा (पृथ्वीराज) के सम्मुख सुल्तान (शहाबुद्दीन) सभा में बैठा। राजा (पृथ्वीराज) खेद कर रहा था। उससे प्रधान (कैंवास) ने कहा, 'देव, क्या किया जाए ? दैव से ही यह [संकट] उत्पन्न हुआ है।' राजा ने कहा, 'यदि मुझे सिंगिनी और वाण दे दो, तो इस (सुल्तान) को मार डालूँ।' उसने कहा, 'ऐसा ही करिए।' फिर उसने जाकर सुल्तान (शहाबुद्दीन) से, निवेदन किया, 'यहाँ पर तुमको नहीं बैठना चाहिए।' [अतः] वहाँ अपने स्थान पर सुल्तान (शहाबुद्दीन) ने लोहे का एक पुतला बिठा दिया। राजा (पृथ्वीराज) को सिंगिनी दी गई। राजा (पृथ्वीराज) ने वाण छोड़ा [और] लोहे के पुतले के दो टुकड़े कर दिए। राजा (पृथ्वीराज) ने [तदनंतर] सिंगिनी त्याग दी। [उसने अपने मन में कहा,] मेरा काम तो हो नहीं पाया, [इसलिए अब] कोई और [मुझे ही] मारेगा।' इसके बाद वह सुल्तान (शहाबुद्दीन) के द्वारा गढ़े में डाला जाकर ढेलों से मारा गया। सुल्तान (शहाबुद्दीन) ने कहा, 'इसके रुधिर का भूमि पर गिरना ही शुभ है।' तदनुसार वह मारा गया। सम्वत् १२४६ में वह स्वर्ग सिधारा। योगिनीपुर (दिल्ली) लौट कर सुल्तान वहीं रह गया।"

'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' में उपर्युक्त प्रबन्ध के अतिरिक्त नीचे लिखा हुआ वृत्त भी दिया हुआ है—

"योगिनीपुर (दिल्ली) में श्री प्रथिमराज (पृथ्वीराज) के ऊपर अठारह लाख घोड़ों (घुड़सवार सेना) के साथ बादशाह (शहाबुद्दीन) चढ़ आया। तब एकादशी का पारण करके राजा निद्राभिभूत हो सो गया था। तब महायुद्ध के [उपस्थित] होने पर (गढ़ का) प्राकार टूटकर गिर पड़ा। डर के मारे राजा को कोई जगाता नहीं था। कुब्जिका ने (उसका) अँगूठा दबाकर जगाया। तब उसको मारकर वह फिर सो गया। दूसरे दिन चार वीरों के द्वारा वह जगाया गया। स्वरूप (परिस्थिति) को जानने पर वह प्राकार के वातायन में बैठा। शत्रुओं ने खूब युद्ध किया। [वह पकड़ा गया] तब अत्यधिक व्याकुलता के साथ राजा (पृथ्वीराज) ने तारा देवी का स्मरण किया। वह प्रकट हुई। उसी के द्वारा बादशाह के समीप वह रात्रि में मुक्त किया गया। जब उसे मारने के लिए प्रहार किया गया, विष्णु के दर्शन हुए और वह छोड़ दिया गया, दूसरी बार [इसी प्रकार] जटाधारी (शिव) दिखाई पड़े वह छोड़ दिया गया, तीसरी बार ब्रह्मा दिखाई पड़े और [तारा] देवी ने कहा भी, इसलिए [वह] मारा नहीं गया। [अपने] वस्त्र, हथियार आदि लेकर वह चला आया। सवेरे बादशाह ने वह सब देखा और कहा, '[तुम] जैसे वस्त्र लाये हो, वैसे मारे [भी] जाओगे।' बादशाह ने सारे वस्त्र माँगे। राजा ने कहा, 'जाने पर इसका सतगुना भेजूँगा।' ऐसा होने पर सेना वापस चली गई। तदनन्तर राजा जीवग्राह के द्वारा पकड़ा गया। [उसके] बन्दी हो जाने पर उसको दिया गया भोजन कुत्ता खा गया, यह देखकर वह विषण्ण हुआ। [उसने मनमें कहा] 'अरे, यह क्या ! मेरी रसोई सात सौ साँड़नियों के द्वारा लाई जाती थी [और अब यह अवस्था हो गई।] तब तो हम लोग युद्ध के द्वारा मारे गए।'

कहने की आवश्यकता नहीं कि यह अन्तिम वृत्त कथा-प्रबन्ध की दृष्टि से नहीं, तारा देवी और देवताओं के स्मरण का महत्व प्रतिपादित करने के लिए लिखा गया है। कथा-प्रबन्ध की दृष्टि से केवल पृथ्वीराज-प्रबन्ध ही विचारणीय है।

पृथ्वीराज-प्रबन्ध के लेखक ने यह नहीं बताया है कि उसकी कथा उसे किस रचना से प्राप्त हुई है। अतः इस प्रसंग में पहला विचारणीय प्रश्न यह है कि उपर्युक्त पृथ्वीराज-प्रबन्ध की कथा का आधार क्या है। ऊपर दिए हुए 'पृथ्वीराज-प्रबन्ध' में तीन कथायें आती हैं—एक तो पृथ्वीराज पर किए हुए शहाबुद्दीन के असफल आक्रमण की है, दूसरी कैंवास के मन्त्रिपद से हटाए जाने और द्वारभट्ट चन्द के निष्कासित किये जाने की है, और तीसरी पृथ्वीराज पर किए हुए शहाबुद्दीन के

अन्तिम आक्रमण और पृथ्वीराज के अन्त की है। अभी तक 'पृथ्वीराज रासो' के जितने पाठ प्राप्त हुए हैं उनमें भी ये तीन कथाएँ आती हैं—केवल एक पाठ में जो 'लघुतम' कहा जाता है शहाबुद्दीन के उक्त असफल आक्रमण की कथा नहीं आती है, फिर भी उसमें शहाबुद्दीन के एक असफल आक्रमण का उल्लेख स्पष्ट रूप से होता है। किन्तु दोनों का मिलान करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' तथा 'पृथ्वीराज रासो' में इन कथाओं की कल्पना, कुछ अति प्रचलित सामान्य तत्वों को छोड़कर, भिन्न भिन्न प्रकार से हुई है।

'पृथ्वीराज रासो' में उपर्युक्त तीनों कथाएँ इस प्रकार विवृत हैं —

१—उसके तीन पाठों बृहत्, मध्यम तथा लघु में पहली कथा इस प्रकार कही गई है: गुर्जर का चौलुक्य नरेश भीम आबू के सलष पँवार की कन्या इच्छिनी से विवाह करना चाहता था। उसने सलष के पास इस आशय का संदेश भेजा। सलष के अस्वीकार करने पर उसने उक्त आबूपति पर आक्रमण कर दिया। सलष ने जो पृथ्वीराज का सामन्त था, जब इस आक्रमण की सूचना पृथ्वीराज को भेजी, पृथ्वीराज सेना लेकर भीम का सामना करने के लिए चल पड़ा। तब तक दूसरी ओर से शहाबुद्दीन ने भी आक्रमण कर दिया था, इसलिए उसने उक्त सेना के दो भाग कर एक को कैंवास के नायकत्व में भीम का सामना करने के लिए भेज दिया और दूसरे को लेकर शहाबुद्दीन का सामना करने के लिये स्वयं बढ़ा। शहाबुद्दीन और पृथ्वीराज की सेनाओं की मुठभेड़ सरवर में हुई, और भीम से कैंवास का युद्ध सोमेश्वरी में हुआ। दोनों युद्धों में पृथ्वीराज को एक साथ विजय प्राप्त हुई, इससे पृथ्वीराज की आन बहुत बढ़ गई। 'लघुतम पाठ' में इन दो युद्धों के विवरण नहीं आते हैं, किंतु उसमें भी ऐसे छन्द आते हैं जिनमें इन दोनों युद्धों में पृथ्वीराज को विजय प्राप्त होने का उल्लेख होता है।[1]

२—'पृथ्वीराज रासो' के समस्त पाठों में दूसरी कथा इस प्रकार कही गई है: पृथ्वीराज की एक दासी थी जो कर्नाट देश की थी। उस पर पृथ्वीराज का मन्त्री कैंवास अनुरक्त हो गया था। अवसर पाकर एक दिन जब पृथ्वीराज आखेट के लिए गया हुआ था, रात्रि में कैंवास उस दासी के कक्ष में गया। पटरानी को एक दासी ने यह सूचना दी, तो उसने पृथ्वीराज को अविलम्ब आने के लिए सन्देश भेजा। सन्देश पाकर पृथ्वीराज आ गया। उसने बाण का संधान किया। पहला बाण तो कैंवास की काँख के नीचे से होता हुआ निकल गया, किन्तु दूसरा बाण उसके प्राण लेकर निकला। पृथ्वीराज ने मृत कैंवास को गढ्ढा खुदवा कर गड़वा दिया। यह घटना रातोरात इस प्रकार घटित हुई कि किसी को पता तक नहीं लगा। पृथ्वीराज पुनः आखेट के लिए लौट गया। दूसरे दिन आखेट से आकर उसने दरबार किया। उसमें उसने कैंवास के सम्बन्ध में प्रश्न किया कि वह कहाँ था किन्तु किसी को भी यह ज्ञात नहीं था कि कैंवास कहाँ था। पृथ्वीराज ने चन्द से भी यही प्रश्न किया। रात्रि में चन्द से सारी घटना सरस्वती ने बता दी थी, इसलिये चन्द ने कैंवास के बध की समस्त घटना विवृत कर दी। दरबार समाप्त हुआ। इधर कैंवास की स्त्री को जब यह ज्ञात हुआ, उसने चन्द से कैंवास का शव दिलाने के लिये अनुरोध किया। चन्द ने पृथ्वीराज से कैंवास का शव उसकी स्त्री को प्रदान किए जाने के लिये प्रार्थना की, तो पृथ्वीराज ने उसकी प्रार्थना इस शर्त पर स्वीकार की कि वह उसे अपने साथ ले जाकर कन्नौज दिखावेगा। चन्द के इसे स्वीकार करने पर कैंवास का शव उसकी विधवा को दिया गया, जिसको लेकर वह सती हुई।

३—तीसरी कथा पृथ्वीराज के तीन पाठों बृहत्, मध्यम तथा लघु में इस प्रकार कही गई है: कन्नौज से संयोगिता को लाने के अनन्तर पृथ्वीराज विलास में लिप्त हो गया। वह महल के

[1] दे० प्रस्तुत संस्करण के २.३, ३.६, ८२ तथा ८४।

भीतर ही पड़ा रहता था, और इस विलासाधिक्य के कारण उसका पौरुष भी घट गया था। उसके सामंत उसके इस आचरण से बहुत असन्तुष्ट हो गए थे। उधर शहाबुद्दीन पृथ्वीराज पर आक्रमण करने की घात में निरन्तर रहता था। अतः उपयुक्त अवसर समझकर उसने पृथ्वीराज पर आक्रमण कर दिया। राजगुरु तथा चन्द के प्रयत्नों से पृथ्वीराज की विलास-निद्रा भंग हुई। किन्तु विलम्ब हो चुका था। संयोगिता के लिए किए हुए कन्नौज के युद्ध में उसके अधिकतर वीर सामन्त कट चुके थे, रहे सहे जो थे, वे भी रूठ गए थे, और एक प्रमुख सामन्त हाहुलीराय जो जम्बू (जम्मू) का अधिपति था शहाबुद्दीन से मिल भी गया था। इसलिए पृथ्वीराज इस बार शहाबुद्दीन का सामना सफलता पूर्वक नहीं कर सका। युद्ध में सम्मिलित सामन्तों में से अधिकतर के कट जाने के बाद वह स्वयं युद्ध करने लगा। इसी समय एक तुर्क सरदार के द्वारा वह बन्दी हुआ। तदनन्तर शहाबुद्दीन उसे गजनी ले गया जहाँ उसने कुछ समय पीछे उसकी आँखें निकलवा लीं। इस बीच चन्द जम्बूपति हाहुलीराय को मनाकर पृथ्वीराज के पक्ष में करने के लिए उसके पास गया हुआ था, तो हाहुलीराय ने उसे जालन्धर की देवी के मंदिर में देवी का आदेश प्राप्त करने के बहाने ले जाकर बन्द कर दिया था। किसी प्रकार वहाँ से मुक्त होकर जब चन्द दिल्ली लौटा, तो उसने पृथ्वीराज के बन्दी बनाए जाने और नेत्रविहीन किए जाने की सारी घटना सुनी। उसने अविलम्ब गजनी की राह ली और अपने स्वामी पृथ्वीराज का शहाबुद्दीन से उद्धार कराने का संकल्प किया। गजनी पहुँचकर शहाबुद्दीन को उसने पृथ्वीराज का शर-सन्धान कौशल देखने के लिये राजी कर लिया। पृथ्वीराज शब्दवेध में अत्यन्त कुशल था। कौशल-प्रदर्शन का आयोजन हुआ। चन्द ने शहाबुद्दीन से कहा कि जब तक शहाबुद्दीन स्वयं तीन बार पृथ्वीराज को बाण चलाने का आदेश न देगा, वह बाण न चलाएगा। अतः शहाबुद्दीन ने उसे तीन बार आदेश देना भी स्वीकार कर लिया। शहाबुद्दीन का तीसरा आदेश होते ही पृथ्वीराज ने जो बाण छोड़ा, उसने शहाबुद्दीन का प्राणांत कर दिया। इसके अनन्तर पृथ्वीराज का भी प्राणांत हो गया। 'पृथ्वीराज रासो' के लघुतम पाठ में भी यह समस्त कथा है, केवल हाहुलीराय के सम्बन्ध के विस्तार उसमें नहीं हैं।

ऊपर दी हुई 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' तथा 'पृथ्वीराज रासो' की इन कथाओं में जो साम्य तथा अन्तर है वह इस प्रकार है :—

पहली कथा में साम्य इतना ही है कि पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन में एक युद्ध हुआ जिसमें शहाबुद्दीन को पराजय मिली। अन्तर दोनों में यह है कि उसी समय 'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार पृथ्वीराज ने भीम चौलुक्य जैसे एक अन्य प्रबल शत्रु का भी सफलता पूर्वक सामना किया, जिससे उसकी शक्ति की आन बहुत बढ़ गई।

दूसरी तथा तीसरी कथाओं के सम्बन्ध में दोनों में जहाँ पर साम्य इस बात में है कि पृथ्वीराज ने कैंवास और शहाबुद्दीन पर बाण छोड़े, अन्तर यह है कि 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में दोनों अवसरों पर वह अकृतकार्य हुआ है, जब कि 'पृथ्वीराज रासो' में वह दोनों अवसरों पर पूर्ण रूप से कृतकार्य हुआ है। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में कैंवास पर बाण-प्रहार पृथ्वीराज यह समझकर करता है कि वही शहाबुद्दीन को बार बार बुलाता है, जब कि 'पृथ्वीराज रासो' में उसकी लम्पटता के कारण वह उसे मारता है। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में पृथ्वीराज कैंवास पर एक ही बाण छोड़ता है, जब कि 'पृथ्वीराज रासो' में उसके चूक जाने पर वह दूसरा बाण भी छोड़ता है, जो कैंवास का प्राणांत कर देता है। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में कैंवास और चन्द दोनों को पृथ्वीराज उनके पदों से अलग कर देता है, किन्तु 'पृथ्वीराज रासो' में वह कैंवास का प्राणांत कर देता है और चन्द को पूर्ववत् अपना कृपापात्र और सहचर बनाए रखता है। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में अलग किए जाने पर कैंवास अपने स्वामी के शत्रु से मिलकर स्वामी का पराभव और अन्त कराता है, और चन्द भी अपने स्वामी के एक शत्रु के पास जाता है,

यद्यपि यह यहाँ सकता नहीं है, किन्तु 'पृथ्वीराज रासो' में दो में से एक बात भी नहीं घटती है, 'पृथ्वीराज रासो' में शहाबुद्दीन पृथ्वीराज पर स्वयं यह जानकर आक्रमण करता है कि उसकी शक्ति कन्नौज के युद्ध में क्षीण हो चुकी है, और उसके सामन्त उससे रूठे हुए हैं। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में पृथ्वीराज इस युद्ध में नाटारम्भाश्व पर चढ़ कर भाग निकलता है, यद्यपि मन्त्री कैंवास के छल से पकड़ा जाता है, 'पृथ्वीराज रासो' में वह डट कर युद्ध करता है और युद्ध करते हुए छल से पकड़ा जाता है। दूसरी ओर, 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में उस जम्बूपति हाहुली राय का कोई उल्लेख नहीं होता है जिसने 'पृथ्वीराज रासो' में शत्रु पक्ष से मिल कर अपने राजा पृथ्वीराज का पराभव कराया है। अतः यह नितान्त प्रकट है कि 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' की कथा सर्वथा 'पृथ्वीराज रासो' के किसी भी ज्ञात रूप का अनुसरण नहीं करती है। अन्यत्र हम देखते हैं कि यह सर्वथा 'हम्मीर महाकाव्य' की कथा का भी अनुसरण नहीं करती है। फिर भी यह अंशतः इसका और अंशतः उसका अनुसरण करती है,[1] इसलिए ऐसा लगता है कि यह 'रासो' तथा 'हम्मीर महाकाव्य'—दोनों की कथाओं को सामने रखते हुए कुछ नई कल्पना का भी पुट देते हुए बिनी-बनाई गई है।

कहा जा सकता है कि 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' के लेखक के सम्मुख 'पृथ्वीराज रासो' का कोई अन्य पाठ रहा होगा जो अभी तक हमें प्राप्त नहीं हुआ है, और बहुत सम्भव है कि 'रासो' का वही मूल अथवा कम से कम प्राचीनतर पाठ रहा हो। किन्तु यदि उद्धृत छन्दों को ध्यान पूर्वक देखा जाए तो यह कल्पना निराधार प्रमाणित होती है।

उद्धृत प्रथम छन्द में कहा गया है कि प्रथम बाण-प्रहार से अकृतकार्य होने पर कैंवास पर 'पृथ्वीराज ने दूसरा बाण छोड़ा : 'बीअ कर संधीउं भंभइ सूमेसरनंदण।' यह विवरण स्पष्ट ही 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' के विवरण के विरुद्ध है। फिर छन्द में कहा गया है कि 'इस प्रकार दाहिमा (कैंवास) [पृथ्वी में] गड़ कर साँभर के वन को खन-खोद रहा है'. 'एहु सु गडि दाहिमओ खणइ खुद्दइ सइंभरि वणु' और 'स्फुट रूप से इस लोभी और लंपट (कैंवास) से [पृथ्वी का] वह खल (कठिन) गुड (कवच) नहीं छोड़ा जा रहा है' 'फुड छंडि न जाइ इहु लुब्भिउ वारइ पलक्कउ खल गुलह', जिससे यह प्रमाणित है कि कैंवास मारा जाकर भूमि में गाड़ दिया गया था। यह विवरण तो 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' के कैंवास सम्बन्धी समस्त विवरणों के विरुद्ध जाता है। इतना ही नहीं, छन्द में जो 'पलकहु' (पलक्क=लंपट) शब्द आता है, वह भी कैंवास वध की उस कथा को प्रमाणित करता है जो 'रासो' के समस्त पाठों में आती है।

दूसरे छन्द में भी इसी प्रकार कहा गया है कि 'यह (शत्रु) [इस बार] जम्बू [पति] से मिल कर तुम से झगड़ रहा (युद्ध कर रहा) है'. 'कूड मंत्र मम ठवओ एहु जम्बूय मिलि जग्गर', और जम्बू पति (हाहुलीराय) से मिल कर शहाबुद्दीन के पृथ्वीराज से युद्ध करने की कथा 'रासो' के ही पाठों में आती है, 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में नहीं।

साथ ही ऊपर उद्धृत दोनों छन्द 'पृथ्वीराज रासो' में मिल जाते हैं। पहला तो सभी प्राप्त पाठों में मिलता है, दूसरा उसके मध्यम तथा बृहत् पाठों में मिलता है। इसलिए यह प्रकट है कि 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में उद्धरण के लिए छंदों को 'रासो' से लेते हुए भी कथा-योजना में पूरी स्वतंत्रता बरती गई है और इसलिए 'पृथ्वीराज प्रबंध' के आधार पर हम यह नहीं मान सकते हैं कि 'रासो' का कोई ऐसा रूप भी था जिसमें कथा लगभग वह आती थी जो 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में आती है।

अन्यत्र हम देखते हैं कि 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के 'जयचन्द प्रबन्ध' में जो छन्द चन्द के कहे गए बताए गए हैं, वे चन्द के नहीं हैं जल्ह कवि के हैं—'जल्ह कवि' की छाप स्पष्ट रूप से उन

[1] दे० इसी भूमिका में आया हुआ 'हम्मीर महाकाव्य और पृथ्वीराजरासो' शीर्षक।

दोनों छन्दों में आई हुई है।[1] अतः इन जैन प्रबन्धों की कथा के आधार पर 'पृथ्वीराज रासो' या चंद द्वारा रचित पृथ्वीराज विषयक काव्य की कथा की कल्पना करना उचित न होगा।

किंतु क्या, इसी प्रकार, हम यह भी कह सकते हैं कि 'पृथ्वीराज प्रबंध' में उद्धृत चन्द के छन्दों से 'पृथ्वीराज रासो' के स्वरूप के सम्बन्ध में भी हम कोई कल्पना नहीं कर सकते हैं ? कुछ विद्वानों का यही मत है। एक विद्वान ने लिखा है, "मुनि जिन विजय जी को मिले चार फुटकर छप्पयों से 'पृथ्वीराज रासो' का रचा जाना सिद्ध नहीं होता है। हो सकता है कि चन्द नामक किसी कवि ने 'पृथ्वीराज' की जीवन-घटनाओं पर कुछ फुटकर छन्द ही लिखे हों, इस चन्द का अधुना प्रचलित पृथ्वीराज रासो से सम्बन्ध जोड़ना अनुचित है।"[2] किंतु इन छन्दों से यह स्वतः प्रकट है, जैसा हमने ऊपर देखा है, कि ये स्वतन्त्र या फुटकर ढंग पर लिखे हुए छन्द नहीं हैं: ये तो कुछ विस्तृत प्रकरणों के छन्द हैं, और उनके अभाव में इनकी रचना की कल्पना नहीं की जा सकती है। अतः यह मानना पड़ेगा कि ये छन्द चन्द की किसी प्रबंध कृति से लिए गए हैं, भले ही उसका नाम 'पृथ्वीराज रासो' रहा हो या कुछ और। और हम ऊपर यह भी देख चुके हैं कि 'पृथ्वीराज प्रबंध' में उद्धृत उपर्युक्त छन्द 'अधुना प्रचलित पृथ्वीराज रासो' के कथाप्रबंध में पूर्ण रूप से ठीक बैठते हैं, उसमें वे मिलते तो हैं ही। अतः 'अधुना प्रचलित पृथ्वीराज रासो' से इन छन्दों के रचयिता चंद का सम्बन्ध जोड़ना किसी प्रकार भी अनुचित नहीं माना जा सकता है। यह प्रश्न भिन्न है कि 'अधुना प्रचलित पृथ्वीराज रासो' में इन छन्दों के रचयिता चन्द की रचना कितनी है, और कितनी दूसरों की है।

अब दूसरा विचारणीय प्रश्न यह है कि उपर्युक्त 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' के लेखक के सामने 'रासो' का कौन सा पाठ था। 'पृथ्वीराज प्रबंध' के ऊपर उद्धृत दो छन्दों में से द्वितीय इस सम्बन्ध में एक निश्चयात्मक प्रकाश डालता है। नीचे बहिरंग तथा अन्तरंग संभावनाओं की दृष्टि से इस पर विचार किया जा रहा है।

'रासो' के विभिन्न पाठों में से यह केवल मध्यम तथा बृहत् पाठों की प्रतियों में मिलता है, शेष में नहीं मिलता है; और मध्यम तथा बृहत् की प्रतियों में भी एक स्थान पर नहीं मिलता है, भिन्न-भिन्न स्थानों पर और भिन्न-भिन्न प्रसंगों में मिलता है; मध्यम की ना० प्रति में यह छन्द धीर पुंडीर के द्वारा शहाबुद्दीन के पराजित और बन्दी होने के अनन्तर पृथ्वीराज के द्वारा उसके मुक्त किए जाने के प्रसंग में आता है (खंड ३९, छन्द १४९); टॉड संग्रह की प्रति स० ६० में यह छन्द बाण-वेध-प्रकरण में आता है, जिसमें शब्द-वेध कौशल से पृथ्वीराज शहाबुद्दीन का प्राणांत करता है (बानवेधखंड, छन्द २१६); ना० उ० तथा स० में यह छन्द शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध के पूर्व हुई पृथ्वीराज के सामन्तों की विचार-गोष्ठी के प्रसंग में आता है। 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में हम ऊपर देख ही चुके हैं कि यह छन्द कैंवास वध-प्रकरण में आता है। अतः जब हम यह देखते हैं कि यह छन्द रचना के लघुतम तथा लघु पाठों की किसी भी प्रति में नहीं आता है और उसके मध्यम तथा बृहत् पाठों में और 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में भिन्न-भिन्न स्थानों और प्रसंगों में मिलता है, इसकी प्रामाणिकता नितान्त संदिग्ध लगने लगती है।

यदि हम प्रसंग की दृष्टि से देखें तो प्रकट है कि यह छन्द कैंवास-वध प्रकरण का नहीं हो सकता है, क्योंकि उस समय तक जयचन्द और शहाबुद्दीन की कूट संधि का प्रसंग 'रासो' के किसी भी पाठ में नहीं आता है और इस छन्द में जयचन्द और शहाबुद्दीन की कूट संधि का स्पष्ट उल्लेख होता है;

[1] दे 'हिन्दी रासो परंपरा का एक विस्मृत कवि जल्ह', हिन्दी अनुशीलन, भाग १०, अंक १, पृ० १।

[2] श्री मोतीलाल मेनारिया 'राजस्थान का पिंगल साहित्य', क्रमशः पृ० ४९ तथा ६८।

धीर पुंडीर द्वारा शहाबुद्दीन के पराजित और बन्दी होने तथा पृथ्वीराज के द्वारा उसके मुक्त किए जाने के प्रसंग का भी यह नहीं हो सकता, क्योंकि उस समय तो शहाबुद्दीन पृथ्वीराज के एक सामन्त द्वारा पराजित और बन्दी था ही, बाण-वेध प्रसंग का भी यह नहीं हो सकता, क्योंकि उस समय तो सारा युद्ध समाप्त था, पृथ्वीराज स्वयं शहाबुद्दीन का बन्दी था ऐसे समय में जब कि चन्द पृथ्वीराज को शहाबुद्दीन के वध के लिए तैयार करने गया था वह और भी पृथ्वीराज को निरुत्साह करने वाले ऐसे वाक्य नहीं कह सकता था कि वह शत्रु द्वारा मत्स्य बंध में बँधकर मृत्यु को प्राप्त होगा। यदि यह छन्द किसी हद तक प्रसंग-सम्मत कहा जा सकता था तो केवल शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध के पूर्व हुई पृथ्वीराज के सामन्तों की विचार गोष्ठी के प्रसंग में, जिसमें यह 'रासो' के वृहत् पाठ की प्रतियों में आता है। उक्त अन्तिम युद्ध में लघु, मध्यम तथा वृहत् पाठों की समस्त प्रतियों के अनुसार जम्बूपति हाहुलीराय शहाबुद्दीन से मिल गया था। किन्तु यहाँ पर भी प्रश्न यह उठता है कि चन्द को अपने स्वामी पृथ्वीराज को इस प्रकार उसके मरण की विभीषिका दिखाकर निरुत्साह करने की कौन सी आवश्यकता थी जब कि उसके सभी सामन्त उक्त विचार-गोष्ठी में शहाबुद्दीन का वीरतापूर्वक सामना करने के लिए उसे परामर्श दे रहे थे। चन्द के इस कथन पर पृथ्वीराज की प्रतिक्रिया क्या हुई, यह भी इस प्रसंग में 'रासो' के उपर्युक्त किसी पाठ में नहीं बताया गया है। इसलिए यह प्रकट है कि 'रासो' के जिन दो पाठों की प्रतियों में यह छन्द आता है, उनमें भी यह छन्द पहले से नहीं था, बाद में मिलाया गया और असंगत है।

इस प्रसंग में एक और बात भी विचारणीय है 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में उद्धृत प्रथम छन्द में चन्द ने ही कैंबास को लोभी और लम्पट (लंपट) कहा है —

फुड छंडि न जाइ इहु लुब्भिउ वारइ पलकउ खल गुलह।

जबकि इस दूसरे छन्द में उसे चन्द ही ने व्यास (बुद्धिमान) और वसिष्ठ (श्रेष्ठ) कहा है —

कैंबास विआस बिसट्ठ बिनु मच्छि बंधि बद्धओ मरिसि।

चन्द के ही कहे जाने वाले इन दोनों कथनों में विरोध प्रत्यक्ष है। और कैंबास को लोभी-लंपट कहने वाला चन्द का उक्त छन्द रचना की समस्त प्रतियों में उसी स्थान पर पाया जाता है जिस पर वह 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में पाया जाता है, इसलिए यह प्रकट है कि 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' का उपर्युक्त दूसरा छन्द मूल रचना का नहीं है, प्रक्षिप्त है, और 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' के लेखक के सामने 'रासो' का प्रामाणिक रूप नहीं, कोई प्रक्षिप्त रूप ही था।

११. 'सुर्जन चरित महाकाव्य' और 'पृथ्वीराज रासो'

चन्द्रशेखर कृत 'सुर्जनचरित महाकाव्य'[1] की रचना अकबर के समकालीन और उसके अधीनस्थ हाडा राय सुर्जन की प्रेरणा से प्रारम्भ हुई थी,[2] किंतु उसकी समाप्ति उसके उत्तराधिकारी राय भोज के समय में हुई थी।[3] कवि ने ग्रन्थ का रचना काल नहीं दिया है, किन्तु इसमें उसने राय सुर्जन के देहान्तोपरान्त राय भोज के राज्यारोहण का वर्णन मात्र किया है, उसके शासन-काल की घटनाओं का कोई विवरण नहीं दिया गया है, इसलिए समझना चाहिए कि ग्रंथ उसके राज्यारोहण के कुछ ही बाद समाप्त हुआ था। 'आईन ए अकबरी' में अकबर के शासन से सम्बन्धित व्यक्तियों की नामावली देते हुए राय सुर्जन (संख्या ९६) तथा राजा भोज (संख्या १७५) दोनों के नाम दिए गए हैं, और राय सुर्जन के सम्बन्ध में 'आईन ए अकबरी' के योग्य संपादक ने टिप्पणी देते हुए लिखा है कि 'तबकात ए अकबरी' (रचना काल १००१ हि० = १६४९ वि०) से स्पष्ट है कि राय सुर्जन सं० १६४९ वि० के कुछ पूर्व ही दिवंगत हो चुका था।[4]

राय सुर्जन के एक पूर्वज होने के नाते इसमें चौहान पृथ्वीराज का भी वृत्त आया है। यह रचना के दसवें सर्ग में है। नीचे इस सर्ग के श्लोकों का उल्लेख करते हुए उस वृत्त का सार दिया जा रहा है —

श्लोक १-१० नागदेव का पुत्र सोमेश्वर हुआ, जिसने कुलपरम्परागत राज्य का शासन किया। सोमेश्वर ने कुंतलेश्वर की पुत्री कर्पूर देवी से विवाह किया और कर्पूर देवी से उसके दो पुत्र पृथ्वीराज तथा माणिक्यराज हुए। पिता के दिए हुए राज्य को आपस में बाँट कर श्रेष्ठ बाहुबल से दोनों भाइयों ने शासन किया। पृथ्वीराज ने अपने पराक्रम से राज्य का विस्तार किया।

११-५२ : एक दिन जब पृथ्वीराज नगर के बाहर एक उद्यान में था, कान्यकुब्ज से कोई महिला आकर पृथ्वीराज से मिली और कान्यकुब्जेश्वर की पुत्री कांतिमती के सौन्दर्य की प्रशंसा करने के अनन्तर उससे कहने लगी की कांतिमती पिता के चारणों से उसका हाल सुन कर उस पर अनुरक्त हो चुकी थी और उसने एक रात स्वप्न में एक सुन्दर पुरुष को देखा था, तब से वह सर्वथा

[1] 'सुर्जनचरित महाकाव्य', हिन्दी अनुवाद सहित. सम्पादक और प्रकाशक डॉ० चन्द्रधर शर्मा, प्राध्यापक, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, १९५२।

[2] वही १.७, तथा २० ६४।

[3] वही, २० ६३।

[4] 'आइने ए अकबरी', सम्पादक एच० ब्लॉचमैन, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, द्वितीय संस्करण, पृ० ४५०।

काम के वश में हो रही थी; उन्हीं दिनों उसने यह भी सुना था कि कान्यकुब्जेश्वर उसे और किसी से ब्याहना चाहते थे, इससे वह बहुत व्यथित थी और इसी लिए उसने पृथ्वीराज के पास सन्देश लेकर उसे भेजा था। यह सुन कर पृथ्वीराज ने कहा कि वह उसके गुणों को बार-बार सुन चुका था, और उसके इस सन्ताप को दूर करने का उपाय अवश्य करेगा। दूती यह आश्वासन लेकर चली गई।

९३-११२ : इसके अनन्तर अपने बन्दी को आगे कर पृथ्वीराज कान्यकुब्ज गया। वेश बदल कर और १५० सामन्तों को साथ लेकर उसने उस वैतालिक का अनुसरण किया। जयचन्द की सभा में वह उस वैतालिक का पार्श्वचर बन कर रहता। वह प्रति दिन घोड़े पर चढ़ कर गंगा तट पर चक्कर लगाता। एक दिन चाँदनी रात में वह घोड़े को नदी में पानी पिला रहा था। घोड़े के मुख से निकलते हुए फेन की गन्ध से मछलियाँ जब ऊपर आईं, वह उन्हें अपने कंठहार के मोती निकाल-निकाल कर चुगाने लगा। कान्यकुब्जेश्वर की कन्या ने उसका यह कृत्य देखा, तो उसे उसके सम्बन्ध में जानने की उत्सुकता हुई। उस दासी ने, जिसने उसका सन्देश पृथ्वीराज को पहुँचाया था, उसे पहचान कर बताया कि वह तो पृथ्वीराज ही था और यदि उसे इस विषय में सन्देह था तो वह उसकी परीक्षा कर सकती थी। यह सुनकर राजकुमारी ने मुक्तामाल देते हुए एक दासी को वहाँ भेजा। वह जाकर पृथ्वीराज के पीछे खड़ी हो गई। कंठहार के मोतियों के समाप्त होते ही राजा ने पीछे हाथ बढ़ाया तो दासी ने वह मुक्तामाल उसके हाथों पर रख दिया। जब वे बिना गूँथे हुए मोती भी समाप्त हो गए, तब उस दासी ने अपना कंठहार उतार कर राजा के हाथों पर रक्खा। स्त्रियों के उस कंठभूषण को देखकर राजा विस्मित हुआ और पीछे मुड़कर देखा तो वह दासी वहाँ मिली। पूछने पर उसने बताया कि कान्यकुब्जेश्वर की कन्या की वह परिचारिका थी। राजा ने उससे कहा कि वह अपनी स्वामिनी से कुछ प्रहर और धैर्य रखने के लिए कहे, दूसरे दिन रात्रि में उसके हृदय को निश्चय हो जावेगा। दूसरे दिन रात्रि में वह राजकुमारी से मिला और उसने कहा कि वह अपने सामंतों को बिना बताए यहाँ आया था, इसलिए उसे लौटना ही था, और उनसे मिलकर वह पुनः आ सकता था। किन्तु राजकुमारी को भावी विरह से व्यथित देखकर उसने उसे साथ ले लिया, और घोड़े पर उसके साथ सवार होकर अपने शिविर को चला गया।

११३-१२८ : इस समय एक सामंत आकर कहने लगा कि पृथ्वीराज को नव वधू के साथ दिल्ली के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए; जब तक वह चार योजन आगे जावेगा, वह शत्रु सेना को रोकेगा। एक दूसरे सामंत ने उसे छः गव्यूति (तीन योजन) आगे बढ़ाने की प्रतिज्ञा की। इसी प्रकार इन्द्रप्रस्थ तक का सारा मार्ग सामंतों ने परस्पर बाँट लिया। तब तक शत्रु-सेना आ पहुँची थी। उसने पीछा किया, किंतु संघर्ष होते-होते पृथ्वीराज इन्द्रप्रस्थ पहुँच गया। जब पृथ्वीराज इन्द्रप्रस्थ पहुँचा, उसके पराक्रमी वीरगण इने-गिने ही बच रहे थे। पृथ्वीराज से हार कर कान्यकुब्जेश्वर यमुना के जल में डूब मरा।

१२९-१३२ : दिग्विजय करके पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को बाँधा। इक्कीस बार उसे बन्दी करके छोड़ा। किंतु उसने उपकार नहीं माना और छल-बल से एक युद्ध में पृथ्वीराज को बन्दी करके उसे अपने देश ले गया और वहाँ उसे नेत्र-हीन कर दिया।

१३३-१६८ : घूमता-फिरता पृथ्वीराज का मित्र चन्द नामक बन्दी भी वहाँ पहुँच गया और उसने पृथ्वीराज को प्रतिशोध के लिए प्रोत्साहित किया। राजा ने कहा उसके पास न सेना थी, और न नेत्र थे; प्रतिशोध लेना किस प्रकार सम्भव था? किंतु बन्दी ने जब उसे उसके शब्द-वेध कौशल का स्मरण कराया, पृथ्वीराज ने उसका आग्रह स्वीकार कर लिया। तदनंतर वह बन्दी यवनराज की सभा में गया और कुछ ही दिनों में उसके मंत्रियों का तथा उसका विश्वास उसने अपने विद्या-कौशल

प्राप्त कर लिया। किसी प्रसंग में एक दिन उसने कहा कि नेत्रहीन होते हुए भी पृथ्वीराज बाण-द्वारा लोहे के कड़ाहों को वेध सकता था, और उसका यह कौशल दर्शनीय था। यवनराज उसकी बातों में आ गया। एक स्वर्ण स्तंभ पर लोहे के कड़ाह रखे गए और पृथ्वीराज को बाण चलाने की आज्ञा हुई। तब बन्दी ने कहा कि यवनराज के तीन बार स्वयं कहने पर वह लक्ष्यवेध करेगा। इस पर शहाबुद्दीन के मुख से बाण चलाने की आज्ञा के निकलते ही पृथ्वीराज का बाण छूटकर उसके तालुमूल से जा लगा और यवनराज का प्राणांत हुआ। वहाँ हलचल देखकर बन्दी ने राजा को घोड़े पर बिठाया और कुरु जांगल देश ले गया, जहाँ पृथ्वी को यश पूर्ण करके राजा परलोक सिधारा।

'महाकाव्य' के लेखक ने यह नहीं बताया है कि पृथ्वीराज की उपर्युक्त कथा उसे कहाँ से प्राप्त हुई, अतः इस प्रसंग में पहली विचारणीय बात यह है कि इस कथा का आधार क्या हो सकता है? इस कथा में प्रतिशोध प्रकरण में बन्दी चन्द का नाम आता है, जिसके बारे में यह भी कहा गया है कि वह उसका मित्र था। चन्द के 'पृथ्वीराज रासो' में जो कथा आती है, उससे उपर्युक्त कथा का पर्याप्त साम्य भी है यह सुगमता से देखा जा सकता है, और 'पृथ्वीराज रासो' 'सुर्जनचरित महाकाव्य' से काफी पहले की रचना है, यह इस बात से प्रमाणित हो चुका है कि उसके छन्द पुराने जैन प्रबंधों में मिलते हैं, जिनमें से एक की प्रति सं० १५२८ की है।[1] अतः प्रश्न वास्तव में इतना ही रह जाता है कि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में यह कथा सीधे 'पृथ्वीराज रासो' से ली गई है, अथवा 'रासो' पर आधारित किसी रचना से।

नीचे उदाहरण के लिए 'पृथ्वीराजरासो' से कुछ ऐसे छन्द दिए जा रहे हैं जिनमें वे ही कथा-विस्तार मिलते हैं जो 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की उपर्युक्त कथा में आए हैं[2] :—

(१) तिहि पुत्तिय सुनि हुन हुवउ तात वचन सजि काज।
कइ बहि गगहि सचरउ कइ पानि गहउ प्रथीराज ॥

(प्रस्तुत संस्करण, २.११)

(२) सुनत राइ अचरिज भयउ हियइ मन्यउ अनुराउ।
नृप वर अनि उर अगमइ दैवहि अवॅर स भाउ ॥

(वही, २.१२)

(३) चलउ भट्ट सेवग होइ सथ्थह।
जउ बोलउ त हरयु तुह मथ्थह।
जबइ राइ जानइ समुह हुन।
तब भंगमउ समर दुहुनि भुज ॥

(वही, ३.३९)

(४) कनवज्जिय जयचन्द चलउ ढिल्लियपुर पेषन।
चन्द विरद्दिआ साथि बहुत सामन्त सूर घन।
चहुआन राठवर जाति पुंडीर गुहिल्ला।
बडगूजर राठवर कुरभ पागरा रोहिल्ला।

[1] दे० प्रस्तुत लेखक द्वारा लिखित : (१) 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह, चंद बरदाई और जल्ह का समय' नागरीप्रचारिणी पत्रिका, सं० २०१२, अंक ३-४, पृ० २२४ तथा (२) 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह और पृथ्वीराजरासो', शीर्षक इसी भूमिका में अन्यत्र।

[2] स्थल निर्देश की प्रथम संख्या सर्ग तथा द्वितीय संख्या छन्द की है।

इत्ते सहिस भुंभपति चलउ रही रेन छिलउ तुमउ।
एकु एकु लष्य वर लगयइ चढे सथ्थ रजपुत्त तउ॥

(वही, ४.१)

(५) करिग देव दविखन नयर गंग तरंगह कुल्ल।
जल छंडइ अछूटइ करइ मीन चरित्तु भुल्ल॥

(वही, ६.६)

(६) भूलउ नृप तिहि रंग वहि लुध्ध विरद्द सद्दु।
मूगति मीनतु सुत्ति लहंति सु लप्प दद।
होइ सुछु तु तंमोर सरंस सु कंठ कहु।
पंक प्रवेस हसंत सु सरंल सु गग मह॥

(वही, ६.७)

(७) पंगुराइ सा पुत्तिय मुत्तिय यार भरि।
पो प्रिय जउ प्रथीराज न पुच्छइ कोहि फिरि।
जउ इन दरसंत सब सहित विचार न स...रि।
इह मत मोहि नु जीव सु लेउं सजोव धरि॥

(वही, ६.१२)

(८) सुन्दरि आइ स धाइ विचार न बोलइय।
जउ जल गंगइ लोल प्रतीव प्रसंगु लिय।
कमल वि कोमल पानि कलिकुल अंगुलिय।
मनहु मध्य दुजराज सु अप्पति अंगुलिय॥

(वही, ६.१४)

(९) अपंति अंगुलीय दान जान सोभ लग्गए।
मनउ अनंग रंग वस्य रंभ इंद पुज्जए।
सु पानि बाहु चार यक्कि भार मुत्ति वित्तए।
पुनेपि इथ्य कंठ कोरि-पोति पुंज अप्पए।
निरखि नयन-हेरि वयन ता त्रिरत्ति-चाहियं।
तरप्पि दासि पासि पंक (पक्क) संकियं न चाहियं।
अनेक (अनिषक?) संग रंग रूप जूप जानि सुंदरी।
बहंग गंग मद्दिम धुक्कि लगपत्ति अच्छूटरी।
हउं अच्छूटरी नरिंदु नाहि दासि गेह राय पंगुरे।
तास पुत्ति जंम छाडि ढिल्लि नाथ आतुरे।
सा जंम सूर चाहुवान मान इंम जानए।
करेन केहरीन पीन इंदु मीन थानए।
प्रतष्पि हीर लुध्ध धीर यो सु चीर संचही।
परन्तु मान मानिनी चलंति देव गंडही।
सुनंत सूर अस्व फेरि तेजि ताम हंकियं।
मनउ दलिद्दुर्द रिद्धि पाय जाय कंठ लग्गियं।
कनक्क कोटि अंग धात राम धात माल ची।
रहंत भउंर झौंर झौंर साह छत्र धाम ची।

सुधा सरोज मोज मंग अलक्क रंग हल्लए।
मनउ मयन्न फंद पासि काम केलि घल्लए।
करिरय काम कंकनं सुपानि बंध बंधए।
सु माधरी सषी सछज्ज रूप तुरय धज्जए।
आचार चार देव सह्व दोइ पध्ध जंपही।
गंठि दिढ्ढ इक्क चित्त लोक लोक चंपही।
अनेक सुष्प सुष्प सीस छुध्ध साथ लग्गियं।
सु कंत कंत अंत ता-तमोरि मोरि अप्पियं॥

(वही, ६.१५)

(१०) मिले सब्ब सामंत बोल मग्गहि त नरेसर।
छप्प मग्ग लग्गिअइ मग्ग रप्पिइ ति इक्क भर।
एक एक झुझंति दंति दंती ढंढोरइ।
जिके पग्ग राय भिच्च मारि मारिकइ मोरइ।
हम घोर्ट्र रहइ कलि अतरि देहि स्वामि पारिथ्थिअइ।
अरि असाइ लच्छ को अंगमइ परणि राय सारथ्थिअइ॥

(वही, ८.१)

(११) वेद कोस हरसिंघ उमय भ्रियत वह गुज्जर।
काम मान हर नयन निडर मोडर सोइ सुझ्झर।
छगन पवन पल्लानि कन्ह पंची दिगपालह।
अल्हन द्वादस सकल अचल विधा गनि कालह।
सिंगार विंझ सलपह सुकथ लपन पाहार आहार सुउ।
इत्तमइ सूर झुझंति ही ढिल्लियपति प्रथीराज भउ॥

(वही, ८.३५)

(१२) गहि चहुआंन नरिंद गयउ गज्जने साहि घरि।
सा ढिल्ली हय गय भंडार तेहि तनय अप्पि धर।
वरस एक तिहि अच्च मुध्ध किन्हउ नयन्न बिनु।
जंम जंम जुग अवरच्च जाइ प्रथिराज इक्क पिनु।
सुनत श्रवन्नतु धरि परउ हरि हरि हरि हरि देव सु कह।
तजि पुत्त मित्त माया सकल गहिग चंद गजनेव रह॥

(वही, १२.१)

(१३) अंधहीन दोउ भयउं तुं चहु औपिन चूक।
असुर षध्धु किम बिन सुरइ मइ सुर बंधउ अल्लूक॥

(वही, १२.३७)

(१४) भयउ एक फुरमान एक बानह गुन संधउ।
सोइ सबद्द अरु बान अग्ग अरगइ पल बधउ।
भयउ बीय फुरमान पंचि रष्पिअउ श्रवन पर।
तीअउ सबद सुनंत सुनउ सुरतान परउ धर।
लगि दसन रसन दस रुंधिअउ बिहु कपाट बंधे सघन।
धरि परउ साहि पौं पुकारउ भयउ चंद राजहि मरन॥

(वही, १२.४८)

यदि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' के विवरण और 'रासो' से ऊपर उद्धृत पंक्तियों को मिलावें तो देखेंगे कि साम्य प्रायः छोटे से छोटे विस्तारों तक में है। यथा :—

(१) दोनों में पृथ्वीराज को यह समाचार मिलता है कि जयचन्द की पुत्री उस पर अनुरक्त है और जयचन्द उसे किसी अन्य से ब्याहना चाहता है, इसलिए वह बहुत व्यथित है।

(२) दोनों में पृथ्वीराज अपने वन्दी के साथ उसके अनुचर के वेश में कन्नौज जाता है और उसके साथ १०० या कुछ अधिक शूर-सामन्त हैं।

(३) दोनों में ठीक एक ही प्रकार से जयचन्द पुत्री उसे गंगातट पर रात्रि में मछलियों को मोती चुगाते हुए देखती है और एक ही उपाय से इस बात का निश्चय करती है कि वह व्यक्ति पृथ्वीराज ही है।

(४) जयचन्द-पुत्री का अपहरण वह दोनों में एक ही प्रकार से करता है।

(५) दोनों में एक ही समान यह योजना स्थिर होती है कि वह जयचन्द-पुत्री को लेकर दिल्ली की ओर बढ़े और उसके सामन्तगण एक एक करके जयचन्द की पीछा करने वाली सेना को रोकें; इस योजना का निर्वाह भी दोनों में एक ही सा होता है।

(६) दोनों में वह शहाबुद्दीन के साथ के अंतिम युद्ध में बन्दी होता है और गजनी ले जाया जाकर नेत्रविहीन किया जाता है।

(७) दोनों में एक ही प्रकार से चन्द की युक्ति से पृथ्वीराज शहाबुद्दीन से प्रतिशोध लेने में कृतकार्य होता है।

अन्तर दोनों में बहुत साधारण है और मुख्यतः इतना ही है कि :—

(१) 'रासो' में पृथ्वीराज के जयचन्द-पुत्री के अनुरक्त होने का समाचार मात्र मिलता है, 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में उसकी एक दूती पृथ्वीराज से उसका सदेश लेकर मिलती है।

(२) 'रासो' में उस जयचन्द-पुत्री का नाम संयोगिता है, और 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में कान्तिमती।

(३) 'रासो' में पृथ्वीराज जयचन्द-पुत्री से पहचाने जाने पर ही जा मिलता है, यद्यपि उसे लिया जाता है बाद में, 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में वह उसे मिलता है दूसरे दिन और उसी समय उसे लिया जाता है।

(४) 'रासो' में पीछा करता हुआ जयचन्द पृथ्वीराज के दिल्ली पहुँच जाने पर कन्नौज लौट जाता है, 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में वह यमुना में डूब मरता है।

(५) 'रासो' में पृथ्वीराज गजनी में ही शाह-वध के अनन्तर मृत्यु को प्राप्त होता है, 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में उसे चन्द कुरु जांगल प्रदेश भगा ले आता है, जहाँ वह पीछे मृत्यु को प्राप्त होता है।

उपर्युक्त सन्निकट साम्य की पृष्ठभूमि में जब हम इस अन्तर पर विचार करते हैं तो लगता है कि ये अन्तर 'सुर्जनचरित महाकाव्य' के रचयिता की कल्पना अथवा किन्हीं जनश्रुतियों के परिणाम हैं—जयचन्द का यमुना में डूब मरना अथवा पृथ्वीराज का गजनी से सकुशल कुरु जांगल लौट आना 'रासो' की पूर्वकल्पित दिशा में एक कदम आगे बढ़े हुए विस्तार मात्र प्रतीत होते हैं, यह किसी भी अन्य प्राप्त प्राचीन रचना में नहीं मिलते हैं, यह भी इस अनुमान की पुष्टि करता है। फलतः यह प्रकट है कि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की उपर्युक्त कथा का आधार सीधा 'पृथ्वीराज रासो' है।

अब दूसरा प्रश्न यह उपस्थित होता है कि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की उपर्युक्त कथा का आधार 'रासो' का कौन-सा पाठ है : 'रासो' के जो चार मुख्य पाठ प्राप्त हैं, उनमें से कौन सा 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की उपर्युक्त कथा का आधार हो सकता है?

इस प्रसंग में द्रष्टव्य यह है कि—

(१) 'रासो' के जो छन्द ऊपर उद्धृत हुए हैं, वे लघुतम से लेकर वृहत् तक 'रासो' के

समस्त प्राप्त पाठों में समान रूप से पाए जाते हैं।

(२) 'सुर्जनचरित महाकाव्य' का एक भी मुख्य विस्तार उपर्युक्त को छोड़कर ऐसा नहीं है जो 'रासो' के समस्त पाठों में न पाया जाता हो, और अन्तर वाले उपर्युक्त विस्तार 'रासो' के किसी भी पाठ में नहीं मिलते हैं।

(३) ऐसे कोई भी प्रसंग या विस्तार 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में नहीं हैं जो 'रासो' के लघुतम पाठ में न मिलते हों और उसके अन्य किसी पाठ में मिलते हों।

अंतिम विशेषता के उदाहरण में निम्नलिखित प्रसंगों और विस्तारों को लिया जा सकता है, जो कि लघुतम पाठ को छोड़कर 'रासो' के समस्त पाठों में पाए जाते हैं—

(१) गुर्जराधिपति भीम चौलुक्य और पृथ्वीराज का युद्ध।

(२) उसी के साथ-साथ हुआ पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन का युद्ध।

(३) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अंतिम युद्ध में पृथ्वीराज के एक सामंत धीर पुंडीर और शहाबुद्दीन का युद्ध।

(४) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अंतिम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से चित्तौड़ के रावल समरसी का सम्मिलित होना।

(५) उसी युद्ध में पृथ्वीराज के एक सामंत जम्बूपति हाहुलीराय हम्मीर का शहाबुद्दीन से जा मिलना।

(६) हाहुलीराय हम्मीर के पास जाकर उसे पृथ्वीराज के पक्ष में लाने के लिए चन्द का प्रयत्न करना।

और ये प्रायः ऐसे प्रसंग या विस्तार हैं जो यदि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' के लेखक के सामने होते तो उसके द्वारा सबके सब कदाचित् छोड़े न गए होते। अतः यह स्पष्ट है कि उसकी उपर्युक्त कथा का आधार 'रासो' का लघुतम या उससे मिलता जुलता ही कोई पाठ हो सकता है।

अब विचारणीय यह है कि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' के उपर्युक्त विवरण का आधारभूत 'रासो' का पाठ उसके प्राप्त लघुतम पाठ से भी किन्हीं बातों में तो लघुतर नहीं था।

'सुर्जनचरित महाकाव्य' की उपर्युक्त कथा की 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ से तुलना करने पर निम्नलिखित बातें द्रष्टव्य ज्ञात होती हैं :—

(१) 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में कथा जयचन्द पुत्री कांतिमती के प्रेम प्रसंग से प्रारम्भ होती है, पृथ्वीराज का उसमें कोई वृत्त इसके पूर्व नहीं आता है, जैसा कि 'रासो' के लघुतम पाठ तक उसके समस्त पाठों में आता है।

(२) उसमें पृथ्वीराज के पूर्व पुरुषों की जो नामावली आती है वह उस नामावली से बहुत भिन्न है जो 'रासो' के लघुतम पाठ तक उसके समस्त पाठों में मिलती है।

(३) अनंगपाल तोंवर द्वारा पृथ्वीराज को दिल्ली प्राप्त होने की जो बात 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक उसके समस्त पाठों में आती है, वह भी 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में नहीं आती है।

(४) पृथ्वीराज के प्रधान अमात्य कैंवास अथवा उसके वध का कोई उल्लेख 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में नहीं है, जो कि 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक उसके समस्त पाठों में पाया जाता है।

(५) 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में वे तिथियाँ भी नहीं आती हैं जो 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक उसके समस्त पाठों में पाई जाती हैं।

असम्भव नहीं है कि इनमें से कुछ प्रसंग या विस्तार संक्षेप क्रिया के कारण 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में छोड़ दिए गए हों, किन्तु यह भी असम्भव नहीं है कि उसकी कथा के आधारभूत

'रासो' के पाठ में उपर्युक्त में से कुछ न भी रहे हों। यह बात ठीक इसी प्रकार 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की समकालीन रचना 'आईन ए अकबरी' में भी दिखाई पड़ती है।[१]

इस सम्बन्ध में यह जान लेना कदाचित् उपयोगी होगा कि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की रचना सं० १६४९ के लगभग हुई थी, और 'रासो' के प्राप्त सभी पाठों की प्रतियाँ उसके बाद की हैं लघुतम की प्राचीनतम प्राप्त प्रति जो धारणोज (गुजरात) की है, सं० १६६४ की है, लघु की प्राचीनतम प्राप्त प्रति जो बीकानेर की है, जहाँगीर के समकालीन किसी भागचन्द के लिए लिखी गई थी, मध्यम की प्राचीनतम प्राप्त प्रति रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, लन्दन को है और सं० १६९२ की लिखी है, बृहत् की प्राचीनतम प्राप्त प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की है और सं० १७४७ की है।

प्राप्त लघुतम पाठ की तुलना में 'पृथ्वीराज रासो' का प्रस्तुत संस्करण तो निश्चित रूप से उसके उस पाठ के निकटतर होना चाहिए जिसका आधार 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में ग्रहण किया गया होगा, यह निम्नलिखित बातों से प्रकट है —

(१) प्रस्तुत संस्करण में भी कथा 'सुर्जनचरित महाकाव्य' की भाँति संयोगिता के प्रेम प्रसंग से प्रारम्भ होती है, केवल जयचन्द के राजसूय का प्रसंग और प्रस्तुत संस्करण में साथ साथ चलता है।

(२) प्रस्तुत संस्करण में पृथ्वीराज के पूर्वपुरुषों की नामावली आती ही नहीं है, केवल उसे सोमेश्वर का पुत्र कहा गया है, इसलिए इस बात में दोनों में कोई विरोध नहीं है।

(३) प्रस्तुत संस्करण में अनंगपाल तोंवर द्वारा पृथ्वीराज को दिल्ली प्राप्त होने की बात भी नहीं आती है, जिस प्रकार वह 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में नहीं आती है।

(४) प्रस्तुत संस्करण में भी कोई तिथियाँ नहीं आती हैं, जिस प्रकार 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में वे नहीं आती हैं।

प्रस्तुत संस्करण में कैंवास वध की कथा अवश्य आती है जो 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में नहीं है, किन्तु मुख्य कथा से उसका कोई अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है, इसीलिए यदि 'सुर्जनचरित महाकाव्य' में उसे न दिया गया हो तो आश्चर्य नहीं।

— * —

[१] दे० 'आईन-ए-अकबरी और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक अन्यत्र इसी भूमिका में।

१२. 'आईन-ए-अकबरी'
और
'पृथ्वीराज रासो'

'आईन-ए-अकबरी' में दिल्ली के शासन का इतिहास देते हुए पृथ्वीराय के विषय में निम्नलिखित प्रकार से कहा गया है :—

"विक्रमीय वर्ष सं० ४२९ (३७२ ई०) में तोंवर कुल का अनंगपाल न्यायपूर्वक राज करता था और उसने दिल्ली की स्थापना की। उसी चाद्रसौर वर्ष के सं० ८४८ (७९१ ई०) में उस प्रसिद्ध नगर के निकट पृथ्वीराज तोंवर और और बीलदेव (बीसलदेव) चौहान में घमासान युद्ध हुआ और शासन बाद वाले कुल के हाथों में चला गया। राजा पिथौरा (पृथ्वीराज) के राज्य-काल में सुल्तान मुईजुद्दीन साम ने हिन्दुस्तान पर अनेक आक्रमण किए, जिनमें उसे कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली। हिन्दू इतिहासों का कथन है कि राजा (पृथ्वीराज) ने सुल्तान से सात बार युद्ध किए और उसे पराजित किया। ५८८ हि० (११९२ ई०) में थानेसर के पास आठवाँ युद्ध हुआ और राजा बन्दी हुआ। एक सौ प्रसिद्ध योद्धा (कहा जाता है) उसके विशिष्ट अनुयायी थे। वे अलग-अलग 'सामंत' कहलाते थे और उनके असाधारण शौर्य का न वर्णन हो सकता है और न अनुमान या तर्क से उसका समाधान किया जा सकता है कि इस युद्ध में इनमें से कोई नहीं था; राजा भोग-विलास में अपने महल में ही पड़ा काम-केलि में समय नष्ट करता रहा और उसने न राज्य के शासन पर ध्यान दिया और न अपनी सेना के कुशल पर।

कथा इस प्रकार कही जाती है कि राजा जयचन्द राठौर, जो हिन्दुस्तान का सर्वोच्च शासक था, कन्नौज में राज्य कर रहा था। दूसरे राजा किसी न किसी मात्रा में उसकी अधीनता मानते थे, और वह स्वयं इतना उदार था कि ईरान और तूरान के अनेक निवासी उसके भृत्य थे। उसने राजसूय यज्ञ करने की घोषणा की और उसकी तैयारियाँ प्रारम्भ कर दीं। इस यज्ञ का एक नियम यह है कि निम्न कोटि की सेवाएँ भी राजागण के द्वारा ही प्रतिपादित होती हैं, यहाँ तक कि राजकीय भोजनालय के बर्तन माँजने-धोने और आग सुलगाने तक के जैसे कार्य भी उनके कर्त्तव्यों के अंग होते हैं। इसी प्रकार उसने वचन दिया कि वह आगत राजाओं में सर्वोच्च शूर राजा को अपनी सुन्दरी कन्या भी देगा।

राजा पिथौरा ने यज्ञ में उपस्थित होने का निश्चय किया था, किन्तु उसकी सभा के किसी सभ्य के इस आकस्मिक कथन ने कि जब तक चौहान कुल का साम्राज्य था, राजसूय किसी राठौर राजा के द्वारा किया जाना विहित नहीं था, पृथ्वीराज के वंशाभिमान को जागृत कर दिया और वह रुक गया। राजा जयचन्द ने उसके विरुद्ध सेना भेजने की सोची, किन्तु उसके मन्त्रियों ने युद्ध में समय अधिक लगने की संभावना और (राजसूय) सभा की तिथि की सन्निकटता के ध्यान से उसे इस विचार

से विरत कर दिया। यज्ञ को विधि पूर्वक संपन्न करने के उद्देश्य से राजा पिथौरा की एक स्वर्ण-प्रतिमा बनाई गई और वह दरबान के रूप में राजद्वार पर रख दी गई।

इस समाचार से क्रुद्ध होकर राजा पिथौरा छद्मवेष में ५०० चुने हुए योद्धाओं के साथ (कन्नौज के लिए) निकल पड़ा और (राजसूय) सभा में अकस्मात पहुँच कर अनेक को अपनी तलवार से मारते हुए वह उस प्रतिमा को शीघ्रता के साथ उठा ले गया। जयचन्द की कन्या जिसका वाग्दान एक अन्य राजा से हो चुका था, पृथ्वीराज के इस शौर्य प्रदर्शन का समाचार सुन कर उस पर अनुरक्त हो गई और उसने वाग्दत्त राजा से विवाह करना अस्वीकार कर दिया। उसके पिता ने इस आचरण पर क्रुद्ध होकर उसे राज भवन से निकाल दिया और एक अन्य भवन में भेज दिया।

इस समाचार से व्यग्र होकर पिथौरा उस (राज कन्या) से विवाह करने का निश्चय करके लौट पड़ा और योजना यह बनाई गई कि चाँदा, एक भाट जो कि चारण कला में पटु था, जयचन्द की सभा में उसके गुण गान के बहाने पहुँचे और राजा (पृथ्वीराज) स्वयं अपने कुछ चुने हुए अनुयायियों के साथ उसके अनुचर के वेष में उसके साथ जावे। प्रेम ने उसकी आकांक्षा को क्रियात्मिक रूप प्रदान किया और इस कौशलपूर्ण उपाय तथा वीरता के द्वारा उसने अपने हृदय की उस कामना (राजकन्या) का अपहरण किया और बल-वीर्य तथा शौर्य के अद्भुत प्रदर्शन के अनन्तर अपने राज्य में वापस पहुँच गया।

[इस प्रत्यावर्तन में] उसके (उपर्युक्त) सौ सामन्त विभिन्न छद्म वेषों में उसके साथ थे। एक के बाद दूसरे ने उसके भागने में-उसकी रक्षा की और पीछा करने वालों से वीरता पूर्वक युद्ध करते हुए उन्होंने प्राण दिए। गोविन्दराय गहलोत ने सर्वप्रथम [शत्रु का] सामना किया और वीरता पूर्वक युद्ध करते हुए प्राणोत्सर्ग किया। शत्रु के सात हजार सैनिक उसके समक्ष धराशायी हुए। तदनतर नरसिंह देव, चाँदा, पुंडीर, शार्दूल सोलंकी तथा अपने दो भाइयों के साथ पाल्हनदेव कछवाहा ने प्रथम दिन के युद्ध में अद्भुत शौर्य-प्रदर्शन करते हुए महँगे मूल्यों में प्राण दिए, और ये सभी योद्धा उस प्रत्यावर्तन में समाप्त हुए। चाँदा तथा अपने दो भाइयों के साथ राजा अपनी नव वधू को लेकर जगत् को आश्चर्य-मग्न करता हुआ दिल्ली पहुँच गया।

दुर्भाग्य से राजा अपनी इस सुन्दरी स्त्री के प्रेम में ऐसा लिप्त हो गया कि और सब काम-काज छोड़ बैठा। इस प्रकार एक वर्ष बीत जाने पर, ऊपर वर्णित घटनाओं के कारण सुल्तान शहाबुद्दीन ने राजा जयचन्द से मैत्री स्थापित करली, और एक सेना इकट्ठी कर इस देश पर आक्रमण कर दिया और बहुत से स्थानों को हस्तगत कर लिया। किन्तु किसी को कुछ बोलने तक का साहस न हुआ, उसका प्रतिकार करना तो दूर की बात थी। अन्त में मुख्य सामन्तों ने सभा करके राजभवन के सप्त-द्वार से चाँदा को भेजा, जिसने रनिवास में पहुँच कर अपने वचनों से राजा के मन में कुछ क्षोभ उत्पन्न किया। किन्तु राजा अपनी पूर्ववर्ती विजयों के अभिमान में युद्ध में एक छोटी ही सेना लेकर गया। उसके वीर योद्धा अब नहीं थे, [जिसके कारण] उसके राज्य की पुरानी धाक जाती रही थी, और जयचन्द जो उसका पहले का सहयोगी था अपनी पुरानी नीति बदल कर शत्रु के पक्ष में था, फलतः राजा उस युद्ध में बन्दी हुआ और सुल्तान के द्वारा गजनी ले जाया गया।

चाँदा अपनी स्वामिभक्ति के कारण तुरन्त गजनी गया, सुल्तान की सेवा में नियुक्त हो गया और उसका विश्वास-भाजन बन गया। प्रयत्नों से उसने राजा का पता लगा लिया और बन्दीगृह में पहुँच कर उसे सान्त्वना प्रदान की। उसने सुझाया कि वह सुल्तान से उसके धनुर्विद्या के कौशल की प्रशंसा करेगा और जब वह उसके इस कौशल को देखने के लिए तैयार होगा, राजा को उस अवसर से लाभ उठाने का सुयोग प्राप्त हो जावेगा। यह प्रस्ताव मान लिया गया और राजा ने सुल्तान को

एक बाण से विद्ध कर दिया। सुल्तान के भृत्य राजा और चाँदा पर टूट पड़े और उन्होंने उ टुकड़े-टुकड़े काट डाला।

फारसी इतिहासकार एक भिन्न विवरण देते हैं और कहते हैं कि राजा युद्ध में मारा गया।[1]

'आईन ए अकबरी' के लेखक ने यह नहीं बताया है कि उपर्युक्त कथा उसे किस 'हि इतिहास' से प्राप्त हुई, अतः इस प्रसंग में पहला विचारणीय प्रश्न यह है कि 'आईन-ए अकबरी' दी हुई उपर्युक्त कथा का आधार क्या हो सकता है। इस विवरण में 'चाँदा' नामक एक भाट उल्लेख हुआ है। प्रकट है कि यह 'चन्द' है। चन्द के 'पृथ्वीराज रासो' में जो कथा आत उससे उपर्युक्त विवरण में पर्याप्त साम्य भी है, यह सुगमता से देखा जा सकता है, और 'पृथ्वीर रासो' 'आईन ए-अकबरी' से काफी पहले की रचना है यह इस बात से प्रमाणित हो चुकी है उसके कुछ छन्द पुराने जैन प्रबन्ध संग्रहों में मिले हैं जिनमें से एक की प्रति सं० १५२८ की है[2] अतः प्रश्न वास्तव में इतना ही रह जाता है कि 'आईन-ए-अकबरी' में यह कथा सीधे 'पृथ्वीर रासो' से ली गई है, अथवा 'रासो' पर आधारित किसी रचना से ली गई है।

नीचे उदाहरण के लिए 'रासो' से कुछ ऐसी पंक्तियाँ दी जा रही हैं जिनमें वे ही कथा विस्त मिलते हैं जो 'आइन ए अकबरी' के उपर्युक्त विवरण में आए हैं[3]—

(१)

पहु पग राउ राजसू जग्गु।
आरंभ रंभ कीनउ सुरग्ग।
जित्तिआ राउ सव सिन्धु आर।
मेलिया कंठ जिम मुत्तिहार।
जोगिनी पुरेस सुनि भयउ पेद।
आवइ न माल मज्ज इह अभेद।
मोक्ले दूत तब ही रिसाइ।
असमत्थ सेव किम भूमि लाइ।
बधू समेत सामंत सथ्य।
उत्तरे आनि दरबार तथ्य।
बोलइन वयण प्रथिराज ताहि।
सकरिउ सिंघ गुरुजनन चाहि।
उचरइ गुरुअ गोयंद राज।
कलि मझ्झि जग्गु को करइ आज।...
घलि मज्झि जग्गु को करण जाग।
विग्गरइ सु बहु विधि हसइ लोग।
दल दब्व गब्व तुम अप्रमान।

[1] 'आईन-ए-अकबरी' (एच० एस० जैरेट द्वारा अनूदित) संशोधित संस्करण, द्वितीय भाग, पृ० ३० ३०७ का यह हिन्दी रूपान्तर है।

[2] दे० प्रस्तुत लेखक का 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह, चन्द बरदाई और जयचन्द का समय', नागरी प्रचारि पत्रिका, सं० २०१२ अंक ३-४, पृ० २३४।

[3] छन्दों का यह 'पृथ्वीराज रासो' के प्रस्तुत संस्करण का है, स्थल-निर्देश की प्रथम संख्या उसके स की तथा दूसरी संख्या उसके छन्द की है।

पोलहु त थोल देयन समान ।
तुम जानउ पिथी हइ न कोइ ।
निव्वीर पुहवि कबहु न होइ ॥...
सइंभरि सकोप सोमेस पुत्त ।
दानव ति रूव अवतार धुत्त ।
तिहि कंधि सीस किम जग्ग होइ ।
तु मिथिमी नहीं चहुआन कोइ ।...
पोलयउ सु मंत परधान सत्थ ।
कनवज्ज नाम करि जग्गु अत्थ ।
जब लगि गहिहि चहुआन चाहि ।
तब लगि तोहि टलि काल जाहि ।
पे आसमुद्द नृप करहिं सेव ।
उच्चरहु कासु सो करहु देव ।
सोवन्न प्रतिमा प्रथीराज पौन ।
थापउ सु पोलि जिम दरवान ।
सइंघरह सग अंद जग्गु काज ।
लिहु जन पोलि दिन धरहु आज ।...

(प्रस्तुत संस्करण, सर्ग २. छन्द ३)

(२) संवादेव विनोदेव देव देवेन रक्ष्यते ।
अन्य प्राणेभया प्राणे प्राणेश दिल्लीश्वरः ॥

(वही, २. २५)

(३) तब छुकित राइ गंगह तट त रचिपचि उच्च अवास ।
चाहि गहउं चहुआन तसु तु मिटइ आशा आस ॥

(वही, २. २७)

(४) चलउ मट्ट सेवग होइ सथ्यहं ।
जउ पोलउं त हथ्थु गुह मथ्यहं ।
जवह राइ जानइ संमुह हुअ ।
तब अगमउं समर दुह भुअ ॥

(वही, ३. २९)

(५) कनवज्जिय जयचन्द चलउ ढिल्लियपुर पेषन ।
चन्द विरद्दिआ साथि बहुत सामंत सूर घन ।
चहुआन राठवर जाति पुडीर गुहिल्ला ।
बडगूजर राठवर कुरंभ बांगरा रोहिल्ला ।
इत्ते सहित भुअपति चलउ दवी रेन किन्नउ सुभड ।
एकु एकु लष्ष वर लष्षवइ चल्ले सथ्थ रजपुत्त सब ॥

(वही, ४. १)

(६) उभय सहस हय गय परित निसि निग्रह गत भान ।
सात सहस असि मीर हनि मठ विटउ चहुआन ॥

(वही, ७. १९)

(७) परउ गजि गहिलुत्त नाम गोविंदराज वर।
दाहिम्मउ नरसिंघ परउ नागवर जास घर।
परउ चंद पुंडीर चंद पेक्खो मारंतउ।
सोलंकी सारंग परउ असिवर झारंतउ।
कूरमराय पालन्नदेउ बंधव तीन निघट्टिया।
कनवज्ज राडि पहिलइ दिवसि सउ भइ सत्त निवट्टिया॥

(वही, ७. २०)

(८) मिले सव्व सामंत बोल्लु मग्गहि त नरेसर।
अप्प मग्ग लग्गिभइ मग्ग रक्खिइ ति इक्क भर।
एक एक झुक्कति दंति दंती ढंढोरइ।
जिके पग राय मिच्च मारि मरिक्कइ मोरइ।
इम बोल रहइ कलि अतरि देहि स्वामि पारथ्थिअइ।
अरि असीइ लष्प को गगमइ परणि राय सारथ्थिअइ॥

(वही, ८. १)

(९) इह विधि विलसि विलास असार सुसार किअ।
दइ सुप जोगि संजोगि सोइ प्रथिराज जिय।
अह निसि सुध्धि न जानहि माननि प्रौढ रति।
गुरु बयब भ्रत छोइ भई विपरीत गति॥

(वही, ९. ८)

(१०) कग्गर अप्पिअ राजकर सुब जपइ आ यत्त।
गोरी रत्तउ सुव धरा तु गोरी अनुरत्त॥

(वही, १०. २०)

(११) इह कहि दासी अप्पि कर लिपि जु दिअउ कवि चंदु।
पहली आवलि वचि करि हिरि घर जाय नरिंदु॥

(वही, १०. २२)

(१२) भयउ एक फुरमान एक थानइ गुन सधउ।
सोइ सवइ अरु बांन अग्ग अग्गइ पल बंधउ।
भयउ बीअ फुरमान पचिं रक्खिअउ श्रवन पर।
तीअउ सबद सुमंत सुभउ सुरताण परउ धर।
लगि दसम रसन दस रुधिअउ बिहु कपाट बधे सघन।
धरि परउ साहि पां पुष्करउ भयउ चंद राजहि मरन॥

(वही, १२. ४८)

यदि 'आईन ए-अकबरी' के विवरण और 'रासो' की उपर्युक्त पंक्तियों को मिलावें तो देखेंगे कि साम्य प्राय छोटे-से-छोटे विस्तारों तक में है :—

(१) जयचन्द के राजसूय के साथ ही उसकी कन्या के स्वयंवर का आयोजन जिस प्रकार 'आईन ए-अकबरी' में हुआ है उसी प्रकार वह 'रासो' में भी हुआ है।

(२) 'आईन-ए-अकबरी' में कहा गया है कि एक सभ्य के आकस्मिक कथन के कारण पृथ्वीराज उस राजसूय में सहयोग देने से रुक जाता है : 'रासो' में इस सभ्य का नाम भी दिया हुआ है—गोविंदराज।

(३) 'आईन-ए-अकबरी' में कहा गया है कि जयचन्द पृथ्वीराज के विरुद्ध सेना भेजने की बात सोच रहा था, किन्तु उसके मंत्रियों ने पृथ्वीराज के साथ युद्ध में समय अधिक लगने की संभावना तथा [राजसूय] सभा की तिथि की सन्निकटता के ध्यान के उसे इस विचार से विरत किया; ठीक यही बात 'रासो' में कही भी गई है।

(४) दरबान के रूप में पृथ्वीराज की स्वर्ण-प्रतिमा की स्थापना की बात दोनों में कही गई है।

(५) जयचन्द की कन्या ने पृथ्वीराज पर अनुरक्त होकर दोनों में किसी अन्य से विवाह करना अस्वीकार किया है और इसलिए दोनों में उसे राजभवन से निकाल कर एक अन्य भवन में रख दिया गया है।

(६) चन्द के साथ पृथ्वीराज के उसके अनुचर के वेष में कन्नौज जाने की योजना दोनों में हुई है।

(७) कन्नौज से पृथ्वीराज के प्रत्यावर्तन की योजना दोनों में एक ही है।

(८) प्रथम दिन के युद्ध में गिरे हुए सामंतों की सूची दोनों में सर्वथा एक है, और समस्त नाम एक ही क्रम से भी दोनों में आते हैं ['आईन अकबरी' के अनुवाद में 'चाँदा' और 'पुंडीर' दो नाम भ्रम से कर दिए गए हैं, वास्तव में दोनों मिला कर एक नाम है] 'सारंग' का 'सार्दुल' अरबी-फ़ारसी लिपि के 'गाफ़' और 'लाम' के साम्य के कारण हुआ प्रतीत होता है।

(९) पृथ्वीराज का जयचन्द-पुत्री (संयोगिता) के प्रेम में लिप्त होकर राजकीय कार्यों की उपेक्षा करना और चन्द का उसको उद्बुद्ध करना भी दोनों में लगभग समान हैं।

(१०) चन्द का गजनी जाना और युक्ति से पृथ्वीराज के द्वारा शहाबुद्दीन का वध कराना भी दोनों में एक ही सा है।

(११) 'आईन-ए-अकबरी' के अनुसार शहाबुद्दीन के वध के अनंतर राजा तथा चन्द दोनों को मार डाला गया है; 'रासो' में शब्दावली है :—

भयउ चंद राजहि मरन।

जिसका अर्थ यह है कि 'चन्द कहता है कि राजा का मरण हुआ,' जो अधिक समीचीन है, किंतु कदाचित् दूसरा अर्थ यह भी लिया जा सकता है कि 'चन्द और राजा का मरण हुआ', जैसा कि 'आईन-ए-अकबरी' में लिया गया है।

अन्तर दोनों में बहुत साधारण है और मुख्यतः इतना ही है कि :—

(१) 'आईन-ए-अकबरी' के अनुसार जयचन्द की कन्या पृथ्वीराज पर अनुरक्त होने के पूर्व किसी अन्य को वाग्दत्ता होती है, जो 'रासो' में नहीं है।

(२) 'आईन-ए-अकबरी' के अनुसार पृथ्वीराज कन्नौज दो बार जाता है : एक बार तो वह अपने ५०० चुने योद्धाओं के साथ जाकर अपनी स्वर्ण-प्रतिमा उठा लाता है, और दूसरी बार जाकर जयचन्द की कन्या का अपहरण करता है, 'रासो' में वह एक ही बार कन्नौज जाता है और केवल जयचन्द पुत्री का अपहरण करता है।

(३) 'आईन-ए-अकबरी' के अनुसार शहाबुद्दीन पृथ्वीराज पर किए गए अन्तिम आक्रमण के पूर्व जयचन्द से मैत्री स्थापित करता है। 'रासो' में यह नहीं है।

उपर्युक्त सन्निकट साम्य की पृष्ठभूमि में जब इस अन्तर पर हम विचार करते हैं तो लगता है कि ये अतिरिक्त विस्तार या तो कल्पित हैं अथवा जनश्रुति के आधार पर 'आईन-ए-अकबरी' में रख लिए गए हैं। किसी प्राप्त प्राचीन रचना में इनमें से कोई भी नहीं मिलता है, यह भी इस अनुमान की पुष्टि करता है।

फलतः यह प्रकट है कि 'आईन-ए-अकबरी' के विवरण का आधार 'पृथ्वीराज रासो' है।

अब दूसरा प्रश्न यह उपस्थित होता है कि 'आईन-ए-अकबरी' के उपर्युक्त विवरणों का आधार 'रासो' का कौन-सा पाठ है। 'रासो' के जो चार मुख्य पाठ प्राप्त हैं, उनमें से कौन-सा पाठ 'आईन-ए-अकबरी' के उपर्युक्त विवरण का आधार हो सकता है?

इस प्रसंग में द्रष्टव्य यह है कि—

(१) ऊपर 'रासो' के जो छन्द उद्धृत किए गए हैं, वे 'रासो' के लघुतम से लेकर के वृहत् पाठ तक समस्त पाठों में समान रूप से पाए जाते हैं।

(२) 'आईन-ए-अकबरी' का एक भी विस्तार उपर्युक्त तीन को छोड़ कर ऐसा नहीं है जो 'रासो' के समस्त पाठों में न पाया जाता हो, और ये तीन विस्तार 'रासो' के किसी भी पाठ में नहीं मिलते हैं।

(३) ऐसे कोई भी प्रसंग या विस्तार जो लघुतम के अतिरिक्त रचना के शेष किसी भी पाठ में मिलते हैं 'आईन-ए-अकबरी' में नहीं हैं।

अन्तिम विशेषता के उदाहरण में निम्नलिखित प्रसंगों और विस्तारों को लिया जा सकता है जो कि लघुतम को छोड़ कर 'रासो' के शेष समस्त पाठों में पाए जाते हैं :—

(१) गुर्जराधिपति भीम चौलुक्य और पृथ्वीराज का युद्ध,

(२) जयचन्द से युद्ध से पूर्व हुआ पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन का एक युद्ध;

(३) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध के पूर्व पृथ्वीराज के एक सामन्त धीर पुंडीर और शहाबुद्दीन के बीच हुआ युद्ध,

(४) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से चित्तौड़ के रावल समरसी का भाग लेना;

(५) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज के एक सामन्त जम्बूपति हाहुलीराय हम्मीर का शहाबुद्दीन पक्ष में जा मिलना, और

(६) चंद का उस हाहुलीराय हम्मीर के पास जाकर उसे पृथ्वीराज के पक्ष में लाने का प्रयत्न करना।

ये प्रायः ऐसे प्रसंग या विस्तार हैं जो यदि 'आईन-ए-अकबरी' के लेखक के सामने होते तो उसके द्वारा कदाचित् छोड़े न गए होते। अतः यह स्पष्ट है कि 'आईन-ए-अकबरी' के विवरणों का आधारभूत 'रासो' का पाठ उसका लघुतम या उससे मिलता-जुलता ही कोई पाठ था।

अब विचारणीय यह है कि 'आईन-ए-अकबरी' के विवरण का आधारभूत यह पाठ 'रासो' के वर्त्तमान लघुतम पाठ से भी किन्हीं बातों में तो लघुतर नहीं था।

'आईन-ए-अकबरी' के विवरणों से 'रासो' के लघुतम पाठ की विवरणों की तुलना करने पर निम्नलिखित बातें द्रष्टव्य ज्ञात होती हैं—

(१) 'आईन-ए-अकबरी' में कथा जयचन्द के राजसूय से प्रारम्भ होती है, पृथ्वीराज का कोई वृत्त इसके पूर्व नहीं आता है। उसमें पृथ्वीराज के पूर्वपुरुषों के विषय में कोई उल्लेख तक नहीं होता है, और उसमें अन्यत्र चहुवान कुल के शासकों की जो नामावली आती है, वह उस नामावली से बहुत भिन्न है जो 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक में मिलती है।[१]

(२) अनंगपाल से पृथ्वीराज को दिल्ली प्राप्त होने की जो बात 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक में आती है, वह भी आईन-ए-अकबरी' में नहीं आती है।

[१] 'आईन-ए-अकबरी', उपर्युक्त, पृ० ३०२।

(३) पृथ्वीराज के प्रधान अमात्य कैंवास अथवा उसके वध का कोई उल्लेख 'आईन-ए-अकबरी' में नहीं होता है, जो कि 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक में पाया जाता है।

(४) 'आईन-ए-अकबरी' में वे तिथियाँ भी नहीं आती हैं जो 'रासो' के प्राप्त लघुतम पाठ तक में पाई जाती हैं।

असम्भव नहीं है कि इनमें से कुछ प्रसंग या विस्तार संक्षेप की दृष्टि से 'आईन-ए-अकबरी' में छोड़ दिए गए हों, किन्तु यह भी असम्भव नहीं है कि उसके विवरण के आधारभूत 'रासो' के पाठ में उपर्युक्त में से कुछ न भी रहे हों। इस लिए यह विषय गम्भीरता पूर्वक विचारणीय है। इस सम्बन्ध में यह जान लेना उपयोगी होगा कि 'आईन-ए-अकबरी' की रचना अकबर के राज्य के बयालीसवें वर्ष (सं० १६५४-५५) में समाप्त हुई थी और 'रासो' के विभिन्न पाठों की प्राप्त प्रतियाँ सभी उसके बाद की हैं. लघुतम की सबसे प्राचीन प्रति धारणोज (गुजरात) की है जो सं० १६६४ की है; लघु की सब से प्राचीन प्रति बीकानेर की है, जो जहाँगीर के समकालीन किन्हीं भागचन्द के लिए लिखी गई थी; मध्यम की सब से प्राचीन प्रति रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, लन्दन की है, जो सं० १६९२ की है; और बृहत् की सब से प्राचीन प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की है जो सं० १७४७ की है।

प्रस्तुत संस्करण 'आईन-ए-अकबरी' के आधारभूत 'रासो' के पाठ के सर्वथा निकट पहुँचता है, क्योंकि 'आईन' में 'रासो' के विशिष्ट प्रसंगों और विवरणों की जो स्थिति ऊपर बताई गई है उनकी लगभग वही स्थिति प्रस्तुत संस्करण में भी मिलती है :—

(१) प्रस्तुत संस्करण में भी कथा जयचन्द के राजसूय यज्ञ से प्रारम्भ होती है और इसके पूर्व पृथ्वीराज का कोई वृत्त नहीं आता है, इसके अतिरिक्त इसमें भी पृथ्वीराज के पूर्वपुरुषों के विषय में कोई उल्लेख नहीं होता है।

(२) प्रस्तुत संस्करण में भी अनंगपाल से पृथ्वीराज को दिल्ली प्राप्त होने की बात नहीं आती है।

(३) प्रस्तुत संस्करण में भी कोई तिथियाँ नहीं आती हैं।

कैंवास वध की कथा अवश्य प्रस्तुत संस्करण में ऐसी है जो 'आईन-ए-अकबरी' में नहीं आती है, किन्तु इस कथा का मुख्य कथा से कोई अनिवार्य संबंध न होने के कारण ही यदि इसे 'आईन' में छोड़ दिया गया हो तो आश्चर्य न होगा।

—:*:—

[१] 'आईन-ए-अकबरी', उपर्युक्त, तृतीय भाग, पृ० ५२६।

१३. 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा

डॉ० नामवर सिंह ने 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' नामक अपने डॉक्टरेट के निबन्ध में धा० पाठ के कन्नौज प्रकरण—प्रस्तुत संस्करण के सर्ग ४-८ तथा ९ के पूर्वार्ध—के छन्दों को लेकर रचना की भाषा पर विस्तृत विचार किया है और उसकी भूमिका मे तत्संबंधी परिणामों का सारांश दिया है।[१] भाषाशास्त्रीय विश्लेषण के अनंतर निकाले गए ये परिणाम महत्व के हैं, इसलिए नीचे इन्हें उन्हीं के शब्दों में दिया जा रहा है।

अ. ध्वनि विचार

(१) छन्द के अनुरोध से प्राय लघु अक्षर को गुरु और गुरु अक्षर को लघु बना दिया गया है। लघु को गुरु बनाने के लिए शब्दान्तर्गत (क) ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण, (ख) व्यंजन-द्वित्व, (ग) स्वर का अनुस्वार रंजन, तथा (घ) समास में द्वितीय शब्द के प्रथम व्यंजन का द्वित्व करने की प्रवृत्ति है। इसके विपरीत गुरु को लघु बनाने के लिए (क) दीर्घ का ह्रस्वीकरण, (ख) व्यंजन-द्वित्व या क्षतिपूर्ति-रहित सरलीकरण, तथा (ग) अनुस्वार के अनुनासिकीकरण की विधि प्रयोग में लाई गई है।

(२) छन्दोनुरोध के अतिरिक्त भी स्वर-व्यंजन में परिवर्तन हुए हैं। उत्तराधिकार में प्राप्त प्राकृत के अर्ध-तत्सम शब्दों का प्रयोग करने के साथ ही आधुनिक आर्य भाषाओं की प्रवृत्ति के अनुसार नये तद्भव रूपों की ओर भी झुकाव लक्षित होता है। अन्त्य स्वर के ह्रस्वीकरण की जो प्रवृत्ति प्राकृत-अपभ्रंश काल से ही शुरू हो गई थी, वह 'रासो' में पर्याप्त प्रबल दिखाई पड़ती है; जैसे जोध (=योद्धा), सेन (=सेना) इत्यादि।

(३) शब्द के अन्तर्गत आद्य अक्षर में प्रायः स्वर की मात्रा में परिवर्तन हो गया है और मात्रा-संबंधी यह परिवर्तन प्रायः दीर्घ से ह्रस्व की ओर दिखाई पड़ता है, जैसे अनंद (=आनंद) अहार (=आहार), जियण (=जीवन) इत्यादि।

(४) शब्द के अन्तर्गत अनादि अक्षर में स्वर के गुण-संबंधी परिवर्तन की प्रवृत्ति है, जैसे—अ > इ : तुरङ्ग > तुरिय; अ > उ : अञ्जलि > अञ्जुलिय; ई > अ : निरीक्ष्य > निरख, उ > अ : मुकुट > मुक्ट, उ > इ : कौतुक > कौतिग; ऊ > ओ : ताम्बूल > तंबोल; ए > इ : नरेन्द्र > नरिन्द, इत्यादि।

[१] 'पृथ्वीराज रासो की भाषा', सरस्वती प्रेस, बनारस, पृ० ३३-४१।

(५) प्राकृत-अपभ्रंश में जहाँ स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग क, ग, च, ज, त, द, प, य, व के लोप से उद्वृत्त स्वर अवशिष्ट रह जाता था, उसके स्थान पर धीरे-धीरे य, व श्रुति के आगम अथवा पूर्ववर्ती स्वर के साथ उन्हें संयुक्त करने की प्रवृत्ति अवहट्ट अवस्था से प्रारम्भ हो गई थी, जिसकी प्रवृत्ता 'रासो' में भी दिखाई पड़ती है। 'रासो' में उद्वृत्त स्वर की (क) स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित, (ख) य, व श्रुति के रूप में उच्चरित और (ग) पूर्ववर्ती स्वरों के साथ संयुक्त, तीनों स्थितियाँ मिलती हैं, किन्तु प्रधानता द्वितीय स्थिति की है और तृतीय स्थिति विकास की अवस्था में दिखाई पड़ती है। तीनों स्थितियों के उदाहरण निम्नलिखित हैं :—

(क) चउसठि < चतुष्षष्ठि; (ख) नयर < नगर; (ग) रावत < रावुत < रावउत < *राअवुत < राजवुत < राजपुत्र।

(६) उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने की प्रवृत्ति पदान्त में विशेष दिखाई पड़ती है, जिसका व्याकरण की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व है। इस प्रवृत्ति के कारण 'रासो' के क्रियापद अपभ्रंश से विशिष्ट हो गए हैं और संज्ञा तथा सर्वनाम पदों में विकारी रूपों के निर्माण की अवस्था दिखाई पड़ती है। है, कहै, जानिहै, आयो, सो आदि क्रियापद तथा हत्थैं, तैं आदि संज्ञा-सर्वनाम के विकारी रूप इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(७) उद्वृत्त स्वर के अतिरिक्त मूल स्वरों में भी स्वर सङ्कोचन की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। मोर (=मयूर), समै (=समद), सोन (=श्रवण) इत्यादि शब्द इसी प्रकार के स्वर-सङ्कोचन के परिणाम कहे जा सकते हैं।

(८) प्राचीन व्यंजन ध्वनियों में से य और व 'रासो' में अधिकांशतः केवल श्रुति के रूप में सुरक्षित प्रतीत होते हैं। इनके अतिरिक्त य ज में तथा व ब में परिवर्तित हो गया था। प्रतिलिपिकार ने यद्यपि ब के लिए भी व का ही प्रयोग किया है, तथापि उच्चारण में वह ब ही प्रतीत होता है।

(९) श, ष, स तीन ऊष्म ध्वनियों में से केवल स का अस्तित्व प्रमाणित होता है। श और ष भी प्रायः स में परिवर्तित हो गए थे। ष के अन्य परिवर्तित रूप ख और ह मिलते हैं। ख के लिए ष का प्रयोग मध्ययुगीन नागरी लिपि शैली की सामान्य विशेषता है, जिससे सभी लोग परिचित हैं।

(१०) वर्गीय अनुनासिक व्यंजनों में से केवल न, म का अस्तित्व प्रमाणित होता है। कचित्-कदाचित् ण भी दिखाई पड़ जाता है किन्तु इसका प्रयोग या तो तत्सम शब्दों में परंपरा निर्वाह के लिए दिखाई पड़ता है या राजस्थानी प्रभाव के अन्तर्गत हुआ है।

(११) लिपि-शैली से ड़, ढ़, न्ह, ल्ह, म्ह पाँच नवीन व्यंजन ध्वनियों के प्रचलन का प्रमाण मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन ड, ढ क्रमशः ड़, ढ़ में परिवर्तित हो गए थे।

(१२) असंयुक्त व्यंजनों में क > ह, ज > ग, ट > र, र > ल परिवर्तन महत्त्वपूर्ण हैं, जिनके उदाहरण निम्नलिखित हैं :—

क > ह : चिकुर > चिहुर; ज > ग : कनवज > कनवग ; ट > र : भट > भर; र > ल : सरिता > सलिता।

(१३) असंयुक्त महाप्राण घोष और अघोष व्यंजनों का केवल महाप्राणत्व ह अवशिष्ट रह गया था। यह परिवर्तन प्रायः स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग स्थिति में हुआ है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :—

ख : दुह, सुह; थ : सुहर; ध : पहिल, पुहली; घ : कोह, सिहि; भ : लहै, हुअ।

(१४) असंयुक्त अल्पप्राण व्यंजनों को आदि और अनादि दोनों ही स्थितियों में कहीं-कहीं महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है, जैसे : कंधार>खंधार; अंकुर>अंखुली।

(१५) अघोष व्यजनों का घोषीकरण : जैसे अनेक > अनेग; कौतुक > कौतिग; चातक > चातग।

(१६) मूर्धन्यीकरण : जैसे ग्रन्थि > गंठि, गर्त > गड्ढा; दिल्ली > ढिल्ली।

(१७) संयुक्त व्यजनों के परिवर्तन में सबसे महत्वपूर्ण अन्य व्यंजन+र तथा र+अन्य व्यंजन है। ऐसे स्थलों पर 'रासो' में या तो सम्प्रसारण अथवा स्वरभक्ति की प्रवृत्ति है या फिर परवर्ती-व्यजन-द्वित्व की। कहीं-कहीं व्यजन-द्वित्व के साथ ही रेफ-विपर्यय भी हो गया है। फलतः 'रासो' में धर्म के धरम, धरम्म, ध्रम्म तीन प्रकार के रूप मिलते हैं। इसी प्रकार गर्व > गरब, गव्व, ग्रव्व रूप भी।

(१८) अन्य संयुक्त व्यंजनों में प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति यथास्थान पूर्वसावर्ण्य तथा पर-सावर्ण्य की प्रवृत्ति प्रचलित दिखाई पड़ती है। फलस्वरूप इस रचना में भी प्राकृत-अपभ्रंश की तरह व्यंजन-द्वित्व की बहुलता मिलती है। 'रासो' के मुक्क, अग्ग, बद्ध, मज्ज, तुट्ट, नित्त, सद्द, अप्प, सब्ब, जम्म जैसे शब्द इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(१९) परन्तु आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की व्यंजनद्वित्व को सरलीकृत करने की मुख्य प्रवृत्ति 'रासो' में भी मिलती है। व्यजन-द्वित्व का सरलीकरण दो प्रकार से किया गया है—(क) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-सहित और (ख) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित। दोनों के उदाहरण निम्न-लिखित हैं :—

(क) अट्ठ > आठ; विज्जह > बीजइ; लक्ख > लाख।

(ख) अलक्ख > अलख; उच्छग > उछंग; चढ्ढिड > चढिड।

दीर्घाक्षरिक शब्द में भी क्षतिपूरक दीर्घीकरण के बिना ही व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण हो जाता है; जैसे : चैत्र > चैत्त > चैत।

(२०) संयुक्त व्यंजन तथा व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण क्षतिपूरक अनुस्वार के साथ भी होता है; जैसे : दर्शन > दंसन; प्रजल्प > पयपि; पक्षी > पंखी।

आ. रूप-विचार

(१) रूप-रचना की दृष्टि से 'रासो' की भाषा अपभ्रंशोत्तर और उदयकालीन नव्य भारतीय आर्य भाषा की विशेषताओं से युक्त दिखाई पड़ती है। इनमें से पहली विशेषता है; निर्विभक्तिक संज्ञा शब्दों का सभी कारकों में प्रयोग। अपभ्रंश में इस प्रवृत्ति का प्रारम्भ ही हुआ था और नव्य भारतीय आर्यभाषा में प्रत्येक कारक के लिए परसर्ग का विकास होने से पूर्व बहुत दिनों तक ऐसे निर्विभक्तिक संज्ञा शब्दों के प्रयोग की बहुलता थी।

(२) उकार बहुला अपभ्रंश में कर्त्ता-कर्म एक वचन में जिस -उ विभक्ति का प्रचलन था, वह 'रासो' की प्राचीन प्रतियों में प्रचुर मात्रा में मिलती है। सभा के मुद्रित संस्करण में इसका अभाव दिखाई पड़ता है।

(३) अपभ्रंश की—इ परक विभक्तियों के अवशेष 'रासो' में काफी मिलते हैं। कनवज्जइ, कनवज्जे, कनवज्जहि जैसे रूप विरल नहीं हैं। परवर्ती हिंदी में धीरे-धीरे यह विभक्ति घिस कर विकारी रूप बन गई।

(४) करण-कारण एकवचन की—इ,—ए,—एँ अपभ्रंश विभक्तियाँ भी 'रासो' में प्रचुर मात्रा में मिलती हैं; जैसे कारणइ, कनवज्जइ; हत्थे, हत्थेँ इत्यादि।

(५) कर्त्ता-करण तथा कर्म-सम्प्रदान के बहुवचन में -न, -नि, —नु विभक्ति का प्रयोग 'रासो' की ऐसी विशेषता है जो अपभ्रंश में नहीं मिलती लेकिन 'वर्ण रत्नाकर', 'कीर्तिलता' इत्यादि अवहट्ट रचनाओं से —ह से युक्त अर्थात् —न्ह, —न्हि रूप मिलने लगते हैं। यही —न आगे चलकर विकारी रूप ओं तथा ओं में विकसित हुआ। रासो में-ओं, —ओं वाले विकारी रूप नहीं मिलते।

(६) परसर्गों की दृष्टि से 'रासो' अपभ्रंश तथा अवहट्ट दोनों की अपेक्षा समृद्ध है। कर्तृ-करण परसर्ग नें अथवा ने को छोड़कर प्रायः शेष सभी परसर्ग किसी न किसी रूप में यहाँ मिलते हैं। कर्म परसर्ग कहुँ, कहुँ, कू रूप में, करण अपादान परसर्ग तें, से तथा सहु, सों, सुँ, अपादान-परसर्ग हुति, सम्बन्ध-परसर्ग को, का, की, के तथा कउ, कै, अधिकरण परसर्ग मज्झहि, मज्झे, मज्झि, मझ, मधि, मदि, मह आदि विविध रूपों में प्राप्त होता है, किंतु न्यूनतम रूपान्तर के कनवज्ञ समय में अधिकरण-परसर्ग में अथवा मे कहीं नहीं मिलता।

(७) सर्वनामों के विषय में 'रासो' की भाषा अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक है। उत्तम पुरुष सर्वनाम के मैं, हूँ, हम तथा विकारी रूप मो, मोहि मिलते हैं। मध्यम पुरुष के तुम, तुम्ह, तुम्मह, तथा तैं, तुज्झ, तोहि रूप, अन्य पुरुष के सो तथा तासु जैसे प्राचीन रूपों के अतिरिक्त वह, उह, तथा उस रूपों का भी प्रयोग मिलता है।

(८) प्रश्नवाचक सर्वनाम के को, कौन, तथा किस, किन रूप, निज वाचक अप्पु, अप्प, अपन, सर्वनाम मूलक विशेषण अस, इसो, तस, तैसे आदि प्रकार-वाचक और इत्तनहि, इत्तनउ, इत्ने तथा कितक आदि परिमाणवाचक रूप 'रासो' को अपभ्रंश अवस्था से बाद की रचना प्रमाणित करते हैं।

(९) संख्यावाचक विशेषण— १ से १० की संख्याएँ एक, दुइ, तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ, दस नाम से मिलती हैं। १०० के लिए से, सौ दोनों रूप आते हैं। १००० के लिए सहस के अतिरिक्त हज्जार (फारसी) का भी प्रयोग है। क्रमवाचक पहिलह, बीय, त्रिभ, अपूर्ण संख्यावाचक अद्ध, आवृत्तिवाचक दुहु इत्यादि।

(१०) क्रियापदों में यदि √भू के सभी काल के रूपों पर दृष्टिपात किया जाय तो अपभ्रंश से विकसित अवस्था के स्पष्ट लक्षण मिलते हैं। वर्तमान काल में है, भविष्यत् में होइहै तथा भूतकाल में कृदन्त रूप भो, भयो, भयी, भये तथा हुअ, हुओ इत्यादि।

(११) कहीं कहीं पूर्वी हिंदी का आदि वाला क्रिया रूप भी 'रासो' में मिलता है, परन्तु इसका प्रयोग अधिक नहीं है।

(१२) भविष्यत् काल में अपभ्रंश का–स मूलक रूप, जो पीछे राजस्थानी में विशेष प्रचलित हुआ तथा पश्चिमी और पूर्वी हिंदी में नहीं आया, 'रासो' में कहीं-कहीं दृष्टिगोचर होता है।

(१३) सामान्य वर्तमान काल के लिए 'रासो' में अपभ्रंश के तिङन्त तद्भव–अइ वाले रूप के साथ ही स्वरसंकोच युक्त –ऐ वाले रूप भी मिलते हैं और गणना करने पर पता चलता है कि अनुपात की दृष्टि से दोनों का प्रयोग लगभग समान है।

(१४) -इग अन्तवाला भूतकालिक क्रियापद जैसे चल्लिग, कहिग, करिग इत्यादि 'रासो' की अपनी विशेषता है। इस प्रकार के क्रियापद अपभ्रंश में नहीं थे और पश्चिमी हिंदी में भी इस प्रकार के जो क्रियारूप मिलते हैं, उनका प्रयोग भूतकाल में न होकर केवल भविष्यत् काल तक ही सीमित है।

(१५) -अत कृदन्तयुक्त क्रियापदों से वर्तमान काल-रचना का सूत्रपात 'रासो' में हो चुका था किंतु इसके साथ अस्तिवाचक सहायक क्रिया के रूप जोड़कर आधुनिक हिन्दी की भाँति संयुक्त काल-रचना की प्रवृत्ति उसमें नहीं मिलती। यह अवस्था स्पष्ट अपभ्रंश के पश्चात् और ब्रजभाषा के उदय के आस पास की है।

(१६) संयुक्त क्रियाएँ 'रासो' में अपभ्रंश से अधिक किंतु ब्रजभाषा से बहुत कम मिलती हैं : साथ ही अर्थ की दृष्टि से भी वे काफी सरल हैं। घरि राखिओ, लेहि बइठो, उड चलहि, हुइ जाइ जैसी सरल संयुक्त क्रियाएँ ही 'रासो' में प्रयुक्त हुई हैं।"

इ. शब्द-समूह

(१) कनवज्ज समय (लघुतम रूपान्तर) में कुल मिलाकर लगभग साढ़े तीन हजार शब्द हैं और यदि रूप-विविधता को ध्यान में रखते हुए किसी शब्द के विविध रूपों में से केवल एक रूप की गणना की जाय तो शब्द-संख्या लगभग ३००० होती है। इनमें से लगभग ५०० शब्द संस्कृत तत्सम हैं और २० शब्द फारसी के हैं, शेष शब्द मुख्यतः तद्भव हैं। केवल थोड़े से शब्द अर्धतत्सम अर्थात् प्राकृत अपभ्रंश के अवशेष हैं और उनसे भी कम देशी अथवा स्थानीय हैं। इस प्रकार 'रासो' में तत्सम शब्दों का अनुपात १६ प्रतिशत से अधिक नहीं है। अपभ्रंश को देखते हुए तत्सम शब्दों का यह अनुपात बहुत अधिक कहा जायगा, किन्तु नव्य आर्य भाषा की प्राचीन रचनाओं को देखते हुये 'रासो' में तत्सम शब्दों का यह अनुपात कम कहा जायगा। इससे साबित होता है कि भक्ति कालीन रचनाओं की अपेक्षा 'पृथ्वीराज रासो' कुछ प्राचीन रचना है और सोलहवीं शताब्दी के व्यापक सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभाव उस पर कम पड़ा है। इसी तरह मुसलमान बादशाहों के प्रभाव से इस रचना में जिन फारसी शब्दों की बहुलता की बात कही जाती है, वह केवल बृहत् रूपान्तर के लिए सही हो सकती है। लघुतम रूपान्तर में फारसी शब्द बहुत कम हैं।

यह कहना अनावश्यक होगा कि धा० पाठ के आधार पर ऊपर 'रासो' की भाषा के सम्बन्ध में जो परिणाम डॉ० सिंह ने निकाले हैं वे सर्वथा तथ्यपूर्ण हैं। किन्तु प्रस्तुत संस्करण में निर्धारित पाठ अनेक विषयों में धा० पाठ की तुलना में प्राचीनतर—अर्थात् अपेक्षाकृत अपभ्रंश के निकटतर प्रमाणित होता है। नीचे इस विशेषता के कुछ प्रमाण दिए जा रहे हैं।

अ. ध्वनि-विचार

डॉ० सिंह ने ध्वनि-विचार की प्रथम प्रवृत्ति जो बताई है, उसका सम्बन्ध मूलतः रचना के कवि की शैली से है, उसकी भाषा से नहीं; छठीं प्रवृत्ति के रूप में उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने की जो प्रवृत्ति उन्होंने बताई है, वह प्रस्तुत संस्करण में अपवाद स्वरूप ही कहीं-कहीं मिलेगी, सामान्य प्रवृत्ति उद्वृत्त स्वरों को स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित रखने की है, यथा धा० के 'है' 'कहै', 'जानिहै' के स्थान पर प्रस्तुत संस्करण में प्रायः 'हइ', 'कहइ', 'जानिहइ' रूप मिलेंगे और इसी प्रकार 'आयो' तथा 'भो' के स्थान पर प्रायः 'आयउ' तथा 'भउ' मिलेंगे।

ध्वनि-विचार की आठवीं प्रवृत्ति के रूप में 'य' के 'ज' तथा 'व' के 'ब' में परिवर्तित होने की जो बात उन्होंने कही है, वह भी अंशतः ही प्रस्तुत संस्करण में मिलेगी : 'य' अवश्य ही अधिकतर 'ज' हो गया है किन्तु वह अपने 'य' रूप में भी अनेक स्थलों पर सुरक्षित है, और सामान्य रूप से 'व' के 'ब' हुए होने के कोई प्रमाण नहीं मिलते हैं; केवल 'व' और 'ब' के एक-से लिखे जाने के कारण यह अनुमान करना बहुत उचित न होगा; प्रस्तुत संस्करण में 'व' अधिकतर सुरक्षित मिलेगा, केवल कहीं-कहीं पर 'व' का 'ब' हुआ दिखाई पड़ेगा।

ध्वनि-विचार की ग्यारहवीं प्रवृत्ति के रूप में 'ड़', 'ढ़', 'न्ह', 'ल्ह', 'म्ह' की पाँच नवीन व्यंजन-ध्वनियों के प्रचलन की बात कही गई है। प्रस्तुत संस्करण में 'ड़' 'ढ़' एक स्थान पर भी नहीं आते हैं—वे धा० की मूल प्रति में भी होंगे इस विषय में मुझे पूरा संदेह है और असंभव नहीं कि वे उसमें आधुनिक प्रतिलिपि-क्रिया द्वारा आए हों; 'न्ह', 'ल्ह' और 'म्ह' भी प्रस्तुत संस्करण में नवीन व्यंजन-ध्वनियों के रूप में नहीं मिलते हैं, वे अपनी संयुक्त व्यंजन ध्वनियों के रूप में ही इसमें मिलते हैं।

ध्वनि-विचार की चौदहवीं प्रवृत्ति के रूप में अल्पप्राण व्यंजनों को महाप्राण करने की जो बात कही गई है, वह भी प्रस्तुत संस्करण में प्रायः नहीं मिलती है : दिए हुए उदाहरणों में से 'खंधार' 'कंधार' से कदाचित् नहीं व्युत्पन्न होता है, वह 'स्कन्धार' से व्युत्पन्न है और इसलिए 'खंधार' के 'ख'

का महाप्राणत्व 'स्कंधार' के स्>ह् के क के साथ मिल जाने के कारण हुआ लगता है : 'अंखुली' भी 'अंकुर' से व्युत्पन्न नहीं है, वह कदाचित् 'उक्खलिय' है जो 'उत्खण्डित' से व्युत्पन्न है।

ध्वनि-विचार की सत्रहवीं प्रवृत्ति के अन्तर्गत व्यजन-द्वित्व के साथ रेफ-विपर्यय की जो बात कही गई है, वह भी प्रस्तुत संस्करण में न मिलेगी : 'ध्रम्म' और 'ग्रब्ब' के स्थान पर 'धर्म' और 'गर्व' के दिए हुए अन्य रूप तथा 'धम्म', 'गब्ब' ही मिलेंगे।

आ. रूप विचार

रूप-विचार के अन्तर्गत सातवीं प्रवृत्ति के रूप में सर्वनामो के जिन रूपों का उल्लेख किया गया है, उनमें से अनेक नहीं हैं; 'उस' के प्रयोग की जो बात कही गई है, वह तो धा० पाठ के संबंध में भी ठीक नहीं है। डॉ० सिंह द्वारा दी हुई शब्दानुक्रमणिका में—जो उनके ग्रन्थ के अन्त में दी हुई है—'उस' उनके संस्करण के छन्द ५४ मात्र में आया हुआ बताया गया है, किन्तु यह 'उस' नहीं है 'उसनेह' का एक खंड मात्र है, पूरी पंक्ति है :—

सीत उसनेह रितु दोख रंभं।

'उसनेह' <'उष्ण' से व्युत्पन्न है, अर्थ से यह भली भाँति प्रमाणित है।

रूप विचार के अन्तर्गत नवीं प्रवृत्ति के रूप में चार, पाँच, छह, सात तथा आठ के मिलने का जो उल्लेख किया गया है, वह भी अंशतः ही ठीक है : चार, पाँच, छः, सात, तथा आठ प्रस्तुत संस्करण में 'च्यारि', 'पंच', 'सत्त' तथा 'अट्ठ' के रूप में ही सामान्यतः मिलते हैं, अन्य रूपों में अपवाद स्वरूप ही में मिलेंगे।

रूप-विचार के अन्तर्गत तेरहवीं प्रवृत्ति के रूप में '—अइ' के साथ '-ए' वाले रूपों का लगभग बराबर-बराबर पाया जाना बताया गया है। प्रस्तुत संस्करण में '-ए' वाले रूप बहुत ही कम हैं, अधिकता '-अइ' वाले रूपों की ही मिलेगी।

इ. शब्द-समूह

तत्सम और अर्धतत्सम शब्दों की जो संख्या डॉ० सिंह द्वारा ऊपर शब्द-समूह के अन्तर्गत बताई गई है, प्रस्तुत संस्करण में उसमें कदाचित् कमी दिखाई पड़ेगी, और तद्भव शब्दों की संख्या में कदाचित् कुछ आधिक्य दिखाई पड़ेगा। फारसी शब्दों का अनुपात लगभग वही होगा जो डॉ० सिंह के परिणामों में दिया हुआ है।

डॉ० सिंह ने कहा है कि 'रासो' की भाषा पर सोलहवीं शताब्दी के व्यापक पुनर्जागरण का प्रभाव कम पड़ा है, किंतु प्रस्तुत संस्करण के पाठ में वह कदाचित् बिल्कुल नहीं पड़ा दिखाई देगा। फारसी शब्दों की बहुत-कुछ बहुलता मुसलमानी शासन के प्रभाव के कारण अवश्य है, किन्तु कुछ न कुछ शहाबुद्दीन के प्रसंगों के वर्णन की अनिवार्य आवश्यकता के कारण भी है, जैसा हम अन्यत्र[1] देखेंगे। इस प्रकार प्रस्तुत संस्करण में रचना की भाषा का स्वरूप धा० पाठ के भाषा-रूप की तुलना में प्राचीनतर प्रमाणित होगा।

दोनों में कितना और किस प्रकार का अंतर है, यह स्पष्ट करने के लिए एक छोटे प्रसंग की पंक्तियाँ नीचे पहले धा० तथा फिर संपादित पाठ से दी जा रही हैं।[2]

धा० पाठः दूहा—उदय अगस्त ... कमल जल ससि कास।
मोहि चंद इह विजय मतु कबहु कहाँ कइमास ॥
नागपुर नरपुर सयल कथिसु देवपुर साज।
'दाहिमो दुस्सह भयो कहि न जाय प्रिथिराज ॥

[1] दे० इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो में प्रयुक्त विदेशी शब्द' शीर्षक।
[2] धा० छंद ८४-९० ; संपादित पाठ ३.३१—३७।

का भुजग का देवनर निकमु कब्ब कवि रोंहि।
कै बताउ कैंवास मोहि हर सिद्धि पर छंदि ॥
जो छंदइ ... ...।
...... तप ताप करि पद छंडै कवि चन्द ॥
इठ लग्गयो चहुवान नृिप अंगुली मुखहि फनिंद।
जिह पुरि सुभ मति सचरइ सु कहि विनइ कवि चन्द ॥
सेस सिरप्परि सूरतर जइ पुच्छइ नृिप पेसु।
दहु वोली मदन मरनु कहहु त कब्ब पहेसु ॥

कवितु—इक्कु वान पुहमी नरेस कैंवासह मुक्कयो।
उर उप्परि खरहरयउ वीर कक्खतर चुक्कयो।
बीअ बान सधानि हन्यो सोमेसुर नंदन।
गाढ़ो कै निग्गह्यो खन्यो गड्डो 'संभरि धन।
धर छंडि न जाइ न भग्गलो गारे गड्यो गुन गहे।
इम जरइ चन्द बरद्दिया यह न पट इह प्रजले ॥

सपादित पठ: दोहरा—उव्य भगस्त नयन दिठि उज्जल जल ससि कास।
मोहि चन्द इह विजय मन कहहु कहाँ कयमास ॥ (३२१)
नागपुर सुरपुर सयल कथित कहउ सब साज।
दाहिम्मउ दुच्छह भयउ कहउ न जाइ प्रथीराज ॥ (३२२)
कहा भुजग कहा उदे सुर निकमु कब्ब कवि पढि।
कह कयमास बताहि मो कइ हर सिद्धी वर छंडि ॥ (३२३)
जउ छडइ सेसह धरणि हर छडइ विष कदु।
रवि छडइ तप तार कर तउ वर छंडइ कवि चंदु ॥ (३२४)
इठि लग्गउ चहुआन नृप अगुलि मुषह फणिंदु।
तिहु पुरि सुव मति सचरइ सु कहे बनइ कवि चंदु। (३२५)
सेस सिरप्परि सुरतर जइ पुच्छइ नृप एस।
दोहुं बोलि मदन मरनु कहइ तउ काबु कहेस ॥ (३२६)

कवित—एकु बान पुहवी नरेस कयमासह मुक्कउ।
उर उप्परि खरहरिउ बीर कप्पह तर चुक्कउ।
बीउ बान सधानि हनउ सोमेसुर नंदन।
गाडउ करि निग्गहउ षनिव षोदउ सभरिधनि।
थर छडि न जाइ अभागरउ गारइ गहउ जु गुन परउ।
इम जपइ चद विरद्दिया सु कहा निमट्टिहि इह प्रलउ ॥ (३२७)

इसी प्रसग में 'पुरातन प्रबन्ध समह' में आए हुए 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में उद्धृत निम्नलिखित छद[1] को भी लिया जा सकता है, जो कि ऊपर धा० तथा सपादित पाठों का उद्धृत अतिम छंद है :—

इक्कु बाणु पहुवीसु जु पइ कइंबासह मुक्कओ।
उर भितरि खडहडिउ धीर कक्खतरि चुक्कउ।

[1] 'पुरातन प्रबन्ध समह', सपा० मुनि जिन विजय, पृ० ८६।

घीअं करि सधीउ भमइ सूमेसर नदण।
एहु सु गटि दाहिमओ खणइ खुदइ सइंभरिवणु।
फुड छडि न जाइ इहु लुब्भिउ वारइ पल्कउ खलगुलइ।
न जाणउ चद बलद्दिउ कि न वि छुट्टइ इह फलइ॥

'पृथ्वीराज प्रबंध' का यह पाठ जिन दो प्रतियों पर आधारित है, उनमें स एक सं० १५२८ का है,[1] और संग्रह के योग्य संपादक ने कोई पाठभेद इस छंद के नहीं दिए हैं, इसलिए समझना चाहिए कि दोनों प्रतियों में छंद का पाठ एक ही या प्राय एक ही है। 'रासो' की भाषा के प्राचीन रूप के परिज्ञान के लिए सं० १५२८ के इस पाठ का महत्व प्रकट है, और यह दिखाने की आवश्यकता नहीं है कि पाठ विषयक अन्य प्रकार का अंतर होते हुए भी प्रस्तुत संस्करण के संपादित पाठ और सं० १५२८ के 'पृथ्वीराज प्रबंध' के उपर्युक्त पाठ में भाषा विषयक कोई अंतर नहीं है, जब कि धा० के पाठ तथा पृथ्वीराज प्रबंध के इस पाठ में भाषा विषयक अन्तर है। यह अंतर किस प्रकार का है, यह भी स्पष्ट ज्ञात होता है धा० का पाठ सं० १५२८ के उपर्युक्त पाठ तथा प्रस्तुत संस्करण के संपादित पाठ के कुछ बाद की भाषा स्थिति का हमारे सामने रखता है। फलतः डॉ० नामवर सिंह ने रचना की भाषा के विषय में जो परिणाम निकाले हैं, वे अधिकांश में ग्राह्य होते हुए भी प्राय उपर्युक्त प्रकार से संशोधन की अपेक्षा रखते हैं।

अब रही रचना की भाषा के देश काल की बात। डॉ० नामवरसिंह ने अपने उपर्युक्त शोध निबन्ध में 'रासो' की भाषा के इस पहलू पर भी विस्तार से विचार किया है, और युक्तिपूर्वक यह दिखाया है कि न वह अपभ्रंश है, न डिंगल या पुरानी पश्चिमी राजस्थानी, और न वह पुरानी ब्रजभाषा भी नहीं है, वह पुरानी पूर्वीय राजस्थानी है जिसे पिंगल कहा जाता रहा है, और इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि ग्रन्थ की रॉयल एशियाटिक सोसाइटी की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति पर 'तारीख प्रिथुराज बजबान पिंगल तसनीफ कर्दा कवि चन्द बरदाई' लेख मिलता है।[2] इसके अनन्तर, उन्होंने दिखाया है कि 'रासो' की यह भाषा परम्परा के अनुसार पिंगल होते हुए भी 'प्राकृत पैंगल' (रचना १४वीं शती ईस्वी) से अधिक विकसित है, इसमें प्राकृत अपभ्रंश के रूढ रूपों के अवशेष अपेक्षाकृत कम हैं और नव्य भारतीय आर्यभाषा के रूप अधिक हैं।[3]

जहाँ तक रचना की भाषा क देश पक्ष की बात है, मैं डॉ० सिंह से प्राय सहमत हूँ, यद्यपि हो सकता है कि पिंगल किसी क्षेत्र-विशेष की बोल-चाल की भाषा से सामान्य रूप का नहीं वरन् उसके साहित्यिक रूप का नाम रहा हो और वहाँ की बोल चाल की सामान्य भाषा और पिंगल में लगभग उतना ही अन्तर रहा हो जितना आज की मेरठ की खड़ी बोली और साहित्यिक हिन्दी में है। वह शौरसेनी अपभ्रंश से निकली हुई उस युग की काव्य भाषा थी जिस युग में 'रासो' की रचना हुई।[4] कि तु जहाँ तक रचना की भाषा के काल पक्ष की बात है, मैं डॉ० सिंह से आंशिक रूप में ही सहमत हूँ। उसमें प्राकृत अपभ्रंश के रूढ रूपों के अवशेष अधिक हैं और नव्य भारतीय आर्यभाषा के रूप कम हैं, और यह बात ऊपर दी हुई मेरी युक्तियों तथा रचना के उदाहरणों से भली भाँति देखी जा सकती है। प्रस्तुत लेखक का अपना विचार है कि 'रासो' में पिंगल भाषा का वह

[1] 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह', उपर्युक्त, प्रास्ताविक वक्तव्य, पृ० ३।

[2] 'पृथ्वीराजरासा की भाषा', सरस्वती प्रेस, बनारस, पृ० ४१–४६।

[3] वही, पृ० ४२—५३।

[4] पिंगल भाषा के सम्बन्ध में प्रस्तुत लेखक के विचारों के लिए दे० 'हिंदी साहित्य कोश' (ज्ञान मंडल, वाराणसी) में 'पिंगल काव्य' शीर्षक।

रूप हमें मिलता है जो 'प्राकृत पैंगल' के कुछ ही पीछे विकसित हुआ था, और उसकी भाषा और 'प्राकृत पैंगल' के सबसे पीछे रचे हुए छंदों की भाषा में अन्तर बहुत कम है। नीचे इस बात को दिखलाने के लिए 'प्राकृत पैंगल' से वे छन्द दिए जा रहे हैं जो हम्मीर (सं० १२९५–१३५८) के विषय के हैं[१] :—

गाहिणी—मुंचहि सुन्दरि पाअं अप्पहि हसिऊण सुमुहि खग्गं मे।
कप्पिअ मेच्छ सरीरं पेच्छइ बअणाइ तुमह धुअ हम्मीरो ॥ (पृ० १२७)

रोला— पअभर दरमरु धरणि तरणि रह धुल्लिअ झंपिअ।
कमठ पिट्ठ टरपरिअ मेरु मंदर सिर कंपिअ।
कोह चलिअ हम्मीर वीर गअजूह संजुत्ते।
किअउ कट्ठ हाकंद मुच्छि मेच्छह के पुत्ते ॥ (पृ० १५७)

छप्पअ— पिंधउ दिढ सण्णाह बाह उप्पर पक्खर दइ।
बन्धु समदि रण धसउ सामि हम्मीर बअण लइ।
उड्डुल णहपह भमउ खग्ग रिउ सीसहि डारउ।
पक्खर पक्खर ठेल्लि पेल्लि पब्बअ अप्फालउ।
हम्मीर कज्जु जज्जल भणइ कोहाणल मुहमह जलउ।
सुलताण सीस करवाल दइ तेज्जि कलेवर दिअ चलउ ॥ (पृ० १८०)

कुंडलिआ— ढोल्ला मारिअ ढिल्लि महं मुच्छिअ मेच्छ सरीर।
पुर जज्जल्ला मंतिवर चलिअ वीर हम्मीर।
चलिअ वीर हम्मीर पाअ भर मेइणि कंपइ।
दिगमग णह अंधार धूलि सूरह रह झंपइ।
दिगमग णह अंधार आणु खुरसाणक ओल्ला।
दरमरि दमसि विपक्ख मारु ढिल्लि मह ढोल्ला ॥ (पृ० २४९)

गगणांग— भंजिअ मलअ चोलवइ णिवलिअ गंजिअ गुज्जरा।
मालव राअ मलअगिरि लुक्किअ परिहरि कुंजरा।
खुरासाण खुहिअ रण मह मुहिअ लंघिअ साअरा।
हम्मीर चलिअ हा रव पलिअ रिउ गणह काअरा ॥ (पृ० २५५)

लीलावती— घर लगइ अग्गि जलइ धह धह
कइ दिग मग णह पह अणल भरे।
सब दीस पसरि पाइक्क लुलइ
धणि थण हर जहण दिआव करे।
भअ लुक्किअ थक्किअ बइरि तरुणि जण
भइरव भेरिअ सद्द पले।
महि लोट्टइ पिट्टइ रिउ सिर टुट्टइ
जक्खण वीर हमीर चले ॥ (पृ० ३०४)

जलहरण— खुरि खुरि खुदि खुदि महि घघर रव कलइ
ण ण ण ण गिदि करि तुरअ चले।
ट ट ट गिदि पलइ टपु धसइ धरणि धर

---

[१] 'प्राकृत पैंगलम्', संपा० चन्द्रमोहन घोष, बंगाल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, १९०२।

चकमक करि बहु दिसि चमले ।
चलु दमकि दमकि बलु चलइ पइक बलु
घुलकि घुलकि करि करि चलिआ।
बर मणु सअल कमठ विपस हिअअ सल
हमिर चीर जब रण चलिआ ॥ (पृ० ३२७)

मौडाचक्र—जहा भूत वेताल णच्चंत गावंत खाए कबंधा।
सिआ फार फेक्कार हक्का रवंता फुले कण्ण रंधा।
कआ टुट्ट फुट्टेइ मंथा कबंधा णचंता हसंता।
तहा वीर हम्मीर संगाम मज्झे तुलंता जुअंता ॥ (पृ० ५२०)

इन छन्दों की भाषा पर विचार करते समय गाहिणी के—जो कि गाथा का एक प्रकार है—उदाहरण को छोड़ देना चाहिए, क्योंकि गाथाओं को प्राकृत या प्राकृताभास में ही लिखने की उस युग में परम्परा रही है, और 'पृथ्वीराज रासो' में भी इस परम्परा का सम्यक् निर्वाह हुआ है। शेष छन्दों की भाषा और 'पृथ्वीराज रासो' के छन्दों की भाषा में अन्तर साधारण है।

उल्लेखनीय अन्तर एक तो यह है कि हम्मीर-विषयक इन छन्दों में ड तथा र के स्थान पर कहीं-कहीं ल का प्रयोग हुआ है :—

ड > ल : पडिअ > पलिअ (पृ० २५५), पडे > पले (पृ० ३०४), पडइ > पलइ (पृ० ३२७), फुडे ? > फुले (पृ० ५२०)।

र > ल : तुरइ > तुलइ (पृ० ३०४), करइ > कलइ (पृ० ३२७), चमरे > चमले (पृ०।३२७), तुरंता > तुलंता (पृ० ५२०)।

'पृथ्वीराजरासो' में भी इस वृत्ति के उदाहरण मिलते हैं, यथा : सरिता > सलिता (७.४.१) (९.११.३); आरुद्ध > आलुहृय (४.२०.२२), (१२.३६.२), (८.१४.५); प्रसरण > प्रसलन्न (७.१२.२०); रट > रल (८.२२.२); सरिग > सलिग (८.३२.३); मुकुर > मुक्कल (९.४.२); आर्द्र > आल (९.११.१); दर्दुर > दादुल्ल (९.११.२); सारिका > सालि (१०.११.२६); मुहड़ा > मुहुलं (१२.१३.११)। किन्तु यह मानना पड़ेगा कि 'रासो' में यह प्रवृत्ति कम है।

उल्लेखनीय दूसरा अन्तर यह है कि हम्मीर-विषयक छन्दों में सर्वत्र 'व' के स्थान पर 'ब' मिलता है। डॉ० सिंह ने 'रासो' के ध्वनि-विचार के सम्बन्ध की आठवीं प्रवृत्ति में, जो ऊपर दी जा चुकी है, लिखा है कि श्रुति रूप में प्रयोग के अतिरिक्त 'व' 'रासो' 'ब' में परिवर्तित हो गया था। किंतु हम्मीर-विषयक इन छन्दों में तो 'व' रह ही नहीं गया है; जिन शब्दों में हिन्दी में 'व' कभी सुना भी न गया होगा, उनमें भी 'व' के स्थान पर 'ब' कर दिया गया है, यथा : करबाल (पृ० १८०), कलेबर (पृ० १८०), चोलबइ (पृ० २५५), मालब (पृ० २५५), रब (पृ० २५५), भइरब (पृ० ३०४), रब (पृ० ३२७), गाबत (पृ० ५२०), रबता (पृ० ५२०)। हिन्दी की किसी बोली में इन शब्दों में 'ब' नहीं आता है, 'व' ही आता है, ऐसी दशा में इस 'ब' का क्या कारण है? स्पष्ट ही कारण यह है कि 'प्राकृत पैंगल' के सम्पादक को जहाँ भी 'व' मिला, उसने कदाचित् अपनी भाषा की प्रवृत्ति से प्रभावित होकर सर्वत्र उसे 'ब' कर दिया, यहाँ तक कि 'व' इन छन्दों में देखने को भी नहीं रह गया! असम्भव नहीं कि इसी प्रकार के प्रयासों के फल-स्वरूप यह धारणा बन गई हो कि हमारी बोलियों में श्रुति के रूप में प्रयोग के अतिरिक्त 'व' का अस्तित्व ही किसी समय समाप्त हो गया था, और 'रासो' में भाषा की यह बाद में आई हुई स्थिति व्यापक रूप से पाई जाती है। 'व' और 'ब' अधिकतर एक प्रकार से लिखे जाने लगे थे, यह अवश्य हुआ था।

दल दारुण दुप्परखान जयी।
भिड़ भगगउ भगाइ खग्गरयि।
छिर पट्टण पद्दरि धरिसु पय।
गइ विनडिसु सत्तिरि सहस सय ॥ ३२ ॥
भिड़ सद्दरि समसुद्दीन मटी।
पडि भगगउ अग्गो अग्गि भिडी।
जब मण्डिमि सुन रणमल्ल समं।
तब देखिसि लसकरि सरिसु जमं ॥ ३३ ॥
मग माडिस मण्डि मलिरक घणू।
हू समरि विडारण मेच्छ तणु।
जब कुटिसि हठि हयवन्त रणि।
तव न गणू दण सुरताण सणि ॥ ३४ ॥
धस धुहिल म वहिल मछिवक कहि।
म म धरणि सिसुणसिम दूत सुहि।
जब चम्पिसि ईंडर सिहर दल।
तब पेक्खिसि सुद्द रणमल्ल बल ॥ ३५ ॥

इन पंक्तियों में यह सुगमता से देखा जा सकता है कि:—

(१) उद्वृत्त स्वर के स्थान पर सर्वत्र य, व, श्रुति आ गई है।

(२) व्यंजन द्वित्वों की बहुलता है, जिनमें से कुछ तो प्राकृत-अपभ्रंश की परंपरा में हैं, और कुछ छंदोनुरोध अथवा ओजपूर्ण शैली की आवश्यकताओं के कारण आए हुए हैं। किंतु कहीं-कहीं पूर्ववर्ती स्वर को दीर्घ करके व्यंजन द्वित्व को सरलीकृत करने की भी प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

(३) प्रायः सभी कारकों में निर्विभक्तिक संज्ञा शब्द प्रयुक्त हुए हैं, और परसर्गों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हुआ है।

(४) शब्द-समूह की दृष्टि से यह रचना काफी विकसित है. फारसी के शब्द बहुतायत से आ गए हैं।

फलतः 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा 'प्राकृत पैंगल' के हम्मीर संबन्धी छंदों तथा 'रणमल्ल छंद' की भाषाओं के बीच की लगती है।

—•—

किंतु समस्त 'व' 'ब' में बदल गए, अथवा यह भी कि श्रुति के रूप में उसके प्रयोग के अतिरिक्त 'व' रह ही नहीं गया था, मेरी समझ में ठीक मत नहीं है। उदाहरण के लिए 'रासो' के लघुतम पाठ की शेष अन्य प्रति मो० (सं० १६९७) में ही अनेक स्थलों पर 'व' स्पष्ट बना हुआ है और 'ब' भी।

इन दोनों के बाद हम्मीर-सम्बन्धी छन्दावली तथा 'पृथ्वीराज रासो' के छन्दों में भाषा-विषयक उल्लेखनीय अन्तर उद्वृत्त स्वर तथा श्रुति-प्रयोग मात्र का रह जाता है। यद्यपि उद्वृत्त स्वर का सर्वथा अभाव 'रासो' में नहीं है, यह सुगमता से देखा जा सकता है, शेष प्रवृत्तियाँ दोनों में लगभग समान हैं। इसलिए मेरी राय में 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा हम्मीर विषयक ऊपर उद्धृत छन्दों की भाषा से थोड़े ही बाद की है, यही मानना अधिक युक्ति-संगत होगा।

इस प्रसंग में जिस प्रकार हमने ऊपर हम्मीर-विषयक छन्दों को देखा है, जिनकी रचना संभवतः हम्मीर के जीवन-काल में सं० १२९५ तथा १३५८ के बीच हुई होगी, उसी प्रकार श्रीधर कृत 'रण मल्ल छन्द'[1] के छन्दों को भी देख सकते हैं, जिनकी रचना सं० १४५४ में मानी गई है[2] :—

चुप्पई—'हल पेयार हकारवि दुल्लइ।
भुजबलि सबल मुहि दल घल्लइ।
गयु खान खुद नगतलि चहिलअ।
शकदलदहु दिसि दिस डहडिलअ ॥ २६ ॥
मलिकमत्र मज्झिम निशि किद्धउ।
तब हेजब फुरमाण स दिद्धउ।
ईडर गढि अहसइय जहि चल्लिउ।
लइ रणमल्ल पासि इम बुल्लिउ ॥ २७ ॥
सिरि फुरमाण धरवि सुरताणी।
धर द्रय हाल माल दीवाणी।
अगर गरास दास सवि छोडिअ।
करि चाकरी खान कर जोडिअ ॥ २८ ॥
रा असि सरिसु बाहु उल्लासिअ।
बुल्लइ इठि हेजब हक्कारिअ।
मुझ सिर कमल मेच्छ पय लग्गइ।
सु गयणङ्गणि भाण न उग्गइ ॥ २९ ॥
सिंह विलोकित—जां अम्बर पुड़तलि तरणि रमइ।
तां कमधज कंध न धगड नमइ।
धरि वडवानल तण झाल शमइ।
पुण मेच्छ न आपूं चाच किमइ ॥ ३० ॥
पुण रण रस जाण जरह जडी।
गुण सींगणि खझी खग्गित चडी।
छत्तीस कुलह बल करिसु घणूं।
पय मग्गिसु रा हम्मीर तणूं ॥ ३१ ॥

[1] 'प्राचीन गुर्जर काव्य', संपा० केशवलाल हर्षद राय ध्रुव, गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी, अहमदाबाद, सं० १९८२, पृ० ५-७।

[2] वही, प्रस्तावना, पृ० २२।

दल दारुण दप्फरखान जयौ।
मिऌ भराउ खराद्द खग्गरयि।
दिव पट्टण पद्धरि धरिसु पय।
नइ जिनडिमु सत्तिरि सहस सयं ॥ ३२ ॥
मिऌ सज्झरि समसुद्दीन मदी।
पडि भराउ अड्डो अड्डि मिडी।
जव मण्डिमि सुन्न रणमल्ल समं।
तर देखिसि लसकरि सरिसु जमं ॥ ३३ ॥
मम मोडिम मण्डि मलिक्क घणूं।
हूं समरि विडारण मेच्छ तणु।
ताव छुटिसि हठि हयखन्त रणि।
तव न गणू हण सुरताण तणि ॥ ३४ ॥
चल सुहिल म धरिल मलिक्क कहि।
म म धरणि सिमुणसिम दूत सुहि।
जय चम्पिसि ईडर सिहर तळं।
तय पेक्खिसि सुद्द रणमल्ल बळ ॥ ३५ ॥

इन पंक्तियों में यह सुगमता से देखा जा सकता है कि:—

(१) उद्वृत्त स्वर के स्थान पर सर्वत्र य, व, श्रुति आ गई है।

(२) व्यंजन-द्वित्वों की बहुलता है, जिनमें से कुछ तो प्राकृत-अपभ्रंश की परंपरा में हैं, और कुछ छंदोनुरोध-अथवा ओजपूर्ण शैली की आवश्यकताओं के कारण आए हुए हैं। किंतु कहीं-कहीं पूर्ववर्ती स्वर को दीर्घ करके व्यंजन द्वित्व को सरलीकृत करने की भी प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

(३) प्रायः सभी कारकों में निर्विभक्तिक शब्द प्रयुक्त हुए हैं, और परसर्गों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हुआ है।

(४) शब्द-समूह की दृष्टि से यह रचना काफी विकसित है: फारसी के शब्द बहुतायत से आ गए हैं।

फलतः 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा 'प्राकृत पैंगल' के हम्मीर-संबन्धी छंदों तथा 'रणमल्ल छंद' की भाषाओं के बीच की लगती है।

—:०:—

१४. 'पृथ्वीराज रासो' में प्रयुक्त विदेशी शब्द

नीचे 'रासो' के प्रस्तुत पाठ में व्यवहृत विदेशी शब्दों की सूची दी जा रही है। इस सूची में व्यक्तिगत नाम नहीं रक्खे गए हैं, फिर भी देखा जा सकता है कि विदेशी शब्दों की यह सूची छोटी नहीं है। पुनः ये विदेशी शब्द शहाबुद्दीन के प्रसंगों में ही नहीं, प्रायः सभी प्रसंगों में आते हैं, यद्यपि शहाबुद्दीन के प्रसंगों में इनका व्यवहार अन्यत्र हुए इनके व्यवहार की तुलना में लगभग ६-७ गुना अधिक हुआ है, जो कि कदाचित् स्वाभाविक भी है। एक बात और इस प्रसंग में ध्यान देने योग्य है : शहाबुद्दीन के प्रसंगों के बाहर प्रयुक्त विदेशी शब्द अधिकतर ऐसे हैं जिनके भारतीय पर्याय प्रचलित रहे हैं और इस ग्रंथ में भी प्रयुक्त हैं। अतः ऐसा लगता है कि जिस समय इस ग्रन्थ की रचना हुई, शहाबुद्दीन के प्रसंगों के बाहर प्रयुक्त विदेशी शब्द उत्तर भारत की बोलचाल की भाषा में आ चुके थे, और वे उसके अंग बन गए थे।

शहाबुद्दीन के प्रसंगों के बाहर प्रयुक्त शब्द इस प्रकार हैं:—

रिंद (१.३.२०), दरब्बान (२. ३.५२), बग्ग (< बाग २. ५.२१), दरबार(४.२५.२६), दरबार (५.१.१), दरबार (५.३.७), सुरतान (५.१३.८), दरिआइ (५.१३.२२), बंदा (५.१३.२३), मीर (५.१३.२३), दरबार (५.४२.२), जोर (५.४८.२), तेग (६.२३.१०), तषत (६.२३.१२), रुप (७.१.१), निसान (७.३.१), दरिआइ (७.४.८), सहनाइ (७.४.९), नफेरिय (७.४.९), समसेर (७.४.१५), फवज्ज (७.४.२३), फौज (७.६.१६), फौज (७.६.१७), जिरह (७.६.३१), जगी (७.६.३१), तबल (७.६.४१), तदूर (७.६.४१), जगी (७.६.४१), सहनाइ (७.६.४७), नफेरी (७.६.४९), नवरंग (७.६.४९), मगूल (= मगोल ७.१०.९), बाजू (७.१०.१०), सोर (७.१०.१७), निसान (७.१२.३), दुम्मी (= दुमवाले ७.१४.२), फौज (७.१४.४), हजार (७.१५.१७), हजार (७.१६.३), मनार (< मीनार ७.१६.४), जग (७.१७.१२), मीर (७.१७.२१), कम्मान (७.१७.२३), मीर (७.१९.२), गाजी (७.३१.११), हींदू (८.२.५), तुरक (८.२.५), कमान (८.९.२१), वसीस (< कशिश ८.९.२२), मीर (८.१०.१), महिल (९.२.२), महिल (९.३.१), हरम्य (९.४.१), सोर (९.६.१), सोर (९.११.२), दर (१०.१५.१), गूदरना (= गुजारना १०.१६.२), कग्गर (< कागज १०.२०.१), महिल (१०.२१.१), रुप (१०.२१.२), कग्गर (<कागज १०.२४.१)।

शहाबुद्दीन के प्रसंगों में प्रयुक्त शब्द इस प्रकार हैं:—

हजार (११.१.२), हजार (११.२.२), हजार (११.३ १), देवान (दीवान ११.५.२), दीन (११.६.१), मुलतान (११.७.६), आलम आलम (११.७.३), मरदान (११.८.२),

हमीर (< अमीर ११.८.३), हिन्दू (११.८.३), दीन (११.८.३), रमजान (११ ८.३), निवाज (< नमाज ११.८.४), बिकाज (< बेकाज ११.८.४), गुम्मान (११.८४), दुरोग (११.८.६), दोजक (११.८.६), मसुरति (<मशवरत ११.९.१), कुरान (११.९.१), साहि आलम (११ १०.१), तेग (११.१०.६), कमांन (११.१०.६), पातिसाह (११.११.२), निसान (११.११.१), सुरताण (११.१२.१), जंग (११.१२.७), तेग (११.१२.७), बाज (११.१२.१०), हमीर (< अमीर ११.१२.१७), कुफार (< कुफ्फार ११.१४.१), फरजद (११.१४.१), साहि (१२.१.१) रह (<राह १२.१.६), रह (राह १२.२.१), पीर (१२.४.२), दरबार (१२.६.२), दरबान (१२.७.१), परदार (पहरादार १२.८.१), दर (१२.९.२), दर (१२.१०.२), लगभग ढाई दर्जन विदेशी मुसलमान जातियों के नाम (१२ : ११.१-८), सेखजादा (१२.११.९), पठाण (१२.११.९), साहि (१२.११.१०), हदफ (१२.१२.२), सलाम (१२.१३.१), मीर(१२.१३.१), फौज (१२.१३.८), मसंद (१२.१३.३), नजरिंद (नजरमदी ? १२.१३.४), जीन (१२.१३.१०) ,अदब्ब (१२.१३.११), ताज (१२.१३.१३), साहि (१२.१३.१३), फरमान (१२.१४.१), सुरतान (१२.१४.२), वे (१२.१४.२), साहि (१२.१५.५), सुरतान (१२.१५.८), अदब्ब (१२.१५.११), हदप्प (१२.१५.१३), फुरमान (१२.१५.१५), महिमान (१२.१५.१६), महिमान (१२.१६.१), हदफ (१२.१७.१), सुरतान (१२.१७.१), सुरतान (१२.१८.१), दर (१२.१८.१), निसान (१२.१८.१), दुनिआ (१२.१९.४), अरदास (< अर्जदाश्त १२.२०.१), आदमी (१२.२०.१), सुरतांन (१२.२०.२), फकीर (१२.२१.१), करामाति (१२.२१.१), मियाँ (१२.२२.१) मलिक (१२.२२.१), पान (१२.२२.१), हजूर (१२.२३.१), पातसाहि (१२.२३.२), दुरोग (१२.२८.२), पतिसाहि (१२.२९.१), सुरतान (१२.२९.४), मुद्दाल (१२.३४.२), बकस (< बख्श १२.३९.४), साहि (१२.४०.२), फुरमान (१२.४०.६), पातसाहि (१२.४१.२), मरद (१२.४१.४), फुरमान (१२.४१.५), पातिसाहि (१२.४२.२), फुरमान (१२.४२.६), फुरमान (१२.४३.२), साहि (१२.४४.२), कमान (१२.४६.१), फुरमान (१२.४८.१), फुरमान (१२.४८.१), फुरमान (१२.४८.३), साहि (१२.४८.६), पा (१२.४८.६), साह (१२.४९.१), असमान (<आसमान १२.४९.२) ।

यहाँ पर यह जान लेना उपयोगी होगा मुसलमान शासकों से हुए युद्ध-विषयक प्राचीन हिंदी ग्रंथों में विदेशी शब्दों के प्रयोग की स्थिति पूर्ण रूप से वही है जो 'रासो' के उन अंशों में है जो शहाबुद्दीन से संबंधित हैं। श्रीधर रचित 'रणमल्ल छन्द', जिसकी रचना सं० १४५४ में मानी गई है[1], तथा पद्मनाभ रचित 'कान्हड दे प्रबन्ध' में, जिसकी रचना सं० १५१२ में हुई थी[2], 'रासो' के प्रायः उपर्युक्त सभी शब्द और लगभग इसी अनुपात में आते हैं।

—:*:—

[1] दे० 'प्राचीन गुर्जर काव्य,' संपा० केशवलाल हर्षदराय ध्रुव, गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी, अहमदाबाद, प्रस्तावना, पृ० ११। रचना का पाठ भी इस काव्य संग्रह में पृ० १ से १४ तक दिया हुआ है।

[2] 'कान्हड दे प्रबन्ध', संपा० कान्तिलाल बलदेवराम व्यास, राजस्थान पुरातत्व मन्दिर, जयपुर, खंड ४, छन्द २४१।

१५. 'पृथ्वीराज रासो'
का
रचना-काल

मुनि जिनविजय द्वारा सपादित 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' में दो प्रबन्ध ऐसे हैं जो पृथ्वीराज तथा जयचन्द से सम्बन्धित हैं। इन दो प्रबन्धों में चार ऐसे छन्द उद्धृत हुए हैं जिनमें से तीन नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में भी पाए जाते हैं। इसलिए इन प्रबन्धों से चन्द तथा 'पृथ्वीराज रासो' के समय पर एक नया और महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ा है।

मुनि जी ने 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के प्रास्ताविक वक्तव्य में 'सग्रह के कुछ महत्व के प्रबन्ध' शीर्षक देते हुए इन दो प्रबन्धों के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से विचार भी किया है। उनका कथन है कि "इस संग्रह के उक्त प्रकरणों में जो ३–४ प्राकृतभाषा-पद्य उद्धृत किए हुए मिलते हैं, उनका *पता हमने उक्त 'रासो' में लगाया है, और इन चार पद्यों में तीन पद्य, यद्यपि विकृत रूप में लेकिन* अक्षरशः, उसमें हमें मिल गए हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चन्द कवि निश्चिततया एक ऐतिहासिक पुरुष था और वह दिल्लीश्वर हिंदू सम्राट् पृथ्वीराज का समकालीन और उसका सम्मानित एवं राजकवि था। उसीने पृथ्वीराज के कीर्तिकलाप का वर्णन करने के लिये देश्य प्राकृत भाषा में एक काव्य की रचना की थी जो 'पृथ्वीराज रासो' के नाम से प्रसिद्ध हुई।"[1] मुनि जी के इस निष्कर्ष के आधार क्या हैं, यह उन्होंने स्पष्ट रूप से नहीं कहा है, किंतु इतना कहने के बाद ही उन्होंने उक्त तीन छन्दों के पाठ प्राप्त सग्रहों तथा नागरीप्रचारिणी सभा के 'पृथ्वीराज रासो' के *संस्करण से तुलना के लिए देते हुए प्रबन्धों के पाठ की भाषा-विषयक प्राचीनता पर जो बल दिया* है[2], उससे अनुमान यही होता है कि उनके कथन का मुख्य आधार कदाचित् वही है।

यहाँ पर प्रश्न यह हो सकता है कि भाषा के स्वरूप का साक्ष्य क्या इतना निश्चयात्मक है? भाषा का जो स्वरूप प्रबन्धों के इस पाठ में मिलता है, वह विद्यापति की 'कीर्तिलता' तक अनेकानेक अन्य रचनाओं में भी मिलता है, इसलिए यदि उसी के आधार पर निष्कर्ष निकालना हो तो कदाचित् हम इतना ही कह सकते हैं कि भाषा की दृष्टि से इन छन्दों की रचना १४०० ई० के पूर्व की होनी चाहिए। केवल इतने साक्ष्य के आधार पर यह परिणाम निकालना कि चन्द "दिल्लीश्वर हिंदू सम्राट् पृथ्वीराज का समकालीन और उसका सम्मानित एव राजकवि था" तर्क-सम्मत नहीं लगता है। इन प्रबन्धों में यदि रचना का कम से कम इतना अंश उद्धरण के रूप में उपलब्ध होता कि हम ऐतिहासिक दृष्टि से भी उसकी परीक्षा कर सकते, तो हम भाषा की सहायता लेते हुए

[1] पुरातन प्रबंध- स सिंघी जैन ग्रंथमाला, भारतीय विद्याभवन, बंबई, प्रास्ताविक वक्तव्य, पृ० ८, ९।
[2] वही।

इस सम्बन्ध में किसी अंश तक निश्चयात्मक रूप से कुछ कह सकते थे। केवल उद्धृत तीन चार छन्दों के बल पर इस प्रकार का परिणाम हम नहीं निकाल सकते।

यदि ध्यान से देखा जावे तो ज्ञात होगा कि जो चार छन्द उक्त प्रबन्धों में चन्द के कहकर उद्धृत किए गए हैं, उनमें से दो, जो जयचन्द प्रबन्ध में आते हैं, चन्द के नहीं जल्ह के हैं। ये दो छन्द निम्नांकित हैं:—

(१) त्रिण्हि लक्ष तुषार सबल पाखरीअइँ जसुहय।
चऊदसइं मयमत दंति गज्जंति महामय॥
वीस लक्ख पायक्क सफर फारक्क धणुद्धर।
ल्हूसडु अरु बलुयान संख कु जाणइ तांह पर॥
छत्तीस लक्ष नराहिवइ विहि विनडिओ हो किम भयउ।
जइचंद न जाणउ जल्हु कइ गयउ कि मुउ कि धरि गयउ॥
(२) जइतचंदु चक्कवइ देव तुह दुसह पयाणउ।
धरणि धसवि उद्धसइ पडइ रायह भंगाणओ॥
सेसु मणिहिं संकियउ मुक्कु हयखरि सिरि खंडियों।
तुट्टओ सो हरधवलु धूलि जसु चिय तणि मंडिओ॥
उच्छलीउ रेणु जसग्गि गय सुकवि व (ज) ल्ह सच्चउ चवइ।
वग्ग इंदु बिंदु भुय जुअलि सहस नयण किण परि मिलइ॥

इनमें से ऊपर उद्धृत प्रथम छन्द नागरीप्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में अवश्य मिलता है,[१] किंतु यह दर्शनीय है कि इस छन्द को 'रासो' में स्थान देने के लिए प्रक्षेपकर्ता को छन्द की अन्तिम पंक्ति से 'जल्हु' का नाम निकाल कर उसमें 'चन्द' का नाम रखना पड़ा और तभी यह संभव हो सका। वहाँ 'रासो' में उसका पाठ है :—

जैचंद राइ कवि चंद कहि उदधि बुडि कै घर लियौ।

इस प्रसंग में इतना और जान लेने योग्य है कि सभा द्वारा प्रकाशित रचना के बृहत् पाठ के अतिरिक्त उसके अन्य किसी पाठ की प्रतियों में ऊपर उद्धृत प्रथम छन्द नहीं मिलता है, और ऊपर उद्धृत द्वितीय छन्द तो उसके किसी भी पाठ की प्रतियों में नहीं मिलता है। फलतः ये दो छन्द निश्चित रूप से जल्ह के हैं, चन्द के नहीं हैं, और चन्द की रचना का स्वरूप अथवा उसका समय निर्धारित करते समय इनका आधार नहीं ग्रहण करना चाहिए।

किंतु प्रबन्ध लेखक इन दो छन्दों को 'जयचन्द प्रबन्ध' में उद्धृत करके ही सन्तोष नहीं करता है। वह ऊपर उद्धृत प्रथम छन्द के पूर्व कहता है, 'तदनु चन्द बलिद्दकेन श्री जैत्रचन्द्र प्रत्युक्तम्'; और इसी प्रकार वह ऊपर उद्धृत द्वितीय छन्द के पूर्व कहता है, 'पतनागत वर्धद्वयेनोक्तम्। तेनैव पूर्वमुक्तम्।' इससे यह ज्ञात होगा कि प्रबन्ध लेखक विश्वसनीय नहीं है, और ऐसे प्रबन्धों के अंतर्साक्ष्य के आधार पर पृथ्वीराज और चन्द के सम्बन्ध में उपर्युक्त प्रकार के परिणाम निकालना किसी प्रकार भी युक्ति-संगत न होगा।

फिर भी इन प्रबन्धों का बहिर्साक्ष्य महत्वपूर्ण है, और उसके आधार पर चन्द तथा जल्ह के समय पर कुछ विचार किया जा सकता है। नीचे हम उसी के आधार पर चन्द तथा जल्ह के समय के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

जैसा ऊपर कहा जा चुका है, 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' तथा 'जयचन्द प्रबन्ध' नाम के ऐसे दो प्रबन्ध हैं जिनमें उल्लिखित छन्द मिलते हैं। इनमें से 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' तो दो प्रबन्ध संग्रहों में

[१] 'पृथ्वीराज रासो', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ० २५०२।

मिलता है, जिन्हें मुनि जी ने 'पी' तथा 'बी' कहा है, और 'जयचन्द प्रबन्ध' केवल 'पी' में मिलता है। और इन दोनों प्रबन्ध सग्रहों की एक-एक प्रतियाँ ही मिली हैं, अतः उन्हीं को लेकर हमें आगे बढ़ना होगा। नीचे दी हुई सूचनाएँ 'पुरातन प्रबन्ध सग्रह' के प्रास्ताविक वक्तव्य से हैं।

'पी' सग्रह में ४० प्रबंध हैं और 'बी' संग्रह में ७१। किंतु 'बी' प्रारम्भ में तथा बीच बीच में भी खण्डित है, इसलिए उसके १७ प्रबन्ध अनुपलब्ध हैं, केवल ५४ प्रबन्ध प्राप्त हैं। 'पी' इस प्रकार खण्डित नहीं है, इसलिए उसके समस्त प्रबन्ध प्राप्त हैं। 'पी' के उपर्युक्त ४० तथा 'बी' के उपर्युक्त ५४ प्राप्त प्रबन्धों में से, जिनकी सूची विद्वान् सपादक ने ग्रंथ के प्रास्ताविक वक्तव्य में दी है, अनेक प्रबन्धों के शीर्षक ऐसे हैं जो समान हैं। उन समस्त प्रबन्धों का पाठ भी दोनों में समान है, यह कहना उपर्युक्त प्रतियों को देखे बिना सम्भव नहीं है। 'पुरातन प्रबन्ध सग्रह' में केवल निम्नलिखित आठ प्रबन्ध ऐसे हैं जो दोनों से समान रूप से संकलित किए गए हैं, कारण यह है कि 'पुरातन प्रबन्ध सग्रह' में केवल वे ही प्रबन्ध सकलित हुए हैं जिनका सम्बन्ध मेरुतुङ्ग के 'प्रबन्ध चिंतामणि' के प्रबन्धों से है:—

१. विक्रम सम्बन्धे रामराज्य कथा प्रबन्ध
२. वराह आमड प्रबन्ध
३. कुमारपाल कारितामारि प्रबन्ध
४. वस्तुपाल तेजःपाल प्रबन्ध
५. पृथ्वीराज प्रबन्ध
६. लाखण राउल प्रबन्ध
७. न्याये यशोवर्म्म प्रबन्ध
८. अम्बुचीच नृप प्रबन्ध

और यह संख्या 'पी' और 'बी' के पाठों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए पर्याप्त है।

इन आठ प्रबन्धों का जो पाठ 'पी' तथा 'बी' में मिलता है, उससे निम्नलिखित बातें नितांत स्पष्ट रूप से ज्ञात होती हैं:—

१. दोनों सग्रहों में इन आठ प्रबन्धों का जो पाठ मिलता है, उसका पूर्वज एक ही है, कारण यह है कि दोनों सग्रहों में इनका पाठ समान है।

२. दोनों संग्रहों में इन आठ प्रबन्धों के पाठ उस सामान्य पूर्वज की दो स्वतन्त्र शाखाओं की प्रतियों से लिए गए हैं, अर्थात् दोनों संग्रहों के आदर्श भिन्न-भिन्न और स्वतन्त्र शाखाओं के हैं; क्योंकि दोनों में समान पाठ-प्रमाद, समान-पाठभ्रंश अथवा *समान-प्रतिलिपि-प्रमाद एक भी स्थल* पर नहीं पाए जाते हैं।

३. 'बी' में पाठ-वृद्धि के रूप में प्रक्षेप-क्रिया दर्शित होती है। कुछ स्थानों पर उसमें अतिरिक्त छन्द और अतिरिक्त वाक्य मिलते हैं (यथा: वराह आमड प्रबन्ध, कुमारपाल कारितामारि प्रबन्ध, वस्तुपाल तेजःपाल प्रबंध, तथा न्याये यशोवर्म्म नृप प्रबंध में); कहीं-कहीं पर पूरा अनुच्छेद या प्रसग ही बढ़ा हुआ है (यथा: वस्तुपाल तेजःपाल प्रबंध में); और कहीं-कहीं पर जो बात 'पी' में सक्षेप में कही गई है, 'बी' में कुछ बढ़ाकर कही गई है (यथा: वराह आमड प्रबंध तथा वस्तुपाल तेजःपाल प्रबंध में)। 'पी' में भी उपर्युक्त तीनों प्रकार की प्रक्षेप-क्रिया दिखाई पड़ती है, यद्यपि मात्रा में 'बी' से कुछ कम (यथा: वस्तुपाल तेजःपाल प्रबंध में)। हो सकता है कि इनमें से दो-एक उदाहरण प्रक्षेप के न हों, सामान्य लेखन प्रमाद के कारण उत्पन्न हों, किंतु इससे निष्कर्ष में कोई अन्तर नहीं पड़ता है।

४. यह पाठ वृद्धि वर्तमान 'पी' तथा 'बी' की किसी पूर्ववर्ती पीढ़ी में हुई, क्योंकि वर्तमान ' तथा 'बी' की प्रतियों में पाठ-वृद्धि के रूप में लिये हुए कोई वाक्य या छन्द नहीं मिलते हैं।

इन तथ्यों को हम निम्नलिखित रूप में व्यक्त कर सकते हैं—

आधार कृति
(यथा चंद की कृति)
जिस रूप में वह प्रबंध-लेखक को मिली
|
'पी' तथा 'बी' का सामान्य पूर्वज
प्रबंध संग्रह
|

'पी' संकलन	'बी' संकलन
वर्त्तमान 'पी' प्रति (स० १५२८)	वर्त्तमान 'बी' प्रति (तिथि अज्ञात)

यहाँ हम देखते हैं कि आधार कृति (यथा चंद की कृति) और 'पी' अथवा 'बी' के बीच चार पीढ़ियों का अन्तर है।

यहाँ तक तो आधार कृति के उस रूप की बात रही जो प्रबंध लेखक को प्राप्त था। किंतु अन्यत्र हम देखते हैं कि वह रूप प्रक्षिप्त था और हमें ऐसे रूप प्राप्त हैं जिनमें वह प्रक्षेप नहीं आता है: 'रासो' के लघुतम पाठ की दो प्रतियाँ, जैसा हम देख चुके हैं, प्राप्त हैं किंतु दोनों में से किसी में भी 'पृथ्वीराजप्रबंध' का 'अगह मगह दाहिमउ' वाला छन्द नहीं मिलता है; 'रासो' लघुपाठ की भी किसी प्रति में वह छन्द नहीं मिलता है; केवल उसके मध्यम तथा बृहत् पाठों की प्रतियों में वह छन्द मिलता है और वह भी एक-दूसरे से बहुत भिन्न-भिन्न स्थानों पर।[१] और प्रस्तुत संस्करण 'रासो' के लघुतम पाठ से भी लघुतर है—जिसमें लघुतम पाठ के भी कुछ अंश प्रक्षिप्त प्रमाणित होने के कारण नहीं रक्खे गए हैं।[२] इसलिए अप्रक्षिप्त 'रासो' का पाठ प्रबंध-लेखक की उपर्युक्त आधार-कृति के पाठ से कम से कम एक पीढ़ी ऊपर अवश्य पड़ता है और इस प्रकार मूल 'रासो' के पाठ और वर्त्तमान 'पी' प्रति में कम से कम चार पीढ़ियों का अन्तर होता है। यदि 'रासो' के मूल पाठ और प्रबन्ध-लेखक के आधारभूत पाठ के बीच ५० वर्षों का समय तथा शेष प्रत्येक पीढ़ी के लिए पच्चीस वर्षों का[३] समय रक्खें तो प्रस्तुत संस्करण का पाठ सं० १४०० के लगभग जा पहुँचता है।

रचना कथा-नायक की समकालीन नहीं हो सकती है, क्योंकि जैसा हमने अन्यत्र देखा है उसके प्रस्तुत संस्करण के पाठ में भी कुछ न कुछ इतिहास-असम्मत विवरण है,[४] उस में भी अनेक ऐसे शब्द

१ दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पुरातन प्रबंध संग्रह और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।

२ दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'रचना का मूल रूप' शीर्षक।

३ पहले (नागरीप्रचारिणी पत्रिका वर्ष ६०, अंक ३-४, पृष्ठ २२९) मैंने प्रत्येक पीढ़ी के लिए पचास वर्षों का समय मानकर रचना-काल का अनुमान किया था, किंतु जैन महात्माओं में ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ करना एक पवित्र कार्य माना जाता रहा है, इसलिए प्रति पीढ़ी के लिए पचीस वर्षों का समय पर्याप्त होना चाहिए।

४ दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पृथ्वीराजरासो की ऐतिहासिकता' शीर्षक।

आते हैं जो लगता है कि उत्तरी भारत की बोलचाल की भाषा में सम्मिलित हो गए थे[1] और उसकी भाषा भी 'प्राकृत पैंगल' में संकलित हम्मीर के सम्बन्ध के छन्दों (रचना-काल सं० १३५८-अर्थात् हम्मीर की देहांततिथि) और 'रणमल्ल छन्द' (रचना-काल सं० १४५४) के बीच की प्रतीत होती है।[2] इसलिए सभी दृष्टियों से 'पृथ्वीराज रासो' की रचना सं० १४०० के लगभग हुई हो मानी जा सकती है, इससे पूर्व नहीं।

—:०:—

[1] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पृथ्वीराजरासो में प्रयुक्त विदेशी शब्द' शीर्षक।
[2] दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पृथ्वीराजरासो की भाषा' शीर्षक।

१६. 'पृथ्वीराज रासो'

का

रचयिता

कवि चंद रचना में दो रूपों में आता है, एक तो कथा-नायक के कवि-मित्र के रूप में और दूसरे रचना के कवि रूप में। केवल रचना के कवि के रूप में वह प्रस्तुत संस्करण में इने गिने स्थलों पर ही दिखाई पड़ता है, और इन स्थलों पर 'चंद' या 'चंद विरद्दिआ' नाम से वह आता है :—

चंद या कवि चंद : १.४.१६, ७.५.५, ८.२४.१, ९.१.४, १२.४८.१ तथा १२.४९.६।

चंद विरद्दिया : ८.११ ६ तथा ८.१४.६।

कथा-नायक के कवि-मित्र के रूप में ही वह रचना में प्रायः दिखाई पड़ता है, और इन स्थलों पर वह प्रस्तुत संस्करण में निम्नलिखित भिन्न भिन्न नामों से आता है :—

चंद या कविचंद : २.१३.२, २.१४.२, २.१६.४, २.२१.१, २.२४.२, २.२५.२, २.३५.२, २.४२.१, ४.४.१, ४.१४.१२, ४.१६ १, ४ २५.३३, ५.१.१, ५.२.१, ५.३.७, ५.१५.१, ५.१६.२, ५.३१.१, ५.४८.१, ६.५.२३, ७.१.२, ७.५.५, ७.२०.३, ७.३१.२१, ८.७.१, १०.१.४, १०.२.१, १०.४.१, १०.५.१, १०.१४.१, १०.१५.१, १०.१९.२, १०.२२.१, १२.१३.२२, १२.१.६, १२.२.१, १२.६.१, १२.१०.९, १२.१५.१३, १२.१५.१६, १२.१६.१, १२.१७.२, १२.१९.३, १२.२२.२, १२.२३.१, १२.२३.३, १२.२४.१, १२.२५.१, १२.३२.३, १२.३३.१, १२.३३.१९, १२.३४.२, १२.४२.१, १२.४८.१, १२.४७.२।

केवल 'कवि' या 'राजकवि' शब्द का भी प्रयोग स्थान-स्थान पर हुआ है, जिसका स्थल-निर्देश करना अनावश्यक होगा।

चंद विरद्दिआ : ३.२७.६, ३.२९.३, ४.१.२, ५.१९.६, ५.४५.१, १२.४०.१, १२.४९.१।

चंद बरदाइ या बरदाइ : ३.३०.४, ५.९.१, १०.३.२, १२.४२.३।

भट्ट चंद या भट्ट : २.२८.१, २.३९, ४.८.२, ५.२१.२, १०.२८.१, १२.७.७, १२.१४.२, १२.१५.२, १२.१९.२, १२.३०.१, १२.४१.१।

चंडिय : २.१९.४।

चंद चद : ५.१३.१९।

कविचंद : ४.१३.१, १२.१०.१।

उपर्युक्त प्रयोगों से निम्नलिखित बातें ज्ञात होती हैं :—

(१) 'रासो' का कवि तथा कथा-नायक का कवि-मित्र रचना में एक ही व्यक्ति के रूप में आते हैं।

(२) 'रासो' के कवि के लिए 'चंद', 'कवि चंद' या 'चंद विरद्दिया' नाम आते हैं और कथा-नायक के कवि-मित्र के लिए भी उसी प्रकार 'चंद', 'कवि चंद' या 'चंद विरद्दिआ' नाम आते हैं।

(३) कथा-नायक के कवि-मित्र के कुछ और नाम भी आते हैं जो 'रासो' के कवि के नामों में नहीं मिलते हैं; ये हैं 'चंद बरदाइ' या 'बरदाइ' मात्र, 'भट्ट चंद' या 'भट्ट' मात्र, 'चंडिय', 'चंड चंद' और 'कवियन'।

अतः 'विरद्दिआ', 'बरदाइ', 'भट्ट', 'चंडिय', 'चंड', तथा 'कवियन' उपाधियाँ विचारणीय हो जाती हैं।

'विरदिआ', या 'विरुदिया', जैसा वह प्रायः ना० प्रति में पाया जाता है, विरुद (प्रशस्ति) गान करने वाले के अर्थ में आता है।

'बरदाइ' या 'बरदाई' शब्द का अर्थ भाषा के सामान्य नियमों के अनुसार 'वर देने वाला' होना चाहिए किन्तु चंद के सम्बन्ध में इस उपाधि का प्रयोग 'वर प्राप्त' के अर्थ में हुआ लगता है। एक स्थान पर कथा-नायक और उसके कवि-मित्र की कहा-सुनी में कवि का 'हर' से 'सिद्धि' या *'वर' प्राप्त हुए होने का उल्लेख भी आता है :—*

कहा भुजंग कहा उदे सुर निकसु बत्त कवि पंडि।
कइ कपमास बताहि मो कइ हर सिद्धीवर छंडि॥ (३.२३)
जउ छंडइ सेसह धरणि हर छंडइ विष कंठु।
रवि छंडइ तप ताप कर तउ वर छंडइ कवि चंदु॥ (३.२४)

किन्तु निम्नलिखित कथन से ध्वनित होता है उसे सरस्वती का वर प्राप्त था :—

अहो चंद बरदाइ कहावहु।
कनवज्जह दिष्षन नृप आवहु।
जउ सरसइ वर जानहु रंचउ।
तउ अदिट्ठ बरनउ नृप संचउ॥ (५.९.१)

यह असम्भव नहीं है कि अन्तिम उद्धरण के तृतीय चरण का 'वर' 'बल' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ हो, इसलिए उपर्युक्त अन्तर अथवा वैषम्य निश्चित अन्तर या वैषम्य नहीं कहा जा सकता है।

'भट्ट' शब्द का प्रयोग प्रसिद्ध स्तुति-पाठक जाति 'भाट' के अर्थ में हुआ है।

'चंडिअ' नाम का प्रयोग केवल एक स्थल पर निम्नलिखित प्रकार से हुआ है :—

सकल सूर बोलिय सभ मंडिय।
आसिष जाइ दीध कवि चंडिय। (३.१९.३-४)

'चंडिअ' का अर्थ 'कृत्त', 'छिन्न' अथवा 'काटा हुआ' होता है, जो यहाँ असंगत लगता है। प्रसंग के अनुसार यहाँ पर 'चंडिय' से आशय 'चंद' का होना चाहिए क्योंकि आगे ही चंद से पृथ्वीराज ने प्रश्न किया है (३.२१) और 'चंड' 'चन्द्र' से भी व्युत्पन्न माना गया है[१], अतः असम्भव नहीं है कि इससे चद्र<चद का आशय सिद्ध होता हो।

इसी प्रकार 'चंड' उपाधि का प्रयोग भी केवल एक स्थल पर निम्नलिखित प्रकार से हुआ है :—

तंपियं सच्च सो चंड चंदं।
पप्पियं जाइ विरद्दुवि पिंदं। (५.१३.८-९)

'चंड' का अर्थ 'उग्र' होता है, और वही कदाचित् यहाँ भी अभिप्रेत है। 'कवियन'=

[१] दे० 'पाइअ सद्द महण्णवो' पृ० ३९२।

'कविजन', सत्कवि के लिए प्रयुक्त होता रहा है—यथा नारायणदास रचित छिताई वार्ता[२] में—और उसी अर्थ में यहाँ भी प्रयुक्त लगता है :—

> रतनरंग कवियन घुघिलई।
> समौ विचारि कथा वर्नई ॥५०४॥
> कवियन कहै नारायनदास ॥१२८, १४३, ५४२, ६६०, ७४६॥
> कविअण तुच्छ कहइ समझाइ ॥७३२॥

फलतः कथा नायक का कवि-मित्र चन्द 'विरुदिआ' या 'भाट' था, और उसे हर से सिद्धि का वर प्राप्त हुए होने के कारण 'वरदाई' भी कहा जाता था; स्वभाव से वह कदाचित् किंचित् उग्र था, इसी कारण 'दंद चंद' भी वह कहा गया है।

यह हम अन्यत्र देख चुके हैं कि 'रासो' पृथ्वीराज के समकालीन किसी कवि की रचना नहीं हो सकती है।[३] इसलिए यह प्रकट है कि यह रचना चन्द के नाम पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा की हुई है। वह अन्य व्यक्ति कौन था, यह जानने के लिए हमारे पास कोई साधन इस समय नहीं हैं।

—:०:—

२ 'छिताई वार्ता' संपादक प्रस्तुत लेखक, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस, सं० २०१५।
३ दे० इसी भूमिका में अन्यत्र 'पृथ्वीराजरासो का रचना-काल' शीर्षक।

१७. रासो काव्य-परंपरा
और
'पृथ्वीराज रासो'

'रास' और 'रासो' नाम किस वस्तु के परिचायक हैं, ये एक ही काव्यरूप का निर्देश करते हैं अथवा दो काव्यरूपों का, इनके आधार विषय, रस, शैली छन्द आदि क्या होने चाहिए और इनका सूत्रपात किस प्रकार हुआ—आदि बातों के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियों का सर्व-प्रमुख कारण यह है कि प्रायः आलोचक-गण रास और रासो नामों से अभिहित काव्य-समूह पर बिना किसी पूर्वग्रह के दृष्टि नहीं डाल पाते हैं। प्रस्तुत लेखक के विचार से नाम-साम्य होते हुए भी दो भिन्न-भिन्न काव्यरूप इन नामों से अभिहित हुए हैं जिनमें से एक गीत-नृत्य-परक है और दूसरा छन्द-वैविध्य-परक।

ये दोनों काव्यरूप अपभ्रंश-काल से इसी प्रकार अलग-अलग मिलने लगते हैं। इन दोनों का साहित्य भी अलग-अलग अत्यन्त समृद्ध रहा है। सामान्यतः यह कहा जाता है कि गीत-नृत्य-परकरूप ही रास-रासो का प्रारम्भ में एक मात्र या कम से कम प्रमुख रूप रहा है, किन्तु यह एक भ्रामक कथन है। इसी प्रकार यह भी कहा जाता है कि इसका सूत्रपात जैन महात्माओं और कवियों द्वारा हुआ; यह कथन भी उतना ही भ्रामक है, जितना प्रथम। पुनः इसी प्रकार, यह कहा जाता है कि इस काव्य-रूप का प्रारम्भ पश्चिमी राजस्थान और गुजरात में हुआ और इसका विकास भी बहुत समय तक उसी भूभाग तक सीमित रहा; किन्तु यह कथन भी उसी प्रकार भ्रामक है जिस प्रकार प्रथम तथा द्वितीय हैं। आगे आने वाले परिचयात्मक विवेचन से इन कथनों का निराकरण हो जावेगा।

प्रथम अर्थात् गीत-नृत्य-परक रास परंपरा में सैकड़ों रचनायें बताई जाती हैं। अभी तक उनके जो नाम मिले हैं, उनकी संख्या भी सौ से ऊपर ही होगी। और ये समस्त रचनाएँ प्रायः एक ही ढंग की हैं। ऐसी दशा में संक्षेप में और परंपरा की आरम्भिक दो शतियों—सं० १२०० से १४०० वि० तक—की ही प्रमुख रचनाओं का उल्लेख करना यथेष्ट होगा; उसी से उसका पर्याप्त परिचय मिल जावेगा। शुद्ध साहित्यिक परंपरा वास्तव में दूसरी है। उसका विवरण अपेक्षाकृत अधिक पूर्णता के साथ दिया जावेगा और सं० ११०० से १९०० वि० तक की उसकी प्रायः सभी महत्वपूर्ण कृतियों को उस विवरण में सम्मिलित किया जावेगा।

गीत-नृत्य-परक रास-परम्परा

(१) उपदेश रसायन—इस परंपरा की सबसे प्राचीन प्राप्त रचना 'उपदेश रसायन' है, जिसके रचयिता श्री जिनदत्त सूरि हैं। इसमें रचना-काल नहीं दिया हुआ है। किन्तु ग्रन्थकार की एक अन्य रचना 'कालस्वरूप कुलक' है, जिसकी रचना-तिथि सं० १२०० वि० के कुछ ही बाद

होगी, जैसा कि उसके एक छन्द से प्रकट है[1], इसलिए इस रचना का भी समय सं० १२०० के लगभग माना जा सकता है। यह रचना अपभ्रंश में है। इसका विषय धर्मोपदेश है। प्रयुक्त छन्द चउपई है। रचना ३२ छन्दों में समाप्त हुई है। यद्यपि इसमें रास या रासो नाम नहीं आया है, किन्तु इसके टीकाकार जिनपाल उपाध्याय ने टीका के प्रारम्भ में ही इसे रासक माना है और लिखा है कि यह पद्धटिका बंध काव्य सभी रासों में गाया जाता है।[2] रचना में इसे रसायन कहा गया है। सम्भवतः इसे प्रस्तुत करने के लिए ही इसके अन्त में ताला और लउडा (लकुटा) रासों का उल्लेख हुआ है, ताला रास से रात्रि में और लउडा रास से दिन में।[3]

(२) भरतेश्वर बाहुबलीरास—इसके रचयिता शालिभद्र सूरि हैं, जिन्होंने इसकी रचना सं० १२४१ में की।[4] इसमें भगवान ऋषभदेव के दो पुत्रों भरतेश्वर और बाहुबली के बीच राज्य के लिए हुए संघर्ष की कथा है। यह रचना २०३ छन्दों में समाप्त हुई है। इसमें कुछ छन्द-वैविध्य है किन्तु फिर भी यह रचना गेय परंपरा की प्रतीत होती है। वीर रस का परिपाक इसमें अच्छा हुआ है।

(३) बुद्धिरास—यह रचना भी उन्हीं शालिभद्र सूरि की है जिनकी उपर्युक्त भरतेश्वर बाहुबली रास है। इसमें रचना-सम्वत नहीं दिया हुआ है। किन्तु यह अनुमान सुगमता से किया जा सकता है कि रचना 'भरतेश्वर बाहुबली रास' के रचना-काल सं० १२४१ के लगभग होगी। इसका विषय 'उपदेश रसायन' की भाँति धर्मोपदेश है। यह रचना ६३ छन्दों में समाप्त हुई है। यह रचना भी 'उपदेश रसायन' की भाँति गाई जाती रही होगी, ऐसा प्रतीत होता है।

(४) जीवदया रास—इसकी रचना आसगु ने सं० १२५७ में की थी[5]। इसका विषय नाम से ही स्पष्ट है : वह है दया-धर्मोपदेश। इसकी भाषा शैली में काव्यात्मक दृष्टिकोण का अभाव प्रतीत होता है।

(५) चंदन बाला रास—इसके रचयिता भी यही आसगु है।[6] रचना-काल इस कृति में नहीं दिया हुआ है, किंतु यह सुगमता से अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना भी ग्रंथकार की उक्त अन्य रचना 'जीवदया रास' के आसपास अर्थात् सं० १२५० के लगभग रची गई होगी। यह जालौर में रची गई थी। इसमें लेखक उद्देश्य चंदनबाला की धार्मिक कथा कहना है[7] इसमें प्रयुक्त छंद चउपई तथा दोहा हैं। यह रचना ३५ छंदों में समाप्त हुई है।

(६) जंबूस्वामी रासा—यह रचना श्री धर्म सूरि ने सं० १२६६ में की थी।[8] इसका विषय है जंबू स्वामी का चरित्र तथा गुण-वर्णन।[9]

(७) रेवंत गिरि रासु—यह कृति श्री विजय सेन सूरि की है। रचना-काल सं० १२८८

[1] छन्द ३, अपभ्रंश काव्य त्रयी संस्करण, गायकवाड़, ओरियंटल सीरीज, बड़ौदा।

[2] वही, टीका, छन्द २–४।

[3] वही, छन्द ३६।

[4] भरतेश्वर बाहुबली रास, छन्द २०३, अपभ्रंश काव्यत्रयी, गायकवाड ओरियंटल सीरीज, बड़ौदा।

[5] 'गुजराती साहित्यना स्वरूपो' : प्रो० मं लाल मजमुदार लिखित, पृ० ८१९।

[6] 'राजस्थान भारती' भाग ३, अंक ३-४, पृ० १०६-११२, श्री अगरचंद नाहटा द्वारा संपादित पाठ।

[7] 'सम्मेलन-पत्रिका', भाग ३५, संख्या ७-९, पृ० १३१।

[8] देखिए 'हिन्दी जैन साहित्य-नाथूराम प्रेमी, पृ० २५।

[9] वही।

के लगभग माना गया है।[१] इसकी रचना सौराष्ट्र में हुई।[२] इसमें गिरनार के जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार की कथा है। यह रचना ७२ छंदों में समाप्त हुई है।

(८) नेमि जिणंद रासो (आबूरास)—यह पाल्हण द्वारा सं० १२८९ में रची गई थी। इसका उद्देश्य भी धार्मिक है। यह ५४ छंदों में समाप्त हुई है।

(९) गय सुकुमाल रास—यह कृति देल्हण की है। इसका रचना-काल सं० १३०० के लगभग अनुमान किया गया है।[४] इसका उद्देश्य गयसुकुमाल का धार्मिक चरित्र-वर्णन है। यह कुल ३४ छंदों की है।

(१०) सप्त क्षेत्रिरासु—इसके लेखक का नाम अज्ञात है। यह रचना सं० १३२७ वि० में हुई थी।[५] इसमें सप्त क्षेत्रों—जिन मंदिर, जिन प्रतिमा, साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका की उपासना का वर्णन है। यह रचना ११९ छंदों में समाप्त हुई है।

(११) पेथड रास—इसके लेखक मण्डलिक हैं। इसका रचना-काल सं० १३६० के लगभग माना गया है।[६] इसमें संघपति पेथड़ का चरित्र वर्णित हुआ है। नृत्य के साथ गाए जाने के लिए इसकी रचना की गई है :—

रास रमेउजिण भुवणि ताल मेलि ठवि पाउ ॥२॥[७]

यह रचना ६५ छंदों में समाप्त हुई है।

(१२) कच्छूलि रास—लेखक का नाम अज्ञात है। इसका समय सं० १३६३ वि० है।[८] इसका उद्देश्य भी धार्मिक है। इसमें एक जैन तीर्थ कच्छूलि ग्राम का वर्णन है। इस रचना में कुल ३५ छंद हैं।

(१३) समरा रासु—इसके रचयिता श्री अंबदेव सूरि हैं, जिन्होंने इसकी रचना सं० १३७१ के बाद की होगी, क्योंकि इसमें वर्णित घटना की तिथि इस प्रकार दी हुई है :

सवच्छरि इक्कहत्तरए थापिउ रिसह जिणिंदो ॥[९]

इसमें संघपति समरा का धार्मिक चरित्र वर्णित हुआ है। यह रचना कुल ११० छंदों में समाप्त हुई है।

(१४) *बीसलदेव रास*—इसकी रचना *नरपति नाल्ह* ने की थी। इसका रचना-काल विवाद का विषय रहा है। राजस्थान के कुछ विद्वानों का मत है कि 'बीसलदेव रास' की भाषा सोलहवीं शताब्दी की है, और उन्होंने यह भी सुझाव दिया है कि इसका रचयिता नरपति नाम का गुजरात

[१] 'जैन साहित्य का इतिहास'—नाथूराम प्रेमी, पृ० २६।

[२] 'रेवंत गिरि रासु' प्राचीन गुर्जर-काव्य संग्रह भाग १ (गायकवाड़ ओरिएंटल सीरीज) में संपादित संस्करण, पृ० १।

[३] राजस्थानी, भाग ३, अंक १ पृ० ८३-८८।

[४] श्री अगर चंद नाहटा, राजस्थान भारती, भाग २, अंक २, पृ० ८७।

[५] 'सप्त क्षेत्रि रासु', छंद ११८, प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, भाग १, गायकवाड़ ओरएंटल सीरीज।

[६] 'इतिहास नी केडी', श्री भोगीलाल सांडेसरा, पृ० १९९।

[७] 'पेथडरास', छंद ३, प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह भाग१, गायकवाड़ ओरिन्टल सीरीज, बड़ौदा।

[८] वही, पृ० ६२।

[९] 'समरारासु', प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, भाग १, उपर्युक्त, पृ० ३७।

का एक कवि है, जिसने सं० १५४५ तथा १५६० में दो अन्य ग्रंथों की रचना की है।[1] इस प्रसंग में श्री मोतीलाल मनोरिया ने नरपति की एक रचना से सात स्थलों पर की कुछ पंक्तियाँ देते हुए उनकी समानान्तर पंक्तियाँ 'बीसलदेव रास' से उद्धृत की हैं।[2]

जहाँ तक भाषा के स्वरूप का प्रश्न है, इन विद्वानों ने रचना के नागरीप्रचारिणी सभा, काशी के संस्करण वाले पाठ को लेकर ऐसा कहा है। सभा का पाठ सबसे अधिक प्रक्षिप्त है—उसमें मूल के निर्धारित १२८ छन्दों के स्थान पर ३१४ छन्द हैं, और मूल के १२८ छन्दों का पाठ भी उसमें बहुत बदला हुआ है। उसका जो पाठ अब निर्धारित हुआ है[3], उसको ध्यान में रखते हुए यदि देखा जावे, तो भाषा इतनी आधुनिक नहीं लगती है। सं० १४०० के लगभग की प्रमाणित राजस्थानी की अन्य रचनाओं से यदि इस संस्करण की भाषा का मिलान किया जावे[4], तो यह स्पष्ट ज्ञात होगा कि 'बीसलदेव रास' की भाषा सं० १४०० के आस-पास की ही है।

जहाँ तक गुजरात के नरपति और 'बीसलदेव रास' के रचयिता नरपति नाल्ह के एक होने का प्रश्न है, यह नहीं कहा गया है कि गुजरात के नरपति ने भी अपने को कहीं नाल्ह कहा है, *'बीसलदेव रास' के रचयिता ने तो अपने को अनेक स्थलों पर नाल्ह कहा है। जो पंक्तियाँ तुलना के लिए* दोनों कवियों से दी गई हैं, उनमें से चार तो *निश्चित रूप से* 'बीसलदेव रास' के प्रक्षिप्त छन्दों की हैं।[5] शेष तीन में जो साम्य है वह साधारण है, उस प्रकार और उतना साम्य देखा जावे तो मध्य युग के किन्हीं भी दो कवियों में मिल सकता है। इसके अतिरिक्त रचना काल के ७५ या १०० वर्षों के भीतर ही किसी भी रचना की इतनी विभिन्न पाठों की प्रतियाँ नहीं मिलतीं जितनी कि सं० १६३३ और सं० १६६९ की रचना की दो तिथियुक्त प्रतियाँ तथा प्रायः उसी समय की अन्य तिथि-हीन प्रतियाँ हैं।[6] *अतः सं० १६०० के लगभग की रचना-तिथि 'बीसलदेव रास' के लिए मान्य नहीं हो सकती है।*

इस रचना का विषय बीसलदेव की प्रवास-कथा है। अजमेर के चहुआन बीसलदेव का विवाह भोज परमार की कन्या राजमती से होता है। इस विवाह में उसे अनेक प्रान्त दायज में तथा अतुल संपत्ति विदाई में मिलती है। इस नव प्राप्त वैभव के पृष्ठभूमि में जब वह अपनी संपदा पर विचार करता है, तो उसे *अभिमान होता है, और वह गर्वपूर्वक अपनी नवविवाहिता राजमती से कहता* है कि उसके समान दूसरा राजा नहीं है। राजमती कहती है कि उसे गर्व नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसके समान अनेक राजा : एक तो उड़ीसा का ही राजा है, जिसके राज्य में खानों से उसी प्रकार हीरा निकलता है जिस प्रकार बीसलदेव के राज्य में साँभर की झील में से नमक निकलता है। यह बात बीसलदेव को लग जाती है, और बीसलदेव उड़ीसा चला जाता है और वहाँ के *राजा की सेवा में लग जाता है। बारह वर्ष व्यतीत हो जाते हैं, राजमती अपने पुरोहित को उसे* लौटा लाने के लिए उड़ीसा भेजती है। उड़ीसा पहुँच कर पुरोहित बीसलदेव से मिलता है, और

[1] *श्री अगरचन्द नाहटा, राजस्थानी,* जनवरी १९४०, पृ० २१ तथा श्री मोतीलाल मेनारिया 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' पृ० ८७-८८।

[2] श्री मोतीलाल मेनारिया, 'राजस्थानी भाषा और साहित्य,' पृ० ८८-८९।

[3] दे० प्रस्तुत लेखक द्वारा संपादित और हिन्दी परिषद्, प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पाठ।

[4] दे० 'पुरानी राजस्थानी' एल० पी० टेसिटरी द्वारा लिखित और श्री *नामवरसिंह* द्वारा अनूदित ना० प्र० सभा, काशी द्वारा प्रकाशित।

[5] दे० प्रस्तुत लेखक द्वारा संपादित और हिन्दी परिषद, प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पाठ।

[6] दे० वही, भूमिका।

उसे राजमती का संदेश देता है। उड़ीसा के राजा को जब यह ज्ञात होता है कि वह अजमेर का चौहान शासक है, उसको प्रचुर रत्न-राशि देकर विदा करता है। बीसलदेव अजमेर लौट कर राजमती से मिलता है। इस रचना में शृंगार के अतिरिक्त कोई अन्य रस नहीं है। इसमें विप्रलंभ और संयोग दोनों प्रकारों के शृंगार का अच्छा परिपाक हुआ है। नायिका ने अनेक स्थलों पर पति को 'मूरख नाह' और 'निगुणा नाह' कहा है। इसे देखकर कुछ लोगों को इस रचना में अशिष्टता का आभास मिला है। किन्तु इन सम्बोधनों के पीछे जो आत्मीयता की प्रेरणा है, जो सहज प्रेम का आग्रह है, वह तो इस काव्य की विशेषता है। ठीक इसी प्रकार के सम्बोधन 'संदेश रासक' में उसकी प्रोषित पतिका ने भी किए हैं।

इस रचना में आदि से अन्त तक एक ही छन्द का निर्वाह हुआ है। सम्पूर्ण रचना गेय है, यह स्वतः प्रकट है। रचना के प्रारम्भ में ही केदारा राग के अन्तर्गत इसके गीतिबद्ध होने का निर्देश किया गया है। यह रचना नृत्य-गीत के साथ प्रस्तुत भी की जाती रही है, इसका प्रमाण हमें इसके एक प्रक्षिप्त छन्द में मिलता है।[1]

यद्यपि इसमें एक राजा की कथा है, यह रचना किसी राजा के आश्रय में रची गई नहीं हो सकती है। राजाओं के आश्रय में रची गई रचनाओं में उनकी तथा उनके पूर्व-पुरुषों की विजय-गाथायें अनिवार्य रूप से होती हैं, जो इसमें एकदम नहीं हैं।

यह कहना अनावश्यक होगा कि गीत-नृत्य-परक रासो-परंपरा का यह जैनेतर अपवाद अत्यन्त मूल्यवान है, इसीलिए इसका परिचय कुछ विस्तार से दिया गया है। इस परंपरा में हमें अभी अन्य जैनेतर रचनाएँ नहीं मिली हैं, किन्तु यह रचना उनके निश्चित अस्तित्व की सूचना देती है। ऐसा लगता है कि जैन कृतियों की भाँति वे सुरक्षित नहीं रह पाईं, इसलिए वे धीरे-धीरे काल-कवलित हो गईं।

छन्द-वैविध्य-परक रासो-परम्परा

(१) मुंज रास—आचार्य हेमचन्द्र ने अपने प्राकृत व्याकरण 'सिद्ध हैम' (रचना सं० ११९० वि०) में मुंज-विषयक दो दोहे उदाहरण में उद्धृत किए हैं। मेरुतुंग ने अपने 'प्रबन्ध-चिन्तामणि' (रचना सं० १३६१ वि०) में 'मुंजराजप्रबन्ध' शीर्षक देते हुए मुंज की कथा दी है, और उसके विभिन्न प्रसंगों में दोहे, सोरठे, गाथाएँ, तथा अन्य प्रकार के अनेक छन्द उद्धृत किए हैं[2]। 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह' में एक प्राचीन जैन-प्रबन्ध-संग्रह में संकलित 'मुंजराज-प्रबन्ध' दिया गया है जिसका वृत्त प्रायः 'प्रबन्ध-चिंतामणि' वाले वृत्त जैसा ही है। इसके उद्धृत छन्द भी दो एक को छोड़कर उन्हीं में से हैं जो 'प्रबन्ध-चिंतामणि' में उद्धृत हैं।[3] इससे यह प्रमाणित होता है कि सं० ११९७—'सिद्धहैम' के रचना-काल—के पूर्व ही मुंजराज के चरित्र को लेकर अपभ्रंश में लिखा गया कोई काव्य था। असम्भव नहीं कि यह छन्द-वैविध्य-परक रासक-परम्परा की रचना रही हो और इसका नाम 'मुंजरास' या 'मुंजरासक' रहा हो। इसके रचयिता के सम्बन्ध में हमें कोई ज्ञान नहीं है; न इसका निश्चित रचना-काल ही हमें ज्ञात है। वाक्पति मुंजराज का समय सं० १०३१—१०५२ वि० माना गया है।[4] और 'सिद्धहैम' की तिथि सं० ११९७ वि० है। 'मुंजरास' का समय दोनों के बीच में कहीं होना चाहिए।

मुंजराज विषयक उपर्युक्त जैन प्रबंधों में आई हुई कथा संक्षेप में इस प्रकार है। मुंज का कर्ना-

[1] नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संस्करण, छन्द ११।

[2] देखिए 'प्रबन्ध चिंतामणि', सिंघी जैन ग्रन्थ माला, पृ० २१-२५।

[3] देखिए 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह', सिंघी जैन ग्रन्थमाला, पृ० १३-१५।

[4] हेमचन्द्रे : 'डाइनैस्टिक हिस्ट्री आव् इंडिया,' पृ० ९२७।

न्न के राजा तैलप से, घोर वैमनस्य था। यद्यपि मुंज का महामात्य रुद्रादित्य उसे रोकता रहा, फिर भी मुंज ने तैलप के बल की पूरी जानकारी किए बिना ही उस पर आक्रमण कर दिया। मुंज हार गया और बंदी हुआ। बंदीगृह में तैलप की विधवा बहिन मृणालवती से उसका प्रेम हो गया। मुंज के शुभेच्छुओं ने उसे बंदीगृह से निकाल भगाने की एक योजना बनाई। मुंज ने उस योजना की बात बताते हुए मृणालवती से भी भाग निकलने के लिए कहा। मृणालवती उसके साथ नहीं जाना चाहती थी, और वह भी नहीं चाहती थी कि मुंज से उसको अलग होना पड़े। इसलिए उसने इस षड्यन्त्र की सूचना अपने भाई तैलप को दे दी। तैलप ने षड्यन्त्र समाप्त कर मुंज का बड़ा अपमान किया—उससे घर घर भीख मँगवाई—और तदनंतर उसे हाथी से कुचलवा कर मरवा डाला।

यह स्पष्ट है कि यह रचना मुंज ही नहीं मुंज के किसी वंशज की प्रेरणा से भी न की गई होगी, क्योंकि अपने एक अत्यन्त सम्मान्य पूर्वज का इस प्रकार पराजय और अपमान पूर्वक विनाश कोई भी वंशज प्रबन्धबद्ध नहीं करा सकता था। यह सम्पूर्ण रचना लोकरंजन तथा लोकशिक्षण के लिए निर्मित की गई प्रतीत होती है।

(२) संदेश रासक—इसका रचयिता अब्दुल रहमान है, जिसने अपना परिचय ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही देते हुए बताया है कि पश्चिम के पूर्व-प्रसिद्ध म्लेच्छ देश में तंतवायु मीरसेन हुआ; यह उसी का तनय था जो प्राकृत काव्य तथा गीत विषय में प्रसिद्ध था।[1] 'संदेश रासक' ऐसे ही सुकवि की रचना है।

इसकी रचना तिथि-ज्ञात नहीं है। किन्तु इसके सम्पादक मुनि जिनविजय जी के अनुसार इसका रचना काल शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी के आक्रमण के कुछ ही पूर्व होना चाहिए, कारण यह है कि मूलस्थान-मुलतान-का इस रचना में एक समृद्ध हिन्दू तीर्थ रूप में उल्लेख हुआ है। शहाबुद्दीन गोरी के आक्रमण के अनंतर मुल्तान की यह समृद्धि सदैव के लिए मिट गई होगी। भाषा की दृष्टि से भी वह उनके अनुसार उसी समय की प्रतीत होती है।[2]

इसका विषय विप्रलम्भ शृंगार है जिसका अन्त मिलन में होता है। विजय नगर (जैसलमेर) की एक विरहिणी अपने पति के पास सन्देश भेजना चाहती है। उसे एक पथिक आता हुआ दिखाई पड़ता है। उस पथिक को रोककर वह अपने पति के लिए सन्देश देती है। ज्योंही पथिक चलने को होता है वह कुछ और भी कहने लगती है। इसी प्रकार कई बार होता है, यहाँ तक कि अन्त में जब पथिक चलने को उद्यत होता है, और पूछता है कि उसे और तो कुछ नहीं कहना है, वह रो पड़ती है। पथिक सान्त्वना देते हुए उससे पूछता है कि उसका पति किस ऋतु में प्रवास के लिए गया था; वह कहती है, ग्रीष्म ऋतु में, और तदनंतर वह छः ऋतुओं के अपने विरह-जनित कष्टों का वर्णन करती है। यह सब समाप्त होने पर जब पथिक चल पड़ता है, विरहिणी का पति लौटता हुआ दिखाई पड़ता है, और दोनों मिल जाते हैं।

रचना केवल २२३ छन्दों में समाप्त हुई है, किन्तु इतने में ही २२ प्रकार के छन्दों का प्रयोग हुआ है। इसी बहुरूप-निबद्ध रासकत्व के बारे में कवि ने रचना में एक स्थान पर संकेत किया है :—

> कहव ठाइ चउवेइहिं वेउ पयासियइ।
> कह बहुरुवि णिबद्धउ रासउ भासियइ ॥ ४३ ॥

[1] 'सन्देश रासक', सम्पादक मुनि जिनविजय, भारतीय विद्या भवन, बंबई, छंद ३-४।
[2] 'सन्देश रासक', उपर्युक्त, प्रस्तावना, पृष्ठ ११-१५।

(३) हम्मीर रासो—इस नाम की कोई रचना अभी तक नहीं मिली है, किन्तु 'प्राकृत पैं
के आठ छन्दों में हम्मीर का स्पष्ट नामोल्लेख होता है।[1] असम्भव नहीं कि उसमें और भी
छन्द ऐसे हों जो हम्मीर के चरित्र से सम्बन्धित हों यद्यपि उनमें हम्मीर का नाम न आया है
छन्द भी कम से कम आठ विभिन्न वृत्तों (छन्दों) के उदाहरण में आते हैं। अतः यह प्रकट
विविध छन्दों से विभूषित हम्मीर के जीवन से सम्बन्धित कोई समादृत कृति उस समय थी
'प्राकृत पैंगल' की रचना हुई, और असम्भव नहीं कि यह कृति छन्द-वैविध्य-परक रासो-परंपरा
ही रही हो।

इस कृति का रचना-काल क्या होगा, यह विचारणीय है। हम्मीर का समय सं० १२
सं० १३५८ है, और 'प्राकृत पैंगल' के ये छन्द प्रायः हम्मीर की प्रशस्तियुक्त हैं, इसलिए ये
जीवन-काल में ही रचे गए होंगे ऐसा सामान्यतः समझा जाता है, किंतु यह असंभव नहीं है कि
रचना हम्मीर के कुछ बाद हुई हो।

इन छन्दों का अथवा इनके स्रोत 'हम्मीर रासो' का रचयिता कौन रहा होगा, यह ज्ञा
ज्ञात नहीं होता है। हमारे साहित्य के इतिहासों में शार्ङ्गधर द्वारा रचित एक 'हम्मीर रासो' माना
रहा है। शार्ङ्गधर के पितामह राघव, जो पीछे 'छिताई वार्त्ता' तथा 'पद्मावत' आदि अनेक अला
से संबन्धित काव्यों में विविध प्रकार से आए हैं, हम्मीर देव के आश्रय में रहते थे, और उनका
पद्य 'शार्ङ्गधर पद्धति' में संकलित है इसलिए यद्यपि यह असंभव नहीं कि शार्ङ्गधर ने 'हम्मीर
नामक किसी कृति की रचना की हो किन्तु इसके कोई निश्चित प्रमाण नहीं हैं।

इसके दो छन्दों में एक जज्जल आता है।[2] उसी के आधार पर श्री राहुल सांकृत्यायन ने
को इन छन्दों का रचयिता माना है।[3] किन्तु इन छन्दों के अर्थ पर विचार किया जावे तो
स्पष्ट हो जावेगा कि जज्जल इनमें हम्मीर-पक्ष के वीर योद्धा के रूप में आया है, कवि के
नहीं। अन्य ऐतिहासिक साक्ष्यों से भी जज्जल के हम्मीर के एक सामंत होने का समर्थन होता
अतः जज्जल इन छन्दों का रचयिता नहीं है।

हम्मीर सम्बन्धी ये समस्त छन्द वीर रस के हैं, और काव्य की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट हैं।

(४) बुद्धि रासो—इसका रचयिता जल्ह नामक कवि है। रचना अप्रकाशित है। श्री मोती
मेनारिया ने लिखा है कि रचना-शैली से कवि जैन प्रतीत होता है, और उन्होंने रचना
पंक्तियाँ भी उद्धृत की हैं। किन्तु इन पंक्तियों में कोई बात भाषा शैली की दृष्टि से ऐसी
मिलती जिससे रचयिता को जैन कवि माना जा सके। एक जल्ह के दो छन्द 'पुरातन प्रबंध-
में 'जयचन्द प्रबन्ध' में उद्धृत हुए हैं। इस 'प्रबंध संग्रह' के प्रबन्धों का समय १५ वीं शती वि०
जाता है, इसलिए यदि दोनों जल्ह एक ही हों तो असम्भव नहीं कि यह जल्ह १५ वीं शती वि
प्रारम्भ में हुआ हो। मेनारिया जी ने अपने 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' में लिखा है कि ज
आविर्भाव-काल सं० १६२५ है।[4] पता नहीं किस आधार पर उन्होंने ऐसा लिखा है।

इसका विषय एक प्रेम कथा है, जो इस प्रकार है:—चंपावती नगरी का राजकुमार

[1] श्री चन्द्रमोहन घोष द्वारा संपादित तथा एशियाटिक सोसायटी बंगाल द्वारा १९०२ ई० में प्रका
संस्करण, मात्रा वृत्त के छन्द ७१, ९२, १०६, १४७, १५१, १९०, २०४, तथा वर्ण वृत्त का छन्द १

[2] वही, मात्रा वृत्त, छन्द १०६, १४७।

[3] दे० 'हिन्दी काव्य धारा', पृ० ४५२।

[4] डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल : ज्जल या जज्जल, हिन्दी अनुशीलन, पौष-चैत्र, सं० २०११, पृ

[5] 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', पृ० १२१।

राजधानी से आकर कुछ दिनों के लिए जलधितरंगिनी के साथ समुद्र के किसी स्थान में रहता है और तदनंतर एक मास में लौटने का वचन देकर कहीं चला जाता है। अवधि के बाद भी कई मास बीत जाते हैं, किन्तु वह लौटता नहीं, तब विरहिणी जलधितरंगिनी जीवन से विरक्त हो जाती है, और अपने आभूषणादि उतार फेंकती है। इस पर उसकी माँ उसके समक्ष संसार के विलास वैभव तथा शारीरिक सुखों की महत्ता प्रतिपादन करने लगती है। इतने ही में राजकुमार वापस आ पहुँचता है, और दोनों का पुनर्मिलन हो जाता है, जिसके अनंतर दोनों आनन्द और उत्साह के साथ जीवन व्यतीत करने लगते हैं।

इस कथा को पढ़कर एक ओर 'सन्देश रासक' तथा दूसरी ओर हिंदी की प्रेम-कथाओं का स्मरण आप से आप हो जाता है। यदि यह रचना १५वीं शती वि० के प्रारम्भ की प्रमाणित हो, तो निस्संदेह इसका स्थान हमारे साहित्य के इतिहास में अत्यन्त महत्व का होगा।

इसमें दोहा, छप्पय, गाहा, पाधड़ी, मोतीदाम, मुडिल्ल आदि छन्द हैं, और रचना कुल २४० छन्दों में समाप्त हुई है।[1]

(५) *परमाल रासो*—सं० १९७६ में *नागरी प्रचारिणी सभा, काशी* से यह रचना प्रकाशित हुई है। इसके संपादक डॉ० श्याम सुन्दरदास ने भूमिका में लिखा है कि "जिन प्रतियों के आधार पर यह संस्करण संपादित हुआ है, उनमें यह नाम नहीं है; उनमें इसको चंद कृत 'पृथ्वीराज रासो' का महोबा खण्ड लिखा हुआ है; किन्तु वास्तव में यह 'पृथ्वीराज रासो' का महोबा खण्ड नहीं है, वरन् उसमें वर्णित घटनाओं को लेकर मुख्यतः 'पृथ्वीराज रासो' में दिए हुए एक वर्णन के आधार पर लिखा हुआ एक स्वतन्त्र ग्रंथ है। यद्यपि इस ग्रंथ का नाम मूल प्रतियों में 'पृथ्वीराज रासो' दिया हुआ है, पर इस नाम से इसे प्रकाशित करना लोगों को भ्रम में डालना होता, अतएव मैंने इसे 'परमाल रासो' यह नाम देने का साहस किया है।"[2]

किन्तु वास्तविकता यह है कि 'पृथ्वीराज रासो' के नागरी प्रचारिणी सभा के संस्करण में दिए हुए महोबा खण्ड का यह एक परिवर्धित रूपान्तर मात्र है, स्वतन्त्र रचना नहीं। 'पृथ्वीराज रासो' में सम्मिलित महोबा खण्ड भी प्रामाणिक रचना नहीं है, क्योंकि वह अलग से ही मिलता है, और 'पृथ्वीराज रासो' की किसी पूर्ण प्रति में नहीं मिलता है। यह सिद्ध करने के लिए कि 'रासो' के अन्त में प्रकाशित महोबा खण्ड का यह परिवर्धित रूपान्तर मात्र है, यही देखना पर्याप्त है होगा कि पूर्ववर्ती की लगभग समस्त पंक्तियाँ कुछ मिलाई हुई पंक्तियों के बीच इसमें भी मिल जाती हैं। इसका रचना-काल क्या होगा, यह कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। इसकी जो प्रतियाँ मिली हैं, वे १९वीं शताब्दी वि० की हैं। आश्चर्य नहीं कि महोबा खण्ड का प्रस्तुत रूप १६वीं १७वीं शताब्दी का रमणीय का हो। इससे अधिक इस प्रक्षेप के प्रक्षेप पर विचार करना अनावश्यक होगा।

(६) *राव जैतसी रो रासो*—यह रचना कुछ ही दिन हुए प्रकाशित हुई है। इसका रचयिता अज्ञात है।[3] रचना में रचना-काल भी नहीं दिया हुआ है। वर्णित घटना सं० १६०० के लगभग की है, और वर्णन सजीव है, इसलिए अनुमान किया जाता है कि रचना बहुत कुछ समसामयिक होगी। इसमें बीकानेर के महाराजा राव जैतसी (सं० १५८३-१५९८ वि०) तथा हुमायूँ के भाई कामराँ के उस युद्ध का वर्णन हुआ है जिसमें कामराँ को पराजित होकर लौटना पड़ा था।

१ 'राजस्थान में हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज', भाग १, पृ० ७६।

२ 'परमाल रासो', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, भूमिका, पृ० ३-४।

३ 'राजस्थान भारती', सं० नरोत्तमदास स्वामी, भाग ३, अंक २, पृ० ७०।

संपूर्ण रचना में वीर रस का परिपाक हुआ है। छन्द दोहा, मोतीदाम तथा छप्पय हैं। इ
९० छन्दों में ही रचना समाप्त हुई है। भाषा डिंगल है।

(७) विजय पाल रासो—इसका रचयिता नल्लसिंह भाट है। लेखक का प्रामाणिक इति
प्राप्त नहीं है। रचना में कहा गया है कि लेखक विजयगढ़ (करौली राज्य) के यदुवंशी शा
विजयपाल का आश्रित था,[१] इसलिए वह सं० ११०० के आसपास की होनी चाहिए। किन्तु
रचना सं० १६६० के बाद की ही हो सकती है क्योंकि इसमें तोपों तक का उल्लेख हुआ है। इ
विषय विजयपाल की दिग्विजय की कथा है। इसका मुख्य रस वीर है। रचना पूरी प्राप्त नहीं हुई
इसके केवल ४२ छन्द प्राप्त हुए हैं।[२]

(८) राम रासो—इसके रचयिता माधवदास चारण हैं। इसका रचना काल सं० १६७५ है
इसका विषय राम का चरित्र तथा गुण वर्णन है। इसमें विविध छन्दों का प्रयोग हुआ है। बीच-
में गीत भी हैं। ग्रंथ में कुल लगभग १६०० छन्द हैं।

(९) राणा रासो—यह दयाल कवि की रचना है, जिनका पूरा नाम दयाराम कहा जाता
रचना में समय नहीं दिया हुआ है। किन्तु उसकी एक प्रति सं० १९४४ की मिली है, जो
की सं० १६७५ की हस्तलिखित प्रति की प्रतिलिपि बताई गई है।[३] इसलिए इस ग्रंथ की र
सं० १६७५ में या उसके कुछ ही पूर्व हुई होगी। सं० १९४४ की प्रति में महाराजा जय
(सं० १७३७-१७५५) तक का वर्णन है। संभव है कि ये वर्णन बाद में सं० १६७५ की प्रति में हा
में लिखकर किसी के द्वारा बढ़ाए गए हों और प्रतिलिपि में उतार लिए गए हों। इसमें अन्
एक छन्द है जो इस प्रकार है :—

सवे सवे करन को रान मान के पाइ।
चिंता उर उपजे नहीं दरसन ही दुख जाय॥[४]

जिससे यह प्रमाणित है कि कवि कर्णसिंह का आश्रित था।

इस रासो में सीसोदिया वंश का इतिहास दिया गया है और उस वंश के मुख्य राजाओं
कुंभा, उदय सिंह, प्रतापसिंह तथा अमर सिंह के युद्धादि का वर्णन विस्तार से किया गया है। इ
रसावला, विराज, साटक—शार्दूल विक्रीडित—आदि विविध छन्दों का प्रयोग किया गया है। इस
कुल छन्द-संख्या ८७५ है।

(१०) रतनरासो—इसके रचयिता कुंभकर्ण हैं। इसका रचना काल सं० १६७५ तथा १६८
बीच अनुमान किया जाता है।[५] इसमें रतलाम के महाराजा रतनसिंह का चरित्र वर्णित है। रच
साधारण प्रतीत होती है। इसमें विविध प्रकार के छन्दों का प्रयोग हुआ है।

(११) कायम रासो—इसके रचयिता न्यामत खाँ जान कवि हैं[६], जो स्वरचित कथा सा
के लिए हमारे साहित्य के इतिहास में प्रसिद्ध हैं। यह रचना उन्होंने सं० १६९१ में की थी :—

[१] 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', मोतीलाल मेनारिया', पृ० ८३।

[२] दे० मुंशी देवीप्रसाद द्वारा सुसंपादित 'कविरत्न माला' भाग १।

[३] 'हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का खोज विवरण', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १९०१, संख्या

[४] 'राजस्थान में हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज', भाग १, पृ० ११९।

[५] वही, पृ० ११९।

[६] दे० 'राजस्थान भारती', भाग ३, अङ्क ३-४, पृ० ८३ तथा 'राजस्थान में हिंदी हस्तलिखित
की खोज', भाग ४, पृ० २२३।

[७] 'कायम रासो', राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर।

सोरह से पूवयानवे अब कियो हुए जान।

किन्तु इस तिथि के बाद की सं० १७१० तक की कुछ घटनाओं का उल्लेख, इसमें हुआ है। इसके बाद भी ये बहुत दिनों तक जीवित रहे थे। ऐसा लगता है कि अपने जीवन-काल में ही बाद की घटनाओं का भी उन्होंने इसमें समावेश कर दिया।

इसका विषय कायम खानी वंश का इतिहास है, जिसमें अलफ खाँ का चरित्र विस्तृत रूप से दिया हुआ है। कायम खाँ उनके वह पूर्वपुरुष जिनके नाम पर उनका वंश कायम खानी कहाने लगा। ऐतिहासिक दृष्टि से यह रचना महत्व की है। इसमें इतिवृत्त की प्रधानता है।

(१२) शत्रुसाल रासो—इसके रचयिता बूँदी के राव डूँगरसी हैं, जिन्होंने इसे सं० १७१० के लगभग रचा होगा, ऐसा अनुमान किया जाता है। इसमें बूँदी के राव शत्रुसाल का इतिवृत्त है जो वीर रस प्रधान है। इसकी कुल छन्द-संख्या ५०० के लगभग है। कहा गया है कि इसकी भाषा-शैली 'पृथ्वीराज रासो' का अनुकरण करती है।[1]

(१३) मांकण रासो—यह रचना का ह कीर्तिसुन्दर की है और स० १७५७ की रची हुई है।[2] यह विनोदात्मक है, और अपने विषय वैशिष्ट्य के कारण उल्लेखनीय है। कुल केवल ३९ छंद इस रचना में हैं, किन्तु यह पाँच विविध छन्दों में रची गई है।

(१४) सगत सिंह रासो—इसके रचयिता गिरधर चारण हैं। इसका रचना-काल अज्ञात है। श्री मोतीलाल मेनारिया के अनुसार इसका रचना काल स० १७२० के लगभग है।[3] किन्तु श्री अगर चन्द नाहटा के अनुसार यह स० १७५५ के बाद की रचना है।[4] इसमें राणा प्रताप सिंह के भाई शक्तसिंह तथा उनके वंशजों का चरित्र है। इसका मुख्य रस वीर है। यह रचना भी विविध छन्दों में की गई है। इसकी कुल छद-संख्या ९४३ है।

(१५) हम्मीर रासो—यह रचना जोधराज की है, और सं० १७९५ की है।[5] इसमें हम्मीर का वीर चरित्र विशदता के साथ वर्णित हुआ है। हम्मीर पर एक संस्कृत रचना सं० १४६० के लगभग रचित नयचन्द्र सूरि कृत 'हम्मीर महाकाव्य' है, जो प्राय ऐतिहासिक मानी गई है। प्रस्तुत रचना में अधिकतर उसका आधार ग्रहण किया गया है, किन्तु अनैतिहासिक बातें भी मिला दी गई हैं। इसमें हम्मीर का जन्म स० ११४१ में होना बताया है, और हम्मीर के आत्मघात करने के अनन्तर अलाउद्दीन के द्वारा समुद्र में कूद कर प्राण देने का उल्लेख है, जो इतिहास-सम्मत नहीं है। इसका मुख्य रस वीर है, और यह विविध छन्दों में प्रस्तुत किया गया है। इसकी छन्द-संख्या लगभग १००० है।

(१६) खुमाण रासो—इसके रचयिता दलपत विजय हैं, जो दौलत विजय भी कहे जाते हैं। यह एक प्राचीन रचना मानी जाती रही है। अनुमान किया जाता रहा है कि यह खुमाण (सं० ८००-८९० वि०) के समकालीन उनके किसी आश्रित कवि की रचना रही होगी।[6] किंतु इधर इसकी जो प्रतियाँ मिली हैं, उनमें राणा संग्रामसिंह द्वितीय (सं० १७६७-९०) तक का उल्लेख है, इसलिए यह

[1] श्री मोतीलाल मेनारिया 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', पृ० १५८।
[2] 'राजस्थान भारती', भाग ३, अंक ३-४, पृ० १००।
[3] श्री मोतीलाल मेनारिया : 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', पृ० १६०।
[4] 'राजस्थान में हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथों की खोज', भाग ३, पृ० १०७।
[5] 'हम्मीर रासो', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, छंद ९६८।
[6] डॉ० श्याम सुन्दर दास 'हिन्दी भाषा का इतिहास', पृष्ठ १२३।

रचना अपने इस समय के रूप में अठारहवीं शताब्दी वि० के अन्त की प्रतीत होती है।[1] अन्य साक्ष्यों की सहायता से भी दलपति विजय का समय अठारहवीं शताब्दी निश्चित किया गया है।[2]

इसका विषय मेवाड़ के सूर्य वंश का इतिवृत्त है :—

कवि दीजे कमला कला जौं उण कवित जुगत्ति।
सूरजि वंस तणो सुजस बरणन करूं विगत्ति[3] ॥४॥

इस प्रकार वंश के नाम से लिखे गए रासो के उदाहरण हमें ऊपर भी मिल चुके हैं—यथा: 'कायम रासा', इसलिए कुछ आश्चर्य नहीं कि 'खुमाण रासो' केवल खुमाण के चरित को लेकर नहीं, वरन् उनके वंश के इतिहास को लेकर लिखा गया हो।

यह ग्रन्थ विविध छन्दों में प्रस्तुत किया गया है, और कविता की दृष्टि से भी सरस है।

(१७) रासा भगवंत सिंह का—इसके लेखक सदानन्द हैं।[4] कृति में रचना-काल नहीं *दिया हुआ है*, किंतु इसमें सं० १७९७ के एक युद्ध का वर्णन है :—

संवत सत्रह सत्तानवें कार्तिक मंगलवारा।
सित नौमी संग्राम भी विदित सकल संसारा॥

इसलिए इसकी रचना इस तिथि के कुछ बाद की होनी चाहिए। इसमें भगवंत सिंह खीची का चरित्र वर्णित हुआ है। इसका मुख्य रस वीर है। यद्यपि रचना केवल १०४ छन्दों की है, किंतु इसमें छन्द वैविध्य है।

(१८) करहिया को रायसो—इसके रचयिता गुलाब कवि हैं, जिन्होंने इसकी रचना सं० १८३४ वि० में की थी।[5] इसमें करहिया के परमारों तथा भरतपुर के जवाहरसिंह के बीच सं० १८३४ में हुए युद्ध का वर्णन है। इसका रस वीर है। यह रचना भी विविध छन्दों में प्रस्तुत की गई है।

(१९) रासा भैया बहादुर सिंह का—इसके रचयिता शिवनाथ हैं। इसका रचना-काल सं० १८५३ के कुछ ही बाद ज्ञात होता है, क्यों कि इसमें सं० १८५३ की एक घटना का उल्लेख है।[6] इसमें बलरामपुर के शासक भैया बहादुर सिंह का चरित्र वर्णित हुआ है। मुख्य रस वीर है। इसमें भी विविध छन्दों का प्रयोग हुआ है।

(२०) रायसो—यह उपर्युक्त शिवनाथ की एक अन्य रचना है।[7] इसमें रचना काल नहीं दिया हुआ है। किन्तु उपर्युक्त रचना सं० १८५३ कुछ ही बाद की है, इसलिए यह भी उसी समय के *लगभग की* होगी। इसमें धारा के महाराजा जसवंत सिंह तथा रीवां के महाराजा अजीतसिंह का युद्ध वर्णित है। इसका मुख्य रस वीर है। इसमें भी विविध छन्दों का प्रयोग हुआ है।

(२१) हम्मीर रासो—इसके रचयिता महेश कवि हैं।[8] रचना-काल अज्ञात है। इसकी प्राप्त प्रतिलिपि सं० १८६१ की है। इसका विषय भी वही है जो जोधराज की इसी नाम की रचना का है। प्रधान रस वीर है। यह रचना विविध प्रकार के लगभग ९०० छन्दों में समाप्त हुई है।

[1] श्री मोतीलाल मेनारिया : 'खुमाण रासो', नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सं० २००९, पृ० ३५४।
[2] वही।
[3] 'राजस्थान में हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज', भाग ३, पृ० ८२।
[4] दे० नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ५, पृ० ११४-१३१।
[5] दे० वही, भाग, १०, पृ० २०८।
[6] 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का खोज विवरण', काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९२०-२२, संख्या १८९
[7] वही।
[8] वही, १९०१, संख्या ६१।

(२२) कलियुग रासो—यह रचना अलि रसिक गोविन्द की है।[1] इसका रचना-काल सं० १८६५ है। इसमें कलियुग का प्रभाव वर्णित है। यह रचना लगभग ७० छन्दों में समाप्त हुई है। उद्धृत अंशों में केवल मनहरण कवित्त छन्द मिलता है। असम्भव नहीं कि पूरी रचना मनहरण कवित्त छन्द में हो। यदि ऐसा ही हो तो यह रासो की छन्द वविध्य परक परम्परा की एक अन्तिम रचना प्रतीत होती है, क्योंकि इसमें छन्द-वैविध्य का आग्रह नहीं है। हो सकता है कि इस समय रासो-परम्परा की छन्द-वविध्य सम्बन्धी आवश्यकता विस्मृत हो चुकी हो, और 'रासो' शब्द एक उत्कृष्ट काव्य मात्र का पर्याय समझा जाने लगा हो।

परिणाम

अब हम रासो काव्यधारा के विषय में कुछ परिणाम सुगमता से निकाल सकते हैं :—

(१) रास तथा रासो नामों में प्रायः कोई भेद नहीं है, दोनों नाम एक ही अर्थ में और कभी-कभी साथ-साथ एक ही रचना में प्रयुक्त हुए हैं। यह धारणा निराधार है कि रास कोमल भावनाओं का परिचायक रहा है और रासो युद्धादि सम्बन्धी कठोर भावों का। यदि देखा जाय तो अनेक प्रकार के विषय रास और रासो द्वारा अभिहित काव्यों के वर्ण्य बने हैं।

(२) रासो के अन्तर्गत प्रबन्ध की दो विभिन्न परंपराएँ आती हैं: एक तो गीत-नृत्य-परक है और दूसरी छन्द-वैविध्य-परक। दोनों परंपराओं को मिलाया नहीं जा सकता है।

(३) गीत-नृत्य-परक परंपरा की रचनाएँ प्रायः आकार में छोटी हैं, क्योंकि उन्हें गाकर सुनाने के लिए स्मरण रखना पड़ता था, जबकि छन्द-वैविध्य-परक परंपरा में रचनाएँ छोटे-बड़े सभी आकारों की हैं।

(४) गीत-नृत्य-परक परंपरा का प्रचार जैन धर्मावलम्बियों में अधिक रहा है। उनके रचे हुए प्रायः समस्त रासो इसी परंपरा में हैं। दूसरी परंपरा का प्रचार जैनेतर समाज में अधिक रहा है।

(५) गीत-नृत्य-परक रासो रचनाएँ प्रायः पश्चिमी राजस्थान और गुजरात में लिखी गईं, जबकि छन्द-वैविध्य-परक रासों की रचना प्रायः पूर्वीय राजस्थान तथा शेष हिंदी प्रदेश में हुई।

(६) काव्य का दृष्टिकोण दूसरी ही परंपरा में प्रधान रहा, प्रथम में नहीं और इसीलिए शुद्ध साहित्य की दृष्टि से दूसरी परंपरा प्रथम की अपेक्षा अधिक महत्व की है।

उद्भव

इन दोनों परंपराओं का उद्भव किस प्रकार हुआ होगा, इस पर भी हमें संक्षेप में विचार कर लेना चाहिए।

रासक एक अति प्राचीन भारतीय नृत्य रहा है। इसको लास्य का एक भेद मानते रहे हैं। शारदातनय (सं० १२२५-१३०० वि० के लगभग) ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भाव प्रकाशन' में लिखा है कि लास्य के चार भेद होते हैं: (१) शृंखला, (२) लता, (३) पिंडी तथा (४) भेद्यक, और इनमें से लता के पुनः तीन भेद होते हैं: (१) दण्ड रासक, (२) मण्डल रासक तथा (३) नाट्य रासक।[2] संभवतः इसी 'नाट्य रासक' से उस नाम के उप रूपक की उत्पत्ति हुई होगी, क्योंकि शारदातनय ने 'नाट्य रासक' उप रूपक में रागों के साथ उपर्युक्त शृंखला, लता, पिंडी तथा भेद्यक नृत्यों का प्रयोग भी बतलाया है।[3]

[1] 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का खोज विवरण', १९०९-११, संख्या २६३।
[2] भावप्रकाशन, गायकवाड़ ओरियन्टल सीरीज, बड़ौदा, पृ० २९०।
[3] वही।

ऐसा प्रतीत होता है कि यही नाट्य रासक उप रूपक नाटकीय संकेतों और उसके कुछ अन्य तत्वों से विरहित होकर गीत-नृत्य-परक रास काव्यरूप में ढल गया। इस परंपरा की रचनाओं में उनके गाए जाने और कभी कभी नृत्य-समन्वित होने का जो उल्लेख मिलता है, तथा 'उपदेश रसायन' में ऊपर हमने देखा है, वह इस उद्भव की ओर स्पष्ट संकेत करता है।

दूसरी परंपरा का उद्भव किंचित् भिन्न है। उसकी कल्पना छन्द मूलक प्रतीत होती है। अपभ्रंश के प्रायः सभी छन्द-निरूपकों ने रासा नाम के छन्द के लक्षण बताए हैं और दो ने रासक तथा रासाबन्ध नाम से एक काव्यरूप का भी लक्षण बताया है। ये दो छन्द निरूपक हैं विरहाक तथा स्वयंभू।

विरहाक ने लिखा है[1] :—

अडिल्लाहिँ दुवहएहिँ व मत्तारड्डाहि तहअ ढोसाहिँ।
बहुएहिँ जो रइज्जइ सो भण्णइ रासओ णाम॥

अर्थात् जिसमें बहुत से अडिल्ला, दोहा, मात्रारड्डा और ढोसा छन्द पाये जाते हैं, ऐसी रचना रासक कहलाती है।

स्वयभू ने लिखा है[2] —

घत्ता छड्डणिआहिँ पद्धडिआ सु अण्ण रूएहिं।
रासा बन्धो कव्वे जणमण अहिरामो होइ॥

अर्थात् काव्य में रासाबन्ध अपने घता, छप्पय, पद्धडी तथा अन्य रूपकों के कारण जनमन-अभिराम होता है।

छन्द-वैविध्य-परक रास-परंपरा अन्य काव्योचित गुणों के साथ अपने इसी छन्द-वैविध्य को लेकर आई और उपर्युक्त गीत नृत्य-परक परंपरा से अलग विकसित हुई। अपनी इसी रासकता का उल्लेख 'संदेश रासक' करता है जब वह कहता है[3] :—

कह बहु रूवि णिबद्धउ रासउ भासियउ।

और 'पृथ्वीराज रासो' इसी छन्द वैविध्य वाली परंपरा का काव्य है।

—:#:—

[1] 'वृत्त जाति समुच्चय', ४.३८।
[2] 'स्वयंभूच्छंदस्', ८.४९।
[3] 'संदेश रासक', छन्द ४३, भारतीय विद्या भवन, बम्बई।

१८. 'पृथ्वीराज रासो' की वस्तु-कल्पना

'रासो' का कवि पृथ्वीराज के संपूर्ण जीवन की कथा को नहीं कहना चाहता है, वह एक प्रकार से कथा-नायक के जीवन के अन्तिम वर्षों की कथा को ही अपनी रचना का विषय बनाना चाहता है। उसके शेष जीवन का परिचय वह रचना के प्रारम्भ में केवल एक छन्द में देता है, जिसका आशय है कि पृथ्वीराज की कपिल (धूल-धूसरित) केलि अजमेर में हुई थी, उसके रत्त (अनुरागपूर्ण) जीवन के वृत्त साँभर में हुए थे, वह सोमेश्वर का पुत्र बहिलादन (?) का निवासी था और दिल्लीपुर में भासित होने के लिए ही मानों विधाता द्वारा निर्मित हुआ था (१.६)। प्रश्न होता है कि ऐसा उसने क्यों किया। क्या कथा-नायक के पूर्ववर्ती जीवन में कवि को ऐसी कोई घटनाएँ नहीं मिलीं जो महाकाव्य के उपयुक्त होतीं, या कथा-नायक के चरित्र में ऐसे कोई विशेष तत्व नहीं विकसित हुए थे जो महाकाव्य के नायक के लिए आवश्यक होते अथवा नायक के जीवन के उस अंश में रस के वे विशेष तत्व कवि को नहीं मिले जो एक महाकाव्य के लिए आवश्यक होते ?

वस्तुतः ऐसी कोई बात नहीं दिखाई पड़ती है। नायक के पूर्ववर्ती जीवन का चित्रण न करते हुए भी कवि ने उसके सम्बन्ध में स्थान स्थान पर संकेत किए हैं। एक स्थान पर कथा नायक के द्वारा कवि ने कालिंजर के जलमग्न किए जाने की बात कही है (२.१७)। कालिंजर के पराक्रमी चंदेल शासक परमर्दि पर उसकी विजय उस युग की एक असाधारण घटना थी—सं० १२३९ के मदनपुर के शिलालेख में उसकी यह विजय-गाथा अंकित हुई है[1], और जगनिक के नाम से प्रसिद्ध आल्ह खण्ड उसी घटना को अपना वर्ण्य बनाता है। उस युग के अति पराक्रमी शासक गुर्जर-नरेश भीम चौलुक्य पर भी उसने विजय प्राप्त की थी, 'रासो' में यह बार-बार कहा गया है (२.२, ८.४; १२.२२)। इतना ही नहीं, यहाँ तक कहा गया है कि उसने स्वयं भीम के साथ युद्ध करना आवश्यक नहीं समझा था, उस समय वह दूर विश्वाधर में था जब उसके मंत्री (कैमास) ने भीमसेन को परास्त करके बन्दी बनाया था (३.६)। इतिहास से यह घटना कहाँ तक अनुमोदित है, यह एक भिन्न प्रश्न है।[2] किंतु यह तो निश्चित ही है कि कवि के मानस पर पृथ्वीराज की ये असाधारण विजयें भी अंकित थीं। शहाबुद्दीन पर भी उसे जीवन के उस अंश में एक महान् विजय प्राप्त हुई थी, यह कवि ने बार बार कहा है, और इतिहास से भी यह भली भाँति अनुमोदित है। और ये घटनाएँ ऐसी हैं जो अलग-अलग महाकाव्यों का विषय बन सकती थीं—कदाचित् इसी बात

[1] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता' शीर्षक।

[2] दे० वही।

को देखकर पीछे महोबा खंड, भीम-युद्ध खंड तथा शहाबुद्दीन खंड की कल्पना की गई, जो रचना के कुछ पाठों में पाए भी जाते हैं। किंतु पाठ-निर्धारण के प्रसंग में ऊपर हम देख चुके हैं रचना के मूल रूप में ये खंड नहीं हो सकते हैं। इसलिए ऊपर जो प्रश्न उठाया गया है वह बना रहता है।

प्रस्तुत लेखक के विचार से इस प्रश्न का समाधान इस तथ्य में निहित है कि कवि उन घटनाओं को अपने काव्य का वर्ण्य नहीं बनाना चाहता था जो जयानक (?) के 'पृथ्वीराज विजय' महाकाव्य में वर्णित हो चुकी थीं। परमर्दि पर पृथ्वीराज के विजय की कथा उसमें आती थी, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है; भीम के साथ पृथ्वीराज के संघर्ष की कथा उसमे आती थी यह निश्चित तो नहीं है किन्तु दोनों में वैमनस्य था, इस विषय के संकेत उसमें मिलते हैं।[1] शहाबुद्दीन पर पृथ्वीराज को जो विजय प्राप्त हुई थी, वह तो उस काव्य का लक्षित विषय ही था, यह 'रासो' के कवि के तत्सम्बन्धी कथन से प्रमाणित है। उसने कहा है कि पण्डित [जयानक] को पृथ्वीराज का यह आदेश हुआ कि वह शाह शहाबुद्दीन पर उसको प्राप्त हुई विजय का काव्य लिखे।[2] और यह उल्लेख उसने रचना के एक प्रारम्भिक प्रसंग में किया है, जिसके पूर्व काव्य की कोई प्रमुख घटना नहीं आती है। इससे यह प्रकट है कि 'रासो' का कवि उन घटनाओं को अपने काव्य का विषय नहीं बनाना चाहता था जो 'पृथ्वीराज विजय' का विषय बन चुकी थीं, और परिणामतः यह भी प्रकट है कि वह एक सर्वथा मौलिक काव्य की रचना करना चाहता था। वह अपनी प्रतिभा का चमत्कार कथा नायक के जीवन की उन्हीं घटनाओं को अपने महाकाव्य का विषय बनाकर प्रदर्शित करना चाहता था जो पृथ्वीराज के जीवन में शहाबुद्दीन पर प्राप्त विजय के अनन्तर घटित हुई थीं, और यही कारण है कि पूर्ववर्ती घटनाओं का उल्लेख करते हुए भी उसने अपने काव्य को कथा-नायक के जीवन के अन्तिम वर्षों की घटनाओं तक सीमित रक्खा।

इस रचना में चार ही घटनाएँ आती हैं: (१) कँवास-वध, (२) पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध, (३) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज युद्ध तथा (४) शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज अंत। तीसरी और चौथी घटनाएँ सन्निकट रूप से परस्पर सम्बद्ध हैं। कवि कथा-नायक को पराजित नहीं छोड़ना चाहता था, इसलिए उसने अन्तिम घटना की कल्पना की, यह बहुत सम्भव है; उक्त घटना इतिहास अनुमोदित नहीं है, यह तथ्य इसी ओर संकेत करता है। शेष तीन घटनाओं में ऊपर से देखने पर परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं ज्ञात होता है। एक सामान्य धारणा प्रचलित रही है कि जयचन्द ने पृथ्वीराज के वैर के कारण शहाबुद्दीन को पृथ्वीराज पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया था, या कम से कम उस युद्ध में जिसमें पृथ्वीराज पराजित हुआ था उसने शहाबुद्दीन की सहायता की थी, किंतु 'रासो' में इस प्रकार का एक भी उल्लेख नहीं हुआ है। ऐसा उसका कवि बड़ी सुगमता से कर सकता था, किंतु फिर भी उसने नहीं किया है और कदाचित् इसलिए नहीं किया है कि वह प्राप्त इतिहास की उपेक्षा नहीं करना चाहता था। कवास-वध की घटना को भी किसी प्रकार उसने पृथ्वीराज जयचन्द युद्ध अथवा शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज युद्ध से सम्बन्धित नहीं किया है, यद्यपि यह भी असम्भव नहीं था: 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह' में संकलित पृथ्वीराज-प्रबन्ध में दिखाया गया है कि कँवास के वध का जो प्रयत्न पृथ्वीराज ने किया था उसमें वह अकृतकार्य रहा: तदनन्तर वध के इसी प्रयत्न से रुष्ट होकर कँवास ने शहाबुद्दीन से वह आक्रमण कराया, और प्रच्छन्न रूप से उस युद्ध में उसकी सहायता की जिसमें पृथ्वीराज का पराभव हुआ, और अन्त तक उसने विश्वासघात करके

[1] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता' शीर्षक।
[2] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज विजय और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।

पृथ्वीराज का वध भी कराया।[१] किंतु 'रासो' के कवि ने इस प्रकार की कोई कल्पना नहीं की है। कदाचित् प्राप्त इतिहास में इस प्रकार की कोई बात न पाकर ही उसने उपर्युक्त प्रकार की कोई कल्पना नहीं की। फिर भी यह न समझना चाहिए कि 'रासो' के कवि का ध्यान इस विषय पर नहीं था, अथवा वह केवल एक चरित लिख रहा था, जिसमें एक दूसरे से सर्वथा स्वतन्त्र घटनाओं को भी स्थान मिल सकता था। उसने इन तीनों घटनाओं को अपनी सरस कल्पना से जिस प्रकार सूत्रित करने का प्रयत्न किया है, वह दर्शनीय है।

कँवास-वध और पृथ्वीराज जयचन्द युद्ध में जो सम्बन्ध हीनता रहती है, वह उसका परिहार एक कथा सूत्र का विकास कर करता है। कवि कहता है कि कैंवास-वध की घटना का समाचार जब उसकी विधवा स्त्री को मिलता है, वह चन्द से मृत पति का शव दिलाने का अनुरोध करती है, और चन्द जब पृथ्वीराज से इस विषय का अनुरोध करता है, वह बड़े आग्रह के अनंतर इस शर्त पर शव के दिए जाने की स्वीकृति देता है कि चन्द उसे छद्म वेश में कन्नौज ले जाएगा (३.३७-३९)। इस प्रकार कवि कैंवास-वध को प्रासंगिक कथा को भी मुख्य या आधिकारिक कथा का एक उपयोगी अंग बना देता है।

पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध और शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अंतिम युद्ध में जो सम्बन्ध हीनता रहती है, उसका परिहार भी वह एक कथा-सूत्र का विकास कर करता है। किन्तु यह विस्तार अत्यन्त स्वाभाविक और सरस है। प्रस्तुत संस्करण के सर्ग ९ में कवि कहता है कि जयचन्द से युद्ध के अनंतर पृथ्वीराज संयोगिता को दिल्ली लाकर केलि विलास में पड़ गया और अपनी शक्ति को उसने नष्ट कर दिया; उसे इस प्रौढ रति के समक्ष दिन और रात की सुधि नहीं रहती थी, परिणाम स्वरूप उसके गुरुजन, बांधव, भृत्य और प्रजा में असन्तोष फैल गया। संयोगिता ने पृथ्वीराज को इस प्रकार वश में कर रक्खा था कि उसके लिए संयोगिता को छोड़ कर कहीं भी जाना असम्भव हो गया था: ऋतुएँ आती थीं और चली जाती थीं और संयोगिता के प्रणयानुरोधों के कारण पृथ्वीराज उसे छोड़ कर राजभवन से निकल तक नहीं पाता था। प्रस्तुत संस्करण के सर्ग १० में वह इस अवस्था से चन्द तथा गुरुराज के उद्बोधनों से मुक्त होता है; किन्तु उसकी मोह निद्रा जब खुलती है, शहाबुद्दीन उसके सिर पर पहुँचा हुआ होता है (१०.२०—२४)। संयोगिता अंतिम बार विलास-मय जीवन की रमणीयता की ओर उसका ध्यान आकृष्ट कर उसे रोकना चाहती है, किन्तु पृथ्वीराज फिर नहीं रुकता है (१०.२५-२६)। फिर भी, इस मोह-निद्रा का जो अनिष्टकारी परिणाम हो सकता था, वह हुए बिना नहीं रहता है, और शहाबुद्दीन के साथ अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज पराजित होता है (सर्ग ११)।

उपर्युक्त के अतिरिक्त भी कथा के अन्त में कथा-नायक के अन्त के साथ कवि कैंवास वध तथा संयोगिता के केलि-विलास का एक ऐसा सामंजस्य प्रस्तुत करता है जो अत्यन्त सार-गर्भित है। यह चन्द के मुख से कहलाए गए एक कथन के रूप में है —

प्रथमि राज कमान बांन द्विज सुद्धि गहहि कर।
जिन विसमउ मर करहि करहि सुभपत्ति अप्पु सर॥
जि कछु किअउ कयमास किअउ अप्पनउ सु पायउ।
सोइ समरी नरेसु सुद्धि ज भम्मर पुर आयउ।
विधिना विधान मेटइ कवन दीन मान दिन पाइयइ।
सर एक कोटि समरि धनी सपहि समुद समाइयइ॥ (१२.४६)

[१] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह और पृथ्वीराज रासो' शीर्षक।

चंद यहाँ यह कहना चाहता है "जिस विलासिता के गर्त में गिरने के कारण कैंवास की दुर्गति हुई—और तुम्हारे द्वारा हुई—उसी विलासता-गर्त में तुम स्वयं जानते-बूझते गिरे, तो अब उसके परिणाम से कैसे बच सकते हो? यह गति तो तुम्हारी होनी ही है जो कैंवास की हुई; इस अवस्था में तुम शत्रु के भी प्राण ले सको यही बहुत है।" जैसा हम आगे देखेंगे यह चंद ही जैसा पात्र था जिसके द्वारा इस प्रकार की उक्ति कवि प्रस्तुत करा सकता था। सम्पूर्ण कथा चन्द की उपर्युक्त उक्ति की पृष्ठभूमि में कितनी संगतिपूर्ण और सुसंबद्ध लगने लगती है, यहाँ दर्शनीय इतना ही है। एक अकुशल कवि जिस प्रभाव को प्रचुर प्रयासों के बाद भी कदाचित् ही संपादित कर सकता था, 'रासो' का कुशल कवि एक सहज उक्ति मात्र से संपादित कर देता है, यह उसके सच्चे कलाकार होने का एक ज्वलंत प्रमाण है।

विभिन्न कथाओं के विकास में भी उसकी यह प्रबन्ध-कुशलता देखी जा सकती है। समस्त रचना में एक भी प्रसंग ऐसा नहीं मिलता है जो विषयान्तर उपस्थित करता हो, न कोई अनावश्यक वर्णन-विस्तार मिलता है, यहाँ तक कि एक-एक छंद और एक-एक उक्ति अपने-अपने स्थान पर अनिवार्य लगते हैं। ऐसा लगता है जैसे सम्पूर्ण रचना एक सुनिश्चित योजना के सहारे खड़ी की गई हो, जिसमें उसके हर एक अंग और हर एक अंश का स्थान और कार्य निर्धारित हो। इतना सुगठित प्रबन्ध, कहना नहीं होगा, समूचे प्राचीन और मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में दुर्लभ है।

'रासो' की सम्पूर्ण कथा इस प्रकार सम्यक् रूप से सर्गों में विभाजित है कि वह भी उसके कवि का प्रबन्ध-कौशल सूचित करती है, लघुतम पाठ में सर्ग-विभाजन नहीं है; किन्तु उसमें छंदों की क्रम-संख्या तक नहीं है, इसलिए 'रासो' के मूल रूप में भी स्थिति यही रही होगी यह कल्पना करना उचित न होगा। प्रस्तुत संस्करण का सर्ग-विभाजन 'रासो' के समस्त शेष पाठों के अनुसार किया गया है—केवल कथा की भूमिका का छंद मंगलाचरण के साथ रक्खा गया है, जो शेष पाठों में किसी स्वतन्त्र सर्ग में है, और पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध उसकी प्रबन्ध-कल्पना के अनुसार पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध में विभक्त किया जाकर दो सर्गों में रक्खा गया है, जो लघु में तीन सर्गों में तथा शेष पाठों में प्रायः एक ही सर्ग में आता है। इन सर्गों की कथाएँ परस्पर इतनी अलग-अलग हो जाती हैं, कि यह मानना असम्भव हो जाता है कि 'रासो' के कवि के मन में कोई सर्ग-कल्पना नहीं थी। सर्गों के नामों के सम्बन्ध में अवश्य लघु, मध्यम तथा वृहत् पाठों में प्रायः कोई साम्य नहीं है; और सर्गों के बीच-बीच में प्रक्षिप्त कथाओं के आने के कारण नाम-परिवर्तन होता रहा होगा, यह आसानी से समझा जा सकता है। अतः प्रस्तुत संस्करण के लिए सर्गों के नामों या शीर्षकों की कल्पना वर्णित कथा को ध्यान में रखते हुए एक प्रकार से नए सिरे से करनी पड़ी है।

—:*:—

१९. 'पृथ्वीराज रासो' की चरित्र कल्पना

'रासो' की चरित्र-कल्पना ही उसकी सबसे बड़ी विशेषता है—जैसा कि वह प्रत्येक महाकाव्य की हुआ करती है। एक प्रकार से उसके सभी पात्र असामान्य वीर हैं, किन्तु प्रायः उनके अपने अपने व्यक्तित्व हैं, जिन्हें नीचे स्पष्ट करने का यत्न किया जा रहा है।

पृथ्वीराज

पृथ्वीराज इस महाकाव्य का नायक है। उसके समस्त कार्य धर्म-बुद्धि से होते हैं। कथा के आरम्भ में ही हम देखते हैं कि वह धीर और विनयशील है और गुरुजनों के समक्ष संकोच करता है। जब जयचन्द के दूत उसकी सभा में राजसूय में सम्मिलित होने का जयचन्द का निमन्त्रण लेकर आते हैं, गुरुजनों को देख कर वह वीर सकुच जाता है और उत्तर नहीं देता है, उत्तर उसका एक गुरुजन गोविंद राज देता है:—

बोलइ न वयण प्रथिराज ताहि।
सकरिउ सिघ गुरजनह चाहि॥ (२. ३. ११. २२)

इसी प्रकार चन्द जब उसे 'अयान' कहते हुए एक स्थान पर संबोधित करता है, वह इससे तनिक भी बुरा नहीं मानता है:—

बोलउ चन्द अयान त्रिप मति मंडन समरथ्थ।
जउ मुक्कइ सब सध्धिभनु तउ कत लिग्गे सथ्थ॥ (६.२)

चन्द को तो जैसे उसने पूरी स्वतन्त्रता दे रक्खी है कि वह जब चाहे जो कुछ कहे, यह हम चंद के चरित्र का निरीक्षण करते हुए देखेंगे।

जयचन्द से उसका संघर्ष उसकी सौन्दर्य-लिप्सा के कारण नहीं हुआ है, ऐसा सामान्यतः समझा जाता है। ऐसा नहीं है कि उसने संयोगिता के रूप-लावण्य की प्रशंसा सुनी हो और वह कन्नौज पर चढ़ दौड़ा हो; एक दीर्घ मानसिक संघर्ष के बाद अपना कर्त्तव्य समझकर ही उसने यह किया है। और यह समझ लेना उसके संपूर्ण चरित्र को समझने के लिए नितान्त आवश्यक है: कर्त्तव्य के सामने प्राणों की चिन्ता उसने कभी नहीं की है।

'रासो' का कवि कहता है कि जयचन्द की पुत्री संयोगिता ने पृथ्वीराज को वरण करने के लिए व्रत लिया था, यह उससे किसी ने, संभवतः उसके चर ने, कन्नौज के समाचार देते हुए कहा:—

संयोगि जोग वर तुम्ह आज।
व्रत लिअव वरण प्रथीराज राज॥ (२.१०)

तिहि जुत्तिय सुनि गम इतउ तात बचन तजि काज।
कइ बहि गंगहि संचरइ कइ पानि गहई प्रथीराज ॥ (२.११)

चर की बातें सुनकर उसे आश्चर्य होता है, किन्तु उसे विश्वास हो जाता है कि संयोगिता हृदय से उसपर अनुरक्त है और राजा (जयचन्द) उसे अन्य से ब्याहना चाहता है, यद्यपि दैव को कुछ और ही मंजूर है :—

सुनत राइ अचरिज भयउ हियइ मन्यउ अनुराउ।
नृप वर अनि उर अंगमइ दैवहि अवर स भाउ ॥ (२.१२)

जब से उसने यह सुना है, और फिर यह सुना है कि उसकी स्वर्ण-प्रतिमा दरबान के स्थान पर जयचन्द ने स्थापित की है, उसका चित्त अशान्त रहने लगता है। कैंवास-कर्नाटी प्रणय और उनके वध की घटना उसकी इसी मानसिक अशांति के बीच पड़ती है। कवि ने कहा है कि इस मानसिक ताप से जी को बहलाने के लिए वह आखेट में रहने लगा था, राज-काज उसने अपने प्रधान 'अमात्य' कैंवास को सौंप रक्खा था :—

तिहि तव आखेटक भमइ थिर न रहइ चहुवान।
वर प्रधान जुगिगनिपुरह घर रष्षइ परवान ॥ (३.१)

जब कैंवास उसकी इस मानसिक स्थिति में राजभवन के नियमों का उल्लंघन कर उसकी दासी के कक्ष में प्रवेश करता है, तो उसका प्राण गँवाना अवश्यंभावी हो जाता है। असंभव नहीं कि भिन्न मानसिक स्थिति में वह अपने प्रधान 'अमात्य' को, जिसने किसी समय भीम चौलुक्य जैसे उसके प्रचंड शत्रु को पराजित किया था (३.६), इतना कठोर दण्ड न देता।

किन्तु तब तक उसके मानसिक संघर्ष की स्थिति समाप्त हो जाती है; कैंवास-वध के अनन्तर अपने बाल-सहचर चन्द से गले मिलकर वह रोता है, क्योंकि अपने उपहासपूर्ण जीवन का अन्त करने के लिए उसने प्राणोत्सर्ग का संकल्प कर लिया है :—

दोइ कंठ लग्गिय गहन नयनइ जल गल न्हांनु।
अब जीवन वंछिहि अधिक कहि कवि कौन समानु ॥ (३.४०)

इस संकल्प पर उसके वीर सहचर चन्द का आनन्दित होना स्वाभाविक ही है, जब वह जान लेता है कि पृथ्वीराज का संकल्प उसके सिर से गुरुतर तथा उसका जीवन हल्का और सिर [कंधों पर] भारी हो रहा है :—

आनन्दउ कवि चन्दु जिय त्रिय किय संच विचार।
मम गरुअर सिर हरुअ इइ जीवन हरउ सिर भार ॥

और इस संकल्प का समर्थन करते हुए वह कहता है :—

धरि वरु पंगु प्रगट्ट थए धट्ट विहंडिहइं।
इत उपहास विलास न प्रान पमूकिहइं ॥ (३.४३.३-४)

उसकी वीरता के सम्बन्ध में तो अधिक कुछ कहना ही व्यर्थ होगा : उसकी सारी जीवन-गाथा वीरता की अनुपम कथा है। संयोगिता का वरण करके वह चुपचाप कन्नौज से चल नहीं देता है, अपने सहचर चन्द के द्वारा वह घोषित करा देता है कि जयचन्द-पुत्री का परिणय करके जयचन्द से दायज के रूप में वह उससे युद्ध चाहता है:—

सज रिपु ढिल्लियनाथ सो ध्वंसनं जग्गियं आवे।
परणेवं तव पुत्ती युध्धं मंगति भूपनं सोइ ॥ (७.२)

उसके सामंत जब देखते हैं कि युद्ध विषम है और यह सम्भव नहीं है कि कन्नौज में रुक कर युद्ध किया जावे, वे पृथ्वीराज से अनुरोध करते हैं कि वह दिल्ली की दिशा में प्रस्थान करे और

वे सब एक-एक करके जयचन्द की विशाल वाहिनी को रोकें और जिस प्रकार भी सम्भव हो उसे दिल्ली तक सुरक्षित पहुँचा दें। किन्तु पृथ्वीराज इस प्रस्ताव से सहमत नहीं होता है, और कहता है :—

मति घटी सामंत मरण इउ मोहि दिपावहु।
जम चीठी विणु कवन होइ तउ तुमउ बतावहु।
सुग गंजउ भर भीम तास गज्जइ मयमत्ता।
मइ गोरी साहब्बदीन सरवर साहंता।
सुह सरणहि हींदू तुरक तिह सरणागत तुम करहु।
भूमिभट्ट न सूर सामंत हो इतउ बोझ अप्पन धाहु॥ (८.२)

उनके अनेक प्रकार से समझाने पर भी वह उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करता है, जब तक कि उसका बाल-सहचर चन्द इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं करता है (८.५-६)। चन्द के कथन को सुनकर पृथ्वीराज कहता है कि उसका कथन उसके लिए अमिट है :—

मिट्टयउ ण जाइ कहणो वयं कवि चंद सार सा मत।

और तब वह इस प्रस्ताव को स्वीकार करता है।

उसके इस वीर और कर्त्तव्य-सजग जीवन में केवल एक बार शिथिलता आती है—और यह शिथिलता उसकी समस्त जीवन-साधना पर पानी फेर देती है। 'रासो' की यह शृंगार-कथा वास्तव में उसकी सबसे करुण गाथा है। सकुशल दिल्ली पहुँचकर पृथ्वीराज संयोगिता के साथ केलि-विलास में इस प्रकार लिप्त हो जाता है कि अपनी शक्ति को वह नष्ट कर देता है, और उसके मन में केवल एक बात रहती है—वह किस प्रकार संयोगिता को सुख प्रदान करे। परिणाम यह होता है कि उस मानिनी की प्रौढ़ रति में उसे दिनों और रातों का होना-जाना नहीं ज्ञात होता है, और उससे गुरुजन, बांधव, भृत्य तथा प्रजागण उससे खिन्न हो जाते हैं :—

इह विधि विलसि विलास असार सुसार किअ।
यह सुप जोग संजोगि सोइ पृथ्वीराज जिय।
अहनिसि सुध्धि न जानहि मानन्ति प्रौढ़ रति।
गुरु बंधव भृत्य लोइ भई विपरीत गति॥ (९.८)

उसकी यह मोह-निद्रा तब भंग होती है जब उसका बाल-सहचर चन्द राजगुरु के साथ उसे शहाबुद्दीन के होने वाले आक्रमण की सूचना देता है (१०.२२)। और फिर कर्त्तव्य की पुकार के सामने उसे सुन्दरी का मोह रोक नहीं सकता। वह उसी प्रकार अपने कर्त्तव्य में पुनः स्थित हो जाता है जिस प्रकार कोई नट वेष बदल कर आ जाता हो:—

सुनि कग्गद पिट्टउ सुकर धर रप्पइ गुरु भट्ट।
तरकि तोन सजियउ सकिरि जिम वेष छंडि सु नट्ट॥ (१०.२४)

इसके बाद संयोगिता काम-सुख में उसे पुनः प्रवृत्त होने को आमन्त्रित करती है, किन्तु पृथ्वीराज उसके सम्मोहन में नहीं पड़ता और कहता है कि जिस वीर-पत्नी ने उसके बाहुओं की पूजा की थी वह मुग्धा काम की बातें किस प्रकार कर रही है?

सुनि प्रिय प्रिय दिष्यौ वदन किय जिय निर्भय पाय।
बाहु पुज्जउ वाइ तुह कहि स मुग्ध रतिनाथ॥ (१०.२६)

यह संयोगिता से उसकी अन्तिम भेंट है।

शहाबुद्दीन की सेना उसकी सेना से कई गुना बड़ी है, उसके सामंत जयचन्द से युद्ध उसके

युद्ध में प्राय: कट चुके हैं—इसलिए पराजय तो निश्चित है, फिर भी वह वश्यता स्वीकार करने के लिए तयार नहीं होता, और अन्त तक लड़ता है, जब तक कि वह बन्दी नहीं कर लिया जाता है।

बन्दी ही नहीं, अन्धा किए जाने के बाद भी उसकी चोरवृत्ति में कोई अन्तर नहीं पड़ता है. चन्द जब शहाबुद्दीन से मिलता है, तो शहाबुद्दीन कहता है कि अन्धा होने पर भी अपनी वक्रदृष्टि नहीं छोड़ रहा था, इसलिए उसे मारने में रख दिया गया था:—

> चै चंद अन्ध भइ रिस ज कीन।
> धर चक दीठ छंडइ न भीन॥
> विहान थान रषि ज अदृश्यु।
> विरवारि इत्थ करिअ न गह्यु॥ (१२.१९ ९-१२)

किन्तु जीवन के अन्त में वह निराश हो चलता है। चन्द के सजीवन मन्त्र को सुनकर एक बार उसकी नसों में नवजीवन का सचार अवश्य होता है, किन्तु फिर वह निराशा से सिर झुका लेता है:—

> विप्र देह नव तनह सुभग्ग।
> अवि पानि मनु चितह लग्ग।
> पहिचानि चन्दु पर धुनिग सीस।
> सिर नयो नहीं मन भई रीस॥ (१२ ३३ १७ २०)

यह चन्द ही है कि उसने उसका शत्रु से प्रतिशोध लेने के लिए तैयार कर लिया है।

पृथ्वीराज को अंतिम झाँकी बाण सन्धान के पूर्व मिलती है, 'रासो' का कवि कहता है कि इस समय चन्द का मुख चन्द्र का सा हो रहा था और राजा के मन की संधि (शंका) मलिन हो चुकी थी.—

> इलि बलि पानि पविट्ट किय सिंगिनि सर गुन साधि।
> परचि चंद मुष चंद भयु मलिय राय मन सधि॥ (१२ ४७)

इसके बाद तो 'रासो' का कवि इतना ही कहता है शहाबुद्दीन के धरती पर गिरते ही राजा का भी मरण हुआ। किन्तु यहीं पर 'रासो' का अन्त करते हुए वह कहता है कि "देवताओं ने उसके सिर पर पुष्पाजलि छोड़ी, जो धरणी म्लेच्छों से आक्रान्त हो गई थी वह अन नव वधू के समान हँस पड़ी, तृण (शरीर के भौतिक तत्व) तृणों (भौतिक तत्वों) को तथा ज्योति (जीव) ज्योति (परमात्मा) को सप्राप्त हुए".—

> मरन चन्द बरदिया राज पुनि साह हन्यउ सुनि।
> पुह पजलि असमान सीस छोडी त देवनि।
> मेछ अवधित धरणि धरणि नवबीय सुहंसिलग।
> तिनहि तिनहि स जाति जोति जोतिहि सपत्तिग।

कहना नहीं होगा कि पृथ्वीराज के इस अमर चरित्र की कल्पना समूचे हिन्दी साहित्य में अनुपम है, और इसके लिए हमें 'रासो' के कवि का चिरकृतज्ञ होना चाहिए।

सयोगिता

संयोगिता की पहली झाँकी काव्य में एक मनोरम रूप में प्राप्त होती है: वह यवांकुरों को हाथ में लिए मृग वत्सों को चरा रही है, और ऐसी लग रही है मानो उस मानिनी के मिस इन्दु ही [मृग शावकों को] नेत्रों से देख कर आनंदित हो रहा हो, उसकी सखियाँ और सहचरियाँ परस्पर बातें कर रही हैं कि शुभा सयोगिता के सयोग (विवाह) के लिए विधाता ने मानो मन्मथ को ही निर्मित किया होगा:—

अब अंकुर करि पानि चरायत्ति वच्छ मृगु।
मधु मानिनि मिस इदु आनंदइ देषि दृगु।
सहि सहचरि ति चरत परसपर यत्तु किअ।
सुभ संजोगि संजोग जानुइ मनमथ्थ किअ॥ (२ ४)

संयोगिता के इस प्रथम दर्शन में कवि उसे जो 'मानिनी' कहता है, वह प्रसंग सापेक्ष्य नहीं है, बल्कि चरित्र-सापेक्ष्य है—प्रारम्भ में कवि ने संयोगिता का चरित्र ही एक मानिनी के रूप में चित्रित किया है। उसने एक बार पृथ्वीराज को वरण करने का निश्चय कर लिया है (२-१०) तो फिर उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो सकता है। जयचन्द उसको इस निश्चय से विरत करने के लिए दासियाँ नियुक्त करता है (२ १३)। अनेक प्रकार के तर्कों से दासियाँ उसे इस निश्चय से डिगाना चाहती हैं, किन्तु संयोगिता स्पष्ट कहती है कि वह उनकी बातों में नहीं आ सकती है, और उसने संकल्प कर लिया है कि चाहे उसे सौ जन्म ग्रहण करने पड़ें, वह पृथ्वीराज को ही वरण करेगी :—

न मो राजन संवादे न मो गुरुजनागरे।
वरमेकं सम देह अन्यथा पृथिराजए॥ (२ १९)

जयचन्द ने उसके इस हठ पर रुष्ट होकर उसे गंगा तट के एक अन्य आवास में भेज दिया है। वह इसी आवास में रहती है। जब कन्नौज की प्रदक्षिणा के प्रसङ्ग में गंगा-तट पर मछलियों को मोती चुगाते हुए पृथ्वीराज का दूर से उसे प्रथम दर्शन प्राप्त होता है, तत्काल उसे इस नवागतुक के सम्बन्ध में निश्चित रूप से ज्ञात नहीं होता है, किन्तु किसी के मुख से पृथ्वीराज का इस समय नाम सुनते ही उसके शरीर में प्रेम के सात्विक अनुभाव प्रकट हो जाते हैं:—

सुनि श्रव सुन्दरि अम्भ तन स्वेद कंप सुर भंग।
मनु कमलिनि कल मंभरी भ्रमित फिरत तन रंग॥ (६. ११)

यह उसका प्रेमिका का रूप है। उसको इस प्रकार प्रेम कातर देख कर उसकी एक सखी जब उसे सतर्क करती है कि वह इस सम्बन्ध में आगे कदम तभी बढ़ाए जब उसे निश्चय हो जावे कि यह पृथ्वीराज है (६.१२), तब वह रुकती है। पृथ्वीराज का निश्चय कर इसके अनंतर संयोगिता की भेजी हुई एक सखी उसे संयोगिता से मिलाती है, और दोनों का पाणिग्रहण होता है। उसका वरण कर पृथ्वीराज जब जाने लगता है, उसको विदाई का पान देते हुए वह कह उठती है, "संयोगिता की रक्षा करो! योगिनीपुरेश, तुम्हारी जय हो, जय हो! सभी प्रकार से [तुम्हारे जाने के] निषेध का जो तांबूल है, उसे ग्रहण करो।"

पालयतु पंग पुत्रीय जयति जयति योगिनि पुरेसं।
सर्वं विधि निषेधस्य च तबोलस्य समादायं॥ (६.१७)

किन्तु वही प्रेमिका, जिसकी कामाग्नि प्रेमी के पाणि-स्पर्श तथा दर्शन से संदीप्त हो चुकी थी, जिसने प्रेमी के चले जाने पर मन छोटा कर लिया था, जिस प्रकार जल के न रहने पर मछली का हो जाता है (६.२५), बार-बार जिसकी आँखें जाते हुए प्रेमी को देखने के लिए गवाक्षों में जा जाती थीं, जो सखियों के समझाने पर भी चुपचाप उसी प्रकार व्यथित हो रही थी जैसे चातकी पावस को बिताती है, (६.२६) जो अपने विरह-दाह को शीतल करने के लिए शरीर में चन्दन का लेप कर रही थी, जो लज्जापूर्वक अपने नेत्रों को बार-बार अंचल से ढँक रही थी, कि उसकी प्रेमातुरता प्रकट न हो (६.२७), जिसके विरह ताप का निवारण करने में सोम, अमृत और कमल भी व्यर्थ हो रहे थे (६ २८), जब पृथ्वीराज को पुनः आते देखकर यह समझती है कि वह युद्ध से

विमुख होकर अपनी प्रेमिका के पास आ रहा है, सिर पीट लेती है और वह उठती है, "जिस प्रिय जन की ओर लोक की उँगलियाँ उठें, उस प्रियजन से क्या काम !"

जिहि प्रिय तन अंगलि फिरइ तिहिं प्रियजन कहा कज्ज । (-६.३०)

यह संयोगिता का वीराङ्गना का रूप है। सामन्तगण उसे बहुतेरा समझा रहे हैं, और उस मदन-शर से विनष्टा के प्राण एक क्षण के लिए दयित (प्रिय पति) के प्राणों से अभिन्न भी हो रहे हैं, किन्तु उस के नेत्र-प्रवाह उस दिवस की कथा कहते ही रहते हैं :—

मदन सरालति विघट्टा जिमिषि इक्कत प्रान प्रानेन ।
नयन प्रवाहति विवट्टा दिवा कथय कथा ।। (६.३२)

और जब उसे यह विश्वास हो जाता है कि पृथ्वीराज युद्ध में जा रहा है, केवल उसे लेने के लिए आया हुआ है, हर्ष से पूरित होने के कारण उसका गला भर जाता है और वह पृथ्वीराज के साथ घोड़े की पीठ पर जा बैठती है :—

सुन्दरि सोचि समच्छिम गद्द गद्द कंठ भरि ।
दर्षहि प्रान प्रथिराज स संचिय बाहु धरि ।
दिय इय पुट्ठिय भार सुमध्य सुलच्छिनउ ।
करति तुरंग सुरंग स पुच्छित पच्छनउ ॥ (६.३४)

युद्ध के अन्तर्गत हमें उसका पत्नी का स्निग्ध मधुर रूप दिखाई पड़ता है जब प्रथम दिन के युद्ध के अनन्तर रात्रि के आगमन पर तारिकाओं के [हर्ष के] लिए इन्दु का उदय होता है, और नील कमल खिलता है, और नव विरही मिलकर नव स्नेह के नव जल (अश्रु) का कदन करते दिखाई पड़ते हैं। वे आभूषणों को समीप ही पड़ा रहने देते हैं, उन्हें धारण नहीं करते हैं; फिर भी वे परस्पर मिलकर मृदु मंगल मनाते हुए मन में सभी प्रकार के मनोरथ करते हैं :—

पेचाइ कउ उयउ इंदु इंदीवर उइयउ ।
नव विरही नव नेह नव जल नय दद्दयउ ।
भूषन सोभ समीपनि मंडित मंडि तन ।
मिलि मृदु मंगल कीय मनोरथ सव्व मन ।। (६.२२)

किन्तु दिल्ली पहुँच कर यही संयोगिता एकदम परिवर्तित हो जाती है और उसका विलासिनी का यह रूप हमारे सामने आता है (९.१-८), जो पृथ्वीराज के सर्वनाश का कारण होता है : वह *संयोगिता जो किसी समय पृथ्वीराज का वरण करने के लिए ही जन्म ग्रहण करने को उद्यत थी* (२.२१), जीवन की सार्थकता काम-केलि में मानने लगती है; और उस मानिनी की प्रौढ़ रति में पृथ्वीराज भी इस प्रकार दीन और दुनिया को भुला देता है कि उसे दिन-रात की सुधि नहीं रहती है, जिसके परिणाम-स्वरूप उसके गुरु, बांधव, भृत्यादि की गति विपरीत हो जाती है :—

इह विधि विलसि विलास भसार सुसार किय ।
इह सुप जोग संजोगि सोइ प्रथिराज जिय ।
अह निसि सुध्धि न जानहि मानिनि प्रौढ़ रति ।
गुरु बंधव भृत छोह भई विपरीत गति ॥ (९.८)

ऋतुएँ आती हैं और चली जाती हैं, संयोगिता उनमें पृथ्वीराज द्वारा भोगाविष्ट होती रहती है (९.९), उसका प्रिय (पति) कहीं जाने को होता है तो वह ऋतु की रमणीयता का प्रतिपादन करते हुए उसे रोक लेती है (९.१३), वह कह उठती है कि जो तरुणी बाला है, वह निरुत्तपत्र नलिनी के सदृश ऐसी दीन हो रही है कि क्षण भर भी जीवित नहीं रह सकती है; कान्त के जाते ही वह विरह-वारण से अपनी शरीर-वाटिका को ध्वस्त होने देना नहीं गवारा कर सकती है :—

रोमाली घन मीर निम्ब वरये गिरि दंग नारायते ।
पश्चय पीन कुचानि जानि लयला कुंकार धुंकारये ।
शिशिरे सर्वरि वारणे च विरहा मम हृदय विदारये ।
साकंत मृगवध्य सिंघ गमने किं देव उच्चारये ॥ (९.१४)

इसी समय पृथ्वीराज पर शहाबुद्दीन आक्रमण कर देता है । चन्द तथा गुरुराज पृथ्वीराज को उस विलास-निद्रा से जगाते हैं, तब इस संयोगिता का कामिनी रूप प्रकट होता है । जो संयोगिता पृथ्वीराज को कन्नौज के युद्ध में अपनी ओर वापस आता देखकर क्षुब्ध हुई थी, और जिसने कहा था.—

जिहि प्रिय तन अबलि फिरह तिहि प्रियजन वहा कज्ज । (६.३०)

वही इस भयानक स्थिति में जीवन की सार्थकता काम को तुष्ट करने में बताती है । पृथ्वीराज से वह कहती है कि वही घन धन है जिसका भोग किया जा सके, वही सुख सुख है जिसमें काम का आरोह हो, काम-विहीन जीवन में संसार मरण-तुल्य है; प्रतिदिन दिनकर आता है, चन्द्र आता है, दिन होता है, रात होती है, किन्तु मनुष्य का जीवन तो एक दिन समाप्त हो जाता है; धरा यदि पृथ्वीराज की अर्द्धाङ्गिनी है, तो संयोगिता भी तो है, उसका अर्द्धाङ्ग होना भी उसे सार्थक करना चाहिए; हंस और हंसिनी अन्त तक साथ रहते हैं, इतना ही नहीं, सर और पंकज जैसे जड पदार्थ भी अन्त तक साथ निभाते हैं :—

कहु सु प्रियह पदमिनिय कंत धनु धरउ तउ न धनु ।
सुष सुषमार आरोहु भसर संसार मरन मन ।
दिन दिनियर दिन चन्दु रयनि दिन दिन ही भावहि ।
जंतु जंतु इह रमनि सवन रूगनि समझावहि ।
अरधंग धरा अरधंग हम अरधगी अरधंग भरि ।
जस हंस हस तह हंसिनी [सर सुकइ] पंकज न परि ॥ (१०.२५)

पृथ्वीराज इस पर जी कड़ाकर ठीक ही कहता है कि उसे आश्चर्य है कि जिसने उसके बाहुओं की पूजा की थी, वह मुग्धा आज रतिनाथ की बातें कर रही है :—

सुनि प्रिय प्रिय हिस्यौ वदन किय जिय निर्भय पाथ ।
बाहु पुजउ वरइ तुइ कहिस मुग्ध रतिनाथ ॥ (१०.२६)

और 'रासो' का कवि उचित ही इस प्रसंग के बाद एक बार भी इस नारी का स्मरण नहीं करता है ।

चन्द

चन्द का प्रथम आगमन कथा में कँवास-वध के अनन्तर होता है । आखेट से लौटकर जब पृथ्वीराज सभा बुलाता है, चन्द उसमें उपस्थित होकर राजा को आशीर्वाद देता है (३.१९) । इसके पूर्व केवल यह कथन आता है कि कँवास-वध की सारी घटना सरस्वती ने उसको स्वप्न में सुना दी थी (३.१४) । इस प्रथम दर्शन में ही चन्द एक निर्भीक व्यक्ति ज्ञात होता है; कवि कहता कि कँवास-वध के बारे में चन्द से पृथ्वीराज का प्रश्न करना और उससे उत्तर के लिए हठ करना फणीन्द्र के मुख में उँगली देने के सदृश था :—

हठि लगाइ चहुआन सिर अंगुलि मुषह फणिंदु ।
तिहु पुरि तुम मति संचरह सु कहे बनइ कवि चंदु ॥ (३.२५)

और चन्द अपने प्राणों की बाजी लगा कर उसी प्रकार उत्तर भी देता है :—

सेस सिरप्परि सूर तर जइ पुच्छइ प्रिय एस ।
दोहु बांकि मदन मरइ कहइ तउ कन्दु कहेस ॥ (३.२६)

इस दृष्टि से देखने पर ज्ञात होगा कि उसे काव्य में जो 'चन्ड चन्द' (५.१३) या 'कविचंदिय (३.१९) कहा गया है, वह सर्वथा तथ्यपूर्ण है। यह उसी का साहस था और पृथ्वीराज ने उसी को जैसे इसका अधिकार भी दे रखा था कि पृथ्वीराज जैसे उग्र स्वभाव के शासक को जिस प्रकार वह चाहे मार्ग पर ला सकता था और कथा भर में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं; यथा :

पृथ्वीराज को दिल्ली की ओर मोड़ने में सामन्तों के अकृतकार्य होने पर इस कार्य में वह कृतकार्य होता है, और पृथ्वीराज ठीक ही कहता है :—

मिटयउ ण जाइ कहणो पय कवि चन्द सार सामंत। (८.७)

विलास-मग्न पृथ्वीराज को वही कहला भेजता है :—

गोरी रत्तउ तुव धरा तूं गोरी अनुरत्त। (१०.२०)

और उसको लिख भेजता है कि प्राण तो अपने अधीन हैं, यदि और कुछ उससे नहीं हो सकता तो उसके द्वारा ही उद्योग करके वह प्राणों की रक्षा करे और सामन्तों से वह मन्त्र करे कि दिल्ली की धरा उसके कारण न डूब जावे :—

अप्पज्ज यान चहुआन सुनि मेल रविक' प्रारम करि।
सामंत मद्दी सामंत करि जिनि बोलइ ढिल्लिय जु धरि॥ (१०.२१)

गजनी पहुँच कर पृथ्वीराज को प्रतिशोध लेने के लिए प्रेरित करने पर उसको जब आगा-पीछा करते देखता है, वह कह उठता है :—

अरे नरिंद वा बंध पिंड कचउ सुर सचइ।
अप्पु तेज समीर धरा आयास ज पंचइ।
जरा जाल बंधियउ काल आनन मुहि पिल्लइ।
हंतुह हतुह भजप जप्पि सरु चरु कर मिल्लइ।
जिम चलइ हंस हंसी सरिस छंडि मोह तन पंजरहि।
प्रथीराज आज तिहिं मत्ति करि करि नरिंद जिनि उब्बरहि॥ (१२.१८)

और राजा के मन में अन्त तक दुविधा शेष देखकर कह उठता है कि कैंवास के साथ उसने जो कुछ किया था, वही तो उसके साथ भी हो रहा था, जिस विलासिता के कारण कैंवास के प्राण उसने लिए थे, उसी विलासिता का परिणाम अब उसे स्वयं भोगना पड़ रहा था, फिर क्यों वह आगा-पीछा वह कर रहा था :—

प्रथमिराज कमान बांम दिढ मुट्ठि गहहि कर।
जिन विसमउ मन करहि करहि भुअपत्ति अप्पु वर।
जि कछु दिअउ कयमास किअउ अप्पनउ सु पायउ।
सोइ संभरी नरेसु तुहि ज अम्मरपुर आयउ।
विधना विधान मेटइ कवन हीनमान दिन पाइयइ।
सर एक कोरि संभरि धनो सत्तहि सयुद गमाइयइ॥ (१२.४९)

ऐसे निर्भीक किन्तु प्रबुद्ध सहचर दुर्लभ होते हैं; यह पृथ्वीराज का सौभाग्य था कि उसे ऐसा कवि मित्र प्राप्त हुआ था। इसमें सन्देह नहीं कि पृथ्वीराज इस रचना में जो कुछ है, उसका अधिकांश यह चन्द के कारण है।

सुख में, दुःख में, हर्ष में और विषाद में वह हर जगह पृथ्वीराज के साथ है, यथा :

जयचन्द के किए अपमान का प्रतीकार करने के लिए जब पृथ्वीराज प्राणोत्सर्ग का संकल्प करता है, तो दोनों गले मिलकर खूब रोते हैं और चन्द हर्षपूर्वक उसका समर्थन करता है :—

दोइ कठ लग्गिय गहन मयनइ जल गल न्हांनु।
अब जीवन मंछिहि अधिक कहि कवि कोन सयानु॥

आनंदह कवि चंदु जिय निप किय संच विचार।
मन गहभर सिर हरुअ हइ जीवन हरअ सिर भार ॥ (३.४२)

ौर वह उठता है :—

धरि बरु पंगु प्रगट्ट अरु यह विहडिहई।
इत उपहास विलास न मान पगुंकिहई ॥ (३.४३)

वस्तुतः चन्द से अलग करके पृथ्वीराज को देखा नहीं जा सकता है।

अन्य पात्र

कथा के शेष पात्र विकसित नहीं किए गए हैं। जयचन्द और शहाबुद्दीन पृथ्वीराज के अच्छे ौर समय प्रतिद्वन्दी हैं, किन्तु उनमें उस प्रकार की जान-तोड़ वीरता का विकास कवि नहीं करता जैसी कथा-नायक में करता है, किन्तु वे कापुरुष भी नहीं हैं।

जयचन्द और पृथ्वीराज की तुलना करते हुए कवि ने एक स्थान पर ठीक ही कहा है कि वीराज वास्तविक शूर है, *जब कि जयचन्द अपनी पारवीक सेना से शूर बना हुआ है :—*

सत भट किरण समूरह सुरंगो अरेम जा न आयेस।
जोगिनिपुर पति सूरो पारस मिलि पंगु रायेस ॥ (८.८)

शहाबुद्दीन में कवि ने वीरता का वैसा विकास नहीं किया है जैसा नृशंसता का। वह पृथ्वीराज पराजित करने के बाद न केवल उसे बंदी करता है, उसकी आँखें तक निकलवा लेता है—उस वीराज की जिसने उसे बन्दी करके भी अनेक बार छोड़ दिया था (११.७)। और काव्य में जब पाठक वता है कि इस कृतघ्न और नृशंस शत्रु का चन्द युक्तियों से कथा-नायक द्वारा वध कराता है, यद्यपि स्वयं भी मारा जाता है, उसे वह सन्तोषपूर्ण आनन्द प्राप्त होता है जो भारतीय साहित्य में काव्य लक्ष्य माना गया है।

पृथ्वीराज के समस्त सामंत उसी के अनुरूप वीर हैं। उनके वीर कृत्यों के वर्णन में अतिशयोक्ति वी जा सकती है, किन्तु वह अतिशयोक्ति भी औचित्यपूर्ण लगती है : हरसिंह, वनवबड़ गूजर, हर राठौर, कन्ह, अल्हन, अचलेस, विंझ, सरघ, लषन और पाहार तोमर के प्राणोत्सर्ग, जो अपने जा की रक्षा में उन्होंने जयचन्द की विशाल सेना को रोकते हुए किए हैं (८.११-३५), द्भुत हैं।

इस वीर काव्य में एकमात्र कैंवास ऐसा अभागा पात्र है, जिसका केवल कालिमापूर्ण चरित्र कसित किया गया है (सर्ग १)।

—:*:—

२०. 'पृथ्वीराज रासो' की रस-कल्पना

सम्पूर्ण काव्य का अंगी रस वीर है, ऊपर आये हुए 'पृथ्वीराज रासो की प्रबन्ध-कल्पना' तथा 'पृथ्वीराज रासो की चरित्र-कल्पना' शीर्षकों से यह बात स्वतः प्रकट हुई होगी। किन्तु अन्य रस भी इसमें यथास्थान अंग बन कर आते हैं। सारी रचना में पृथ्वीराज, उसके सामन्तों और चन्द के कथन पाठक के मन को उत्साह की उमड़ती हुई नदी में डाल देते हैं, जिसमें वह डूबता उतराता आगे बढ़ता जाता है, उनके अतिमानवीय कृत्य उसे आश्चर्य-चकित करते रहते हैं, संयोगिता के चरित्र में उसे पूर्वानुराग, मिलन, विरह और संभोगरति के अति मनोरम चित्र मिलते हैं, आदर्श के लिए जीवन की उपेक्षा पूर्वक बलिदान की भावना रचना भर में स्थान-स्थान पर निर्वेद की सृष्टि करती है, रचना के अंतिम अंशों में शत्रु से प्रतिशोध लेने के लिए कथा-नायक से की गई चन्द की सारी प्रेरणा निर्वेद का सहारा लिए चलती है, कैंवास के शव के लिए उसकी विधवा पत्नी की याचना और उसके साथ उसका चितारोहण करुणा जाग्रत करते हैं, युद्ध की विभीषिका का कहीं कहीं पर जो वर्णन होता है, वह भयानक की अच्छी सृष्टि करता है, युद्ध में संहार के वर्णन कहीं-कहीं वीभत्स की झलक दिखाते हैं, कैंवास-वध में पृथ्वीराज की क्रोध युक्त मुद्रा किंचित् रौद्र का दृश्य उपस्थित करती है। केवल हास्य चंद (उग्र) चन्द द्वारा कदाचित् स्वभावतः उपेक्षित हुआ है अन्यथा काव्य के नव रस इस रचना में अपने प्रकृत रूप में अनायास आए हुए मिलते हैं।

रचना की धुर अन्तिम पंक्तियों में उसके कवि का किया हुआ यह कथन कि यह अपूर्व रासो नवरसों से सरस है, इसके छन्दों को चन्द ने अमृत के समान किया है, और यह शृंगार, वीर करुणा, वीभत्स, भय, अद्भुत और शांत रसों से संयुक्त है :—

> रासउ असभु नवरस सरस छंदु चंदु किअ अमिअ सम।
> शृंगार वीर करुणा विभछ भय अद्भुत्तह सत सम॥

अक्षरशः सत्य है। अनेक उतार-चढ़ाव के साथ, जो कवि को अन्य रसों का समावेश करने का कवि को पर्याप्त अवसर देते हैं, वीर का इतना अद्भुत परिपाक समूचे हिन्दी साहित्य में अन्यत्र नहीं मिलता है।

—:०:—

२१. 'पृथ्वीराज रासो' के वर्णन

'रासो' एक वर्णन-सम्पन्न काव्य है, और ये वर्णन प्राय सुन्दर हैं। कवि के वर्णन कौशल और तत्सम्बन्धी उसकी मुख्य प्रवृत्तियों से परिचय प्राप्त करने के लिए इन्हें निम्नलिखित वर्गों में रक्खा जा सकता है:—

(१) युद्ध-सज्जा तथा युद्ध-वर्णन
(२) नख-शिख-वर्णन
(३) सामान्य प्रकृति-वर्णन
(४) षड् ऋतु वर्णन
(५) अन्य वर्णन

नीचे यथाक्रम इन पर विचार किया जाएगा।

(१) युद्ध-वर्णन

रचना में दो युद्ध आते हैं, प्रथम है पृथ्वीराज जयचन्द युद्ध, और द्वितीय है शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज युद्ध।

जयचन्द की युद्ध-सज्जा का वर्णन करते हुए प्रथम के प्रसंग में सब से पहले हमें अश्व सेना का वर्णन मिलता है (६. ५)। इसमें कई जातियों के अश्वों का वर्णन किया गया है, जिनमें प्रमुख हैं लाहौर के लोहित वर्ण के तुर्की, सिन्धु के पश्चिम के देशों के सिंधी, अरबी, कच्छी, ताजी और पडुवे। कहीं कहीं पर इस वर्णन में अच्छी उक्तियाँ मिलती हैं: यथा उनकी वल्गा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वह ऐसी लगती है मानो आउझ (ढोल की जाति के एक प्रकार के वाद्य) पर [दोनों] हाथों से ताल बजाए जा रहे हों:—

साहिय बग्ग बहुइ जि तारा।
मनउ आवझइ हथ्थ बजंति तारा॥ (६.५.५६)

सुसज्जित होकर उनके बढ़ने का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वे ऐसे लगते हैं मानों उच (श्रेष्ठ) उपमा हो जो [कवि के मानस में] आगे बढ़ती चली आ रही हो—

राग बागे नहीं सुधि उरक्की।
मनउ उप्पमा उच्च आवइ तुरक्की॥ (६.५ १९-२०)

शेष वर्णन सामान्य है।

इसी प्रकार अन्यत्र हाथियों की सेना का वर्णन किया गया है (७ १०)। वर्णित जातियाँ हैं: सिंहली तथा सिंधी। वर्णन सामान्य है।

रचना के सर्ग ७ का पूर्वार्द्ध युद्ध की तैयारी के वर्णन से भरा है। इस वर्णन में कवि-प्रथा के अनुरूप प्रायः अतिशयोक्ति का आश्रय लिया गया है, यथा निम्नलिखित छन्द में :—

> य हिम रोस रहिवर चवि चहुवान गहन कह।
> सउ उप्परि सउ सहस वीह अगनित लष्ष वह।
> तुटि गिर जस थल भरिग भजिग जल गग प्रवाहह।
> सह अच्छरि अच्छहि विमान सुरलोक नाग तह।
> कहि चंद दंद दुहु दलि भयउ घन जिमि सिर सारद ढरिग।
> भर सेस हरी हर ब्रह्म तन तिहि समाधि तिहि दिन टरिग॥ (७.५)

इसी प्रकार की कल्पना निम्नलिखित पंक्तियों में भी मिलती है:—

> सज्जतं धुम भूमे सुनतं।
> कंपियं सीमपुर केलि पत्तं।
> डमरु वह डह किय गवरि कतं।
> जागिय जोग जोगाहि अत।
> छिम किमे सेस सिर भार रहिय।
> किमे वधातु रवि रथ महियं।
> कमल सुत कमल नहिं अतु लहियं।
> सकियं ब्रह्म ब्रह्मांड गहियं।
> राम रावण कवि किंन कहिता।
> सकति सुर महिप बलिदान कहिता।
> कस सिसुपाल पुरजयन प्रभुता।
> भ्रामिया जेन भय लषिय सुरता। (७.६.१-१२)

किन्तु इसी वर्णन में सादृश्य-प्रधान उक्तियाँ सुन्दर हैं, यथा :—

> सेभ सनाह नव रूप रंगा।
> मनउ निकलइ ति त्रिनेत्र गंगा।
> टोप टकार दीसे उतंगा।
> मनउ वद्दले पति वधी विहंगा।
> जिरह जगीन गहि अंगि लाई।
> मनउ कठ कंथीन गोरष्ष पाई।
> हथ्यरे हथ्थ लग्गे सुहाई।
> घाव लग्गइ न थक्कइ थकाई।
> राग जरजीन मानहुत अछूछे।
> होवभइ जानु जोगिंद कछूछे। (७.६.२७-३६)

इस प्रसग में युद्ध-वाद्यों का जो वर्णन है, वह भी सुन्दर है; 'रासो'-कालीन वाद्य-समूह पर प्रकाश डालने के कारण वह उपयोगी भी है :—

> नीसान सादं सि बाजे सुचगा।
> दिसा देस दक्खिन लष्षी उपंगा।
> तबल सदूर जंगी मृदंगा।
> मनउ नृत्य नारद कहुं प्रसंगा।
> बजहि बंस विसतार बहु रंग रंगा।

जिने मोहि कर सष्पि लागे कुरंगा।
थीर इंदीर सा सोम अंगा।
नचइ ईस सीसं धरो जासु गंगा।
सिंधु सद्दनाद श्रवने उलंगा।
सुने भद्दहरिभ अच्छ मज्जइ सुभंगा।
नफेरी नवरंग सारंग भेरी।
मनउ नृत्य नइ इंद्र भारंभ केरी।
सिंधु सावद्दनं गेन भेरी।
दसे आवद्दन इय्थ करेरी।
उच्छरहि घात घन घंट घेरी।
चित्तिता अधिक बध्धे कुबेरी।
उप्पमा पढ नव नैन लग्गी।
मनउ राम रावन्न इन्देव लग्गी। (७. ६. ३९-५६)

इसी प्रकार निम्नलिखित पंक्तियों में युद्धारंभ से उठी हुई धूल का जो अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन है, वह मनोरम है :—

हयग्गयं नरभ्भरं।
हलक्किय जलध्धरं।
दिसा निसान बज्जये।
समुद्द सद्द लज्जये।
रजोद मद उच्छली।
व्योम पंक संकुली।
तडाक घाछ रंगिनी।
चकी चक वियोगिनी।
कमाल पाछ पल्लये।
दिगंत मंत हल्लये।
अनंद ते निसाचरे।
कु कवि सुद्ध साचरे।
मगंत गग कुल्लये।
समुद्द सुन फुल्लये।
प्रवत्ति छत्त छत्तये।
सरोज मोज हल्लये।
अवंद रेन मंदने।
दप्पि इद्दु छंदने॥ (७. १२. १-१८)

यद्यपि इसी प्रसंग में सरोवर के रूपक का आश्रय लेते हुए युद्ध-स्थल का जो वर्णन किया गया है, वह प्रायः रूढ़ि-मुक्त है:—

सरं श्रोणि रंग पल पारि पंकं।
बजइ मंस पचि गधि चासि करंकं।
द्रुमं दाह लोलति हालं ति देसं।
गये हंस मंसीव गेहे सुवेसं।

रचना के सर्ग ७ का पूर्वार्द्ध युद्ध की तैयारी के वर्णन से भरा है। इस वर्णन में कवि-प्रथा के अनुरूप प्राय अतिशयोक्ति का आश्रय लिया गया है, यथा निम्नलिखित छन्द में :—

व हिग रोस रट्टियर चवि चहुआन गहन कह।
सउ हय्वरि सउ सहस वीह अगनित लष्ष वह।
तुटि गिर जस थल भरिग भजिग जल गग प्रवाहह।
सह अछ्छरि अछ्छहि विमान सुरलोक नाग सह।
कहि चंद दंद दुहु दलि भयउ धन जिमि सिर सारह झरिग।
भर सेस हरी हर ब्रह्म तन लिहि समाधि लिहि दिन टरिग॥ (७.५)

इसी प्रकार की कल्पना निम्नलिखित पंक्तियों में भी मिलती है:—

सज्जसं धूम धूमे सुनसं।
कवियं सीमपुर केलि पसं।
डमरु वह वह किय गवरि कसं।
जानिय जोग जोगाहि अस।
छिम किमे सेस सिर भार रहिय।
किमे उच्चासु रवि रथ्थ महियं।
कमल सुत कमल माहि अमु लहिय।
सकियं ब्रह्म ब्रह्मांड गहिय।
राम रावन्न कवि छिन कहिता।
सकति सुर महिप बलिदान लहिसा।
कस सिसुपाल पुरजवन प्रभुता।
भ्रामिया जेन भय लहिय सुरता। (७.६.१-१२)

किन्तु इसी वर्णन मे सादृश्य-प्रधान उक्तियाँ सुन्दर हैं, यथा :—

सेभ सुसाह नव रूप रंगा।
मनउ मिलिवइ ति त्रिनेत्र गंगा।
होप टकार दीसे उतगा।
मनउ बहले पति बधी विहगा।
जिरह जगीन गहि अंगि छाई।
मनउ कठ कंथीन गोरष्य पाई।
हथ्थरे हथ्थ छसो सुहाई।
घाव लगइ न थक्कइ थकाई।
राग जरजीन बानइत अछ्छे।
क्रोपभइ जानु जोगिंद कछ्छे। (७.६.२७-३६)

इस प्रसग में युद्ध-वाद्यों का जो वर्णन है, वह भी सुन्दर है; 'रासो'-कालीन वाद्य-समूह पर प्रकाश डालने के कारण वह उपयोगी भी है :—

नीसान सादं सि बाजे सुचगा।
दिसा देस दक्खिन लच्छी उपंगा।
तबल सदूर जंगी मृदगा।
मनउ नृत्य नारद बहु प्रसंगा।
बजहि बंस बिसतार बहु रंग रंगा।

जिने मोहि वर सविय लग्गे कुरंगा।
कीर इंडीर सा सोभ अंगा।
नचइ हंस सीसं घरो आसु गंगा।
सिधु सहनाइ श्रवने बसंगा।
सुने अच्छरिअ मच्छ मज्झइ सुअंगा।
नफेरी नवरंग सारंग भेरी।
मनउ नृत्य नइ इंद्र आरंभ केरी।
सिंधु सावद्दनं गैन भेरी।
झझे आवझ हथ्थ करेरी।
बच्छरहि घाउ घन घंट घेरी।
चिंतिता अधिक बध्धे कुवेरी।
उप्पमा पढ नव नैन लग्गी।
मनउ राम रावन्न इथ्थेव छग्गी। (७. ६. ३९–५६)

इसी प्रकार निम्नलिखित पंक्तियों में युद्धारंभ से उठी हुई धूल का जो अतिशयोक्ति पूर्ण र्णन है, वह मनोरम है:—

हयग्गय गरम्भरं।
छनद्दियं जलब्धरं।
दिसा निसान भज्झये।
समुद्द सद्द लज्जये।
रजोइ मइ डम्बरी।
व्योम पंक संकुली।
सटाक बाक रंगिनी।
चकी चक्क वियोगिनी।
पयाल पाल पक्लये।
दिगंत मंत हल्लये।
अनंद ते निसाचरे।
कु कवि सुद्ध साचरे।
भगंत गंग कुल्लये।
समुद्द सूत फुल्लये।
प्रघात छत्त छत्तये।
सरोज मोल हल्लये।
अपंड रैन मंडने।
करप्पि इंदु छंडने॥ (७. १२. १–१८)

यदि इसी प्रसंग में सरोवर के रूपक का आश्रय लेते हुए युद्ध-स्थल का जो वर्णन किया गया है, वह प्रायः रूढ़ि-मुक्त है:—

सरं श्रोणि रंग पलं पारि पंकं।
धजइ मंस पंचि गधि घासि करंकं।
दुमं ढाल लोलति हालं ति देसं।
गये हंस नंसीय गेहं सुवेसं।

रचना के सर्ग ७ का पूर्वार्द्ध युद्ध की तैयारी के वर्णन से भरा है। इस वर्णन में कवि-प्रथा के अनुरूप प्रायः अतिशयोक्ति का आश्रय लिया गया है, यथा निम्नलिखित छन्द में :—

> त दिन रोम रद्धिवर चंति चहुआंन गहन कइ।
> सउ उप्परि सउ सहस वीड़ अगनित्त सन्न दइ।
> तुटि गिर जस घड भरिग भजिग जल गंग प्रवाहइ।
> सइ अच्छरि अच्छहि विमान सुरलोक नाग सइ।
> कहि चंद दंद दुहु दलि भयउ घन जिमि सिर सारद झरिग।
> भर सेस हरी हर मझ्झ मन तिहि समाधि तिहि दिन टरिग॥ (७.५)

इसी प्रकार की कल्पना निम्नलिखित पंक्तियों में भी मिलती है:—

> सउझतं धूम धूमे सुनतं।
> कंपियं सीमपुर केलि पत्तं।
> डमरु वइ हइ लिय गवरि कंतं।
> जानिय जोग जोगादि अंतं।
> किम किमे सेस सिर भार रहियं।
> किमे उचासु रवि रथ्थ गहियं।
> कमल सुत कमल नहिं अंबु लहियं।
> संकियं मझ्झ ब्रह्मांड गहियं।
> राम रावन्न कवि किन कहिता।
> सकति सुर महिप बलिदान कहिता।
> कंस सिसुपाल सुरजवन प्रभुता।
> भ्रामिया जेन भय लहिय सुरता। (७.६.१-१२)

किन्तु इसी वर्णन में सादृश्य-प्रधान उक्तियाँ सुन्दर हैं, यथा :—

> सेत सुनाह नव रुप रंगा।
> मनउ भिल्लिवइ ति त्रिनेत्र गंगा।
> टोप टकार दीसे उतंगा।
> मनउ बद्दले पंति बंधी विहंगा।
> जिरह जगीन गहि अंगि लाई।
> मनउ कंठ कंथीन गोरप्प पाई।
> हथ्थरे हथ्थ छत्तो सुहाई।
> बाय लग्गइ न थक्कइ थकाई।
> राग जरजीन बानइस अच्छे।
> बंधिभइ जानु जोगिंद कच्छे। (७.६.२७-३६)

इस प्रसग में युद्ध-वाद्यों का जो वर्णन है, वह भी सुन्दर है; 'रासो'-कालीन वाद्य-समूह पर प्रकाश डालने के कारण वह उपयोगी भी है :—

> नीसान सादं ति बाजे सुचंगा।
> दिसा देस दक्खिन कच्ची उपंगा।
> तबल सदूर जंगी मृदंगा।
> मनउ नृत्य नारद कइ प्रसंगा।
> बजहि बंस बिसतार बहु रंग रंगा।

जिने मोहि कर सच्चिय छगे कुरंगा।
षीर इंडीर सा सोभ अंगा।
नचइ हंस सीसं घरो जासु गंगा।
सिंधु सहमाइ अपने उतंगा।
सुने अच्छरिअ अच्छ मज्जइ सुअंगा।
नफेरी नवरंग सारंग भेरी।
मनउ नृत्य नइ इंद्र आरंभ केरी।
सिंधु साजहसनं गेन भेरी।
झसे आवझ हत्थ कोरी।
उछ्छरहि घाउ घन घंट घेरी।
चिंतिता अधिक बध्धे कुवेरी।
उप्पमा चंड भव नैन लग्गी।
मनउ राम रावन्न हध्येव लग्गी। (७. ६. ३९–५६)

इसी प्रकार निम्नलिखित पंक्तियों मे युद्धारंभ से उठी हुई धूल का जो अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन है, वह मनोरम है :—

हयग्गय भरम्भरं।
छतविद्यं जलध्धरं।
दिसा निसान भंजये।
समुद्द सद्द लज्जये।
रजोद मइ अंचली।
व्योम पंक संकुली।
तडाक पाल रंगिनी।
चरी चक वियोगिनी।
पयाल पाल सलये।
दिगंत मंत हल्लये।
अनंद से निसाचरे।
कु कंपि सुंद साचरे।
मगंत गंग कुहक्कये।
समुद्द सून कुक्कये।
प्रयत्ति छत्त छप्पये।
सरोज मोज हक्कये।
अचंद रेन मंडने।
दरप्पि इंदु छंडने॥ (७. १२. १–१८)

यद्यपि इसी प्रसंग में सरोवर के रूपक का आश्रय लेते हुए युद्ध-स्थल का जो वर्णन किया गया है, वह प्रायः रूढ़ि-मुक्त है:—

सरं श्रोणि रंग पलं पारि पंकं।
बजइ मंस पंचि गधि पासि करंकं।
दुमं दाक कोकलि हालं ति देसं।
गये हंस नंसीव गेहे सुवेसं।

परे पानि जंघे धरंगं निनारे।
मनउ मछ्छ कछ्छं तरे सीर मारे।
सिर सा सरोजं कचे सा सिवाली।
गहे अंत ग्रध्धी सु सोहै मराली।
तहं रंभ रत्तं भरंतं विचीरं।
वतं स्याम स्वेतं कत नीर पीरं। (७.१७.२७-२६

द्वितीय युद्ध अपेक्षाकृत बहुत कम विस्तृत है, और इसी प्रकार उसका वर्णन भी संक्षिप्त है।

सेना के प्रमाण से उठी रेणु के आडम्बर का वर्णन इसमें बहुत सुन्दर वर्णन हुआ है : दिन में रात्रि का आगमन समझकर चकवी-चकवे और सारस-युग्म को जो भ्रम होता बताया गया है, वह प्रभावपूर्ण है, और सरोवर के जल में तारागण के प्रतिबिम्ब का जो वर्णन किया गया है, वह संश्लिष्ट चित्रण प्रणाली के कारण अत्यन्त सरस हुआ है :—

चक्कीय चक्क मुक्किक्कि चलंति।
रस सरस दरस सारस मिलंति।
प्रतिबिंब अंभ अंबरन तार।
मुगतइ न मुगति संजरि सिवार।
चक्कित सुचित्त मन मित्त मित्त।
सर उभय भमिय आनंद चित्त।
दप्प आदप्प आलोल नयन।
बिसरीय कोक सुरमग्ग वयन।
हसि चक्क चरिय सम कहिग छंदु।
मानिनिय मान यामिनिय चंद। (११.१०.११-२०)

शेष युद्ध-वर्णन साधारण है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'रासो' के युद्ध-वर्णन अतिशयोक्तियों और परंपरा-भुक्त कल्पनाओं से युक्त होते हुए भी सुंदर हैं और कहीं-कहीं पर उनमें कवि ने कल्पना का आश्रय लेते हुए संश्लिष्ट चित्रण का भी यत्न किया है। तथ्य-प्रधानता की नहीं, उक्ति-प्रधानता की प्रवृत्ति प्रमुख है।

(२) नख-शिख वर्णन

'रासो' के वर्णनों में नख-शिख-वर्णन अपनी विशेषता रखते हैं : वे परंपरा-मुक्त कम हैं, कल्पना की सरसता के साथ-साथ वर्ण्य पात्र के व्यक्तित्व का ध्यान उनमें कवि को सदैव रहा है।

नायिका संयोगिता का नख-शिख कथा के पूर्वार्द्ध में नहीं आता है, कारण यह है कि 'रासो' के कवि ने कथा-नायक पृथ्वीराज को उसके रूप अथवा गुणों के कारण उस पर अनुरक्त नहीं किया है, वह तो केवल संयोगिता के प्रेमानुष्ठान के कारण उससे परिणय करता है। किंतु बाद में पृथ्वीराज के केलि विलास के प्रसंग में वह उसका वर्णन करता है। इस वर्णन में कुछ कल्पनाएँ सरस हैं, यथा:

नितंब पर पड़ी हुए शृंखला को कवि कामदेव के धनुष की प्रत्यंचा कहता है :—

रसनेव रंज नितंबिनी।
कुसुमेष एष विलंबिनी। (१०.११.११-१२)

उसके हृदय को वह मदन का भवन कहता है, जहाँ वह निरस्त होकर (निकाला जाकर) छिपने के लिए आगया है :—

हिम भवन मयन ति संधयइ।
भज गहन गहन निरंधयइ। (१०.११.१७-१८)

उसके अधरों को वह पक्व बिंब कहता है, जिनके शुक-सारिकादि से खंडित होने का भय बना रहता है :—

अधर पक्क सु बिंबन।
सुक सालि आलिन मंडनं। (१०.११.२५-२६)

उसके नेत्रों के अपांगों को वह सित-असित उररि (बकरे) अथवा उड़ने का अभ्यास करते हुए खंजन-वत्स कहता है:—

सित असित उररि अपंगयो।
अभ्मिसहिं षंजन बछ्छयो।

उसके देदीप्यमान ललाट पर लगे हुए मृगमद के तिलक की उपमा वह सिंधु से निकले हुए नवीन चन्द्रमा की गोद में बैठे हुए इन्दुपुत्र (मृग) से करता है:—

तस मध्य मृगमद विंदु जा।
जस इंदु नंद ति सिंधुजा। (१०.११.४१-४२)

'रासो' के कवि ने कथा के प्रारम्भ में ही संयोगिता की वयस्का सहचरियों का जो वर्णन किया है, वह भी सुन्दर है, और उनकी जो कल्पना बसंत-प्रियाओं के रूप में की है, वह दर्शनीय है :—

अधरत्त पत्त पल्लव सुवास।
मंजरिय तिलक पजरिय पास।
अलि अलक कंठ कलयंठ मंत।
संजोगि भोग बहु भयु बसंत। (२.५.१-२०)

आगे चलकर उसने कन्नौज-वर्णन के प्रसंग में जल भरती हुई सुन्दरियों का वर्णन किया है। इस वर्णन में कुछ कल्पनाएँ चमत्कारपूर्ण हैं, यथाः

कवि कहता है कि उनकी कटि में जो शृंखला पड़ी हुई है, उसके कारण ऐसा लगता है मानो वे वनिताएँ सिंहिनियाँ हैं:—

कटित्त सोभ संजरी।
वनित्त जानि केसरी। (४.१४.९-१०)

उनकी नासिका की वह बँधे हुए क्रीडा-कीर से तुलना करते हुए वह कहता है कि वे उनके [बिंब तुल्य] रक्त अधरों को खण्डित नहीं कर रहे हैं—इसलिए वे क्रीडा-कीर और वह भी बँधे हुए क्रीडा-कीर उचित ही कहे गए हैं:—

अधर आरत्त रत्तये।
सुकील कीर बधये। (४.१४.२१-२२)

पृथ्वीराज के इस कथन पर कि ये सुन्दरियाँ तो दासियाँ थीं, चन्द ने उन नागरियों के रूप का वर्णन नहीं किया है जो असूर्यंपश्या हैं, वह स्वकीयाओं के रूप में कन्नौज की अन्य नागरी नारियों का वर्णन करता है। इस वर्णन में तुलनात्मक तथ्यपूर्णता दर्शनीय है; यथाः

जहाँ उसने जल भरने वाली सुन्दरियों के कटाक्षों का वर्णन किया है, उसने कहाः—

दुराय कोय लोचने।
मतग्ग काम मोचने।
अवध्धि ओट भौंहये।
चढ्ढंति सोह सौंहये। (४.१४.३१-३२)

किंतु इन स्वकीयाओं के नेत्रों को उसने निर्वात दीप के समान अचंचल कहा है:—

पंगुरे भयन ने नयन दीसं।
विचि जोत सारंग निर्वात रीसं। (४.२०.९-१०)

कवि ने कहा है कि ये दिव्य-दर्शना हैं और धीमे स्वर में बोलती हैं:—

दिव्य दरसी तिहां विल्ल बोलं।

उनके चरण-नखों की निर्मलता का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि उनमें उनके स्वकीय पतियों का जो प्रतिबिंब पड़ रहा है, वह ऐसा लगता है मानो उन्होंने मानकर रक्खा हो और उनके पति उनके चरणों में पड़े हों:—

नपं निर्मलं दर्पनं भाव दीसं।
समीपं सुकीयं कियं मानरीसं। (४.२०.३५-३६)

यहाँ तक मानवीय नख-शिख वर्णन की बात रही; सरस्वती के नख-शिख-वर्णन में 'रासो' के कवि के देव-विषयक नख-शिख वर्णन का भी एक उदाहरण मिल जाता है। यह नख-शिख नहीं, शिख-नख है, अर्थात् वर्णन शिखा से नख की ओर बढ़ता है। यह वर्णन भी सुन्दर है; यथा:

कपोलों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि ये प्रातःकाल में उदित उस चन्द्रमा के समान हैं जो राहु के कलंक से बचने के लिए [अपने मृगरथ के] जूए को बहुत खींच रहा हो—सश्लिष्ट कल्पना दर्शनीय है:—

कपोल रेख गातयो।
उवंत इंदु प्रातयो।
पभूष जुव पंचये।
कलंक राह वंचये। (३.१७.७-१०)

नेत्रों की उपमा दो छोटे वारि-खजनों से दी गई है, जो रूप जल में तैर रहे हों:—

उछंसि वारि खजयो।
तिरंति रूप रंजयो। (३.१७.१३-१४)

ग्रीवा पर पड़ी हुई मुक्ता माल की तुलना सुमेरु पर गिरती हुई गङ्गा की धारा से की गई है:—

सुग्रीव कंठ मुत्तयो।
सुमेर गंग पत्तयो। (७.१४.१९-२०)

उसके नखों को आर्द्र और रक्षित कहा गया है—वीणा-वादन के लिए रक्षित नखों की आवश्यकता को कवि ने ध्यान में रखा है:—

नषार्द्र अद रक्खिलं।
धरंति सष्ठ कप्पनं। (७.१४.२३-२४)

इन नख-शिख-वर्णनों से ज्ञात होता है कि 'रासो' के कवि ने सर्वत्र सुरुचि और कल्पना से काम लिया है; उसके नख-शिख केवल परंपरा-मुक्त और निर्जीव नहीं हैं, उनमें सजीवता है और वे वर्ण्य पात्र को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत किए गए हैं।

(२) सामान्य प्रकृति-वर्णन

सामान्य प्रकृति वर्णन 'रासो' में अधिक नहीं है, किन्तु जितना है, सुन्दर है। नीचे कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं।

एक स्थान पर प्रातः काल की मद गज से तुलना करते हुए 'रासो' के कवि ने सुन्दर कल्पना की है—वह कहता है कि यह मद बिन्दु चुवाता हुआ मद गज का गण्डस्थल नहीं है वरन् [पुष्प चुवाती हुए] वह शाखा है, यह नीचा आने वाला अधि है न कि हाथी का निर्घोटित कुंभ है, उसी

प्रकार यह [पुष्पों पर गुंजार करने वाला] मधुकर-वृन्द है न कि गज के मद से आकृष्ट अलिकुल है, [ऐसी उन्मत्तता कारिणी प्रात:काल की वेला में] तरुण प्राणों वाला राजा जयचन्द [रात्रि में जागने के कारण] लटपट पैर रखता हुआ आ पहुँचा :—

कीती भार पुरा पुनमंद गजं झारा न गहरथलं।
उच्चं पुष्प पुरा स दासि कमन करि कुंभ निद्रादलं।
मधुरे साइ सकाइता अलिकुलं गुंजार गुंजा सदा।
तरुणे प्राण लटापटा पगपग जयराज संप्रापता ॥ (५.४१)

प्रभात और मद गज की तुलना की इस पृष्ठभूमि में रात्रि में किसी कामिनी के सुख-रति-समर में नींद को विस्मृत कर जगे हुए होने (५.३९-४०) के कारण लटपट पैर रखते हुए जयचन्द का जो चित्र कवि ने उपस्थित किया है, वह अपनी सरस व्यजना के कारण अवश्य ही रमणीय बन गया है।

संध्या का वर्णन, इसी प्रकार, एक अन्य स्थान पर भावपूर्ण हुआ है, उसमें कवि ने संयोगिता की मनोस्थिति की जो व्यंजना संध्या के उपादानों को लेकर की है, वह कोमल हुई है। वह कहता है, 'मित्र (सूर्य) महोदधि में जा चुके थे, दिशाओं को तम ने ग्रस लिया था, पथिक-वधू की दृष्टि [उसके प्रियतम के] पथ में उसी प्रकार अधिष्ठित हो चुकी थी जैसी [खिंची हुई] चग होती है, युवाओं और युवतियों की सुमति उसी प्रकार नष्ट हो चुकी थी जिस प्रकार रस लुब्ध सारस अथवा [मधु-] मुग्ध मधुप की होती है :—

मित्त महोदधि मद्दस दिसंत प्रसंत तम।
पथिक वधू पथि दिट्ठ अहुट्टिय चंग जिम।
जुव जन जुवती गंजि सुमत्ति अनंगमय।
जिमि सारस रसलुब्भ त मुग्ध मधुप्प कय ॥ (७.२२)

बाद में रणक्षेत्र में गए पृथ्वीराज के आगमन की संध्या काल में प्रतीक्षा करती हुई संयोगिता के भावों की (७.२३) जो व्यजना इस पृष्ठभूमि के योग से हुई, है वह अवश्य ही ललित हो उठी है।

जो ऋतु-वर्णन षड्ऋतु वर्णन के रूप में मिलता है, उसके अतिरिक्त उल्लेखनीय ऋतु-वर्णन केवल एक स्थान पर आता है और वह वसन्तागम का है। कल्पना शिशिर पर वसंत के आक्रमण के रूप में की गई है, जिसमें शिशिर पराजित होता है और वसंत विजयी :—

धनि धग्ग मग्ग इलि अंब मउर।
सिर ढरहि मनहुं मनमथ्थ चवंर।
चलि सीत मद सुगंध वात।
पावक्क मनहुं विरहिनि निपात।
कुहु कुहु करति कलयठि जोरि।
इक मिलइ मनहु अनभंग कोरि।
करि पल्लव पत्त ति रत्त नीक।
इलि चलहि मनहु मनमथ्थ पीक।
कुसुमेष कुसुम तेन भब्भुप साजि।
भृगी सुपति गुन गहय गाजि।
सजर सुवान सुमनाइ भेद।
विद्दाये वीर जुवजननि वेद।

उल्लसिअ कलिअ चंपक सरीप।
प्रज्ज्वलिअ प्रगट कंदर्प दीप।
करवत्त सेत केतकि सुकरि।
विहरंति रस वितरंति छत्ति।
परिरंभ अनिल कदली कपाल।
सिर धुनहि सरस सुनि जासु ताल।
झंकुरिय झाम अभिराम रम्य।
नहु करह पीय परदेस गम्य।
फुल्लित पलास तजि पत्त रत्त।
रण रंग सिसिर जित्तउ बसंत। (२.५.२५-४६)

इस वर्णन में कवि ने प्रस्तुत विषय के साथ अप्रस्तुत का निर्वाह किस प्रकार सफलता पूर्वक किया है, यह स्वतः देखा जा सकता है।

फलतः सामान्य प्रकृति-वर्णन में भी 'रासो' का कवि सफल रहा है; उसने पृष्ठभूमि के रूप में जो प्रकृति-वर्णन किया है, वह अपनी अनुकूल व्यंजना के द्वारा रमणीय बन गया है, और इस वर्णन में उसने अप्रस्तुत की जो योजना की है वह भी सरस हुई है।

(४) षड्ऋतु-वर्णन

'रासो' का षड्ऋतु-वर्णन कथा-नायक और उसकी नव विवाहिता पत्नी के सम्भोग शृंगार का है। कथा-नायक उस नव विवाहिता को भोगायित कर रहा है, किंतु उसका जीवन युद्धों में बीता है, इसलिए वह उसके प्रेम-पाश से बार-बार निकल कर जाने का प्रयत्न करता है। नायिका ऋतुओं की रमणीयता का प्रतिपादन करते हुए अपने प्रणयानुरोधों से उसे रोकती है, यही इस षड्ऋतु-वर्णन का वर्ण्य है। ऋतुओं का क्रम वसंत से प्रारम्भ होता है :—

सामग्गं कलधूत नूत सिखरा मधुलेहि मधुवेष्टिता।
वाता सीत सुगंध मंद सरसा आलोल साचेष्टिता।
कंठी कंठ कुलाहले मुकलया कामस्य उद्दीपनी।
रत्ते रत्त वसंत पत्त सरसा संजोगि भोगाइते॥ (९.९)

[जिस वसंत में तरु-] सिखरों पर [रंग-बिरंगे पुष्पों के कारण मानो] नूतन कलधूत (चाँदी-सोने) की समग्रता हो गई है और मधुकर मधु से आवेष्टित [हो रहे] हैं, वात शीतल, मंद, सुगंधित और सरस होकर चेष्टाओं में विशेष लोल हो रही है, कंठी (कोयलों) के कंठ के कोलाहल से मुकुलों (कलियों) में कामोद्दीपन हो रहा है और जो वसन्त सरस [नवीन] पत्तों के कारण लाल हो रही है, ऐसे वसंत में संयोगिता [पृथ्वीराज के द्वारा] भोगायित हो रही है।

दीहा दिव्व सदंग कोप अनिला आवर्त्त मित्ताकरं।
रेने सेन दिसान थान मलिना गोमग्ग आडंबरं।
नीरे नीर अपीन छीन रयया तपया तरुण्या तनं।
मलया चंदन चंद मंद किरना सु ग्रीष्म आसेचनं॥ (९.१०)

"[जिस ग्रीष्म में] दिन दिव्य (तप्त लौहादि) [के समान] हो रहे हैं, अनिल (वायु) कुपित हो रही है, मित्र (सूर्य) के करों से उत्पन्न आवर्त (बवंडर) उठने लगे हैं, रेणु की सेनाओं से दिशाएँ और स्थान मलिन हो रहे हैं, [यथा] गोमार्ग [की धूल] के आडंबर से हों, जहाँ जो भी नीर था, वह अपीन (क्षीण) हो गया है, रात्रि क्षीण हो गई है और तप (गर्मी) का तनु तरुण

हो गया है, मलय [समीर], चंदन और चन्द्रमा की मंद किरणें ही [ऐसे] ग्रीष्म में [मुरझाते हुए प्राणों का] सिंचन करने वाले हो रहे हैं।"

आद्रे बद्दल मत्त मत्त विषया दामिन्नि दामायते।
दादुक्के दल मोर सोर सरसा पप्पीहान् चीहायते।
शृंगाराय वसुन्धरा ललितया सरिता समुद्रायते।
यामिन्या सम वासरे दिसंतता प्रावृट्ट दवयामिते॥ (९.११)

"[जल से] आर्द्र बादल विषय में मत्त हो रहे हैं, और [उनकी प्रिया] दामिनी दमक रही है, दादुरदल मोरों के साथ शोर कर रहा है, और पपीहा चीत्कार कर रहा है, वसुन्धरा ने लालित्यपूर्वक शृंगार कर लिया है, और सरिता [उमड़ कर] समुद्र बन रही है, वासर (दिन) भी [अपर्याप्त प्रकाश के कारण] यामिनी के समान [अन्धकार पूर्ण] हो रहे हैं, वर्षा में ऐसा दिखाई पड़ रहा है।"

पित्ते पुत्त सनेह गेह भुगता मुक्तानि दिव्या दिने।
राजा छत्रनि साजि राजि छितया नद्राननद्मासने।
कुसुमे कातिग चंद निर्मल कला दीपानि वर दायते।
मा मुक्के पिय बाल नाल समया सरदाय दर दायते॥ (९.१२)

"जो पिता पुत्रादि के स्नेह और गृह का भोग कर रही हैं, अथवा जो संयोगिनी हैं, उनके लिए [शरद के] दिन दिव्य हैं, राजा-गण छत्रों को साज कर और क्षिति पर शोभित होकर आनन्द-युक्त आननों से भासित हो रहे हैं। कार्तिक में कुसुमों की और चन्द्रमा की कलाएँ निर्मल हो रही हैं, और दीपक वरदायी हो रहे हैं (दीपदान करके लोग मनोरथ की प्राप्ति कर रहे हैं), हे प्रिय, बाला को इस नाल (कमल-नाल के निकलने) के समय न छोड़ो, [क्योंकि] शरद का दल दिखाई पड़ रहा है।"

छीन वासर स्वास दीघ निसया शीत जनेत वन।
सज्ज सजरवान यौवन तया आनग आनंगने।
यह बाला तरुनी निवृत्त पत्त नलिनी दीना न जीवा छिणे।
मा कंत हिमवंत मत्त गमने प्रमदा ने आलंबने॥ (९.१३)

"वासर (दिन) क्षीण होकर श्वास [मात्र] हो गए हैं, और निशाएँ दीर्घ हो गई हैं, जनेत (सरितों) और वन में [सर्वत्र] शीत व्याप्त हो रहा है, यौवन के कारण शय्या सज्वर-कारिणी हो गई है और अनंग ही अनग का अधिकार हो गया है, जो बाला तरुणी है वह निवृत्त-पत्र नलिनी के समान हो रही है, वह दीना क्षण भर भी जीवित नहीं रह सकेगी, [इसलिए] हे कान्त इस मत्त हेमंत में गमन न करो, अन्यथा प्रमदा निरवलंब हो जायगी।"

रोमाली घन नीर निम्न वरये गिरि द्रुम धारायते।
पव्वय पीन कुचानि जानि सयला फुंकार झंकारये।
सिसिरे सर्वरि वारणे च विरहा मम हृदय विद्दारये।
मा कंत सून बद्द सिंघ गमने किं देव उब्बारये॥ (९.१४)

"[स्त्री की] रोमावली ही घन (वन) है, स्नेह नीर ही गिरि और द्रुम [के पास बहती हुई] जल की धारा है, उसके पीन कुच ही मानो समस्त पर्वत हैं, वह जो फुंकार (सीत्कार) छोड़ती है, वही मानो [पवन का] झकोर है, शिशिर की रात्रि में विरह ही वह वारण (हाथी) है जो उसकी हृदय रूपी वाटिका को विदारता (तहस-नहस करता) है, उस विरह रूपी ग (वन-

धारी वारण) का वध करने वाले सिंह, हे कान्त, तुम मत गमन करो; हे देव ! क्या तुम नारी के हृदय को विरह-वारण से उबारोगे ?"

इस षड्ऋतु-वर्णन की सरसता स्वतः प्रकट है। शिशिर-सम्बन्धी छन्द में जो रूपक का चमत्कार है, वह भी दर्शनीय है।

(५) अन्य वर्णन

'रासो' में कुछ अन्य वर्णन भी हैं, किन्तु वे काव्य की दृष्टि से प्रायः इतने सरस नहीं हैं जितने उपर्युक्त हैं, यद्यपि वे अन्य दृष्टियों से कभी-कभी बहुत उपयोगी हैं। उदाहरणार्थ, कन्नौज का जो नगर-वर्णन कवि ने चौथे सर्ग के प्रारम्भ में किया है, और पीछे जयचन्द के नृत्य-गीत समारोह का जो वर्णन पाँचवे सर्ग में किया है, 'रासो' कालीन नागरिक जीवन तथा नृत्य संगीत की परम्पराओं पर अच्छा प्रकाश डालते हैं। फिर भी कल्पना से चमत्कृत सरस वर्णनों का सर्वथा अभाव नहीं है। नीचे दिया हुआ गङ्गा का वर्णन देखिए; किस प्रकार कवि ने गङ्गा को एक कामिनी का रूप दे दिया है—

उभय कनक सिंभं भ्रिंग कंठीव छीला।
पुनरपि पुहप पूजा चढ्ढति रति विप्रराज।
उरसि मुत्तिहारं मध्धि घटीव सबदं।
सुगति सुकल चढ्ढी नंग रंग त्रिवल्ली॥ (४.१२)

"[इसके दोनों तटों पर जो दो कनक शंभु हैं [वे ही इसके दोनों कुच हैं], भृंगों की कंठध्वनि [ही इसकी कंठ-ध्वनि] है, पुनः इसे पुष्प-पूजा [अर्पित] करके विप्रराज (श्रेष्ठ विप्र) इससे अपनी रति (भक्ति) निवेदित करते हैं, इसके उर में [जल-कणों का] मुक्ताहार है, और मध्य में [पूजकों द्वारा किया जाने वाला] घटी [कटिकी घंटी] का शब्द है, इस प्रकार यह सुन्दर मुक्ति की चढ़ी अनंग-रंग ('काम-क्रीड़ा) की त्रिवली है।"

दूसरी ओर काम-कला को कवि ने संगीत कला और कामिनी-पूजा को देव-पूजा में किस प्रकार ढाँक दिया है, यह दर्शनीय है:—

सुक्खं सुक्ख मृदंग तार जघनो रागं कला कोक्कं।
कंठी कंठ सुभाखनं सम हुत काम कला पोषनं।
उर भी रंभकिता गुणं हरि हरो सुरभीव पवनापिता।
एवं सुष्प स काम कुंभ गहिता जयराज रात्रिगता॥ (५.४०)

अर्थात् [रति-]सुख में [संगीत-]सुख का, [कामिनी के] जघनों में मृदंग के ताल का, कोक-कला में राग-कला का, [कामिनी के] कंठ में [गायिकाओं के] कंठ का, यहाँ (कामिनी के) सुभाषण में उनके सुभाषण का, इस प्रकार [काम-कला] में [संगीत-कला] का [जयचन्द ने] पोषण किया; उसने [कामिनी के] उरसे [परि-] रंभण करते हुए [रात्रि के अंतिम प्रहर में मानों] हरि और हर के गुणों से [रंभण] किया; इस प्रकार सुख-पूर्वक काम-कुंभों (कुचों) को ग्रहण किए हुए राजा जयचन्द की रात्रि व्यतीत हुई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'रासो' में वर्णन विविध हैं, और विविध प्रकार से वे कवि के द्वारा सरस बनाए गए हैं। रचना की वर्णन संपत्ति अतः असाधारण है, यह भली भाँति प्रकट है।

—:#:—

२२. 'पृथ्वीराज रासो' के छंद

जैसा ऊपर कहा जा चुका है,[1] 'पृथ्वीराज रासो' रासो-परंपरा की छंद-वैविध्य-परक शाखा की रचना है। इसलिए इसके छंदों के संबंध में कुछ जान लेना आवश्यक होगा। इसमें कुल दो दर्जन से अधिक प्रकार के छंदों का प्रयोग किया गया है, जिनमें से आधे से कम प्रकार के छंद मात्रिक और शेष आधे से अधिक प्रकार के वर्णिक हैं। किंतु इससे यह समझना उचित न होगा कि रचना भी इसी अनुपात से इन छंदों में हुई है। स्थिति यह है कि वर्णिक छंद केवल रचना का लगभग ⅓ निर्मित करते हैं और उसका शेष ⅔ मात्रिक छंद निर्मित करते हैं।

इन छंदों का अध्ययन एक और दृष्टि से भी करने की आवश्यकता है : वह यह कि इनका कोई विशेष संबंध वर्ण्य विषय से भी है या नहीं।

वर्णिक छंदों में सबसे अधिक प्रयुक्त साटिका तथा भुजंग प्रयात (भुजंगी) हैं। भुजंग प्रयात (भुजंगी) तो प्रायः सभी प्रकार के प्रकरणों में आए हैं, किंतु साटिका केवल कोमल प्रसंगों में प्रयुक्त हुआ है, परुष प्रसंगों में नहीं हुआ है। शेष वर्णिक छंद इतने कम बार प्रयुक्त हुए हैं कि उस के आधार पर उनके प्रयोगों की प्रवृत्तियों का कोई अनुमान लगाना उचित न होगा।

मात्रिक छंदों में से सब से अधिक प्रयुक्त छंद दोहरा (दूहा) है, जो रचना का भी सर्वाधिक प्रयुक्त छंद है। यह रचना के सभी प्रकरणों में समान रूप से आया है। किंतु परुष प्रसंगों में यह उतना अधिक नहीं प्रयुक्त हुआ है जितना शेष प्रकार के प्रसंगों में हुआ है। इसके बाद सर्वाधिक प्रयुक्त छंद कवित्त (छप्पय) है : यह कोमल प्रसंगों में रचना में कहीं भी नहीं प्रयुक्त हुआ है, परुष प्रकार के प्रसंगों में ही प्रयुक्त हुआ। इनके बाद सर्वाधिक प्रयुक्त मात्रिक छंद रासा, पद्धडी, गाथा, मुडिल्ल तथा अडिल्ल हैं। रासा तथा पद्धडी क्रमशः कोमल और परुष प्रसंगों में प्रयुक्त हुए हैं; मुडिल्ल तथा अडिल्ल परुष प्रसंगों को छोड़ कर प्रायः सभी प्रकार के प्रसंगों में प्रयुक्त हुए हैं। गाथा विविध प्रसंगों में प्रयुक्त हुआ है; फिर भी परुष प्रसंगों में कम आया है। शेष मात्रिक छंद इतनी कम बार आए हैं कि उसके आधार या उनकी प्रयोग संबंधी प्रवृत्तियों के विषय में कोई अनुमान करना उचित न होगा। विभिन्न मात्रिक और वर्णिक छंद रचना में जहाँ-जहाँ पर आते हैं, नीचे उसकी तालिका दी जा रही है।

[1] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'रासो काव्य-परंपरा और पृथ्वीराजरासो' शीर्षक।

मात्रिक छंद

(१) दोहरा (दूहा): १.५; २.८, २.९, २.२१, २.२२, २.२३, २.२६, २.२७, २.२८, ३.१, ३ ३, ३.९, ३.१०, ३.१३, ३.१४, ३ १५, ३ २१, ३.२२, ३.२३, ३.२४, ३.२५, ३.२६, ३.३५, ३.३७, ३.३८, ३.४०, ३.४२; ४.२, ४.३, ४.४, ४.५, ४.६, ४.८, ४.१५, ४.१६, ४.१७, ४.१८, ४.१९, ४.२१, ५.२, ५.११, ५.१२, ५.१४, ५.१५, ५.१६, ५.१७, ५.१८, ५.२०, ५.२१, ५.२२, ५.२३, ५.२६, ५.२७, ५.२८, ५.२९, ५.३०, ५.३१, ५.३२, ५.३३, ५.३४, ५.३५, ५.३७, ५.३९, ५.४२, ५.४३, ५.४४, ५.४६, ५.४७; ६.१, ६.२, ६.३, ६.४, ६.६, ६ ८, ६.९, ६.१०, ६.११, ६.१६, ६.१८, ६.१९, ६.२०, ६.२१, ६.२२, ६.२४, ६.३०, ६.३१; ७.१ ७.३, ७.७, ७.८, ७.९, ७.११, ७.१३, ७.१९, ७.२९; ८.१२, ८.१३, ८.१५, ८.१७, ८.१८, ८.२०, ८.२१, ८.२२, ८.२३, ८.२५, ८.२७, ८.२९, ८.३१, ८.३३, ८.३६; ९.२, ९.३, ९.४, ९.५; १०.२, १०.४, १०.८, १०.९, १०.१२, १० १३, १०.१४, १०.१६, १०.१८, १०.१९, १०.२०, १०.२१, १०.२२, १०.२४, १०.२६, १०.२७; ११.१, ११.२, ११.३, ११.४, ११.५, ११.६, ११.९, १२.२, १२.३, १२.४, १२.५, १२.६, १२.९. १२.१०, १२.१२, १२.१४, १२.१६, १२.१७, १२.१८, १२.२०, १२.२१, १२.२२, १२.२४, १२.२५, १२.२६, १२.२७, १२.२८, १२.३०, १२.३१, १२.३४, १२.३६, १२.३७, १२.४३, १२.४४, १२.४७ = १६५

(२) कवित्त (छप्पय) : ३.४, ३.११, ३.२७, ३.२९, ३.३१, ३.३२, ३.३३, ३.३६, ४.१; ५.१९, ५.४५, ५.४८; ६.३३; ७.५, ७.२०, ७.२१, ७.२५, ७.२७, ७.२८. ७.३०; ८.१ ८.२, ८.३, ८.४, ८.५, ८.६, ८.११, ८.१४, ८.१६, ८.१९, ८.२४, ८.२६, ८.२८, ८.३०, ८.३२, ८.३४, ८.३५; १०.२३, १०.२५, १०.२८, १०.२९; ११.७, ११.८, ११.११, ११.१३, ११.१४, ११.१५, ११.१६, ११.१८; १२.१, १२.३५, १२.३८, १२.४०, १२.४१, १२.४२, १२.४५, १२.४६, १२.४८, १२.४९ = ५९

(३) रासा : २.४, २ १४; ३.७, ३.८, ३.४३; ४.१३; ६.७, ६.१३, ६.१४, ६.३४; ७.२२, ७.२३; ९.६, ९.७, ९.८; १०.१५, १०.१७ = १७

(४) मुडिल्ल : ३.२०, ३.३९; ५.१, ५.४, ५.५, ५.६, ५.८, ५.९; ६.१२, ६.२३, ६.२७, ६.२८; १०.१, १०.३, १०.६, १०.७ = १६

(५) पद्धडी : २.१, २.३, २.५, २.६, २.१०, २.११, २.१२; ४.७; ११.१०; १२.११, १२.१५, १२.२३, १२.३२, १२.३३ = १४

(६) गाथा : २.२, २.१६; ३.५, ३.१२, ३.३४; ६.१७, ६.३२; ७.२, ७.१८, ७.२६; ८.७, ८.८; १०.१० = १३

(७) अडिल्ल : ३.१६, ३.१८, ३.१९, ३.२८, ३.४१; ५.२५; ६.२९; ९.१; १०.५ = ९

(८) वस्तु : ५.३; १२.७, १२.८ = ३

(९) चउपई : १२.१९, १२.३९ = २

(१०) गाथा मुडिल्ल : ६.२५ = १

(११) त्रिभंगी ४.११ = १

वर्णिक छंद

(१) साटिका : १.१, १.२, १.६, २.१७, २.१८, २.२०, २.२४; ३ २, ३.६; ५.७, ५.१०, ५.४१; ९.९, ९.१०, ९.११, ९.१२, ९.१३, ९.१४ = २०

(२) भुजग (भुजंगी) १.४; २.७; ४.१०, ४.२०, ४.२२, ४.२३; ५.१३; ६.५; ७.६, १०, ७.१६, ७.१७, ७ ३१, ८.१०, ११.१२; १२.११ = १६

(३) श्लोक : २.१९, २ २५; ६ २९; ७.२४; ११.१७ = ५

(४) अर्धनाराच : ३.१७, ४.१४, ५.२४, ७.१२ = ४

(५) नाराच : २.१३; ५.३८; ६.२५ = ३

(६) त्रोटक : ८.९; १२.२९ = २

(७) साटक : ५.३६ = १

(८) दडमाल : १०.११ = १

(९) आर्या : ३.३० = १

(१०) गोलीदाम : ४.२५ = १

(११) रूपया : ७.१४ = १

(१२) वसत तिलक : ४.१८ = १

(१३) भमरावलि : ७.४ = १

(१४) रसावला : ७.१५ = १

(१५) विराज : १.३ = १

२३. 'पृथ्वीराज रासो' की शैली

किसी भी प्राचीन रचना की शैली पर विचार करते समय यह आवश्यक होता है कि उसकी भाषा के प्रकृत तत्वों को अलग कर लिया जावे, और इनको सुलझा लेने के अनन्तर[1] उसकी शैली के तत्वों को समझना सुगम हो जाता है। शैली के भी दो रूप होते हैं, एक तो उसका सामान्य रूप होता है, जो रचना में व्यापक रूप से मिलता है, और दूसरा उसका विशिष्ट रूप होता है, जो वर्ण्य विषय अथवा छन्द सापेक्ष होता है। प्रस्तुत रचना की शैली पर विचार करते समय दोनों रूपों पर अलग-अलग विचार करना सुविधाजनक होगा।

सामान्य शैली

रचना की सामान्य शैली पर विचार करने के लिए उदाहरण के लिए संपादित पाठ का कैंवास-वध का वह उद्धरण (३.२१–२७) लिया जा सकता है जो ऊपर रचना की भाषा के सम्बन्ध में विचार करते हुए दिया गया है। डॉ० नामवर सिंह ने रचना की ध्वनि-विषयक प्रवृत्तियों का निर्देश करते हुए कहा है, "छन्द के अनुरोध से प्रायः लघु अक्षर को गुरु और गुरु अक्षर को लघु बना दिया गया है। लघु को गुरु बनाने के लिए शब्दान्तर्गत—

(क) ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण,

(ख) व्यंजन-द्वित्व,

(ग) स्वर का अनुस्वार-रंजन, तथा

(घ) समास में द्वितीय शब्द के प्रथम व्यंजन का द्वित्व करने की प्रवृत्ति है। इसके विपरीत गुरु को लघु बनाने के लिए—

(क) दीर्घ का ह्रस्वीकरण,

(ख) व्यंजन-द्वित्व का क्षतिपूर्ति रहित सरलीकरण, तथा

(ग) अनुस्वार के अनुनासिकीकरण

की विधि प्रयोग में लाई गई है।"[2] उन्होंने इस प्रवृत्ति के उदाहरण भी दिए हैं,[3] जो कि प्रायः ठीक हैं और इस संस्करण में भी मिलेंगे। केवल यह कहना आवश्यक होगा कि यह प्रवृत्ति उतनी

[1] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराजरासो की भाषा' शीर्षक।

[2] डॉ० नामवर सिंह: 'पृथ्वीराजरासो की भाषा', सरस्वती प्रेस, बनारस, पृ० ११।

[3] वही पृ० ५१-११।

व्यापक नहीं है जितनी सामान्यतः समझी जाती या समझी जा सकती है। इसके प्रमाण में संपादित पाठ के ऊपर उल्लिखित उद्धरण को लिया जा सकता है। उसमें छन्दोनुरोध के कारण हुए (क) ह्रस्व स्वर के दीर्घीकरण का कदाचित् एक ही प्रयोग मिलता है, यह है सिद्धि > सिद्धी (३.२३.२); (ख) व्यंजन द्वित्व के कदाचित् केवल चार प्रयोग मिलते हैं: नागपुर > नाग्गपुर (३.२२.१), दाडिमउ > दाड्डिमउ (३.२२.२), विरदिया > विरद्दिया (३.२७.६) तथा निमटिहि > निम्मटिहि (३.२७.६)। स्वर के अनुस्वार-रंजन का कोई प्रयोग नहीं मिलता है, और न समास के द्वितीय शब्द के प्रथम व्यंजन के द्वित्व करने का कोई प्रयोग मिलता है। इसी प्रकार संपादित पाठ के उपर्युक्त उद्धरण में (क) दीर्घ के ह्रस्वीकरण का कोई प्रयोग नहीं मिलता है, (ख) व्यंजन-द्वित्व के क्षतिपूर्ति रहित सरलीकरण का कदाचित् एक ही प्रयोग मिलता है: दिट्ठि > दिठि (३.२१); और (ग) अनुस्वार के अनुनासिकीकरण का भी कदाचित् एक ही प्रयोग मिलता है: भुजग > भुजंग (= भुजँग)।[1]

विशिष्ट रूप

इस प्रसंग में यह बताना आवश्यक होगा कि शैली में अन्तर छन्द-भेद के आधार पर बहुत अधिक हो जाता है। कुछ छन्द ऐसे हैं जिनमें संस्कृताभास लाना 'रासो' के कवि को आवश्यक प्रतीत हुआ है, यथा श्लोक, साटिका या वसंत तिलक में; कुछ छन्द ऐसे हैं जिनमें प्राकृताभास लाना उसे आवश्यक प्रतीत हुआ है, यथा गाथा में; शेष में सामान्यतः भाषा का प्रकृत रूप रखना उसके लिए स्वाभाविक था, केवल जैसा हम नीचे देखेंगे, वर्ण्य विषय-भेद से शैली में भी यत्किंचित अन्तर उसने अवश्य ही प्रस्तुत किया है। छन्द भेद के आधार पर रचना की शैली का अध्ययन कवि की भाषा के प्रकृत रूप को समझने के लिए आवश्यक है, यह बात कुछ प्रस्तुत रचना के ही सम्बन्ध में नहीं, छन्द-वविध्य-प्रधान हिन्दी की समस्त प्राचीन रचनाओं के सम्बन्ध में लागू होती है: अन्तर केवल परिणाम का हो सकता है। और यदि रचना के मात्रिक और वर्णिक छन्दों पर हम ध्यान दें[2], तो डॉ० नामवर सिंह द्वारा उल्लिखित प्रवृत्ति पर ही नहीं, छन्द-योजना और शैली पर भी एक निश्चयात्मक प्रकाश पड़ेगा। हम देखेंगे कि—

(१) जहाँ तक मात्रिक छंदों का प्रयोग हुआ है, प्रायः सर्वत्र भाषा का प्रकृत रूप मिलेगा, अनुस्वार-रंजन न मिलेगा, समास और तत्सम के प्रयोग कम ही मिलेंगे, सामान्य व्यंजन-द्वित्व अधिक मिलेंगे; इस प्रकार के छंद हैं: दोहरा (दूहा), कवित्त (छप्पय), रासा, पद्धडी, मुडिल्ल, अडिल्ल, वस्तु, चउपई तथा गाथा मुडिल्ल। त्रिभंगी ही इस परम्परा का एक मात्र अपवाद है, जिसमें निम्नलिखित (२) के वर्णवृत्तों की प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं; गाथा में भी एकाध उदाहरण (यथा ६.२७) इस प्रकार के मिलते हैं, किन्तु वे अपवाद-स्वरूप ही हैं।

(२) जहाँ तक वर्णिक छंदों का प्रश्न है, कुछ प्रकार के वृत्तों में संस्कृताभास लाने का प्रयत्न मिलेगा, और इसलिए अनुस्वार-रंजन बहुत होगा, समास और तत्सम शब्दों का प्रयोग भी अपेक्षाकृत अधिक होगा, सामान्य व्यंजन-द्वित्व कम मिलेंगे। इस प्रकार के छन्द हैं: श्लोक (अनुष्टुप), साटिका, वसंततिलक तथा इंडमाल।

(३) वर्णिक छंदों में ही कुछ ऐसे मिलेंगे जिनमें संस्कृताभास लाने का प्रयत्न अधिक नहीं मिलेगा, केवल अनुस्वार-रंजन लाने का प्रयत्न विशेष मिलेगा, शेष बातें यथा उपर्युक्त (१) में

[1] ये विशेषताएँ प्रायः इसी प्रकार अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' शीर्षक में उद्धृत 'प्राकृत पैंगल' के हम्मीर-विषयक छन्दों तथा श्रीधर के 'रणमल्ल छन्द' के छन्दों में भी मिलेंगी।

[2] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराजरासो के छन्द' शीर्षक।

होगी। ऐसे छन्द हैं : विराज, आर्या, रूपया, भ्रमरावली और रसावला। यह अवश्य है कि इन छन्दों का प्रयोग रचना में बहुत ही कम हुआ है।

(४) वर्णवृत्तों में ही कुछ ऐसे भी मिलेंगे जो कभी तो उपर्युक्त (३) की भाँति प्रयुक्त होंगे[१] और कभी (१) की भाँति प्रयुक्त होंगे—अर्थात् उनकी शैली सर्वथा मात्रिक छन्दों के समान होगी।[२] ऐसा भी देखा जाता है कि कभी-कभी इन छन्दों में कुछ अंश (३) के समान और कुछ अंश (१) के समान होंगे।[३] ऐसे छन्द हैं : भुजंगी (भुजंग प्रयात), नाराच (वृद्ध नाराच), अर्द्धनाराच, और त्रोटक।

और हम अन्यत्र देख चुके हैं[४] कि संपूर्ण रचना का लगभग ३/४ मात्रिक छन्दों द्वारा निर्मित है, केवल १/४ वर्णिक वृत्तों द्वारा बना है, अतः प्रकट है कि संस्कृताभास, अनुस्वार-रंजन, तत्सम-बाहुल्य और समास की ओर झुकाव रचना में बहुत सीमित अंश में मिलेंगे। फिर, ऊपर बताया जा चुका है कि ये तत्व वर्णिक वृत्तों में ही प्रायः मिलते हैं, जिनका प्रयोग संस्कृत साहित्य से अपभ्रंश तथा भाषा-साहित्य में आया है। इनके सम्बन्ध में 'रासो' की रचना के पूर्व भी कवियों की सामान्य धारणा रही है कि इनमें रचना तभी सरस हो सकती है जब कि संस्कृताभास अथवा उसका कोई न कोई उपकरण, यथा अनुस्वार-रंजन, इनमें लाया जा सके।[५] अतः यह प्रकट है कि 'रासो' के कवि की सामान्य शैली पर विचार करते समय ऐसे वृत्तों को छोड़ देना चाहिए जिनकी ऐसी विशिष्ट शैली रही है जो आयासपूर्वक एक परंपरा का पालन करने के लिए प्रयोग में लाई जाती रही है। 'रासो' के कवि की प्रकृत शैली वह है जो रचना के शेष वृत्तों में मिलती है, अतः संपादित पाठ से ऊपर कँवास-बध की जो पंक्तियाँ (३.२१-२७) उद्धृत की गई हैं, वे उसकी प्रकृत शैली का वास्तविक उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

वर्ण्य विषय के अनुसार रचना में शैली-भेद बहुत कम मिलता है। ऊपर रचना के विविध प्रकार के वर्णनों की समीक्षा करते हुए[६] प्रायः समस्त प्रकार के उदाहरण दिए गए हैं। उनका विश्लेषण करने पर ज्ञात होगा कि परुष, विशेष रूप से युद्ध-वर्णन सम्बन्धी, प्रसंगों में ही शैली-भेद कुछ दिखाई पड़ता है, शेष प्रसंगों के छन्दों में वह प्रायः नहीं है। युद्ध-वर्णन के प्रसंगों में भी कृत्रिम रूप से ध्वनि-प्रभाव उत्पन्न करने का यत्न, जैसा कि परवर्ती रचनाओं में प्रायः मिलता है, 'रासो' में बहुत ही कम मिलता है। यहाँ भी शैली भेद छन्द-भेद से बहुत कुछ संबद्ध मिलेगा। शहाबुद्दीन सम्बन्धी प्रसंगों में स्वभावतः विदेशी शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है, यह बताया ही जा चुका है।[७]

कवि की सामान्य शैली की विशेषताएँ स्वतः प्रकट हैं। वह एक सुकवि की अत्यन्त समर्थ शैली है, भावों की अभिव्यक्ति करने में वह सर्वत्र भली भाँति सफल हुई है, उसकी शब्द-योजना

[१] यथा : १.४, ४.१०, ४.२२, ७.१७, ८.१०, ११.१२, ५.३८, ६.१५, ३.१७, ५.३४, ७.१२, ८.९।

[२] यथा : ४.२३, ७.१९, १२.२९, ४.१४।

[३] यथा : २.७, ४.१०, ५.१२, ६.५, ७.१०, ७.२१, २.१२।

[४] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो के छन्द' शीर्षक।

[५] दे० 'प्राकृत पैंगल' (संपादक चन्द्रमोहन घोष) में शार्दूलसट्ट, वसंततिलका, इंद्रवज्रा, रूपमाला तथा अन्य अनेक वर्णवृत्तों के उदाहरण।

[६] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो के वर्णन' शीर्षक।

[७] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो में प्रयुक्त विदेशी शब्द' शीर्षक।

मणीय है, कहीं भरती के शब्द रखने की आवश्यकता कवि को नहीं पड़ी है, न व्यर्थ के अलंकारों
वह दबी हुई है, और न रीति और गुणों से संबन्धित रूढ़ियों का वह अनावश्यक अनुसरण
करती है। यह शैली कभी-कभी संक्षेप-प्रवण अवश्य प्रतीत होती है, ऐसे स्थलों पर संगति लगाने
में पाठक को अपनी ओर से प्रायः कुछ न कुछ शब्दावली लानी पड़ती है। वस्तुतः जैसा उसे होना
चाहिए था, अपने विषय-प्रधान महाकाव्य के लिए वह संपूर्ण रूप से उपयुक्त एक गरिमा पूर्ण,
संतुलित और सुव्यवस्थित साधन बन सकी है।

२४. 'पृथ्वीराज रासो'
का
महाकाव्यत्व

महाकाव्य के लक्षणों के सम्बन्ध में भामह (५वीं शती ईस्वी) से विश्वनाथ कविराज (१६वीं शती ईस्वी) तक प्रायः समस्त काव्य-शास्त्रियों ने विचार किया है, जिसे देखने पर महाकाव्य के रूप के विकास के साथ साथ उनके द्वारा निरूपित लक्षणों मे भी विकास दिखाई पड़ता है। 'रासो' की रचना तक संस्कृत और प्राकृत में ही नहीं अपभ्रंश में भी अनेकानेक महाकाव्य रचे जा चुके थे। असंभव नहीं है कि नव्य भारतीय भाषाओं में भी कोई महाकाव्य रचे गए हों, किन्तु वे प्राप्त नहीं हैं। महाकाव्य विषयक मान्यताओं में भी परिणामतः परिवर्तन होता रहा होगा। इसलिए 'रासो' के पूर्ववर्ती काव्य-शास्त्रियों द्वारा निरूपित लक्षणों की अपेक्षा उसके परवर्ती काव्याचार्यों के मतों पर विचार करना अधिक उचित और उपयोगी होगा।

'रासो' की रचना के बाद के आचार्यों में सर्वप्रमुख विश्वनाथ कविराज हैं, जिन्होंने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के मतों का समाहार करते हुए और उनके परवर्ती महाकाव्यों पर भी दृष्टि रखते हुए महाकाव्य की सबसे व्यापक परिभाषा दी है, इसलिए केवल उन्हीं के मत को दृष्टि में रखते हुए 'रासो' के महाकाव्य पर विचार करना पर्याप्त होगा। उनके मत[१] का विश्लेषण करने पर महाकाव्य की आवश्यकताएँ निम्नलिखिति ज्ञात होती हैं :—

(१) प्रबन्ध की दृष्टि से उसको सर्गबद्ध होना चाहिए। सर्गों की संख्या [सामान्यतः] आठ से अधिक होनी चाहिए। उनका आकार न अति स्वल्प और न अति दीर्घ होना चाहिए। महाकाव्य का आरम्भ नमस्कार, आशीर्वाद तथा वस्तु-निर्देश के साथ होना चाहिए और प्रत्येक सर्ग की समाप्ति पर आने वाले सर्ग की कथा की सूचना होनी चाहिए।

(२) छन्द की दृष्टि से उसका प्रत्येक सर्ग एक एक वृत्त का होना चाहिए, किन्तु सर्ग के अन्त में उससे भिन्न वृत्त आना चाहिए। उसका कोई सर्ग ऐसा भी होना चाहिए जो नाना वृत्त युक्त हो।

(३) वस्तु की दृष्टि से उसका निर्माण किसी इतिहास-प्रसिद्ध अन्यथा सुजन-समाज में प्रचलित कथानक को लेकर होना चाहिए और उसका विकास विभिन्न सन्धियों की सहायता से प्रायः उसी प्रकार किया जाना चाहिए जिस प्रकार नाटक में किया जाता है।

(४) उसका नायक या तो कोई देवता, या धीरोदात्त गुणान्वित कोई क्षत्रिय होना चाहिए।

१ 'साहित्य-दर्पण', श्लोक ६१३-६२१।

(५) उसमें शृङ्गार, वीर और शान्त रसों में किसी एक को अंगी तथा अन्य रसों को अंग के रूप में आना चाहिए।

(६) उसका लक्ष्य अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष में से किसी एक की प्राप्ति होना चाहिए।

(७) उसमें, जहाँ पर अवसर हो, विविध वर्णनीय विषयों का सांगोपांग वर्णन होना चाहिए: यथा संध्या, सूर्य, इन्दु आदि का। कहीं-कहीं पर खलों की निन्दा और सज्जनों का गुण-वर्णन भी होना चाहिए।

(८) उसका नामकरण कथानक, नायक के नाम अथवा अन्य किसी आधार पर किया जाना चाहिए।

इन आवश्यकताओं की दृष्टि से विचार करने पर पृथ्वीराज 'रासो' पूर्णरूप से एक महाकाव्य ठहरता है। उसमें उपर्युक्त समस्त तत्व पाए जाते हैं :—

वह सर्गबद्ध है : न केवल प्रबन्ध की आवश्यकताओं का उसमें सम्यक् निर्वाह हुआ है, सर्गों में रचना सम्यक् विभाजन भी हुआ है। जैसा ऊपर बताया जा चुका है, यद्यपि उसके लघुतम पाठ की प्रतियों में सर्ग-विभाजन नहीं मिलता है, शेष समस्त पाठों में वह मिलता है, और एक मिलता है, इसके अतिरिक्त संपूर्ण रचना में कथाएँ इस प्रकार बँटी हैं कि सर्ग-विभाजन 'रासो' के कवि की दृष्टि में था, यह प्रस्तुत संस्करण के सर्गों को देखकर सुगमता से समझा जा सकता है; अतः 'रासो' का सर्गबद्ध होना भली भाँति प्रमाणित है।[1] ये सर्ग संख्या और आकार में भी 'साहित्य-दर्पण' में प्रतिपादित मत का अनुसरण करते हैं : ये आठ से अधिक हैं और प्रायः न अति स्वल्प हैं और न अति दीर्घ हैं। रचना का आरम्भ नमस्कार और संक्षिप्त वस्तु-निर्देश के साथ हुआ ही है।[2] विभिन्न सर्गों के अन्त में आने वाले सर्ग के कथानक की सूचना अवश्य नहीं है, किन्तु यह प्रबन्ध-विषयक कोई अनिवार्य आवश्यकता भी नहीं है।

छन्द की दृष्टि से 'रासो' 'साहित्य-दर्पण' के लक्षणों के अनुरूप अवश्य नहीं पड़ता है और उसका कारण यह है कि महाकाव्य होने के साथ-साथ यह छन्द-वैविध्य-परक रासो-परंपरा की रचना है। यह रासो-परंपरा संस्कृत और प्राकृत में नहीं थी, अपभ्रंश में प्रारम्भ हुई और वह भी कदाचित् बहुत पीछे।[3] इसमें महाकाव्यों की रचना 'पृथ्वीराज रासो' के पूर्व भी हुई थी, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है। इसलिए 'साहित्य-दर्पण' कार की महाकाव्य की छन्द-योजना विषयक मान्यता यदि बदली न हो तो आश्चर्य न होगा। और छन्द की एक रूपता एक सर्ग के अन्तर्गत सामान्यतः उपयोगी भी होती है, क्योंकि उसके द्वारा कथा-प्रवाह और वर्णन-प्रवाह अधिक सुरक्षित रह सकते हैं। किन्तु विश्वनाथ कविराज ने ही महाकाव्य के अन्तर्गत कोई सर्ग ऐसा भी रखने की अर्थात् आवश्यकता मानी है जिसमें विविध वृत्त हों। इसलिए विविध छन्दों में यदि समूचे महाकाव्य की अर्थात् उसके समस्त सर्गों की रचना की जावे, तो उसमें कोई मौलिक आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

वस्तु की दृष्टि से 'पृथ्वीराज रासो' का कथानक इतिहास-प्रसिद्ध तो रहा ही है, सुजन-समाज में प्रचलित भी रहा है : देश के विदेशी जातियों के हाथों में जाने की यह दुःखपूर्ण कथा सदियों तक कही-सुनी जाती रही होगी और 'हम्मीर महाकाव्य' और जैन प्रबन्धों में इस कथा के दो अन्य रूप

[1] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'पृथ्वीराज रासो की प्रबन्ध-कल्पना' शीर्षक।

[2] वही।

[3] दे० अन्यत्र इसी भूमिका में 'रासो काव्य-परंपरा और पृथ्वीराजरासो' शीर्षक।

पृथ्वीराज रासउ

१. मङ्गलाचरण और भूमिका

[१]

साटिका— [१]छत्तं या[२] मद गंध घ्राण[३] लुब्धा[३] अलि भूरि[४] आच्छादिता[५] । (१)
गुंजाहार अधार[१] सार गुन या[२] रुंजा पया[३] भासिता । (२)
अग्रे या[१] स्रुति कुंडला[२] करि नवं[३] तुंडीर[४]× उद्दारया[५]× । (३)
सोयं पातु गणेस सेस सफलं[१] प्रिथिराज काव्ये हितं[२] । (४)

अर्थ—(१) जिनका छत्र मद-गंध के घ्राण-लुब्ध भूरि अलियों से आच्छादित है, (२) जो गुंजा का हार धारण करने वाले, सार गुणों के आधार हैं, और जिनके पदों (चरणों) में रुंझा (रुनझुन करने वाला पैरों का आभूषण—घुंघुरू) भासित होता है, (३) जिनके कानों के अग्र [भाग] में कुंडल हैं, जो नव हाथी की तुंड वाले हैं और उदार हैं, (४) ऐसे वे गणेश रक्षा करें और 'पृथ्वीराज काव्य' के हित में जो शेष हो उसको सफल करें।

पाठान्तर— × चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
÷ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. में यहाँ 'पुन' है, जो अन्य किसी प्रति में नहीं है। २. धा. या, मो. जा, शेष में 'जा'। ३. मो. रागुष वार्य, धा० गंधरसिका, स. राग रुचर्य, म. अ. घ्राण (घ्रान—म.) लुब्धा, ना.—लुब्धा। ४. मो. भार, ना. अ. भोर, स. भूर, म. भौर। ५. म. आच्छादितं।

(२) १. मो. आधार, स. अधार, ना. म. अ. विहार। (तुल० अगले छन्द का चरण १)। २. मो. गुनोजा, धा. गुनिजा, म. गुनया, ना. अ. गुणजा। ३. मो. झं[illegible]ा पया, धा. रुंजा पिया, अ. रुंजा पया, ना. रुंजा पया, स. झंझा पया।

(३) १. धा. म. या, शेष में 'जा'। २. मो. स्रुत कुंडलं। ३. मो. नवुं; धा. नवं, ना. णवः, अ. फ. करा, म. करि; स. कर। ४. मो. थुंडीर, अ. थुद्दीर, म. जुर्दी:, ना. थुंडीर। ५. मो. उद्धारवं।

(४) १. मो. स. सेस सफलं (शेश सफलं—मो.) धा. सतत फलं, अ. ना. सेवित फलं। २. मो. काव्यहितं, म. स. काव्यं वृतं।

टिप्पणी— (१) छत्त < छत्र। (२) पय < पद।

[२]

साटिका— मुक्ता[१] हार विहार सार[२] सबुधा[३] अबुधा[४] बुधा गोपिनी[५] । (१)
सेतं[१] चीर[२] सरीर नीर गहिरा[३] गौरी[४] गिर[५] योगिनी । (२)
वीना[१] पानि सुधानि[२] जानि× दभिजा[३] हंसा रसा आसनी[४] । (३)
लंबी[१] या[२] चिहुरार[३] भार जघना[४] विघना घना[५] नासिनी ॥ (४)

अर्थ—(१) जो मुक्ता का हार धारण करने वाली है, जो बुद्धिमानों के [कल्पना] विहार का सार है, और जो बुद्धिमानों की अज्ञता का गोपन करने वाली है, (२) जो श्वेत चीर धारण करने वाली है, जो गहरी कांति वाले शरीर की है, जो गौरा—गोर वर्ण वाली है, जो गिरा (वाणी) का योग करने वाली है, (३) जो वीणा पाणि (हाथों में वीणा धारण करने वाली) है, जो सुवर्णी (अच्छे वर्ण वाली) है, मानो उदधि-पुत्री (लक्ष्मी) हो, जो हंसिनी रूपी रसा (पृथ्वी) पर बैठने वाली है, (४) जिसकी चिकुरावली लंबी है, और जो भारी जघनों की है, वह [सरस्वती] घने विघ्नों का नाश करने वाली है—या होवे।

पाठान्तर—× धा. में चिह्नित शब्द नहीं है।

(१) १. धा. ना. म. मुत्ता। २. ना. हार हार। ३. मो. सरधा, म. स. सुबुधा, ना. विबुधा, अ. बसुधा। ४. मो. अछूधा (< अबुधा), स. अब्धा। ५. धा. गोपनी।

(२) १ अ. श्वेतं। २. मो. ना. चीर, स. चौर। ३. मो. गिहिरा, म. गहिरी, ना. अ. गहरी। ४. म. गवरी। ५. धा. गुनं, ना. अ. फ. गुण, स. गिरा।

(३) १. मो वाना (< वीना), धा. अ. वीणा। २. धा. अ. सुवाणि। ३. म. दधिती। ४. ना. आसिनी।

(४) १. मो. लंबा, धा. लंबी, ना. लंब, अ. लंबं, स. लंबो, म. लंबि। २. धा. मो. 'या', शेष में 'जा'। ३. ना. चिहुरार। ४. मो. जघनी। ५. मो. विधना धना, धा. विना घनं। ६. धा. नासनी, मो. सनी।

टिप्पणी— (२) सेत < श्वेत। (४) चिहुरार < चिकुरावली।

[३]

विराज— जटा जूट[२] बंध[१]। (१)
ललाटीय[१] चंदं। (२)
विराजादि छंदं[१]। (३)
भुजंगी गलिंदं[१]। (४)
सिरोमाल[१] लद्दं[२]।[३] (५)
गिरिज्जा अनंदं[१]। (६)
सुरे[१] सिग[२] नद्दं। (७)
उगे[१] गंग हद्दं। (८)
रणे[१] वीर[२] मद्दं।× (९)
वारी चम्म[१] छद्दं[२]।× (१०)
करे[१] काल पद्दं[२]।× (११)
चप्पे अग्गि दद्दं[१]। (१२)
पुलै[१]* यद्दि[२] जद्दं। (१३)
जयो जोग[१] सद्दं। (१४)
घटा[१] जाग्गि भद्दं। (१५)
जरे[१] वाम तद्दं।× (१६)

रचे मोह[१] कद्दं ।+(१८)
बचे[१] दूरि[२] दंद[३] । (१९)
नटे भेष रिंद[१] । (२०)
नमो ईस इंद[१] ।[२](२१)

अर्थ—(१) जो जटा-जूट बाँधे हुए हैं, (२) और जिनके ललाट पर चन्द्रमा है (३) आदि के विराज [छन्द] मे उनको वन्दन करता हूँ। (४) भुजगी (सर्पिणी) जिनके गले में है, (५) और सिरों की माला [जिनके गले में] लटी हुई है, (६) जो गिरिजा को आनन्द देने वाले हैं, (७) जो शृंग (सींग) को निनादित करते हैं, (८) जो गंगा के हृद को पवित्र करने वाले हैं, (९) जो रण में वीरता के मद वाले हैं, (१०) जो गज-चर्म के आच्छादन वाले हैं, (११) जो काल को क्षय करते (खाते) हैं, (१२) जिनके नेत्रों में अग्नि की उष्णता (ज्वाला) होती है (१३) जब जब प्रलय होता है, (१४) योग के शब्द (अनाहत नाद) के जो विजेता हैं, (१५) जो [शब्द] मानो भाद्रपद की घटा का होता है, (१६) जिन्होंने काम को तत्काल जलाया था, (१७) ऐसे तुम्हें हे हर, मैं 'त्राहि' कहता हूँ। (१८) जो मोह का कदन (नाश) करने वालों पर अनुराग करते हैं, (१९) द्वन्द्व जिनसे दूर बचता है (२०) और जो नट के वेष में रिंद (मस्तमौला) हैं, (२१) उन ईशेन्द्र (महेश) को नमस्कार करता हूँ।

पाठान्तर—÷ फ. में पूरे छन्द के स्थान पर केवल 'जटा जूटयौ' लिखा हुआ है।

*चिह्नित शब्द संशोधित पाठके हैं।

× म. में चिह्नित चरण नहीं है।

+ अ. मे चिह्नित चरण नहीं है।

(१) मो. धा. बंध, इनके अतिरिक्त सभी में 'बंद' (बंदं—म.) है।

(२) १. मो. लनाटीय, धा. अ. लल्लाटेय, ना. लिलाटीय, स. लिल्लाटंत।

(३) १. धा. ना. अ. सिरोजाद (सिरोजाय—धा.) छंदं, म. उ. स. विरानंत।

(४) १. धा. गल्लंद, मो. गलिदं, ना. गलद्द, म. उ. स. गलिंदं, अ. गलेंदं।

(५) १. मो. सिरोमल, म. सिरोसाल। २. धा. रुंदं, उ. स. दंदं। ३. ना. स. में यहाँ

हर्‌यौ ढोरु नद्दं। हस्यौ (हन्या—ना.) पुन्न मद्दं।
खिजी मात्त भारो। सराप विचारी।
करी जाकु ईसं। धरयौ पुत्र सीसं।
सर्व विघ्न भग्गे। तुटी नाप लग्गे।
कल्मानंत छपं। गनेसं सरपं।
इक दंत दंसी। विराजंत वंसी।
सु दीपत्ति अंसे। कोविद्दा प्रसंसे।
मनुं भूमिधारी। वराहा उपारी।
हसौ दत्ति तेजं। कला सोम केजं।
नमो देव बंदं। प्रगा ईत मद्दं।
भयं भूत प्रेतं। तिजारी न हेमं।
इकं दीह पकं। दुती देह मेकं।
भगत्तं सुचक्री। डीउ ल्हिछि बक्री।
इकं पोप अठं। करे नाग नठं।
सुरं जक्षि मुत्ती। जलं माह्नि पत्ती (मात्ती—ना.)।
धरे भाक सीमं। त्रिलोकी स ईसं।

रत्त रत्त भारी। कल्ला विचारी।
लीउ माल चर्च्यं। बीउ साम्धि नच्यं।
मिले पद्द दोइं। रम काम सोइं।
इके जोरिय आयौ। दायौ काम चायौ।
[पिजी रिष्पि मारी—केवल स. में]। कीयौ काम झारी।
भयौ पुत्र तब्बं। भुजा गौर सब्बं।
सिरो माल धारी। गनेसं विचारी।
[खिजे तच्च ईसं। मयौ रोम बीसं।
अवला इकली। बियौ पुर्प मिली—केवल स. में]

(६) १. अ. गिरीजाय नंदं।

(७) १. अ. उरो, म. सुरे, उ. जरें, स. सिरे। २. मो. सिप, धा. सिघ, म. सिंगि, उ. स. सिंघि।

(८) १. धा. उरे, अ. शिरो, मो. उणे, म. स. उनें।

(९) १. उ. रिनौ। २. धा. धीर।

(१०) १. धा. चम्म, मो. अ. चर्मं। २. मो. सदं।

(११) १. मो. कले, अ. जरे। २. अ. कदं।

(१२) १. मो. चम्पि (=चपे) अंग दंदं, धा. चखे अग्गि तद्द, म. चपे अग्नि तदं, अ. चले अग्गि छद्द, स. चख अग्गि दद्द।

(१३) १. मो. पुलि (=पुलें), अ. मले, धा. म. स. मलै। २. म. जादि।

(१४) १. धा. जयै योगि, अ. जयं योगि।

(१५) १. धा. धरा।

(१६) १. मो. जुरे, शेष में 'जरे'।

(१७) १. अ. तद्द मद्द, धा. ताहि मद्द।

(१८) १. मो. धा. मोहि।

(१९) १. मो. वंचि (=वंचे), म. चवे, शेष में 'रुचे'। २. म. रारि। ३. मो. ददं

(२०) १. मो. रदं।

(२१) १. धा. सिद्ध। २. म. में यह चरण इसी स्थान पर दुहराया हुआ है।

टिप्पणी—(३) छन्द < वन्द्=वंदन करना, प्रणाम करना। (७) सिंग < शृङ्ग=सींग। (८) उण < पुण < पू=पवित्र करना। (१०) छद्द < छद=आच्छादन, आवरण। (११) षद्द < खाद=भोजन। (१२) दंदं < द्वन्द्व=शीत उष्ण, किंतु यहाँ पर ताप। (१३) पुलें < प्रलय=सृष्टि का अन्त। (१५) मद्द < माद्=मादौ। (१७) वद<वद्=कहना (१८) रच < रञ्ज्=रचना, अनुराग करना। (२१) [सि] (फा०)=मस्तमौला।

[४]

भुजंगी:—

प्रथम्मं भुजंगी सुधारी[१] महत्तं[२]। (१)
जिनें[१] नाम× एकं× अनेकं कहत्तं॥ (२)
दुती लम्भयं[१] देवता[२] जीवतेसं। (३)
जिनें विस्व राप्यौ[१] बलं[२] मंत[३] सेसं[४*]॥[५] (४)
त्रिती[१] भारथी व्यास भारथ्थ भाप्यौं[२]। (५)
जिनें उत्त[१] पारथ्थ सारथ्थ साष्यौं[२]॥ (६)
चवं सुक्क देवं[१] परिष्पत्त*[२] पायं[३]। (७)
जिनें[१] उद्धरे[२] सव्व[३] कुरु वंस[४] रायं॥ (८)

नलै रूप[१] पंचम्म[२] श्रीहर्ष सारं[३] ।[४] (९)
नलै राय कंठं दिय नैषध्ध हारं[१] ॥ (१०)
छठं कालिदास[१] छ भासा समुद्द[२] । (११)
निजं[१] सेतु बंधं[२] सु भोज[३] प्रबंधं ॥× (१२)
सतं[१] दंड माली सु लालिय[२] कवित्तं । (१३)
जिनै बुद्धि तारंग[१] सु गंगा सरित्तं[२]॥[३] (१४)
गिरा सेष[१] बानी कवी कव्व[२] बंधं[३] ।[४] (१५)
जिनै सेस[१] उच्छिष्ट[२] कवि चंद[३] छंदं[४] ॥[५] (१६)

अर्थ—(१) [अपने वंदनीय कवियों के रूप में] मैं पहले उन भुजंगिनी को धारण करने वाले (शिव) को ग्रहण करता हूँ (२) जिनका नाम एक है [किन्तु] अनेक कहा जाता है। (३) दूसरे मैं उन जीवितेश (जीवन के स्वामी—यम) को पाता हूँ, (४) जिन्होंने विश्व को मन्त्र-बल से शेष (बचा) रक्खा है—अथवा जिन्होंने विश्व में मन्त्र-बल को शेष (बचा) रक्खा है। (५) तीसरे मैं महाभारत के [कवि] व्यास को पाता हूँ जिन्होंने महाभारत कहा, (६) जिन्होंने [उसमें] पार्थ सारथी द्वारा उक्त गीता की साक्षी दी। (७) चौथे मैं शुकदेव और परीक्षित को पाता हूँ, (८) जिन्होंने कुरुवंश के समस्त राजाओं का उद्धार किया। (९) पाँचवें नल के रूप (अवतार) श्रीहर्ष को मैं प्रसिद्ध करता हूँ, (१०) जिन्होंने नैषध (नल) के कंठ में 'नैषधीय' का हार दिया (डाला)। (११) छठें मैं कालिदास को पाता हूँ, जिन्होंने षट्भाषा समुद्र पर (१२) भोज के प्रबन्ध (आयोजन) से ['सेतु बंध' काव्य के रूप में] निज (अपना) सेतु बाँध दिया। (१३) सातवें मैं कविता का लालन करने वाले दंडमाली (दंडी) को पाता हूँ, (१४) जिनकी बुद्धि की तरंगें सरिता गंगा [की तरंगों के समान] थीं। (१५) गिरा (सरस्वती) की शेष वाणी को लेकर अन्य कवियों ने काव्य-प्रबन्ध किए, (१६) जिनके भी [अनन्तर] शेष उच्छिष्ट को कवि चंद छंद-निबद्ध कर रहा है।

पाठान्तर— ÷ फ. में यह पूरा छन्द दो बार आता है : एक तो प्रथम खंड की समाप्ति पर और दूसरे दूसरे खंड के प्रारम्भ में; अ. में चरण १३ का उत्तरार्द्ध, १४ तथा १५ पहले एक बार आ लेते हैं तब पूरा छन्द भी इसीके बाद आता है। नीचे अ. फ. का पाठान्तर परवर्ती स्थान पर आए हुए पाठ के अनुसार दिया गया है जो अ. फ. दोनों में पूरा मिलता है।

* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

× चिह्नित चरण अ. में नहीं है।

(१) १. ना. सधारो। २. धा. ग्रहण्णं, अ. गृहनं, फ. म. गहनं (=ग्रहणं)।

(२) १. अ. भिनै, ना. जि—।

(३) १. अ. फ. लभ्यतं, म. लभ्यते। २. अ. फ. देसा, ना. उ. स. देसतं।

(४) १. म. जनै जस्त्र रख्यो। २. अ. म. उ. स. ना. दली, फ. दले। ३. धा. मित्र, अ. ना. मत (< मंत्र), फ. मति। ४. म. जेसं। ५. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—
धवं वेद बंभं हरि किति भासी। जिनै ध्रम्म सा ध्रम्म संसार सासी।

(५) १. ना. बिनो। २. म. भष्या।

(६) १. अ. उत्ति, फ. उक्ते (< उक्ति)। २. म. पारथ सारथ सिष्यी।

(७) १. अ. चवं शुकदेव, फ. परी शुक देव, म. चवे शुषदेवं। २. धा. परिष्पत्थ, ना. अ. म. परीछत्त,फ.

परीक्षत, स. परीषत्त । ३. अ. फ. रायं ।

(८) १. म. जिन । २. उ. स. उद्धर्यो । ३. धा. सव्य । ४. धा. कुरुपंस, ना. अन्व कुरु (कुरु) वंस, म. सव कुर वंस, उ. अन्व कुर वंस, स. अन्व कुवंस ।

(९) १. फ. नले रूप, उ. स. नरं रूव (रूप-स.), म. नले रूव । २. धा. पंचमा । ३. फ. पंचम नैषधि हारं । ४. ना. में अगला चरण इ-इस चरण के स्थान पर भी है ।

(१०) १. म. उ. नले राइ कंठे दि नेषद्ध हार, स. नले राइ कंठं दिने षद्ध हारं, अ. नले राय कंठं नैषद्ध हारं, फ. श्री हर्ष सिंगार अनिसार सारं ।

(११) १. ना. म. अ. फ. छठे कालिदासं (कालदासं—म. ना.)। २. ग. समा सुष घंदं, ना. सुभाषा सबुद्दं, उ. स. सुभाषा सुबद्धं । ३. उ. स. में यहाँ और है :—

जिनै बाग वानी सुवानी सबद्दं । कियौ कालिका मुक्ख बासं सुसुद्धं ।

(१२) १. फ. निरे, म. उ. स. ना. जिन । २. म. वंध्या । ३. ना. ज भोज प्रबंधं, फ. स भोजस्य बंदं, म. सुमो यं प्रबंधं, उ. स. ति भोज प्रबंध ।

(१३) १. म. सुतं । २. धा. दंडमा मास लालिय, फ दंडायं लालमाली, ग. अ. डंड (दंड—अ.) माली सुलाली, ना. उ. स. दंड (डंड—ना.) माली उलाली ।

(१४) १. धा. म. अ. जिणे बुद्ध (बुध—म.) सारंग, फ. जिने उद्धरी पुव्व (तुल० चरण८)। २. अ. फ. ना. गंगा पवित्तं, ना. गुण सरित्तं, म. गंगा सुरीतं । ३. ना. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—जयदेव अट्ठं कवी कव्विराय । जिनै केवलं कित्ति गोविंद गायं । उ. स. में यहाँ पुनः और है:—

गुरं सव्व कव्वी लहु चंद कव्वी । जिनै दर्सियं देवि सा अंग अव्वी ।

(१५) १. ना. गिरी सेव, म. गिरो शेष । २. ना. काव, म. कवि । ३. अ. फ. ना. म. वंदे । ४. उ. स. में पूरे चरण का पाठ है : कवी कित्ति कित्ती उकत्ती सुदिक्खी । फ. में परवर्ती स्थान पर के पाठ में चरण छूटा हुआ है, किंतु पूर्ववर्ती स्थान पर के पाठ में यह चरण भी है ।

(१६) १. धा. जिणं सेस, अ. फ. तिनहि पुच्छि, ना. तिनें शेष, म. नबूतास । २. अ. में शब्द छूटा हुआ है फ. उच्छिष्ट । ३. धा. कवि छन्द, फ. कवि कवि । ४. ना. म. अ. फ. छंदे । ५ उ. स. में चरण का पाठ है : तिन की उच्छिष्टी कवि चंद भष्षी ।

टिप्पणी—(२) यम ऋगवेद का कुछ रिचाओं, एक विष्णु-स्तोत्र तथा एक स्मृति के रचयिता माने जाते हैं । (४) मंत्र < मंत्र । सेस < शेष । (९) रूव < रूप । सार < सा(र्)य् = प्रख्यातकरना, प्रसिद्ध करना । (११) षटभाषा : प्राकृत, संस्कृत, मागधी, शौरसेनी, पैशाचिका और अपभ्रंश (१२) नयं = निज । (१५) कव्व < काव्य ।

[४]

दोहा— छंद[१] प्रबंध कवित्त जति[२] साटक[३] गाह दुहत्थ[४] । (१)
लहु गुरु मंडि त छंडिहउं[१]* पिंगल[२] भरह[३] भरत्थ[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) कविता के जितने [प्रकार के] छंद-प्रबंध होते हैं, साटक [-बंध], गाहा [-बंध,], दूहा [-बंध] [आदि], (२) उनमें लघु-गुरु का मंडन करके पिंगल [के छंद-सूत्र], भरत [के नाट्य शास्त्र] और महाभारत को [पीछे ?] छोड़ दूँगा—उनसे बढ़ कर रचना करूँगा ।

पाठान्तर— * चिह्नित संशोधित पाठ का है । (१) १. ध. बंध । २. धा. अ. फ. रस, ना. म. जुत्ति, म. चित । ३. म. साटकि । ४. मो. अ. दूहथ, अ. फ. दुअथ्य, ना. दुअर्थ, म. दुरथ्य ।

(२) १. मो. पंडित छंडिहु (=छंडिहउ), धा. मंडित पंडियहु, अ. मंडित पंडिया, ना. मंडित पंडयहि फ. मंडित पंया, म. मंजिमंडी हुडे, उ. स. मंडित मंडयहि । २. ग. प्यंगल । ३. ना. म. उ. स. अमर । ४. मो. भरथ ।

टिप्पणी—(१) जति < जत्तिय < यावत्=जितने । (२) भाह < भरत ।

[६]

साटिका— राजं जा अजमेरि[१] केलि कविरं[२] वृत्ता* रता[३] संभरि[४] । (१)
दुद्धारा भर×[१] भार[२] नीर×[३] वहनो दहनो दुरग्गो[४] अरि । (२)
सोमेसुर नर×[१] नंद दंग[२] गहिला[३] वहिला वनं वासिनं[४] । (३)
निर्मानं[१] विधिना त* जान[२] कविना ढिल्ली[३] पुरं भासिनं[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) जिस राजा की कपिल (धूलि-धूसरित) केलि अजमेर में हुई, जिसके अनुराग-पूर्ण वृत्त साँभर में हुए, (२) जिसका दुधारा (दो धारों का खड्ग) उस भारी भट के नीर (उसकी कांति) को वहन करता था, और शत्रुओं के दुर्गों को दग्ध करने वाला था, (३) वह नर (पौरुष युक्त) सोमेश्वर का पुत्र, जो दंग गहिल (युद्ध के लिए पागल) रहा करता था, जो वहिलावन का निवासी था, (४) वह विधाता के द्वारा, मानो कवि के द्वारा, ढिल्लीपुर में भासित (द्योतित) होने के लिए बनाया गया था।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द म. में नहीं हैं।

(१) १. धा. मो. स. ना. अजमेर, फ. अजमेरु । २ धा. कविलं, म. कवीला, ना. अ. फ. कलयं। ३. धा. वित्तां (=वित्ता) रता, मो. वृत्ता नता, अ. फ. ना. वृंदं नृतं, म. वृंतानिता, स. मदं मतं । ४. अ. फ. ना. सुंदरी।

(२) १. ना. दुधीरा धर, अ. दुद्धारा धर, फ. दुद्धारध धरि, म. दुदार मार । २. ना. धीर, अ. म. स. मीर, फ. भीर । ३. मो. ना. स. मीर । ४. धा. दहनो दुरगं, ना. दहनोपि दुर्गं, मो. म. स. दहनो दुरंगो (दहनौ दुरंगो—म. स.), अ. फ. दहनोपि दुर्गं।

(३) १. धा. सोमेसो सुर, अ. सोमेसुर वर, फ. सोमेस्वर वर, ना. स. सो सोमेसर, म. सोमेसुर। २. धा. नंद चंद, अ. दं—, फ. में दूसरा शब्द नहीं है, ना. म. नंद नंद, स. नंद दद। ३. म. गवहला। ४. मो. म. स. वासनं, फ. वासनी।

(४) १. म. निवर्णं । २. धा. विधनान जानि, मो. विधिना न जान, अ. फ. विधिना सुजानि, म. विधिना निजानि, ना. चहुवान जान। ३. धा. अ. फ. दिल्ली। ४. मो. म. वासनं, धा. भासितं, अ. वासिनं, . वासनी।

टिप्पणी—(१) कविर < कपिल=भूरा, मटमैला । रत्त < रक्त=अनुरागपूर्ण । (२) दुरग्ग < दुर्ग। (३) गहिल < ग्रहिल [दे०]=भूतग्रस्त, पागल, उद्भ्रान्त। (४) भासिन्=द्युतिमान्।

—:०:—

२. जयचंद राजसूय यज्ञ और संयोगिता का प्रेमानुष्ठान

[१]

पज्झडी— [१]कल[२] अत्थ[३] पत्थ[४] कनवज्ज राउ[५] । (१)
सत पित्त सेव*[१] धरि* धम्म चाउ[२] ॥[३] (२)
वारयण*×[१] भूमि× हय गय[२]× अनग्गु[३] । (३)
परठिअा पूनि[२] राजसू जग्गु[२] ॥ (४)
सुद्धिग*[१] पुराण वलि[२] वंस वीर । (५)
भुवगोल[१] लिपित[२] दिप्पित[३] सहीर ॥ (६)
छिति[१] छत्रबंध राजनि[२] समान । (७)
जित्तिअा[१] सयल[२] हय बल[३] प्रमान ॥ (८)
पुच्छइ[१] सुमंत[२] परधान तन्त्र[३] । (९)
अब[१] करहि[२] जग्गु जे[३] लेहि*[४] क-व*[५] ॥ (१०)
ऊतरु त दीअ[१] मंत्रिय[२] सुजान[३] । (११)
कलिजुग्ग नही[१] अर* जुग[२] प्रमान[३] ॥ (१२)
करि धम्म[१] देव देवर[२] अनेय[३] । (१३)
षोडसा[१] दान दिनु[२] देहु देव[३] ॥ (१४)
'मुंहु सिप्प 'मानि[१] नृप पंग[२] जीव[३] । (१५)
कलि अथिथ[१] नही अर्जुन सु भीव[२] ॥ (१६)
मुकि पंगु 'राय[१] मंत्रिय[२] समान । (१७)
लहु लोह[१] अच्च लो लहुं* पयान[२] ॥ (१८)

अर्थ—(१) कल (मनोहर) अर्थ के पथ में कन्नौजराज था, (२) जो सत क्षेत्र (जैन धर्म के अनुसार जिन मन्दिर, जिन प्रतिमा, ज्ञान, साधु, साध्वी, श्रावक, और श्राविका)। का सेवन करता था और धरा पर धर्म में रुचि रखता था। (३) [उसके] भूमि के वारण (शत्रुओं से बचाव या सुरक्षा के साधन) अनम (दुर्गों से परिवेष्ठित) हय और गज थे। (४) [ऐसे कन्नौजराज ने] पवित्र राजसूय यज्ञ की परिस्थापना की। (५) उसने पुराणों के बलशाली और वीर वंशों का शोध किया (६) और जो कुछ लिखित भूगोल (भू-वृत्त) था, उसको देख-पूर्वक देखा। (७) क्षिति के छत्रबन्ध [छत्र धारण करने वाले] राजाओं से (८) [उसने] सब कुछ अपने हय-बल (अश्व-सेना) के द्वारा जीता। (९) [तदनन्तर] अपने प्रधान (अमात्य) से वह यह मन्त्र (विचार) पूछने लगा—इस मन्त्र (विचार) के सम्बन्ध में परामर्श करने लगा —[illegible]

(१०) वह अब यज्ञ करे [जिससे] कि काव्य (यश) का लाभ करे। (११) ज्ञानी मन्त्री ने तो उत्तर दिया, (१२) "कलियुग इतर युगों का सा नहीं है—अथवा कलियुग में इतर युग प्रमाण (प्रामाण्य) नहीं हैं। (१३) हे देव, अनेक देवालय [निर्मित करा] कर (१४) षोडस [प्रकार के] दान [प्रति] दिन दें। (१५) हे नृप पंग जीव, मेरी सीख मानें, (१६) यह कलियुग है, [इस युग में] अर्जुन और भीम नहीं हैं [जिनके पराक्रम के बल पर युधिष्ठिर ने राजसूय किया था]।" (१७) [इस उत्तर को सुनकर] पंगराज मन्त्री से क्षुब्ध (क्रुद्ध हुआ) (१८) और उसने कहा, 'यदि मैं अब लघु लोभ-लाभ करता हूँ [और उसके लिए यज्ञ नहीं करता हूँ] तो यह [मेरा] अज्ञान होगा।"

पाठान्तर— ● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
  × चिह्नित शब्द धा में नहीं है।

(१) १. धा. में इसके पूर्व है : वारता—हिव कनवज का राजा की वात कहइ छइ। ना. में इसके पूर्व है : वचनिका। कनवज्ज को राजा जैचंद दळ पांगुरो ताकी स्थान कौन है तहां की बात प्रबंध अब राजसूजग्य की बात मंडी है। २. उ. स. में इसके पूर्व और है :—

थप्पै सुमट्ट राजसू पग्ग। धर हरैं पाप भर चरा गंग।
धुनि धुनि सु बिप्र बोलैं तिवेद। तन करैं निमल अघ करैं छेद।
मढ मढन हेम कसि कसि सुनारि। मानौं कि सूर ससि क्रित तार।
जगमगैं हेम विधि विधि बनाइ। जिम निगम अत वसि बहुत आइ।
मढ मढन कलस तोरन समान। कैलास सिषर प्रतपैं सु भान।
मढ मढन गौण रजत बनाइ। कैलास दरद्द ससि अद्ध पाइ।
मढ मढ किपाट जगमग जराइ। कैलास लगि नवग्रह रिमाइ।

(तुल० स. ४८. ७२-७४ जो सभी प्रतियों में हैं।)

३. धा. कल अव्व, मो. कल यथ, फ कलि अथ, ना. कल हंत, द. उ. स. कलि अंत। ४. धा. पव। ५. मो. राव, अ. फ. राव, उ. स. राइ।

(२) १. मो. ऊंसत पित सिव (= श्री सतपित सेव), धा० सत पेत सीव, अ. सत सील रत, फ. सत सील रत्त, ना. द. सत पवि (सविपरु—ना.) सील, उ. स. सतपती सील। २. धा. धुरि धम्म धाउ, मो. ना. धर धर्म धाउ (चाउ—ना.), अ. धर धर्म चाव, फ. धर धर्म धाउ, उ. स. धर ध्रम्म धाव। ३. उ. स. में यहाँ और है :—

सुनि रोस कियो पहु पंग राव। मागधह सूत बंदनि तुलाव।
पुच्छयौ सुवंस क्रमधज्ज भव्व। हम वंस जग्य किहि कियौ पुव्व।
जिहि वंस जग्य बन होइ राज। सुगतौ न भूप सुप सुर समाज।
तुम वंस भए क्रमधुज्ज सूर। दीनौ सुराज राज रस भूर।
तव वंस भयौ वाहन नरिंद। अत रिप रथ्य चलि स्वग्ग कंद।
तुम वंस भयौ पूरूर रूर। रथ च्यारि चक्र जिहि जोति सूर।
सत सिंधु सूर जिह रथ्य चीन्ह। तुम वंस भयौ नृप राज नील।
तुम वंस भयौ नलराइ अद्द। नैषद्ध हार ही धर्‍यौ वध।
षट् चक्र भए क्रमधज्ज आदि। किन्नौ नरिंद जिह बहन वाद।
जीमूत धर्‍यौ जिहि चक्र सीस। सम्मार किति कीनौ जगीस।
को करै पंग सौं दुष्ट आय। मटै सुनत्त्य निहचैं त राय।

(३) १. मो. वर निसाण, धा. त्रुटित है, अ. फ. वर अश्व, ना. वाजणीय, द. वाजनि, उ. स. बाजन। २. मो. भूमिह वधम। ३. मो. अजगु, धा. अनग्गू।

(४) १. धा. परठिया पुन्य, मो. परठिउ (=परठ्ठिअउ) पूनि, ना. परठीय पुन्य, अ. पठया पंग, फ. परठ्या पंग, उ. स. परठ्यो पुन्य। २. मो. राजसूअ जगु, धा. राजसू जग्गु, अ. राजभूजग्ग, फ. राज भुयग जग्ग।

(५) १. धा. सुद्धिय, मो. सोधी, अ. फ. उ. स. सोधिग (< सुधिग)। २. फ. बल।

(६) १. मो. ना. द. उ. स. भूगोल, अ. फ. गुरबोल। २. फ. लिप्पति। ३. मो. द्रिपित, ना. दिप्पत, उ. स. दिप्पित।

(७) १. मो. छत्ति। २. मो. राजा, अ. फ. ना. उ. स. राजन।

(८) १. मो. जित्तीआ, धा. ना. जित्तिया, उ. रा. जित्तेति। २. मो. उ. स. ना. सकल, फ. सवल। ३. ना. द. उ. स. गन।

(९) १. मो. पुच्छि (=पुच्छइ), धा. पुच्छई, अ. पुच्छयो, उ. स. पुच्छे, ना. पुच्छे। २. अ. समति, फ. समंत। ३. धा. परित्त तत्व, अ. फ. परवान तच्छ (< तत्व)।

(१०) १. धा. इम। २. मो. कउ (=कउ) यग, ना. उ. स. काए जग्य। ३. धा. इव, मो. जे, अ. फ जिहि, ना. द. उ. स. जिम। ४. धा. लद्दी (<लद्दि=लदइ), मो. लिद्दि (<लेहि), ना. चले, द. उ. स चलहि। ५. धा. कत्थ।

(११) १. धा. उत्तर सु देइ, मो. ऊत्तर त दीअ, फ. उत्तर तौ दीय, उ. स. उत्तर सु दीन। २. मो. मंत्री। ३. उ. स. सुजानि।

(१२) १. उ. स. नाहि। २. धा. अरजनु, मो. अर्जुन, अ. अरज्जुन, फ. अरजन, ना. द. उ. स. बिय जुग। ३. अ. फ. समान।

(१३) १. मो. ना. अ. फ धर्म, धा. धम्म, द. उ. स. भम्म। २ मो. द. ना उ. रा. देवल, फ. देवर। ३. अ. फ. ना. उ. स. अनेव।

(१४) १. धा. षोडंस (=षोडस्स) २. मो. दितु (< दिनु), धा. नित्त। ३. धा. देव देस, मो. देहु देय।

(१५) १. धा. मो सिक्ख सुणवि, मो. मुहु सीष मांन, अ. फ. ना. द. उ. स. मो सीख मानि। २. धा. प्रप पंग, मो. नृपंग, अ. फ. प्रभु पंग। ३ ना. जेय।

(१६) १. मो. अज्ज, फ. अच्छि, ना. द. उ. स. जुग्ग। २. धा. राजा सुग्गीव, मो. अर्जुन सुसीव, ना. अर्जुन सयेव।

(१७) १. ना. द. उ. स. राव। २. मो. मंत्रीअ, ना. मत्रिनि।

(१८) १. धा. मो. ना. लोभ। २. धा. बुल्यौ नियान [पाठा० लहिन आन], अ. बुल्यौ नियान, फ. बुड्यो लद्दी आन, मो. जो लुद्दं (=लुद्दउं) अयान, ना. द. उ. रा. बोलहु अयान।

टिप्पणी—(१) अथ्थ < अर्थ। (२) षित्त < क्षेत्र। धम्म < धर्म्म। (३) वारण्ग > वारग = बचाव या सुरक्षा के साधन। अनग्ग <अनग्न=शूलादि से परिवेष्ठित। (४) परिठ्ठवण <परिस्थापना। (६) हीर > हेला=अनादर, तिरस्कार। (७) समान=साथ (दे० बाद का चरण १७)। (८) सयल < सकल। (९) मंत्त < मंत्र। (१०) जेम=यथा, जैसे, जिस तरह से। कव्व < काव्य=यज्ञ। (११) स < तु=तो। (१२) अप्पर <अपर=अन्य। (१३) धम्म < धर्म। देवर < देवालय। अनेय < अनेक। (१४) षोडसा < षोडस। [षोडस दानों की सूची के लिए दे० मोनियर विलियम्स को 'संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी']। (१६) अच्छि <अस्ति=है। भीव < भीम। (१७) समान=से [दे० ऊपर का चरण ७]। (१८) लोह < लोभ। अयान < अज्ञान।

[२]

गाथा—के के[१]न गया महि मंडलंमि[२] धर ढिलाय[३] दीह दीहाइ[४]। (१)
विप्फुरइ[१] जासु[२] कित्ती ते गया[३] नहु[४] गया[५] हुंति[६] ॥ (२)

अर्थ—(१) [जयचन्द ने कहा,] "इस महि मण्डल से धरा को दीर्घ (बहुत) दिवसों तक ढीला करके (भोग करके ?) [भी] कौन कौन नहीं गए ? (२) जिसकी कीर्त्ति विस्फुरित होती है, वही सब गत नहीं होता है।

पाठान्तर—(१) १. ना. को कौं। २. धा. न गया गह मंडलानि, मो. ना. न गया महि मंडलमि, अ. फ. न गए महि मह्, द. ना. उ. स. न गया महि मंडलाइ (मंडलाय—ना. उ. स.)। ३. धा. धर ढिल्लिय, मो. धर धर्त्तिलक्कग, अ. फ. ढिल्ली दिलाग, ना. वज्जव, द. उ. स. वज्जाव। ४ धा. दीह दोहाइ, मो. दह दीहा, अ. दीह होहाय, फ. दीह दोहडी, ना. द. दीह दिवहाइ, उ. स. दीह दसहाइ।

(२) १. धा. द. उ. स. निप्फुरे, अ. विफुरति, फ. विफुरंत। २. धा, तालु, ना. जास। ३ अ. तं गय, फ. तं गया। ४. धा. नहि, अ. फ. नही, ना. नह, द. स. नवि। ५ अ फ. गये। ६. उ. स. हुंती।

टिप्पणी—(१) गय < गता:। दीह < दीर्घ। दीहा < दिवस। (२) विप्फुर- < विस्फुर्-। गया < गता:।

[३]

पद्धडी— पहु[१] पंगु राउ[२] राजसू[३] जग्गु[४]। (१)
आरंभ रंभ[१] कीनउ*[२] सुरग्ग[३]॥ (२)
जित्तिआ[१] राउ[२] सब सिंधु आर[३]। (३)
मेलिया[१] कंठ[२] जिम[३] मुत्ति हार[४]॥ (४)
जोगिनी पुरेस[१] सुनि भयउ*[२] पेद। (५)
आवइ[१] न माल मझ इह[२] अभेद॥ (६)
मोकले[१] दूत तब ही[२] रिसाइ। (७)
असगथ्थ सेव[१]× किम[२]× भूमि× खाइ ×॥ (८)
बंधू[१]× समेत[२]× सामंत सथ्थ[३]×। (९)
उत्तरे[१] आनि[२] दरबार तथ्थ[३]॥[४] (१०)
बोलउ*[१] न वयणु[२] प्रथिराज तांहि[३]। (११)
संकुरिउ*[१] सिंघ[२] गुरजनन चाहि[३]॥ (१२)
उचरउ*[१] गुरुअ[२] गोयंद[३] राज। (१३)
कलि मभिक[१] जग्गु[२] को करइ[३] आज॥ (१४)
सत जुग्ग[१] कहइ[२] बलिराइ[३] किन[४]। (१५)
तिनि[१] किति काज त्रैलोक[२] दिन[३]॥ (१६)
त्रेता[१] ज*[२] कीन्ह[३] रघुनंद साइ[४]। (१७)
कुब्बेर कोट[१] वरिषउ*[२] सुभाइ[३]॥ (१८)
धनि[१] धम्म पुत्त[२] द्वापर[३] सुयाइ[४]। (१९)
तिहि पथ्थ[१] वीर अरु[२] हरि सहाइ[४]॥ (२०)
कलि मभिक[१] जग्गु[२] को करणु[३] जोग। (२१)
विग्गरइ* तु बहु विधि[१] हसइ*[२] लोग॥ (२२)
दल दव्व[१] गव्व[२] तुम[३] अप्रमांन[४]। (२३)
बोलहु[१] त बोल देवन[२] समांन॥ (२४)
तुम जानउ*[१] पिथ्री हइ न[२] कोइ। (२५)

पट्टहिं त[१] हेम महि महि[२] सोनार[३] ॥ (५८)
भूपन सुदान[१] सुर सभि आचार। (५९)
आनद इद[१] सम किय*[२] विचार ॥ (६०)
धरलेह[१] धाम[२] देवर[३] सुचीय[४] । (६१)
तसु[१] हरहिं×[२] कलस फल बिब[३] लीय[४] ॥ (६२)
धज बधन*[१] सोम[२] जनु[३] मधु चढ्ढीय[४] । (६३)
मनु सज्जिआ[१] वंभ केलास वीय ॥[२] (६४)

अर्थ—(१) प्रभु पगराज (कन्नौजराज) ने राजसूय यज्ञ का (२) समारभ राग (अनुराग पूर्वक किया। (३) सिंधु (समुद्र) के आस-पास [तक] सब राजाओं को उसने जीता (४) [और उन्हें इस प्रकार अपने अधीन कर लिया] जैसे उसने कठ मे मोतियों का हार डाल लिया हो। (५) [किन्तु] योगिनीपुर (दिल्ली) के राजा (पृथ्वीराज) के सम्बन्ध मे यह सुन कर उसको खेद हुआ (६) कि वह इस माला मे अभिन्न रूप से नहीं आ रहा था। (७) तब [उसने] हृदय मे रुष्ट हो कर दूत भेजे, (८) [यह सोचते हुए कि] यदि वह (पृथ्वीराज) उसकी सेवा करने में असमर्थ था तो वह किस प्रकार भूमि को खा (भोग ?) रहा था। (९) तब [वे दूत कन्नौजराज के] बन्धुओं के समेत और सामन्तों के साथ (१०) [पृथ्वराज के] दरबार मे आ उतरे। (११) उनसे पृथ्वीराज वचन नहीं बोला, (१२) वह सिंह गुरुजनों को देख कर सिकुड गया (सकोच में पड गया)। (१३) [यह देखकर] उसके एक गुरु (पूज्य) गोविन्द राज ने कहा, (१४) "कलियुग में आज कौन यज्ञ कर रहा है ? (१५) कहते हैं कि सतयुग मे राजा बलि ने [यज्ञ] किया था (१६) और उन्होंने कीर्त्ति के लिए [वामन को] तीनों लोक दे दिए थे, (१७) त्रेता [युग] में रघुनन्दन (राम) ने जो विशेषता पूर्वक किया था (१८) [उसका कारण यह था कि उनके] कोट (नगर) पर कुबेर ने भावपूर्वक [कोष को] वर्षा की थी, (१९) सुना जाता है कि द्वापर युग में धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) [यज्ञ करके] धन्य हुए, (२०) [किन्तु] उनके सहायक वीर पार्थ (अर्जुन) तथा हरि (कृष्ण) थे। (२१) कलि मे [राजसूय] यज्ञ करने के योग्य कौन है ? (२२) [यदि वह] बिगड गया (विधिपूर्वक समाप्त न हो सका) तो लोग बहुत प्रकार से हँसेंगे। (२३) तुम्हें दल (सेना) और द्रव्य का झूठा गर्व है, (२४) तभी तुम देवताओं के समान बोल बोल रहे हो ! (२५) तुम जानते (समझते) हो कि क्षत्रिय कोई नहीं [रह गया] है, (२६) [किन्तु] पृथ्वी निर्वीर कभी नहीं होती है। (२७) कालिन्दी कूल पर [कुरु] जागल मे हमारा निवास है, (२८) जयचन्द राज को हम मूल (प्रमुख) नहीं मानते हैं, (२९) हम तो आदेश योगिनिपुरेश्वर (दिल्ली नरेश) का जानते (मानते) हैं—(३०) उस पृथ्वी नरेश (पृथ्वीराज) का जो जरासध के [पुराण प्रसिद्ध] वश का है, (३१) जिसने तीन बार शाह [शहाबुद्दीन] को बन्दी किया और (३२) जिसने राजा (गूर्जराधिपति) भीमसेन [चौलुक्य] को गिरा कर [उसकी शक्ति को] नष्ट किया, (३३) जो शाकभरी (साँभर) के कोप युक्त सोमेश्वर का पुत्र है (३४) और जो रूप मे दानव है और धूर्तावतार है। (३५) [जब तक] उसके कन्धे पर सिर हैं, [राजसूय] यज्ञ किस प्रकार हो सकता है ? (३६) क्या पृथ्वी पर कोई चहुआन [शेष] नहीं रहा ?" (३७) सब उसको सिंह के रूप मे देखते हैं, (३८) और मन मे अन्य [किसी को] जगत् का भूप नहीं मानते हैं। (३९) मन्द आदर (निरादर) के कारण वसीठ उठ कर चले गए, (४०) जैसे ग्रामीण (ग्राम प्रमुख की) सभा से बुधजन उद्वेष्टित (बन्धन-मुक्त) हुए हो। (४१) [दूत] तब लौटकर कन्नौज मे गए। (४२) उनका मुख इस प्रकार मलिन हो गया था मानो सन्ध्या काल में कमल हो।

निव्वीर[२] पुहवि[२] फवहू न होइ ॥ (२६)
हम जंगलि[२] वास कालिंदि[२] कूल[३] । (२७)
जानहिं[२] न राइ[२] जयचंद मूल ॥ (२८)
जानहिं[२] त देसु[२] जोगिनि[२] पुरेसु । (२९)
जरासिंध वंसि[२] पुहुमी[२] नरेसु ॥ (३०)
तिहु वारि[२] साहि बंधिग्रा[२] जेनि[३] । (३१)
भंजिग्रा[२] भूप भडि[२] भीमसेन[३] ॥ (३२)
तइंभरि*[२] सकोप[२] सोमेस पुत्त[३] । (३३)
दानव ति[२] रूव[२] अवतार धुत्त[३] ॥ (३४)
तिह कंधि[२] सीत किम[२] जग्ग[३] होइ । (३५)
जु प्रिथिमी[२] नहीं[२] चहुआन कोइ ॥ (३६)
देषई सम्भ तेहिं[२] सिंघ[२] रूप । (३७)
मानहिं न जग्गु[२] मनि अत्र[२] भूप ॥ (३८)
आदरह मंद उठि गयु*[२] वसिट्ठ[२] । (३९)
जिम गामिनी सभा[२] बुध जन[२] उविट्ठ[३] ॥ (४०)
फिरि चलिग तव्व[२] कनवज्ज मंझ[२] । (४१)
भयु मलिन[२] मुरस[२] जांनु कमल[३] संझ[४] ॥ (४२)
तिनि दूर दूत[२] जइ* कहिग[२] धयन । (४३)
अति रोस किए[२] रत्ते[२] नयन ॥ (४४)
बोल्यउ[२] सुमंत परधान तव्व । (४५)
कनवज्ज नाथ[२] करि जग्गु[२] अव्व ॥[३] (४६)
जब[२] लग्गि[२] गाहिहि[३] चहुआन चाहि । (४७)
तव लग्गि तांह[२] टलि[२] काल जाहि[३] ॥ (४८)
ये*×[२] आसमुद्द[२] नृप करहिं[२] सेव । (४९)
उच्चरहु[२] कामु सो करहु[२] देव ॥ (५०)
सोवन्न[२] प्रतिमा[२] प्रथीराज वांन[३] । (५१)
थापउ* जु[२] पोलि जिम दरव्वान[२] ॥ (५२)
सइंवरह* संग[२] अरु जग्गु[२] काज । (५३)
विद्द जन[२] बोलि*[२] दिन धरहु[३] आज ॥ (५४)
मंत्रीनु राउ[२] परबोधिग्रा[२] जांम । (५५)
धुम्मिग्रा[२] वार[२] नीसान ताम ॥ (५६)
सुनि सद्दनि[२] बंधिग्र[२] बंदनवार[३] । (५७)

कट्टहि त[१] हेम महि ग्रहि[२] सोनार[३] ॥ (५८)
भूपन सुदान[१] सुर समि आचार । (५६)
आनद इद[१] सम किंमु*[२] विचार ॥ (६०)
धरलेह[१] धाम[२] देवर[३] सुचीय[४] । (६१)
तमु[१] हरहिं×[२] कलस कल विंव[३] लीय[४] ॥ (६२)
धज वधन*[१] सोम[२] जनु[३] मधु वछीय[४] । (६३)
मनु सज्जिआ[१] वभ केलास चीय ॥[२] (६४)

अर्थ—(१) प्रभु पगराज (कन्नौजराज) ने राजसूय यज्ञ का (२) समारभ राग (अनुराग) पूर्वक किया। (३) सिंधु (समुद्र) के आस-पास [तक] सब राजाओं को उसने जीता (४) [और उन्हें इस प्रकार अपने अधीन कर लिया] जैसे उसने कंठ मे मोतियों का हार डाल लिया हो। (५) [किन्तु] योगिनीपुर (दिल्ली) के राजा (पृथ्वीराज) के सम्बन्ध में यह सुन कर उसको खेद हुआ (६) कि वह इस माला मे अभिन्न रूप से नहीं आ रहा था। (७) तब [उसने] हृदय में रुष्ट हो कर दूत भेजे, (८) [यह सोचते हुए कि] यदि वह (पृथ्वीराज) उसकी सेवा करने में असमर्थ था तो वह किस प्रकार भूमि को खा (भोग ?) रहा था। (९) तब [वे दूत कन्नौजराज के] बन्धुओं के समेत और सामन्तों के साथ (१०) [पृथ्वीराज के] दरबार में आ उतरे। (११) उनसे पृथ्वीराज वचन नहीं बोला, (१२) वह सिंह गुरुजनों को देख कर सिकुड गया (सकोच मे पड गया)। (१३) [यह देखकर] उसके एक गुरु (पूज्य) गोविन्द राज ने कहा, (१४) "कलियुग में आज कौन यज्ञ कर रहा है ? (१५) कहते हैं कि सतयुग मे राजा बलि ने [यज्ञ] किया था (१६) और उन्होंने कीर्त्ति के लिए [वामन को] तीनों लोक दे दिए थे, (१७) त्रेता [युग] मे रघुनन्दन (राम) ने जो विशेषता पूर्वक किया था (१८) [उसका कारण यह था कि उनके] कोट (नगर) पर कुवेर ने भावपूर्वक [कोष को] वर्षा की थी, (१९) सुना जाता है कि द्वापर युग में धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) [यज्ञ करके] धन्य हुए, (२०) [किन्तु] उनके सहायक वीर पार्थ (अर्जुन) तथा हरि (कृष्ण) थे। (२१) कलि मे [राजसूय] यज्ञ करने के योग्य कौन है ? (२२) [यदि वह] बिगड गया (विधिपूर्वक समाप्त न हो सका) तो लोग बहुत प्रकार से हँसेगे। (२३) तुम्हें दल (सेना) और द्रव्य का झूठा गर्व है, (२४) तभी तुम देवताओं के समान बोल बोल रहे हो ! (२५) तुम जानते (समझते) हो कि क्षत्रिय कोई नहीं [रह गया] है, (२६) [किन्तु] पृथ्वी निर्वीर कभी नहीं होती है। (२७) कालिन्दी कूल पर [कुरु] जागल मे हमारा निवास है," (२८) जयचन्द राज को हम मूल (प्रमुख) नहीं मानते हैं, (२९) हम तो आदेश योगिनीपुरेश्वर (दिल्ली नरेश) का जानते (मानते) हैं—(३०) उस पृथ्वी, नरेश (पृथ्वीराज) का जो जरासध के [पुराण प्रसिद्ध] वश का है, (३१) जिसने तीन बार शाह [शहाबुद्दीन] को बन्दी किया और (३२) जिसने राजा (गूर्जराधिपति) भीमसेन [चौलुक्य] को गिरा कर [उसकी शक्ति को] नष्ट किया, (३३) जो शाकभरी (साँभर) के काप युक्त सोमेश्वर का पुत्र है (३४) और जो रूप मे दानव है और भूतावतार है। (३५) [जब तक] उसके कन्धे पर सिर है, [राजसूय] यज्ञ किस प्रकार हो सकता है ? (३६) क्या पृथ्वी पर कोई चहुआन [शेष] नहीं रहा ?" (३७) सब उसको सिंह के रूप मे देखते हैं, (३८) और मन में अन्य [किसी को] जगत् का भूप नहीं मानते हैं। (३९) मन्द आदर (निरादर) के कारण वसीठ उठ कर चले गए, (४०) जैसे ग्रामीण (ग्राम प्रमुख की) सभा से बुधजन उद्वेष्टित (बन्धन-मुक्त) हुए हों। (४१) [दूत] तब लौटकर कन्नौज मे गए। (४२) उनका मुख इस प्रकार मलिन हो गया था मानो सन्ध्या काल में कमल हो।

(४३) उससे (जयचन्द से) दूर (अलग) जब उन दूतों ने [वे] वचन (वाक्य) कहे, (४४) तो [जयचन्द ने] अत्यन्त रोषयुक्त होकर नेत्र लाल कर लिए। (४५) तब उसके प्रधान (अमात्य) ने यह मन्त्र कहा, (४६) "हे कन्नौजनाथ, अब आप यज्ञ करें, (४७) [क्यों कि] जब तक आप चहुआन को पकड़ने की प्रतीक्षा करते रहेंगे, (४८) तब तक उसका (यज्ञ का) समय टल जायगा। (४९) समुद्रपर्यन्त के ये राजा आपकी सेवा कर रहे हैं, जो काम आप यह कहें, हे देव, ये करें। (५१) पृथ्वीराज के वर्ण (आकार-प्रकार) की सुवर्ण की प्रतिमा (५२) प्रतोली द्वार पर स्थापित कर दें—जैसे वह दरवान (द्वारपाल) हो। (५३) साथ-साथ स्वयंवर भी हो और यज्ञ-कार्य भी, (५४) [इसके लिए] विद्वानों को बुला कर आज दिन निर्धारित करें।" (५५) जब मंत्रियों ने राजा (कन्नौजराज) को [इस प्रकार] समझाया, (५६) तब राजद्वार पर निशान (धौंसा) घूमा (बजा)। (५७) [इस निशान के शब्द को] सुनकर वंदनवार बाँधे गए, (५८) और घर घर सुनार हेम (सुवर्ण) काटने [और आभूषणादि बनाने] लगे। (५९) राजा आभूषणों का दान और देव-नृत्य आचरण करने लगा, (६०) और आनन्दित होकर उसने इन्द्र के समान विचार किया (अपने को इन्द्र के समान समझा)।

(६१) धाम (गृह) धवले (सफेदी से पोते) गए, और देवालयों की सफाई की गई, (६२) उनके सुन्दर कलश [सूर्य तथा चन्द्र का] बिम्ब धारण करके अन्धकार का हरण करने लगे। (६३) नगरी ध्वजाओं [और बन्दनवारादि] के बन्धनों से ऐसी लगने लगी मानो मधु वसित (मधु दैत्य का निवास—मधुपुरी) हो, (६४) अथवा मानो ब्रह्मा ने दूसरे कैलास का साज किया हो।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाकठ है।
× चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।
÷ चिह्नित चरण उ. स. में नहीं है।

(१) १. फ. पौहु। २. धा. द. राय, ना. स. राव, ना. अ. फ. राइ। ३. धा. मो. राजसुअ। ४. मो. जंगु (=जग्गु), अ. जग्गि, फ. जग्ग, ना. जग्य।

(२) १. अ. जग्ग, धा. मो. द. फ. रंग। २. मो. मूकउ, अ. फ. कीनी (=कीनउ)। ३. मो. तुरंगु, धा. सुरंग (=सुरंग), फ. सुरंगु, ना. सुअग्ग, द. सुचंग, उ. स. अचग्ग।

(३) १. धा. अ. फ. ना. जिलिया, मो. जीतीआ, उ. स. जित्तिए। २. धा. राय, अ. फ. राइ, स. राज।

(३) मो. आर, अ. फ. हार।

(४) १. धा. मलिया, उ. स. मिलए, द. मेलिइया। २. धा. कंध। ३. उ. स. जनु। ४. धा. मो. मोतिहार, फ. मुत्तियहार।

(५) १. फ. जुगिन पुरुस, अ. जुग्गिनि पुरेस, ना. द उ. स. जुग्गिनियं (जुग्गिनी,-ना.) पुरह। २. मो. मयु—धा उ. स. मयौ।

(६) १. मो. आवि (=आवइ), अ. ना. आवै, द. उ. स. आवहि। २. मो. मानल मोह गुलि, फ. माल मालहि, द. माल मलहिं, ना. माल मुदल, उ. स. माल मह्ल ग्रह।

(७) १. मो. मोकले, शेष में 'मुक्कले'। २. मो. ही, ना. सह, उ. स. तिन।

(८) १. उ. स. सेस। २. मो. किमि।

(९) १. ना. बंधौ, उ. स. बंधो। २. ना. सुमंत। ३. मो. तथ्य।

(१०) १. मो. किउंतगरि, ना. उत्तर, धा. उ. रा. द. उत्तरहि। २. मो. आइ, फ. अग्र। ३. मो. तिथ्थ, उ. स. अथ्थ। ४. ना. द. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

सुनि दूत चलीय दिल्लीय थान। आजानु बाहु जहं चाहुवान।
पहुच्यौ स जाइ दिल्लीय ताम। गुदरीय बत्त जैचंद नाम।
हुजूर बोलि पट्ठाइ राज। किहि आए इत्त सो जपि काज।
सब दूत कही दिल्ली नरेस। आइस्स जंपि जैचंद एसु।

राजसू जग्य आरंभ कीन । दश दिशिन भूप फुरमान दीन ।
छिति छत्र बध आप सु सम्ब । तुम चल्हु बेगि कहाँ विरसु कब्ब ।
फुरमान दीन चहुवान सोहि । कर छडीय दन्यि दरवान दाहि ।

(११) १. धा. बोल्यो, मो. बोलु (=बोल्उ), अ. फ. बुल्यौ, ना. द. बुलायौ, उ. स. बुलै । २. ना. बैन । ३. अ. फ. ना. प्रिथिराज साहि, उ. स. प्रथिराज साह ।

(१२) १. मो. संडुरि, धा. संकरिउ, अ. फ. संकरयो, ना. द. संचरयौ, उ. स. संकरै । २. धा. सिंध । ३. गुरजन विवाहि, मो. अ. फ. ना. गुरजननि वाहि (=वांहि)। अ. पुरजननि व्याहि, फ. पुरजनन वाहि

(१३) १. मो. उचरौ (=उचरउ), धा. उच्चरइ, अ. फ. उच्चरिय, द. उच्चरै, ना. उच्चरयौ, उ. स. उच्चरै । मो. गुरुम, धा. गुरु । ना. गलत धा. ३. । अ. फ. ना. गोविंद, मो. गोवंद ।

(१४) १. धा. माहि, अ. फ. मध्य, ना. मद्धि । २. फ. जाय, ना. जान । ३. अ. फ. ना. उ. स. करै, करहि ।

(१५) १. धा. अ. फ. सति जुग्ग, मो. सात (=सत) जगु । २. धा. कहइ, मो. काहां, ना. अ. कहिहि, उ. स. कइहि । ३. अ. फ. राज, ना. उ. स. राय । ४. धा. अ. ना. द. उ. स. कौन, फ. कौनु ।

(१६) १. मो. तिनि, धा. अ. फ. ना. द. उ. स. तिहि । २. धा. त्रैलोक्य, ना अ. फ. त्रयलोक, उ. त्रिहुंलोक । ३. धा. अ. फ. ना. द. दीन ।

(१७) १. मो. त्रता । २. मो. द (=अ), धा. द. उ. स. सु, अ. फ. तु, ना. जु । ३. मो. कीहन, अ. फ. ह । ४. मो. रघुनंद साइ, धा. अ. फ. रघुनंद राइ, उ. स. रघु वंस राइ ।

(१८) १. धा. कोप, अ. फ. कोपि, ना. द. उ. स. कनक । २. मो. वरिष् [=वरिषउ], धा. अ. वरष्यो, उ. स. बरष्यौ, फ. बरष्यौ । ३. अ. समाइ, ना. उ. स. सुभाइ ।

(१९) १. मो. धन, ना. उ. स. धर, फ. धन्य । २. मो. धर्म पुत्र, ना. धर्म पुत्त, अ. फ. धम्म पुत्त, द. स. ध्रम पुत्र । ३. फ. द्वापरि, ना. द्वापुर । ४ मो. सुगाय, धा. सुभाइ, ना. द. अ. फ. उ. स. सुनाइ ।

(२०) १. फ. पुत्र । २. धा. अरि । ३. ना. हरि, अ. अरि, फ. हर । ४. मो. सहाय, फ. सहाइ ।

(२१) १. धा. माहि, मो. महि, ना. मध्य । २ फ. जग्यौ, ना. जग्य । ३. फ. कारनु ।

(२२) १. धा. विग्गरे जग्गु बहु, मो. विगरि (=बिगरइ) तु बहू विधि, अ. बिग्गरइ बहुत विधि, फ. गरइ बौह विधि, ना. बिग्गरहि बहुत विधि । ३. धा. ना. हंसहि, मो. हसि (=हसइ)।

(२३) १. मो. मंद, उ. स. दर्द, द. ना. द्रव्य । २. ना अब्ब, उ. स. गर्व । ३. मो. तुम्ह, धा. अ. फ. उ. द. तुम । ४. मो. वय प्रमान ।

(२४) १. मो. बोलइ, फ. बोलहि, ना. बुल्लहु । २. मो. त बोल देव, धा. त बोल देवन, फ. ति बोल न, ना. त बुल्ल देवन ।

(२५) १. धा. तुम जाणहु, मो. तुम्ह जानु (=जानउ), अ. तुम जानुं (=जानउ), फ. तुम जानुह, उ. जानीव तुम्ह, द. ना. तुम्ह (तुम ना.) जानहु । २. धा. छत्रिय है न, अ. इही क्षत्रिय है न, फ. क्षत्रिय नु, ना. छित छत्री न, उ. स. पत्री न ।

(२६) १. अ. फ. निब्बीर, ना. नृब्बीर, शेष में 'निरबीर' । २. धा. पुहवि, मो. पुहमि, फ. पुहुवि, अ. ना. स. पुहमि । ३. फ. कव हो ।

(२७) १. मो. हम जंगली, धा. हम जंगलिह, ना. उ. स. अ. फ. जंगलह, द. जंगलहि । २. द. कालिंद्रि, उ. स. कालिंद । ३. मो. कुल ।

(२८) १. ना. उ. स. जानै । २. धा. अ. फ. ना. उ. स. राज, द. राय ।

(२९) १. मो. जोनइ, धा. ना. उ. स. जानहि । २. मो. ना. उ. स. त देस, अ. त एक, फ. तु एक । धा. योगिन, अ. फ. जुग्गिनि, ना. जुग्गनि, उ. स. जोगिन ।

(३०) १. मो. जुरि इंदु वंशि, धा. सुर इंदु वसु, अ. फ. जरासिंध वम, द. जुरा इंद बंस, ना. सब मुकट उ. स. व्यानुल बंस । २ धा. प्रिथिवी, अ. प्रिथी, फ. प्रथी, ना. पिथ्था, उ. स. प्रथिय ।

(३१) १. मो. तिनु वारि, धा. सिंदु वारि, अ. फ. तिहुं वार (वार-फ.), ना. त्रय वार, द. उ. स. कै । २. धा. ना. बंधियो, उ. स. बध्यौ । ३. मो. जेन, अ. फ. जेनि ।

(३२) १. धा. मजियो, उ. स. भजिय सु । २. मा. हाढि, धा. मढ़ि, द. ना. उ. स. भिरि., अ. ति, फ. तिहां । ३. धा. मो. भीमसेन, अ. फ. भीमसेनि ।

(३३) १. धा अ. फ. द. ना. उ. स. समरि, मो. सिंमुरि (= सइंभरि) । २. अ. फ. सुदेस, ना. नरेस । ३. मो. द. उ. स. पूत ।

(३४) १. म . दामीति, धा. दानवत, अ. फ. दानवति, ना. उ. स. दामित्त, द. दामत । २. धा. मो. अ. फ. द. उ. स. रूप । ३. मो. धूत, उ. स. भूत ।

(३५) १. मो. तिह कध, धा. तिहि बंधु, अ. तिहि बधि, फ. ना. स. द. तिहि बंध । २. अ. फ. किमि, ना. क्युं । ३. मो. जम्य, धा. जग्ग, ना. जपे ।

(३६) १. मो. जु प्रथमी, धा. पिरथी, अ. प्रिथिमी, फ. प्रथो, उ. स. जो प्रथिय, द. जौ प्रथी, ना. ज्युं पृथिमीव । २. ना. नहि ।

(३७) १. मो. देखइ सभा सेह, धा. दिषियति सब्ब नर, अ. दिष्षयहि सब्ब तह, ना. दिष्षीय सभा तिहि, द. दिष्षय सु सभ्भ तिहि, उ. स. देखी सु सभा तिन, फ. दिष्षीयहि सभ्भि नर । २. मो. संधि ।

(३८) १. धा. मो जग्गु, अ. फ. जग्गि, ना. उ. स. जग्य । २. धा. ते आन, द. मन अन्य, अ. मनि आन, ना. फ. मन आन, उ. स. मन अन्य ।

(३९) १. मो. उठि गुयु [= गुउय], धा. ना. उठ्ठिग, अ. फ. उठि गयौ, उ. स. उठि चलि । २ मो वशिठि (=वसिठि) ।

(४०) १. धा. गामिनीय सार, मो जिमि गमिनि सभा, ना. जिमि ग्रामीन सभा, अ. फ. गामिनी सभा, उ. स. ग्रामिनी सभा, द. ग्रामिन सभा । २. मो. वुंधोजन, अ. फ. बुधिजन । ३. मो. उठि, धा. कविठ्ठ, ना. वसीठ, द. उ. स. बईठ ।

(४१) १. धा. दूत, अ. फ. सब्द, उ. स. तवे । २. धा. मांझ ।

(४२) १. धा. मयो मिलिन, ना. मौ मलिन, अ. ए मलिन, फ. भए मलिन, द. उ. स. भय मलिन । २. धा अ. फ. कमल । ३. धा. जिमि सुकल, अ. फ. जिमि सकिलि, ना. उ. स. जनु कमल । ४. धा. सांझ ।

(४३) १. धा. द. तिन दूत जाहि, मो. तिनि दूर दूत जि (=जइ), अ. फ. तिहि दुरित दूत, उ. स. तिन दूत पग, ना. दिखि दूत दूरि । २. धा. पे कहिय, अ. फ. पकहि, द. सह कहिय, ना. कहि गय, उ. स. अग कहिय ।

(४४) १. धा. कियो, अ. फ. कियै, उ. स. कीन, ना. रंत । २. धा. रकत्तोस, अ. फ. रकते, ना. रंगति, उ. स. रंग रत ।

(४५) १. धा. बोलइ, अ. फ. बुलयो, ना. द. उ. स. बुल्यौ ।

(४६) १. धा. माथ । २. ना. द. उ स. जग्य । ३. ना. द. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

> बोलं सुमन मन्त्री प्रधान । उद्दरन जग्य कलिजुग्ग पान ।
> बालुका राइ बोल्यो हकारि । साधन सुजग्य बहु जुद्ध सार ।
> षुरसान षान बंदेति मीर । सो भाग दसम अर्प्पे सरीर ।
> देसं जु सज्जि चौसठि हजार । अर्प्पे ति मेछ पहु पग बार ।
> नाशान वार बज्जेति अंग । बद्धी अवाज दिसि दिसि अनग ।
> पामद वाद बालुका राज । रष्पियै जग्य को रहै साज ॥

(४७) १. मो. नवि । २. फ. लग्ग, अ. जग्गि । ३. मो. गिदहि, धा. अ. फ. गदहि, ना. गहै, द. उ स. गहौ ।

(४८) १. धा. अ. फ. तहां, ना. उ. स. द. ताहि । २. धा. अ. फ. ना. उ. स. द. टरि । ३. मा. जाय

(४९) १ मो. जे, धा. ना. उ. स. द. ए । २. धा. आसमुद, मो. द. उ. स. आसमद (आसमद—मो फ. आसुमद, ना. आसमुद्र । ३. धा. करति ।

(५०) १. धा. उच्चरहि, मो. अ. फ. उच्चरहु, । उ. उच्चरेंहि । २. मो. करहु, ना. द. उ. स. होइ ।

(५१) १. धा. ना. सोवन्न, मो. सोवृन, अ. फ. सोवनी, द. सोवर्ण । २. मो. अ. फ. प्रमिमा, धा. न उ. स प्रतिम । ३. धा. फ. ना. बानि, उ. स. जान ।

(५१) १. धा. थापहि न, अ. थप्पहुति, फ. थप्पहति, ना. थप्पहित। २. धा. पौर जिम दारवानि, अ. फ. पौरि करि दारवान, ना. पौरि जनु दारवान, द. दरवान वान, उ. स. दरवार वानि।

(५२) १. मो. संवरइ (< स्विवरइ=स्वयवरइ) संग, धा. संयंवर सग, अ. फ. स्वयवर सग (समु-फ.), ना. सवरह संग, उ. स. संवर संजोग, द. सवर संजोगि। २. मो. ना. जग्य, धा. अरु जग्गु।

(५४) १. धा. अ. फ. विद्वज्जन, द. उ. स. बुध जनन, ना. बुध जननि। २. मो. बोलं (< बोलि), धा. बुलि। ३. फ. धरौह।

(५५) मो. ना. उ. स. मत्रीन राउ, धा. मत्रीनु राय, अ. फ. मंत्रीनि राज, उ. स. मत्रीन राव। २. ना. पर मोधि।

(५६) १. धा. धूनिआ, मो. धू मिआ, अ. धुम्मिया, उ. स. धुम्मेस। २. ना. अ. वीर, फ. वारु।

(५७) १. मो. मुनिसद, अ. फ. मुनि सद्दन। २. मो. बंदीअ, धा. दंदी। ३. धा. नदवार, ना. द. बंदन विवार, उ. स. बंदरनिवार।

(५८) १. मो. कटिहित, अ.-फ. कट्टहिनु, द. कट्टियहि, ना. कट्टइ ते, उ. स. कादंत। २. ना. गृहि गृहि, अ. फ. गृह गृह, उ. स. ग्रह ग्रह। ३. धा. अ. फ. उ. सुनार, स. सुतार।

(५९) १. धा. भूषम सुदाम, अ. भूषनइ दान, फ. भूषनहि दान।

(६०) १. धा. अ. ना. इंद्र, मो. इद, फ. यंद। २. धा. सम किउ, मो. ना. सम कीय, अ. फ. सम किय, उ. स. सुर सम।

(६१) १. धा. धवलेहि। २. धा. अ. धम्म। ३. ना. उ. स. देवल। ४. मो. सवायं [सवोय], धा. सुवाय, अ. फ. सुवीय [सुचीय], ना. द. सुचीव।

(६२) १. धा. तुम्ह, मो. तासु, ना. तुम। २. उ. स. हरन। ३. मो. कलम्यंव लोयं, धा. अ. फ. कलविंव लीय, ना. रविंव वीव, द. रवि विंव वीय, उ. स. रवि म्यंव वीय।

(६३) १. धा. गमतु, अ. मगनि फ. मगनु, मो. बधन [< बंधन]। २. धा. राषि, ना. द. रोर, फ. सोभित, मो. जनु, । ३. धा. अ. क. मनु, फ. तम। ४. धा. अ. मध नछोय, फ. मम्बछोय, मो. मधु, वछाय [वछोय], ना. द. उ.स. मधु अछोय, फ. म्बवछोय।

(६४) धा. अ. फ. सज्जिया, ना. जनु रच्यौ, उ. स. जनु रचिय। २. ना. मद्र। ३. ना. द. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :

एक बार संजोगीय सजिन पचि। मुसकाइ मंद पर वदीय वत्ति।
आचिक्क एक सपि उरह अत्ति। बहलीय विविधि सुद्धि मन कि गत्ति।

टिप्पणी—(१) पहु < प्रभु। (२) रग्ग < राग। (३) थार < आरओ < आरतस=समीप में, पास में। (६) मझ < मध्य। (७) मोकल [दे०]=भेजना, प्रेषित करना। (१०) तथ्थ < तत्र=वहाँ, तब। (११) वयण < वचन। (१२) संकुर < सङ्कुड < संकुड=सिकुड़ना। (१६) कित्ति < कीर्ति। (१७) साइ < स+अद्वि=विशेषता के साथ। (२०) पथ्थ < पार्थ। (२३) दब्ब < द्रव्य। गब्ब < गर्व। (२५) पित्री < क्षत्रिय। (२६) निव्वीर < निर्वीर। पुहवि < पृथ्वी। (३०) पुहमी < पृथ्वी। (३२) झड < झट्=गिरना। (३३)सुइंभरि < शाकंभरी। (३४) धुत्त < धूर्त। (३८) अन्न < अन्य। (३९) वसिट्ठ < वशिष्ठ=दूत। (४०) गामिनी < ग्रामणी=गाँव का मुखिया। उविट्ठ < उद्वेष्टित=बंधन से मुक्त। (४३) नइ < नदा=नव। (४४) रत्ते < रक्त=लाल। (४५)वाह < वाञ्छ्=अपेक्षा करना। (५१) सोव्रन < स्वर्ण। वान < वर्ण। (५२) पोलि < प्रतोली=मुख्य द्वार। (५३) संवर < स्वयंवर। (५४) विद्धजन < विद्वज्जन। (५६) वार < द्वार। (५७) सद्द < शब्द। (६१) देवर < देवालय। (६२) म्यंव < बिंब। (६३) घन < घना। मगन < मग्न। मधुवछोय < मधुप्रमित=मधु दैत्य की बस्ती (मधुपुरी)। (६४) बंम < मदन। बीय < द्वितीय।

[४]

रासा— जन[1] अंकुर[2] वरि[3] पानि[4] चरांयति[5] वञ्च मृगु।[x] (१)
मनु मानिनि[1] मिस[2] इंदु[x3] आनंदइ[4] देषि दृगु[5]। (२)

सहि सहचरिति[१]* चरत्त*×[२] परसपर* वत्तु, किम्र । (३)*
सुभ[१] संजोगि[२] संजोग+[३] जानुह[४] मनमथ्थ किम्र[५] ॥[६] (४)

अर्थ—(१) [संयोगिता] यवाङ्करों को हाथ में [ले] कर मृग-वत्सों (शावकों) को चरा रही थी । (२) [वह ऐसी लग रही थी] मानों उस मानिनी के मिस इन्दु ही [मृगों को] नेत्रों से देखकर आनन्दित हो रहा हो । (३) उसकी सखियाँ और सहचरियाँ [उसके साथ] चलते हुए परस्पर बातें कर रहीं थीं कि (४) शुभा संयोगिता के संयोग [विवाह] के लिए [विधाता ने] मानो मन्मथ (कामदेव) को ही [निर्मित] किया है ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
× चिह्नित शब्द द. में नहीं है ।
+ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है ।

(१) फ. खोट नव । २ मो. अगुलीय, ना. अंकुरि । ३. मो. कर । ४. मो. ना. द. फ. पान । ५. मो. चरावत्त, धा. चरावत्ति, अ. चराव, फ. चरावैइ ।

(२) १. मो. फ. ना. स. मानिनि । २. फ. ना. मिसि । ३. ना. इंद । ४. मो. आनदी (<आनदि=आनंदइ), धा. आनंदहि, ना. अनदिय, द. अनुद, अ. अनंदे, फ. अनंदै । ५. धा. खग्ग, मो. द्रग ।

(३) १. मो. सिहसिह वरत्ता (<चरत्ती), धा. अ. फ. द. उ. सहचरी चरित, ना. सहचरि चरित्र । २. मो. वरत्तु (<चरत्तु), धा. ना. अ. फ. द. उ. चरित्त ।

(४) १. धा. मो. मनु, द. मनुह । २. धा. मो. सजोग, द. संजोइ । ३. ना. फ. संजोगि । ४. मो. जानुह। धा. द. मनहु, अ. मनौ, फ. मुनौ, ना. मनुं । ५. मो. मनुमथ कीअ, ना. मनमत्थ कीय, द. मनमथ लिय,

६. स. में इस छंद का पाठ है :
अरिल—अंकुर पान चरावत वच्छं । मनो मानिनि मिस द्रिष्षि अनुकच्छं ।
सहचरि चरित परसपर बत्तय । मनो सजोइ सँजोग मनमथ्थय ॥

टिप्पणी—(२) वच्छ < वत्स । (३) सही < सखी । चरत्त=चलते (गमन करते) हुए ।

[५]

पद्धड़ी—*राजनि अनेय[१] पुत्तिय ति[२] संगि[३] । (१)*
पट वीय[१] बरिस[२] नव सत्त अंगि[३] ॥ (२)
केवि[१] जुवती जुवजन संगह[२] सुरंग । (३)*
मिलि पिलहिं[१] भूप भामिनि[२] अनंग ॥ (४)
संजोगि[१] संग जुवती प्रवीन । (५)
आनंद गान तिन[१] कंठ कीन ॥ (६)
मुख बंक[१] संकु अति सम[२] सपीन[३] ।× (७)*
अध चपन[१] लिपन छिति नपन[२] कीन ॥× (८)
कोमल कुरंगि[१] किंचित[२] किसोर[३] । (९)
अभरनु[१] अदिट्ठ अच्छइ[३] तमोर[४] ॥ (१०)

सुग सरल बाल[१] चलिम्र[२] स[३] थोर[४] । (११)
अंकुरहि[१] मनहु[२] मनमथ्थ जोर[३] ॥ (१२)
जुवजन[१] जुवति[२] रचि कहइ*[३] बात[४] । (१३)
स्रवननु[१] सिराति*[२] नयननु अघात[३] ॥ (१४)
मुकइ[१]* न लीह[२] लज्जा सु रत्त । (१५)
निघनिय[१] धनु हु जांनु गहइ*[२] हथ्थ[३] ॥ (१६)
अधरत्त पत्त[१] पल्लव सुवास । (१७)
मंजरिय तिलक पंजरिअ[१] पास ॥ (१८)
अलि अलक[१] कंठ कलयंठ मत्त[२] । (१९)
संजोगि[१] भोग[२] वरु मधु[३] वसंत ॥[४] (२०)
मधुलेहिहिं*[१] मत्त[२] रितुराजवंत[३] ।+ (२१)
परसप्पर पीवत पियनि[१] कंत[२] ॥ (२२)
लुट्टहि त भमर[१]) सुग्गंध[२] वास । (२३)
मिलि चंद कुंद फुल्लिय[१] अयास[२] ॥ (२४)
वनि मग्ग[१] मग्ग हलि[२]÷ अंब मउर[३] । (२५)
सिर ढरहिं मनहुं[१] मनमथ्थ चउंर[२] ॥ (२६)
चलि सीत[१] मंद सुग्गंध[२] बात ।+ (२७)
पावक मनहुं[१] विरहिनि निपात[२] ॥+ (२८)
कुहु कुहु करंति[१] कलयंठि जोटि[२] । (२९)
दल मिलइ* मनहु[१] धन अंग[२] कोटि[४] ॥ (३०)
करि पल्लव[१] पत्त ति रत्त नील[२] । (३१)
दलि फ्फलहि मनहु[१] मनमथ्थ पील ॥ (३२)
कुसुमेष[१] कुसुम[२] तेन[३] धनुष साजि[४] । (३३)
भृंगी[१] सुपंति[२] गुन गरुय[३] गाजि[४] ॥ (३४)
संजर*[१] सुथानं सुमनाह[२] नेह[३] । (३५)
विद्दारये[१] वीर[२] जुवजननि देह[३] ॥ (३६)
उप्पलिअ[१] कलिअ[२] चंपक सरीप[३] । (३७)
प्रज्जलिय[१] प्रगट[२] कंदर्प दीप[३] ॥ (३८)
करवत्त केत÷[१] केतकि सुकत्ति[२] । (३९)
विहरंति[१] रत्त[२] नितरंति[३] छत्ति ॥ (४०)
परिरंभ[१] अनिल कदली[२] क पान[३] । (४१)
सिर धुनहि सरस[१] सुनि[२] जातु[३] तान ॥ (४२)

झंकुलिय झाम[१] अभिराम रम्म[२] । (४३)
नहु[१] करइ[२] पीय[३] परदेस गम्म[४] ॥ (४४)*
फुल्लिग[१] पलास तजि पत्त रत्त[२] । (४५)
रय रंग सिसिर[१] जित्तउ[२] वसंत ॥ (४६)
देपहिं त[१] पंथ जिन कंत[२] दूरि । (४७)
तिन[१] थकित[२] बोल लोल[३] जल रहिय[४] पूरि ॥ (४८)
संजोगि[१] भोग[२] जुवती प्रवीन ।+ (४९)
प्रिय[१] कंठ नट्टि[२] दुहु[३] भइ ति[४] लीन ॥+ (५०)

अर्थ—(१) अनेक राजाओं की पुत्रियाँ उसके संग में थीं। (२) वे बारह वर्ष की थीं, और अङ्ग (शरीर) में षोडश शृंगार किए हुए थीं। (३) सुरंग (सुन्दर) युवतियाँ तो कितनी ही थीं। (४) वे भूप-भामिनियाँ अनंग (काम) [के खेल] [परस्पर] मिल कर खेल रही थीं। (५) संयोगिता के साथ प्रवीण युवतियाँ [भी] थीं। (६) वे कंठ से आनन्द पूर्वक गान कर रही थीं। (७) [उनकी] भौंहें वक्र शंकु (कील) [के समान] अत्यंत सम (वैषम्य रहित) और क्षीण (पतली) थीं। (८) अर्ध [निमीलित] नेत्रों से [देखती हुई] वे नखों से क्षिति (भूमि) पर लिख रही थीं। (९) कोमल कुरंगियों के समान [वे युवतियाँ] किंचित् किशोर थीं। (१०) उनके अधरों पर अदृष्ट (न दिखाई पड़ने वाला) ताम्बूल विराजमान (रंजित) था। (११) वे शुभा (कल्याण मयी), सरल बालाएँ [यौवनागमन कारण] थोड़ी पीन [लगने लगी] थीं, (१२) मानो [उनके शरीर में] मन्मथ जोर से अंकुरित हो रहा था। (१३) वे युवतियाँ [परस्पर ऐसी] बातें रच-रच कर कहती थीं (१४) कि [उनको श्रवण कर] कान शीतल होते और [उन्हें देखकर] नेत्र अघाते थे। (१५) वे लज्जा की रक्त (लाल) लेखा इस प्रकार नहीं छोड़ती थीं (१६) मानो निर्धना ने हाथ से धन पकड़ रक्खा हो। (१७) उनके अधर-पत्र सुवासित पल्लव थे, (१८) उनके तिलक [आम की] मंजरी थे, और [उनके नेत्र] उनके पास ही खंजरीट थे, (१९) उनकी अलकें अलि (भ्रमर) थे, और उनका [फल] कंठ मत्त कलकंठ (कोकिल) था, (२०) [इस प्रकार] संयोगिता के गुह्य स्थान की उन युवतियों का वर वसन्त हो रहा था।

(२१) मधुलेही (भ्रमर) रितुराजवंत होकर—वसन्त राग से प्रमुदित होकर—मस्त हो रहे हैं, (२२) प्रियाएँ और कान्त परस्पर [मधु-] पान कर रहे हैं। (२३) भ्रमर सुगन्ध की सुवास लूट रहे हैं। (२४) आकाश में फूले (उदित) चन्द्रमा के साथ कुन्द भी फूल रहा है। (२५) वनों, बागों, और मार्गों में आम के बौर हिल रहे हैं, (२६) मानो मन्मथ के ऊपर चामर ढल रहे हों। (२७) शीतल, मंद और सुगंध वातचल रही है, (२८) वह विरहियों को इस प्रकार दुःख दे रही है मानो अग्नि उनको नष्टकर रही हो। (२९) कलकंठ (कोयल) का जोड़ा कुहू कुहू कर रहा है, (३०) [जो ऐसा लगता है] मानो अनंग (कामदेव) के कोट में सेना मिल रही हो। (३१) [उसमें वृक्षों के रक्त और नील पत्रों के मिस] रक्त और नील (गहरे हरित) वर्ण के पत्र (पत्रावली) की रचना करके (३२) मानो मन्मथ का हाथी हिलता (झूमता) हुआ चल रहा है। (३३) मन्मथ ने कुसुमों का जो धनुष [-सा] सजा रक्खा है वही मानो उसका का कुसुमेषु (धनुष) है। (३४) भृंगियों की पंक्ति ही उस धनुष का गुण (प्रत्यंचा) है जो गुरु (गम्भीर) गर्जना कर रही है। (३५) सुमनों के (से बने हुए) स्नेह संज्वर के बाणों के द्वारा (३६) वह वीर (मन्मथ) युवाजनों के देह को विदीर्ण कर रहा है। (३७) चंपक और शरीफे (?) की कलिकाएँ खिल गई हैं (३८) [जो ऐसी

लगती हैं मानों] कंदर्प का दीपक प्रकट होकर प्रज्वलित हुआ हो। (३९) सुकेत करपत्र (आरा) और केतकी काती हैं (४०) जो [विरहिणियों की] छाती को विदीर्ण कर रहे हैं, इस लिए रक्त निहर (निकलकर फैल) रहा है। (४१) कदली का पर्ण (पत्ता) अनिल (वायु) से परिरमन करता [हुआ ऐसा लग रहा] है (४२) मानों यह सरस तान सुन कर सिर धुन (पीट) रहा हो। (४३) दग्ध झंखाड़ भी अभिराम और रम्य हो गए हैं और (४४) प्रिय (पति) परदेश गमन नहीं कर रहे हैं। (४५) पलाश पत्तों का त्याग करके रक्त वर्ण का फूल उठा है, (४६) [जो ऐसा लगता है] मानों उस रण [में प्रवाहित रुधिर] का रंग हो जिसमें शिशिर पर बसन्त को विजय प्राप्त हुई है। (४७) जिनके कांत दूर देश में हैं, वे उनके आने का मार्ग देख रही हैं, (४८) उनके बोल थकित (शिथिल) हैं और उनके चचल नेत्र जल (अश्रु) से पूरित हो रहे हैं। (४९) संयोगिता की गुरु स्थानीय प्रवीण युवतियाँ (५०) अपने दुःखों को नष्ट करके [अपने] पतियों के कंठ लग रही हैं।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(÷) चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

× चिह्नित चरण उ. स. में नहीं है।

+ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. राजनियनेश, धा. ना. राजन अनेय, अ. फ. स. राजन अनेक। २. मो. पुतीय ति, अ. फ. पुत्त्रिय सु, ना. द. उ. स. पुत्रीति। ३. मो. संगि, धा. अ. द. ना. उ. स. संग, फ. संगु।

(२) १. धा. खर वीय, ना. षटवीय। २. धा. बरिस, मो. ना. द. उ. स. अ. फ. बरस। ३. मो. नसवस ज्यगि, धा. नवमास बग, ना. नव मसिति, उ. स. नव लष्षति अंग, अ. नवसत्त अंग, फ, बसन्त अग्गु।

(३) १. धा. किवि (=कैवि), मो अ. फ. कवि, ना. किक (=केक) द. उ. स. वी। २. धा. जुवति जुवनि संगह, मो. जुवति जुवजन संगह, ना. जुवति द्वादश संगह, द. उ. स. जुवति द्वादस (द्वासद–स.) संग, अ फ. जन जुवति सगह (सगहि–फ.)

(४) १. मो. थिलिह, फ. थिलह, स. लियहि। २. धा. हसहि मामिनि, फ. भूप भामिनि, मो. लूप (=भूप) मामिनि, ना. भूप भामिन, उ. स. भामन बनव।

(५) १. धा. संजोग, मो. संयोग, फ. संजोगु।

(६) १. अ. फ. तिनि।

(७) १. अ. फ. नंक, ना. द. लंक। २. ना. सुम। ३. अ. सुपीन।

(८) १. फ. चषनि। २. मो. लिपनउ मछति, ना. नयन लिपि छिच, अ. फ. लिपनं (लिपिन–फ.) छितिनयह (नयहि–फ.)।

(९) १. धा. कुरंगि, मो. अ. फ. ना. उ. कुरंग। २. फ. किंचिति। ३. पूरे चरण का स. में पाठ है : कोमल किसोर किंचित्त सुरंग।

(१०) १. मो. अररनु, धा. अधरन, ना. अधरणि, अ. अधरनि, फ. अधरानु। २. धा. अद्रिह, ना. अच्छिट्ठ। ३. मो. अच्छि (=अच्छह), ना. अच्छित। ४. फ. सुमोर।

(११) १. ना. सुरम सारल वाल, फ. सुभ सरल वार। २. धा. बलिया, मो. उ. स. वलौ, ना. वहोल, द. बुलोय, अ. फ. वलया। ३. द. अ. सु। ४. ना. घोर।

(१२) १. मो. अंकुरिहि, अ. अकुरे, फ. अकुरेह। २. ना. जानु, फ. मनौ। ३. धा. कोर।

(१३) १. ना. जुवनि, स. जुव्वन, उ. जुवनन। २. मो. जुवनी। ३. धा. किंहि (=किहद), ना. बढे, धा. अ. फ. वढहि। ४. धा. वत।

(१४) १. धा. स्रवननतु, अ. स्रवननि, फ. स्रवनन, मो. श्रवनतु, ना. श्रवनह। २. धा. अ. फरी, स. मो. सिरति, ना. सार। ३. धा. निकु नयन रत्त, मो. नदनतु आयात, अ. फ. ना. नकु नैन (नयन–ना.) [illegible]।

(१५) १. मो. मुकि (=मुकह), धा. मुक्के, अ. फ. मुके, ना. मुक्कहि। २. धा छवनु, अ. फ. [illegible], स. छोह।

(१६) १. धा. निरधनी, मो. निरधनाय, द. अ. फ. निरधनीय । २. धा. गनो धनु गहदि, मो. धनुइ जानु गिहि (=गिहइ), अ. फ. मनहुं धनु गह्यो, ना. मनहु धनु गहै, द. उ. स. मनहु धन गहिय । ३. धा. छत्त ।

(१७) १. फ. धरत्त रत्त, अ. छरधर रत्त ।

(१८) १. अ. फ. पंजरिय ।

(१९) १. ना. अक्षि अलिक्ष । २. धा. कलमनि मत्तु, मो. कल्यठ मत्त, ना. कलयठि मंत ।

(२०) १. मो. द. ना. संजोग, फ. गजोगु । २ धा. जोग, अ. फ. सग । ३. धा. अ. मो, ना. जुव, उ. स. जुअ, फ. गो । ४. मो. ना. में इसके बाद 'वसंत वर्णन' लिखा हुआ है ।

(२१) १. मो. ना. मधुलिहिहि (=मधुलेहिहि), धा. मधुलिहदि, उ. स. मधुरेहि । २. मो. गयंत, धा. मत्त । ३. धा. अत्त, उ. स. मंत ।

(२२) १. धा. पिम्म सि पियति, मा. पिवत्त पियदि, अ. पीवति पियनि, धा. पीयाति पिय, उ. स. प्रेम से पियन, ना. पम्मु सोइ प्रीयगि । २. मो. कन्‌ ।

(२३) १. धा. छुट्टति भमर, अ. लुट्ठिदि तिभवर, फ. छुट्टहि तो ममर, ना. छुट्टदि ति भमर, उ. स. छुट्टहि त मोर । २. धा. सुभ गध, मो० अगत, ना. सोगध ।

(२४) १. मो. फूलीय, धा पुल्ल्यउ, उ. स. फूले, अ. ना. फुल्यो, फ. फुल्यौ । २. धा. अगास, ना. अ. फ. अकास ।

(२५) १. धा. वणि वग्ग, उ. स वन वाग, ना. बन मग्ग । २. धा. बद्दु, अ. फ. अलि । ३. मो. मुर (=मउर), उ. स. मोर ।

(२६) १. धा. दरद मनुह, ना. दुरहि जानु, उ. स. दरत जानि, दरहि मानो । २. मो. चुंर (=चउंर), अ. फ. उ. स चोर, ना. चौर ।

(२७) १. ना. सीतल, मो. ना. सो (<सु) । २. मो. ना. सोगध (<सुगध) ।

(२८) १. ना. मनु (=मनउ), उ. स. मनो । २. मो. विरहनि निपात, ना. विरहनि निपात ।

(२९) १. अ. फ. करत । २. धा. कलयति, अ. कलअट, फ कलअट्ट, ना. कुल्यंति । ३. द. उ. स. जो ।

(३०) १. मो. मिल्य, धा. अ. फ. ना. स. मिलदि । २. ना. म. जानु, उ. द. जानि, फ. मानौहु । ३. धा. अ. ना. आनग, फ. अनंगु । ४ फ. स. कोट ।

(३१) १. धा. तरुपल्लिव, ना. तरु पत्त, उ. स. तरु पलव, अ. फ. तर पल्लहि । २. धा. फुल्लहि रत्त नील, ना. पत्तवहि रत्तनील, स. पीत अरु रत्त नील, अ. रत्तहि रत्त नील, फ. रत्त तह रत्त तह रत्तु नील ।

(३२) १. फ. हल चलहि मनो, ना. हलि चलदि जानु, उ. हलि चलिहि जानि, स. हरि चलहि जानि ।

(३३) १. धा. कुसुमेनि, मो. कुसुमेष, फ. कुसुमेषु मो कुसमन, फ. कुसमु । ३. मो. सेन, धा. भरि, ना. उ. स. अ. फ. नव । ४. धा. धनकि सज्जि, ना. धनक साजि, उ. स. धनुक साज, फ. धनिस सज्ज ।

(३४) १. मो. धा. भ्रंगी, ना. भृंगीन, म. मंगी । २. धा सुवत्ति, फ. सपंति । ३. धा. अ. ना. गरुव, स. गरुअ, फ. गनव । ४. धा. अ. फ. गज्जि, उ. स. गाज ।

(३५) १. मो. सर, धा. अ. फ. सज्जर (<संजर), ना. साजर । २. मो. सुअनंग, ना. द. उ. स. सोमनहु, अ. फ. सुवनाह । ३. मो. तेह ।

(३६) १. धा. विद्रवइ, ना. बिद्दरं, अ. फ. बिदरे, उ. बिदारि, स. बिदारि । २ ना. उ. स. जानि, द. जानुं । ३. मो. जुवतीनु नेह ।

(३७) १. मो उपलीअ, अ. फ. उपलीय, ना. उलपीय, धा. उपिलीय । २. उ. स. चलिय । ३. धा. स. द. उ. सरूप, अ. फ. ना. समीप ।

(३८) १. मो. प्रजलीय, ना. प्रगटहि । २. अ. मनह, फ. मनौह । ३. अ. फ. दूप, उ. रूप, स. कूप ।

(३९) १. मो. कंत, ना. वत्त (<वंत), उ. स. द. पत्त, फ. वत्त । २. धा. केतकिय सत्त, मो. केतकी सुकति (<सुवत्ति), फ. किंसतु सुगास, स. केतुकि सुकति (<सुवत्ति), ३. केतुकि सुवत्ति, ना. केतकि सुकत्ति, अ. फ. केतुकि सुरति ।

(४०) १. मो. विहिरंति, धा. उ. स. द. विहरंत, फ. वहुरंत, ना. विरहंत । २. मो. रंति (<रत्ति), द. रत्ति । ३. धा. विच्छुरत, अ. फ. विछुरंत, ना. विछुरति । ४. धा. पत्त, मो. छंत्ति (<छत्ति), अ. फ. छाति ।

(४१) १. धा. परंभ, अ. परिलंत, फ. परिलंत। २. मो. कलि, उ. स. कदलि। ३ अ. फ. सपान, द. उ. स. किपान।

(४२) १. ना. सर, अ. सरिस। २. स. श्रुनि। ३. मो. ना. उ. स. जान, धा. अ. जानि।

(४३) १. धा. झकंगिय झाम, ना. द. झंकरि झमूरि, स. झंकुरि झमूर, अ. फ. झुकुलिय झलि। २. मो. अ. फ. रम्य, ना. रम्मि (< रम्य)।

(४४) १. मो. नइ, ना. मन, द. स. नन। २. मो. करि (=करइ), धा. करिहि, अ. ना. करहि, फ. करैं, रा. करहिं। ३. ना. पाय। मो. अ. फ. गम्य, ना. गम्मि।

(४५) १. धा. फूलिग, मो. फुलिग, अ. फ. ना. फुलिंग। २. फ. पत्त पंत (< पत्त पत्त)।

(४६) ना. ससिर। २ मो. जीवतु, धा. जिव्उ, उ. स. जीतो, अ फ. जीलो।

(४७) १. मो. दिषेत, धा. देषहिति, अ. फ. दिष्यियहि, ना. दिष्यिहित। २. अ. जिनि, ना. उ. स. जिहि। ३. मो. कथ।

(४८) १. मो० के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. मो. थकित, धा. ना. द. उ. स. अ. फ. थकि। ३. ना. उ. स. बोलि बोलि। ४. अ. फ. रहे।

(४९) १. धा. मो. ना. संजोग। २. धा. लगि।

(५०) १. धा. पिय ना. पय। २. मो. नाट, धा. नट्ठि ना. नट्ट। ३. धा. दुहना, दुह। ४. मो. गयी, ना उ. स. गमिन।

टिप्पणी—(१) अनेग < अनेक। (२) बीय < द्वितीय। सत्त < सप्त। (३) केवि < कतिपय। (४) पिल्ल < पेल्। (१०) अदिट्ठ < अदृष्ट। अच्छ < आस्=बठना। तमोर < ताम्बूल। (११) बलिय [दे०]=पीन, मांसल, स्थूल, मोटा (पाइअ सद्द महण्णवो) (१३) वत्त < वार्ता=वात। (१४) सीर < शीतल (पाइअ सद्द महण्णवो)। (१५) मुक्क < मुच्=छोड़ना। लीह < लेखा। (१८) पंजरिष < संजरीट। (१९) कलयंठ < कलकंठ =कोकिल। (२१) मधुलिहि < मधुलेहिन्=भ्रमर। (२२) पिय < प्रिय। (२३) लुट्ट < लुण्ट्=लूटना। (२४) अयास < आकाश। (२५) मउर < मुकुल=बौर। मग्ग < मार्ग। (२९) कलयठि < कल्कंठ=कोकिल। (३२) पील < पीलु=हाथी (तुल० फारसी 'फील')। (३४) गरुव < गुरु। (३५) सजर < सज्जर। (३७) उम्मिल्लिय < उत्खण्डित=खिली। (३९) करवत्त < करपत्र=आरा। (४१) पान < पर्ण। (४३) झंकुलिय=झंखाड़। झाम [दे०] =दग्ध। (५०) नट्ठ < नष्ट। दुह=दुःख।

[६]

पद्धडी—*रवि जोग पुष्य[१] ससि[२] तीय थान[३] । (१)*
दिन[१] धरिगु[२] देउ[३] पंचमि[४] प्रमान+ ॥ (२)
पर उच्छह[१] देषन[२] मग्ग[३] मिलान[४] । (३)
विग्रहन देस चढि चहुआन[१] ॥× (४)

अर्थ—(१) रवि (सूर्य) जब पुष्य [नक्षत्र] के योग में हो, और शशि (चन्द्रमा) तीसरे स्थान पर हो, (२) ऐसी देव पचमी का दिन [राजसूय के लिए] प्रमाण (प्रामाणिक रूप) केसे निर्धारित हुआ। (३) [इधर] पर (शत्रु) का उत्साह (उत्सव) देखने के लिए [पृथ्वीराज सामन्तों का] मिलान (सम्मिलन) हुआ [जिसमें निश्चय हुआ कि] (४) विग्रह करने के लिए चहुआन (पृथ्वीराज) [शत्रु के] देश पर चढ़ाई करे।

पाठान्तर—+ चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

× उ. स. में यह छंद दो स्थानों पर आया है: स. ४८.९९–१००, तथा रा. ४८.२२७। नीचे का पाठान्तर द्वितीय स्थान का है; प्रथम स्थान पर पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

रवि जोग भोग ससि नीय थान। दिन धरयौ देव पंचमि प्रमान।
सोय अग्य ऊदीपन बाल काज। बिलसन विलास मध्यौ ज साज।
पर उछव दविन दीनौ मिलान। विग्रहन देस चढ़ि चाहुआन।

सामान्य रूप से एक पाठ धा. तथा दूसरा मो. के निकट प्रतीत होता है।

(१) १. मो. भोग, फ. पुप्फ। २. मो. संस्य ससि (इनमें से एक मो. का अपना पाठ तथा दूसरा पाठान्तर लगता है), फ. सिस। २. धा. थाम।

(२) १. ना. दिनु। २. मो. धरयु, ना. उ. स. धरयौ। ३. ना. देवि। ४. ना. पंचम।५. मो. प्रयान।

(३) १. फ. उच्छिद। २. धा. देपित, अ. दिपन, फ. दक्षन, ना. दिप, उ. स. दिपन। ३. धा. अ, मो. भयु (=भयउ), अ. फ. की भय, ना. मृतयो, स. कीनौ। ४. धा. मलान।

(४) १. मो. अतिरिक्त सभी में 'चाहुवान' है।

टिप्पणी—(१) तीय < तृतीय। थान ~ स्थान। (३) उच्छह ~ उत्साह। मिलान < मिलन।

[७]

भुजंग—चंपि रिपु सीस चिट्टउ*[१] नरिंदं[२]।[३] (१)
प्रथम अरिराज[१] पंडे पुरंदं[२]॥[३] (२)
चालिकाराय[१] राजन[२] समानं[३]। (३)
गंचिया[१] एक घटि[२] चहूवानं[३]॥[४] (४)
गज्जने देसि[१] बिच्छोहि जोरी[२]। (५)
तथहि पिय[१] कंठ जिम पत्त[२] गोरी॥ (६)
नीर नीच्चालि[१] उच्चालि झंपइ*[२]। (७)
झरहिं मनि मुत्ति[१] गच्छंति लप्पइ*[२]॥ (८)
चीर[१] सम्मीर उड्डंति[२] तुट्टइ*[३]। (९)
मनहु[१] रितुराज द्रुमपत्त[२] छुट्टइ*[३]॥ (१०)
ग्रीव[१] नग जोति रहि फुट्ट पग्गइ*[२]। (११)
तथाहि[१] गिरि× सिषिर[२] द्रुम दाह लग्गइ*[३]॥[४] (१२)
धूम परजालि[१] मिटि मग्ग गजनी*[२]। (१३)
चलहिं सुष[१] तेज जनु[२] चंद रयनी[३]॥ (१४)
बिंब[१] फल जानि घन कीर धावइ[२]। (१५)
दसन भय[१] बाल वसननि छपावइ[२]॥ (१६)
सबद सहरोस[१] साहीय* संकी[२]। (१७)
थरहरित थकि रही[१] झीन[२] लंकी॥ (१८)
केवि[१] रटि रटि ति[२]× प्रिय प्रिय ति[३] जंपइ[४]। (१९)
ऐम[१] रिपु रवनि प्रथीराज[२] कंपइ[३]॥ (२०)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज के चरों (?) ने उससे कहा,] 'हे नरेन्द्र, [अब] तुम शत्रुओं के सिर दबा उनका गर्व मिटा बैठे हो; (२) पहले [तुमने] गोरखंद के शत्रु राजा को खंडित किया।

(३) मलय का राजा (शासक) तो [तुम्हारे] समान ही [बल शाली] था, (४) [किन्तु] उसे, हे चहुवान (पृथ्वीराज), [तुमने] एक आघात में नष्ट कर दिया। (५) तुमने गजनी के देश में इस प्रकार विक्षोभ जुटा (कर) दिया कि (६) गौराङ्गनाएँ अपने प्रियों (पतियों) के कंठ छोड़ रही हैं, जैसे [वृक्ष के] पत्तों को छोड़ देते हैं। (७) नीर (आँसू) टपका (गिरा) कर वे तीव्र चाल (गति) में घूम (चल-फिर) रही हैं। (८) उनके जाते समय मणि-मुक्ता झड़ते हुए दिखाई पड़ते हैं। (९) उनके चीर समीर (हवा) से टूट (फट) कर इस प्रकार उड़ रहे हैं, (१०) मानो ऋतुराज (वसन्त) में द्रुमों के पत्ते गिर रहे हों। (११) उनकी ग्रीवा के नगों की ज्योति प्रकृत रूप से इस प्रकार फूट रही है, (१२) जैसे गिरि-शिखरों पर द्रुमदाह (दावानल) लगी दिखाई पड़ रही हो (१३) और उसकी प्रज्वाला के धूम से गज़नी के मार्ग मिट गए हों। (१४) और वे अपने मुख के तेज [की सहायता] से चल रही हैं, जैसे चन्द्र रजनी में चलता है। (१५) [उनके ओठों को] बिंबफल जान कर घने (बहुत-से) शुक दौड़ पड़ते हैं (१६) जिनके दशन के भय से बालाएँ उन्हें वस्त्रों से छिपा लेती हैं। (१७) वे रोषपूर्ण शब्द करती हुई साधिक—सविशेष—शंकित हैं, (१८) वे क्षीण कटि वाली स्त्रियाँ [भय से] थरोंती हुई थक गई हैं। (१९) कोई-कोई तो रटती-रटती 'प्रिय' 'प्रिय' कह रही हैं। (२०) इस प्रकार रिपु-रमणियाँ, हे पृथ्वीराज, [तुम्हारे भय से] काँप रही हैं।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. मो. बिठु (=बिठ्ठउ), धा. बैठो, अ. फ. बैठ्यो। ना. बैठी। २. धा. ना. द. अ. फ. नरिंद मो. नरंद। (<नरिंद) ३. उ. स. में चरण का पाठ है: जिनें साजतें घूम घूमें नरिंदं।

(२) १. धा. ना. उ. स. द. अ. फ. जुद्द। २. धा. अ. फ. षिषंद, ना. द. घुषद। ३. उ. स. में चरण का पाठ है: लगी धूम आयास सोमं जिचंदं। और अतिरिक्त है:

तुरी बारज राय चोषंद बद्दं। जहाँ बालुका राय संग्राम सद्दं।

(३) १. धा. बालका राज, ना. बालुका राइ, उ. स. तहाँ बालकाय, फ. बालुकाराइ, द. अ. बालकाराइ। २. धा. दाने, द. उ. स. दानें, ना. दानव, अ. फ. दानौ। ३. धा. प्रमान, फ. समानु, उ. स. प्रमानें।

(४) १. धा. गजिया (=गंजिया), फ. गंजया, उ. स. तिनें भजिता, ना. भजिया। २. धा. एक घर, ना. केक घट, उ. स. भूप घटि, फ. इक घटि, अ. इक घट। ३. धा द. ना. अ. चाहुवानु, फ. चाहुवान, उ. स. चहुवाने। ४. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

बगं बग्ग चढ्ढे सुभक्का हलाई। तहाँ पारसाराव सुरंगु राई।
छतेरी छनेरी मंडेरी वरारी। तिनं चंद चंदेरि नेरी निहारी।
जिने तारिया कालपी कन्हराय। जिने मंडिया जुद्ध मधिराज साय।
जिने बाल पिंडाइ रा चक्क चक्के। नरं रोरिया दाइ ममाम सक्के।
जिने जग्य जारे धरे गंग पारे। जिने संभरी धाट तड्डे निवारे।
जिने भंजियं भीमपुर भीम भंजे। जिने भंजिया जाय गोधंग हज्जे।
जिने भंजियं जाय प्रथम सुकासी। भए सूर सामंत उत्त उदासी।
जिने भंजियं जाय मेवात ग्रमं। जिने बैर सों सेन सज्जे समानं।
जिने भंजियं भीम सोमेसभारी। जिने राजथानी सबै पाय पारी।
जिने आलमी जोग पंडे पचेली। जिने माधुरी मोह मोहत लेली।
जिसोरी पुरं रोरियारा जगायं। ···············।
कियं दीन बंबारि मधिराज सोरी। षग चौन षंगार बह्योष मोरी।
तहा मीर बंबारि अधीव फूटी। तहा गोधन धेन चौगान लूटी।

(५) १. मो. गाजने देसि, धा. गज्जते देस, ना. जिनें गजनने देस, उ. स. जिने देस पड्डर, द. संजमी देस,

अ. फ. गजनै केसरि। २. धा. अ. फ. द. बिच्छाह जोरी, ना. बिच्छोहि जोरी, उ. स. जोरी बिछोरी।

(६) १. धा. तिसद पिय, ना. जिनं पाय, द. त जिं पिय, म. ते नै पो। २. धा. कंठ पत्तहित, ना. कंठ पत्तेनि, द. कंठ पत्तेति, उ. स. पीय कंठ सु, अ. फ. कंठ पर्वत।

(७) १. धा. नीर उच्चाल, उ. स. तिनं नीर मह चाल, फ. नारचो चाल, अ. नोरवा चाल। २. मो. उच्चालि अपि (= जपइ), धा. उच्चालु जंपे, ना. उचाल झंपे, अ. फ. उच्चाल झुर्ष, उ. स. उचाल अंबे, द. उच्चाल झप।

(८) १. धा. ढरहि जन मुत्ति, मो. ढरहि मनि मुत्ति, उ. स. तहा झपरहि जेम, ना. ढरहि मनु मुत्ति, अ. ढरहि मनि मुत्ति. फ. रहसि मनु मुत्ति। २. मो. गछत्ति लषि (= लपइ), धा. ना. द. अ. फ. गच्छति लक्खे (लप्पे—अ. फ. ना.), उ. स. गज क्षय लख्खे।

(९) मो. वीर (< वीर), उ. स. तिन चीर। २. उ. स. द्वारस। ३. मो. तुटे (< तुटि = तुटइ), धा. तुट्ट, अ. फ. ना. टुट्टै।

(१०) १. धा. मनुह, उ. स. मना। २. धा. रितुराज द्रम पाट, फ. रतिराज द्रम पत्र, ना. रतिराज दुम पत्त, उ. स. रत्ति रज (राज-उ.) रार पत्त। ३. मो. लुटे (< लुटि = लुटइ ?) धा. अ. फ. ना. लुट्ट।

(११) १. उ. स. तिनं ग्रीव, द. ग्रीव नव। २. मो. फूट पगे (< पगि=पगइ) धा. फूट पुब्बइ, ना. छुट्टि लग्गे, द. फुटि लगे, फ. फुट्ट पछै।

(१२) १. धा. तिचहि, फ. मनइ, ना. तव, द. तचि, उ. स. समचे। २. धा. सिर सिषर, ना. सिर सिषरा, फ. गिरि सिषरि। ३. मो. द्रम दाह लगे (< लग्ग=लगइ), धा. दव दाव गव्वइ, उ. स. जम दाह लग्गे, अ. फ. दव दाह लग्गं, द. द्रुम दाह। ४. ना. में यहाँ और है:

ढरी कैशानि सेसानि बेनी। सिषर धावंत ग्रासे सुछिन्नी।

(१३) १. धा. धूम पर जार, उ. स. तिन ध्रम्म प्रजारि, अ. फ. पज्जौर, ना. धूम परिजारि, द. धुंम पर जाल। २. धा. मृग्ग नयनी, मो. मग्ग गयने, स. उ. अग्ग पनी, अ. फ. मग्ग गवनी (—गउनी फ.), ना. मग्ग गयनी (< गजनी)।

(१४) १. धा. चलहि राज, अ. फ. चलहि तिह, ना. चलहि निहि, उ. स. तहां चलहि तिन। २. अ. फ. मुष। मो. चंद (< चंद) रमनी, अ. फ. चंद रवनी (रउनी—फ.), ना. चंद वयनी, उ. स. चंद रैनी।

(१५) १. धा. ना. द. अ. फ. विंव, मो. ब्यंब, उ. तहा बीव, स. तहाँ बीज। २. मो. धावि (=धावइ), धा. धावइ, ना. धावहि, अ. फ. धावै, उ. स. धाए।

(१६) १. मो. दसन ग्रूप मय, ('ग्रूप' कदाचित् 'मय' का पाठान्तर है, जो यहाँ आ गया है) उ. स. तहाँ दसन बाल भे (बाल मे-उ.) २. मो. वासन छपावि (=छपावइ), धा. द. वसननि छिपावइ, ना. दसननि छिपावहि, स. दसन छिपाए, उ. वसन छिपाए, अ. वसननि छिपावै, फ. वसनुनि सपाव।

(१७) १. धा. सर्व सहिरोस, ना. सवइ सहरो, उ. स. तिनं सह (—सवइ उ.) सह रोस, द. सवइ सह रोस, अ. फ. सवइ सोरोस। २. धा. सहिये ससकी, मो. साहाय (< साहोय) सकी, द. साइस ससकी, ना. साररस संको, अ. उ. स. सहि रोस सकी, फ. सहै रोस संकी।

(१८) १. धा. थरहरति थकि हरि, फ. थरहरं छकि रिरि, ना. थरहरहि थकि रहि, उ. स. तहाँ थरहरे (—थरहरत उ.) थकि रही। २. धा. छीन, मो. ईन (< झीन)।

(१९) १. मो. केव (< केव), धा. ना. अ. फ. के वि, ऊ. स. कवि। २. मो. अ. फ. ना. रटि रटित, मो. रत्ति, ना. द. रट रटति। ३. धा. प्रिय ग्रीय, अ. फ. ना. द. ऊ. स. पिय पियहि। ४. धा. जपइ, मो. जपि (=जपइ), अ. फ. जपै।

(२०) १. मो. प्रेम, अ. फ. पमि, ना. द. नाम। २. धा. रिपुरमनि प्रिथिराज, ना. द. प्रिथिराज रिपुरवनि। ३. मो. कपि (< कपइ), धा. कंपइ, अ. फ. ना. द. कपै।

टिप्पणी—(४) घट < घट्ट=आघात। (५) विच्छोहि < विक्षोभ। (६) पत्त < पत्र=पत्ता। (७) झप < भ्रम=घूमना-फिरना, चलना। (८) नीचाल < निश्चाल=गिराना, टपकाना। (९) तुट्ट < त्रुट=टूटना। (१०) उच्चाल=ऊँची, या तीव्र चाल। (११) पगइ < प्रकृत=स्वाभाविक। (१३) परजाल < प्रजाल। (१४) चल < चल=जाना, गमन करना। (रवन =रवनी।) (१५) ब्यंब < बिंब। (१६) दसन < दशन। (१७) साहिय

< साधिक=सविशेष। (१९) केवि > कतिपय। जप < जल्प्=बोलना, कहना। (२०) प्रम < प्रव=इस प्रकार। रवनि < रमणी।

[८]

दोहरा— गयमदा चषि[१] चचला गुर[२] जंघा[३] कटि रंचि[४]। (१)
पिय[१] प्रथीराज रिपू किय[२] तउ*[३] विपरित कीन[४] विरंचि[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) "गज की भाँति मन्द [गति], चचल आँखों, गुरु जघाओं, तथा क्षीण कटि वाली [शत्रु रमणियाँ अपने पतियों से कहती हैं,] (२) 'हे प्रिय, पृथ्वीराज को जो तुमने शत्रु किया तो विधाता ने [सब कुछ] उलटा कर दिया'।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. म. मो. उ. स. चष, द. मषि। २. धा. ना. गुरु, द. [illegible] द. रं। ४. उ. स. अ. फ. रंच।

(२) १. धा. प्रिय, मो. जु, ना. उ. सं. अ. फ. पिय। २. धा. उ. रिपु [illegible] किवी, न. अ. फ. जु रिपु कियौ, द. जु रितु कियौ। ३. मो. तु (=तउ), [illegible] नहीं है। ४ मो. कीउन धा. ना. अ. फ. कीन, ना. द. उ. स. करण (ना. उ. स. करन)। ५ [illegible] विरंच।

टिप्पणी—(१) गय < गज। चष < चक्षु।

[१०]

पद्धडी— कर[१] पग्ग मग्ग अग्गइ*[२] सुवार[३] । (१)
सुर सुक्कि मुक्कि[१] सुह मनहु[२] प्रहार[३] ॥ (२)
सुनियइ*[१] न सद्द नीसान भार[२] । (३)
दरबार भयौ[१] इत्ती जउ*[२] पुकार ॥[३] (४)
थकि वेद विप्प[२] माननी सु[२] गान । (५)
आनंद सकल सुविसइ[२] न कानि[२] ॥ (६)
कर चंपि राय मुक्कयउ*[२] उसासि[२] । (७)
विग्गड्यउ*[२] जग्गु[२] मंत्री विसासि[३]॥[४] (८)
सुनियइ*[१] न पुन्य[२] सभ[३] मझ्झ राज[४] । (९)
युवजन युवत्ति ध्रतु[२] करिग साज[२] ॥[३] (१०)
संजोगि[१] जोग वर तुम्ह[२] आज । (११)
व्रत[१] लिश्रउ*[२] वरण*[३] प्रथिराज राज[४] ॥[५] (१२)

अर्थ—"(१) [तुम्हारे आक्रमण के भय से पंगराज के] मार्ग में [उसके] हाथ पैर आगे रुक गए हैं, (२) स्वर शुष्क हो गया है, सुख समाप्त हो गया है, मानो [तुम्हारा] आक्रमण हुआ हो। (३) धौंसों के भारी शब्द नहीं सुनाई पड़ रहे हैं, (४) [जयचन्द के] दरबार में जो इतनी पुकार हुई है। (५) वेद [पाठ] में विप्र और गान में मानिनियाँ थक (शिथिल हो) गई हैं, (६) समस्त आनन्द अब कानों में प्रवेश नहीं कर रहे हैं। (७) राजा (जयचन्द) हाथ मल कर उच्छ्वास छोड़ रहा है कि (८) मंत्री के विश्वास में मेरा यज्ञ बिगड़ गया। (९) सभी राज्य में पुण्य नहीं सुनाई पड़ रहे हैं, (१०) और युवतिओं ने आसक्ति की है। (११) संयोगिता के योग्य वर आज तुम्हीं हो। (१२) हे राजा पृथ्वीराज, उसने तुम्हें वरण करने का व्रत लिया है।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
(१) १. द उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—
तिन समय ताम कनवज नरेस । कत काम पुन्य सज्जे असेस ।
मंबर संजोग सम जग्यकाज । बिध्धुरिय रिद्धि गति बिबिध राज ।
श्रृंगारि सहर बिबिधं बिनान । आनंद रूप रज्जे उत्तान ।
तोरन अनूप राजै सुभाइ । जगमगत थंभ हिम जरित ताइ ।
वासन विचित्र उत्तान ताम । मंडप्प उच्च सज्जे सुधाम ।
वास नइ श्रेन विधि बंधिबान । सोमंत भज्ज बधे सुयान ।
क्षोनी पवित्र सझ्झी सवारि । द्रावै सुमंहि सुर सम अपार ।
गावंत थान थानह सु गेव । मंगल अनेक साजै सु भेव ।
जल जात माल तोरन कुसुम्म । वहु रंग विद्धि सोभा सुरम्म ।
आप सु नपति अनेक थान । उछार भत्ति थिति आसमान ।
संभर संजोग लग्गे सुभूप । संपत्त लाज हय गय अनूप ।
देवंत अत्ति उत्तान थान । प्रगटंत अप्प गुन आसमान ।
चिंतें सुचित्त कमधज्जराइ । केहरि कंठेर वर सुत्ति काय ।

सजोग सज्जि नयरी पकार। सम करइ साज हय गय सुमार।
बाजे अनंत बज्जे त्रिवान। बहु ग्रन्थ करत रंजत तान।
कौतिग सुराज राजै अनूप। क्रतयत बठ सादिष्ट रूप।
झलत नेन देषत विनान। मझंम चित्त साकृत्य जान।
आतस चरित्त साजे अनेव। नाटिक कोटि नाचंत भेव।
देषहि विमान साजहि सु देव। वानिद प्रसाद कछु चहिय गेव।
रहि विढि सत्त अह विढि आम। अहा आइ कुकि पर दार ताम,

२. धा. अग्गइ, मो. आगि (=आगइ), ना. अग्गें, उ. स. आगें, अ फ. अगइ। ३. मो. सुपार, ना. सुवार, स. सुवीर।

(२) १. ना. सर सुकिसुं, मो. सह मनहु, धा. सुह मन, ना. सुमन, द. उ. स सुमन, अ. फ. सहमन। २. अ. फ. पहार, द. पमार, स. प्रसीर।

(३) १. मो. सुमिइ (सुमियइ), धा. सुनियइ, ना. सुणीयें, द. उ स. अ. फ. सुनिय (सुनिये-अ.)। २. धा. चार।

(४) १. मो. मयु (=मयउ), द. मई। २. मो. हतसु, द हतती, धा. उ. स. अ. फ. पती, ना. हत्ती। ३. द. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

तम पुच्छि ताम जैचंद राज। अगुन अधम्म किन करिय काज।
उच्चरत ताम धाद्दू सउत्त। चहुआन राव सोमेस पुत्त।
सव देस मजि मोषंद थान। बालुकाराय हनि देषि प्रान।

(५) १. धा. द. वेद वेद, ना. वेद वेदोति, म. वेद विप्र, उ. स. वेन, अ. फ. वेद भेद। २ धा. त्रिप्पनि सु, म. बयनं सु, उ स. विप्रान, ना. त्रिप्रन सु, अ. फ. त्रिप्रनि सु।

(६) १. मो. सुवीसि (< सुविसइ)। २. धा. ना. म उ. स. द. अ. फ. कान, केवल मो. में 'कानि'।

(७) १. धा. सुक्किय, ना. म. उ. स. द. सुक्यौ, अ. फ. सुक्कै। २. मो. उसारि, धा. ना. अ. फ. उसास (उसास-म.), म. उ. स. निसास।

(८) १. धा. ना. उ. स. म. द. अ. फ. विग्गर्‍यो (विगस्यौ-म० विगास्यौ-ना०) मो. विगड्यु (=विग्गड्यउ)। २. अ. जग्गि, फ. म. ना. जग्य। ३. धा. विमास, म. उ. स. द. ना. अ. फ. विसास। ४. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):

बधों सु चपि अब चाहुआन। विग्गर्‍यो जग्य निहचैं प्रमान।
जोगिनो राज चित्रंग जोर। बंधों समेत प्रथिराज दोर।
सबाइ राज बधौ मंडोर निवांर करौं चहु आन ओर।
आहुट्ठ राज प्रथिराज साहि। पीलौं सु तेल जिय तिल प्रवाहि
समरि जुन्हाइ बुलाइ राइ। इक वत्त कहा पिय सुनहु आइ।

(९) १. मो. सुनीइ (=सुनियइ), धा सुनई, ना. उ. स द. म. सुनिये। २. मो. ना. पुन्य, धा. पुकार, फ. अ. फ. न पुत्रि। ३. धा सब, अ सुम। ४. धा. महाराज, द. महि राइ, स मध्य राज, अ. फ महराइ।

(१०) १ मो. युवजन युवती भन, धा. युवतीय जनन युव, ना. जुव जनु जुवत्ति अनु, म जुव जनु जुवत्ति अनु, उ. जुवजनि जुवति, स जुवजसि जुवत्ति अति, अ. फ युवतीजन युवजन। २ अ. फ. सार। ३. ना. द. म उ. स में यहाँ और है (स पाठ)

पुच्छी स ताम सजोगि वत्त। कहि धाइ कौन मा चित विरत्त।
उच्चरी ताम सहचरी धक। बधी सुराज प्रथिराज तेक।
दिल्ली नरेस सोमेस पुत्त। चहुआन पान देषे स उत्त।
बालुका राय सध्यौ सुतेन। षोषंद भजि पुर लुटि रेन।
सुनि स्रवन वत्त सजोगि सध्य। चिंता सुचित्त गघर्व कथ्य।

(११) १ म. सनोग। २ धा ना. अ मत सु, फ. कुसम।

(१२) १. उ स. वित, फ. मत। २. धा. लियो, मो. लीउ (=लियउ) म. लय, अ फ. ना. लियो। ३. मो

चरण (< वरण), म. बरज, फ. वरेन। ४. धा. उ. स. म. प्रिथिराज साज, अ. फ. प्रथिराज (प्रिथिराज-अ.) काज। ५ द. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):

द्रिढ करिय मग्ग सम चित्त अत्ति। पितु चिरत मुद्धि छंडौ विमत्ति।
सजोगि ताग जंप्यौ सु पम। मानौं सु मुद्दस इंद्र द्रढ नेम।
चहुवान सुबर मो सत्ति मत्ति। छंडौ सु अवर लालिच अत्ति।
इस जपि मग्ग सा निज्ज धाम। छंडे न अव्व विधि व्याह काम।

टिप्पणी—(१) मग्ग < मार्ग। (२) मुक्क < मुच्। मुक्क < मुच्। मुह < मुख। (३) सद् < शब्द। इत्तौ < इत्तिय < इयत्=इतनी। (४) जऊ < यत। (६) विस < विश्=प्रवेश करना। (७) मुक्क < मुच्=छोड़ना। उसासि < ऊच्छवास। (८) विसास < विश्वास। (१०) अनु=और। साज < सज्ज < सज्=आसक्ति करना।

[११]

दोहरा— *तिहि[१] पुत्तिय[२] सुनि गन इतउ* [३]तात वचन तजि काज। (१)*
कइ[१] वहि[२] गगहि सचरउं[३] कइ[४] पानि गहउं*[५] प्रथीराज[६] ॥ (२)*

अर्थ—(१) "उस (जयचंद) की पुत्री (संयोगिता) के सम्बन्ध में [मैंने] सुना है कि वह यहाँ तक गुनने लगी है कि 'पिता के वचन और [स्वयंवर के] कार्य का त्याग कर (२) या तो मैं गंगा में बह चलूँगी, और या तो पृथ्वीराज का पाणिग्रहण करूँगी' ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. अ. फ. तिह। २. अ. फ. म. ना. पुत्ती। ३. मो. गन इतु (=इतउ), धा. गनइ इत, अ. फ. गुनय इत, द. ना. स. उ. म. गुन इतौ, फ. गुनि इता।

(२) १. मा. काइ, म. अ. फ. कै। २. मो. विहि, धा. बग्र। ३. मो. ना. गगहि सचरु (=संचरउ), धा. वहि गगहि परौं, अ. गगहि सचरौं, म. गगइ सिंचरौं। ४. मो. काइ, म. कै। ५. मो. गुहु (=गुहउ), धा. ग्रहै, ना. ग्रहुं (=ग्रहउं), द. ग्रहु, फ. हू गहु, अ. गहुं (=गहउं), म. उ. स. ग्रहन। ६. धा. म. ना. प्रिथिराज।

टिप्पणी—(१) गण < गणय्। इतउ < इयत्=इतना।

[१२]

दोहरा— *सुनत राइ[१] अचरिज* भयउ[२]* हियइ* मन्यउ*[३] अनुराउ[४]। (१)*
नृप वर अनि उर[१] अंगमइ[२] दैवहि अवर[३] स भाउ[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) राजा (पृथ्वीराज) को [संयोगिता के इस संकल्प की बात] सुनते ही आश्चर्य हुआ, और उसने हृदय में संयोगिता के अनुराग को मान लिया। [और उसने कहा] (२) "नृप (जयचन्द) अपने हृदय में उसके लिए अन्य वर (भले ही) निश्चित कर चुका है, किन्तु दैव को तो दूसरा ही [वर] भाता है।"

पाठान्तर—(१) १. धा. द. फ. सुनित राइ, ना. सुनत रावत, अ. सुनति राइ, म. सुनत राय। २. धा. म. अचरिज्ज किय, अ. फ. अचरज्ज किय, ना. अचिरिज कीयौ। ३. मो. हीइं मन्यु (=मन्यउ), उ. स.

म. हियं मत्ति, धा. हिय मच्छर, द. हिय मानु (=मानी), अ. फ. ना. हिय मान्यौ। ४. धा. अनुराइ, म. अनिरावं, उ. स. अनराव।

(२) १. धा. त्रिपवर अवरइ, अ. फ. ना. नृपवर औरं (अउरहि—फ., और—ना.), म. उ. स. द्वौ वरि अवरहि (औरहि—म.)। २. धा. निम्मवइ, अ. फ. निर्मव, फ. नृमये, ना. नृमव, म. देवं अर, उ. स. देवं वर। ३. अ. फ. दवहि और, धा. अवर अच्छियो, उ. स. दवै और, म. देवै अवर, ना. दवं ४. धा. धाइ, अ. म. उ. स. सुभाव, ना. द. फ. सुभाउ।

टिप्पणी—(१) मन्य < मन्। (२) अनि < अन्य। अवर < अपर।

[१३]

नाराच—परहि[१] पंगराइ दुत्ति[२] सुतीव[३] आल[४] मुक्कने[५]। (१)

साम दान दंड भेद[१] सारसं[२] विचष्पने[३] ॥[४] (२)

जे ग्रीव ग्रीव तार तार नैन सेन[१] मंडिहो[२]। (३)

जे[१] वयन्न विद्धि निद्धि धीर[२] ही सयान खंडिहो[३] ॥[४] (४)

अनेक जुध्धि सुध्धि[१] सब्ब मुच्छि[२] काम जग्गवइ[३]।[४] (५)

ते[१] प्रचारि काम च्यारि जाम[२] अंगनं[३] समुम्भवइ[४] ॥[५] (६)

अर्थ—(१) [उधर] स्त्री (संयोगिता) की अड़ (हठ) को छुड़ाने के लिए पंगराज (जयचन्द) ने दूतियाँ प्रेषित कीं (नियुक्त कीं), (२) जो साम, दान, दंड तथा भेद में समान रूप से विचक्षणा थीं, (३) जो ग्रीवा, ताली (हथेली) तथा नेत्रों से संकेत मंडित किया करती थीं, और (४) अपनी वचन-रचना की निधि से सज्ञानों (ज्ञानियों) के भी धैर्य को खंडित करती थीं। (५) वे सब अनेक युक्तियाँ शोध-शोध कर मूर्च्छित काम को जगाती थीं और चार प्रहर काम की उत्तेजना करके वे उस अंगना (संयोगिता) को समझाती थीं।

पाठान्तर—(१) १. मो. परठी म. परति, ना. पति। २. धा. अ. म. ना. उ. स. दुत्ति, मो. दूति, फ. दुत्त। ३. धा. अ. म. सुत्ति, फ. सुत्त, ना. सुत्ति। ४. ना. सुत्ति आडसं। ५. धा. म. ना. मुक्कने (मुक्कन—ना.) मो. मूकने।

(२) १. धा. द. ति साम दंड वीर भेद, ना. जि साम दान भेद वीर, अ. फ. ति (ते-फ.) सामदान भेद दंड, म. ति साम दान भेद दंड। २. मो. सरम वीर (पाठान्तर का समावेश), धा. म. उ. स. सारसी (सारसो—उ.), अ. फ. सारसे। ३. धा. विचंछने, अ. फ. विचछछन, म. उ. स. विचष्पने (विषपने—म.)। ४. म. उ. स. में यहाँ और है (स. का पाठ):

वयन्न चित्त चातुरी न ताहि कोइ पुज्जई।
हरंत मान मेनका मनोहरं न सुझई॥

(३) १. धा. सुग्रीव ग्रीव कंठ तार नयन सयन, मो. जा ग्राव ग्रीव तार तार नेन सेन, अ. फ. सु ग्रीव ग्रीव कंठ ताल नैन सेन, ना. जि (=जे) ग्रीवता ग्रीव तार तार नन सेन, उ. स. श्रवन्न नेन नेन सेन तार तार, म. श्रवंन नैन सैन सेन तार तार। २. धा. मडहो, मो. मंडिहीं, म. उ. स. मंडई।

(४) १. मा. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. धा. वयन्न विद्धि निद्धि रंग, अ. फ. वयन्न गिद्धि सब्ब, ना. वयन्न विद्धि निद्धि रंग, उ. स. अनेक विद्धि निद्धि सब्ब, म. अनेक विध सिध साध। ३. धा. उ. स. म. ना. ईसज्ञान षण्डहो, (षंडई—म.) अ. फ. ईस ग्यान षंडहो, द. ग्यान ग्याम मंडहीं। ४. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):

अनेक भाँति चातुरीनि चित्त चत्त चोरई ।
छिनेक में प्रसन्नवं सु जेम मेन ढोरई ।
कम्क कल मलाप जाप ताप धू< ससई ।
यिपंड ज्यों मिठास बांस सासी ता प्रसन्नई ।

(५) १. म. लुध । २. धा. अ. फ. मूच्छि, म. मुठि (< मुछि), ना. मुछ्यौ । ३. मो. जगवि (=जगवइ) अ. ना. जगवै, फ. जगाउही । ४. म उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

सुपाठई चतुर बत्त प्रथम मन्न लग्गवै ।
रहस मोन - मोनही हसंत ते हंसावही ।
विपंम जोग मोष लेअ जोर सों नसावहीं ।
अगोन कठ पोत रूप उत्तरं दिसावही ।
कपट्ट ग्यान बत्त मद्धि हट्ठ सो छँडावही ।

(६) १. धा. सि (=से), मो. त, फ. न, ना. द. म. उ. स. में यह शब्द नहीं है । २. धा. अ. प्रचारि च्यारि जाइ, फ. प्रचार चार जाइ, म. उ. स. प्रचारि काम्र (काम्रु—म.) चारि (च्यारि—म.) जाइ (जाय—म.)। ना. द. प्रचारि चारि (च्यारि—द.) जाइ आग । ३ मो. अगनं, धा. अननें, उ. स. आप मन्न, अ. फ. ना. अंगना । ४. मा. समूझविर=समूझवइ), धा. समुज्झवइ, अ. समझवै, फ. समुझाउही, म. ना. उ. स. समुझवे।
अनेक भाँति चित्त चातुरीनि सु आप मन्न सुझवं ।
५. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):
टिप्पणी—(१) परिठ्ठव < प्रति+स्थापय् । आछि < अच्छ [देशज] । मुक < मुच् । (२) सारस < सरिस < सदृश । विचष्षन < विचक्षण । (३) तार < ताल=ताली । सेन < सकेत । (४) सयांन < सज्ञान । (५) मुच्छ < मूर्च्छ् ।

[१४]

रासा —अलस[१] नयन अलसाय ति[२] आदरु[३]× अप्प[४] किय । (१)
[पुत्री वाक्यः] किम बुध्धी[१]मय[२] तात सकिल्लिअ[३] इक जिय[४] । (२)
[दूती वाक्य] तव बाले वर तात[१] सकिल्लिअ एक जिय[२] । (३)
किहि[१] वर वर उतकंठ[२] त पुच्छइ अच्छरिय[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) उस (संयोगिता) ने अलस नेत्रों से अलसाते हुए आप ही [उस दूती का] आदर किया [और पूछा,] (२)"मेरे पिता ने जी में कैसी (कौन सी) एक बुद्धि संकीलित कर रक्खी है ?" (३) [दूती ने उत्तर दिया,] "हे बाले तेरे श्रेष्ठ पिता ने एक [बुद्धि] यह संकीलित की है कि (४) तुम्हें किस श्रेष्ठ वर की उत्कंठा है यह, हे अप्सरा, तुमसे पूछें।"

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द फ. में नहीं है ।
(१) १. म. स. ना. द. तव अलस । २. म. अलसायत, ना. अलसाइ चित्त । ३. धा. उ. स. आदर (आतुर—स.), म. ना. आदर । ४. स. अप्प ।
(२) १. म. बुधीय, फ. बुद्धिय । २. धा. अम, मो. ना. द. मय, अ. फ. अय, म. उ. स. मो । ३. धा. ना उ. म. चिल्लि ति, म. सकिलिय, अ. फ. सकिलिव, फ. संकलव । ४. म. एक हिय, ना. इक्क हिय ।
(३) १. धा. अ. फ. हे बाले तव तात, ना. तव बोलेवर तात, द. तव बालेबल तात, २. धा. ना. सकिलित राय (राइ—ना.) लिय, द. सकिलित रायलि, अ. फ. सकिलिय राइ लिय, म. उ. स. सयवर मंडय (—मंडय म.) ।
(४) १. धा. म. उ. स. कहि । २. धा. उतकंस, फ. उतिकठ म. उ. स. उतकंठाइ । ३. मो. त पुच्छिहि

अच्छरीय, धा. अ. फ. द. ना. सु पुच्छइ (पुछै—अ. फ.—पुच्छहि—ना. द.) अच्छरिय, म. उ. म. माल उर छटइय (छंडइय—म.)।

टिप्पणी—(२) मय < मद्=मेरा। संकिलित < संकीलित < संकीलित=कील लगा कर जोड़ा हुआ, दृढ़ता-पूर्वक गाड़ा हुआ। (४) अच्छरिय < अप्सरसि=अप्सरा।

[१४]

[पुत्री वाक्यः] रासा—मय मन मझूझ ज* गुझिझ[१] गुरुजन छुड़ि*स तुम कहउ*[२]। (१)
जंपत लज्जइ*[१] जीह न अक्खर[२]. लहु लहउं*[३] ॥ (२)
षट दह[१] जिहि सामंत[२] सोइ प्रथीराज कोइ[३]। (३)
दान खग्ग भय मानि न[१] मुकउ तात सोइ[२] ॥[३] (४)

अर्थ—[संयोगिता ने कहा,] "(१) मेरे मन में जो गुह्य है, वह गुरुजनों से भी न कर तुमसे कह रही हूँ। (२) उसे कहते हुए मेरी जिह्वा लज्जा का अनुभव करती है, और [उसे कहने के लिए] मैं एक लघु अक्षर भी नहीं पाती हूँ। (३) जिसके सोलह [या साठ ?] सामंत हैं, वही कोई पृथ्वीराज [मेरा वर] है, (४) जिसने [मेरे पिता के] खड्ग-दान (खड्ग-युद्ध) से भय मान कर मेरे पिता को छोड़ा नहीं है [और उससे युद्ध करना चाहता है]।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. मय मन मझस गुझ, २ धा. मुहि मनमहं गुझ जानि, द. उ. स. म. मो मन मझ गुरजन, ना. मय मनन मझ, अ. फ. मा मन मझ गुज्झन। २. मो. गुरुजन छंडस्सु तुम कहु (=कहउं), धा. गुज्झ स तुम्ह कहु (=कहउं), ना. उ. स. म. गुज्झ सु (सुं—म.) तुम कहौं, (कहौ—म., कहुं=कहउं—ना.), अ. फ. गुज्झ सु तुम कहै।

(२) १. मो. जंपत लज्जि (=लज्जइ), धा. जंपत लज्जै, ना. जंपत लज्जु (=लज्जउं), उ. स. जंपति लाजौं, अ. फ. जंपत (जंपति—फ.) लज्ज, म. जंपति लाजौं। २. मो. न अक्षर (=अक्खर), धा. न अष्पर, अ. फ. न अछ्छर, म. सुअंतर, ना. स अच्छिर, उ. स. सु वत्तर। ३. मो. धा. ना. लहुं (=लहउं,) अ. फ. कहै, उ. स. लहौं, म. लहौ।

(३) मो. धा. षटदह, अ. पट (पट) दह, फ. पटु (षटु) दह, ना. द. म. उ. स. सत्त (सित—द.) सैन (सयन—ना.)। (२) धा. अ. फ. सावंत। ३. धा. प्रिथी प्रिथीराज कइ, अ. फ पृथी (पृथ्वी—अ.) पृथिराज होइ, ना. द. म. उ. स. सँर छद (छद—ना.) मंडलिय।

(४) १. धा. मो. फ. दान सग्ग भय मान, अ. दान षग्ग भय मानि, ना. द. म. उ. स. बरन (बरण—मो.) इच्छ बंर मो हिय (हिय—म., हिमं—ना.)। २. धा. न मुक्कइ तात सइ, मो. नमकुवयु (=नमकवउ) तात सोइं, अ. फ. न (नि—फ.) मुकर तात सुइ (सोइ—फ.), ना. द. म. उ. स. इति मउंडलिय।

टिप्पणी—(१) मय < मत्=मेरा। गुज्झ < गुह्य। (२) जंप < जल्प्। जीह < जिह्वा। (४) मुक ~ मुच्।

[१६]

[दूती वाक्यः] गाथा—अवुधा*[१] अलीह[२] बाला क्यउं*[३] उधरिय मित्त[४] रस पनमं[५]। (१)
लहु धा[१] लुहार पुत्ता[२] तं पुत्तीय राइसं धीय[३] ॥ (२)

अर्थ—[दूती ने कहा,] "(१) हे बुद्धिहीना और अलीक (लीक त्याग कर चलने वाली) बाला, तू क्यों भिन्न रस के इन [वचनों] को बोल रही है ? (२) वह लघु लघु [पिता] का पुत्र है, जब कि तू, हे पुत्री राजेश्वर की दुहिता है।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. अबुधे, ना. द. मुगधा, म. उ. स. मुगधे, अ. फ. मुद्धे। २. मो. अलि बाला, ना. मुगधा रसया, द. म. उ. स. मुगधा रसया, अ. फ. अमुद्ध रसाए। ३. मो. क्युं (=क्यउ), धा. अ. फ. में यह शब्द नहीं है। ४. ना. उवरजे भ्रयंन, उ. स. अवरज भिन, म. अवरज भिन, अ. फ. उचरिय बयण भिन्न। ५. मो. धन (<वचन), धा. पण, ना. द. पव (पक्ष—ना.), म. उ. स. पवि, अ. फ. नाय।

(२) १. धा ना. द. अ. फ. लहुवा। २. धा. लुआर पुत्ती, अ. फ. लहुवाय पुत्तं, द. उ. स. लुहान पुत्तं, म. लहुआन पुत्त, ना. नहान पुत्तां। ३. धा. तं पुत्ती राजघर आवी, ना. द. तु (तुं—द.) पुत्ती राज (राजा—द.) ग्रेहेवि (ग्रेहेवि—द.), उ. स. तूं पुत्ती राजग्रेहायं, म. तूं पुत्ती राजग्रेहाई, अ. फ. तं पुत्ती राज घर आयं।

टिप्पणी—(२) लहु < लघु। आ=यह। लुहअ < लघुक। राइसं < रायस < राजेश। धीय < दुहितृ।

[१७]

[पुत्री वाक्यः] साटिका—आ रत्ती अजमेरि[१] धुम्मि धमनी[२] कति मंडि मंडोवर[४]। (१)
गोरी रा सुरमंड*[१] दंड दमनो[२] अगिनी उत्तिट्ठा[३] कर[४]। (२)
रण थंभ[१] थिर[२] थंभं सीस अहिरणि[३] जलजिट्टि[४] कालिंजरं[५]। (३)
कृपानं[१] चहुआन जानु घनयो[२] परनोपि[३] गोरी घर[४] ॥ (४)

अर्थ—[संयोगिता ने कहा,] "(१) उसीने अजमेर में धूम धाम मचाई और मंडोवर को काटकर मंडित किया, (२) [उसीने] मरु मंड के मोरी राज को दंडित करके उसका दमन किया, और उत्थित करों (ऊर्ध्व) वाली अग्नि बन कर (३) उसीने स्थिर स्तम्भ वाले रणस्तंभपुर (रथभौर) के सिर पर अभिरमण किया और कालिंजर को जलमग्न किया, और (४) चहुआन की वह कृपाण तो गोरी धरा पर घन की भाँति घहराई।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

(१) १. अ. फ. आरत्ता (नारत्ती—अ.) अजमेरि, मो. आरत्ता अजमेर। २. मो. धूमि धमनी, धा. धुंधि धवनी, द. म. उ. स. धुम्मि धमनी, अ. फ. ना. धुम्मि (धुम—फ.) धवनी (धरनी—फ.)। ३. मो. कति मंडि (< मडि), धा. म. ना. करमडि, अ. कमंडि, फ. कुमंडि। ४. मा. मंडोवरं (< मंडोवरं।)

(२) १. मो. मोरीरा मरमंड, धा. अ. फ. मोरीरा सुरमुंड, ना. मोरारी सुरमुंड, द. उ. स. मोरीरा मरमुंड, म. मोरीरा मरमुंड। २. धा. दंड दवनो, अ. फ. ना. दंड दवनो, म. दंड दमनो। ३. धा. अग्गी उथिरटं, अ. फ. अग्गी उविटं, म. ति उविट्ठा, ना. अग्गी उतिट्ठा। ४. म. ना. करो।

(३) १. धा. रनथंभिर, अ. फ. रथंभं। २. फ. थिर। ३. धा. मांस इजिरो, अ. फ. सीस अहरनि, ना. सीस हरणा, म. सीस अहिरं, उ. स. सीस अहिरं। ४. धा. अ. जल जुयर, फ. जलजुट्टि, ना. जलिट्टि, म. उ. स. उत्तलदिट्ट। ५. मो. कालिंजरं, म. कालजरं, ना. काल्यंजरं (=कालिंजरं)।

(४) १. धा. किपपान, अ. किपपानं, फ. कपपान, म. क्रिपानं, ना. कर पानि। २. धा. जानि घनयो, मो. जान घनयो, अ. जानि घनयो, द. जानु रहियं, म. जान रहियं, ना. जान हियय। ३. धा. परणोपि, द. पहणोपि म. पहनोपि, ना. परनोपि। ४. म. धरा, ना. अ. फ. धरा।

टिप्पणी—(१) रज < रणत्=शब्दायमान करना, गुंजाना। कद < कृद्। (२) रा < राज। वठिटु < वठिउ=बठी हुई। (३) अहिरम < अभि+रम्।

[१८]

[दूती वाक्यः] साटिका—तो जा[1] पुत्तीय[2] मरहट्ट थट्ट[3] सबले निम्मवि*[4] वइरागर[5] ।(१)
करणाटी[1] करवीर[2] नीर गहनो[3] गुंडो गुर*[4] गूंजर[5] । (२)
निर्मालो हथमेव[1] मालव धर[2] मेवाड मंडोवरं[3] । (३)
जत्तउ* तात इति सेव देव[1] नृपयो[2] तत्तानि किं तू वर[3] । (४)

अर्थ—[दूती ने कहा,] "(१) तू जिसकी पुत्री है, [हे संयोगिता,] उसने महाराष्ट्र, यट्ट, नीमच और वैराग्र को बरल (भ्रष्ट) किया; (२) कर्णाट, करवीर, गुड और गुरु गुर्जर की क्रांति के लिए ग्रहण हुआ; (३) निर्माल्य जिस प्रकार हाथ में हो, उसी प्रकार उसने मालव भूमि, मेवाड और मंडोवर को हस्तगत किया। (४) जब कि ऐसा तुम्हारा पिता है, और ऐसे देव जैसे नृप उसकी सेवा करते हैं, तब तू उन्हें क्यों नहीं वरण करती ?"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
(१) १. ना. द. म उ. स. सो [मात्र], धा. अ. फ. जा [मात्र], मो तो जा। २. म. ना. पुत्री। ३. द. मरहट्ट वट्ट, ना. मरहट्ट। ४. मो. निमनि, म. उ. स. नोमंत, ना. द. नीमोचं, धा. अ. निम्वीय, फ. नद्वोय। ५. म. अ. फ. ना. वैरागरे।
(२) १. द. कर्णाट, म. कर्नाटी। २. धा. करनीर, म. उ. स. करम्मीर, अ फ. करिनीर। ३. मो. नीर गिह्निो, ना. म. नीर गहना, धा. अ. फ. नीर गहनो, द. नीर गहिनो। ४. मो गुडो गुर, धा. गुंडो गुरे, ना. द. म. उ. स. गोरी गिरा। ५. म उ. स. गुज्जरी, धा. अ. फ ना. गुज्जर, द. गुज।
(३) १. धा. निम्माले हथमाल, अ. फ. निर्माण हथमेलि, म. निर्माण हथलेव, द. निर्मां हथलेव, ना. निर्मोली हथमेव मेलि, स. निमावे हथलेव। २. म. ना. धरा। ३ उ. स. मेवार महो धरा, म. मेवार महोवरा, फ. मेवार महोउरं।
(४) १. मो. जतु (=जत्तउ) तात हूं यत्त सेव देव, धा. जातस्तात देव, ना. जिन तातं इति सेवदेव, उ. म. स. जित्ता तातय सेव देव अ फ. जाता तस्य सर्व सेव (सेउ–फ)। २. अ. फ. नृपर्ण, म. त्रिपति। ३. मो. तत्वनवां तू वर, धा. तात सुत किंवा वरं, अ. फ. आन न तं किं वर, ना. तत्वान तु वयं वरे, द. तत्तानतुं किं वरं, म. तत्तादपन किंवरे, उ स. तत्वाग्यनं किं वरे।
टिप्पणी—(१) जा < या। सबल < शल्य। (३) निर्मालो < निर्माल्य। हथमेव < हस्तम्+एव। (४) जत्तउ < यद्+तत्र। तत्तानि < तद्+तानि।

[१९]

[पुत्री वाक्यः] श्लोक—न मो[1] राजान*[2] संवादे[3] न मो[4] गुरुजनागरे[5] । (१)
वर मेकं सय[1] देह अन्यथा[2] पृथिराज ए[3] ॥ (२)

अर्थ—[संयोगिता ने कहा,] "(१) न मैं राजाओं के संवादों (संदेशों) का और न गुरुजनों [के आदेशों] का अनुकरण करती हूँ। (२) एक सौ देह (जन्म) ग्रहण करना पड़े तो भी अच्छा होगा, अन्यथा [नहीं तो] पृथ्वीराज [मुझको प्राप्त हों]।"

* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

पाठान्तर—(१) १. अ. फ. म. नमे (नमे—फ.)। २. मो. रामान (<रायान), धा. रयन, ना. द. म. उ. स. अ फ. राजन। ३. अ. फ. सवादो। ४. मो. नमोरव, अ. फ. म. नमे (न मे—म.)। ५. मो. गुरु जनयोग गुरे, धा. गुर रयन जागरे, म. उ. स. गुरु (गुर—म.) जन आग्रहे, अ. गुरज नागरे, फ. गुर्ज्जनी गरे।

(२) १. मो. शयं, ना. सुयं, अ. फ. उ. स. स्वयं, म. प्रिय। २. मो. अन्यसा, धा. थानिस्वामि, म. उ. स. नान्यथा, अ. फ. सर्वथा। ३. मो. प्रथीराज, धा. प्रथिराज यो, म. प्रथाराज यं, ना. पृथिराजयो।

टिप्पणी—(१) आगर < आगल < आ+कलय्=आकलन करना। (२) सयं < शतं।

[२०]

[दूती वाक्यः] साटिका—इंदो किं[१] अंदोलिया[२] अमीप[३] चक्कीवं गंगा सिरे[४]। (१)

वच्छी छीर[१] विचार चारु[२] भमरे[३] चिंचीन बंका करे[४]। (२)

तस्थाने[१] कर पाद पल्लव वसा[२] वल्ली[३] वसंता[४] हरे। (३)

चतुरे तु[१] चतुराय[२] आनन रसे[३] सा जीव मदनावरे[४]॥ (४)

अर्थ—[दूती ने कहा,] (१) "इंदु क्यों [इंदु] है? इन्दुलेखा (ज्योत्स्ना) के अमृत के कारण। चक्री (शिव) भी [चक्री क्यों है?] गंगा के सिर पर होने के कारण। (२) वत्सिन् (बछड़े वाली गौ) [वत्सिन् क्यों है?] क्षीर [के कारण]। भ्रमर भ्रमर क्यों है? चारु विचरण के कारण। चिंची [चिंची क्यों है?] अपने बाँके (टेढ़े) करों (फलों) के कारण। (३) वशा (हस्तिनी) क्यों अपने स्थान पर है— क्यों वशा (हस्तिनी) है? अपनी [सुन्दर] कर (सूँड़), तथा पल्लव सदृश [कोमल] पाद (पैरों) के कारण। वल्ली [क्यों वल्ली है?] क्यों कि वह वसंत को ग्रहण करती है। (४) [उसी प्रकार] हे चतुरे, तुम्हारे मुख और जिह्वा की जो चतुरता है, वह [तुम्हारे] जीव के मदन द्वारा आवृत्त होने से है।

पाठान्तर—(१) मो. इंदो कयं, म. उ. स. इंद्रो कि, धा. ना. द. अ. फ. इंदो (यंदो—द.)। २. धा. अ. फ. इंदोल्पिन, मो. अंदोलिया, म. अलि अन्य ईस, ना. इंदोलिआनि, उ. स. अन्य ईस (ई—उ.)। ३. म. उ. स. अनयो। ४. मो. चक्कीवं गंगा सरे, धा. अ. चक्की भुजंगा सिरे, फ. वक्की भुजंगा सिरे, म. उ. स. चक्की भुजंगा सुरं (सुरे-म.), ना. चिक्की भुजंगा सिरे।

(२) १. मो. वछच्छर, धा. विच्छी छीर, उ. स. वच्छी चारु, म. वछी चारु, द. वर्छी चारु, ना. वच्छी चीर, अ. पच्छी छीर। २. मो. विचार चार, धा. अ. विचार चामि, फ. विचारु चामि, ना. विकार चारु, म. उ. स. विचार चारु। ३. धा. म. स. अ. भंवरे, फ. भउरे। ४. धा. चिंचीन चंका करे, मो. चंचीन बंका करे, अ. फ. बिबा न (नु—फ.) बंका करे, ना. न बिंका करे, म. विचिति बंका करे, उ. स. चिचीनि बंका करे।

(३) १. मो. द. अ. फ. तस्थाने, म. उ. म. तत्स्थानं, ना. स्तथाने। २. मो. कर पाद पल्लव वास धा. ना. कर पाद पूत पल्लव रसा, अ. फ. करपाद त्तव (भूव—प.) पल्लव रसा, म. उ. स. कर पाद पल्लव, वशा। ३. मो. वला (< वल्ली)। ४. धा. वसंतो।

(४) १. धा. अ. फ. किं, उ. म. तं, स. तत्र। २. धा. चतुराइ। ३. मो. आनन रसे, धा. अ. फ. जान सुरसा, ना. द. उ. स. म. आनन (आनन—प.) रसा। ४. स. मदनावरे।

टिप्पणी—(१) अंदोलिया < इंदुलेखा। अमीप < अमृत। चक्की < चक्री=शिव। (२) वच्छी < वत्सिन्= बछड़े वाली गौ। छीर < क्षीर। चिंचिणी [देशज]=इमली। बंका < वक्र। (३) वसा < वशा=हस्तिनी। हर < हृ=ग्रहण करना। (४) रसा=जिह्वा। आवर < आ+वृ=आच्छादन करना।

[२१]

[पुत्री वाक्यः] दोहरा—*सा जीवन[१] जत्तह[२] वयनु वयन[३]× गए[४] मृत[५] होइ ।* (१)
जो थिर[१] रहइ सु कहहुं किन[२] हउं पुच्छउं*[३] तुम[४] सोइ ॥* (२)

अर्थ—(१) "[मनुष्य का] जीवन वहीं तक है जहाँ तक वचन [की पूर्ति] हो; वचन के जाने पर मनुष्य मृत हो जाता है। (२) जो स्थिर रहता है, वह तुम क्यों नहीं बताती ! मैं तुमसे वही पूछ रही हूँ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
(१) १. धा. सञ्जीवा, म. उ. स. जा जीवन। २. धा. राखै, अ. फ. रखै, ना. अंतह, म. उ. स. वतह (वतह–फ.)। ३. धा. में यह शब्द नहीं है, ना. वयनु। ४. मो. गरय, म. गये अ. फ. ना. गये। ५. धा. म्रित, फ. मृति, द. मृतु।
(२) १. मो. जिउं थिर, धा. ना. म. स. जो थिर (थिर–धा.स.), द. उ. जा थिर, फ. जोवन, अ. जो थितु। २. मो. सु कहुहु किमि, धा. द. अ. फ. सु कहउ (कहहु–अ. फ.) किन, म. उ. स. सोई कहो, ना. सो कहु (=कहउ) किनि। ३. मो. हु (=हउं) पुच्छुं (=पुच्छउं), धा. द. हूं पूछू, अ. फ. हौं पुच्छौं, ना. हं पुच्छुं (=पुच्छउ), उ. स. हो पूछूं, म. हुं पुछुठौं। ४. मो. सम, धा. द. तुम्ह।
टिप्पणी—(१) जत्तह < यत्र। वयनु < वचन।

[२२]

[दूती वाक्य :] दोहरा—*थिरु[१] बाले[२] वल्लम[३] मिलन जउ*[४] जोवन दिन[५] होइ ।* (१)
गये[१] जोवन[२] कुव्वन तन सु[३] को मंडइ रति सोइ[४] ॥ (२)

अर्थ—[दूती ने कहा,] "(१) हे बाला, [इस संसार में] स्थिर केवल वल्लभ (प्रिय) से मिलन है, [किन्तु] यदि यौवन के दिन हों। (२) यौवन के चले जाने पर जब तन कुवन (विकृत) हो जाता है, वही (यौवन के दिनों क) रति कौन माँडता (करता) है ?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
(१) अ. फ. थितु। २. अ. फ. बालं। ३. धा. अ. बल्लम, फ. बल्लन (< वल्लम)। ४. मो. जु (=जउ), धा. जा, ना. जो, अ. फ. म. उ. स. जौ। ५. धा. जुब्बन तन, मो. जो अनिमद, म. ना. द. अ. फजु वन दिन, स. जुव्वनु दिन।
(२) १. धा. गउ, अ. फ. गें, ना. द. गयं, स. गयौ। २. धा. अ. फ. ना. जुव्वन, उ. स. द. जुवन। ३. धा. कुव्वन तनहु, ना. कोवन तुहिसु, उ. कवन सनाहि, स. कछु वनत नहि, द. कुलन तनहि, अ. फ. कुव्वन (कुव्वन–फ.) तनह। ४. मो. वो मंडि (=मंडइ) रति सोइ, धा० रति न मडइ कोइ, उ. स. रति मंड (मंडी–स.) घट लोइ, ना. को मंडै रति सोइ, अ फ. को मडइ (मंडै–फ.) रिति सोइ।
टिप्पणी—(१) थिरु < स्थिर। वल्लम < वल्लभ। (२) गय < गय=जाना।

[२३]

[पुत्री वाक्य :] दोहरा—*तुव सम[१] मात न तात[२] तनु गात सुरत्तरियाह[३] ।* (१)
जुव्वनु धन[२] अथिर[३] रहै श्रमु कि अंजुरियाहं ॥ (२)

अर्थ—[संयोगिता ने कहा,] (१) "तुम्हारे समान न [तुम्हारी] माता और न [तुम्हारे] पिता के गात्र सुन्दर हैं। (२) यौवन-धन तो अस्थिर रहता है; [तुम्हीं बताओ,] क्या अंजलि में पानी स्थिर रहता है?"

पाठान्तर—(१) १. ना. द. सो सुव, म. उ. म. तोसौं। २ अ. तास तन, फ. मात तनु। ३. अ सुरंसरियाइ (=सुरत्तरियाइं), फ. सुरंमरि याइं, ना. द. म. उ. स. सुरमरियाई।

(२) १. द. जुं जुव्वन, ना. जीवन जुव्वन। २. अ. फ. अच्छिन। ३. ना. अंजु, म. उ. स. अंब।

टिप्पणी—(१) रत्त < रक्त। (२) अथ्यिर < अस्थिर।

[२४]

[दूती वाक्यः] साटिका—जाने मंदिर दार चीर*[१] चिहुरा+×वाढंति+×[२] चित्तानला+×[३]। (१)

जाता+× फुल्लित+×[१] चंपकस्य+×[२] कलया[३] मनु कंदर्प दीपा प्रहा[५]। (२)

झंकारे[१] भमरे[२] उडंति[३] बहुला फुल्लानि फुल्लंटिया[४]। (३)

सोयं तोय[१] सजोगि[२] भोग समया[३] प्राप्ते[४] वसंतोत्सवे[५]॥ (४)

अर्थ—[दूती ने कहा,] "(१) जिससे मंदिर (घर) फाड़ खाने लगता है, चीर तथा चिकुर (केश) चित्त के अनल (अग्नि) को बढ़ाते हैं, (२) जिससे फुल्लित (फूली हुई) चंपक की कली कंदर्प-दीप की प्रभा-सी हो जाती है, (३) जिससे झंकार करते हुए भ्रमर बड़ी संख्या में उड़ पड़ते हैं और फूल खिल उठते हैं, (४) वही तो, हे संयोगिता, भोग का समय वसंतोत्सव प्राप्त हुआ है!"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

+ चिह्नित शब्द या शब्दांश अ. में नहीं है।

× चिह्नित शब्द या शब्दांश फ. में नहीं है।

(१) १. मो. जाने मदिर दार चीर (<चीर), धा. जेने मजर दार चाए, ना. द. म. उ. स. जाने (जाने–म.) मंदिर द्वार चार (चार–म. उ. स.), अ. फ. जेने मंजरि दातु चातु (चातु–फ.)। २. धा. वाढंति, म. बाढंत। ३. मो. चात्यानिला (<चीत्यानिला), धा. चित्तानला, म. चित्तानला, ना. द. चित्तानिला, उ. स. चित्तानलं।

(२) १. मो. जादा फूल्लित, धा. जावा फुल्लिय, द. जातो फुल्लिय, ना. जदि तीय फुल्लीय, म. जाती फूल्ल। २. ना. उ. स. पंकजस्य। ३. उ. कुलया। ४. यह शब्द मो. के अतिरिक्त किसी प्रति में नहीं है। ५. धा. दीपं प्रहा, ना. द. अ. फ. दीप प्रभा, उ. स. दीपं प्रभा, म. दीप प्रभा।

(३) १. ना. झंकारो। २. धा. भवरे, मो. भ्रमरे, अ. फ. भवरा (भवरा–फ.), म. उ. स. भ्रमरे, ना. भमरं। ३. उडंत। ४. धा. अ. फ. फुल्लानि फुल्लंट्या, मो. फूल्लानि फूल्लंटिया, द. म. उ. स. फुल्लानि फुल्लंतया, ना. फूल्लाणि फूल्लंट्या।

(४) १. म. सोयं जेय, अ. फ. सायं तोइ, ना. सायं तोय। २. मो. संयोग, म. उ. स. सजोय, फ. सजोगु। ३. धा. अ. फ. साहि सुमरे, मो. भोग छमया (समया), म. सोग समया, द. भाग समया। ४. धा. अ. फ. पत्ते, ना. प्राप्तो। ५. मो. वसंतोत्सवो, धा. वसंतोच्छव, ना. वसंतोच्छव, म. उ. स. वसंते छवि (छवी–स.)।

टिप्पणी—(१) दार =फाड़ना। चिहुर < चिकुर=केश। (२) प्रहा < प्रभा। (३) फुल्ल=खिला हुआ।

[२५]

[पुत्री वाक्यः] श्लोक—संपादेव विनोदेव[२] देव देवेन रक्षते[२]। (१)

अन्य प्राणेऽथवा प्राणे[२] प्राणेश[२] दिल्लीश्वरः[३]॥ (२)

अर्थ—[संयोगिता ने कहा,] "(१) सवाद में और विनोद में भी उसी प्रकार, देव देव (महादेव) द्वारा मैं रक्षित होऊँ। (२) वे अन्य प्राण से या इसी प्राण से [प्राप्त] हों, मेरे प्राणेश्वर दिल्लीश्वर हैं।

पाठांतर—(१) १. मो. संवादेव विनोदेन, धा. संवादे च, विनोदे च, ना. सवादेव विनादेव, द. संवादेवि वनोदेव, म. संवादे विनोदेव, अ. फ. मवादे य (ज–फ.) विनोदेय। २. धा. देवे देवन रच्छितं, ना. देव देवान रक्षितः, म. उ. स. देव देवान रच्छितः (रच्छित–म.), अ. देवदेवति रछछति, फ. देवदेव न रछछतो।

(२) १. मो. मत्र प्राणेऽथवा प्राणे, धा. अ. अन्य प्रानत्र प्रानेव, ना. अनुप्रानेन पानेवा, द. उ. स. अनुप्राने प्रयाने (प्रजाने–द.) व, मं. अनुप्रासे अयानेव, फ. अन्त प्रानेत्र प्रानेव। २. मो. ना. द. अ. फ. प्राणेवा, धा. प्रानेव, अ. उ. स. म. प्रानेस, म. प्रानेसं। ३. अ. फ. मो. दिल्लीस्वर, ना. ढिल्लीस्वर, म. दिल्लो वारि।

[२६]

दोहरा— तब दूतिन उत्तर करिय[१] पंग सुत्ति परवांन[२] । (१)
*नृप अग्गइ[१] वइइ[*२] न कछु आन न मुक्कइ मान[३] ॥ (२)*

अर्थ—(१) तब दूतियों को पंगपुत्री (संयोगिता) ने प्रामाणिक उत्तर दिया। (२) वह न राजा के आगे कुछ कहती थी, न [अपनी] आन छोड़ती थी, और न [अपना] मान।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. दूती उत्तर आनिदिय, ना. द. दुत्तिनि (दुत्तनि–ना.) उत्तर करिय तिहि, उ. स. दुत्तिअ उत्तर उत्तरिय, म. दूतिन उतर उतरी, अ. फ. दुत्तिनि (दुत्तिन–फ.) उत्तर आनि दिय। २. मो. पंगपुत्ती परवांन, म. उ. स. बुद्धि बंध परमान (परमानि–म.), द. अन्प बुद्धि समान।

(२) १. धा. आगइ, मो. आगें, ना. अग्गं, म. उ. स. आगैं, अ. अग्गर, फ. अगो। २. मो. वदि (=वदइ), द. वंदी, धा. अ. फ. वदिय, म. वदीय, स. वदिइय, ना. वदिमा। ३. धा. मुक्कइ मान न आन, ना. आनन मुकि (=मूकइ) मान, म. उ. स. उत्तर दिनौ न आनि, ना. द. आनन मुक्किय (मुकै–द.) मान, अ. फ. मान न मुकै आन।

टिप्पणी—(१) परवांन < प्रमाण। (२) वइइ < वद्। मुक्क < मुच=छोड़ना।

[२७]

दोहरा— तब क्रुकित राइ गंगह तट त[१] रचिपचि उच आवास[२] । (१)
*चाहि गहउं[*१] चहुआन तकु[२] जु मिट्टइ[*३] वाला आस[४] ॥ (२)*

अर्थ—(१) राजा (जयचंद) ने तब क्रुद्ध होकर गंगा-तट पर एक ऊँचा आवास रच-पच कर [उसमें में संयोगिता को रखा और] (२) वह देखने लगा, "चहुआन (पृथ्वीराज) को पकड़ूँ जिससे वाला (संयोगिता) की [उसके संबंध की] आशा मिट जावे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) धा. अ. फ. तव क्रुकिय (=क्रुक किय) गंगा तटहि (तटह–अ.), ना. द. म. उ. स. क्रुकिन किय (किय–ना. द.) गंगा तटह। २. धा. ऊच अवास, ना. म. उ. स. . . न अवास, ना. द. उच्च अवास।

(२) १. मो. चाहि गहुं (=गहउं), धा. अ. चाहि गहहुं, फ. चाहि गहहि, म. चाय गहो, म. चहति गहो, ना. चाहि गहौ। २. धा. तह, ना. फ. को, म. कौ, म. को, द. कौं, अ. कई, द. कुं। ३. धा. अ. फ. मिटै, म. जु मिटै (=मिटइ), ना. ज्युं (=जउं) मिटै, द. म. उ. ज्यौं मिटै (मिटइ–म.)। ४. धा. अ. फ. ना. द. उ. म. म. बाल वर (वर–धा.) आस।

[२८]

अडिल्ल— सुनि सुनि[१] वचन राय[२] जवि[३] जंपिउ[४] । (१)
थरहर[१] धर[२] ढिल्लीपुर कंपिउ[३] ॥ (२)
जिउं*[१] सूर[२] तेज तुच्छत[३] जल[४] मीनह[५] । (३)
तिउं*[१] पंगह भय[२] दुज्जन भय+ पीनह[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) [संयोगिता की] बातें सुन-सुन कर राजा (जयचंद) जब जल्पना करने लगा, (२) तब धरा थर्रा गई और ढिल्लीपुर काँप उठा। (३) [जिस प्रकार] सूर्य के तेज से घटते हुए जल में मीन [क्षीण] होते हैं, (४) उसी प्रकार पंगराज (जयचंद) के भय से दुर्जन (उसके शत्रु) क्षीण हो गए।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. सुनि फुनि, ना. सुनि जो, द. सुन न । २. म. राज, ना. अ. फ. राइ। ३. धा. अ. फ. द. जब, ना. जो, म. उ. स. इम । ४. मो. जंप्यो, धा. जंपिउ, म. उ. स. अ. फ. जंपं, ना. जंप्यौ।

(२) १. धा. मनहर, ना. थरहर, अ. थरहरि । २. धा. धरि । ३. धा. कंपिउ, मो. कप्पं, म. उ. स. अ. फ. कंपं, ना. कम्प्यौ ।

(३) १. मो. द. उ. स. ज्यौं, द. ज्यों, ना. म. ज्युं (=ज्यउं), धा. अ. फ. में यह शब्द नहीं है। २. म. उ. स. रवि। ३. ना. तुच्छि, म. उ. स. तुच्छ । ४. म. स । ५. मो. मिनह ।

(४) १. मो. तिव (< तिउं) द. त्युं, म. उ. त्यौं, ना. इम, धा. अ. फ. में यह शब्द नहीं है। २. मो. पंगह, धा. द. अ. फ. पंग भयह, ना. पग भय, म. उ. स. पंग भयं । ३. मो. दूजन भय पिनह (=पीनह), धा. अ. फ. द. दुर्जन भय (भये—अ.) पी नह (पीनहि—फ.), म. उ. स. दुज्जन भय छीनह (छीह—म.)।

टिप्पणी—(१) जंप < जल्प् । (४) पीन < क्षीण ।

३. कयमास-वध

[१]

दोहरा—तिहि तप[१] आपेटक भमइ[२] थिर न रहइ*[३] चहुवान[४] । (१)*
वर प्रधान जुग्गिनि पुरह[१] धर रष्षइ परवान[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) उस [विरह] ताप में चहुआन (पृथ्वीराज) आखेट में फिर रहा था, और [राजधानी में] स्थिर नहीं रहता था, (२) योगिनीपुर (दिल्ली) की धरा की रक्षा उसका श्रेष्ठ प्रधान (अमात्य) प्रमाण रूप से कर रहा था।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) फ. तिह तव। २. मो. भमि (=भमइ), धा. भमहि, ना. भर्में, म. उ. स. फ. भ्रमें, द. फिरें भ्र. भय। ३. धा. रहिइ (< रहइ), मो ना. द. म. उ. स. भ. फ. रहै। ४. फ. चौहुवान।

(२) १. मो. युगिनि पुरण, धा. युग्गिनि पुरह, फ. युग्गिनु पुरहि, ना. जुग्गनि पुरह, उ. योगिनिपुर, स. योगीनिपुर। २. मो. धर रष्यौ परवान, धा. धर रषण्ड परधान, ना. भुधर रषन परवान, द. धर रज्जन फुरवान, म. धर रषै बरवान, उ. गय सामंत प्रधान, स. दस सामत प्रधान, भ. फ. धर रष्षै परवान (परमानु—फ.)।

टिप्पणी—(१) भम < भ्रम्। (२) धर < धरा। परवान < प्रमाण।

[२]

साटिका—राजं जा प्रतिमा स चीन[१] धर्मा[२] रामा[३] रमे[४] सा मतीन्[५] । (१)
नितीरे कर[१] काम यांम[२] वसना संगेन सेज्या[३] गतिः[४] । (२)
अंधारेन जलेन[१] छिन्न[२] छितया[३] तारानि[४] धारा रत[५] । (३)
सा मंत्री[१] कयमास[२] काम अंधा[३] देवी विचित्रा गति[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) जो राजा की प्रतिमा (प्रतिनिधि) था, वह लघुकर्मा हो गया, और उसकी मति रामा (कामिनी) में रमण करने लगी। (२) वह जिसके हाथ में तीर नहीं है, ऐसे [धनुर्धर] कामदेव की वामा (कामिनी) के वश में होकर वह उसके साथ शय्या-गत हुआ। (३) अँधेरे में [बरसने वाले] जल से जब क्षिति छिन्न हो रही थी, और तारागण भी [वर्षा के जल की] धारा में रत (लीन) हो रहे थे, (४) वह मंत्री कयमास कामांध हो गया, दैव की भी गति विचित्र है।

पाठान्तर—(१) म. जंजा प्रतिम कन्ह, ना. राजजा प्रतिमा सुचान। २. म. धर्म धर्म, म. धरमं, द. उ. स. प्रतिमा। ३. धा. रोमा, मो. रामा, म. राम। ४. धा. अ. फ. रमा, म. रामे। ५. मो. सा मतीन, म. समता, शेष में सामतां।

(२) धा. नित्तीरे तर, ना. द. नीर्ता रंकर, उ. स. नित्ती रंकरि स. ना तीरे कर, अ. नित्तारे (नीतीरे—फ.) कर (करि—फ.)। २. धा. ताम, अ. फ. ताम। ३. मो. सगेन, शेया (=सेज्या),

धा. सजेन सिउया, ना. उ. स. द. सज्जीन सग्या, म. सगन सिउया । ४. धा. गतो, म. गता ।

(३) १. म. धरधरेन जलेन, उ. अधारन जलिन, स. आधारेन जलिन । २. म. ना. स. छीन, फ. क्षत्र । ३ मो. के अतिरिक्त सभी में तड़िता (जड़िता—म., तडिता—फ.) । ४. धा. धाराणि, ना. म. उ. स. तारान । ४. मो. दामन्य । ५. मो. दामायते, धा. ना. धारा रती, अ. धारा रती, फ. साधारती ।

(४) १. द. म. उ. स. सो मंत्री । २. अ. फ. कैमास । ३. धा. कामलुबधा, ना. द. उ. नास विषया, म नास विषया, स. मास विषया, अ. फ. बुधि हरनो । ४. धा. अ. फ. देवो विचित्रा गतो (मो.-अ.) मो. देवी बिरदा गति, ना. देवै विचित्रा गतो, उ. स. देवी विचित्रा गतो, म. देवो त्रिहगा गता ।

टिप्पणी—(१) चीन=छोटा, लघु । (२) नितीरे कर=जिसके करों में तीर न हो । (४) विरदा < विचित्रा ।

[३]

दोहरा—करनाटी[१] दासी[२] सुबन*[३] रजनी अथ्थि अवास[३] । (१)
काम मुच्छ[१] कयमास तनु[२] दिट्ठि विलग्गी तास[३] ॥+ (२)

अर्थ—(१) करनाट की एक सुवर्ण (सुरूपा) दासी थी जो रात्रि में [राजकीय] आस्थान-आवास में थी । (२) काम-मूर्छित कयमास की ओर उसकी दृष्टि लग गई ।

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।
+ चिह्नित चरण मो. में नहीं है ।

(१) १. धा. करणाटिय, म. करनाटीय । २. धा. म. दासिय (दासीय—म.) । ३. मो. कुवन < कुंवन), धा. अ. फ. म. सुवन, ना. सगुन, उ. स. सुवर । ३. धा. रयन हि अथिथ अवास, अ. फ. राजन अधि आवास, फ. राजन अथि अवास, ना. द. उ. म. चित चचल नेय वास, म. रजनी अथ अवास ।

(२) १. मो. मुच्छ, शेष में 'रत्त' । २ म सदा । ३. अ. फ. दिठिय तुठि अवास, द. उ. स. दिट्ठ (दिठ—स.), उरझिहय तास, म. दिठीय चिठ यवास, ना. दृष्टि उलझीय तास ।

टिप्पणी—(१) अथ्थि अवास < आस्थान (?) आवास=सभा गृह या गोष्ठी गृह । (२) मुच्छ < मूर्च्छ । दिट्ठि < दृष्टि ।

[४]

कवित्त— पलउ* मुहिलि[१] कयमास* रयणि[२] नट्ठी[३] जाम इक्कत[४] । (१)
तंबोलय[१] सपि साषि[२] पट्ट रंगिनीय[३] निधि सकित[४] । (२)
दीपक जरइ* संकुरि[१] गमिय[२] रत्तिय पति अंतह[३] (३)
अति स रोस[१] भरि मूज[२] लिहि* दीय दासी करि[३] कंतह[४] । (४)
पट्टाणि अस्व तंपिन परीय[१] अनचि दीइय[२] दुहु घरिय[३] कहं× । (५)
पल गयण[१] प्रयमु वनि[२] म परिय[३] नयन[४] नयनप्रथिराज जहं[५] ॥(६)

अर्थ—(१) एक पहर रात्रि के नष्ट (व्यतीत) होते-होते कयमास उस महल को चला । (२) ताम्बूल-वाहिका सखी ने [दोनों के] उस निधि (स्नेह) से शंकित होकर पट्टरानी से साक्षी [दी], (३) कि दीपक संकुचित (पतला किया जाकर) जल रहा है, और वह रात्रि पति (चन्द्र) तुल्य कयमास अन्तःपुर में फिर रहा है । (४) [यह सुनते ही] अत्यन्त रोष में भर कर

(हृष्ट होकर) भूर्ज पत्र लिख कर उसने दासी के हाथों से अपने कान्त (पृथ्वीराज) के लिए दिया। (५) तत्क्षण अदत्त प्रदान (वश) कर उसे [रानी ने] पूरी दो घड़ियों की अवधि [पृथ्वीराज को लाने के लिए] दी। (६) पल भर में वह गजों से प्रकीर्ण वन में संचरण करने लगी और नेत्रों के संकेत मात्र [के समय] में [वह वहाँ जा पहुँची] जहाँ पृथ्वीराज थे।

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित चरण धा. में नहीं है।

(१) १. मा. चुन मुहिलि, धा. अ. फ. चढ्यो महल, ना. चढ्यो महल, म. गयौ महल, द. उ. स. गयौ मध्य (मधि—द.)। २. मो. किमास (=कयमास) रयणि, धा. कइवासु रयन, अ. फ. कैवासु रैनि, म. कैमास रैन, उ. स. कयमास रयनि। ३. धा. नट्ठियत्ति, ना. संपत्ति, द. उ. स. सप्प, अ. फ. नठियत्ति, म. नठीयत। ४. धा. म. ना. अ. फ. जाम (याम—धा.) इक।

(२) १. धा. तबाली, अ. फ. तंबोल, म. तबोले, ना. तब बुल्ली, द. उ. स. तबुलिय। २. धा. अ. फ. साथ, ना. सीथ, म. सथि, अ. फ. उ. स. साथ। ३. मो. पट्टरगिनी, अ, धा. पाटरागिनि, अ. फ. पट्टरागिनि, म. पट्टरागनी, ना. द. उ. स. पट्टरागिनिय। ४. धा. अनग सिख, अ. फ. उलंघि सिक, ना. उ. स. निकट सिक, म. कसिक सिक।

(३) १. धा. अ. फ. दिय दोपक सपूरि (संपूनि—धा.), मो. दापक जरि (=जरइ) सकूलि, ना. द. उ. स. याय (याम—ना. द.) घात दिय पूर, म. याम घ्यातु कीय पूर। २. धा. नयर, म. मंमीय, अ. फ. . स. ना. भ्रमिय। ३. मो. रतिअ पति अंतह, धा. ति पति अरु कह, अ. फ. मय रत्ति पत्ति सह, म. याइक जग अंतह, ना. पिय किय पति अतह, द. उ. स. पिय किय अति अंतह।

(४) १. मो. असि सरेस, म. अत सरोष। २. धा. अ. फ. लिषि भोज, ना. द. उ. स. पिक पानि (पान—ना.), म. रोसह। ३. मो. लइ दीय दासी करि, धा. दाइ (=दी) दासी कर, अ. फ. दियो दासी कर, ना. द. उ. स. सुनप (सुन—ना., नप्प—उ.) लिषि (लषिवि—ना.) सषि (सखि—ना.) कर, म. पत्रि पिकनथ लिषि। ४. मो. कन्तइ।

(५) १. अ. फ. पल अन्त इंकि तषिन खबरि, म. दासी अषि पलनि गमन किय, ना. द. उ. स. असि (पसि—द.) असनवारि (असि निवारि—ना.) मग्गह परिय। २. अ. फ. ना. द. उ. स. अवधि दीन (दिन—ना.) म. विधि दिन्हो। ३. मो. दुइ घरीअ, अ. फ. दुइ घरिय, म. घरी दोइ, उ. स. दो घरिय, ना. दुय घरीय।

(६) १. धा. वगनि, अ. फ. गयनि। २. धा. अ. फ. वेयन वन, स. सुराइइ, द. सराइइं, ना. राइइ, म. वयन तेहा। ३. मो. संचरीय, धा. में 'सं' मात्र है। ४. ना. सुष्प, द. उ. स. अयन। ५. धा. जहि, मो. जाहां, म. जहां।

टिप्पणी—(१) रयणि < रजनी। नट्ठ < नष्ट। जाम < याम। (२) पट्टरागिनीअ < पट्टराज्ञी। निधि < स्नेग्ध। (३) सपूरि < सकुचित=सिकुड़ा या सिकोड़ा हुआ, कम किया हुआ। मम < मन्। रत्तिअ < रात्रि। (४) भुज < भूर्ज। लिइ < लिख्। कत < कान्त। (५) तषिन < तत्क्षण। (६) गय < गज। प्रयग < प्रकीर्ण। सयन < संकेत।

[५]

*गाथा—भू भर्त[१] सचित सुनिद्रा[*२] संग[+×] सा[३+×] रयणि[×] जग्गइ[×*] अविध्धा[४×]। (१)*

दीपकु[×] जरइ[×] सुमुद्धा[१×] नूपुर[२] सद्दानि[३] भानि अच्छानि[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) भूभर्तृ (भूमि का भरण करने वाले—भूपति) सुचित्त होकर सुनिद्रा में है, और [उन के] साथ वह रजनी भी अवेध रूप से जाग रही थी। (२) दीपक जल रहा था, [उसी समय] उस मुग्धा [दासी] ने नूपुर के अच्छ (स्वच्छ) शब्दों से [उस निद्रा को] भंग किया।

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. भ्रमित, अ. फ. ना. भूभृत। २. मो. मचित, सुनिद्रा, धा. चींकत नुनद्रा, अंसुचित सुनं ना. चित्त सुनिद्रा, म. सुचित नंदा, द. सुनित सुनिद्रा, उ. स. सुचित निद्रा। ३. अ. संगे सा, ना. सं सा, द. संगों स, उ. स. सिंगीसार, म. संगेगा। ४. मो. जगि (=जगइ) अविध्या, धा. जानि नित वढा, मनियं विद्रा, स. जगियं बिद्ध, म. जगीयं विण्या, ना. जगियं वढा, अ. फ. जगि जियं वढा।

(२) १. धा. जरइ समुंदा, ना. द. अ. जरइ सुमंदा, ना. म. जौर सुमंदा, उ. जरंत सुइं, स. अरंत मंद २. मो. नपर। ३. अ. सद, फ. सहाय। ४. धा. अच्छामि म. आच्छमि, द. आयानि, अ. फ. यंजते।

टिप्पणी—(१) भूभृत < भूमर्तृ=भूपति। निद्रा < निद्रा। रयणि < रजनी। (२) मुद्धा < मुग्धा। ३ < शब्द। मान < मज्ज।

[६]

साटिका— भूकंपं[१] जयचंद राय× कटके[२] शंकापि न ग्यायते[३] । (१)
सं+ साहिस्स सहावसाहि[१] +सकलं[२] इच्छामि[३] युद्धाइने[४] । (२)
सिद्ध[१] चालुक चाइ मंत्र[२] गहने[३] दूरे स विस्वासरे[४] । (३)
अग्यान[१] चहुआन जांन रहिय[२] दैवोऽपि रष्या करे[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) जयचंद राज के कटक से भूकंप होता था, किन्तु [पृथ्वीराज को] उससे शंका नहीं ज्ञात होती थी; (२) शाह शहाबुद्दीन से उसने समस्त युद्ध साहस के साथ और इच्छा पूर्व किए थे; (३) सिद्ध (जैन) चालुक्य [भीम] को जब मंत्री (कयमास) ने चाव (उत्साह) पकड़ा था, वह विश्वासर में दूर था [उस युद्ध में इसने भाग भी नहीं लिया था]। (४) ऐ भी चहुआन (पृथ्वीराज) को अज्ञ [कयमास] जान न पाया, [अतः] दैव ही उसकी रक्षा करे

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द द. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) धा. भू कपह, मो. म. द. भूपं (भूप–म.) उ. स. भूपानं, ना. भू कंपं, अ. फ. भूकंपं (भूकंपे–फ.) २. मो. धा. ना. म. उ. स. द. निकटं (निकटा–म.)। ३. मो. निद्रा (=नेद्रा) पि जगाँगनो, धा. नेद्दी पित ग्यायते, ना. द. उ. स. नेदाय (नेदाइ–ना. द.) अग्गाइने (अग्गायने–ना.), नाद्दा पांव्यंजागने, फ. शंकापि न गायते।

(२) १. मो. ससाहिव साहि सुकलं, धा. साहिव साहि प्रवरा, अ. फ. साहक साहि सहाव दीन सकल, तं साहि साहि सकल, द. संसाहिस्स वसाह सकलं, ना. संसाहस्स वसाहि वद्ध सकले, उ. स. संसाहिस्स वसा साह सकलं। २. मो. अछापि, धा. युप्वापि, म. अछिमि। ३. मो. यूधायनं, धा. न ग्यायते, म. जुद्धाइ ना. जुद्धाइमे।

(३) १. मो. सिधि, धा. सिधं, ना. सिद्धो, द. सिद्धो, उ. स. सिद्धं। २. धा. चित्त, म. मंति। ३. गाहनो, धा. दहनो, ना. म. उ. स. द. गहनो। ४. मो. ना. दूरे सं विस्वासरे, धा. दूरेऽपि जानाम्यहं, अ. दूरे सुजाना इते, म. परेस विस्वस रो, द. उ. स. दूरे स विस्वारसे।

(४) १. मो. अग्यानों, अ. फ. अग्यानं। २. धा. जान रहितं, मो. जांमि रहायं अ. जानिरहियं, ना. जांनि रहीयं। ३. धा. दैवोऽपि रक्षा कर्ता, मो. अ. फ. दैयोपि रष्या करो (रष्छाक रं–अ., रक्षा, कर–फ.), द. उ. स. देवं (दैवं–उ.) तु (च–ना.) रष्या (रिष्या–द., रच्छा–ना.) करे, म. देवो तूव रिष्या करो।

टिप्पणी—(४) जांन रहिय < ज्ञान रहित।

[७]

रासा— छत्तिय[१] हत्थु धरंत[२] नयननु चाहियउ[३] । (१)
तब हि दासि करि* हथ्थ[१] सु बंचि[२] सुनावियउ[३] । (२)
बानावरि दुहु बाह[१] रोस रिस[२] दाहियउ[३] । (३)
मनहु[१] नागपति पतिनि*[२] अप्प[३] जगावियउ[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) [जगाने के लिए दासी के] छाती पर हाथ रखते ही [पृथ्वीराज ने] आँखों से [उसे] देखा । (२) दासी ने तभी (तत्काल) [पत्र को] हाथ में [ले] कर उसे बाँच सुनाया । (३) [पत्र को सुनते ही] उसके दोनों बाहुओं में बाणावली [शोभित होने लगी] और वह रोष-रिस से दग्ध हो गया । (४) [दासी का पृथ्वीराज को उस समय जगाना ऐसा लगा] मानो नागपति को [उसकी] पत्नी ने आप ही जगाया हो ।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १ धा. छत्तिका, म छत्री । २. द धरन्त, ना धरति । ३. मो. नयननु चाहिय, धा नयननि चाहियउ, अ. फ नयननि चाहयउ (चाहयौ–फ.), ना नयन निचाहयो, द. उ. स नयनन चाहयौ (चाहयो –द.), म. नयननु चाहयो ।

(२) १. मो० तबही दास कर हथ, धा. उ. स. दासिय दच्छिन हत्थ, ना द. अ. फ. दासिय दछिछन हथ्थ (हथिय–ना., हथ्थन–अ. फ.), म दासी दिच्छन हसति । २. मो. सुबच, धा. सु बचि, फ. बच, अ. बचि, ना. ति बचि । ३. मो. सुनाययूउ, अ सुनाइयउ, फ. सुनावयौ, म. सुनाइयो, धा. दिषावियउ , स दिखाययौ, द. ना. उ. दिखावयौ (दिषावयो–ना)।

(३) १. मो. बानावलि बिदहु (पाठान्तर भी सम्मिलित है) बान, धा. बानावरि बिहुबान, ना.बा नावरि बिय बान, म. बानावरी षहुबान, द. बानावल बीय बान, उ. स. जिनवाला बलवान, अ. फ. बानावरि दुहु (बानावर दिहु–फ.) बाह । २. धा. रसि, उ. स. रस, फ. बिस । ४ मो दाहयु (=दाहयउ), धा. ना म. दाहयो, उ. स. फ. दाइयौ, अ. दाहयउ ।

(४) १. ना. अ. फ. मनौ, उ. स. मानहु, म. परिहा मानुहु । २. मो. नागपति पतिन, धा. नागपति सुत्त, अ. फ. नागपति नारि, स. नागपतित्त, ना. उ. नागपति पति स (त–ना), म. नागपति पति । ३. धा. अन्तु, अ. फ. सुअप्प, ना. अप्पु, म. सुआप । ४. ना द फ उ स. जगावयौ, मो जगाइयु (=जगाइयउ), म. जगावयो ।

टिप्पणी—(१) चाहना=देखना । (२) बच < वाच < वाच् ।

[८]

रासा— संग सयन न सथ्थि[१] नृपत्ति न जानयउ[२] । (१)
दुहूं[१] बिचि इक दासिय[२] संग समानयउ[३] ।[×] (२)
इदु फणींदु[१] नरयद न[२] अथ्थि[३] स भानयउ[××] । (३)
घरह घरिय[१] दुहु[२] मझ्झि[३] ततष्यिन[४] आनयउ ॥(४)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज के जाने की बात] न संग की सेना ने जाना और न उसके सथियों ने । (२) दोनों के (पट्टरानी और अपने) बीच में एक दासी को संग में रखकर [पृथ्वीराज ने] उसको सम्मानित किया । (३) उसने इंद्र, फणीन्द्र और नरेन्द्रों की अथ्थियाँ (गोष्ठियों) [के गर्व] को भी भग (समाप्त) कर दिया । (४) [पृथ्वीराज को] वह घर दो घड़ियों में तत्क्षण ले आई ।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पा० के हैं।
×चिह्नित चरण म. नहीं है।
(१) १. म. अरे संग न न सथ्थि, अ. फ. सग सयन्नन सत्थ, धा. सग सयसयन्न निसत्थ, द. स सयननि सथ्थ, ना. सयन्नन सत्थ। २. धा. आनयो (तुल० चरण ४), म. फ. जानयौ, अ. जानयउ, ना. जानयौ
(२) १. अ. दहु, फ. दहौ। २. धा. विच्चइ इक दासिज, अ. फ. विच हुं इक दासिइ, विच इय इक दासिय, ना. वीचइ इक दासिय। ३. ना. समानया, अ. समानयउ, फ. समानयौ।
(३) १. धा. दुंदफनिंद, ना. इंद्रफुनिंद, द. इद मुनिंद, उ. स. इद नरिंद। २. मो. धा अ. फ. नच (=नरयंद) न, ना. गुनिदह, उ. स. फुनिंदर। ३. ना. अच्छि। ४. धा. सुभानयो, अ. सुभानयउ, प सुभानयो, ना. उ. स. समानयौ (समानयो—ना.)।
(४) अ. फ. घरी इक, धा. घरहि घरी, ना. घरह घरी, म. घरा घरी। २. धा. द. दुइ, फ. दुवौं, ना दुव उ. स. दुअ, म. दोइ। ३. म. मझ, ना. मद्धि। ४. धा. अ. फ. ना. ततच्छिन। ५. म. आनयौ, धा. ना. आनयो
टिप्पणी—(१) सयन < सेना। (३) अथ्थि < आस्थान (?) < अथाई। मान < मज्ज। (४) ततच्छिन तत्क्षण।

[९]

दोहरा—नवति नवप्पल* निसि गलित१ धनु२ घुम्मइ*३ चिहु४ पासि५। (१)
पानि न१ अंषि न२ संचरइ*३ महल४ कहल५ कयमास*६॥ (२)

अर्थ—(१) [कयमास के महल में आने के अनंतर] नवनवति (निन्यानवे) पल निश [और ?] गल (बीत) पाई थी, जब [पृथ्वीराज का] धनुष [कयमास को लक्ष्य बनाने लिए] उसके पास चारों ओर घूमने लगा। (२) उस समय [अंधकार के कारण] आँखें और हा नहीं संचरण कर पा रहे थे, जब कयमास महल में केलि में था।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
(१) मो. नववति नव पल नसि गलीत, धा. नवति नवं पल निसि गलित, अ. फ. नव नव पल निसि गलित, ना. द. नवत्ति नवपल (नचपल—ना.) निसि गलित, म. नव नवति निस मि मिलति, उ. स. रति पति मुच्छि आलुश्चि तन (तुल० अगला दोहरा)। २. धा. म. धन ३ मो. घुमि (=घुम्मइ न. घूमे, द. घुम्म, धा. अ. फ. म. उ. स. घूम्यो (घुम्यौ—म. अ. फ.)। ४. मो. चहूपास, धा. ना. चि पासि, अ. चहुं पास, फ. चौह पास, द. उ. स चिहु पास, म. चुहु पास।
(२) १. म. जानत. फ. पान नि। २. उ. स. अंब न। ३. मो. संचरि (=संचरइ), अ. फ. म. उ. संचरं, ना. संचरहि। ४. मो. के अतिरिक्त सभी में 'महल'। ५. मो. फ. कलह, अ. केल। ६. मो. 'कम (=कयमास), धा. कइमासि, अ. फ. ना. कैमास, म. कैवास।
टिप्पणी—(२) कहल < केलि।

[१०]

दोहरा—रतिपति मुच्छि अलुध्धि तने१, धन डुलइ२ धिय*२ काज३। (१)
तडित१ किअउ*२ अगुलि अधम३ सु भरिग४ बान प्रथीराज५॥ (२)

अर्थ—(१) जिनके तनु रतिपति (काम) से मूर्च्छित और अलक्ष्य हो रहे थे, ऐसे दोनों लिए [पृथ्वीराज का] धनुष डोल रहा था। (२) अधम अंगुली ने तडित [के समान कार्य] कि और पृथ्वीराज का बाण भर गया (धनुष पर जा लगा)।

पाठा॰ —(१) १. मो. रतिपति मुछी अरूप्पो तन, धा. ना. द. अ. फ. रतिपति मुच्छिव लच्छि अलछिछ—अ. ना.) तनु, म रतिपति तुछन अकुछ तन, उ. स. निसि अद्धी छुइी नद्दा । न. मो धम द्रुनि —द्रुनद) वय, धा. तरनी रवन वय, अ फ. तरुनि पान वय, ना. द विरस (विरसि—ना.) काम विय, म घन तर पानव, उ. स. वर कैमासय । २. अ. फ काजि ।

(२) १. इस चरण के पूर्व मो. में अतिरिक्त है, 'पुनह नयन कीय' जो कदाचित् इस छंद के किसी अंश का पाठान्तर मात्र है । २. धा. अ. फ. ना. द. उ. स. करिग, म. कीयो । ३. धा. धरह, ना. द. म. उ. स. धरम, अ. करह, फ. करहि । ४. धा. फरिग, ना. परिग, अ. फ. म. उ. स. भरिग । ५. धा. म. अ. ना. प्रिथिराज ।

टिप्पणी—(१) मुच्छि < मूर्च्छ । अलुच्छि < अलक्ष्य । विय < द्वय ।

[११]

कवित्त—भरिग[१] बान चहुआन जानि[२] दुरि[३] देव नाग+ नर । (१)
मुट्ठि दिट्ठि[१] रिसि[२] डुलिग[३] चुक्कि[४] निक्करिग[५] एक[६] सर । (२)
उभय बान दिद्ध[१] हत्थि[२] पुट्ठि परमारि[४] पचारिय[५] । (३)
बानावरि* तटकति[१] घुटित धर धरनि[२] आधारिय[३] । (४)
किय कब्बु सब्बु सरसइ[१] गनित फुणिव[२] कहउ[४]* कवि चद तत[५] । (५)
इम[१] परउ*[२] अयास अवास तइ*[३] जिम निसि नसित° नपत्रपति[४] ॥ (६)

अर्थ—(१) चहुआन (पृथ्वीराज) का बाण भर (चढ) गया, यह जानकर देव, नाग तथा नर छिप गए। (२) [किन्तु] क्रोध के कारण [पृथ्वीराज की] मुट्ठी तथा दृष्टि डोल गई, और एक बाण चूक कर निकल गया। (३) [तदनन्तर] परमारी (पट्टराज्ञी ?) ने उसके हाथों में दो बाण और दिए और पीठ पर (पीछे से) उसे प्रचारा (ललकार कर उत्तेजित किया)। (४) बाणावली के तड़कते ही [कयमास का] आहत धड़ आकर धरणी पर आधारित हुआ। (५) [यह] सारा काव्य सरस्वती ने विचार कर के किया, और तदनन्तर उसने कवि चन्द से इसे कहा। (६) कयमास आकाश [—चुम्बी] आवास (प्रासाद) से इस प्रकार गिरा जैसे निशा में नक्षत्रपति (चन्द्रमा) विनष्ट होकर गिरा हो।

पाठान्तर— ० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है ।
+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है ।

(१) १. ना. भरिक । २. म. जान । ३. धा. उ. स. दुर, मो. दूर, म. दु, अ. फ. दुरि ।

(२) १. ना. घुट्टि (< छुट्टि ?) मुट्ठि (< मुट्ठि), फ. मुठ्ठ दिठ्ठ । २. धा. उ. स. रस, अ. फ. रिस, ना. सर, फ. सिक, म. सिरि । ३. म. हलिग । ४. मो. चकि । ५. ना. नन करिग । ६. धा. ना. म. इक ।

(३) १. धा. उभय आनि दिय, मो. मय बान दिव, उ. दुतिय बाभ, स. दुत्ति बान, ना. दीयौ बान, द. उभय आन दीयौ, अ. फ. उभय आनि दिय । २. मो. म. उ. स. अ. हथ्थ । ३. मो. पुठि, म. मुठि । ४. धा. पावारि, मो. परमार, उ. स. पामार, द. म. पमारि, धा. अ. फ. पावारि, ना. पामारि । ५. उ. स. अ. पचारयौ, धा. ना. म. फ. पचारयौ ।

(४) १. मो. बानीवर तटकंति, धा. वानीवर तरकंत, ना. स. बानि वृत्त (वृत्ति—ना.) तुडितति, द. उ. बान वृत्ति तुटिकंत, अ. फ. वानि वरत्तरकंत, म. बानावर तरकंति । २. मो. घुटित धर, धा. छुट्टि धार धर, अ. फ. छुट्टि धर धर, म. छुटि धर धरनि, ना. द. उ. स. घुनत (घुनति—ना.) धर (सिर—ना., सुर—द.) धरनि । ३. धा. उपारय, ना. द. म. उ. स. अधारयौ, अ. फ. आधारयो ।

(५) मो. कीय कव सव सरमि (=सरसइ), धा. अ. फ. इय कब्बु सब्बु (सब्बु—फ.) सरसइ (सरमे— फ., सरसै अ.), म. हुद इक चित नसमर, ना. कैय कव सरसै । २. मो. गनीत (=गनित), धा गुनित, अ. फ.

गुनित, ना. गुनति, म. गुणित, स. गुनति । ३. धा. फुणित, ग. उ. म. अ. पुनित, फ. पुन्यत, ना. पुनित, म. पुनि ताहां । ४. मा. वदु (= वदउ), शेष में 'कह्यौ' । ५. धा. तव, द. ततु, अ ना. तति, म. ददु ।

(६) १. स. यों । २. मो. पुर (< पउ=परउ), धा. द. अ फ. पर्यो, उ. स. म. ना. पर्यौ । ३. मो. आयास ुवास ति (=तइ), धा. अवास अयास तें, अ. आयास अवास (आवास—फ.) ते, फ. अइ आवास ते, म. कैवास आवास ते, ना. कैमास आवास तें, द. उ. स. कैमास अवास तें । ४. मा. जोम निसि मिसिउ नषत्रपति, धा. जिमनिसि...नछत्रपति, म. जिम सुनिस नछित्रपतु, अ. जिम निसि नसित नक्षत्रपति, फ. जिम निसि निसित नछत्रपति, ना. जानु निसानद छत्रपति, उ. जानि जिसा नछितपति, द. स. जानि निसा न नछित्रपति ।

टिप्पणी—(२) चुक=चूका हुआ, भ्रष्ट । (३) पुठि < पृष्ठ । (४) घुट < घट्ट=आहत होना, भ्रष्ट होना। (५) कब्ब < काव्य । सरसइ < सरस्वती । गन < गणय । फुणि < पुनर । (६) अयास < आकाश । अवास < आवास । नसित < नष्ट ।

[१२]

गाथा—सुंदरि गहि[१] सारंगो दुज्जन[२] दमनोइ[३] पिष्षि[४] साइकं[५] । (१)
किं किं[१] विलास गहियं[२] किं किं[३] दुष्पाय दुष्पाय[४] ॥ (२)

अर्थ—[पृथ्वीराज ने परमारो (पट्टराज्ञी ?) से कहा,] "हे सुन्दरी, तू इस धनुष को थाम, और दुष्ट [कयमास] का दमन करने वाले बाणों को देख । (२) उसने क्या-क्या विलास किए, [किन्तु] किन-किन दुःखों के लिए ! "

पाठान्तर—(१) १. मो. गिह । २. मो. दुजन, धा. अ. फ. म. ना. उ. स. दुज्जन (दुज्जण—धा. म.)। ३. मो. दमनेदि, धा. दमनोइ, अ. फ. दमनोपि, म. दमणोपि, स. समनोपि, ना. उ. दमनेपि । ४. धा पषि । ५. मो. शायिकं (=साइकं), म. सायकं ।

(२) १. मो. कांकि, शेष में 'किंकि' । २. अ. फ. ना. करियं । ३. मो. क्युं क्यं, ना. द. किंकि न, उ. स किंकिनो । ४. म दुवार दुवीयं दुयं ।

टिप्पणी—(१) सारंग < शार्ङ्ग = सींगों का बना धनुष । पिख < प्र+ईक्ष् ।

[१३]

दोहरा—खनि[१] गड्डउ[२] नृप[३] अर्ध निसि[४] सम दासी सुरया ति+×[५] । (१)*
देव धरह जल घन अनिल+×[१] कहिग चंद कवि प्राति+×[२] ॥ (२)*

अर्थ—(१) नृप (पृथ्वीराज) ने उस सुरूपा दासी के साथ [कयमास को] अर्ध रात्रि के समय खन कर गाड (गड्वा) दिया । (२) देवताओं, धरा, जल, घन और वायु से भी चंद कवि ने ही प्रातःकाल कहा ।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
+ द. में चिह्नित चरणार्द्ध नहीं है ।
× ना. में चिह्नित चरणार्द्ध नहीं है ।

(१) १. मो. विनि । २. मो. गडु (=गड्डउ), शेष में 'गड्यो' (गड्यौ—म. ना.)। ३. मो. नृपि। ४. मो अर्ध निशा (< निसी) धा. अग धनइ, अ. फ अनु धरह, म. धर धुनिस, उ. स. मन धनइ । ५. मो. समदास सुरिधाते, धा. फ. समदासी सुरजात (जाति—फ.), उ. स. सो दासी सुरपात (सुरयात—उ.), म. समदासी सुरपंति

(२) १ मो दवि धरह नलधन अनिल धा नेव धरनि नल धल अनिल उ स न्वधारन जलद्धि तें, म देव धरह जलहर अनिल अ फ न्वरनि चल घन अनिल। २ धा कहिग व न्पति मात उ स सोरा कहिग सुमात, म कहिय चन्द मत नत्ति, अ फ कहिग चन्द कवि मात।

टिप्पणी—(१) सुरथा ~ सुरूथा ~ सुलथा।

[१४]

दोहरा—सयपु[१] राय वलि वनि गयु+[×] सुदरि सउपि[*] सदाय[२]। (१)
*सुपनतरि[१] कवि चद सउ[*२] सरसइ[३] वहि सु आय[४] ॥ (२)*

अर्थ—(१) स्वय राजा (पृथ्वीराज) उस दाय (सपत्ति या भेद) को सुदरी (परमारी) को सौंप कर वन लौट गया। (२) स्वप्न मे कवि चद से [यह सारी घटना] सरस्वती ने आकर बताई।

पाठांतर—+चिह्नित चरणार्द्ध द में नहीं है।
×चिह्नित चरणार्द्ध ना में नहीं है।

(१) मो आवि राय चाल वनि गयु धा अपपु राउ वलि वनह गव, अ फ अपपु राउ चलि बनह (वनहि—फ) गौ, म० आवि राउ चलि वनह गौ, उ स गयौ अप्प वन अद्धनिसि। २ मो सुदरि सु पि (=सउपि) स दाय, धा अ फ सुन्दरि स पि (सौंपि—अ फ) सुहाइ, म ना उ स सुदरि सौंपि (सौंपि म ना)। सहाय (सहार—ना)।

(२) १ म सुपनतरि, ना अ सुपनतर (२ मो धा म स (=सउ), अ फ सौं, उ स सौं, ना सु (=सउ)। ३ धा सरसइ, मो सरसि (=सरसइ), ना उ स अ फ सरसै, म परसे। ४ मो वहिसु आय, शेष में 'वहा आइ' (वहिय आय—उ स, वदीय आय—म)।

टिप्पणी—(१) वल ~ वल्=लौटना, वापिस जाना।

[१५]

दोहरा—सु[१] जोतिष तप गति उपाय बिनु[२] नहि दष्यउ[*] सुनि अष्पि[३]। (१)*
तउ मानउ स्वामिनि सयल[१] जउ[*] सु होइ परतष्पि[२] ॥ (२)

अर्थ—[चन्द ने स्वप्न काल सरस्वती से कहा,] "ज्योतिष, तपोबल, तथा उपाय के बिना मैंने कहा हुआ [सब कुछ] सुन कर भी [आँखों से] नहीं देखा, (२) मैं यह सब तब मान सकता हूँ यदि [तू] प्रत्यक्ष हो।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द सशोधित पाठ के हैं।

(१) १ मो के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २ धा जोतिग तियगति उपय विनु ना अ फ जोतिक (जोतिग—फ ना) तपगति उपय (उपय—अ) विनु, द जोतिक तप उपाय बन, म सब तौ मानू सामनी, उ स जो तिक पगति उप्पजयै। ३ मो नहि दस्यु (=देष्यउ) सुनि अखि (=अष्पि) धा नहि दिखिजय म अखिव, अ फ सुनय न दिष्यि अषि (दिष्यौ अष्प—फ) ना नहि दिष्यौ सुनि अषि द नहि देषौं सुख अधि, म सकल सुम पति दधि, उ स वचन दिगि कविचद।

(२) १ मो तु (=तउ) मानु (=मानउ) स्वामिनि सयल, धा द अ फ तउ (तौ—अ फ) मानउ (मानौं—अ फ) स्वामिनि (स्वामिन—फ) सकल, ना तौ मानौं स्वामिनि सत्र, म चन्द कहै बड़ौ वयन, उ स साम प्रगट कर कय नह (करयनइ—उ)। २ मो जु (=जउ) सु (=सु) होइ परतषि (=परतष्पि) धा

जइ तुंसी होइ परतखिख, ना. जो होवै परतिष, अ. फ. जौ सु होइ परतिष्षि (परतष्ष-फ.), म. जे स होइ परतषि, उ. स. वर प्रसाद (प्रसाद-उ.) मुष इद ।

टिप्पणी—(१) अष्प <आ+ख्या=कहना । (२) परतष्पि <प्रत्यक्ष ।

[१६]

अडिल्ल— मइ परतष्पि[1] कव्वि[2] मनि आइ[3] । (१)
उगति उकंठ कंठ[1] समुहाई[2] ॥ (२)
वाहन हंस अंस[1] सुषदाई[2] । (३)
तव तिहि[1] रूप चंद कवि धाई[2] ॥ (४)

अर्थ—(१) [सरस्वती] प्रत्यक्ष हुई और चन्द कवि के मन में आई । (२) [परिणामस्वरूप] उक्तियों की उत्कण्ठा कवि के कण्ठ में समुहाने (आगे आने) लगी । (३) [सरस्वती का] वाहन सुखदायक हंस का अंस (कधा) था । (४) तब उस (सरस्वती) के रूप का चन्द ने [इस प्रकार] ध्यान किया ।

पाठान्तर—(१) १ मो. पइ परषि, अ. फ. भई परतष्य (परतिष्य—फ.), ना. म. भईय परतषि (परतष्पि—ना.) । २ मो. कविचन्द, धा. कवी, ना. द. उ. स. सुकव्वि, अ. फ. म. कवि । ३. अ. फ. मन आई, ना. द. उ. स. मनाई, म. मनह आइ ।

(२) १. धा. अ. फ. उकति कंठ कंठह, म. उकति कंठ कंठ, उ. स. उगति जुगति कहि कहि । ना. द. उकसि उकंठ (उकं०) कंढ (कंठ) । २. मो. धा. स. समुझाई (समझाइय—धा.), म. समझाइ ।

(३) १. धा. हंस, म. अस । २. म. सुखदाइ ।

(४) १. मो. तिठ तिहि, म. तब कवि । २. मा. चकवि धाई, धा. चन्द कवि धाइय, ना. द. उ. स. ध्यान कवि (धरि—ना०) धाई (ध्याई—ना. द.), म. ध्यानं न ध्याइ, अ. फ. चन्द कवि गाई ।

टिप्पणी—(१) परतष्पि < प्रत्यक्ष । (२) उकंठ < उत्+कण्ठा । (४) धा <ध्यै=ध्यान करना, चिन्तन करना ।

[१७]

अर्ध नाराच— मराल[1] चाल आसनं ।[0] (१)
अलित्त[1] छाय[2] सासनं[3] ।[0] (२)
सोहंति[1] जासु तुंवरं[2] ।[0] (३)
सुराग राज[1] घुंमरं[2] ।[0] (४)
कवंद केस[1] मुक्करे[2] । (५)
उरग्ग[1] बास विठ्ठरे[2] ।[3] (६)
कपोल[1] रेख गातयो[2] । (७)
उवंत[1] इंदु आनयो[2] ।[3] (८)
बभूव[1] धूव पंचये[2] । (९)
कलंक[1] राह[2] वंचये[3] । (१०)

श्रवन्न[१] ताट[२] पिप्पयो[३] । (११)
अनंग रथ्थ चक्कयो[१] । (१२)
उछंमि वारि पंजयो[१] ।+ (१३)
तिरति रूव रंजयो[१] ।+ (१४)
सुबाल[१] कीर सुद्धयो ।×०० (१५)
तकंत रत्त बिंबयो[१] ।×०० (१६)
दिपंत[१] बुच्छ दिठ्ठयो[१] । (१७)
धिची[१] अनार फुट्टयो[२] । (१८)
सुमीव कंठ मुत्तयो[१] । (१९)
सुमेर गग पत्तयो[१] । (२०)
भुजा स नासु द्रुहर*[१] । (२१)
सुरत्ति[१] लग्गि[२] भ्रंमर[३] । (२२)
नपादि अद्द* रष्षिय[१] । (२३)
घरंति[१] सच्छ*[२] लष्पया[३]।- (२४)
कनक्क सा विपच्चया*[१] ।- (२५)
सुराग सीस दिठ्ठया[१] । (२६)
विचित्र[१] रोम रिंथये[२] । (२७)
मनु[१] पपील रिंगये[२] । (२८)
हरंति[१] छच्चि[२] जामिनी[३] । (२९)
कटित्त[१] हीनि[२] कामिनी[३] ।४ (३०)
अभाय दोप बचही ।× (३१)
सुह त[१] देव संचही ।× (३२)
अपुठ्ठ[१] रंभ नारुहे[२] ।[३]× (३३)
अदेव[१] बंभु मानुए[२] ।[२] (३४)
सुरंग चंग पिंडुरी[१] (३५)
कली सु चंप अगुरी[१] । (३६)
सबद्द[१] बद्द नुप्पुरे[२] ।× (३७)
चलंति हंस अंकुरे[२] ।× (३८)
सुभाय[१] पाय[२] रगु ना ।× (३९)
सु भाघ[१] रत्त अद्भुभा[२] ।[२]× (४०)

अर्थ—(१) शाल मराल (हंस) जिसका [सरस्वती] आसन था, (२) अलि (भ्रमर) ...न (निपत्रण) पूर्वक जिस पर छाए हुए थे, (३) जिसकी वीणा का तूंबा शोभा दे रहा था, (४)

[जिससे निकलते हुए] अच्छे रागों का भ्रम शोभित हो रहा था, (५) कलिंद [के समान जिसके श्याम] केश मुक्त थे, (६) जैसे सुवास के लिए उरग (सर्प) बैठे हुए हों (७) जिसके गात्र में कपोलों की रेखा [ऐसी लगती थी] (८) मानो इंदु प्रातःकाल में उदित हुआ हो (९-१०) और जो राहु के कलंक से बचने के लिए [अपने मृगरथांके] जुए को बहुत खींच रहा हो, (११) कानों में ताटंक दिखाई पड़ रहे थे, (१२) [जो ऐसे लगते थे] मानो अनंग-रथ के चक्र हों, (१३) [जिसके नेत्र ऐसे थे जैसे दो] छोटे वारि-खंजन (१४) रूप के रंजित जल में तैर रहे हों, (१५) [जिसकी नासिका ऐसी थी मानो] सीधा (सरल स्वभाव का) बाल कीर (१६) लाल बिंबाफल [सदृश ओठों] को ताक रहा हो, (१७) [जिसके दाँत ऐसे] तुच्छ (छोटे) और दीप्त दिखाई पड़ रहे थे (१८) मानो अनार का फल बीच से फट गया हो, (१९) जिसकी ग्रीवा में मुक्ता-माल थी (२०) [जो ऐसी लगती थी मानो] सुमेरु ने गंगा को प्राप्त किया हो। (२१) जिसकी भुजाओं में टोडर थे, (२२) जिसके अंबर (चीर) में रक्तिका (घुँघची) लगी हुई थी, (२३) जिसके नख आद्र (कोमल) और रक्षित थे (२४) और स्वच्छ लक्षणों को धारण करते थे, (२५) कनक का विपचित (जड़ाव-युक्त) (२६) जिसका सुंदर शीश (शीशफूल) दिखाई पड़ रहा था, (२७) जिसकी विविक्त (पृथग्भूत, प्रकट) रोमावली थी, (२८) जो ऐसी लगती थी मानो पिपीलिकाएँ रेंग रही हों, (२९) जो यामिनी की छवि का अपहरण करती हो (३०) ऐसी क्षीण जिस कामिनी की कटि थी, (३१) [जिसके गुह्य प्रदेश का वर्णन न करके] अपभाषण दोष से बचते हैं (३२) और देवता शुभ का सचय करते हैं, (३३) [जिसकी जाँघें] अपुष्ट (कोमल) कदली-नाल [के सदृश] थीं, (३४) मानो वे अदेव (अनीश्वर विश्वासी) के [स्थूल] ब्रह्म हों, (३५) जिसकी पिंडलियाँ सुंदर और अच्छी थीं, (३६) जिसकी उँगलियाँ चणा की कलियों के समान थीं, (३७) जिसके नूपुर शब्द कर रहे थे, (३८) [मानो] मराल चल रहे हों (३९) और जिसके पैर स्वाभाविक रीति से ऐसे रंजित थे (४०) मानो उनके नीचे रक्त (लाल) कमल हों।

पाठान्तर—० चिह्नित चरण मो. में नहीं है।
(० ०) चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण द. ना. में नहीं है।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।
÷ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।
* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. म. सुराल।

(२) १. द. कलिति। २. फ. वाइ, अ. ना. छाइ, स. माय। ३. अ. फ. तासनं।

(३) १. म. सोहंत, ना. साहंसा (< सोहंसी), अ. फ. सुहंत, द. सुहंति। २. मो. आसि तमरं, उ. स. जास तामरं, म. जास संवरं।

(४) १. मो. सुराग राय (<राज), ना. म. सु राग राग, द. स. सुराग राज। २. मो. घूमरं, उ. स. घामरं।

(५) १. ना. कलयंत केस, म. उ. स. कलिंद केस, म. कलिंद केषि, अ. फ. कइंद केस। २. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. मुकरे, म. मोकरे।

(६) १. धा. म. उरग (<उरग्ग)। २. धा. वाम विट्ठरे, फ. वान विट्ठरे, ना. वाम विट्ठरे, द. वा॰ विटरे, म. वाम विटरे, उ. स. बाल बिथुरे। ३. उ. स. में यहाँ और है :—
लिलाट रेष चंदनं। प्रभात इंद वदनं।

(७) १. धा. कपिपन। २. धा. गतया, अ. फ. गातय (गातय-फ.)।

(८) १. धा. उइंदु, फ. उवति, म. उवंत। २. ना. म. इंद प्रातयो, अ. फ. इद (इंदु-फ.) प्रातय, ना. इंद पातयो, उ. इद पातयो, म. इन्द्र पावयो, म. अंइ प्रतयो। ३. उ. स. में यहाँ और है (म. पाठ) :—

आतंक झंक झंकई। तिलक्क पान- संकई।
सुरंत तेज मासई। ग्लंत मुक्ति पासई।
उपंम चंद जंपयौ। सुनंत कीर सौपयौ।
त्रिभंग मार आतुरं। चितुक्क चारु चातुरं।

(९) १. धा. म. द. ना. विभूर, स. विमूल, अ. फ. विघुर। २ धा. ना. द. म. पंजयो (पंजयो–ना.), फ. पंजए।

(१०) १. म. किलंक। २. धा म. राहु। ३. धा. ना. द. म. वंचयौ, स. चंपयौ, म. चंपयो, अ. फ. वए (चंचए-फ.)।

(११) १. म. अवन। २ धा. टाट, अ. फ. तट्ट, उ. स. नाट। ३. अ. फ. विम्मए।

(१२) १. अ. फ. चक्कए।

(१३) १. धा. उछाह नारि पंजयो, अ. फ. उछाहि वारि पंजए, उ. स. उछाह कीर पंजनं।

(१४) १. मो. तिरंति रूप रंजयो, धा. तिरंत रूप रंजयो, अ. फ. तिरंत तव रंजए, उ. स. तवन्न रूप तनं।

(१५) १. द. ना. सु। २. द. सधयो, स. सुम्मयो, अ. फ. सुद्धए।

(१६) १. अ. फ. तकित विव रत्तए, ना. सकल रत्त भिंवयो।

(१७) १. धा. दिपंति। २. अ. फ. दिट्ठए, म. दिट्ठयो।

(१८) १. धा. अ. फ. विंवी (< बिंवो), मो. बिंबा, म. बिंबि, ना. बिंबि, द. स. बिंबे। २. फ. फट्टए (फुट्टए–फ.), म. फटयो।

(१९) १. मा मोलयो, अ. फ. मुत्तए।

(२०) १. अ. फ. पत्तए।

(२१) १. मो. भुजा म (< स) जासु तुंमरं (< तंडर=तद्धर), धा. भुजाय जास तुंवरं, म. फ. भुजास जास (भुजासु जासु-फ.) तुंबरं, अ. भुजास जासु तुवरं, ना. द. भुमत तास (जासु–ना.) तुंमरं, उ. स. भुजंत सु तुमरं।

(२२) १. मो. सुवत्त, स. सुरच्छि। २. मो. लग्ग। ३. अ. फ. अंतरं, ना. म. अंवरं।

(२३) १. मो. निलय अब रखिणं, धा. अ. फ. निभाय आय रंछिन (रच्छिन–अ., रक्षिनं–फ.), ना. नवादि नादि रष्षनं, म. निपोय अव रखन, उ. स. नवादि हंस लच्छनं।

(२४) १. ना. म. धरंत। २. उ. सच्छि (साछ < साच्छ), शेष में 'सीस'। ३. मो. रक्षणं, धा. उ. स. अ. फ. लच्छिनं, ना. लष्षन। ४. उ. स. में यहाँ और है :—

सुरंग हथ्थ सुंदरी। सो पानि सोभ सुंदरी।
सुजीव अम्म वालयं। सुगंध तिम्म ताळयं।

(२५) १. म. साव प्रोचया, शेष में 'सा विपव्वयां' (< विस्वया)।

(२६) १. मो. सुराग शिसि दिठिया, धा. सुराग सीस रडढया, अ. फ. सुराग सीस-रड्ढया, ना. म. सुराग सीस दढ्ढया (दढया–म.), स. सुराग सिस दिव्वया, उ. सुराग सिस दिव्वया।

(२७) १. धा. ना. विविधि, अ. फ. विवाध, द. विवध, म. विविक्त, फ. विचाव। २. मो. रपयो, धा. रंगए, ना. द. उ. रंगयो, म. रिंघया, स. रंगयं।

(२८) मो. मनु पिपील रंपयो, धा. मनो पिपिल रेंगए, अ. फ. मनो पिपील रिंगए (रंगए–फ.), म. मानों प्रपील रिगयो, द. ना. प्रपीलिका (पिपीलिका–ना.) सु रंगयो, उ.स. पपील सुत्त रंगयं। २. अ. फ. में यहाँ और है :

सु सोभिना निरूपए। अनंग जानि कूपए।

(२९) १. हरंत, ना. हरत्ति। २. मो. छवि, धा. छवि, म. पाप, अ. फ. छिन। ३. मो. जामिनी, म. जामनी।

(३०) १. उ. स. कढ्ढि, म. कढत, ना. कढत्ति। २. मो. हानि (< हीनि), अ. फ. ना. होन। ३. म. सामनी, ना. स्वामिनी, उ. म. सामिनी, द. सामनी।

(३१) मो. मोहंति, अ. फ. सुमं स।

(३३) १. मो. अपू‹ रंभ, धा. अपुट्ठ रंग, अ. फ. अपुब्ब रंग, द. ना. उ. स. अपुट्ठ । २. ना. नारणे, स. उ. द. नारिनी, अ. फ. मानुप ।

(३४) १. द. सदेवि, म. सरेव ना. सुरेव । २. धा. अ. फ. बंम मानुप, मो. मह्म चारु रे, ना. म. स. उ. द. ब्रह्मचारिणी (ब्रह्म चारनी—म.) । ३. उ. स. में यहाँ और है : सज्जुत कोप कारिनी । ४. उ. स. में यहाँ और है :—

अबुद्ध बुद्धि कारिनी ।
नयन्न नास कोसई । बरट्टि कट्टि भेसई ।
झलक्क तेज कंबुजं । चरन्न चारु अंबुजं ।

(३५) १. धा. चंग पुंडरी, मो. चग बमरी, ना. द. रंग उब्भरी, उ. स. रंग ईंडुरी, म. चंग स्वंमरी ।

(३६) १. मो. कलिन (=कलीन) चंप पिंडुरी, धा. कलिंद चंद अंगुरी, अ. फ. कली सु चंप (सचपि—फ.) अंगुरी, ना. स. उ. द. कलाति चंपि (चंप—ना.) पिंडुरी (पुंडरी—ना.), म. कलीन चंप तुंडरी (पुंडरी)। (पिंडुरी चरण ३५ में आ चुकी है ।)

(३७) १. उ. स. सद्द, फ. दव्व । २. धा. अ. फ. नूपुरा, ना. स. द. नूपुरे, उ. नूपुर (< नूपुरे) ।

(३८) १. मो. चलंत । २. धा. अ. फ. अंकुरा ।

(३९) १. धा. अ. फ. सुभाइ, द. उ. स. सुपाइ ना. समाय । २. धा. पाइ ।

(४०) १. ना. द. अध रत्त, धा. अ. फ. जु अद्ध । २. धा. अंमुजा । ३. उ. स. में यहाँ और है :—

दरस्स देवि पाइयं । सुकब्बि कित्ति गाइयं ।

टिप्पणी—(४) धूमर < धूम्र । (५) कयंद < कलिंद । मोकरे < मुक्त । (६) विठ्ठ < विष्ट—वैठे । (९) बभूत < प्रभूत । जूव < यूप । (१३) उच्छ < तुच्छ । (१४) रूव < रूप । (२०) पत्त < प्राप्त । (२३) अद्द < आर्द्र= कोमल । (२५) विपव्वया < विपश्चित । (२७) विविच < विविक्त=पृथग्भूत, प्रकट । (३२) सुहं < शुभ । (३३) अपूठ < अपुष्ट । (४०) अध्ध < अधस् ।

[१८]

अडिल्ल—अंबुज विकस[१] बास[२] अलि आयौ[३]।[४] (१)
सांमि[१] वयनि[२] सुंदरि[३] समझायौ[४] । (२)
निस[१] पल पंच घटिय दोइ[२] धायौ[३] । (३)
आखेटक नंपे[१] नृप आयौ[२] ॥ (४)

अर्थ—[सवेरा होने पर] कमलिनी विकसित होने लगी और उसकी सुबास के लिए अलि (भ्रमर) आ गया । (२) स्वामी (अलि) ने वचनों में सुंदरी (कमलिनी) को समझाया । (३) रात्रि में दो घड़ी तथा पाँच पल नृप (पृथ्वीराज) दौड़े थे, (४) अब वे आखेटक को समाप्त कर आ गए ।

पाठांतर—(१) म. फ. बिगसि, ना. बिकसि । २. अ. बासु, फ. ना. बासि । ३. मो. आयु (=आयौ), म. ना. आयौ, शेष में 'आयो' । ४. म. में यह चरण नहीं है और इसके स्थान पर यथा द्वितीय है : रवि गह्यौ धर माहि छिपायौ ।

(२) १. धा. अ. फ. ना. द. उ. स. स्वामि, म. स्वामन । २. मो. वयनि, शेष में 'वचन' । ३. ना. सुंदर, म. चंद । ४. मो. समझायु (=समझायौ) धा. सब जायो, शेष में 'समुझायौ' या 'समुझायौ (समझायौ—ना. म.)।

(३) १. मो. निश (निस), म. नस, अ. फ. निसि । २. धा. अ. घडिय दुइ, ना. घटी दुइ, उ. स. घटी दू, द. घटादुरय, म. घटी दो, अ. घडिय दुइ, फ. घरीय दो । ३. मो. धायु (=धायउ), धा. ना. धायौ, अ. धाय, उ. स. आयौ, द. म. फ. धायौ ।

(४) १. धा. अ. फ. डंपे, मो. चंपे, उ. स. जंपिय, ना अंकिय, द. डांपि, म. डापे । २. मो. आयु

(=आयउ), धा. अ. फ. ना. म. द. उ. स. आयौ (आयौ–धा. अ.) ।

टिप्पणी—(२) वयन=वचन । (४) नष=नश=सैकना, समाप्त करना ।

[१९]

घडिल—मझ्झ[1] पहुर[2] पुच्छइ*[3] तिहि[4] पंडिय[5] । (१)

कहि कवि[1] विजय[2] साह[3] जिह डंडिय[4] ॥ (२)

सकल सूर[1] बोलिव[2] सभ[3] मंडिय । (३)

आसिप[1] जाइ दीध[2] कवि चडिय[3] ॥ (४)

अर्थ—(१) [प्रथम या मध्य के] प्रहर के मध्य (समय) वह (पृथ्वीराज) पंडित (जयानक?) से पूछने (कहने) लगा, (२) "हे कवि, मेरी विजय [का काव्य—पृथ्वीराज विजय] कहो, जिस प्रकार मैंने शाह शहाबुद्दीन को दंडित किया है।" (३) तदनंतर समस्त शूरों को बुला कर उसने सभा की, (४) जिसमें चंड (उग्र) कवि [चंद] ने आशीर्वाद दिया।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. म. मधि, अ. ना. मध्य । २. मो. पहर, ना. पिम्म, फ. पहरि, द. प्रहर । ३. मो. पुच्छि (=पुच्छइ), म. पुछीय, मा पुच्छै, अ. फ. पूछै । ४. धा. तहि, ना. द. म. प्रभु, उ. स नृप । ५ म. चडीय ।

(२) १. म. विप्र । २. धा. कहि । ३. धा. ना. साहि । ४. मो. तिह चडीय, अ. फ. ना. जिहि डंडिय, म तिहे डडीय, उ. स जिन महिय ।

(३) १. ना. सू. । २. धा. अ. बोलिव, ना. बोलइ, फ. बोलिड, उ. स. बठे । ३. म. सभा ।

(४) १. म. आसिक । २. धा. जाइ दियो, अ. फ. दीयो जाइ, ना जाइ दियौ, उ. स. आनि दीय, म. दियौ आइ । ३. मो तव चडीय, धा. म ना. अ. फ. कवि चंदीय, उ. स. तव चदिय ।

टिप्पणी—(१) पडिय=पंडित । (२) विजय=पृथ्वीराज विजय ।

[२०]

मुडिल— प्रथम[1] सूर पुच्छइ*[2] चहुआनहु[3] । (१)

हइ *[1] कयमासु कहूँ कोइ[2] जानहु[3] । (२)

तरणि[1] छिपंत संझि[2] सिर नायउ*[3] । (३)

प्रात[1] देव[2] मुहुल न[3] पायउ*[4] ॥ (४)

अर्थ—(१) पहले चहुवान (पृथ्वीराज) शूरों से पूछने लगा, (२) "कयमास कहाँ है ? कोई जानते हो ?" (३) [उन्होंने उत्तर दिया,] "सूर्य के छिपते समय संध्या काल में [हमने उसे] सिर झुकाया था, (४) किन्तु हे देव, प्रात काल हमने उसे महल में नहीं पाया।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. फ. प्रथिमि । २. धा पूछइ, मो. पुछि (=पुच्छइ), अ ना द. म उ. स. पुच्छै, फ. पूछ । ३ धा. अ फ ना. चहुवानह, उ. स. चहुआनह, म चहुव नहु ।

(२) १. मो. हि (=हइ), शेष समस्त में 'है'। २. धा. कहहु किंहु, अ. कहहु कहुं, द. उ. स. कहौ कहुं, फ. कहा कहौ, ना. कहौ कहां, म. कहां कोउ। ३. धा. द. जानह, उ. स. जानय, म. जांनहु।

(३) १. धा. अ. फ. तरनि, म. तरतु। २. धा. छिपंत संझि, द. उ. स. अ. फ. छिपंत संझ, मो. छपंत मंझ (<संझ), द. छपंत सकि, ना. छिपंति सांझ, म. छिपंतह सोस। ३. मो. नाइ (=नायउ), धा. अ. फ. नायो, ना. उ. स. नायौ, म. नवायौ।

(४) १. धा. प्रातु, ना. प्रातह। २. धा. अ. फ. उ. स. देव हम, म. देवहै। ३. धा. अ. फ. उ. स. महल न, ना. महुल नहु, म. मोहल न, द. महल नहि। ४. मो. पाइ (=पायउ), धा. अ. फ. पायो, म. ना. पायौ।

[२१]

दोहरा—उदय अगस्ति नयन+ दिठि+[१] उज्जल जल ससि कास[२]। (१)
मोहि चंद हइ[१] विजय मन[२] कहहुं कहां[३] कयमास[४×]॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] "अगस्त्य का उदय हो गया, और नेत्रों से जल, चन्द्रमा तथा कास उज्जवल दिखाई पड़ने लगे। (२) हे चंद मुझे मन में [कन्नौजराज पर] विजय की [लगी हुई] है; बताओ कयमास कहाँ है?"

पाठान्तर—+ चिह्नित शब्द धा में नहीं है।
× म. में इस छन्द का पाठ है :—
मुदित—उव अगास रिसी अमिदासं। मोहि चंद है विजया मासं।
उजलज लेन सोसि आकास। कहि हौ मोहि कहा कैवासं।

(१) १. मो. उदय अगस्ति न चंद ति, अ. फ. उद अगस्ति रितु नव नदिन (-निदिठु फ.), ना. द. उदय अगस्त रितु नयन दिन (दिठ—द.), उ. स. उदय अस्त तो नयन दिठि। २. मो. नव ससि कास, धा. द. सिसि आकास।

(२) १. धा. हइ, मो. हि (=हइ)। २. धा. म. मनु। ३. मो. कहहुं काहां, ना. कहिहि कहौ। ४. धा. कइमासु, मो. किमास (=कयमास), अ. फ. कैवास।

[२२]

दोहरा— नागप्पुर सुरपुर[१] सयल[२] कथित कहउ* सब[२] साज। (१)
दाहिम्मउ* दुलह भयउ*[१] कहउ*[२] न जाइ प्रथीराज[३]॥ (२)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] "नागपुर (नाग लोक), सुरपुर (देव लोक) [आदि] सब के सब साज यदि तू कहे तो मैं कहूँ। (२) [किन्तु] दाहिमा कयमास [इन लोकों में भी] दुर्लभ हो गया है, [अतः] हे पृथ्वीराज, मुझ से कहा नहीं जा रहा है [कि वह कहाँ है]।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. अ. फ. नागप्पुर नरपुर, ना. नागपुर नरसुर, उ. म. नागपुरह नर सुर, म. नागपुर सुरपुर। २. अ. फ. सकल, उ. म. पुरह। ३. मो. कथित कहूं (<कहुं=कहउं), धा. अ. कथि सु देव पुर, फ. कथित देव पुर, ना. उ. स. कथत (कथित—ना.) सुनत सब, म. द. ना. कथित सुनहि सब।

(२) १. मो. दाहिमु (=दाहिम्मउ) दुलम भयु (=भयउ), शेष में 'दाहिम्मो' (दाहिमौ—ना. म.) दुलह भयो (भयौ—म.), २. मो. कहू (<कहुं=कहउ), धा. अ. फ. उ. स. कहि, ना. म. कहयौ। ३. धा. ना. प्रिथिराज, म. प्रिथिराज, द. प्रसिराज।

टिप्पणी—(१) सयल < सकल। (२) दुलभ < दुर्लभ।

[२३]

दोहरा— कहा[१] भुजंग कहा उदे सुर[२] निकमु कव्व कवि[३] पंडि[४] । (१)
कइ[*] कयमास[*] बताहि मो[१] कइ[*×] हर[२] सिद्धी[३] बर छंडि[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) "[पृथ्वीराज ने कहा,] "[कयमास] क्या भुजग (नाग) अथवा क्या सुर (देव) [योनि में] उदय हुआ है—जन्मा है ? तू अपने निकम्मे काव्य को, हे कवि, नष्ट कर दे। (२) या तू मुझे कयमास को बता, और या तो हर-सिद्धि का वर छोड़ दे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द धा. अ फ. स में नहीं है।
* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हे।
(१) १. धा. उ. स. का, म. काहा, द. कहा, अ. ना. कहि। २. धा. का देव नर, अ. फ. कह (कहा–फ.) देव नर, द कहा देव सो, ना. कहि देव सु, म. का देव सुनि, उ. स. काइ देव ससि। ३. मो. निकमक कवि, धा. ना. द. म. निकम काव (कव्व–धा., कबु–म.) कवि (कछु–ना.), अ. फ करन कछु (कच्छि–ना.) कवि, द. उ. स. निवम कवित्त (कवि–द) जु। ४ फ पढ।
(२) १. मो. कि (=कइ) किमास (=कयमास) बताहि मो, धा. ना द. म. उ. स. कै बताउ (–बताइ म) [कयमा]स मोहि (मुहि–म.), अ. फ. बतावत्ति कैवास मुहि (वरि–फ.)। २. मो कि (=कइ) हिर, अ. हरि, [फ.] हर, धा. स. हर, ना. कै हरि, म. उ के हर। ३. फ द. सिद्धिय। ४. फ. छइ।
टिप्पणी—(१) कव्व < काव्य।

[२४]

दोहरा—जउ[*१] छुडइ[*२] सेसह[३×] धरणि[×] हर[×] छुडइ[×*४] विष[×] कद[×५] । (१)
रवि[×] छंडइ[×*१] तप ताप कर[*२] तउ[*×–] वर[३] छंडइ[*४] कवि चंद ॥ (२)

अर्थ—[चंद ने कहा,] (१) "यदि शेष धरणी को छोड दे, शिव विष-कंद [का खाना] छोड़ दें, (२) सूर्य अपनी गर्मी और तापपूर्ण किरणें छोड दे, तो कविचंद [सिद्धि का] वर छोड़ सकता है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
–चिह्नित शब्द अ फ उ. स. में नहीं है।
(१) १. धा. जो, मो. जु (=जउ), ना. द. फ. जै (<जइ), उ. म. अ. म जौ। २ मो छडि (=छडइ), [उ.] स. छडै, म. अ. फ. ना. छडं। ३. अ फ. ना सेसु तु, म. सेसु त। ४ मो. छडि (=छंडइ), [द.] म अ. फ. ना. म. छंडै। ५ म. कदु।
(२) १. मो. छडि (=छंडइ), ना. म. उ. स. अ. फ. छड। २. मो. धा. फ. तप ताप कर, अ (कर–मो), [उ. स.] तप ताप कौ, म. जौ तपि किरनि। ३. मो. तु (=तउ) वर, म. तौ वर, धा. अ फ. उ. स. वर (उर–उ), ना. तौ (<तौ) वर। ४ मो. छ, धा. अ. फ म ना उ. म. छड।
टिप्पणी—(१) जइ < यदि। (२) तउ < तदा।

[२५]

दोहरा—हठि[१] लग्गउ[*] वहुथान[२] निप अगुलि[३] मुषह[४] फणिंदु[५] । (१)
तिहुपुरि[१] तुअ मति[२] संचरइ[*५] कथन[३] सुहे[४] कवि चंदु ॥ (२)

अर्थ—(१) भट्ट चद के उस वचन के सुनकर (२) [सभासद गण] पलायित होकर अपने अपने घर गए। (३) योगिनीपुर (दिल्ली) में चहुआन (पृथ्वीराज) जग रहा था, (४) चार प्रहर रात्रि उसके लिए चार युगों के समान व्यतीत हुई।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. द. उ. स. में इसके पहले और है (स पाठ) :—

सुनि सुनि श्रवन चद चहुआन। कलि मलि चित्त सुभट सब्बान।
के अवलोइ सुमुष्प चद। निरषे नयन के विभृत द द।
के मय मूढ़ रूढ़ वर अप्प। के भव चिन्न विरत्त सुद्रप्प।
समुझि न परे सूर साभत। गठन गुनगन आव अत।
निरषे द्रग मुष रत्त करूर। असही तेज अंगेज सनूर।
निरषे कन्यो अन्य सकूर। भय मय चित्त सुम सपूर।
गहके वहर गब्जि गुहीर। भय त्रिधात तरित तन भीर।
मय गभीर सुहीर समीर। उट्ठे कर सरैन सनीर।
घट्टी मद्ध पच पल सेष। विन भद्रवं भयानक भेष।
दिसि नैरत्ति किराहि गोमाय। दिसि घूमत सिवा सुर ताय।
वही देविष्पकोरन भास। गज्जे छानि ओनि आयास।
मन्ने सद्द आरिष्ट अपार। उपज्यौ चिन कारन करतार।
मुष अवलोकि कन्द नरनाह। उट्ठे आसन द्रुत अराह।
चले अप्प निज मग्ग सुग्रेह। फुनि गोयद राज उठि तेह।
उनमन मन्न उट्ठि सामत। कलि मलि विकल उकल सा‍चित।
कहैं चद बरदाइ सकोह। हनि कैमासि दास रिस दोह।

ये पंक्तियाँ ना. में भी हैं, किन्तु स्वतत्र छद के रूप में एक रूपक बाद आती हैं।

२. मो. वयन। शेष सभी में 'बचन'। ३. म सुनुन। ४. मा. सोइ, शेष में 'नृप (प्रप-उ. स.)। ५ उ. स. कान।

(२) १. मो. ना. आप आप, म. आपु ही आप। २. धा. ना. अ. गय (गये-धा.) गेह परानहु, उ. स. गए ग्रेह परानं, फ. गहिम गहि परवानह, म गये ग्रह रानहु।

(३) १. धा. जोगिनपुर, उ. स. ना. द अ. जुग्गिनिपुर। २. म. जुगनिपुर, मो. जागु (=जागउ) चहुआनहु, धा अ. फ. जगयो चहुवानहु, ना. म. जग्यौ चहुवानह, उ. स. जग्गत चहुवान।

(४) १. मो. भयौ, ना. म. भई। २. धा. निसि च्यारि जाम, म. निवार जाम, फ. निसि चार जाम। ३. मो गूनह, ना. म. जुग मानह, उ स. जुग मान, अ. फ. जम (यंम-फ.) मानह।

[२६]

कवित्त— राज मज्झि[१] सभयउ*[२] पट्ट[३] दरबान परट्ठिय[४]। (१)
बहुर[१] सब्ब[२] सामंत[३] मनउ* लग्गिय[४] सिर लट्ठिय। (२)
रह्यउ*[१] चंद बिरदिया[२] विमुष मुष पग न सरक्यउ*[३]। (३)
गिम्ह[१] तेज वर भट्ट रोस जल पिनि पिनि[२] सुक्यउ*[३]। (४)
रत्तिरी[१] कत जग्गतरइ*[२] चषी[३] घरिघ्घरि*[४] बत्तरी। (५)
दाहिमउ*[१] दोस लग्गउ* परउ[२] मिटइ*[३] न कलि सु* उत्तरी[४]॥ (६)

अर्थ—(१) राज [=सभा] में हाकर पट्ट दरबान [द्वार पर] परिस्थित हुआ। (२) सब सामंत लौट पड़े थे, मानो उनके सिर पर लाठी लगी थी। (३) चन्द बिरदिया मात्र वहाँ रह गया था,

उस ने मुख फेर कर पैर [तक] नहीं सरकाया था। (४) भट्ट चंद ग्रीष्म के [उग्र] तेज से सूखते हुए जल के समान पृथ्वीराज के रोष से क्षण प्रतिक्षण सूख रहा था। (५) रात्रि-कान्त (चंद्रमा) के जागते रहते (आकाश में स्थित रहते) ही घर घर यह वार्त्ता चली कि (६) "दाहिमा (कयमास) को [कोई] बड़ा दोष लगा है—उससे [कोई] घोर अपराध हुआ है—और वह कलि (कल्मष) [उसके सिर से] उतर कर मिट नहीं रहा है।"

पाठान्तर— *चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. राज मइझ, धा. राज मज्झि, म. राजमझि, अ. फ. राज मझ्झ, स. राजन मझ। २. मो. समयो (< संभयु), धा. ममद्यो, स. सपरिय, फ. समत, अ. समस्स, म. सपत्ति, उ. समरिय, ना. समयौ (< समयउ)। ३. धा. उपर, अ. फ. उट्ट। ४. मो. परटीय।

(२) धा. बादुरि (=बाहुरइ), अ. बहुरि, फ. बीहुरि, ना. द. उ. स. म. बहुरे। २. धा. मबि, फ. राज। ३. अ. फ. मावत। ४. मो. मनु (=मनउ) लगि, धा. अ. फ. मनहु (मनौह–फ.) लग्गिय, ना. म. मत लग्गिय, द. उ. स. मत भग्गिय।

(३) १. धा. रह्यो, मो. रहयु (=रहउ), शेष में 'रह्यौ' या 'रह्यो'। २. धा. अ. फ. ना. द. म. उ. स. वरदाइ। ३. धा. पगु न सरक्यो, मो. पग न सरक्यु (< सरक्यउ), म. पग न रक्यौ, द. म. उ. स. पग न सरक्यौ, ना. पगा न सरक्यौ।

(४) १. मो. अ. फ. गिम, म. ग्यंगु, उ. स. ग्रम्म, ना. ग्रिम। २. धा. रोसें जल चिनि चिनि, म. राम जल पषनि। ३. धा. सुक्यो, मो. उ. सुक्यु (=सुक्यउ), म. मुक्यौ; ना. सुक्यो, शेष में 'सुक्यो'।

(५) १. मो. रतिरि, म. रातरी, इनके अतिरिक्त सभी में 'रत्तरी'। २. धा. जागंतरी, मो. जगतरि (< जगत रइ), अ. फ. जागंत रह, फ. जागंतरु, म. जंगंतरं, ना. जग्गतरं, द. उ. स. जागतरं। ३. ना. होइ, उ. स. भई। ३. मो. म. घर घर, अ. फ. ना. घरग्घर, धा. घरे घरि (=घरि घरि), उ. स. घर घर (=घरग्घर)।

(६) १. मो. दाहिमु (=दाहिमउ), धा. उ. स. दाहिम्म, ना. दाहिमौ, म. अ. फ. दाहिमें। २. मो. लगु (=लगउ) परयु (=परउ), धा. दासी खिरिस, अ. फ. लग्गो (लग्यौ–अ.) परउ, (परा–फ.), म. लगी परी, ना. उ. स. लग्गौ परौ। ३. मो. मु मिटि (=मु मिटइ) द. मिट, शेष सब में 'मिटै'। ४. धा. कल्मिसुत उत्तरी, मो. कलिसु (=सु) उत्तरी, अ. फ. कलि सौं उत्तरी, द. कलिसु उत्तरी, म. कल सम उत्तरी, ना. कलि सो उत्तरी।

टिप्पणी—(१) परिह्रु < परि+स। (४) गिम्ह < ग्रीष्म। सुक्क < शुष्। (५) रत्तिरी < रात्रि। वत्तरी < वार्त्ता।

[३०]

आर्या— उग्गियं[×] भान[१×] पायान[२×] पूर[३×] । (१)
बज्जियं[×१] देव द्वरि[२] संप तूरं[३] ॥ (२)
कलत[१] कयमास*[२] चढि[३] वरणसाला[४] । (३)
देव वरदाइ[१] वर मंगि . बाला[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) पादों (किरणों) से पूर्ण भानु उदित हुआ, (२) देव द्वार पर शंख और तूर्य बजने लगे। (३) कयमास की कलत्र (स्त्री) वर्ण शाला पर चढी। (४) [और] देव (महादेव) के वरदायी (चन्द), से वर (मृत पति) माँगने लगी।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
× चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) धा. उग्गियं भानु, अ. उग्गिय पायान, स. उग्गिय भान, शेष में 'उग्गिय भान'। २. धा. पायाल। ३. स. पूर।

(२) १. मा. बानिय, शेष में 'वज्जिय'। २. म. बदामि, ना. दवदारे, शेष में 'देव दर'। ३. स. तूर।
(३) १. अ. फ. कलत्र, द. उ. स. कलत्र, म. कलि। २. धा. अ. फ. कैमास, मो. किमास(=कयमास)। ३. मो. चढि, शेष में 'चढि'। ४. स. साल।
(४) १. मो. ना. द. देवि वरदाइ, धा. देवि वरदायि, म. फ. देव वरदाइ, स वरदाइ देवि, [अन्यत्र इद से 'वर' प्राप्त होने का उल्लेख मिलता है—यथा ३. २३, ३. २४]। २. स. बाल।
टिप्पणी—(१) पाय < पाद=किरण। (२) तूर < तूर्य=तुरही। (३) कलत < कलत्र=स्त्री।

[३१]

कवित्त— ज़ा जीवन[१] कारणइ[२] धर्म[३] पालहि[४] मृत[५] जालहि । (१)
जा जीवन[१] कारणइ[२] अथ्थ सँ[३] चित्त[४] उबारहि । (२)
जा जीवन[१] कारणइ[२] दुरग रष्पहि सब[३] अप्पहि[४*] । (३)
जा जीवन[१] कारणइ[२] भूम नव ग्रह करि[३] कप्पहि[*४] । (४)
जउ[*१] जीवन[२] साईं अप्पनउ[*३] नृपति बहुत वचनह भउ[४*] । (५)
सुकि[१] सरोवर हंस गउ[२] सुकिलि उडउ[*] अंधार भउ[*३] ॥ (६)

अर्थ—(१) [उसने कहा,] "जिस जीवन के कारण ही [मनुष्य] धर्म का पालन करता और [उसके द्वारा] मृत्यु को जलाता है, (२) जिस जीवन के कारण ही [मनुष्य] अर्थ—धनोपार्जन [के साधनादि]—से चित्त को उबारता है, (३) जिस जीवन के कारण ही मनुष्य सब कुछ [शत्रु को] अर्पित करके भी दुर्ग की रक्षा करता है; (४) जिस जीवन के कारण ही वह भूमि नव ग्रह [की शांति] के लिए संकल्पता (देता) है, (५) यदि वह मूल्यवान जीवन है, तो नृपति के बहुतेरे वचनों का भी भय होता है, (६) [किन्तु] सरोवर सूख गया, तो हंस (प्राण-सूर्य) भी चला गया और हंस (प्राण-सूर्य) के सिमट कर (पंख बटोर कर) उड़ जाने पर अँधेरा हो जाता है।"

पाठान्तर—(१) १. फ. जीउन। २. मो. कारणि (=कारणइ), ना. कारणइ, धा. फ. म. कारनै, द. कारणइ, उ. स. कारनइ, अ. कारणै। ३. उ. स. द. ध्रम्म। ४. मो. पालिहि, ना. पार। ५ म. पाले, अ. मृत्तु, म. मितु, स. फ. चित। ६. मो. जालिहि, धा. जालहि, ना. रहि, शेष में 'टारहि' (टालहि-फ.)।
(२) १. फ. जीउन। २. मो. कारनिहि, ना. कारणहि, धा. फ. म. कारनै, द. कारणइ, उ. स. कारनइ, अ. कारणै, म. फ. कारने। ३. अ. फ. अथ्थ सौं, ना. म. अथ्थि धन, द. अथ्थि दान, उ. स. अथ्थि दे। ४. ना. द. म. मूल।
(३) १. फ. जीउन। २. मो. कारनिहि, द. कारणइ, उ. स. कारनइ, अ. कारणै, म फ. कारन, ना. में 'जा जीवन०' लिख कर छोड़ दिया गया है। ३. मो. दुरग रष्पिहि सब, अ. फ. दुर्ग रष्षै सद्दु (अत्र-फ), ना द. म. उ. स. दुरग (द्रग्ग—ना.) हय देसति। ४. अ. फ. अप, म. दिज्जहि।
(४) १. फ. जीउन। २. मो. कारनिहि, द. कारणइ, उ. स. कारनइ, अ. कारणै, म. फ. कारनें, ना में 'जा जीवन०' लिखकर छोड़ दिया गया है। ३. उ. स. ना. द. अ. फ. होम करि नवग्रह म., होम नव ग्रह। ४. मो. कप्पिहि (=कप्पिहि,) ना. उ. स. जप्पहि, अ. फ. जप्प, म. कपिजहि।
(५) १. मो. जु (=जउ), धा. जे, म. जो, ना. ए, स. अ. फ. जा। २. फ. जाउन। ३. धा. साईं अप्पुनो मो. साइ अपनु (=अपनउ), ना. साईं अप्पनौ, अ. फ. सैं अप्पनौ, म. सोइ अप्पनें, स. साईं सुपन, उ. साईं सुप्पनौ ३. मो. बहु त्ता वचनइ मु (=भउ), धा. अ. फ. बहुत जवहि (जवबे—फ.) समो (=समौ अ. फ.), ना. उ. स बहुत जाचिय (जंचिय—ना.) अमो (आयो=ना.), म. बौहति चित्र जीवै।
(६) १. मो. सुकि (=सुकि), धा. सुकौ, उ. स. सुकौसु, ना. द. म. सूकै, अ. सुक्वत, स. फ. सुक्वत

धा. गउ, मो. ग्गु (=गउ), ना. म. उ. स. अ. फ. गौ। ६. मो. कलि उड्ड (=उड्डउ) अधियार मु (=मउ), धा. अ. फ. कलि वुड (वुडडै—ना.) अधियार भो, ना. कलि वुड्ड अधियारी भयौ, उ. स. कलि वुड्डै अधियार भ, म. कलि अधियारै भजीय।

धा. में प्रथम चार चरणों का पाठ निम्नलिखित है : ऐसा लगता है कि प्रथम चरण के खंडित होने के कारण पाद-पूर्ति के लिए धा. के चतुर्थ चरण की कल्पना की गई है:—

> जा जीवन कारंन अत्थि धन मूल उबारहि।
> जा जीवन कारन होम करि नव ग्रह टारहि।
> जा जीवन कारन दुग्ग दल भुवर सज्जहि।
> जा जीवन कारन समर सजि नर भर भज्जहि।

टिप्पणी—(१) जाल < ज्वालय्। (२) अथ्थ < अर्थ। (३) अप्प < अर्पय्। (४) भूमै < भूमि। (५) सारं < सारि= सातिशय पदार्थ, मूल्यवान पदार्थ। (६) सुकिलि < सकल्।

[३२]

कवित्त— मातु[१] गब्भ[२] वास करिवि[३] जंम[×] वासर[×४] वसि[×] लहगुउ[×*५]। (१)
पिन[१] लग्गइ[*२] पिन[३] रुदइ[४] मुदइ[×*५] पिन[×६] हसइ[×*]अभग्गउ[×*७]। (२)
वपु विसेस[१] वड्ढिअउ[२] अंत डहइ[३] डर डरयउ[४]। (३)
कच तुचा दंत न रार[१] धीर[२] किम[३] किम उब्बरयउ[४]। (४)
मान भंगु मुकइ[*] सयल[१] लपित निमिष्ष नि मिट्टहि[*×२]। (५)
पर काज[१] आज[२] मंगउ[३] नृपति कहु[४] त[५] प्राण[६] पमुकहि[*७]॥ (६)

अर्थ—(१) "मनुष्य माता के गर्भ में वास करने अनन्तर दिन के वश (दिन पूरा होने पर) जन्म लाभ करता है। (२) एक क्षण वह [संसार में] सलग्न होता है तो दूसरे क्षण वह [उससे खिन्न होकर] रोता है, एक क्षण वह मुँद जाता है (मौन हो जाता है) तो दूसरे क्षण वह अभागा हँसने लगता है। (३) [उसका] वपु (शरीर) विशेष रूप से संवर्धित होता है, किन्तु अंत में वह जलाए जाने के डर से डरता है। (४) कच, त्वचा, और दंत [आदि] की रार (झंझटें) छोड़ कर धीर किसी न किसी प्रकार उनसे उबरता है। (५) इसलिए तू [पृथ्वीराज से याचना करने में मान-हानि होगी] इस समस्त मान-भंग [की भावना] को छोड़, क्योंकि जो लक्षित (निर्धारित ?) है वह एक क्षण के लिए नहीं मिटेगा। (६) दूसरे के लिए तू आज नृपति से याचना कर; यदि तू उससे कहे तो [कयमास का शव लेकर] मैं प्राणों को मुक्त करूँ।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. द. मंत। २. धा. अ. फ. ना. द. गर्भ, म. उ. स. गरभ। ३. मो. सचरीय, धा. वास करिय, अ. फ. वस (वसि-फ.) करिवि (करवि—फ.), उ. स. वस करी, ना. वसि करिय, द. वसि करी, म. संभरीय। ४. मो. जंम वासर, अ. फ. जेम मुक्कइ, ना. म. उ. स. जन्म वासुर (वासर—ना.)। ५. मो. विसो लहगु (=लहगउ), उ. स. बस लब्भय, ना. वस लग्गो, म. विस लब्भै, अ. फ. गुरसालई।

(२) १. धा. अ. फ. पत, म. पितु। २. मो. लगि (=लगइ), धा. लगो, ना. लग्गे, अ. फ. नग्गइ, उ. लग्गि, म. लगइ, स. ननग्गि। ३. धा. अ. फ. पन, स. पि, म पितु। ४. मो. रुदि (=रुदइ), धा. रुद, अ. फ. रुदइ, ना. रु॰, उ. स. द. रुदाइ, म. रुदै। ५. मो. मुदि (=मुदइ), ना. मुदै, द. उ. स. मुदय, अ. फ.

रुदइ, म. में यह शब्द नहीं है। ६. अ. फ. धन, म. धितु। ७ मो. हसि (=हसइ) अभगु (=अभगउ), ना. अ. फ. हंस बिहालइ, ना. हसं अभागौ, उ. स. हंस अलभुभय, म. दहि सत गभ।

(३) १. मो. बपु बसेष, धा. बपु बिसेस, ना. द. अ. फ. बपु बिसेप, उ. स. बपु बिसषपु, म. त्रिप त्रिसेप। २. अ. बढियउ, फ. बढियौ, मो. बढियु (=बढियउ), धा. द. उ. स. बढढ्यो, म. बढय। ३. मो. दढि (=ढढि), धा० ढढ्ढे, ना. दहद, उ. म. रुढ्ढ, म. दढ, अ. दढ्ढ, फ. दिठ्ठइ। ४. धा. उ. स. हरयो, म. हरयं, अ. हरियउ, फ. हरयौ।

(४) १. मो. चकित चाद तन रार, धा. किंचित चंद जु रारि, अ. फ. किंचित चाद जुरार (रारि-फ.), ना. द. उ. स. कच सुच (सुव-ना.) दंत जु (ज-ना.), रार म. कवि चंद तु जुर धार। २. धा. अ. फ. ना. उ. स. धार (धारि-फ.)। ३. धा. म. फ. करि। ४. धा. उ. स. उच्चर्यो, अ. फ. उच्चरयउ, म. उधरय, ना. उच्चरयौ।

(५) १. मो. मान मंगु मुकि (=मुकइ) सयल, धा. मनु मगि भूमि मुक्के सयल, अ. फ. मनु सम्म गम्म इकर सयल, द. ना. मन भग मग्ग मुक्कहि सयल, उ. स. मन भग मागग मुकत सयल, म. मान भग सोग मुक्कहि सयल। २. मो. लषित निमिष न मिडूं, धा. अ. फ. लिषत नामिखु जू...इइ (=हि), अ. फ. लिखत (लिषति-फ.) निमषु (निमुषु-फ.) न नष्यिइइ (नुष्यिइइ-फ.), द. ना. लिषत निमेष न नषिय (निषियं-ना.), म. लिषतु निविषइ चुकीय, उ. स. लिषत निमेव न चुकयौ।

(६) १. धा. अ. फ. ना. उ. स. पर कज्जु (परि कज्ज-फ. ना. उ. स.)। २ धा. अ. फ. उ. स. अज्जु। ३. मो. मगू (=मगु=मगउ), धा. मगहि, अ. फ. मगउ, म. मग्गौ, ना. मग, उ. स. मंगौ। ४ मो. कइ (कइ?) धा. अ. फ. सकइ, ना. उ. स. सकै, द. म. सकइ। ५. द. उ. स. न। ६. अ. फ. प्रमान। ७. मो. पमुकहि (=पमुकहि), धा. पमुक्कइइ (=पमुकहि), अ. फ. पमुक्किइइ (=पमुक्किहि), म. द. पमुक्किय, ना. मुकीय, उ. पमुकयौ, स. पमुकयौ, ना. मुदिय।

टिप्पणी (१) गम्म=गम। जंन=जन्न। लइ=लभ्। (२) लग्ग=लग्। मुद्द=मुद्रय्। (३) दह=दाघ। (६) पमुक्क=प्रमुच्।

[३३]

कवित्त— रापि[१] सरणि[२] सहगामिनि[३] मरन मंगल अपुव्व[४] किय। (१)
दरए[१] पेपि[२] दरवान[३] रुक्कि सक्किय[४] न मग्गु दिय। (२)
जागि जुलत[१] प्रथीराज नयन नयनन जब दिष्पउ[२]। (३)
अंतक कर रुधांतु[१] अइगुण[२] त्रिगुन तनु[३] लिप्पउ[४]। (४)
पोलिअउ*[१] वयन सु दयन हिय[२] कवन कम्मु[३] कवि अच्छयउ*[४]। (५)
तब देव कित्ति कमलिय कमल[१] धरणि तरुणि[२] तनु मुक्कयउ*[३]॥ (६)

अर्थ—(१) चन्द ने उस सहगामिनी (पति के शव के साथ भस्म होने वाली कयमास की स्त्री) को शरण में लिया, जिसने अपूर्व मंगल [का शृंगार] किया था। (२) दरवान भय के साथ देखकर उसे रोक न सका, उसने उसे मार्ग दिया। (३) जलते हुए (क्रुद्ध) पृथ्वीराज ने जागकर अपने नेत्रों से [जब उस सहगामिनी स्त्री के] नेत्रों को देखा, (४) तो अंतक (काल) के करों द्वारा रौंधे हुए पकवान के समान उसने उस स्त्री के त्रिगुण तनु को जाना। (५) अत्यन्त दया-पूर्ण हृदय से वह बोला, "हे कवि, कौन-सा कार्य है?" (६) [चन्द ने कहा,] "देव, तुम्हारी कीर्ति [रूपी मतवाले हाथी] ने कमल (कयमास) को कवलित कर लिया। इस लिए धरणी पर यह तरुणी (स्त्री) शरीर त्याग रही है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(२) धा. म. उ. स. ना. द. अ. रहित, फ. रहित। २. धा. म. ना. द. फ. सरन (सरण—ना. द.)। धा. गह गवन, मो. म. सहगवन, फ. महि गउनि। ४. मो. मंगल अपुरव, म. मंगलु जु अपु।

(३) १. मो. दरगा (< दरग), धा. दरग, अं. फ. दाहग, द. दरग, म. दरनि, उ. स. दरनि, म. दरने। मो. पेषि, ना. दिष्य, शेष में 'दिठि'। ३. उ. स. दरबार। ४. धा. सकिय, मो. सुकिय, अ. फ. सवयउ, सबरो, म ना. उ. स. सबरी।

(३) १. धा. जगि जुलन, अ. फ. डिगि उलन, ना. जगि जुगनि, द. उ. स. जगि झलनि (जलनि .), म. जागि जुगनि। २. मो. दिठु (दिठु=दिकाउ), धा. दिठो, ना. द. म. उ. स. दिष्यौ।

(४) १. धा. अंतुक करि वर धम्म, ना. अ. फ. द. अंतक कर वर धम (ध्रम—द., धर्म—ना.), म. क करव धरपंति, उ. स. अति करना रस बीर। २. मो. त्रिगुन (=त्रगुण) त्रियतनु, धा. अहय गुन त्रिय सवि, फ. कम्म त्रिगुन मम, उ. म. करौ संकर रस, म. काम त्रिगुन त्रिय, द. कम्म त्रिगुन त्रि, ना. कर्म्म त्रिगुन द। ३. मो. लिपु (=लिकाउ), धा. लप्पो, ना. म. द. उ. स. लिप्पी।

(५) मा. बोलिउ (=बोलिअउ), धा. बुल्यो, अ. फ. बुल्लियौ, उ. स. बुल्यौ न, ना. बुल्यौ सु, म. बुल्यो जु। मु.(=मु) दयन दिय, धा. तव दीन दुर, ना. म. उ. स. तव दीन दुव (दुअ—स.), द. तव दैन दुव। ३. करन काम, ना. द. कवन वंग, अ. फ. करन काज, उ. स. कनक काम, म. बकविनि काज। ४. मो. अठउ अठउ), ना. द. उ. म. धा. अ. फ. अच्छयो, म. इछियो।

(६) १. धा. अ. फ. सवहि देव किरिय कलिय, ना. द. उ. स. तुम (तव—द. ना.) देव किचि कुहलिय ल, म. सबु देवि किस कहनह विमल। २. ना. धरनि तरनि, उ. स. धरनि धरनि, अ. फ. धरनि तरुनि, म. नेल। ३. मो. तनु मुरकु (=मुरकाउ), धा. तिन मुरक्यो, अ. उ. स. तन मुरकयो, फ. तन मुरकये, ना. मुरकयो, म. रति मुकीयो।

टिप्पणी—(१) अपुरव < अपूर्व। (२) दरग=दर, दर। पेष < प्रेक्ष। मग्गु < मार्ग। (३) जुल < ज्वल। (४) रस=रांवा हुआ, पका। (५) वयन < वचन। कम्म < कर्म। अच्छ < अस्। (६) कलिय < कलित। मुरक < मुच्।

[३४]

दूहा—   बाला मंगइ* वरयो[१] काउ[२] धारं ति[३] भट्ट सरनांईं[४]। (१)
तुव गति कछु मन संभरिवइ*[१] संभरिवइ* त* संभरु राय[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) "कापोत (कपोत के रंग का) वस्त्र धारण करके भट्ट के शरण में आई हुई बाला, हे पृथ्वीराज,]" चन्द ने कहा, "तुम से [अपना] वर (पति) माँग रही है। (२) उसके मन में कुछ तुम्हारी गति है, [अतः] वह, हे राजा, 'साम्भर पति' 'सांभर पति' स्मरण कर रही है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. बाला मगि (=मंगइ) वरयो, धा. अ. फ. बाला मग्गति (मग स—फ.) वरयो, ना. . बालानि (=नइ ?) मग वरयो, उ. स. बालान मंग वरयौ, म. बाला मंगि सवरयो। २. अ. काओ, फ. आ, ना. कायो, म. में नहीं है। ३. म. धारंत। ४. धा. सिर जाइ, द. उ. स. सिरयाई, म. अ. फ. ना. सर थाइ।

(२) १. मो. तुंव गति कछु मन संभरिवि (=संभरिवइ), धा. द. उ. स. ना तुंअ ग स संभरवइ (संभरवै— . स.), अ. फ. ना मुव गति संभरई, म. नि तुव गमि संभरवै, ना. भा तुव गति संभरिवै। २. मो शंभवै न भरराय (< संभरिवै त संभरराय), धा. सभरत राय रायेश (रायेसं—ना.), उ. स. अ. फ. ना. संभरिवै राय यस, म. संभरिय राय रायेस।

टिप्पणी—(१) काउ < कापोत। (२) संभरिवइ < शाकंभरी पति।

[३५]

दोहरा— वछिय[१] किन्ति बोलिय[२] वयन ढिल्ली[३] पुरह[४] नरिंद[५] । (१)
दाहिम्मउ*[१] दाहिर हरो[२] को कढ्ढइ*[३] कवि[४] चंद ॥ (२)

अर्थ—(१) ढिल्लीश्वर (पृथ्वीराज) ने कान्ति की वाछा की, [इस लिए] वह बोला, (२) "दाहिमा (कयमास) दाहिर (गर्त) के द्वारा अपहृत हो चुका है, उसे कौन निकाल सकता है ?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द सशोधित पाठ के है ।

(१) १. धा. वढ्डिय, ए. स. पढ्डि, ना. वढिढ, फ. वढ्ढी, शेष में 'बढिय' । २ धा. अ. फ. ना. द. उ. स. बुलिय, म. बुलै । ३. म. ढिलीय । ४. धा. फ. पुरहि । ५. म. नरिंदु ।

(२) १. मा. दाहिमु (=दाहिमउ), शेष में 'दाहिमो' या 'दाहिम्मौ' । २. धा. म. उ स दाहर जहर, अ फ दाहन गहर, ना. दाहिन गहर । ३. मो. को काढि (=काढइ), धा. को कढ्ढइ, उ. स. म. अ. फ. कढे (<कढि= कढइ), ना. द. को कढ्ढ (कढ्ढे—ना.), द. कढै न बनै । ४. म कवि जिनै ।

टिप्पणी—(१) वछ < वाञ्छ् । किन्ति < कीर्त्ति ।

[३६]

कवित्त— रावन[१] किनि गड्डिग्रउ*[२] क्रोध+ रघुराय+[३] बान+ दिय+ । (१)
बालि+[१] किनि*+[२] गड्डिग्रउ*+[३] सु त[४] सुग्रीव जीव[५] लिय । (२)
चंद किनि× गड्डिग्रउ×*[१] कीग्र* गुरुदार[२] स किल्लउ*[३] । (३)
रवि न पंड[१] गड्डिग्रउ*[२] पुच्छि[३] सह देव[४] पहिल्लउ*[५] । (४)
गड्डउ*[१] न इंदु[२] गोतम[३] रषि[४] वरु[५] सराप[६] छंडिय जिनी[७] । (५)
इह[१] रोस दोस पृथिराज सुनि[२] मम गड्डइ[३] संभरिधनी[४] ॥ (६)

अर्थ—[चंद ने कहा] "(१) रावण को किसने गाड़ा था ? क्रोध में रघुराज (राम) ने उसे बाण ही तो दिया (मारा) था । (२) बालि को किसने गाड़ा था ? उसका सुग्रीव ने जीवन ही तो लिया था । (३) चन्द्रमा को किसने गाड़ा था ? उसने गुरु-पत्नी से केलि की थी । (४) पाण्डु ने [भी] रवि (सूर्य) को नहीं गाड़ा था; हे देव, पहले [के ऐसे प्रसंगों को] सभा से पूछ । (५) इन्द्र को गोतम रिषि ने नहीं गाड़ा था, भले ही जिन्होंने उसे शाप छोड़ा (दिया) था । (६) हे पृथ्वीराज, सुनो, [ऐसे आचरण पर] इतना रोष करना दोष है; कयमास को, हे साँभरपति, मत गाड़ो ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के है ।
+ चिह्नित शब्द द. में नहीं है ।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है ।

(१) १. फ. रावन । २. धा. किन गड्ड्यो, मो. किनि गाडिउ (=गड्डिअउ), अ. म. किनि गड्डियो, शेष में 'किन गड्डयो' (गड्डयौ—फ. उ. ना. स. ।) ३. म. रधुनाथ ।

(२) १. फ. बलि, म. बल, ना. बलि । २. मो. किन, धा. अ. किन, फ. ना. किन, उ. स. सु किन, म. किनइ, ना. किन । ३. मो. गड्डिउ (=गड्डिअउ), फ. गडयौ, शेष सब में 'गड्डयो

गड्डुवौ-फ. ना. उ. म.)। ४. ध. तदिन, म. ग्राय, अ. फ. म सुविय, ना. द. ग्राय लगि । ५. उ. स. जाय, प. जीउ ।

(३) १. मो. चद किनि गड्डिउ (=गड्डिअउ), फ. चद न किन गडायौ, शेष में, 'चद (चदु-म.) किन गड्डयौ (किन्हि ड्डयौ-स.), । २. मो. अगुरुदार, धा. मिया गुरवार, फ गुरुव गुरवार, शेष में 'कियौ गुरुवार'। ३. मो सकिलु (=सकिलउ), धा. संकिल्या, ना. सहिलोय, द. सहिलय, उ. म सहिलह, म. सचिल्लोय, धा. अ. फ. सकिलो ।

(४) १. धा. रवि किन, अ. म. रंभि न पहु, ना. रव ने पहु, फ. उ. स. रवि न पय। २. मो. गड्डिउ (=गड्डिअउ), शेष सब में 'गड्डयौ' (फ. उ. स.ना. गड्डयौ)। ३. अ. फ. तुच , फ. म. पुच्छ,द. उ. म. पुच्छि। ४. मो. सहदेवि, शेष सब में 'सहदेव' (सहिदेव, उ-फ.)। ५. मो. पहिलु (=पहिलउ), धा. अ फ. पहिलो, ना. पहिलोय, म. उ. स. पहिलह, म. पहला, द. पहिलय ।

(५) १. मो. गडु (=गडउ), शेष में 'गड्डयौ' या 'गडया'। २ धा. इद, म. इदु, उ. म. अ. फ. इद। ३. अ. गउलग। ४ धा. म. उ. स दिषद, फ. दिषहि, ना. दिषाय। ५. धा. अ. फ. वदु, मो. वर, उ. म. मित्र। ६. ना. मराधि। ७. ना. छडयौ निनिव, ८ म. छडन जन, म. बन्यौ नीय, अ. फ छंड्यौ ना, ना. छडे जनी ।

(६) १. धा. उ. स. इन, म द इहि, ना. रहि। २. धा. रोम रोम चहुवान हुव । ३. धा फ. नम (नन-फ.) गड्डसि (गडिस-फ.), अ. नम गड्डहि, ना. मम गड्डहि, उ. म. म ते गड्ड, म. मम गडिस। ४. धा म समरे धनाथ, फ समरु धना ।

टिप्पणी— (३) किउ < कैंजि । (४) सह < सभा । (५) इद < इद्र। रवि < ऋपि।

[३७]

दोहरा— तउ* अप्पउ कयमास*[१] तु हि[२] मिटिहि उरह[३] अदेसु । (१)
दिप्पावइ[१] पहु पंगुर[२] जइ[३] जयचद नरेसु ॥ (२)

अर्थ—[पृथ्वीराज ने कहा] "(१) तुझे [कयमास को] तब अर्पित करूँगा और तभी [मेरे] हृदय का अंदेशा मिटेगा, (२) जब तू पंगुल प्रभु जयचंद नरेश को मुझे दिखावेगा।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो तु अपु किमास (= तउ अप्पउ कयमास), धा तउ अप्पउ कैवास, उ स तौ अप्पौ कैमास, म तौ अप्पु (=अप्पउ) कैमास, फ तौ थतौ कैवास, अ तौ अप्पौ कैवास, द तौ अप्पौ कैमास। २ धा अ म ना तुहि, मा फ तोहि (<तुहि)। ३ धा मिट्टइ उरहि, अ फ मिट्टहि उर, ना जो मरहि उर, म उ स नो (जौ-म) गर्द।

(२) १ धा दिप्पावइ, मो दिपावि (=दिपावइ), म देपावै, ना उ स दिष्यावहि। २ ध प पंगुरो, अ ना उ स पहु पंगुरौ, म पहु पंगरौ, फ पहु पंगुरउ। ३ उ स. तौ। मो जु (=जउ), धा जइ, द उ स जै, अ फ जई, ना म जौ।

टिप्पणी—(१) अप्प < अर्पय। अंदेस < अंदेशा (फा०)। (२) पहु < प्रभु। जउ < यदा।

[३८]

दोहरा— पिन त मनहि[१] धीरज घरहु[२] धरि दिप्पत[३] तिहि[४] काल । (१)
अति बरबर बोलइ* नहीं[१] सु किम[२] पालइ*[३] भुआल[४] ॥ (२)

अर्थ—[चंद ने कहा,] (१) "[इस] क्षण तो मन में धैर्य रक्खो, इस समय तुम्हारा शत्रु देख रहा है—तुम्हारे कन्नौज-आक्रमण की बात जान गया है। (२) बहुत बर्बर [होकर] न बोल, बता कि तू, हे भूपाल, किस प्रकार [कन्नौज] चलेगा।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. छिनकु मनुहि, अ. छिनकु मनह, फ. छिनक मनहि, द. ना. षिनुकु(षिनक-ना. न मन, म. षिनक तम्ह, उ. स. पिनक न मन। २. धा. रहै, द. उ स. धरहि, अ. करहु, फ. करौ। मो० अर दोर्पति, धा. ना. अरि दिप्पत, अ. म. स. अरि दिप्पित, फ. उ. स. अरि दिप्पन। ४. धा. तिहि, स. तिन, उ. तति।

(२) १. मो. अति बरबर बोलि (= बोलइ) नहीं, धा. अति बलि रं बल ना नहीं, अ. अति बरबर (बरवर-फ.) बुलहु नही, ना. द. अति बरबर बुलै नहीं, म. अति बरबर बुल्यौ नहि उ. स. अति बरबर बुलै नहीं। २. धा० किय, अ. फ. किम, म. सो किम। ३. मो. चालि (= चाल धा. चलइ, फ. चलौह, ना. चलिहै, द. चलहै, अ. म. उ. स. चलहु। ४. अ. फ. ना. भूपाल, द. भोप म. भुवाल।

टिप्पणी—(१) षिन < क्षण।

[२९]

मुडिल—　चलउं[१] भट्ट[२] सेवग होइ सथ्थहं[३] । (१)
जउ* बोलउं*[१] त हथ्थु तुह मथ्थह[२] ॥ (२)
जबह राइ जानइ*[१] संमुह हुअ[२] । (३)
तब अंगमउं*[१] समर दुहुनि भुअ[२] ॥ (४)

अर्थ—[पृथ्वीराज ने कहा,] "(१) हे भट्ट (चंद), मैं तुम्हारे साथ सेवक हो (ब कर चलूँगा। (२) यदि [उस समय मैं कुछ] बोलूँ तो मेरा हाथ तुम्हारे मस्तक पर है—मैं तुम सौगन्ध खाता हूँ। (३) जभी राजा (जयचंद) मुझे सम्मुख हुआ जानेगा [और युद्ध करेगा (४) तब मैं दोनों भुजाओं पर युद्ध ओढूँगा।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) धा. चलौं, मो० चलु (=चलउ), फ. चलउ, द. चल्यौ, अ. चलौं, ना. चलौ, उ. स चलौं। धा. अ. फ. चंद। ३. धा. अ. फ. सत्थह सेवग (सेवक-अ. फ.) हुअ (हुव-अ. फ.), द. सेवक हुइ सथ

(२) १. मो. जु (=जउ) बोल (< बोलु=बोलउ), धा. जो बुल्लौं, अ. फ. जौ बुलउं, द. अइ जौ ह. अह जौ बोलूं, ना. जौ बोलौ, स. जौ बोलू। २ धा. तउ अरिय हुल भुव, अ. फ. त अथ्थि हुइह द. त हथ्थ तुम मथ्थह, ना. तो हथ तुव मथ्थह, उ. स. तो हथ तुन मथ्थह।

(३) १. मो. जबह राइ जानि (=जानइ), धा. जब उह राय जानि, अ. फ. जब यह जानि मोह जब जानूह मोह, ना. जब वासौं जानि हो, स. जबह जानि। २. धा. समुहौ हुअ, मो. संमह हुअ, अ. फ संमुह हुइ, ना. सुमुह हुव।

(४) १. मो. अंगमु= (अंगाउ), धा. अ. अंगवउ, फ. अंगउ, द. तब अंगवुं, उ. स. तब अंग करौं। २. मो. त समरि दुह भूअ, धा. समर सम्हां हुअ, उ. स. सम्मर दोउ भुग, अ. समर सह निहर, ना. समर दुर हरि भुव, फ. समर निहर भूव, द. समर दुहुनि भुव।

म. में यह रसावनी है और पाठ यह है :—

चल्यौ चंदकवि मरद्द सेवक सथ सूव। जो तुलति मुप वन सु तुलति कथ भूव।
जो वस राउ सु जानि सम सम्दी दुयौ। परिहा तो अंग सम बल दपिह नृव भूह लयौ।

टिप्पणी—(१) सेवग < सेवक। (३) संमुह < संमुख।(४) भुअ < भुजा।

[४०]

दोहरा— दोइ[१] कंठ लग्गिय गहन[२] नयनह जल गल न्हांनु[३]। (१)
अब जीवन[१] वंछिहि[२] अधिक कहि[३] कवि[×] कोन[४] सयानु[५]॥ (२)

अर्थ—(१) दोनों (चंद तथा पृथ्वीराज) कस कर गले मिले और नेत्रों के गिरते हुए जल से दोनों ने स्नान किया। (२) [पृथ्वीराज ने कहा,] "हे कवि तुम्हीं कहो, अब [जयचंद के द्वारा अपमानित होने पर] कोन समझदार व्यक्ति अधिक जीवन की वाञ्छा करेगा ?"

पाठांतर—× चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. मो. दोइ, धा अ. फ. दुवे (<दुवइ ?), ना. दोऊ, द. दोउ, म. दुहुं, उ. स. दोय। २. धा. लागी गहनु, अ. लग्गे गहन फ. लग्गो गहन, ना. लग्गिय दमन, उ. म. लग्गिय अगनि, म. लगा गहन। ३. मो. नयनह जल गिल न्हान्ह, धा. नयन जलग्गुल न्हानु, अ. फ. नयन गलग्गल न्हानु, ना. नयन जग्गि गल नान, उ. स. नयन जलग्गि न्हान, म. नयन जलज हान।

(२) १. स. अंह जीव। २. मो. वंछिहि, धा. अ. फ. बंछहि, ना. म. बछीय, उ. स. बंछै। ३, मो. किहि, अ. फ. कहि, द. कहि। ४. धा. कवनु फ. म. कौनु, ना. कौन। ५. फ. म. सयान।

टिप्पणी— (२) सयानु < सज्ञान।

[४१]

अडिल— अब उपाउ[×१] सुमझउ[*२] एक[३] संचउ[*४]। (१)
सुनि कवि मरनु[१] टरइ[*२] नवि[३] रंच्यउ[*४]। (२)
समर[१] तिथ्थ[२] गंगह[३] जल पंच्यउ[*४]। (३)
अवसरि[१] अब स[२] पंग धर[३] नंच्यउ[*४]॥ (४)

अर्थ—[पृथ्वीराज ने कहा,] "(१) अब एक ऐसा उपाय सूझ गया है। (२) हे कवि, सुन; [विधाता द्वारा रचा हुआ] मरना रंच मात्र भी नहीं टलता है। (३) रण-तीर्थ तथा गंगा-जल ने खींचा है—वे हमें बुला रहे हैं। (४) [इस] अवसर पर हम पंग (कन्नौज राज) की भूमि पर नृत्य करें—रण-कौशल प्रदर्शित करें।"

* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

पाठांतर—× चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. म. आव उपाव, फ. अब उपाउ। २. धा सुझ्यो, अ. सुझझौ, फ. सुरझ, ना द सुज्झौ,

उ. स. सनइयौ, म. सइयौ। ३. धा. अ. फ. म. इक, उ. स. इइ । ४. मो. मचु (< संचु = संचउ') धा. आ. उ. स. संचौ, ना. सच्यौ, द. फ. मंच्यौ, म. संचर।

(२) १. म. तुसनि मरनि । २. मो. टरि (= टरइ), धा. ना. टर, उ. स. ना. अ. फ. मिटै। ३. धा. अ. फ. नहि, उ स. नइ, म. नहीं, म. नन। ४. मो. रंच्यु (=रंच्यउ), धा. अ. फ. रंचौ, ना. रच्यौ, फ. द. रंच्यौ, म. नर।

(३) १. मो. समरि, म. चौसुर, शेष में 'समर'। २. म. रति। ३. मो. गंगद, शेष में 'गंगा'। ४. मो. पंच्यु (=पंच्यउ), धा. उ. स. पंचौ, ना. म. अ. फ. पच्यौ।

(४) १. मो. आविसरि, अ. अवसर। २. अ. उ. ना. अवसि, फ. अवस। ३. मो. गंगधर, धा. द. पंगु भिइ, ना. पंग भिइ, अ. पंगु भृहि, फ. उ. स. पंग ग्रह, म. पग तह। ४. मो. नंच्यु (= नच्यउ) धा. उ. स. नंच्यौ, अ. फ. म. नंच्यौ।

टिप्पणी—(३) तिथ्थ < तीर्थ।

[४२]

दोहरा— *आनंदउ[१] कवि चंद जिय[२] नृप किय[३] संच विचार[४]। (१)*
मन गरुअर[१] सिर हरुअ हइ[२] जीवन[३]हरुअ सिरभार[४] ॥ (२)*

अर्थ—(१) कवि चंद जी में आनंदित हुआ कि राजा (पृथ्वीराज) ने यह एक सच्चा विचार किया। (२) [उसने जान लिया कि इस समय पृथ्वीराज केलिए] मन [का संकल्प] गुरुतर है और उसकी तुलना में सिर हलका हो रहा है, जीवन हलका—महत्वहीन—हो रहा है, और [कन्धों पर] सिर भारी हो रहा है—उसको उतार फेंकने की उत्कण्ठा हो रही है।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. मो. आनंदु (= आनंदउ), धा. आनंदित, अ. फ. आनंद्यउ, द. अनंदयौ, ना. उ. स. आनंदयौ, म. अंनदो। २. धा. कवि कव्वयनु, अ. फ. कवि सुनि वयनु, म. कवि वयंन त्रिपु, ना. कवि इक वयन, उ. स. कवि के वयन। ३. म. कोगउ। ४. मो. राच विचार, म. संच विहार।

(२) १. धा. सरन (< मरन) गरुअ, अ. उ. म. ना. द. मरन गरुअ, फ. मरन मगरु, म. मरन गिरु। २. धा. सिर हरुव हे, मो. सिर हरुअ हि (= हइ), अ. ना. द. उ. स. सिर हरुअ है (हे- द.), फ. वासर हरू, म. सिर पहुव है। ३. धा. जावन (< जीवन), उ. स. जिवन, फ. जीउन, म. जीवनु। ४. धा. हरु सिर भार, फ. तुव सिर भार, ना. हर सिर भार, म. गिरु सिरु भार, उ. हरुअ सि भार।

टिप्पणी—(१) संच < सत्य। (२) गरुअर < गुरुतर। हरुअ < लघुक।

[४३]

रासा— *अप्पउ*[१] कवि कयमा.।*[२] सतीय सय लै[३] संचरिउ[४]। (१)*
मरन लग्ग[१] बिधि[२] हथ्थु तथ्थु कवि[३] उचरिउ[४]। (२)
धरि[१] वरु[२] पंगु प्रगट्ट[३] धरु थह[४] पिहंडिहइ[५]। (३)*
इत उपहास[१] बिलास न[२] प्रान पमूकिहइ[३] ॥ (४)*

अर्थ—(१) कवि ने कयमास [के शव] को उसकी स्त्री को अर्पित किया, और सती सत

लेकर [चिताग्नि में] सचरित हुई। (२) तब कवि ने कहा, "मरण और लग्न (विवाह) विधाता के हाथ में होते हैं। (३) हम भले ही पग धरा—कन्नौजराज की भूमि—पर प्रकट होंगे और अरि-भट्ट—शत्रु सेना—को विखंडित करेंगे, (४) वहाँ रहकर उपहास सहन करते हुए और विलासों में हम अपने प्राणों को नहीं छोड़ेंगे।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. आपु (= आपउ), धा अप्पिउ, द. ना. अप्पौ, म अप्पौ, अ अप्पउ, फ. आपौ। २. मो कवि किमास (= कयमास), धा. कवि कैंबास, ना. म. कवि कैमास, ॰. म पढ़ कैमास। ३. धा. ना. द. उ. स सतु (सत – ना. उ. स. म.), अ. फ. सत। ४ धा. सचरिउ, मो सचर्यु (< सचरयउ), उ. स. अ फ द. सचरयौ (संचरयौ–अ), ना. सचयौ, मा चारयौ।

(२) १. धा. अ. फ म. उ. स. ना द. लगन। २. फ. विध। ३. मो. तब्बु कवि, म त कवि, ना. में पिछला शब्द नहीं है। ४ धा. उच्चरिउ, मो. उचर्यु (< उचर्यउ), अ. फ उच्चरयो, म उच्चारयो, ना. उचयो।

(३) मो. धर, धा. धरि, शेष में 'धर'। २. म. व, उ. स. द भर। ३. मो. पग प्रगुट, ना. द. पग प्रगटि, म. पंग रूप। ४. धा॰ त छट्ट, म. प्रगट, उ म. रुट्ठ, अ. फ तुट्टक, ना. हिडड, म. तु पढि। ५. मो. विदविड्डु, धा. विहडियउ, अ. व विहठिहै, फ. विहडहहि, उ. स. विहडिहाँ, ना द विहडिहै, म. विहडिहै।

(४) १. धा. इति उपहास, फ. इन उपहास, अ. उ. ग इन उपहास, म. परिहा तो उपहास, ना. इतौपहास। २. फ विलास ति, म. ना. विलासत। ३. मो ?ान पमूकहि (= पमूकहर), धा. प्रान न छडियउ, ना अ. प्रान न छडिहै, फ. प्रान न छण्डियहि, द. प्रान पमुकिहै, उ. स. प्रानय मडिहों, म. प्रान प्रमुकिहै।

टिप्पणी—(१) आप < अर्पय्। सय < सत्र। (२) लग्ग < लग्न। तब्ब < तत्र। (३) विहड < वि+घट्य। (४) पमुक < प्र+मुच्।

४. पृथ्वीराज का कन्नौज-गमन

[१]

कवित्त— कनवज्जिय[1] जयचंद[2] चलउ*[3] ढिल्लियसुर[4] पेषन[5] । (१)
चंद विरदिया साथि बहुत[1] सामंत[2] सूर घन । (२)
चहूआंन राठवर जांति पुंडीर गुहिल्ला[1] । (३)
वडगूजर पांमार कुरंभ जांगरा रोहिल्ला[1] । (४)
इत्ते[1] सहित्त[2] भुअपति[3] चलउ*[4] उडी रेन किवउ नुभउ*[5] । (५)
एकु एकु[1] लष्प वर लष्पवइ*[2] चले[3] सथ्थ[4] रजपुत्त[5] सउ*[6] ।। (६)

अर्थ—(१) कन्नौज में जयचंद को देखने के लिए दिल्लीश्वर (पृथ्वीराज) चल पड़ा। (२) विरुदिआ (विरुद कहने वाला) चंद साथ में था और बहुत से सामन्त तथा अनेक शूर थे। (३) वे चहुआन, राठौर, पुंडीर, गुहिल, (४) वड़ गूजर, पंवार, कूरंभ (कछवाहा), जाँगरा तथा रोहिल [क्षत्रिय] थे। (५) भूपति (पृथ्वीराज) इतनों के साथ चल पड़ा; [उस प्रयाण से] रेणु उड़ी और उससे नभ आकीर्ण (आच्छादित) हो गया। (६) [जिनमें से] एक-एक [एक-एक] लाख का बल दिखाता था (?), ऐसे सौ राजपूत साथ चले।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. कनविज्जय, धा. कनवजदे (< कनवजदि), द. कनवजदी, अ. फ. म. उ. स. कनवज्जह। २. फ. जइचंद। ३. मो. चलु (=चलउ), धा. द. चल्यो, अ. फ. ग. ना. उ. स. चल्यौ। ४. मो. दिल्लियसुर, धा. दिल्लेसुर (< दिल्लिसुर), अ. फ. ढिल्लिय सुर, उ. स. ना. ग. दिल्लीपति, द. द. ढिल्लियपति। ५. धा. अ. दिष्यन (=दिष्षन), द. दक्खु, द. ना. म. उ. स. पिष्यन (=पिष्पन)।

(२) १. धा. चंद बरदिया साथ बहुत, अ. फ. सथ्थ चंद बरदाइ बहुत, द. ना. म. उ. स. चंद बरद्दिय (द बिरदीयो, ना. बिद्दद्द, ग. बरदीया) तथ्थ सथ्थ। २. अ. फ. सावंत।

(३) १. धा. मो. ना. चाहुवान (चहूआन–मो.) राठौर (राठवर–मो., राठौर–ना.) जाति पुंडीर (जाति पंडोर–मो.) गुहिलय (गहिला–मो, गुहिलइ–ना.), अ. फ. चाहुवान रोठाड (राठौर–फ.) जावौ (जाउ–फ.) पुंडरी गहिला, द. म. उ. स. चाहुआन कूरंभ गौर (गौड–द.) गार्जा बडगुज्जर।

(४) १. धा. वड गुज्जर पांवर चलै जांगरा सुद्दलय, मो. वड गूजर पांमार कुरम जांगरा रोहिल्ला, अ. फ. बड गुज्जर पावार चले कूरंभ मुहिल्ला, द. म. उ. स. जादव (जदौं–द.) रा रघुवंस पार पुंडीर ति पष्पर, ना. बड गुज्जर खीची पमार कूरंभ मुहिलह।

(५) १. मो. इत्ते, धा. कूरंम, अ. फ. ना. इत्तनें, म इतनिज। २. मो. सहस। ३. धा. ना. द. म. उ. स. भूपति। ४. धा. चल्यो, मो. चलु (=चलउ), अ. फ. म. चल्यौ, उ. स. छल्यौ। ५. धा. उड़िय रेणु किन्हो नमो, मो. उडी रैन किन (<किंनु=किनइ) नुभू (=नुभउ), अ. फ उडी रैनु किनौ (रैन कीनौ–फ.) नमौ, ना. म. उ. स. उडी रैन (रेणु–ना.) छिनौ (ठीनौ–म. उ. स.) नमौ (नमोह–म.)।

(६) १. धा. म. इकं इक्क, अ. फ. ना. इक इक, ना. लष्यवर, द. उ. स. इक लष्व। २. धा. वीर आगमह, मो. वर लपवि (=लष्यवइ), अ. फ. वर लिष्यिये, म. उ. स. वर लपीये, द. वर लषियें। ३. धा. अ. फ. लियो, ना. लयें, म. उ. स चले, द. चढे। ४. धा. मो. अ. फ. साथ, द. ना. म. उ. स. मध्य। ५. मो. रचपुत्त, म. रजपूत। ६. धा. मो, मो सु (=सउ), अ. फ. ना. सौ, म. सौंह।

टिप्पणी—(१) पेख < पेक्ख < प्र+ईक्ष्=देखना, अवलोकन करना। (३) जाति < ज्ञाति। (५) किन्न < किण्ण < कीर्ण।

[२]

दोहरा— राज सगुन संमुह हुअ[१] ति ध्रुर[२] तन सिंघ[३] दहार। (१)
मृग दक्खिन[१] पिन पिन[२] खुरहि[३] सु चरइ* न[४] संभरिवार[५]॥ (२)

अर्थ—[चंद ने कहा,] "(१) हे राजा, शकुन सामने ही हुआ है—कि ध्रुव [की दिशा—उत्तर] की ओर [मुख कर] सिंह दहाड़ रहा है; (२) मृग दक्षिण [दाहिनी ओर] क्षण-क्षण [भूमि] खूद रहा (खुर से खंडित कर रहा) है, किंतु हे साँभरवाल (पृथ्वीराज), वह चर नहीं रहा है।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. राज सगुन साम्हो हुवो, मो. राज सगुन समह (< संमुह) हुअ ति, अ. फ. राज सकुन सम्मुह हुवौ (<हुवउ–फ.), ना. राज सगुन समुह हुव, म. उ. स. राज सगुन सम्मुह हुअ। २. धा. ध्रुवनर, ना. अ. फ. ध्रुवतर, द. ध्रुवतन, म. उ. स. ध्रुअतन। ३. मो. संघ (< स्यघ), धा. ना. द. म. उ. स. सिंघ, अ. फ. सिंह।

(२) १. मो. दसन, धा. दक्खिण, अ. दक्षिन, फ. दिक्षिन, म. दषिन, द. ना. उ. स. दक्खिन। २. धा. खिणि खिणि, मो. म. षिनषिन, उ. स. छिन छिन, ना. षिनु, अ. दक्षिन, फ. दक्खिन। ३. धा. खुरति, मो. रहै, अ. परह, फ. परहि, ना. उ. स. षुरहि, म. षुरै। ४. धा. चरहि न, मो. सु चरि (=चरइ) न, अ. फ. चलहि न, ना. द. चलहि (चलहि–ना.) त, म. चलं न, उ. स. चलहि त। ५. धा. समरवारि, ना. संभरवारि।

टिप्पणी—(१) ध्रुर < ध्रुव। (२) खुर < खुद्द < खुद् (१)=खंडित करना, तोड़ना (तुल० अवधी 'खुरिहारब')।

[३]

दोहरा— सुनत[१] सीस[२] सारस सबद उदय[३] सबद्दल[४] भांन[५]। (१)
परन[१] भंजि[२] प्रतिहार जिह[३] करिहि[४] त कज्ज[५] प्रमांन[६]॥ (२)

नृप अमिग[१] जानि[२] पहु[३] पुब्ब देस । (१५)
अरि नयर[१] नीर[२] उत्तर कहेस ॥[३](१६)

अर्थ—(१) [प्रभात होता देखकर] नरेश (पृथ्वीराज) के चित्त की चिन्ता उतर गई। (२) शूर-गण [युद्ध में मर कर] सुरलोक देश (स्वर्ग) [प्राप्ति] की बातें कर रहे थे। (३) एक कह रहा था कि भले ही इन्द्र का भी राज्य होगा, तो वह उसे ले (जीत) लेगा, (४) उसका यश, जीवन, और मरण पृथ्वीराज के कार्य के लिए होगा। (५) शूर गण स्नान करके दान कर रहे थे, (६) और धौंसे की ध्वनि सुन-सुन कर शूर-गण बल भर रहे थे—उत्साहित हो रहे थे। (७) वे शर्वरी (रात्रि) के लिए शल्य रूप भानु [के उदय] को [उसी प्रकार] वाञ्छा कर रहे थे (८) जैसे बालिका (अल्पवयस्का) वधू रात्रि के अन्त की वाञ्छा करती है। (९) दैत्य-गुरु (शुक्र) उदित हो गए थे और मृगशिरा नक्षत्र अब मुदित [दिखाई पड़ रहा] था, (१०) तारक-गण झिलमल-झलमल कर उठे और तरु के पत्ते हिल उठे। (११) इंदु की किरणें मन्द दीख पड़ने लगी थीं, (१२) [वह ऐसा लगने लगा था] जैसे उद्यम-हीन नृपति हो। (१३) पौ फट गया और शर्वरी—रात—का शरीर क्षीण हो गया, (१४) [आकाश का] स्वर्ण [वर्ण] जल के मार्ग (प्रवाह) में झलकता हुआ दिखाई पड़ने लगा। (१५) नृप पृथ्वीराज [पंग—] प्रभु का देश पूर्व [दिशा में] जान कर भटक गया था, (१६) [जब कि लोगों ने] बताया कि उसके अरि (शत्रु) जयचंद का नगर निकट ही उत्तर [की ओर] था।

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. में इसके पहले और है (स. का पाठ):—

चंपी सु भोमि कनवज्ज रार। दस गुनी सूर वर चढ़त भार।
उच्चर्‌यौ भट्ट कवि चंद सथ्य। दीसई राज रवि सम समथ्थ।
जिम जिम सुनिकट कनवज्जआय। डरपहि न सूर तिम तिम दुराय।
ओपंम चंद जंपी सुराय। रज बंधि पीय संगम दिखाय।

२. मो. च्यंति (=चिन्ति), अ. फ. ना. उ. स. चित्त। ३. मो. च्यंता (=चिंता), शेष में 'चिंता'।

(२) १. मो. वितरिहि, धा. वत्तरहि, अ. ना. वित्तरहिं, फ. वित्तरह, म. वेतरहि, उ. स. बेतरहि।

(३) १. धा. ना. अ. फ. उ. स. इक, मो. एक, म. इह। २. मो. कहि (=कहइ), धा. अ. फ. कहहिं, ना. कहै, म. उ. स. कहत। ३. मो. लेहहि (<लेहइह), धा. अ. लेहि वर, फ. लेइ वरु, ना. म. द. उ. स. लेहि (लेहि—ना.) बल। ४. धा. इंद्र, द. चन्द, म. उ. स. इन्द्र।

(४) १. धा. जस जिवन, अ. फ. म. उ. स. जस जियन (जीयन—म.), ना. सज जीय। २. धा. प्रिथिराज, म. प्रिथीराज।

(५) १. धा. एक, अ. फ. ना. इक, द. म. उ. स. कर। २. मो. करिहिं, शेष में 'करहिं'। ३. मो. धा. असनान, फ. सनान, ना. स्नान।

(६) १. मो. धा. बल, अ. फ. ना. म. उ. स. वर। २. मो. भरिहि, ना. भिरहिं, स. भरत। ३. धा. सुणि सुणि निसान, ना. सुनि सुनि निसान, म. सुनि रुमिसान।

(७) १. ना. श्ब्वरिय। २. अ. फ. सल। ३. मो. फ. वंछि (=वंछइ)। ४. मो. मांन, धा. नि भान, अ. फ. ति भान, ना. न मान।

(८) १. धा. बुधु, ना. द. म. उ. स. मुध, ज. मधु। २. धा. केम, ना. फ. म. उ. स. जेम, अ. जेमि। ३. मो. वंछिहि (<वंछहि), धा. मंगइ, अ. मंगहि, फ. मंगे, ना. मग्गहि, म. उ. स. इच्छत, द. इच्छहि। ४. धा. बिधान।

(९) १. मो. गए। २. धा. दयत (=दयत), म. उ. स. दयत, ना. देत। ३. धा. उदित, फ. सुदित (<सुदित)। ४. अ. फ. अत्त।

(१०) धा. झिलिमिलिंग, ना. झलमलंग, द. झलमिलगि। २. धा. तरत्तिलिंग, मो. अ. ना. तरहलिंग, फ. तहलग्ग। ३. फ. पत्ति, द. पान।

(११) १. धा. दिखइ, अ. दिख्यिये, फ. दिप्पाय, ना. दिप्पीयँ, द दिपयहि, उ. स. देषियत, म. देषयइ। २. अ. फ. चंद, म. इंद्र। ३. धा. किरणीन, द. किरणीन, अ. फ. किरनीन, उ. स. ना. किरणानि, म. ज्यु किरन।

(१२) १. धा. उद्दिने, अ. म. उ. स. ना. उद्दिमइ, फ. उद्दिमहि। २. धा. जिमि, ना. जनु। ३. धा. निपत्ति वंद। ४. मो. के अतिरिक्त शेष सभी में यहाँ और है (स. का पाठ):—

धरहरिग सत सुर मंद नंद। सम्पज्यो जुध्ध आवध्ध दंद।

[यह पंक्ति स्पष्ट ही प्रक्षिप्त है क्योंकि किसी भी पाठ के अनुसार यहाँ युद्ध का प्रसंग नहीं है।]

(१३) १. धा. पह, अ. म. उ. स. पहु, ना. फुह, फ. सुपहि। २. फ. सव्वरि, म. सरवर, ना. सर्वरि।

(१४) १. धा. अ. म. उ. स. ना. झलकंत, २. अ. कत, फ. कति, ना. द. म. उ. स. कलस। ३. धा. दिप्पियग नीर, अ. दिप्पिय गनीर, फ. दिप्पिय गनीर, ना. दिपि मगन नीर, द. म. उ. स. दिपि गमन नीर। ४. म. उ. स. में यहाँ और है (स. का पाठ):—

विरहीन रैनि छुट्टिमित मान। नष्षंत तोरि भूवन प्रमान।
असुवंत अंसु उस्सास आइ। विरहीन कंत चंदहु बुलाइ।
पइ फट्टि घट्टि भूवनन बाल। दिसि रत्त दरसि दरसो कसाल।
मिप भमि गंग सम पुब्ब देस। आरत्र अरिन उत्तर नरेस।

[किन्तु अंतिम चरण म. उ. स. में पुनः अपने स्थान पर भी यथा अन्य प्रतियों में आया है, इसलिए उनमें पुनरावृत्ति स्पष्ट है।]

(१५) १. मो. भ्रमिग। २. म. लंमि, धा. कहिग। ३. मो. पुहु, ना. फ. पुह, उ. स. इह।

(१६) १. धा. अरिम नीर, अ. फ. अरि नेर। २. म. जांनि। ३. मो. के अतिरिक्त सभी में यहाँ और है:—

बरसित हिंदु कमवज्ज राज। तहं न्हइयउ सुनें धरि धर्म चाउ।

[यह पंक्ति स्पष्ट ही प्रक्षिप्त है, क्योंकि इसकी कोई संगति नहीं प्रतीत होती है और यह कवि शृंखला का भी अतिक्रमण करती है।]

टिप्पणी—(१) यत्तरहिं : तुल० वत्तराहिं। (२) इंद < इंद्र। (५) साल < शल्य। (९) दरत < दैत्य। इत्त < अत्र। (१०) पत्त < पत्र। (१४) गम=मार्ग, रास्ता। (१५) पहु < प्रभु। (१६) नीर < नियर < निकट।

[८]

दोहरा— रवि सम्मुह तमकउ* उवइ*[१] है तुहि[२] मग्ग समुज्झ[३]। (१)
मुल्लि भट्ट[१] पुव्वहि[२] वलउ*[३] कहि[४] उत्तर कनवज्ज॥ (२)

अर्थ—[पृथ्वीराज ने चंद से कहा,] "(१) रवि [हमारे] सम्मुख तमतमाता हुआ उदित हो रहा है, और तेरा मार्ग समझा (जाना) हुआ है। (२) हे भट्ट, मैं भूल कर पूर्व की ओर मुड़ पड़ा, जब कि कन्नौज उत्तर में कहा जाता है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. समूह तमकू (=नमकउ) उवि (=उवइ), धा. तुम्हः समुद्द, उइइ, अ. तुम्ह हे समुद्दि उयौ, फ. समहि संमुह उयौ, उ. स. तंमुह संमुह उयौ, म. तंमू संमुह उयौ, ना. सुइ सम्मुह उदयो। २. मो. हे तुहि, धा. इह तुम्ह, अ. फ. ना. हे तुहि, ड. म. इह हे कछु। ३. मो. मग्ग समूह, फ. मग्ग समुच्च, म. मग समह, ना. संग्गल सुज्ज।

(२) १. मो. भुलि मट्ट, धा. भुलि मट्टि। २. मो. पूयिहि, अ. फ. ना. पूज्यह। ३. मो. चल (=चलउ), धा. द. चल्यो, अ. फ. मल्यौ, म. उ. स. चलिय, ना. चल्यौ। ४. मो. किहि, फ. कह।

टिप्पणी—(१) उवय < उदय। (२) वल < वल्=मुड़ना।

[९]

दोहरा— कंचन फुल्लिग*[१] अर्क बन[२] रतन जि[३] किरन[४] प्रकार[५]। (१)
इह कलस[१] जयचंद गिह[२] सुनि सुनि[३] संभरिवार[४] ॥ (२)

अर्थ—[यह सुनकर चंद ने कहा,] "(१) जिसका कंचन सूर्य वर्ण का हो कर प्रफुल्लित हो रहा है, जिसके रत्न किरणों की भाँति हो रहे हैं, (२) ऐसा वह कलश जयचंद के गृह का है, हे साँभरवाल (साँभर पति), सुनो।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है

(१) १. धा फून्ना, मो. ड. फूलि (=फुलि), अ. फ. फुल्लिग, म. फूलिग, स. फूलिज। २ अ. फ सम। ३. धा. रतने, अ. रतननि, फ. तरनन, ध. तरंन, उ. स. रतन। ४ धा. किरण, ना. किन्न, म. किरंन। ५. धा. प्रहार, उ. स. प्रसार, म. प्रसारि।

(२) १. धा. उयै कलस, अ. फ. उदय कलस, ना. द. ड. स. सुवै कलस, म. सुचे कलस। २. मो. ग्रह, द. म. उ. म. घर। ३. धा. अ. फ. ना. म. ड. स. संभरि। ४. धा. सिंभरि वार।

टिप्पणी—(१) ज < यः।

[१०]

भुजंग प्रयात— कहौं[१] संभरेनाथ ठाढे[२] गयंदा। (१)
सुतं दिष्पिहीं[१]* रूव[२] अयरावइंदा[३]। (२)
कहौं फेरवै[१] भूप+ आछे[२] तुरंगा। (३)
मनुं[१] दिष्पियत वाय लग्गे[२] कुरंगा।×(४)
कहौं माल भूषदंड[१] ते सरोह[२] साधइ[३]*।×(५)
कहौं पिष्पि पायक[१] बानैत[२] बांधइ*[३]।×(६)
कहौं विप्र ते उट्ठि ते[१] प्रात चल्ले। (७)
मनु[१] देवता सेव ता मग्ग[२] भुल्ले। (८)
कहौं यग्य याज्यंति ते राज राजा[१]। (९)
कहौं देवदेवा त[१] नित्यान साजा[२]। (१०)

कहों तापसा[१] तप्प[२] ते[३] ध्यान लग्गे[४] । (११)
जिने[१] देषित[२] रूप संसार भग्गे[३] । (१२)
कहों षोडसा राय[१] अप्पंति[२] दानं । (१३)
कहों हेम सामान[१] प्रथमी[२] प्रमानं ।[३] (१४)
एतने चरित्र ते गंग[१] तीरे । (१५)
सोयं[१] देषते[२] पाप नट्ठे[३] सरीरे ॥ (१६)

अर्थ—[चंद ने कहा,] (१) "हे साँभरपति (पृथ्वीराज), कहीं पर [जो] गजेन्द्र खड़े हैं, (२) वे तो ऐरावतेन्द्र के रूप (समान) दिखाई पड़ रहे हैं। (३) कहीं राजागण अच्छे घोड़ों को घुमा रहे हैं, (४) जो ऐसे लगते हैं मानो कुरंग (मृग) [भागते हुए] वायु से लग (मिल) रहे हों। (५) कहीं पर मल्ल भुज-दण्डों से सरों साध रहे हैं, (६) कहीं पर पदातिक बाने बाँधे—या बाँधते-हुए दिखाई पड़ रहे हैं। (७) कहीं पर विप्रगण उठकर प्रातः काल ही चल पड़े हैं, (८) मानो देव गण सेवा से आकृष्ट होकर [स्वर्ग का] मार्ग भूल रहे हों। (९) कहीं पर राजा गण यज्ञ यजन कर रहे हैं, (१०) कहीं पर देव देव (महादेव) [के मंदिर में] नृत्य सजे हुए हैं। (११) कहीं पर तपस्वी तप के ध्यान में लगे हुए हैं, (१२) जिनको देखते ही रूप का संसार भाग जाता है। (१३) कहीं पर राजा गण षोडश दान अर्पित कर रहे हैं, (१४) कहीं पर स्वर्ण से [वे विप्रादि का] सम्मान कर रहे हैं, और कहीं पर वे पृथ्वी (भूमि) का दान प्रमाणित कर रहे हैं। (१५) गंगा के तट पर इतने चरित्र दिखाई पड़ रहे हैं, (१६) जिन्हें स्वयं देखने पर शरीर के पाप नष्ट हो जाते हैं।"

पाठांतर—●चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।
×चिह्नित चरण म. में नहीं है।

(१) १. इस छंद में आए हुए 'कहों' के स्थान पर मो. में सर्वत्र 'कोहों', धा. अ. में 'कहू', मा. में 'कहुं', फ. में 'कहीं', म. में एक स्थान पर 'कहो' अन्यथा 'कहुं' तथा द. उ. स. में एकाध स्थान पर 'कहों' अन्यथा 'कहूं' है। २. धा. थड्ढे, अ. फ. उठे, म. थटे, ना. छड्डे।

(२) १. मो. सुतं दिषिइ, धा. अ. फ. मनो दिक्खियं, ना. मनुं (=मनउ) दिष्षीये, म. उ. स. मन, (मनो-म.) दिष्षियं। २. मो. ना. म. उ. स. रूप। ३. मो. अयरायदंदा, धा. एरावइंदा, ना. औरापयंदा, म. उ. स. अरापइंदा, फ. उठ गजंदा।

(३) १. धा. अ. फ. म. फेरहीं (फेरही-म.), ना. फेरहि ति, उ.स. फेरिहिन। २. धा. अ. फ. ना. म. उ. स अच्छे (अच्छं-म.)

(४) १. मनो दप्पियं, अ. फ. मनो पिप्पयं, ना मनु (=मनउ) पवंत, म. उ. स. मनो प्रब्बतं। २. धा. द. उ. स. बड्ढे, अ. फ. चंढ, ना. चढि (=चढइ)।

(५) १. अ. फ. भूडंड। २. धा. सुजि साह, अ. फ. ते सार, ना. द. ते सरो, म. ते सरु, उ. ते सरों, स. ते रोस। ३. धा. अ. फ. संधं, मो. साधि (-साधइ), ना. साधे, म. उ. स साधै। ४. म में अगले चरण के स्थान पर तथा उ. स. में यहाँ अतिरिक्त (स. का पाठ): तिकै मुष्टिकं जोर चानूर बाँधै।

(६) १. ना. दिष्षि पाइक, फ. पिक्खीये । २. मो. बानि (=बाने) त, धा. बानंत, अ. फ. बानंति (त—फ.)। ३. मो. बाँधि (=बाँधइ), . फ. बधं। ४. उ. स. में यहाँ और है: नचे इंद्र आहे सक बज्र साधै।

(७) १. धा. ता उठि ते, अ. फ. ते उठि हीं, ना. म. उ. स. उट्ठंत ते।

(८) १. धा. मनो। २. धा. मग्गते स्वर्ग, अ. फ. स्वर्ग ते मग्ग, ना. सेवते भग्ग, म. उ. स. सेव तं (ते—म) स्वर्गं।

(९) १. धा. जग्गिजै पुण्य ते राज काजं, अ. फ. जग्यते पुन्य ते राज काजं, ना. द. उ. स. जग्य जापन्न (जापंत–ना.) ते राज काजै (काजं–ना.), म. जग जापंन त राज काजैं।

(१०) १. धा. अ. ना. देव देवाल, मो. देवता देव, फ. विप्र प्रातं, म. देव देवात, उ. स. देवता देव। २. मो. निरतान साजा, धा. ते श्रिरय साजं, अ. ते क्रिति साज, फ. छठं जग्य साजं, द. ना. नृत्यान साजं, म. स. नृत्यान साजं (साजै–म.)।

(११) १. म. उ. स. तापसी। २. धा. अ. फ. ना. ताप। ३. म. तेन। ४. म. लागे फ. लग्गौ।

(१२) १. धा. ना. तिनं, अ. म. उ. स. तिनं, फ. तउ। २. धा. अ. फ. देखते, उ. स. दिष्षियै, ना. म. देषियै। ३. म. भागे, फ. भग्गौ।

(१३) १. धा. राइ। २. धा. फ. अप्पंत, म. ना. आपंत।

(१४) १. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. सम्मान (समान–म.)। २. धा. अ. फ. प्रिथ्वी, ना. म. उ. स. प्रिथ्वी। ३. म. उ. स. में यहाँ और है (स. का पाठ):—

कहूं बोल द्री भट्ट छंद प्रमानं। कहूं औघट्ट वीर सगीत गानं।
कहूं दिष्षि सिद्ध लग्गी तारि भारी। मनो नेर प्रातं कपाट उघारी।
कहूं बाल गावैं विचित्रं सुग्यानं। रहै चित्त मोहन्न डुल्लै नृपानं।

(१५) धा. अ. फ. ना. इते चारु चारित्त ते गंग (सवेग–धा.), म. उ. स. इते चरित पेपंत ते गंग।

(१६) १. धा. अ. फ. तिने, ना. म. उ. स. स्वयं। २. ना. दीप्यते। ३. धा. नट्ठं।

टिप्पणी—(२) रूव < रूप। (५) भुअदंड < भुजदंड। सरो=एक प्रकार का व्यायाम का खेल। (६) पायक < पदातिक। (८) मग्गं < मार्गं। (१६) नट्ठ < नष्ट।

[११]

त्रिभंगी— हरि गंगे[१] ।[२] (१)

तन[१+×°] तरल तरंगे, अघ क्रत[२] भंगे[३], क्रत[४] चंगे। (२)
हर सिर परसंगे, जटय[१] विलंगे[२], अरधंगे[×+°]। (३)
गिरि[°×+] तुंग[×+°] वनंगे[१+×°], विहरति[२] दंगे, जल जंगे[३]। (४)
गन गंध्रव[१] छंदे, जय जय वंदे[२], सुप चंदे[४]। (५)
मति उच्च गति मंदे[१], दरसत[२] नंदे[३], गत[४] दंदे[५]। (६)
वपु अपु विलसंदे, जम भूत[१] जंदे[२], कह गंदे[३]। (७)
पिति मित[*१] उर मालं, मुगति विसालं,[१] सद[३] सालं[४+]। (८)
सुर[°×] यार[×°+] टट[×°+] सालं[°×+१] कुसमित[°×+२] तालं[×°+] अलिजालं[×°+]। (९)
हिम रित[१] प्रतिपालं[२] हरि चरणालं[३] विधि वालं[+]। (१०)
दरसन[१] रसराजं,[२] जय जुग काजं, भय भाजं[+]। (११)
भ्रमर छरि[१] करजं, चामर वरजं[२], सुभ[३] साजं[४]। (१२)
अमल रतन[१] मंजरि, निअ[°] तन[°] जंजरि[°२], चप[°] पंजरि[३°४]। (१३)
करुणा[°] रस[°] रंजरि[°१], जन पुन गंजरि,[२] सा संकरि। (१४)
कलिमल हर[१] भंजन[२], जन[३] हित[४] सज्जन,[५] अरि गंजन॥ (१५)

अर्थ—(१) [गंगा की स्तुति करते हुए चंद ने कहा,] "हे हरि गंगा—हरि नदी, (२) तू तरल तरंगों के तन वाली हो, तुम अघों को भग करती, और कल्याण-कर्त्री हो। (३) तुम हर (शिव) के सिर के प्रसंग में [आने पर] उनकी जटाओं से विलग्न (लगी) रहीं और [शिव का] अर्धांग हो गई। (४) उत्तुंग गिरि (हिमालय) के वनों में उल्लास पूर्वक विहार करते हुए तुम्हारा जल चलता रहा। (५) गंधर्व गण ने छंदों में, ऐ चन्द्रमुख वाली, तुम्हारा जय जय गान किया और वंदना की। (६) [मेरे जैसे] ओछी मति और मंद गति वाले को भी तुम अपने दर्शन से आनंदित और द्वंद्व से विगत करती हो। (७) जो शरीर से तुम्हारा जल विलसते हैं, [उनके पास जब] यम के सेवक जाते है, वे (तुम्हारे भक्त) कहकहा लगाते (प्रसन्न होते?) हैं। (८) तुम क्षिति मात्र की उरमाला हो, विशाल मुक्ति [रूपा] हो और सत (सतोगुण) की शाला हो। (९) तुम्हारे तट पर सरकंडे, नरकुल और लाल लाल (सुन्दर) कुसुमित होते हैं और [उन पर] अलि-समूह [गुंजार करता] रहता है। (१०) तुम हिम (हेमंत) ऋतु द्वारा प्रतिपालित—हेमंत ऋतु के हिम से जल प्राप्त करती, हरि के चरणों की आर्द्रता और विधि की बालिका हो। (११) तुम्हारा दर्शन रसों (आनन्दों) का राजा है तथा जगत् के कार्यों में विजय [प्रदान करने वाला] है और समस्त भय उससे भाग जाते हैं। (१२) तुम अमरों (देवताओं) के लिए छल वारिणी (?) हो और श्रेष्ठ चामर [तुल्य] शुभ साज वाली हो। (१३) तुम निर्मलता की मंजरी (उत्पादिका) हो, नीच तनु जन्म को जर्जरित करने वाली हो, और खंजरीट के चक्षुओं वाली हो। (१४) तुम करुणा रस का रंजन करने वाली, जनों (दासों) के पुण्यों का गाँजने—पुण्यों की ढेरी लगाने—वाली, और शंकरी (कल्याण करने वाली) हो। (१५) तुम्हारा मज्जन कलियुग के पापों को हरता, जन (दासों) के हित का साज करता और शत्रुओं को नष्ट करता है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

× चिह्नित शब्द उ. स. द. में नहीं हैं।

० चिह्नित शब्द म. में नहीं हैं।

+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं हैं।

‡ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं हैं।

(१) १ धा. हर गंगे हर गंगे हर गंगे, अ. फ. म. हरि हरि गंगे, ना. जै जै हरि गंगे। २. ना. में यह चरण अगले चरण से मिला दिया गया है, म. उ. स. में न केवल यह चरण अगले चरण से मिला दिया गया है, वरन् तदनुरूप बाद वाले चरणों में आवश्यक मात्रा वृद्धि कर दी गई है, जिससे छन्द त्रिभंगी नहीं रह गया है।

(२) १. धा. तमि। २. मो. अधिकृत, अ. अपहृत, फ. अवकृति। ३. ना. सं। ४. मो. रुग, शेष में 'कृत'।

(३) १. म. जटिन, २. फ. जटनि। ३. फ. में यहाँ और है: दहन अनंग।

(४) २. धा. तरंगे, ना. अ. फ. विरंगे। २. ना. विहरत। ३. धा. गंगे।

(५) १. मो. गन गद्रव, म. उ. स. गुन गध्रव। २. धा. जग जस चंदे। ३. म. उ. स. में यहाँ और है: किन्न अव वंदे। ४. अ. सुष चन्दे, फ. सुष मंदे।

(६) १. धा. म. ना. मति उच गति (गत—म.) मंदे, मो. गति उच मन्दे। २. धा. दरसन, ना. दरसन, अ. फ. दरसिन। ३. म. गन दंदे, अ. फ. रति दंदे। ४. म. उ. स. में यहाँ और है: पदि मद छन्दे। ५. धा. वदे।

(७) १. मो. जमभूत, ना. ज्यमदूत। २. म. उ. स. में यहाँ और है: सुरमुनि नंदे। ३. अ. फ. कहकदे।

(८)मो. पिति मिन (<मत), धा. अ. फ. छिति मनि, ना. म. पिति सुति, उ. स. पिति मति। २. म. उ.म. में यहाँ और है: चिर धुत काल (चिरधुन कालं—उ स.) । ३. धा. सह, अ. फ. सय । ४. म. कालं ।

(९) १. मो. सरण रहित सालं, अ. फ. सुर नर टट बालं । २. धा. कुसुमति ।

(१०) १. मो. धा. अ. फ. रिम, म. रिति । २. म. उ. स. में यहाँ और है: सुरतरु हालं (सुर तट ताल—उ. स.) । ३. म. बरनालं, उ. स. छरनालं ।

(११) १. अ. फ. दरिसन । २. म. उ. स. में यहाँ और है: सुभित साजं (सुभरित साजं—उ. स.) ।

(१२) १. मो. धा. अमरच्छरि करजं, फ. म. अमर छर करजं (करिजं—म.) । २. उ. स. वरिजं । ३. म. उ. स. में यहाँ और है: वहु पारजं (बर बहु पाजं—उ. स.) । ४. धा. सुव साजं, अ. फ. सुसभाजं, द. सुगसाजं, म. सुरसाजं ।

(१३) धा. असलत्तिन, ना. अमलेतन, म. अमरु तरु । २. धा. पंजरि । ३. उ. स. में यहाँ और है बर वर मंजरि । ३. धा. पंजरि, अ. फ. यंजरि ।

(१४) १. अ. फ. नंजरि । २. धा. नतम पुनं जरि, अ. फ. जनम पुनंकरि, ना. जनम पुन्य गिरि, म. द. जनम पुनंगरि । ३. म. उ. स. में यहाँ और है: हसि हसि संकरि ।

(१५) १. धा. मो. ना. हरि । २. अ. फ. मज्जन । ३. म. उ. स. में यहाँ और है : भवभित भंजन । ४. ना. जिन । ५. अ. रंजन, म. संभन, फ. रंजनि ।

टिप्पणी—(३) परसंग < प्रसंग । बिलंग < विलग्न । (४) जग < गम्=चलना । गंध्रव < गंधर्व । (६) उछ < उच्छ < तुच्छ । (७) अपु < आप=जल । (११) जुग < जगत् । (१२) बरजं < वर्यं । (१३) अमलत्तन < अमलत्व । निअ < नीअ < नीच ।

[१२]

वसन्त तिलक— उभय[१] कनक[२] सिभं[३] भ्रिग[४] कंठीव[५] लीला
पुनरपि पुहप पूजा[६] वदति रति विप्पराज[७] । (१)
उरसि[१] मुत्तिहार[२] मध्धि घंटीय सबदं[३]
सुगति सुकज[×] वल्ली[४] नंग रंग त्रिवल्ली[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] "[इसके दोनों तटों पर जो] दो कनक-शंभु हैं [वे ही इसके दोनों कुच हैं], मृगों की कंठध्वनि है [वही इसकी कंठध्वनि है], पुनः इसे पुष्प की पूजा [अर्पित] करके विप्रराज (श्रेष्ठ विप्र) इससे अपनी रति (भक्ति) निवेदित करते हैं। (२) इसके उर में [जल-कणों का] मुक्ताहार है, और मध्य (कटि) में [पूजकों द्वारा किया जाने वाला] घंटी (कटि की घंटी) का शब्द है; इस प्रकार यह सुन्दर मुक्ति की वल्ली अनग-रंग (काम-क्रीड़ा) की त्रिवल्ली है।"

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. फ. उरमय । २. धा. कमल, फ. कनिक । ३. धा. मो. सोभा, ना. सिभं, म. सिभी । ४. मो. हंमंग, अ. भिंग । ५. मो. कव, धा. कंठाव, अ. म. कठोय । ६. मो. पुनरपि सुक पूजा, धा. पुनर पुहप पूजा, म. पुनर्पुहपभजा, फ. पुनपुदप पुज्जा, ना. पुनर पुनर पूजा । ७. मो. वदति रति बिपरया, धा. ना. वंदते विप्रराज, अ. फ. वदति रति बिप्रराज, म. उ. स. विप्रवे कामराजं ।

(२) १. धा. उरिल, मो. ना. उरलि, अ. उरसि, फ. उरस्य, उ. स. निवलिय। २. मो. गगहर, धा. मुत्तियहारं, अ. फ. मुत्तिहारं, ना. गगहारा, म. उ. स. गगधारा। ३. मो. सिधि घट घंटीय सद्दा, धा. सब्द घंटी ति बंबं, अ. फ. मध्य घंटीय (घट्टीय-फ.) शब्दे, म. उ. स. मध्य घटीव सब्दा। ४. मो. सुर नर मुनि मुगति झुकल ठलो भिरंदोव, धा. मुकति मुकति भारं, ना. मुकति मुत्ति समीरे, अ. फ. मुकति भीरं, म. उ. स. भुगति सुमति भीरे। ५. मो. नग रंग भीपल, धा. नग रंग त्रिवल्ली, अ. फ. अनग रंग निवली, ना. अनग रंग त्रिवेली, म. उ. स. नग रंग (रंग-म.) त्रिवेनी।

टिप्पणी—(१) सिंभ < शंभु। (२) मुत्ति < मौक्तिक।

[१३]

रासा— दिष्पइ*[१] नयर सहाय ति[२] कवियन[३] इयुं कहइ[४] । (१)
मोहइ* अथिय पुरंदर[१] इंद जु[१] इहिं रहइ[२] ।[×] (२)
चष चंचल तनु सुध्ध[१] ज सिध्धनु मनु हरइ*[२] । (३)
कंचन कलस[१] झकोरि ति गंगहि[२] जल भरइ*[३] ।।[४] (४)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "यह नगर जैसा स्वभाव से (स्वाभाविक रूप में) दिखाई पड़ रहा, उसके विषय में कविजन (चंद) की उक्ति इस प्रकार है कि (२) इसकी अथाइयाँ पुरंदर की शोभा करती हैं, और [इस कारण] इन्द्र यहीं रहता है। (३) चंचल चक्षु तथा शुद्ध तन वाली नारियाँ जो सिद्धों का भी मन हरती हैं, (४) कंचन कलशों को झकोर (हिला) कर गंगा का जल भरती हैं।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित चरण म. उ. स. में नहीं है।

(१) १. धा. फ. दिष्षिय, मो. दिषि (=दिषइ), अ. दिष्षित, ना द. म. उ. स. दिष्यौ। २. धा. नयर सुभाइ न, अ. फ. नैर सभाजित, ना. नयर सुहायौ, द. नगर सुहावौ, म. नगर सुहायौ, उ. स. नगर सुहावो। ३. मो. कवयन, ना. कवियनु। ४. धा. यूं कहइ, मो. इयुं किहिहि, अ. फ. ना. यह कहै, म. उ. स. इह कहै।

(२) मो. मोहि (=मोहइ) अथि रंप रंद जू, धा. है मनु अच्छि पुरंदर, अ. फ. ना. है मनुं (मुनि-ना.) अथ्थि पुरंदर। २. मो. इंद जू इहि रिहि (=रिहइ), धा. ना. इंद जइह रहइ (रहै-ना.), अ. फ. इंद जु (ज-फ.) इह रहै, द. इंद जुहां रहै।

(३) १. मो. चषि चचल तन सुध, धा. ना. चष चंचल तन सुद्धि (सुद्ध-ना.), अ. फ. म. चष चंचल (चंचलु-म) तनु (तन-फ.) सुद्ध (सुध-म.)। २. धा. ति सिद्धनु मनु हरिह, मो. सु सिधां न हरि (=हरइ), अ. फ. त सिद्धनु (सिद्धि तन-फ.) मनु हरै, उ. स. जु सिद्ध ति मन रहै, म. जु सिद्धि ति मन हरै, ना. ज सिद्ध न मनु हरै, द. जु सिध मनि मनुह रहै।

(४) १. धा. करस। २. धा. झकोलनि गगह, अ. फ. झकोरति गंगा, ना. झकोरि गंगा महि, म. उ. स. झकोर तिं गगह। ३. धा. भरहि, मो. भरि (=भरइ), अ. फ. ना. म. उ. स. भरै। ४. म. उ. स. में यो स्वीकृत द्वितीय चरण नहीं है। उसके स्थान पर यह है : सुकवि चंद वरदाय सु ओपम तहं करै।

टिप्पणी—(१) सहाय < स-हाव < स्व-भाव। कवियन=कविजन। (२) अथ्थि < आस्थान=अथाई।

[१४]

अर्ध नाराच— भरंति[१] नीर सुंदरी। (१)

कनक बंक[२] जे[२] छुरी[२] ।[×] (३)
ति लग्गि[२] कट्टि जेहुरी[२] ।[×] (४)
सुभाय[२] सोभ पिंडुरी[२] । (५)
सु[२] मैन[२] चित्त ही[२] भरी । (६)
सकोल लोल[२] जंघया । (७)
ति लीन[२] कच्छ रंभया । (८)
कटित्त[२] सोभ सेउरी । (९)
वनित्त जानि[२] केसरी । (१०)
अनेक[२] छब्बि छत्तियां । (११)
कहंत[२] पद रत्तिया । (१२)
दुराय[२] कुम्भ उच्छरे[२] । (१३)
मनहु[२] अनग ही भरे । (१४)
रुलंति[२] हार सोहये । (१५)
विचित्त चित्त[२] मोहये । (१६)
उडत्ति[२] हत्थ अंचले[२] । (१७)
रुरंति[२] मुत्ति[२] सा जले[२] । (१८)
कपोल लोल[२] उज्जले । (१९)
लहुंति मुख[२] सिघले[२] । (२०)
अधर आरत्त[२] रत्तये । (२१)
सुकील[२] कीर[२] बंधये[२] । (२२)
सोहंत[२] दंत आलमी[२] । (२३)
कहंत वीअ[२] दालमी[२] । (२४)
गहग्ग[२] कंठ[२] नासिका । (२५)
बिनान[२] राग सासिका[२] । (२६)
सुभाय सुत्ति सोभये[२] । (२७)
दुभाय[२] गुंज लग्गये[२] । (२८)
दुराय कोय[२] लोचने । (२९)
प्रतप्प[२] काम[२] मोचने । (३०)
अनध्धि ओट भौंहये[२] । (३१)
चलंति सोह सौंहये[२] । (३२)
ललाट[२] आड[२] लग्गये[२] । (३३)
सरद चंदु[२] लज्जये[२] ॥ (३४)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] "जो सुन्दरियाँ पानी भरती हैं, (२) उनकी हाथों की उगलियाँ पत्तियों के समान [कोमल] हैं। (३) जो बाँके (टेढ़े) सोने से जुड़ी (बनी) हुई हों, (४) ऐसी कटी हुई जेहुरी (?) [सदृश] वे हैं। (५) उनकी पिंडलियाँ स्वाभाविक रीति से शोभित हैं, (६) जो मदन के चित्त में भरी हुई हैं। (७) गतिशील और चंचल उनकी जाँघें हैं, (८) वे रंभा (कदली) सदृश जाँघ उनके कछोटा में लीन (छिपी) हैं। (९) उनकी कटि में जो सेहुरी—दीवाल जैसी—व्यवस्था शोभित हो रही है, (१०) उससे ऐसा लगता है कि वनिताएँ मानो सिंहिनियाँ हों। (११) उनके वक्ष की छवि बाँकी है, (१२) जिसका कथन करते हुए चन्द रक्त (लुब्ध) हो रहा है। (१३) वस्त्रों में छिपाए हुए उनके कुच ऐसे उभरे हुए हैं, (१४) मानो [वस्त्रों में] अनंग (कामदेव) ही भरे हों। (१५) हिलते हुए उनके हार शोभा दे रहे हैं, (१६) और वे ऐसे विचित्र हैं कि चित्त को मुग्ध कर लेते हैं। (१७) जब हाथों से उनके अंचल उठते हैं, (१८) तो [उनके हारों के] सजल (कांतियुक्त) मोती हिलते [दिखाई पड़ते] हैं। (१९) उनके कपोल लोल और ऐसे उज्ज्वल हैं (२०) कि सिंहल के मोतियों [की आभा] को भी वे मोल लेते हैं। (२१) उनके अधर रक्त युक्त होने के कारण लाल हैं, (२२) [और उनकी नासिका उनके पास] बैठे हुए भोंदा कीर के समान है। (२३) उनकी दंतावली ऐसी शोभा दे रही है (२४) कि उसे दाड़िम बीज कहा जाता है। (२५) उनके कण्ठ गहग (आकर्षक) हैं और नासिका (२६) विशाल और राग की शासिका है। (२७) उनके [नासिका के] मोती स्वभाव से ही शोभित हैं, (२८) और [उनके साथ] अन्य भाव [का चमत्कार लेने] के लिए बीच बीच में गुंजा लगे हुए हैं। (२९) वे अपने लोचनों के कार्यों का दुराव करके [कटाक्ष करती हुई] (३०) प्रत्यक्ष काम [—बाण] मोचन करती हैं। (३१) उनके वे आयुध भौंहों के ओट में रहते हैं, (३२) और वे सम्मुख चलते हुए शोभित होते हैं। (३३) उनका ललाट जिस पर आड (तिलक) लगा हुआ है, (३४) शरद के चन्द्रमा को भी लज्जित करता है।"

पाठांतर—× चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

(१) १. म. मरंत।

(२) १. धा. अ. ति, द. नि, ना. तु. म. उ. स. ह। २. धा. पान। ३. अ. म. ना. पत्ति। ४. ना. अंगुरी, म. जेहुरी।

(३) १. धा वक। २. धा. न। ३. अ. जेहरी, ना. जरी।

(४) १. मो. ल्लग, द. तिलग। २. धा. द. कढ्ढि जेहरी, अ. कढ्ढि जेहरा, म. कढ्ढि जेहरी, ना. कढ्ढि जेहरी।

(५) १. धा. अ फ. सहज्ज, उ. स. सुभाय, द. सुभाइ। २. मो. पुहरी, धा. पढुरी, अ. फ. ना. म. उ. स. पिंडुरी।

(६) १. धा. म. उ. स. तु, ना. द. नि, अ. फ. नि। २. मो. धा. अ. फ. ना. नीन, उ स. मैन। ३. धा. चित्र ही, ना. चित्र हा, म. हो चित्रे।

(७) १. धा. लोन।

(८) १. म. द. नु लीन, उ. स. सु नील, ना. छि लीन।

(९) १. धा. कटिकर। २. धा. म. ना. सेहरा, अ. फ. सेहरी, द. भमरी, उ. स. सहुरी।

(१०) १. धा. मनो जुवान, अ. फ. बनो नि (ल-अ.) जानि (जान-फ.), न बनी सि जुवान, म. उ. स बनी जुवान।

(११) १. म. उ. स. ना. द. कनाग।

(१२) १. धा. कहूँ ह, स. कहत।

(१३) १. धा. दुराइ। २. म. उ. स. उम्मरे, फ. छुछरे।

(१४) १. धा. उ. स. मनों, म. मनौं, अ. फ. म नौ, ना. मनुं (= मनउ)।

(१५) १. धा. हरंत, द. उ. स. हलंत, अ. म. हरंत, फ. हरंति, ना. पुलंत।

(१६) १. फ. चिचि।

(१७) १. धा. उठंति, म. उ. स. अ. फ. ना. उठंत। २. धा. अंचलं।

(१८) १. ना. द. म. उ. स. हलंत (हलंति—म. द. ना.)। २. अ. सुत्ति, फ. सुत्त। ३. धा. सुज्जलं, अ. फ. सुज्जले, ना. संजुले, म. उ. स. संजले।

(१९) १. धा. उच्च, अ. फ. उछ्छ, ना. द. म. उ. स. लोल।

(२०) १. धा. लहति मोल, अ. लहंत मोह, फ. सुहंत मोह, द. हसंत मोह, ना. लहंत माल, द. म. उ. स. लहत मोल। २. म. ना. सघले।

(२१) १. धा. ना. म. उ. अधर (अद्दर—म.) अद्द, अ. फ. अधर रत्त, द. अधरत्त अधर, स. अरद्द अद्द।

(२२) १. मो. सुकलि, अ. फ. सकीर, म. द. सुकील। २. म. कील, अ. फ. कीड। ३. धा. अ. फ. मद्धये, ना. पढए।

(२३) १. अ. फ. म. उ. स. ना. सुदंत। २. मो. अलमी, अ. फ. दाडिमी, म. ना. आलिमी।

(२४) १. धा. म. उ. स. बीय। २. अ. फ. दाडिमी, म. ना. दालिमी।

(२५) १. अ. फ. मद्दग, ना. गद्दग, म. उ. स. गद्दंग। २. म. कठि।

(२६) १. म. उ. स. विनाग। २. ना. वासिका।

(२७) १. मो. सुभा मोति सोभये, धा. सुभाइ मुत्ति सोहये, स. जुभाय मुत्ति सोभये, ना. सुभाय मुत्ति सोभए, म. उ. सुभाय मुत्ति सोहये।

(२८) १. अ. दुराइ, फ. दुताइ। २. धा. मो. अ. उ. स. गंज, फ. गंग। ३. म. उ. स. लोभये, द. लम्भये।

(२९) १. धा. दुराइ कोइ।

(३०) १. मो. प्रत्यक्ष, धा. अ. फ. उ. स. प्रतक्ख, ना. प्रतिष्ष, म. प्रतषि। २. म. कांन।

(३१) १. धा. अवद्ध ओर मोंह ही, मो. अवधि उच भूहये, अ. फ. अवद्धि (अवद्ध—फ.) उट मौंहही, द. ना. अवद्धि उट मुहही (मुंहइ—ना.), म० आवध ओट मौंहए, उ. स. अवद्ध ओट मोंहए।

(३२) १. धा. चलत। २. मो. सुह सुंहये (= सउह सउंहये), धा. सोह सोहही अ. फ. सौंह सौंहहा, म. उ. स. सौंह मोहए (सौंहए—म.) उ. सोह सौंहइं, ना पसुंह सुंहइं (= सउह सउहइं)।

(३३) १. धा. अ. फ. म. लिलाट। २. धा. लाट, मो. अट, ना. अट्ठ, उ. स. राज। ३. उ. स. आइये, म. राजये।

(३४) १. ना. इंदु। २. धा. लग्गए, म. उ. स. लाजए।

टिप्पणी—(६) मैन < मदन। (७) सक < ष्वष्क्=चलना, जाना। (८) कच्छ < कक्षा। (९) सेउर < शैवाल। (१०) वनित्त < वनिता। (१२) अनेक < आणिक्क (दे०)=वक्र, बाँकी। (२०) मुल्ल < मूल्य। (२६) विनान < विज्ञान। (३१) अवध्धि आयुध।

[१५]

दोहरा— *ढिल्ली[१] गुहि[२] अलकइ*[३] लता सवयिा सुनहु[४] चहुआन। (१)*
जानु[१] भुजंग[२] सउंह षढउ*[३] कंचन षंभ प्रमांन[४]॥ (२)*

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] " [इन सुन्दरियों की] ढीली गूथ कर लटकाई हुई अलक-लता, हे चहुआन पृथ्वीराज) सुनो, (२) ऐसी लगती है मानो कंचन के स्तम पर सचमुच सम्मुख ही भुजंग चढ़ा हुआ हो ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. धा. अ. ढिलिय । २. मो. गह, धा. जुहि, म. उ. स. द. गुह, ना. गुही । ३. धा. अ. फ. अलकै, मो, अलकि (=अलकइ); म. उ. स. अलिकी, द. अलक । ४. मो. श्रवणि सुचढ़, धा. द. स्रवन सुनै, अ. फ. स्रवन सुनहि, म. ना. श्रवन सुनहु ।

(२) १. मो. जानु, धा. मनु, शेष में 'जनु' । २. धा. भुवंग, म. भुजं । ३. मो. सहु (=सहउ < सउह < सउहं) चढु (=चढ़उ), धा. साम्हो चढ़ै, अ. फ. ना. संमुह चढ़ै, म. उ. स. सम्मुष चढ़ै । ४. म. फ. प्रवान ।

[१६]

दोहरा— *रहहि चंद मम कव्वु[*१] करि करहि त कव्वु[*२] विचारि[३] । (१)*
जितिय नयरि सुंदरि कही[१] सु तिय दिष्षिय पनिहारि[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] "हे चंद, रहने दे, काव्य मत कर, और यदि काव्य करे तो विचार कर करे, (२) [क्योंकि] तूने जिन स्त्रियों को नगरी की सुन्दरियाँ कहा है, वे स्त्रियाँ तूने पनिहारिनें ही देखी हैं ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. मो. रहिहि चंद मम कब्वि, धा. अ. फ. रहहि चंद मम कव्वु (कव्व—अ. फ.), ना. उ. रहहि चंद गम गब्ब (गब्बु—ना., गर्ब—उ.), म. स. रहि रहि चद म गब्ब (गरब—म.) । २. मो. करिहि त कब्वि, धा. करहि त कव्व, अ. फ. कहहि न कव्वु, ना. करहि तु कब्बि विचारि, म. उ. स. करहि (करिहि—म.) त कवित । ३. मो. धा. विचार ।

(२) १. मो. जीतीय नगरि सुदर सयल, धा. जि तुम नयरि सुंदरि कही, अ. फ. जितं नयर सुंदरि कही, द. ना. जे तुम्ह (तुम—ना.) नयरि सुदरि (सुदर—ना.) कही, म. उ. स. जे तुम नयरि सुंदरि कही । २. धा. सवि दोठी पनिहार, मो. सुतिय दिष्षिय पनिहार, अ. फ. सब दिष्षिय पनिहारि (पनिहारु— फ.), द. सहि दिष्षिय पनिहारि, ना. ते सब दिषी पनिहारि, उ. स. सह दिष्षिय, म. तेस. दिषय पनिहारि ।

टिप्पणी—(१) कव्व < काव्य । (२) नयरि < नगरी

[१७]

दोहरा— *जांहनवी तटि पिष्षियइ[*१] रूव[२] रासि वे[३] दासि । (१)*
नगर ति[१] नागर[२] नर घरणि रहहिं[३] श्रवासि प्रवासि[+४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "जाह्नवी के तट पर जो रूप-राशि देख रहे हो, [अवश्य ही] वे दासियाँ हैं । (२) नगर के नागर नरों की गृहणियाँ आवासों में ही रहती हैं ।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

(१) १. मो. जाह्नवी तटि पिधिइ (< पिपिपि=पिपियइ), धा. जांह्न नदी तट पिविरायहि, ना. अ. जाह्नवि दटि पिधियं, फ. आहर्नवि टट पियीयं, ना. द. जाह्नवी (जाह्नवी-ना.) तटि पिपियं (पिष्पियहि-ना.), म. ड. स. जाह्नवी तट दिधि दरस। २. मो. ना. म. उ. स. रूप। ३. धा. वे, मो. सह, अ. फ. ते।

(२) १. ना. ज, म. उ. स. सु। २. ना म. उ. स नागरि। ३. मो. रहिहि। ४. अ. ना. अवास अवास, फ. अनूपग वास।

टिप्पणी—(१) रूव <रूप।

[९८]

दोहरा—*दंसन*[१] *दिणिअर* *दुल्लही*[२] *निय*[३] *मंडन* *भरतार*। (१)
सुह कारणि[१] *विहि निम्मयी*[२] *सु*[३] *दुह*[४] *कत्तरि करतार*[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] "वे दिनकर के लिए भी दुर्लभ दर्शन वाली हैं—दिनकर भी उन्हें नहीं देख पाता है, और अपने भर्त्तार (पति) का मंडन करने वाली (पतिव्रता) हैं। (२) वे विधाता के द्वारा सुख के लिए निर्मित हैं, और वे कर्त्तार (विधाता) की [रची हुई] दुःख की कतरनी हैं।"

पाठान्तर—(१) १. मो. दरसन, अ. दरिसन, फ. दरसन, ना. तिन दरसन, म. उ. स. ते दरसन। २. मो. दणिअर दुल्लही, धा. दिनयर दुलही, अ. दिनयरु दुलही, फ. दिनीयरु दुलही, म. दिनीयर दुलहि, ना. उ. दिनयर दुलहि, स. दिनयर दुलह। ३. अ. फ. निज।

(२) १. धा. सह कारन, अ. फ. सुप कारन, ना. म. उ. स. सुह कारन। २. मो. विधि निर्मेयी, अ. फ. विधि निमई, ना. विधि निम्मंइ, म. विह निरमई, उ. स. विह निमई। ३. अ. फ. ना. म. में यह शब्द नहीं है। ४. मो. दह, अ. दुप, फ. दुक्ख। ५. मो. कतरि कतार, धा. कत्तिन करताफ, तरि करतार, ना. कत्तनि करतार।

टिप्पणी—(१) दंसन < दर्शन। दिणिअर < दिनकर। दुल्लही < दुर्लभा। निय < णिअ < निज। (२) विहि < विधि। निम्म < निर्-√मा। दुह < दुःख। कत्तरि < कर्त्तरी।

[९९]

दोहरा— *कुवलय रवि लज्जा हरणि*[१] *रहि*[×] *भजि*[२] *भंग*[३] *सरणिय*[४]। (१)
सरस सुधि[१] *वरणन करउं**[२] *सु*[३] *दुल्लहि*[४] *तरणि** *तरुणिय*[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "जो कुवलय—नीली कुमुदिनी—के सदृश सूर्य से लज्जा करती हैं, [किन्तु जिनके पद्मिनी होने के कारण] भ्रमर जिन की शरण में भाग रहते हैं, (२) सरस सुधि (कल्पना) के साथ[अब] उन सूर्य के लिए भी दुर्लभा तरुणियों का मैं वर्णन कर रहा हूँ।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द द. में नहीं है।

(१) १. धा. लज्जा रहन, अ. लिज्जइ रहन, फ. लज्ज रहन, ना. लज्जइ हरणि,

उ. लज्जा विहसि, म. स. लज्जा रहसि । २. मो. रिंहि मंगि, ना द. उ. स. रहि मगि । ३. अ. फ. ना. उ. स. मृंग, म. भ्रंग । ४. अ. फ. म. सरंग, उ. स. सरघ ।

(२) १. धा. सरस सुध, अ. फ. म. उ. स. सरस सुधि, द सरस सुध्धी, ना. सरसें सुधि । २. मो. चरणन (<वरणन) कह (=करन), धा. अ. बरनन किवी, फ. बरनन कियो, ना. बर्नन कियो, म. द. बंनन कियो, उ. स. वृनन कियौ । ३. धा. अ. फ ना. म. उ. स. में यह शब्द नहीं है । ४ ना. मात्र । ५. धा. तरुन तरनि, मो. तरण्य (<तरणि) तरणं (=तरण्ण), म. तरुन तरंग, अ. फ. तरुणि तरंनि, (तरुन—अ.), ना. तर्णि तरंणि, उ. स. तरुन तरंन ।

टिप्पणी—(१) रहर < महं । भग < भिंग < भृङ्ग । सरण < शरण । (२) सुद्धि < शुद्धि=चेतना । दुर्लाह < दुर्लभा ।

[२०,]

भुजंग प्रयात—
पुनर जन्मेजय*[१] ते[२] जानि जग्गे[३] । (१)
रइ सकि ते सेस ते[१] पुठि[२] लग्गे ।+(२)
मांग+[१] मोहष्षि लय सुत्ति[२] वानी । (३)
मनउ*[१] धार[२] आहार फउ*[३] दूध[४] तानी । (४)
तिलक नग[१] निरषि[२] जग जोति[३] जग्गी[४] । (५)
मनउ*[१] रोहिणी रूव उर[२] इद लग्गी[३] । (६)
रूव[१] भुव देषि अवरेषि[२] जग्यउ*[३] । (७)
मनहु[१] काम करि चाप[२] उद्दि अप्प[३] लग्गउ*[४] । (८)
पंगुरे श्रवन ते नयन[१] दीसं । (९)
विचि[१] जोति सारंग निर्घात रीसं[२] । (१०)
तेज ताटंक ते[१] स्रवन डोल[२] । (११)
मनउ*[१] अर्क राका[२] उदइ*[३] अस्त लोल[४] ।[५](१२)
जलज जिम भाइ तह हीर लोल[१] । (१३)
दिव्य दरसी तिहां[१] ढिल्ल[२] बोलं । (१४)
अधर आरत्तता रत्त साई[१] । (१५)
जनउ+[१]* चंद बिंबीय[२] अरुने बनाई ।[३](१६)
कपोलं फलंगी[१] फलिंदीय[२] सोहं । (१७)
अलक्क अरोहं[१] अगाहे ति[२] मोह । (१८)
सिता[१] स्वाति बिंदे य ते[२] हार भारं । (१९)
उभय ईस[१] सीसं मनउ*[२] गंग धारं । (२०)
करं कोकनद[१] ति[२] कचू (=कञ्चू) समुभ्भं[३] । (२१)
मनहु[१] तिथ्थ राज[२] त्रिवल्ली प्रजुभ्भं[३] । (२२)

(९) १. धा. पंगुरे छैन तो नैन, मो. पंगरे नैन ते नयन, द. पंगुरे नयन ते लयन, अ. फ. ना. पंगुरे
नैन ते (तो—ना.) छैन, म. . प्रगरे नयन विचि (विवि—म.) लपन, स. प्रगट्टे नयन विचि भयन।

(१०) १. मो. विचि (=विचइ,) ना. विचि, द. सनौ, म. मनौं, अ. फ. बचे। २. मो. नृप
सरीरं, धा. अ. फ. ना. निवान दीसं, द. निवांस दीसं।

(११) मो. ते भाटंक ते, धा. अ. फ. तेज ताटंकता, म. जिन तेज भाटक तं, ना. तेज भाटंक ते। २.
ना. गेलं, म. ढोल।

(१२) धा. उ. स. मनौं, अ. फ. म. मनो, ना. मनुं (=मनउ)। २. मो. रा। ३. मो. उदि
(=उदर), धा. अ. फ. म. ना. उदं। ४. म. लोलं। ५. ना. द. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

कहीं चन्द कव्वी उपमा प्रमानं। मनु चन्द रथ भंग द्वय भानु जानं।

(१३) १. धा. द. जलद जंभीर भइ मध्य पोलं, अ. फ. जलजं जभीहीर भय मध्य जोलं, ना. जलज
जंभीर से मध्य जोलं, म. उ. स. उरज्जं जंभीरं भई मद्ध जोल।

(१४) १. अ. फ. दिव्य दरसी तहां, उ. स. उबं दिव्य दासी अग, ना. दिव्य दरसीय अग, म. उबं
दिप दरसी अग। २. धा. ना. म. उ. स. दोल, फ. दिव्य।

(१५) १. मो. साही, उ. म. साइ, म. सांई।

(१६) १. मो. मनु (=मनउ), अ. फ. उ. स. मना, म. मनौं, ना. मनु (=मनउं)। २. धा. बिय
बीय, मो. बीबी, ना. द. म. उ. स. बिय बिब, अ. बंबीय, फ. बदर्नाय। ३. ना. द. म. उ. स. में यहाँ
और है (स. पाठ) :

कहीं ओपमा दंत मोतीन कना। मनो बाज माला (माला—ना. म. उ. स.) शुभ सोभयंती।

(१७) १. उ. स. कलागा। २. अ. कलिदीय, फ. कलदाय, द. कलि दीख।

(१८) १. मो. आरोहं। २. म. उ. स. प्रवारत।

(१९) १. ना. सता। २. धा. छुट्टं जिते, अ. फ. बुद जिता, ना. बिंदु यते, उ. बुदं जिसे, म. स.
बुदं जिते।

(२०) १. मो. इं। २. मो. मनु (=मनउ), ना. मनुं (=मनउ), धा. उ. स. मनो, म. अ.
फ. मनौं।

(२१) १. अ. फ. करं कोल कंद्रु। २. धा. अ. फ. न, म. जि, ना. सु। ३. ना. समुज्जं।

(२२) १. धा. उ. स. मनो, अ. फ. म. मनौं, ना. मनुं (=मनउ)। २. धा. अ. फ. म. उ. स.
तिथ्थरायाः। ना. तिथ्थराजाधि। ३. अ. फ. उरद्दां, ना. अरुज्जं।

(२३) १. मो. उप्पमा धान अंगन, धा. उप्पा पानि अंगून, अ. फ. उप्पमा पानि अंगूनि, म. उ. स.
तिनं ओपमा पानि आनंन, ना. ओप्पमा पानि आनंद। २. ना. नव्वं।

(२४) १. धा. अ. फ. लज्जि दुर, ना. लज्जि कुल, उ. स. लाजि कुल, म. लजंत कुल। २. म. केकि
दुरि। ३. धा. म. उ. स. मज्झ, मो. अ. फ. मधि, द. ना. मध्य। ४. ना. गमं।

(२५) १. अ. फ. अरे।

(२६) १. धा. मध्य, मो. मध, म. तिनं मझि, उ. स. तिनं मज्झ, ना. मनुं (=मनउ)
मध्य, अ. फ. मद्धि। २. धा. फ. ना. पीन, म. द. छीन, अ. क्षीन। ३. मो. रापु (=राषउ), धा. रक्ख्यो,
अ. फ. म. उ. स. रष्यौ, ना. रिष्या। ४. म. उ. स. ना. द. में यहाँ और है (स. पाठ) :

कटी काम मापी सुकामी करालं। मनों काम की जोति बद्धी सरालं।

(२७) १. अ. फ. साध, उ. स. जवं प्रत्र, म. जंघं व्रन, ना. सकुं।

(२८) १. धा. सीत उसनेह, अ. फ. ना. सीत उप्नेह, म. उ. स. मनो सीत उष्नेव। २. धा. फ.
म. उ. स. ना. रितु दोष रंभं, अ. रति दोष रंभं।

(२९) १. अ. फ. नारिंग, द. नारिंगी, उ. स. नरंगीनि, म. नारंगीनि, ना. नरंगसु। २. धा. अ.

फ. रँगीय, ना. रंगष्ठ, म. उ. स. रंगोष्ठ । ३. मो. छुछुटी (=छोटी), धा. ना. छछोरी, अ. फ. छछुटी, द. म. उ. स. छछोटी ।

(३०) १. धा. अ. फ. उ. स. मनो, म. मनौं, ना. मनुं (=मनउ) । २. मो. कुंडली, द. ना. म. उ. स. कुंदीरु, अ. फ. कुड्डीय । ३. धा. कुकुम लोरी, मो. कुंकुम लपेटी, अ. फ. कुकुंम लुट्टी, ना. म. उ. स. कुकुम लोटी । ४. ना. द. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :

किधौं के सर रंग हेमैं झकोरं । किधौं वड्डिय वाय मनमथ्थ जोरं ।

(३१) १. उ. स. सदरोहि, म. सदरोह । २. म. अरोह, ना. द. आरोह । ३. म. उ. स. वादे, धा. सद्दे, ना. सद्दें ।

(३२) १. म. मर्द मृदु तेजं । २. धा. मो. माकार, अ. फ. मकार, उ. स. परकार, फ. अकार, म. परंकर । ३. धा. वद्दं, द. सद्दे, ना. वद्दे, म. उ. स. वादे ।

(३३) १. मो. उडिआ, धा. फ. एडि इमआ, म उ. म. पगं एडियं । २. मो. इंवरं । ३. ना. वर्नी श्रोणि । ४. म. वांनी ।

(३४) १. मो. फिरे कच चीर मिरत (=मइरत्त), धा. फिरै कच रचीन मुदरत्त, अ. फ. मनौ कच (कव्व-फ.) रचीनि मैं रत्त, ना. मनुं (=मनउ) कव्व जीतीनि मं रत्त, द. उ. स. मनो कच चीनीन मैं (मै-द.) रत्त, म. मनौं कव चातीस मे रत्त ।

(३५) १. धा. निम्मल, म. उ. स. विम्मलं । २. धा. दप्पनं, म. उ. स. द्रप्पन ।

(३६) १. मो. समीपा सुकीया मतु (=मन) समान रीसं । धा. समीपं समीवं कियं माननीरसं, अ. फ. समीपसु सुकीयं कियं मानरास, ना. म उ. स. समीपं सुपीय (सुकीयं-ना.) कियं मान (मानु-ना.) रीसं ।

(३७) १. म. उ. स. रगं (रंगं-म.) अम्मरं, द. अंमरं । २. धा. म. सु ।

(३८) १. धा. उ. स. मनो, ना. मनुं (=मनउ), म. अ. फ. मनौं । २. धा. पावसे, अ. फ. पावसं । ३. ना. द. म. उ. स. धनुक ।

(३९) १. मो. सुकीचा यसोज्जीयनं स्वामि जानं धा. सुकीयं समीपं नवे सामि जानं, अ. फ. सुगीयं सुकीयं जियं स्वामि जानं, ना. द. म. उ. स. सुकीयं सुजीवं जियं स्वामि (सामि-म.) जानं ।

(४०) १. धा. पंग रवि दरिस, अ. फ. पंग रव दरस, ना. द. पंग (पंगु-ना.) रवि दरस, म. रवी पंग दरस, उ. स. रवी पंग दरसं । २. म. उ. स. अरव्विंद (अरविंद-म.) ।

टिप्पणी—(२) पूठि < पृष्ठ । (३) मुत्ति < मौक्तक । वानी < वर्ण । (७) भुव < भू < भ्रू । (१०) रीसं < सदृश । (१५) सांई < साति=अतियुक्त । (१७) कलिंदो < कालिंदी । (१८) अरोह < आरूढ़ । (२२) अरुद्दरा < आरुद्ध । (२४) गम्भं < गर्भं । (२५) गयंदं < गजेन्द्र । (२६) मयंद < मृगेन्द्र । (२७) सक्कि < शक्र । (२८) सनेह < संनिभ । (३१) सद < शब्द । (३३) वाणी < वर्णी । (३८) कीतं < कृत । (४०) पंग (दे०)=ग्रहण करना । साय < साइ < साति=अतिशय युक्त द्रव्य ।

[२१]

दोहरा— हय गइ[1] दलु सुंदरि[2] सहरु[3] जउ*[4] बरनउ*[5] बहु यार[6] । (१)
एह[1] चरित्त कह[2] लगि चाहउं*[3] सु चलहु[4] संदेह[5] दुआर[6] ।। (२)

अर्थ—[चंद ने कहा है,] (१) "हय, गज, दल (सेना), सुंदरियों और सुभटों का यदि बहुत समय तक वर्णन करूँ (२) तो यह चरित्र कहाँ तक कहूँगा ? अतः संदेह देवी के द्वार पर चलो ।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. गइ, शेष में 'गय'। २. धा. द. सुदर। ३. धा. अ. फ. सुहर। ४. मो. जु (=जउ), धा. जे, ना. उ. स. द. जौ, अ. फ. जै। ५. मो. बरनु (=बरनउ), ना. म्रनुं, द. बरणुं (=बरणउ), धा. बरनइ। ६. धा. वारि।

(२) १. धा. फ. यह, अ. यन, द. यहु, ना. इय, उ. स. इह। २. धा. ना. अ. फ. कव। ३. धा. गिनें, मो. स. कहुं (<कहुं=कहइं), अ. फ. कहै, ना. कहौं, उ. गनौं। ४. मो. चलइ, धा. चलउ, अ. फ. ना. चलि। ५. उ. स. पहुपंग। ६. फ. दुवारि।

टिप्पणी—(१) गइं < गज। सहर < सुभट।

[२२]

भुजंग प्रयात—

दिष्पिय[1] जाइ[2] सदेह सोहं*[3]। (१)
अर्क[1] सा[2] कोटि संपन्न[3] देहं[4]। (२)
मडप[1] जास सोवन्न[2] गेहं[3]। (३)
मुत्तिआ छत्ति[1] दीसइ* न[2] छेहं[3]। (४)
श्रोणि सम भेष[1] बहु महिष रत्ती[2]। (५)
प्राति[1] पूजंति[2] नर नेम सत्ती[3]।[4] (६)
पंड[1] भारथ्थ उहि[2] वार सज्जी[3]। (७)
देषि[1] चहुआन किलकाल[2] गज्जी[3]।[4] (८)
वयन[1] आयास सह[2] भउ*[3] विराजं[4]। (९)
होय जय पक्ष[1] प्रथीराज[2] राजं। (१०)
दच्छनं[1] अंग करि नमसकारं। (११)
मध्य[1] ता नयर[2] किज्जइ*[3] विचारं॥ (१२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने] जाकर संदेह देवी के सौध (मन्दिर) को देखा। (२) उसका देह कोटि सूर्य जैसा संपन्न था। (३) जिसका मंडप सोने के गृह का था (४) और जिसके छत्र में लगे मोतियों का अन्त नहीं दिखाई पड़ता था, (५) उसका शोणित के समान [रक्त] वेष था और वह महिष पर बहुत अनुरक्त थी। (६) प्रात के समय में मनुष्य अति नियम के साथ उसकी पूजा करते थे। (७) पांडवों को महाभारत में उसने उस बार सजाया था। (८) चहुवान (पृथ्वीराज) को देख कर वह [फिर] किलकारती हुई गर्जना कर उठी। (९) उसका यह बचन समस्त आकाश में विराजित हुआ, (१०) "राजा पृथ्वीराज के पक्ष में विजय हो!" (११) [यह सुनकर] दक्षिण अंगो से उसे नमस्कार कर (१२) उस नगर में उस (पृथ्वीराज) ने विचरण (!) किया।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. देषीए, म. तहां दिपियं, उ. स. जहां दिष्पियं, ना. दिष्षीय। २. मो. ना. द. म. उ. स. जासु। ३. मो. संपन्न देह सुहं (=सोहं), म. उ. स. संदेह सेहं, ना. संदेश सोहं।

(२) १. म. उ. स. उर्थ अर्क (अरक–म.)। २. ना. सी। ३. धा. संपुन्न। ४. धा. दोहं।

(३) १. मो. मंडपा, धा. मंडपं, अ. फ. ना. मंडपं, म. उ. स. बने मंडपं। २. मो. सोवन, ना. म. उ. स. जासु सोवन्न। ३. म. ग्रेह, अ. फ. सोहं।

(४) १. धा. मुक्तिय छित्त, मो. मोर्नाञा उधि, अ. फ. मुत्तियं नजिन, म. उ. स. तिन मुत्त्यि (मुठियं–म.) छत्र, ना. मुत्त्यिां छत्र । २. धा. ना. अ. फ. म. दीस, मो. दिशि (=दिसइ) न, फ सोपत्र । ३. द. सोह ।

(५) १. मो. श्रेणि शम मेष, धा. श्रोन सत पक, ना. द. श्रोन सित (सत–ना.) महिष, अ. फ महिष सत पक, उ. स. रुधि सित्त माहीप, म. रुधि सत्त महिषं । २. मो. बहू मिहिष रत्ती, धा महि महिष रत्ती, अ. फ. बहु श्रोन रत्तीं, ना. बहु गभ्भ रत्तीं, उ. स. बहु मघ्घ रत्ती (रातीं–उ.), म. बहु महिष रत्ती ।

(६) १. धा. अ. फ. प्रात, मो. राति, म. उ. स. तिन प्रात । २. धा. पूजत । ३. धा. नय अत्ती, अ. फ. नेम मत्ता, म. नेम अंती, ना. नेम अत्ती । ४. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

मुज दढ दुदेस देस प्रकारं । भ्रमै देवता इंद्र लभ्मै न पारं ।
वजै दुदभी देव देवाल निझ्झ । वरं उट्ठि संगीत गानं पवित्त ।
वजै सद्द झल्ल सभ जोग भिरं । निरत्त न पायं तिनं कम्मि थदं ।

(७) १. म. उ. स. सुष पढ । २. मो. विय वार, धा. विदु वार, फ. उह वार, अ. उहि वार, ना. बीय वंर, उ. स. विय वैंन, म. थिंय वेर । ३. धा. ना. उ. स. म. साजी, अ. फ. रज्जी, ना. जाजी ।

(८) १. धा. दिष्ष, म. उ. स. सुप देखि । २. धा. कलिकार, फ. किलकरि, ना. म. अ. किल्कार । ३. धा. गाजी ना जागी ।४. म. ना. उ. स. में यहाँ और (स. पाठ) :—

प्रभा भान तेज विराजै अकारी । मनो अग्नि ज्वाला जल मे उजारी ।
नमो तुअ तारं नमो मात माई । तुअं सत्ति रूपं जगत्तं बताई ।
तुअ थावर जंगमं थान थानं । तुअं सत्त पाताल सरगं सतानं ।
तुअ मारुतं पानिमं अग्गि मट्टी । तुअं पंच भूतं स्वयं देह घट्टी ।
तुअं स्वस्ति चदं अनद अनदी । मई मोह माया जपैं जाप बंदी ।

(९) १. धा. तेनु, द. म. उ. स. तवं बंयन (बैन–म.), ना. तव बयन । २. धा. आकास सा, अ. फ. आकास सह, ना. द. म. उ. स. आकास महि । ३. मो. गु (=गउ), धा. भो, अ. फ. ना. भौ, द. भा, उ. स. भयो, म. भयौ । ४. धा. विराजै, उ. स. ताजं, म. तराजं ।

(१०) १. धा. अ. फ. होइ जय पत्त, उ. स. तुम होइ जय पत्त, म. तुमं होय जैपत्त, ना. हूयं जयतु तुव आज । २. धा. प्रिथिराज ।

(११) १. धा. दछिछनं, फ. वछिनं, ना. दष्पण, म. उ. स. तवं दछिछनं । २. मो. नामसकरं, फ. निमसकारं ।

(१२) १. उ. मधुर मध्य, म. धुरं मध्य, स. धुवं मध्य । २. अ. म. नेर, फ. नैन, ना. नगर । ३. धा. म. कीजै, मो. किजि (=किजइ), अ. ना. कीनौ, फ. मनमध्य ।

टिप्पणी—(१) सोह < सौध=प्रासाद, मंदिर । (४) छत्त < छत्र । छेह < छेअ < छेद (१)=अन्त, नाश । (५) श्रोणि < शोणित । रत्त < रक्त । (९) सह < सभा (१)=सब ।

[२२]

भुजंग प्रयात — *लंगरी जूथ[१] तिनके[२] प्रसंगा । (१)*
दिष्पियै[१] कोटि कोटिन+[२] नंगा[३] । (२)
जिते[१] रूप के जूप×[२] षुप्पे जुआरी[३] । (३)*
उचरे[१] सोंह[२] भानं न[३] पारी । (४)

जिते[१] साध[२] समारि[३] पेलंत लप्पे[४] । (५)*
तिते[१] देषिए[२] भूप दानवं विपप्पे[३] । (६)*
जिते[१] छइल[२] संघट्ट[३] वेसानि[४] रत्तो । (७)
तिते दव्व पीअत्त[१]. हीनेति*[२] गत्त । (८)*
जिते[१] दासि के आसि[२] लग्गे[३] सरूपा । (९)
मनउ[१] मीन चाहंति[२] बग मध्य कूपा[३] । (१०)*
नायिका[१] देषि[२] नर नयन डुल्ले[३] । (११)
रहे[१] सुरलोक[२] सह देव भुल्ले[३] । (१२)
उचरइ[१] वयन निसि केउ[२] जग्गे[३] । (१३)*
मनउ[१] कोकिला भाप संगीत लग्गे[२] । (१४)*
ऊड१ अच्चीर सेज्या[२] समारइ[३] । (१५)*
मनउ[१] होय वासंत[२] भूपाल दुआरइ*[३] । (१६)*
कुसुंभ सा[१] चीर सा[२] कीर सोभा । (१७)
मध्य[१] ता काम कदली[२] सु[३] गोभा[४] । (१८)
राग[१] छत्तीस[२] कंठे[३] करंती[४] । (१९)
बीन[१] बाजं ति[२] हत्थे[३] धरंती[४] । (२०)
दिप्पि[१] अभिमान[२] मृगी ठट्ठुकी । (२१)
मनउ[१] मेनका[२] नृत्त तइ*[३] तार[४] चुकी । (२२)*
बरग्गते माय लग्गइ[१] ति गारे[२] । (२३)*
पट्टने[४] मेह[३] दीसे[३] संवारे[४] ।। (२४)

अर्थ—(१) [*चंद ने कहा*] "*वहाँ हम लंगरी—वस्त्रधारी साधुओं के—यूथ* देखते हैं, तो उनके प्रसंग में—साथ ही—(२) कोटि-कोटि नग्न [साधुओं] को भी देखते हैं। (३) [जहाँ] रुपये के जुए में चुप्पे (चुप चाप खेलने वाले) जुआड़ी हैं, (४) [वहाँ दूसरे ऐसे भी हैं जो] सौगंध-पूर्वक कह रहे हैं कि अन्य की पारी नहीं है [उनकी है]। (५) जहाँ एक ओर साधु (सज्जन) सँभाल कर खेलते दिखाई पड़ते हैं, (६) वहाँ विपक्ष में—दूसरी ओर—दानव-भूप (दानवों के सरदार) भी दिखाई पड़ते हैं। (७) जहाँ छैलों के समूह वेश्याओं में अनुरक्त हैं, (८) वहाँ द्रव्य के क्षय होते ही उनकी गति हीन हो जाती है। (९) जहाँ सुरूपा दासियों की आशा में लोग [टकटकी लगाए हुए] हैं, (१०) [वहाँ वे ऐसे लगते हैं] मानों बगुले कूप में मछलियों को ताक रहे हों। (११) नायिकाओं को देख कर लोगों के नेत्र चंचल हो उठते हैं, (१२) और सुरलोक में समस्त देवता भी [उनको देखकर] भूल पड़ते हैं—सुधि-बुधि भूल जाते हैं। (१३) [उनसे मिलने पर] लोग कहते हैं कि [उनके विरह में] वे कई रातों से जागते रहे हैं, (१४) [और उनसे ऐसा मधुर संभाषण करते हैं मानो कोकिल संगीत भाषण करने लगा हो। (१५) [नायिकाओं की] शय्या सँवारने में इतनी अबीर उड़ती है, (१६) मानो भूपाल के द्वार पर वसन्त—फाग—हो रहा हो। (१७) [उन नायिकाओं के] कुसुंभी चीर कीर की शोभा के हैं, (१८) और [उन चीरों में लिपटा हुआ] उनका शरीर-काम-कदली-

गर्म [के समान लगता] है। (१९) वे छत्तीस राग कंठ में [धारण ?] करती हैं, (२०) और वीणा वाद्य को हाथों में धारण करती हैं। (२१) उन्हें [गाते-बजाते ?] देख कर अभिमानिनी (!) मृगियाँ भी ठिठक जाती हैं, (२२) [वे ऐसी लगती हैं] मानो मेनका नृत्य करते हुए ताल चूक गई हो। (२३) उनका भाव (सौन्दर्य) बखानते हुए भारी कठिनता ज्ञात होती है, (२४) इस पट्टन (महानगर) के घर इस प्रकार सँवारे दीख पड़ते हैं।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. जे लगरी जूथ, मो. लंगरी रूप, अ. फ. जिते लंगरी जूथ, ना. द. म. उ. जिते लंगरी जूप, स. जिते लगरी रूप। २. मो. म. उ. स. ना. दिन कै, धा. तिनि कै, अ. फ. जिनके।

(२) १. धा. दे दिष्पियहि, अ. ति दिष्पियहि, फ. देति दिषीयै, म. ना. उ. स. तिते (तितौ—ना.) दिष्पिय। २. धा. म. ना. कोपीन, अ. कोडेति, फ. कोटैन। ३. ना. गंगा।

(३) १. धा. ना. जे, फ. तियै, ना. जितै। २. धा. जूप के, अ. फ. जूप कुं चोप, ना. जूप कें चोप, म. जूप को दान, उ. स. जूप कौं चोव। ३. मो. चूपे (=चुप्पे) जुआरी, धा. स. चोपवारी, द. ना. चापँ (चपि—ना.) जुवारी, म. चोपें जुआरी।

(४) १. धा. तिके उच्चरे, फ. ति, द. म. ना. तितै उच्चरे, उ. स. तितै उच्चरैं। २. उ. स. सो, धा. ना. सोद, म. सौद। ३. धा. अन्नोन, मो. आनन्द, मा. आनंत।

(५) १. धा. जकै, अ. फ. जिकै, ना. जिके। २. धा. सारि, अ. साथि, फ. साधि, म. साधु। ३. मो. संभार, म. द. सम्हारि, ना. संभ्यारिह। ४. धा. पेलंत रूप्पे, मो. पेलंत लषि (=लपे), अ. फ. पेलंत लप्यौ, म. ना. पेलंत लप्पे।

(६) १. धा. अ. फ. तिके, ना. तितै। २. धा. दिक्खिये, ना. दिष्षीय। ३. धा. भूप दामिव्व पप्पे, द. भूप दामंति पिप्पे, ना. भूप दीपंत पप्पे, म. भूप दामंत पपे, अ. फ. भूप दानव्व पिप्यौ।

(७) १. धा. अ. फ. जिके, ना. जितै। २. म. अ. फ. छैल। ३. मो. सथर, धा. सुघट्ट, अ. फ. ना. संघट्ट, द. उ. स. संघाट, म. साघाट। ४. मो. विसानि (=वइसानि), धा. अ. फ. बेस्यायु, ना. बेस्यानि, म. विस्यान।

(८) १. धा. अ. फ. तिके दव्व (द्रव्य—अ. फ.) के हीन, मो. तिले (< तितै) दव (दब्ब) पीअन (< पीनत), ना. तितै द्रव्य हीन, म. तितै द्रव्य के हीन। २. मो. हीनि ति (=हीने ति), म. हीनंत, ना. हीननि।

(९) १. धा. जिके, मो. यते, ना. जिते। २. धा. पासि के रासि, मो. दासि आसिक, द. उ. स. दासि कै आस, म. दास के आस, ना. दासि के आसि, अ. फ. दासि कै आस। ३. मो. लागे, ना. लग्गे (< लग्गे), अ. फ. लग्गौ।

(१०) १. मो. मनु (=मनउ), धा अ. फ. उ. स. मनो, म. मनौं, ना. मनुं (=मनउ)। २. अ. चाहुंत, फ. चाहुत्त। ३. धा. दूपा।

(११) १. मो नायका, म. उ. स. किते नाइका (नायका—म.)। २. धा. द. म. उ. स. दिष्पि, अ. दष्पि। ३. मो. झूलैं, धा. म. अ. ना. झुल्लै, फ. दूकै।

(१२) १. मो. रहि (=रहे), धा. ण्ह। २. ना. म. सुरइ लोक। ३. धा. मन इंदु मुल्ले, मो. सहदेव भूले, म. द. सुर दिवि मुल्लै, ना. सुर दिपि मुल्लै, अ. मनु इंद्र मुल्लै, फ. मानो इंद्र भूले।

(१३) १. मो. उचरि (=उचरइ), धा. उच्चरे, अ. उच्चरहि, फ. उचरंहि, ना. उच्चरै, म. बर्न उचरंत,

उ. स. वर्ण उचरं । २. धा. मो. केउ, ना. म. स. कीउ (< किउ=कदउ), फ. केउ । ३. फ. जग्गो ।

(१४) १. मो. मनु (=मनउ), धा. उ. स. मनो, ना. मनुं (=मनउ), अ. फ. म. मनौं । २. फ. लग्गो ।

(१५) १. धा. उड्ढुं (=उड्डु), म. उ. स. उड उंच, अ. फ. तहां उड्डि । २. धा. सिजा, अ. फ. ना. सउया । ३. धा. सवारे, मो. समारि (=समारइ), अ. फ. संवारे, ना. समारे, म. समारें ।

(१६) १. धा. अ. फ. उ. स. मनो, ना. मनुं (=मनउ), म. मनौं । २. मो. बसंत । ३. मो. दूआरि (=दूआरइ), धा. बारे, म. उ. स. द्वारैं, अ. फ. ना. द्वारे ।

(१७) १. धा. कुसुम सा, मो. कुसम सा, अ. फ. कुसुंभ सा, द. कुसुम से, ना. कुसुम से, म. उ. स. कुसम्म सजं । २. अ. फ. ता, ना. द. म. उ. स. सं ।

(१८) १. द. म. उ. स. मनौं मध्य, ना. मनु (=मनउ) मध्य । २. धा. दलि । ३. उ. द. फ. सु । ४. मो. सुभ्भ रंग, ना. सुगर्भा, म. सुग्रमा ।

(१९) १. अ. फ. सुबे राग, म. उ. स. रस राग । २. मो. छेतीस, शेष में 'छत्तीस' या 'छत्तीस' । ३. धा. कंठैं । ४. धा. करंति, ना. करत्ती ।

(२०) १. द. ना. म. उ. स. बरं बील, अ. फ. बने बीन । २. धा. बाजित्र, अ. फ. ना. बाजंत, म. उ. स. बाजित्र । ३. धा. दाथे । ४. धा. मो. धरंति (<धरंती) ।

(२१) १. धा. दिक्खि, मो. तिनै देषि, म. तिनं दिषि, ना. तिने दिष्षि, अ. फ. सु दिष्पि । २. अ. फ. यभिमान, म. उ. स. असमान ।

(२२) १. धा. उ. स. मनो, मो. मनु (=मनउ), ना. मनुं (=मनउ), अ. फ. म. मनौं । २. मो. मेनिका, म. बैंनका । ३. धा. नृत्तते, मो. नृतति (=नृततइ), अ. फ. नृत्तिते, ना. नृत्तत, म. उ. स. नृत्यते ४. मो. सार, अ. फ. म. उ. स. ताल ।

(२३) १. मो. चरणंति भाग्य लागि (=लागइ), धा. वर्णंते भाइ लग्गे, अ. फ. बर्नं तेह भाइ लग्गइ (लग्गें–फ.), ना. बरणैत भारी लग्गं, म. बरनंत भाव सु लग्गे, उ. स. बरन्नंत भावं लघे । २. धा. तिसारे, उ. स. जग्ग सारे, म. जु सारे, ना. विमारे ।

(२४) १. मो. सु पट्टने, धा. पट्टने, अ. फ. ति पट्टनं (पट्टनय–अ.), म. उ. स. इसे पट्टने । २. ना. गेह । ३. धा. अ. फ. उ. स. दिष्षे, म. देषे, ना. दिष्षैं । ४. मो. सिवारे ।

टिप्पणी—(२) नंगा < नग्न । (४) आनं < अन्य । (६) विपष < विपक्ष । (७) छरल < छरल (दे०) । (८) दब्ब < द्रव्य । थी < क्षि । (१५) सेझ्या < शय्या । (१८) गोमा < गर्भ (?) । (२०) बाज < वाद्य ।

[२४]

दोहरा— अगम[१] ति हट[२] पट्टन नयर[३] रतन मोति[४] मनि धार[५] । (१)
हाटक पट घनु धातु[१] सहि[२] तुछ तुछ[३] दिष्पियइ[४] संवार[५]* ॥ (२)*

अर्थ—"(१)इस पट्टन नगर की हाटों में जो [जनाकीर्ण होने के कारण] अगम्य हैं, रत्न, मुक्ता और मणियों को धारण करने वाले हैं (२) और स्वर्ण, रेशमी वस्त्र, घन (मूल्यवान पदार्थ) और धातु—इन सब को तुच्छ जन भी सँवारे (सँवार कर धारण किए) हुए दिखाई पड़ते हैं ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. अ. सुमग्ग, फ. सुगम, म. उ. अमग, द. अगन । २. मो. द. ति हट, शेष में केवल 'हट्ट' है । ३. ना. नगर । ४. धा. मो. को छोड़कर सभी में 'मुत्ति' है । ५. धा. मनिमार, मो. मन भार, म. मनिहारि, ना. मनिधारि, शेष में 'मनि (या मणि) हार' है ।

(२) १. मा. हटक पटक घन घन, ना हाटक पट धनु धरिसु। २. धा. सडु, द म. ना. उ. स. सइ, ब. फ. रस। ३. मो. तब्ब तुच्छ, म. तुच्छु। ४. मो दिषीइ (=दिषियइ), धा. म. ना. उ. स. दिष्षि, फ. दिक्ख, ब. हिरिक। ५. ब फ म सवारि, शेष में 'सवार' है।

टिप्पणी—(२) नयर < नगर।

[२५]

मोतीदाम— अगम गति हट्ट ति[१] पट्टन मंझ[२]। (१)
मनउ* दिग हेदेवर[१] (इंदीवर?) फूलीय[२] संझ। (२)
जु नप्पइ*[१] मोर[२] तंबोर[३] सुढार[४]। (३)
उलिच्चत कीच त[१] होइ*[२] उगार[३]। (४)
सु मालइ पुहुप दुवे[१] दल षपु। (५)
ति सीत[१] समीर[२] मनउ*[३] हिम कंपु। (६)
वेलू रु[१] सेवंतीय[२] गूठिहि जाय[३]। (७)
जु दे* दव दासीय[१] लेहि ढहाय[२]। (८)
बुधि[१] बजाज जु विच्चहि[२] सार। (९)
छुवंत न[१] वासर[२] सुम्झइ*[३] तार[४]। (१०)
दिष्पिहि[१] नारि स कुंज[२] पटोर। (११)
मनउ*[१] दुष दष्पिन[२] लग्गइ*[३] थोर[४]। (१२)
सुत्ति[१] चराव[२] मढे बहु भाय[३]। (१३)
जु कइहिं कोर[१] कहे सु न गाय[२]। (१४)
ले[१] तनसुष्ष[२] रहे अपगाइ[३]। (१५)
जिन सेझि[१] सुगंध रही[२] लपटाइ। (१६)
लहिलहि* तांन कतान ति पाम। (१७)
बनी त्रिय दिष्षिय पूरण काम[१]। (१८)
जराउ जरति[१] कनक कसंति[२]। (१९)
मनउ*[१] मय वासर[२] जामिनि अंत[३]। (२०)
कसिकसि हेम ति[१] कढइ[२] तार। (२१)
उअंत दिनेस किरंन प्रसार[१]। (२२)
करिकरि[१] कंकन अंकइ* जोव*[२]। (२३)
मनउ*[१] दुज हीन, सरदइ[२] सोम[३]। (२४)
जरे जिन* पान[१] प्रकार ति[२] लाल। (२५)
मनउ*[१] ससि मम्महि+ तार बिसाल।*(२६)

तुलंत सु तुब्ब*[१] तराजुन्ह[२] जोप[३] ।×(२७)
मनउ*[१] घन मम्मिफ[२] तडित्तह भोप*[२] । (२८)
जरे जिवं* नग्ग[१] सुरंग सुघाट[२] । (२९)
सुंदरि[२] सोभ[२] कुहावति पाट[३] । (३०)
दु अंगुलि नारि[१] निरप्पहिं[२] हीर । (३१)
मनउ*[१] फल बिंबहि[२] चपत[२] कीर । (३२)
नषत्रप चाह ति[१] सुचित्र अंस[२] । (३३)
मनउ*[१] भप छंडि[२] रहउ*[३] गहि हंस[४] । (३४)
दिसिहिसि[२] पूरि[२] हयग्गय भार । (३५)
पुच्छत[१] चंद[२] गयउ*[३] दरबारि[४] ॥ (३६)

अर्थ—(१) "इस पट्टन (कन्नौज) की हाटें, जो [भीड़ के कारण] अगम्य-गति हैं, (२) ऐसी लग रही हैं मानो दिशाओं में सन्ध्या समय इंदीवर खिल गए हों। (३) मोर (श्वपच, चांडाल) जब ताबूल की ढार (पीक ?) फेंकता है, (४) तो उगाल को उलीचने से कीचड़ हो जाता है। (५) मालती पुष्प, दूर्वादल तथा चंपा [के संस्पर्श से] (६) जो शीतल समीर बहता है उससे मानो हेमंत की कँपकपी होती है। (७) बेला, सेवंती और जाही [मालिकाओं में] गूँथे जा रहे हैं, (८) जिन्हें लोग [गूँथने वाली] दासियों को द्रव्य देकर [अपने गले] में डलवा रहे हैं। (९) चतुर बजाज जो साड़ियाँ बेच रहे हैं, (१०) [वे ऐसी झीनीं हैं कि] दिन में भी छूने पर उनके तार—ताने बाने—सूझते नहीं हैं। (११) नारियाँ [उन बजाजों से लेकर] कंचुकी और पटोर (लहँगों के वस्त्र) देख रही हैं। (१२) [किन्तु उन्हें देखती हुई वे इसी प्रकार नहीं अघा रही हैं] मानो द्विज को दक्षिणा [कितनी भी मिल रही हो] थोड़ी लगती हो। (१३) उनके जड़ाऊ आभरणों में मोती बड़ी सुन्दरता से मढ़े (जड़े) हुए हैं, (१४) और [रत्नादि में] जो कोर किए गए हैं उन्हें कवि गा कर नहीं कह रहा है। (१५) वे तनसुख (एक प्रकार का वस्त्र) लेकर उन्हें अपना रही हैं, (१६) जिनमें शय्या की (के लिए उपयुक्त) सुगंधि लिपटी हुई है। (१७) तान, कतान और पाम (विशेष प्रकार की बनावट के वस्त्र) ले लेकर (१८) स्त्रियाँ पूर्णकाम बनी दिखाई पड़ रही हैं। (१९) वे जो जड़ाव के जड़े हुई कनकाभरण कसे (धारण किए) हुए हैं, (२०) [वे ऐसे दीप्तियुक्त हैं कि] मानो यामिनी का अन्त कर दिन [का आगमन] हुआ हो। (२१) [स्वर्णकार उनके लिए] खींच खींचकर [सोने के तार] निकाल रहे हैं, (२२) जो ऐसे लगते हैं मानो दिनेश (सूर्य) के उदय होते समय किरणों का प्रसार हो रहा हो। (२३) उनके हाथों में जो कंकण हैं, उनके अंक (आकार) [इस प्रकार] दीख रहे हैं, (२४) मानो बिना शरद के भी चन्द्रमा शोभा दे रहा हो। (२५) [उन कंकणों में] जो लाल पत्तियों के प्रकार (आकृति) के जड़े हुए हैं, (२६) [वे ऐसे लगते हैं] मानो चद्रमा के मध्य में विशाल तारा हो। (२७) तौले जाने वाले सामान (आभरणादि) तराजुओं में जोख कर जब तौले जाते हैं (२८) तब ऐसा लगता है कि मानो घन में तडित् का ओप हुआ हो। (२९) जिस प्रकार [उनके आभरणों में] सुंदर और उमदे हुए नग जड़े हुए हैं, (३०) [उसी प्रकार] सुन्दर पाट (रेशम के लच्छों) में वे सुंदरियाँ उन्हें गुहा भी रही हैं। (३१) नारियाँ दो उँगलियों [के बीच] में हीरों को [लेकर जब उन्हें] देखती हैं, (३२) तो [उन उँगलियों की लालिमा से लाल लगता हुआ हीरा उनके

बीच ऐसा लगता है] मानो शुक बिंब फल (कुंदरू के पके फल) को [अपनी चोंचों में] दबाए हो। (३३) वे सुंदरियाँ नखों से [थाम कर] जब मोतियों के अंशु (पानी) को देखती हैं, (३४) तब ऐसा लगता है मानो हंस अपना भक्ष्य छोड़कर मोती पकड़े हुए हो। (३५) [नगर में] दिशा-दिशा में भारी हय-गज पूरित हो रहे हैं।" (३६) [इस प्रकार नगर का वर्णन कर] पूछता-पूछता चंद [जयचंद के] दरबार [की दिशा] में गया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

× चिह्नित चरण म. में नहीं है।

(१) १. धा. म. उ. स. अमग्ग ति दट्टति, अ. फ. ना. अमग्ग ति दट्टन। २. ना. संध्र।

(२) १. धा. मानो द्रिग है, मो. मुनु (=मुनउं) दिग हेदेवर, म. मनौ द्रुग देवल, ना. मनुं (=मनउं) द्रग देवल, अ. फ. मनौ द्रग देषत (देषित-फ.), स. मनौं द्रग देवल। २. धा. अ. ना. फुछिय, फ. फुली।

(३) १. मो. नषि (=नष्पइ), धा. म. जु नषहि, ना. जु नुंपहि, अ. फ. सु नष्पहि। २. धा. अ. फ. ना. उ. स. मोरि। ३. धा. म. तंमोर। ४. ना. उ. स. सुठार।

(४) १. मो. उलचंत कयचित, मा. उलिचि ज काचतु, धा. उलिचि ज कीच सु, अ. फ. उलीचनि कौ बसु (बसि-फ.), द. उलीचत कीच स, ना. उलीचत पीक सु, म. उ. स. उलिचत कीच कि (उलीचत कीच जु-म.)। २. मो. हुइ (=होइ), म. उ. स. द. पीक, मा. चीक। ३. धा. अगार, म. ओकार।

(५) १. धा. अ. सुमालय पुहप (पहुप-धा.) द्रवे, फ. सुमालइ पुल्ह द्रवे, मो. मलं पुहुप दुवे, ना. द. मलया पहप (पहुपह-ना.) सुवे, ना. मलया पहु पहु सुवे, म. मलं पद पद सुवे, उ. स. मिले पद पद सुवे।

(६) १. धा. अ. फ. म. उ. स. सु सीत (सुसित-म.), ना. द. सीता। २. मो सिमीर, ना. सुमीर। ३. मो. मनु, ना. मनुं, फ. मानों, म. मनौ, धा. अ. उ. स. मनो।

(७) १. मो. बेलक, धा. बेलि, अ. सुबेलि, फ. सुबेल, म. उ. स. सुवेलि, ना. द. बेलह। २. मो. फ. सेवंती, ना. सेवति, म. सेमंतीय। ३. धा. गुछिय जाइ, अ. फ. गुथ्थहि जाइ, म. गुंथहि जाय, ना. गूंथहि जाइ, उ. स. गुंथहि जाइ।

(८) १. मो. जु देहि द गुहि दासीय, धा. दये द्रव दासी, अ. फ. दिवे द्रव दासिय, द. दये द्रव दासिसु, म. दीयें (दिये) द्रव दासति, उ. स. दिये द्रव दासि स, ना. दअ द्रव दासि ति। २. मो. कं तहाय, धा. अ. फ. लहि ढहाइ, ना. कैहि ढहाय। ३. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

सुबुद्धि बनावत (बनावन-म.) बीन मलाप। अनेक कथा कथ अंथ कलाप।

(९) १. धा. सुबुद्धि, म. उ. स. बिवेक, अ. फ. सुबुद्धि, ना. बुध। २. मो. बिचिहि, धा. बचहि, द. अ. फ. बिचहि, म. बेचहि (< बेचहि), ना. पंचहि।

(१०) १. धा. छुवति न, ना. छवत नि, द. छुवे तन, फ. छवंत न। २. म. फ. बासुर। ३. धा. सुज्झहि, मो. सुझि (=सुझइ), उ. स. सुझइ, म. सुझहि, ना. सुव्यति। ४. ना. द्वार।

(११) १. धा. सु दिष्षिहि, मो. दिषिहि, म. उ. स. ति देषहि, अ. फ. सु दिष्षिहि। २. फ. नारिय संध, ना. नारि न कुंज।

(१२) १. धा. मनो, मो मनु (=मनउ), ना. मनु, म. मनौ, शेष में 'मनो'। २. मो. दुहिज दखिन, धा. दुज देखिन, म. उ. स. दुज दष्षन, अ. दुज दछिनन, फ. दुन दछुन, द. दुज दष्षन, ना. दुन दिषिन। ३. मो. लागि (=लागइ), धा. अ. फ. ना. लगहि, म. लेहि, उ. स. लागहि। ४. धा. चोर, फ. घोर।

(१३) १. धा. सु मुत्ति, म. अ. फ. सुमुत्ति, उ. स. सुमोति। २. मो. जराव, बधा. जराउ, म. जराय, ना. उ. स. जराइ। ३. धा. मढे बहु भाइ, अ. फ. ज्रे सु सुभाइ, ना. चढ़े बहु भाइ, म. मढ़े बहु भार।

(१४) १. धा. सु फट्टहि कीर, मो. ना. कढ़हि कोर (कोरि-ना.), अ. फ. सुकट्टहि कीर, म. उ. स.

जु कट्टहि कोरि । २. धां. कहै सुन गाइ, म. कहै सुनि गार, फ. कहै सुत गाइ, उ. स. कहै सुनि गाइ, अ. ना. कहै (कहे-अ.) सुन गाइ ।

(१५) १. मो. वै, धा. अ. फ. जु लै (ले-धा.), ना. जि ले, म. उ. स. सु ले । २. धा. तनु सुप्प, द. न सुप्प । ३. मो. रहिं (=रहै) अपणाइ, धा. अपुब्ब सुसाज्ञ, म. उ. स. ना. रहै (रहे-ना.) अपनाइ (अपराय-म.), अ. फ. अपुब्ब सुसाइ ।

(१६) १. धा. सुसेजु, अ. फ. सुसेज, ना. द. सेज, म. उ. स. जु सेज । २. धा. रहै, म. ना. रहे ।

(१७) १. मो. लइ लइ तांन कतांन ति थाम, धा. लइलक तानु कतान सिथाम, अ. फ. लदै लइ (लदै लहै-फ.) तान कतान सुथाम, द. लहलह तान कतान सु थाम, ना. लइलइ तान कतान ति थाम, उ. स. लईलइ तांन कतान ति थाम, म. लहलह तान कतान कर्ताम ।

(१८) १. धा. दिने त्रिय दिख्खिय पूरन काम, म. उ. स. बनी त्रिय दीसहि काम मिराम ।

(१९) १. धा. अ. फ. म. ना. जरंत, उ. स. जरंज । २. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. कसंत ।

(२०) १. मो. मनु (=मनउ) धा. मनो ना. मनु (=मनउ), म.मनौ । २. म. भयौ बासुर । ३. अ. जामिनि जंत, फ. जामिनि जंति, म. उ. स. ना. जामनि अंत, द. ज्यामनि अंत ।

(२१) १. धा. अ. फ. हि, ना. जि, म. उ. स. सु । २. मो. कढिह, धा. अ. कढुहि, द. कढुति, म. काढत, ना. कट्टहि ।

(२२) १. धा. द. उवंति दिनेसहि कर्न प्रकार (पुकार-द.), मो. उवंत दिसेस किरंन प्रसार, अ. फ. उवंति (उवंत-फ.) दिनेस किरंनि (किरन-फ.) प्रकार, ना. उवंत दिनेस किरंन प्रसार, म. उवंतहि हंस किरन्न पसार, उ. स. उवंत कि हंसह कन्न प्रकार ।

(२३) १. द. अ. फ. करि कर, उ. स. करे कर, ना. करकर, म. करंकर । २. धा. अंकन लोभ, मो. अंकि (=अंकइ) लोभ, अ. फ. अंकहि लोभ, ना. द. अंकहि जेव, उ. स. अंकहि जेव, म. अंकह जोव ।

(२४) १. धा. मनो, मो. मनु (=मनउ), ना. मनु, (=मनउ), म. अ. फ. मनौ । २. मो. सिरदइ, म. सरदह, शेष में 'सरदहि' । ३. द. उ. स. सोव, म. सोव, ना. छेव ।

(२५) १. मो. जरे जिव पान धा. जरे जुव नग्ग, अ. फ. जरे हमि (हम-फ.) नग्ग, ना. जरे मिमि पान, द. म. उ. स. जरे निव (जव-म.) प्रान । २. म. फ. प्रकारित ।

(२६) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनुं (=मनउ), शेष में 'मनो' या 'मनौ' है ।

(२७) १. मो. जु तुज, धा. ज तुंज, अ. फ. जु तस (तस-फ.), ना. द. उ. स. जुथंत । २. धा. तराजन । ३. मो. जोप, शेष सभी में 'ओप' है ।

(२८) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनु, अ. फ. मनौ, (=मनउ), म. मनौं, शेष में 'मनो' है। २. म. मध्य, ना. मद्धि । ३. मो. वप (=ओप), म. लाल ।

(२९) १. मो. जरे जिव नंग (=नग्ग), धा. जरे जुय नग्ग, अ. जरे निवि नग्ग, म. उ. स. जरे जि नंग (=नग्ग), ना. जरे जुवि नंग, फ. जरे विय नंग । २. धा. सुघाट, अ. फ. सुघट्ट, ना. म. सुघाट, उ. स. सुघाटि ।

(३०) १. मो. सुंदरि, म. विसुंदरि, ना. ते सुंदरि, शेष सभी में 'तिसुंदरि' । २. धा. सोइ । ३. धा. पुवावहि घाट, मो. कुवावनि हाट, द. पुवावहि पाट, म. पुवावत पाट, ना. दुलावटि पाट अ. फ. पुद्दावहि मट्ट (मट्ट-फ.) ।

(३१) १. मो. दो (<द) अंगुलि नारि, धा. द. दु अंगुलि नार, अ. फ. ना. दु अंगुलि (अंगुल-फ. ना.) नारि, म. उ. स. दु अंगुलि (अगलि-म.) जोरि (नोरि-अ. फ.) । २. म. तिरप्पहि, म. तिरप्पइ ।

(३२) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनु, (=मनउ), म. मनौं शेष में 'मनो' । २. मो. भंवहि, शेष में 'भिवहि' । ३. धा. चंपहि, ना. चंपइ, स. चंपति, अ. अंपहि, म. मंपहि ।

(२) १. मो. आगि (=आगइ), धा. अग्गे, अ. अग्गइ, फ. अगे, द. अगे, म. उ. स. आगैं, ना. आगे। २. धा. अ. म. ना. उ. स. गुदरन, फ. गुद्दर। ३. मो. गउ (=गयउ), शेष में 'गयौ' या 'गयो'। ४. मो. आहाँ पंगु नृप आहि, धा. जिह पंगुर नृप आहि, द. स. उ. स. जहाँ पंग नृप (गय–स.) आहि (आय–ना.), अ. फ. जहं पंगुरी सु (स–फ.) राइ, ना. जहाँ पंगुरी राय। ५ ना. में इसे निम्नलिखित दोहे का 'पाठान्तर' कहा गया है :–

सुनत देत हेजम उठ्यौ कहयौ चंद कवि आउ।
बलि समान बलि करन सुन वहि मौमी पान राउ॥

यह दोहा मो. में ही और पाया जाता है, किन्तु उसमें इसे पाठान्तर नहीं कहा गया है।

टिप्पणी—(२) गुदर < गुजर (फा.)।

[३]

वस्तु— तब सु हेजम सुगम कर जोरि[1]। (१)
सीस नामइ*[2] दस वार[3]। (२)
सेत छत्र[1] सु[×] निहि[×2] दिट्ठउ[×3]। (३)
स कल बंध सब्बह[1] नयन।[×] (४)
चकित चित्त दिसि दिसि[1] गरिट्ठ उ*[2]।[×] (५)
तब स[1] किअउ* परनाम[2] तिहि सुनि ब राय विम्मार[3]। (६)
जिहि प्रसन्न सरसइ[1] कहहि*[2] सु इत्त[3] चंद दरवारि[4]॥ (७)

अर्थ—(१) तब उस हेजम (कोतवाल) ने दोनों हाथ जोड़ कर (२) दस बार सिर झुकाया। (३) [किन्तु] श्वेत छत्र [वाले जयचन्द] ने [हेजम को प्रणाम करते हुए] नहीं देखा। (४) इसलिए उसने कल (मधुर ध्वनि) से सभा के लोगों के नेत्र अपनी ओर बाँधे (आकृष्ट किए), (५) [जिससे] दिशा-दिशा में (सभी ओर) गरिष्ठ लोग (गुरुजन, सभ्यजन) चकित-चित्त हुए। (६) तब उसने उसे (जयचन्द को) प्रणाम किया, और कहा, "हे विमार (भारी) राजा सुनिए। (७) जिस पर [लोग] सरस्वती को प्रसन्न कहते हैं, वह चन्द कवि यहाँ दरबार में [उपस्थित हुआ] है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं और उनके स्थान पर ..... हैं।
× चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।
(१) १. मो. तब सुहेजम सुगम कर जोर, धा. तब सुहेजम तब सुहेजम जति करि जोड़ि, अ. फ. तब स हेजम सुजस जंपि कहि, द. म. उ. स. तब सुहेजम तब सुहेजम सुगम कर जोरि।
(२) १. मो. नामि (=नामइ), धा. अ. फ. नाइ, द. ना. नायौ, म. उ. स. नयौ। २. ना. दरबार, उ. दरवार तिहि, म. दस वार तिहि।
(३) १. धा. फ. ना. उ. स. सेत (सेन–धा.) छत्रपति, अ. सेतुछत्रि, म. दिषि सेत छत्रपति। २. अ. फ. ना. नहि, म. नह, स. नह। ३. म. सुदिट्ठौ, फ. पट्ठिय, ना. सुदीठौ।
(४) १. धा. संभल, द. सब, ना. सब (< सर्व), म. उ. स. सब्बह।
(५) १. ना. म. उ. स. चकित चित्त हुअ, द. चकित चित्त हुअ सु। २. मो. गरट्ठ (=गरिट्ठउ), 'गरिठौ' या 'गरिठो'।

५. पृथ्वीराज का कन्नौज में प्राकट्य

[१]

मुडिल्ल— पुच्छत[१] चंद गयउ*[२] दरबारह[३] । (१)
हेजम जहां[१] रघुवंस[२] कुमारह[३] । (२)
जिहि हर[१] सिध्धि सदा[२] वरु पायउ*[३] । (३)
सुकवि चंद[१] दिल्ली पइ[२] आयउ*[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) दरबार को पूछते-पूछते चंद [वहाँ] गया, (२) जहाँ पर हेजम (कोतवाल) रघुवंश कुमार था। (३) [चन्द ने उससे कहा,] "जिसने हर (शिव) से सिद्धि का सदैव के लिए वर प्राप्त किया है, (४) वह कवि चंद दिल्ली से आया है।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. पुच्छन, मो. पुच्छं, अ. पुछ्छत, फ. ना. पूछत, उ. पुछित । २. धा. गयो, मो. गयु (= गयउ), शेष में 'गयौ' या 'गयौं'। ३. मो दरवारि (<दरवारइ <दरवारह), फ. दरबारा।

(२) १. मो. जाहां, धा. जह, अ. फ. जहि । २. फ. रुघवंस । ३. म. कमारह ।

(३) १. फ. हर, अ. उ. स. हरि । २. म. ना. पासि । ३. धा. पायो, मो. पायु (= पायउ), शेष में 'पायो' या 'पायौ'।

(४) १. धा. सो कविराज । १. मो. दिलीपइ, धा. अ. ढिल्ली हुति, द. दिल्लीय हुत, फ. ढिल्ली हुतें, उ. स. दिल्लिय तें, ना. दिल्ली तें, म. दिलोइं । २. धा. अ. आयो, मो. आयु (= आयउ), द. म. उ. स. फ. आयौ ।

टिप्पणी—(४) पइ < पाहि < पक्खे < पक्षे=से (अपादान)।

[२]

दोहरा— सुनत१ बोल×२ हेजमइ उठत[३] दिषित चंद हित ताहि[४] । (१)
नृप अग्गइ[१] गुदरन[२] गयउ*[३] जहाँ पंगु नृप आहि[४] ॥ [५] (२)

अर्थ—(१) यह वचन सुनकर हेजम (कोतवाल) उठा और चंद के देखते देखते उसके [कार्य के] लिए (२) नृप जयचद के आगे निवेदन करने [वहाँ] गया, जहाँ पर पंगराज (जयचन्द) था।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

× चिह्नित शब्द उ. में नहीं है।

(१) १. धा. सुनित, अ. फ. सुनिन । २. धा. अ. फ. म. उ. स. हेत, ना. वचन । ३. धा. अ. फ. हेजम उठित, म. हेजम उठिग, उ. स. हेजम उठिन, ना. हेजम उठ्यौ । ४. धा. म. उ. स. दिषत चंद बरदाइ (बरदाय—म.), ना. देषि चद बरदाय, द. अ. फ. दिषित चंद बरदाइ ।

(२) १. मो. आगि (=आगइ), धा. अग्गे, अ. अग्गइ, फ. अगे, द. अगें, म. उ. स. आगैं, ना. आगे। २. धा. अ. म. ना. उ. स. गुदरन, फ. गुद्दर। ३. मो. गयु (=गयउ), शेष मे 'गयौ' या 'गयो'। ४. मो. जाहां पंगु नृप आहि, धा. जिह पंगुर नृप आहि, द. ए. उ. स. जहां पंग नृप (अप—स.) आहि (आय—अ.), अ. फ. जहं पंगुरौ सु (स—फ.) राइ, ना. जहां पंगु रौ राय। ५ ना. में इसे निम्नलिखित दोहे का 'पाठान्तर' कहा गया है :—

सुनत हेत हेजम रह्यौ कह्यौ चंद कवि आउ।
बलि समान बलि करन सुत इहि भोमी पान राउ॥

यह दोहा मो. में ही और पाया जाता है, किन्तु उसमें इसे पाठान्तर नहीं कहा गया है।

टिप्पणी—(२) गुद्दर < गुज्र (फा.)।

[३]

वस्तु— तब सु हेजम जुगम कर जोरि[१]। (१)
सीस नामइ*[१] दस बार[२]। (२)
सेत छत्र[१] सु[×] निहि[×२] दिट्ठउ[×३]। (३)
स कल बंध सत्थह[१] नयन।[×] (४)
चकित चित्त दिसि दिसि[१] गरिट्ठ उ*[२]।[×] (५)
तब स[१] किअउ* परनाम[२] तिहि सुनि प राय बिम्भार[३]। (६)
जिहि प्रसन्न सरसइ[१] कहहि*[२] सु इत्त[३] चंद दरबारि[४]॥ (७)

अर्थ—(१) तब उस हेजम (कोतवाल) ने दोनों हाथ जोड़ कर (२) दस बार सिर झुकाया। (३) [किन्तु] श्वेत छत्र [वाले जयचन्द] ने [हेजम को प्रणाम करते हुए] नहीं देखा। (४) इसलिए उसने कल (मधुर ध्वनि) से सभा के लोगों के नेत्र अपनी ओर बाँधे (आकृष्ट किए), (५) [जिससे] दिशा-दिशा में (सभी ओर) गरिष्ठ लोग (गुरुजन, सभ्यजन) चकित-चित्त हुए। (६) तब उसने उसे (जयचन्द को) प्रणाम किया, और कहा, "हे बिम्भार (भारी) राजा सुनिए। (७) जिस पर [लोग] सरस्वती को प्रसन्न कहते है, वह चन्द कवि यहाँ दरबार में [उपस्थित हुआ] है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

+चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं और इनके स्थान पर...बने हैं।

× चिह्नित चरण अ. फ. में नहा हैं।

(१) १. मो. तब सुहेजम युगम कर जोर, धा. तब सुहेजन तव सुहेजम जति करि जोड़ि, अ. फ. तब सु हेजम सुजम जंपि कहि, द. म. उ. स. तब सुहेजम तव सुहेजम जुगम कर जोरि।

(२) १. मो. नामि (=नामइ), धा. अ. फ. नाइ, द. ना. नायौ, म. उ. स. नयौ। २. ना. दरबार, अ. दरबार तिहि, म. दस बार तिहि।

(३) १. धा. फ. ना. उ. स. सैन (सेन—धा.) छत्रपति, अ. सेतुछत्रपति, म. दिषि सेत छत्र पति। २. अ. फ. ना. नहि, स. नह, म. नद। ३. म. सुदिठौ, फ. सदिट्ठ, ना. सुदीठौ।

(४) १. धा संधन, द. मथ, ना. सथ (< सथ), म. उ. स. सत्थह।

(५) १. ना. म. उ. स. चकित चित्त दुल, द. चकित चित्त दुर्ल सु। २. मो. गरठु (=गरिठउ), शेष में 'गरिठो' या 'गरिठौ'।

(६) १. धा अ. म. ना. उ. स. सु । २ मो. कोड परनाम, (=किअउ परनाम),म. कियौ परनमा, अ. फ. ना. कियौ परिणाम, उ. कियौ परिनाम । ३. धा. वरु करि तिहि प्रतिहार, अ. फ. यह कहि ति (हि–फ.) प्रतिहारु, ना. म. वरु (वर–म.) करि राय प्रहार, उ. स. वरु करि राय प्रतिहार, द वह करि राइ प्रतिहार ।

(७) १. मो. सरस, अ. ना. सरसैं, म. उ. स. सरसति । २. मो. कहिहि, अ. कहहि, शेष में 'कहै' । ३. मो. इत्त, शेष में 'कवि' । ४. द. दरवारि, शेष में 'दरवार' ।

टिप्पणी—(१) गुगम < गुम्म । (२) सथ्थ < साथ=प्राणि - समूह, सभा । (५) गरिट्ठ < गरिष्ठ । (७) सरसइ < सरस्वती ।

[४]

मुडिल्ल— आयस[१] मयु[२] गुनिग्रन तन[३] चाहउ[४] । (१)
तिन परणाम[१] किग्रउ*[२] सिर[३] नायउ[४] । (२)
किधउं*[१] डिंभ[२] कवि कवि[३] परमांनी[४] । (३)
सरसइ* वरु[१] उच्चारहु[२] जांनी[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) [जयचंद का] आदेश हुआ और गुणीजन की ओर उसने देखा । (२) उन्होंने [जयचंद को] प्रणाम किया और सिर झुकाया । (३) [जयचंद ने कहा,] "देखो, [चंद] डिंभ (बाल) कवि है, या प्रमाणी कवि है । (४) सरस्वती का वल उच्चार (काव्योच्चार) से ज्ञात होता है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. धा. आइस । २. धा. जो, (< मो), मो. मयु (=मयउ ?), अ. फ. भय, म. उ. स. भौ, ना. द. मयो । ३. मो. त । ४. मो. चाहु (=चाहउ), धा. द. उ. स. चायो, ना. म. चाह्यो, अ. चाहउ, फ. चाहिउ ।

(२) १. मो. धा. तीन प्रनाम (प्रणाम–मो.), म. तिन परमांन, अ. फ. ना. तिन परिणाम (परिनाम–फ.) । २. धा. करिउ, मो. कीअ, अ. फ. म. ना. उ. स. कियौ । ३. द. सिरि । ४. मो. नायु (=नायउ), धा. नायो, अ. नायउ, फ. ना. नायौ, म. नाद्यौ ।

(३) मो. किधु (=किधउं), धा. म. अ. फ. किधौं, उ. स. कैधौं, म. ना. कैधुं । २. मो. दंभ, शेष में 'डिंभ' । ३. धा. कवि कव्व, फ. कवि कवि, अ. कवि कछ्छु, ना. म. उ. स. कवी । ४. धा. अ. फ. प्रमानिय, म. परिवांनी, ना. उ. स. परवानी ।

(४) १. मो. सरसि (=सरसइ) वरु, धा. सरसइ कव, अ. फ. सरसैं वरु, ना. सरस वयन, उ. स. सरसैं वर, म. सरवे वर । २. धा. उच्चारहि, ना. उच्चहु । ३. धा. अ. फ. जानिय, द. ना. म. उ. स. बानी ।

टिप्पणी—(१) आयस < आदेश । गुनिअन < गुणिन्+जन । (४) सरसइ < सरस्वती ।

[५]

मुडिल्ल— ति[१] कवि भाखि[२] कवि पह संपत्ते[३] । (१)
गुन[१] व्याकरन कहि[२] रस वत्ते[३] । (२)

थकि प्रवाह वचन मुख मत्ता[१] । (३)
सुर नर श्रवन महि रहि वत्ता[१] ॥ (४)

अर्थ—(१) वे कवि आकर कवि चंद के पास पहुँचे। (२) उन्होंने गुण, व्याकरण और रस की वार्ताएँ कहीं (कीं)। (३) उनके मुख के वचनों से मत्त होकर [गंगा का] प्रवाह शिथिल हो रहा (४) और देवताओं तथा मनुष्यों ने उस वार्ता में अपने श्रवण लगा रक्खे।

पाठान्तर—(१) १. ना. ते। २ मो. आवि, शेष में 'आइ' (आय—म.)। ३. धा कवि यहि (< पहि) संपत्ते, उ. कवि सहि सपत्ते, अ. कवि पहि सपत्ते, फ. कवि देजम पत्ते, ना. कवि पहि सपत्ते, म. कवि पै सपत्ते।

(२) १. म उ. स. गुर। २. मो. अ. कहि, धा करहि, म. कहौ, द. ना. कहै, फ. कही। ३. धा. रस रत्तउ, ना. अ. फ रस रत्ते, म. मन मत्ते।

(३) १. धा. अ. फ. ना. गंगा मुरु मत्ती (मुख मत्ते—अ. फ. ना.), मो. वचन मुख मत्ता, म. उ. स गंगा सरसत्ती।

(४) १. धा. रहि वत्ती, म. द. रहै वत्ती, अ. फ. रहि वत्त, ना. रहै वत्ते।

टिप्पणी—(१) सपत्त < सम्प्राप्त। (२) वत्ता < वार्ता। (४) वत्ती < वार्त्ता।

[६]

मुडिल—
मुख परसपर देखत भयउ*[१] रत्ते ।‡ (१)
गुन[१] उचार करउ*[२] सरसत्ते[३] ।‡ (२)
गुन उचार चारु[१] तिनि[२] किमउ[३] । (३)
जानु[१] भुष्पइ[२] साकर[३] पय[४] लिमउ[५] ॥ (४)

अर्थ—(१) [जयचन्द के कवियों और चन्द के] मुख परस्पर दर्शन से रक्त [वर्ण के] हो गए—उन पर लालिमा आ गई। (२) उन्होंने सरस्वती का गुणगान किया। (३) उन्होंने [इस प्रकार रुचिपूर्वक] चारु गुणगान किया कि (४) मानो भूखे ने शक्कर और दूध ग्रहण किया हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नितचरण धा. अ. फ. में नहीं हैं।

(१) १. मो. मुष परसपर देषत भयु (=भयउ), ना. मुख परस्पर दिष भय, द. उ. स. मुख परसत परसपर, म. मुषपसपर परसपर।

(२) १. ना. द. उ. स. भनु (=भनउ), म. भनौ। २. मो. करु (=करउ), द. म. उ स. कर्यौ, ना. कह्यौ। ३. म. नर सत्ते, ना. सरते।

(३) १. मो. चार, धा चारि, म. सार। २. धा. तव, ना. द. म. तिन, उ. स. तन। ३ धा. किन्हो, मो. किनु (=किनउ), अ. किमउ, ना. म. उ. स. कीनौ, द. किन्नो, फ. कीनउ।

(४) १. धा. ज्उ, मो. जानुं, ना. द. अ. म. उ. स जनु, फ जनौ। २. धा. ना. भूषं, मो. भूषे (< भुषि=भूषइ), अ. भुष्पइ, फ भूष, म. भूषय, द. भुषे। ३. धा. म. उ. स. सक्कर। ४. मो. पलयि।

५. मो. लीतु (=लीनउ), धा. दिन्हो, अ. दिन्नउ, फ. दीनउ, ना. म. दीनो, उ. स. दीनो, द. दिनो।

टिप्पणी—(१) रत्त < रक्त। (३) सरसत्ते < सरस्वती। (४) साकर < शर्करा।

[७]

साटिका— अंभोरुह[१] माणंद (माननं ?) जोय[२] लरिसो[३] (लुरिसो?) डाडिम्म[४] लो बीयलो[५] । (१)
लोयणो[१] चलु चालु[२] चालु×[३] धारा[४] (अधरा?) बिबाउ[५] कीयग्गहे[६] । (२)
केसीरी[१] के साय[२] वैनिय रसो[३] चक्की मिगी[४] नागवी[५] । (३)
इंदो[१] मध्य[२] सु विद्यमान[३] विहतो[४] एरस्स[५] भाषा छवो[६] ॥ (४)

अर्थ—[जयचन्द के गुणियों ने कहा,] "जिसके अंभोरुह (कमल) सदृश आनन (?) पर ज्योति लोटती रहती है, [जिसके दाँत] दाड़िम के बीज के सदृश हैं, (२) जिसके चंचल लोचन चारु हैं और तथा बिंबकत्व ग्रहण किए हुए अधर भी चारु हैं, (३) जो अधिक केशों वाली है, और जिसके प्रस्तुत किए हुए उत्तम वैणिक (वीणा से उत्पन्न) रस से मृगियाँ और नागिनें चकित हो जाती हैं, (४) [उसी सरस्वती ने] इंदु के मध्य विद्यमान [अमृत तुल्य] छः भाषाओं को विहृत (अलग) करके [इस पृथ्वीतल पर] एरित किया है (प्राप्त कराया है)।"

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द फ. ना. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. अंभोरुह। २. धा. ना. जोइ, म. उ. स. लोइ। ३. ना. लरिसौं, उ. स. लरिसी। ४. धा. अ. फ. ना. दाडिम्म, म. दारिम, उ. स. दाडिम्ब। ५. मो. में 'बीयलो' का 'बी' मात्र है।

(२) १. धा. लोयंदे, अ. फ. लोयंनु, ना. द. म. उ. स. लोयन्ने। २. म. फ. ना. चल। ३. धा. मारु, म. चारु। ४. धा. कलज, अ. फ. भारा, द. उ. स. यवरं, ना. यवरा, म. यार। ५. मो. ब्बवाउ (=बिवाउ), धा. म. बिवाय, ना. बिवापि, द. अ. फ. उ. स. बिंवाइ (बिवायि—अ. फ.)। ६. धा. म. कीयो गहो, उ. स. ना. कीयो गहौ, अ. फ. कीयो गहों, द. कीयो गहो।

(३) १. अ. फ. कस्मीरी, द. किसरी, फ. कासीरी। २. धा. केसाहि, ना. केशाइ, फ. कोसाइ। ३. मो. वेणी सीसौं, धा. वेयन रसौं, द. वीनी रिसो, अ. फ. ना. वीना रसो। ४. मो. चक्की मिकी, धा. चिकि सकी, अ. फ. ना. चकी मृगी (मृगा—ना), द. चिकी गिगी, उ. स. चीकी मिकी, म. चि···। ५. फ. नागदी।

(४) १. द. यंदो। २. अ. फ. म. ना. मद्धि। ३. अ. फ. विद्दिमान, ना. विधिमान, उ. स. इंदमान। ४. मो. विहन, धा. विह्ना, म. अ. फ. विहनो, ना. विहितो, उ. स. विहितो। ५. धा. ए.च्छ, मो. एकठ। ६. मो. भाषा सठे, धा. भासा छंदो, फ. भाषाच्छवो, द. उ. स. भासा छठी, म. भाषा छठो।

टिप्पणी—(१) डाडिम्म < दाडिम। लुर < लुठ्। (२) बिंब < बिंब। (३) केसी < केशी। साय < साधि=उत्तम। वैनिय < वैणिक=वीणा से उत्पन्न। मिगी < मृगी। (४) एर्=प्राप्त करना, प्राप्त कराना।

[८]

मुडिल्ल— कवि देपत[१] कवि कउ*[२] मन[३] रत्तो[४] । (१)
न्याय[१] नयर[२] कनवजि[३] पहुत्तो[४] । (२)
कवि अग्गहि[१] अंगीकित[२] हीनउ*[३] । (३)
हेम बिना निम°[१] भयउ*° नग° दीनउ*°[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) [जयचन्द के] कवियों को देखकर कवि (चन्द) का मन रक्त (प्रसन्न या अनुरक्त) हुआ, (२) [उसने मन में कहा,] "मैं कन्नौज पहुँचा यह उचित ही हुआ। (३) कवियों के आगे [कवि] अंगीकृत होने के अभाव में [मेरी वही दशा होती] (४) जैसी स्वर्ण के अभाव में दीन हुए नग की होती है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

० चिह्नित शब्द धा. में नहा है।

(१) १. ना. दिप्पत, म. उ. स. पिप्पत। २. मो. कु (=कउ), धा. उ. स. को, म. ना. अ. फ. कौ। ३. ना. मनु। ४. मो. रत्त (=रत्तो), फ. म. ना. उ. स. रत्तौ।

(२) १. धा. न्याइ। २. मो. नयन (< नयर), धा. नयरि, म. नगर। ३. मो. कनजि, स. कवज, शेष में 'कनवज्ज'। ४. मो. पहुतो, धा. सपुत्तउ, अ. फ. संपत्तउ, फ. म. ना. उ. स. संपत्ती (संपतौ—म.)।

(३) १. धा. अंगह, म. ना. उ. स. एकह। २. मो. अगीनत, म. अंगीकृति। ३. मो. हीनु (=हीनउ), धा. हीना, म. उ. स. कीनो, ना. कीनो।

(४) १. धा. हेम विभा, म. उ. स. हेम सिंघासन, ना. हेम सिंह धानी। २. मो. मयु (=मय) नग दीनु (=दीनउ), म. उ. स. आसन दीनौ, ना. गुन दीनौ।

टिप्पणी—(१) रत्त < रक्त। (२) नयर < नगर।

[६]

मुडिल्ल—
घहो चंद वरदाइ[१] कहावहु[२]। (१)
कनवज्जह[१] दिप्पन नृप°[२] आवहु[३]।[४] (२)
जउ* सरसइ*[१] वरु जानहु[२] रंचउ*[३]। (३)
तउ* [१]अदिट्ठ°[२] वरनउ*[३] नृप संचउ*[४] ॥[५] (४)

अर्थ—(१) [जयचन्द के कवियों ने कहा,] "हे चन्द, तुम वरदायी कहाते हो, (२) और कन्नौज के राजा (जयचन्द) को देखने आ रहे हो। (३) [अत.] यदि सरस्वती (वाणी) के बल से कुछ भी जानते हो, (४) तो बिना देखे नृप (जयचन्द) का सच्चा वर्णन करो।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. वरदायि, म. ना. वरदाय। २. धा. कहुं हुँ, फ. कहाउह।

(२) १. धा. फ. कनवज्जहि। २. मो. दिषिन नृप, अ. त्रिप दषिन, फ. त्रिप दष्षिन, म. उ. स. त्रिप देषन। ३. धा. आयहुँ। ४. धा. में यहाँ और है : जे सरसइ जवनहु त्रिप संचउ। (तु० चरण ३+४)

गजपति गरुव गेह किमि गज्जहु।
किमि गुनि पंगु राइ मन रंजहु ५

(३) १. मो. जु सरसि (=जउ सरसइ), धा. जे सरसइ, अ. फ. जौ सरसै, ना. जो सरसै, उ. स. जो सरसति, म. सरस्वतिहा। २. धा. जानउ वर, अ. जानइ वर, ना. वरु है कछु, द. म. उ. स. जानो वर (वरि—म.)। ३. मो. रचु (=रचउ), ना. रंचौ, अ. फ. म. उ. स. चाव (चाउ—अ. फ.)।

(४) १. मो. तु (=तउ) धा. तो, अ. फ. म. उ. स. तौ। २. धा. अदिट्ठ, अ. फ. ना. म. उ. स.

अदिष्ट । ३. मो. वरनु (=वरनउ), धा. वरनहि, अ. फ. वर्णहु, ना. वरणौं, म. उ. स. वरनौ । ४. मो. संचु (=संचउ), ना. संचौ, अ. फ. म. उ. स. भाव (भाउ–फ.)। ५. म. में प्रस्तुत छन्द का उत्तरार्द्ध तीन छन्द पूर्व भी आया है, और वहाँ पाठ है : जौं सरसे वर है सुम रचौ । तौ अदिष्ट वरनौ मिप सचौ ।

टिप्पणी—(४) अदिट्ठ < अदृष्ट । संच < सत्य ।

[१०]

साटिक—साइ सीसं[१] चमरेन स्वेत सतुसा[२] किंकिन अंदोलिता[३] । (१)
बालइ[१] *अर्क समान जान तेजं[२] क्रीटीय अंमोलिता[३] ।+(२)*
सत्रू पत्त समस्त मत्त दहियं[१] सिंधू प्रयाती[२] खलं । (३)
कंठे हार रुलंति आनि×[१] *अंतक समं[२] पृथिराज[३] हालाहलं ॥ (४)*

(१) [चंद ने कहा,] "उस (जयचंद) के सिर पर अतियुक्त (उत्कृष्ट) स्वेत चामरों से शत-शत किंकिणियाँ आंदोलित हो रही हैं। (२) उसका तेज मानो बाल सूर्य के समान है और उसका क्रीट अमूल्य है। (३) समस्त मत्त क्षत्रिय शत्रु दग्ध हो चुके हैं, और खल गण भाग कर समुद्र [पार की दिशाओं] में चले गए हैं। (४) उसके कंठ में हार हिल रहे हैं, वह अन्य अंतक (यम) के समान है, और पृथ्वीराज के लिए हालाहल [तुल्य] है—अथवा उसके लिए पृथ्वीराज हालाहल [तुल्य] है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

+ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

× चिह्नित शब्द धा. म. उ. स. में नहीं है।

(१) १. मो. साईं सीसं, धा. किं साम, ना. द. किं सीसं, अ. फ. सीसं सा, म. उ. स. जा जीसं। २. धा. चुवरेण सेतु सतुसा, मो. चमरेन स्वेत ससा, अ. फ. चंवरेन सेठ (सेव–फ.) छत्रु (छतु–फ.) जा, म. उ. स. चमरायते सित छत्तं, ना. द. चमराय सेत छत्रं (छत्रकि–ना.)। ३. धा. अ. फ. किंकि त (न–अ फ.) अंदोलिता, म. उ. स. पंपिझ (पंपीरु–म.) ऽंदोलिता।

(२) १. मो. बालि (=बालइ), धा. ना. द. अ. फ. म. उ. स. बाला। २. धा. जाम तेज, ना. जाम तिजितं, म. उ. स. तेज तपनं। ३. मो. क्रीर्दय अंदोलिता, धा. अमीलि मोलिता, उ. स. क्रीटी तपं मौलिता, ना. क्रीटो (< क्रीटी) दिपं मोलिका, म. क्रीटी तपं मौलिका।

(३) १. धा. शत्रे शास्त्र समस्त खत्त दहियं, अ. फ. सत्रै (स–फ.) सत्र समस्त मत्त दहियं, ना. म. शत्रो शत्र (सत्रौ सत्रु–म.) समस्त खित्त (खिति–म.) दहियं, उ. स. सत्रो सत्र समस्त खिति दहियं। २. धा. प्रजाती, अ. फ. प्रजाता, ना. म. द. उ. स. प्रयाते।

(४) १. द. रुलंति आन, म. रुलंत ['आन' शब्द नहीं है] २. धा. अंतिनि समें, अ. फ. अंतक समो, द. अंतक समा। ३. धा. म. द. ना. प्रिथीराज, उ. स. प्रथीराज।

टिप्पणी—(१) साइ < साति=अति युक्त, उत्कृष्ट। (३) पत्त < क्षत्रिय (४) आनि < अन्य।

[११]

दोहरा— सत सहस बजन[१] बहुल[२] बहुल[३] बंस बिधि नंद[४] । (१)
सत सहस[१] संपधुनि[२] *सुहिल[३] जांम[४] जयचंद ॥ (२)*

अर्थ—"(१) [जयचंद के महल में] शत सहस्र बहुतेरे वाद्य हैं, बहुत सी बंधियाँ [और] आनंद की विधियाँ हैं। (२) प्रत्येक प्रहर उसके महल में शत सहस्र शंखों की ध्वनि होती है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) मो. सत सहस बजनं, धा. छन सरद जव जन, अ. फ. छत्र सरद बज्जन, ना. द. म. उ. स. छत्र सहस (सहस छत्र–ना.) बज्जन। २. मो. स. बहल। ३. धा. महल। ४. मो. मंद।

(२) १. ना. द. म. उ. स. एक सहस। २. मो. संप धुनी, धा. संष ध्वनिअ, अ. फ. संषह ध्रुनिय, म. उ. स. संषह धुनी। ३. मो. गुहिल, शेष सब में 'महल'। ४. उ. स. जानि।

टिप्पणी—(१) बज्जन < वाद्य।

[१२]

दोहरा— मंगल गुरु बुध सुक सनि[१] सकल सूर उदे[२] दिठ्ठ। (१)
आतपत्त[१] ध्रुव तिम तपइ*[२] सुभ[३] जयचंद बयिठ्ठ[४] ॥ (२)

अर्थ—"(१) समस्त शूर मंगल, बृहस्पति, बुध, शुक्र, तथा शनि [आदि] के रूप में उदित दिखाई पड़ रहे हैं, (२) और उसका छत्र ध्रुव के समान तप रहा है, [इस प्रकार की सभा में अपने 'चंद्र' नाम को सार्थक करता हुआ] शुभ जयचंद बैठा हुआ है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. अ. फ. सुमि, स. सवि। २. धा. ना. द. उ. स. उइ, अ. फ. उद, म. उडि।

(२) १. धा. आठपत्त। २. धा. तमतिमइ, मो. तिमतपि (=तपइ), द. तिम तपै, अ. फ. तम तपै, ना. म. उ. स. जिम तपै। ३. धा. मो. ना. शुभ, म. उ. स. सुमि। ४. मो. विपट्ठ, धा. बइट्ठ, अ. फ. बयिठ्ठ, म. उ. स. बयट्ठ।

टिप्पणी—बयिठ्ठ < उपविष्ट।

[१३]

भुजंग— आसने[१] सूर बट्ठे[२] समाहं[३]। (१)
जित्ति[१] जे पिति राय के सु राहं[२]। (२)
धम्म[१] दिगपाल[२] धर धरनि घंडं। (३)
धरहिं[१] सिर सोभ[२] दुति कनक दंडं।° (४)
जिने[१] साजिते[२] सिंधु[३] गाहे* सुपंगं। (५)
तिमिर तजि[१] तेज[२] भिय ज्यउं*[३] कुरंगं[४]।[५] (६)
जिनि[१] हेम परबत्त ते°[२] सच्च घाहे[४]। (७)
एक[१] दिन भट्ठ[२] सुरतान साहे[३]। (८)
जंपियं[१] सघ[२] सो चंद चंडं[३]। (९)
थप्पियं[१] जाय तिरहूति पिंडं[२]। (१०)

दषिखनी[१] देस थप्पउ[*] बिचारे[२] ।[×] (११)
उत्तर्‌यउ[१] सेत बंधइ पहारे[२] ।[×] (१२)
करया[१] डाहल दु[*२] बार बांध्यउ[*३] । (१३)
सिध्धु[१] सोलंकि[२] कइ[*३] बार पेध्यउ[*४] । (१४)
तिघ[१] दिन युध्ध करि[२] रुंड मुंडा+[३] । (१५)
तोरि[*१] तिलिंगग[२] गोवल्ल कुडा[३] । (१६)
छंडिअउ[*१] बंधि[२] इक गुंड[३] जीरा । (१७)
लिये[१] वइरागरे[*२] सव्व[३] हीरा । (१८)
गज्जिनि[*१] सूर[२] साहाब साही । (१९)
सेवते[१] बंधि[२] निसिरुत्ति पाही (यांही?)[३] । (२०)
भुल्लि[१] बिम्भीषन[२] पाहिं[*३] रोरे[*४] । (२१)
रोस[१] कइ[*] सोस[२] दरिआइ लोरे[*४] । (२२)
बंधि[१] पुरासान किय[२] मीर बंदा । (२३)
सुतउ[*] राठ वयराठ[१] विजपाल[२] नंदा । (२४)
बंस[१] छत्तीस आवइ[*२] हकारे । (२५)
एक[१] चहूआन प्रिथिराज[२] टारे ॥ (२६)

अर्थ—"(१) [जयचंदकी सभा में] आसनों पर [ऐसे] शूर गण हैं जो बढ़े हुए (समृद्ध) और सुव्यवस्थापित हैं, (२) जिन्होंने क्षिति के राजाओं को जीत कर [उन्हें जयचंद में] राचित (अनुरक्त) कर दिया है। (३) वह (जयचंद) धरणी के खंड (भरत खंड) को धारण कर दिक्पालों का धर्म वहन कर रहा है (४) और सिर पर वह [छत्र के] कनक-दंड की शोभा और द्युति को धारण कर रहा है, । (५) जिस पंग (कन्नौज राज) ने [सेना] साज कर सिंधु [नदी] का अवगाहन किया (६) [जिसके आगे] तिमिर अपना तेज छोड़ कर कुरंग (मृग) [के समान] भयभीत हुआ, (७) जिसने हेमकूट (मेरु के समीपस्थ एक पर्वत) [में स्थित राज्यों] को संपूर्ण रूप से ढहाया और (८) एक दिन में आठ सुल्तानों का साधा (वश में किया)। (९) चंड (उग्र) चंद सत्य कहता है कि उस (जयचंद) ने (१०) तिरहुत जाकर पिंड (सेना) स्थापित की। (११) 'दक्षिण देश को अर्पित करूँ' ऐसा विचार कर (१२) वह सेतुबंध के पर्वत पर जा उतारा। (१३) उसने डाहल देश के कर्ण को दो बार बंदी किया, (१४) और [गूर्जर के] सोलंकी सिद्ध (जैन) राजा को कई बार खदेड़ा। (१५) उसने तीन दिनों तक रुंड मुंड युद्ध करके (१६) तिलंग (त्रिलिङ्ग) और गोवल कुंड (गोल कुंडा) को तोड़ा (वश में किया), (१७) एक मात्र गुंड के शासक जीरा को बाँध कर (बंदी कर) के छोड़ दिया, (१८) और वैरागर देश से सब हीरे ले लिए। (१९) गजनी के शूर शाह शहाबुद्दीन की (२०) जो सेवा में था, उस निसुरत खाँ (?) को बंदी किया। (२१) जो भूल कर [लंका जा कर] विभीषण पर रोर (आक्रमण) कर बैठा, (२२) अपने रोष के शोषण द्वारा समुद्र को चंचल कर डाला (२३) और जिसने खुरासन के अमीर बंदा को बंदी किया, (२४) वह तो राठ प्रदेश का पति राष्ट्र [कूट] विजयपाल का पुत्र [जयचंद] है। (२५) उसके बुलाने पर छत्तीस कुलों के क्षत्रिय आते हैं, (२६) एक मात्र चहूआन पृथ्वीराज को छोड़कर।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित चरण या शब्द मो. में नहीं है।

× चिह्नित चरण उ. में नहीं हैं।

+ चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. अ. फ. आसन, द. ना. आसनं, म. उ. स. जहाँ आसनं (आसनं–उ. स.)। २. अ. ठट्टे, म पट्टे,। ३. मो. समाइ, मो. के अतिरिक्त सभी में 'सनाइ।

(२) १. धा. अ. जीति, मो. जितीये, फ. जित, द. जिनं जित्ति, म. उ. स. जिनै जीति, ना. जित्ती। २. मो. छितिराय के सुराइ, धा० छितिराइ किय ना सुराइ, अ. फ. छिति (छित–फ.) राइ किनं सुराइ (सुनाई–अ.), म. उ. स. छितिराय किय एक राई, ना. ये राइ छिति के सराइं।

(३) १. अ. फ. धमे, ना. भ्रम्म, म. उ. स. धरा भ्रम (भ्रम–म.)। २. ना. भ्रिगपाल।

(४) १. अ. फ. हरहि, म. उ. स. धरै उन। २. ना. सोम।

(५) १. मो. यते, शेष में 'जिनै'। २. धा. सज्जिगे, अ. फ. सज्जते, ना. साजतै, द. म. उ. स. साजते। ३. द. सिधि। ४. मो. गाहि (= गाहै) सुपग, धा. अ. फ. गाहो (<गाहि=गाहै) सुपंग (सुपंगुं–फ.), द. म. उ. स. गाहै=(गाहैं–उ. स.) सुपंग (सुपंगा–म.), ना. गाही (< गाहि=गाहै) सुपगा।

(६) १. मो. तिमिर तज, ना. तिमर तप, म. उ स. वन तिमिरि (तिमर–म.) नजि, द. तिम तिम। २. धा तेजु, अ. फ न मेज। ३. मो. मीय ज्यु (= भिय जाउ), धा० भंज्यो, ना. म. उ. स. भाजे + द. मगे। ४. ना. कुरगा। ५. ना. में यहाँ और है : जिनैं साज सैं इंदु कपे सुचदं। तिमरजा तीर तरण रंग नदं।

(७) १. मो. जेने (= जिनि), ना. जिनें शेष में 'जिनै'। २. फ. नै, म. से। ३ धा. सवे। ४. धा. म. ना. दाहे (दाहै–ना. अ. फ.)।

(८) १. अ. फ. इक, म. उ. स. जिनैं एक, ना. जिनें इक,। २. धा. मो. आठ, ना. अ. फ. अट्ठ। ३ ना. साहै।

(९) १. धा. ना. अ. फ. जपियो, म. उ. स. जसं जपियं। २. धा. संच, फ. सव, ना. सघ। ३. मो. चंद चंदं, धा. चंड चंडं, शेष में 'चंद चंडं'।

(१०) १. म. उ. स. जिनैं (जिनै–म.) थप्पियं। २. मो. तिहूति पिंढि, अ. तिरहुत्ति पंढ (< प्यंडं), फ. तिरहत्त प्यंडं, म. उ. स. तिरहूत पिंड।

(११) १. धा. दच्छिनी, मो. दक्षिनी (= दक्खिनी), अ. ना. दछिछनं, फ. दछिनं, म. उ. स. जिनैं दच्छिनी। २. मो. आपु (= आपउ) विचारे, धा. अप्पो विचारं, अ. फ. अप्पे विचार, उ. स. अप्पे विचारं, म. द. ना. अप्पौ (अप्पौ–म. ना.) विचारे (विचारं–ना.)।

(१२) १. मो. उतरयु (= उत्तरयउ), धा. द. उत्तरयो, ना. उत्तरयौ, फ. उत्तरे, म. उ. स. जिनै उत्तरयौ। २. धा. सेतवधे पहारं, द. उ. स. सेतुबधं पहारै (पहारे–ना. द.), अ. सेतु बंधे पहारं, फ. सेत बधे पस्तारे, म. सेत पाज बंध पहारे।

(१३) १. मो. करण डाहल (= डाहल), म. उ. स. जिनैं करन डाहाल, धा. अ. फ. कर्ण (कर्न–धा.) डाहाल। २. मो. दु (= दु) धा. ना. दुई, म. उ. स. दुज। ३. मो. बार बंधु (= बाध्यउ), धा. बान बंध्यो, अ. फ. बान बेध्यउ, ना म. उ. स. बान बेध्यौ।

(१४) १. मो. धा. अ. ना. सिंधु (= सिंधु), फ. सिंध, द. सिंधि, म. उ. स. जिनै सिंह। . मो. के अतिरिक्त सभी में 'चालुक' है। ३. मो. कि (= कइ), धा. म ना. के, उ. स. कय। ४. मो. ध्यु (= वेध्यउ), धा. द. वेध्यो, ना. म. उ. वेध्यौ, अ. वेध्यउ, फ. वेध्यौ।

(१५) १. मो. धा. तीन, म. उ. स. तिन (= जिन)। २. धा. अ. फ. दिन जुद्ध भरि, द. ना दिन जुद्ध भिरि, म. उ. स दिन जुद्ध भिरै (भिरे–म.)। ३. अ. फ. रुंड मुड, उ. स. भूमि रुंडं, म. भूमि रुंडं, ना. भूमि मंडं।

(१६) १. मो. उरि (<तुरि=गोरि), म. उ. स. वरं तोरि, फ. मोरि। २. धा. ठिठंग, मो. तिव्वग (=तिलिंग), अ. फ तिरिकग, म. ना. उ. स. तिहंग। ३. मो. गोवल गूडा, धा. द. गोवछ कुड, म. अ. फ. ना. गौवाल (गौवाल-म.) कुड, उ. स. गोआल कडं।

(१७) १. मो. छडिउ (=छडिअउ), धा. अ. फ. छडियौ, ना. छडियौ, म. उ. स. जिनैं छडियो। २. फ. बध्य (=वधि)। ३. मो. इक गुड, ना. इकु गौडु।

(१८) १. ना. अहे, म. उ. स. अहे लिहु (लोथ-म.)। २. मो. विरागरे (=वइरागरे), धा. वरागिरि (=वरागिरह), ना. वेरागर, शेष में 'वेरागरे'। ३. म. अब्व।

(१९) १. मो. गजेनै (<गजिनि), धा. गाजने, ना. द. गजजनं, म. उ. स. जिनं गजने (गजनें-म.)। २. अ. फ. सत।

(२०) १. ना. मुकरयौ, म. उ. स. तिनं (तिन-म.) मोकरयो (मोकल्यो-म.)। २. धा. बंध, अ. वंधि, फ. वंधु, ना. गजमि, म. उ. स. सेव। ३. धा. निग्रुरत्त पाई, अ. फ. निग्रुरत्ति (निग्रुरत्त-फ.) पाहो, द. म. निग्रुरत्ति माई, उ. स. निग्रुरत्ति माहीं।

(२१) १. धा. मो. अ. फ. भुक्ति, द. भुलि, म. उ. स. वर भुलि (भुलि-म.)। २. मो. विमीषनो, धा. मलि छने, ना. भमीपनं। ३. धा. अ. फ. जाइ, द. म. उ. स. जोव। ४. मो. रोरि (=रौरे), ना. रोरें, शेष में 'रोरे'।

(२२) १. ना. तो रोस, म. उ. स. तहां रोस। २. धा. ना. उ. स. कै, म. अ. फ. के। ३. धा. सात। ४. मो. दरि आर लोरि (=लोरे), धा. उ. स. अ. फ. दरिया हिलोरे, म. दरिया लिलोरे, ना. दरिया हिलोरें।

(२३) १. म. उ. स. जिनं वंधि। २. ना. कीये।

(२४) १. धा. राव राठोर, मो. सुतु (<सुतउ) राठवय राठ, म. उ. स. इसौ रठ्ठवर राय, अ. फ. सुतो राठौर, ना. सुत्तं राठौड, द. सुत रठोर। २. म. अ. विजैपाल, विज्जैपाल।

(२५) १. म. उ. स. जहां वंस। २. धा. म. द. ना. आवै, मो. आवि (=आवइ) अ. फ. आवे।

(२६) १. म. उ. स. परं मक। २. उ. स. पुंमान।

टिप्पणी—(१) समाइ < समाहित=भली भाँति व्यवस्थापित। (२) राह < राधित=प्रसन्न, अनुरक्त। (३) मिय < भीत। (८) साह < साधु=वश में करना। (११) आय < जर्यय्। (२१) रोर < रोल [देशज]=कलह। (२२) लोर < लोल। (२४) राठवय < राष्ट्रपति [अब भी 'राठ' नाम की एक तहसील है]

[१४]

दोहरा— सुने ति नृप[१] रिपु[×] कउ[*] सवद[२] तम तम[३] नयन[४] सुरत्त[५]। (१)
दल[१] दलिद्द[२] मंगन घरह[३] सु[४] को मेटइ[*५] विधिपत्त[६] ॥ (२)

अर्थ—(१) उन्होंने (जयचंद के कवियों ने) [जब अपने] नृप (जयचंद) के रिपु (पृथ्वीराज) का शब्द (नाम) सुना, तो उनके नेत्र तमतमा कर लाल हो गए। (२) [उन्होंने चंद की इस प्रकृति को देखते हुए अपने मन में कहा,] "यदि मंगन के घर में दारिद्रय का दल हो, तो विधाता के उस पत्र (लेख) को कौन मिटा सकता है?"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
(१) १ धा. अ. फ. सुनि नृपति (फ. में 'पति' नहीं है), ना. द. म. उ. स. सुनत नृपति।

२. मो. [रिपु] कु (=कउ) सवद, ना. रिपु को सवद, धा. रिपु के सवद, अ. रिपु को सबद, फ. रिप को सवद, म. उ. स. रिपु को वयन । ३. मो. द. ना. म. उ. स. तनमन, धा. तामस । ४. अ. फ. ना. मंत । ग. मयन । ५. द. स रत ।

(२) १. धा. दरि, अ. फ. दर, द. म. उ स. दिय, ना. दी । २. धा. दरिद, मो. दलिद म. उ. स. दरिद, ना. दाळिद । ३. धा. अ. फ. सुपह (सुपहि–फ) । ४. धा अ. फ. उ. स. में यह शब्द नहीं है । ५. धा. मेट्ट, मो. [मटि] (=[मे] टइ) मिटैं (<मेटि=मेटइ), द. ना. म. उ. स. मेटैं । ६. फ. पति ।

टिप्पणी—(२) दलिद < दारिद्र्य । पत्त < पत्र ।

[१५]

दोहरा— *आदरु किय*[१] *नृप तास कउ*[*२] *कहउ*[*३] *चंद कवि*[४] *थाय*[५] *। (१)*
डिल्लिय पति जिहि विधि रहइ[*१] *सु वत्त कहहि*[२] *समझाय*[३] *॥ (२)*

अर्थ— (१) [जयचंद के समक्ष पहुँचने पर] नृप (जयचंद) ने उसका आदर किया, और कहा, "चंद कवि, आ; (२) दिल्ली पति (पृथ्वीराज) जिस प्रकार रहता है, वह वार्ता मुझे समझा कर कह ।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. धा. किउ, ना. करि । २. मो. कु (=कउ), धा, अ. फ. कं, ना. म. उ. स. कौं । ३. मो. कइ (=कहउ), धा. कह्यो, अ. कहयउ, ना. द. फ. म. उ. स. कह्यौ । ४. मो. कवि । ५. धा. अ. फ. ना. उ. स. आउ ।

(२) १. मो. ना. धा. अ. फ. डिलीय (धा. दिछी, अ. फ. दिल्लिय) पति जिहि विधि रहइ (रहि=रहइ मो., रहै–अ. फ.), द. म. उ. स. मिले मोहि (न मोहि–स. न, मुहि–म.) दिल्लिय धनी । २. धा. सु वत्त कहे, अ. फ. सु तौ यहइ, ना. सुतौ मोहि, म. उ. स. सुवत्त कहिग, द. सुवत्त कहहिं । ३. धा. अ. फ. समुझाउ, मो. समुझाइ, द. ना. उ. समझाउ ।

टिप्पणी—(२) वात < वार्त्ता ।

[१६]

दोहरा— *कितुक*[१] *कंति*[२] *संभर*[३] *धनी कितुक*[४] *देस दल विंदु*[५] *। (१)*
कित्त इक रन[१] *हत्थग्गरु*[२] *सु हसि नृप बुमझउ*[*] *चंद*[३] *॥ (२)*

अर्थ—(१) [जयचंद ने पूछा,] "साँभरपति में कितनी कांति है और कितना उसका देश और दल-वृन्द है ? (२) कितना वह रण में हाथ [चलाने] में आगे है ?" यह हँस कर नृप (जयचंद) ने चंद से पूछा ।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. मो. किलुक, धा द. किनकु, अ जितकु, फ. जिनकु, म. उ. स. किमक । २. मो. कति, शेष सभी में 'पुर' । ३. ना. सँभर । ४. मो. कित्त एक, धा. द. अ. फ. कितकु, म. उ. स.

कितक । ५. मो. दल ब्यंदु (=विंदु), धा. दल बंध, अ. फ. कुलचद, ना. दल चंद, उ. स. दल (बल–उ.) बंधि (बंध–उ.), म. दल बध ।

(२) १. धा. किनोकु रन हथ अगलउ, मो. कितुइक रन हथ गउ, अ. फ. किनकु (कितिकु–फ.) रन हथ्थअगलो, ना. वितुक रण हथ अग्गारो, द. म. उ. स. कितक हथ्थ रन (रण–द.) अग्गारो । २. मो. सु हसि नृप बुंझ (=बुझ्झउ) चंद, धा. पुच्छइ राउ सु चंद, अ. फ. पूछउ राइ सुचंद, ना. द. म. उ. स. हसि नृप बुझ्यौ (बूझीय–म.) चंद ।

टिप्पणी—(१) कंति < कान्ति । विंद < वृन्द ।

[१७]

दोहरा— सूर जिसउ*[१] गयनहि[२] उवइ*[३] दल दव[४] मारन[५] भासि[६] । (१)
जब लगि अरि कर उचरइ*[१] तब लगि देइ[२] पचास ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "जिस प्रकार गगन में सूर्य द्रव (जल) दल के मारने के लिए उदित होता है, [उसी प्रकार पृथ्वीराज भी है]; (२) जितनी देर में शत्रु हाथ उठाता है, उतनी देर में वह पचास [हाथ] दे देता है।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सूर जिसु (= जिसउ), धा. सूर जिसो, अ. म. उ. स. सूर जिसौ, ना. सूरि जसै, फ. सूरज सौ । २. धा. म. उ. स. गयनइ, अ. फ. ना. गैंनह । ३. मो. उवि (= उवइ), धा. उ. स. द. उवै, ना. म. उगैं, अ. फ. उवे (< ऊवि = उवइ) । ४. धा. दल बल, मो. दल दव, फ. दल बदल, ना. अरिदल, शेष सभी में 'दल बल' । ५. धा. मरनां, ना. अरिन, अ. में 'न' मात्र है, फ. यन । ६. धा. भासि, शेष में 'भास' ।

(२) १. मो. धा. अरि कर उचवि (= उच्चवइ), धा. अरि नृप भज्जमै, ना. म. उ. स. अरि कार (करि–म.) उठ्ठवै, अ. नृप अरि उठवे, फ. अरि नृप उठवे । २. म. देय, धा. देहि ।

टिप्पणी—(१) गयन < गगन । उव < उदय् । दव < द्रव ।

[१८]

दोहरा— मुकुट बंध[१] सवि[२] भूप हइं*[३] लष्षन*[४] सर्ब[५] संजुत्त[६] । (१)
बरनहि किनि उनहारि रहि[१] कहि चहुआन स उत्त[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) [जयचन्द ने कहा,] "[मेरी सभा के] सब भूप मुकुट-बंध हैं और वे सब लक्षणों से युक्त हैं। (२) तू वर्णन कर कि किसकी उनहार (अनुकृति—आकृति) [उसकी] रही; तू चहुआन (पृथ्वीराज) का उक्ति पूर्वक कथन कर।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. ना. संध । २. मो. ना. सवि, शेष सभी में 'सब' । ३. मो. हि (= हइ), म. उ. स. है, धा. अ. फ. ना. हैं । ४. धा. फ. म. उ. स. लच्छिन, मो. लषन (= लष्षन), ना. लछ्यन

(= लष्यन), द. लछयन, अ. लजन। ५. धा. मो. सर्वं, शेष में 'सव'। ६. धा. सुजुत्त, अ. फ संजुत्त।

(२) १. धा. बरन वइउइनिहारि इह, अ. बरनि जेनि उनहारि यह, फ. बरन जेनु उनिहारु उह, द. ना. उ. स. कौन बरन उनहार (बरण अनुहार—ना.) किहिं, म. कौन बरन उन दीन कहि। २. धा. ज्यूं चहुआन संउत्त, म: कटि चहुआन सपूत, अ. फ कटि चहुवान सजुत्त, म. उ. स. कहु (कहि—म. उ.) चहुआन सुउत्त, द. ना. जस चहुवान सउत्त।

टिप्पणी—(२) उनहारि < अनुकार। उत्त < उक्ति।

[१९]

कवित—

बत्तिस लक्खन* सहित[२] बरस छत्तीस मास छह। (१)
इम[१] दुज्जन[२] संगहइ*[३] राह[४] 'जिम[५] चंद सूर गह[६]। (२)
वय[१] छुट्टइ*[२] महिदान[३] दुयन[४] छुट्टइ* जि[५] डंड दिहि। (३)
एक[१] गहि गहि[२] गिरिकंन[२] एकु अनसरइ*[३] चरन गहि[४]। (४)
चहुवान चतुर चावद्दिसहि[१] बलि हिंदुआन[२] सवि[३] हथ्थि जिहि। (५)
इम जंपइ चंद विरद्दिआ*[१] सु प्रथीराज[२] उनिहारि[३] एहि[४]॥ (६)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "पृथ्वीराज बत्तीस [शुभ] लक्षणों से युक्त है, और छत्तीस वर्ष तथा छः मास का है। (२) वह दुर्जनों को इस प्रकार बंदी करता है जैसे राहु चंद्रमा तथा सूर्य को पकड़ता है। (३) वे मही दान से छूटते हैं, तो दुर्जन दंड दे कर छूटते हैं। (४) एक (कुछ) गिरि-कंदरों का पकड़कर—उनमें आश्रय लेकर [छूटते हैं] और एक (कुछ) उसके चरण पकड़ कर उसका अनुसरण करते हैं। (५) चतुर चहुआन (पृथ्वीराज) ऐसा है कि जिसके हाथ में चारों दिशाओं के बली हिंदू [शासक] हैं।" (६) चंद विरदिआ इस प्रकार कहता है, "पृथ्वीराज की अनुहारि (अनुकृति-आकृति) इस प्रकार की है।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. बत्तिस लक्षन (= लक्खन) सहित, धा. लच्छन सहित बत्तीस, अ. फ. बत्तीस लष्षिन (लष्पन—फ.) सहित, द. ना. बत्तीसह लछिन (लक्ष्यन—ना.) सहित, म. उ. स. बत्तीसह (बत्तीस—म.) लच्छिनह।

(२) १. धा. इन, म. इह, स. इस। २. अ. फ. दुर्जन, ना. दुरजन। ३. मो. सगहि (= संगहइ), धा. संग्रहे, अ. फ. संग्रहे, ना. संग्रहहि, म. उ. स. संग्रहत। ४. धा. राहु। ५. अ. जिमि, स. जिस। ६. मो. गहि, धा. अ. फ. गहइ, ना. म. उ. स. ग्रहइ।

(३) १. धा. उव, मो. वय, अ फ वे, द इय, ना. वय, उ. स एक, म. इक। २. मो. छुटि (= छुटइ) धा. छुट्टे, द. म उ. स. छुट्टहि, अ. फ. ना छुट्टे। ३. मो मिदि (< महि) दानि, शेष सब में 'महि दान'। ४. धा. दुजन, म. इक। ५. मो. छूटि (= छूटइ) जि, धा म छुट्टेति, ना. छुट्टति, फ. छुट्टतिह, उ. स. छुट्टहिति. म. छुटहित। ६. धा. दंडयहि, अ. फ. दंड कहि, उ. चंद भर, ना. स. दंड भर, म. दंड भरि।

(४) १. धा. इक्क गहहि, अ. फ. इक गहिहि, ना. इक्क गहेहि, द. इक गहि है, उ. स. एक गहहि, म. इक ग्रहहि। २. मो. में 'कंन' शेष सभी में 'कंद'। ३. मो. एकु अनसरि (= अनसरइ), धा. म. अ.

फ. ना. इक्क अनुसरहिं (अनुसरहि—अ. फ. ना.), उ. स. एक अनुसरहि। ४. मो. षरन (=चरन) गहि, म. चरन पर, उ. स. चरन परि।

(५) १. मो चावद्दसहि, धा. चहुं दिसहि, अ. चहुं दिसहु, फ. चोहुं दिसइ, म. चावौदिसहि, ना. चावदिशिहिं। २. धा. अ. वलि हिंदुवान (हिंदवान—अ.), फ. बलि इंदवान, शेष सभी में 'हिंदुवान' (हिंदवान—म.) मात्र है। ३. मो. सिव (< सवि)। ४. मो. इथि शेष, में 'इथ'।

(६) १. मो. विरदीउ (=विरदिअउ), धा. अ. फ. म. उ. स. वरदिया, ना. विरदीया, द. वरदियो। २. धा. प्रिथीराज। ३. धा. अनुहार, ना. अणुहरि, अ. उनहार, फ. उनहार, ना. द. उ. स. अनहारि, म. उनिहार। ४. धा. अ. फ. इहि।

टिप्पणी—(३) दुवन < दुर्जन। (४) कंन < कद। (६) अनुहारि < अनुकार।

[२०]

दोहरा— दिष्षि[१] थवायत[२] थिरु[३] नयन[४] करि[५] कनवज्ज[६] नरिंद। (१)
नयन नयनं अंकुरि[१] परिय[२] मनु+ इकु°[३] थह° दोइ°[४] मयंद[५]॥ (२)

अर्थ—(१) [यह सुनकर] कन्नौज-नरेन्द्र ने जब [चन्द के] थवाइत (तांबूल-पात्र-वाहक—पृथ्वीराज) को स्थिर नयनों से देखा, (२) तो नेत्रों नेत्रों में अंकुर (बल) पड़ गए, [और ऐसा लगा] जैसे एक ही आश्रय-स्थान में दो मृगेन्द्र [मिल गए] हों।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

° चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं।

+ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. द. दिष्षि, म. उ. स. देषि। २. धा. थवाइत, फ. थवाइति, स. थवाइत, ना. तवाइत। ३. द. थिरि। ४. म. तपन। ५. मो. कर, अ. फ. कहि। ६. फ. कमउज्ज।

(२) १. म. नयने अरि, धा. अ. फ. नयन अंकुरि। २. धा. परइ, ना. परी, अ. फ. परे। ३. मो. इकु, धा. अ. फ. मनुं, म. मनौं इक। ४. मो. दोउ, अ. फ. उभै, ना. म. दोय। ५. धा. मइंद।

टिप्पणी—(१) थवायत < थइआइत्त < स्थगिकावत् = तांबूल-पात्र-वाहक। (२) थह [देशज] = निलय, आश्रय, स्थान। मयंद < मृगेन्द्र।

[२१]

दोहरा— जे त्रिय[१] पुरुष[२] रस परस×[३] बिनु उठिग राय सुरतान[४]। (१)
धवलग्रह नै अनसरइं*[१] भट्टहि प्प्पन[२] पान॥ (२)

अर्थ—(१) "जो स्त्रियाँ पुरुषों के रस और स्पर्श विहीन—कौमार्यपूर्ण—हैं", राजा का [ऐसा] उत्तेजित स्वर उठा, (२) "वे भट्ट (चंद) को पान अर्पित करने के लिए धवलगृह से अनुसरण करें (चल पड़ें)।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द म. में नहीं है।

(१) १. धा. वे त्रियन, द. अ. फ. त्रियन, ना. जे त्रीयन। २. धा. पुरष, उ. पुरिस, स. पुरिष, ना.

परख । ३. म. परसि । ४. धा. उठिग राय सुरिसान, मो. उठि गयु (=गयउ), राय सु सान, द. ना. म. उ. स. उठिग राइ सु निसान, अ. फ. कढ़िग राइ सुरसान ।

(२) १. मो. धवल ग्रहि ले अनशारि (=अनसारइ), धा. धवल ग्रिह त्रिप अनुसरिग, अ. फ. धवलग्गृह ते अनुसरिग, ना. द. धवल ग्रिह सपत्त करि, म. उ. स. धवल ग्रिह सपत्त कहि । २. धा. रिपु मंगन यूं, मो. रिपु मंगन कइ, ना. द. भट्टहि अप्पी, अ. फ. भट्टहि अप्पुन ।

टिप्पणी—(१) सुर < स्वर । सान < शाणित=उत्तेजित ।

[२२]

दोहरा—तिन[१×] कह[×] हत्थह[×] अथ्थि[२×] किय[३×] जे[×] राय[४×] ग्रह[×] अथ्थि[५]* । (१)
ते[१] सुंदरि सब एक समयि[२] चली[३] सुगंधन[४] कथ्थि[५]* ॥ (२)

अर्थ—(१) उनके हाथों—पाणि ग्रहण—के लिए [अपने को] अर्थी किया था ऐसे राजाओं ने जो उन्हें गृहिणी बनाने के अर्थी थे । (२) वे सुंदरियाँ सबकी सब एक समिति—मंडली—के रूप में प्रशंसनीय सुगंधियों में [सनी हुईं] चल पड़ीं ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

× धा. में चिह्नित शब्दावली नहीं है ।

(१) १. मो. किन । २. ना. म. उ. द. अथ्थि सुहथ्थ । ३. मो. कयय (=किय) । ४. ना. म. उ. स. द. राजन । ५. मो. ग्रह अच्छ, धा. अत्थ, ना. उ. स. ग्रह (गृह—ना.) अच्छि, म. ग्रेह अच्छि ।

(२) १. धा. म. उ. स. छह । २. धा. एकइ समइ, मो. सब एक समिय (< समिथि) ना. द. उ. स. सब एक सग म. सब एक मग्ग । ३. मो. सु (= सु) चली । ४. धा. सुगंधनि, मो. ना. म. सुगंधन । ५. मो. कच्छ, धा. कत्थ, म. उ. स. द. ना. कच्छि ।

टिप्पणी—(१) अथ्थि < अर्थिन् । (२) समयि < समिइ < समिति । कथ्थि < कथ्य=प्रशंसनीय ।

[२३]

दोहरा— षोडस[१] बरष स मुग्धि ग्रह[२] ले सब दासि[३] सुजान[४] ।° (१)
मनहुं°[१] सभा° सुरलोक थइ*[२] चली अच्छरी[३] समान ॥ (२)

अर्थ—(१) [इन] षोडश वर्षीया [सुंदरियों] ने समस्त सुजान (चतुर) दासियों को लेकर [धवल—] गृह इस प्रकार छोड़ा (२) मानो सुरलोक से [देवाङ्गनाओं की] सभा (मंडली) अप्सराओं के साथ चल पड़ी हो ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

° चिह्नित चरण तथा शब्द धा. में नहीं हैं ।

(१) १. यहाँ ना. द. में 'जे' भी है, जो और किसी में नहीं है । २. अ. फ. बरष सु मुग्धि गृह, द. बरष समुग्धइ, ना. बर्षह जमल, म. उ. स. षोडस बरष स मुग्ध ग्रह । ३. ना. ग्रह सब दासि, म. ले साथ दिस । ४. उ. स. सुजानि ।

(२) १. म. मनौं, ना. मनुं। २, मो. थि (=थइ), धा. बहु, द. कै, अ. फ. ते, ना. कुं, स. की, म. के, उ. के। ३. द. म. उ. अछरीय, स. अचछरिय, ना. अछरज।

टिप्पणी—(१) मुच्च < मुच्। (२) अच्छरी < अप्सरस। समान=साथ (?)।

[२४]

अर्ध नाराच—
विहंग[१] भ्रंग× पूर पुरं[२] । (१)
चलंति[१] सोभ[२] नूपुरं[३] । (२)
अनेक भंति[१] सादुरं[२] । (३)
असाढ़ मोर[१] दादुरं । (४)
सुधा समान मुष्षहीं[१] । (५)
उठंति दंत* दुम्मही[१]* ।[२] (६)
दीपंति[१] डोर[२] कंकने[३] । (७)
कटि प्रमान[१] रंकने[२] ।°[३] (८)
धनुष्य[१] भउंह*[२] अंकुरे ।° (९)
नयन्न बान[१] बंकुरे । (१०)
स्रवन्न मुत्ति[१] तारये[२] । (११)
अलक्क बंक[१] आरझे[२]* । (१२)
सबद्द सोभ ये पुले[१] । (१३)
रहंति[१] लज्ज[२] कोकिले । (१४)
अनेक वर्ण[१] जउ* कहउं*[२] ।°+ (१५)
तउ*[१] जाम[२] अंत न लहउं*[३] ।+° (१६)

अर्थ—(१) जिस प्रकार विहंग (पक्षी) तथा भृंग [मधुर रव करते] पूरित (व्याप्त) हो रहे हों, (२) इस प्रकार उनके चलते समय उनके नूपुर शोभित हो रहे थे। (३) [नूपुरों के शब्द इस प्रकार लगते थे मानों] अनेक प्रकार से बोलते हुए (४) आषाढ़ में मोर और दादुर (मेढक) हों। (५) उनके सुधा के समान [कांति वाले] मुखों को (६) उनके उठते (खुलते हुए) दाँत धवलित कर रहे थे। (७) उनके डुलते हुए—हिलते हुए—कंकण प्रदीप्त हो रहे थे। (८) उनकी कटि प्रमाण-रंक थी—इतनी क्षीण थी कि उसके अस्तित्व में भी संदेह हो सकता था। (९) उनकी भौंहें अंकुरित (चढ़े हुए) धनुष के समान थीं। (१०) उनके नेत्र बाण वक्र थे। (११) उनके श्रवणों के मोती तारकों के समान थे, (१२) जो उनकी बाँकी अलकों में उलझे हुए थे। (१३) उनके शब्द यदि खुलते—मुख से निकलते—थे, तो इस प्रकार शोभते—सुहाते—थे (१४) कि कोकिल लज्जा कर रह जाते थे। (१५) यदि उनके अनेक वर्णों (रूप रंगादि) का कथन करूँ, (१६) तो एक पहर तक उस वर्णन का अन्त नहीं पा सकूँगा।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द उ. में नहीं है।
० चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

(१) १. ना. विहंगि। २. धा. अ. फ. भृंग (भंग–धा.) जा पुरा, द. म. उ. स. भंग जो पुरं, ना. भंगि जो पुरा।

(२) १. अ. फ. चलय। २. अ. फ. सोन, म. होम। ३. धा. अ. फ. ना. नूपुरा, म. नोपुरं।

(३) १. अ. फ. ना. भाँति, म. भजि। २. ना. साँदुरं।

(४) १. द. मोर, शेष में 'सोर'।

(५) १. मो. सुष्पही, धा. सुकही, अ. ना. सुष्पही, फ. सुषही, म. उ. स. सथ्थही।

(६) मो. उठंति ति दुदु मही, धा. उठंति तिदु संमुही, द. उठंत, दंति दुंमुही, अ. फ. उठंत इंदु संमुही, ना. उवंत इंद सम्मुही, म. उ. स. सुगंध द्रव्य (गंध–म.) हथ्थही। २. मो. के अतिरिक्त सभी प्रतियों में यहाँ या कुछ चरणों के बाद और है (स. पाठ):—

त्रिवंत तुंग स्याम के। मनो सपत्र काम के।
लवन्न भृंग गुंजही। सुगंध गंध पुंजही (हथ्थही–धा.)।

(तुल० चरण ६ का म. उ. स. का पाठ)। म. उ. स. में इन पंक्तियों के पूर्व और भी है :—

चरन्न रत्त सोभई। उपम्म कव्वि लोभई।
बरन्न रत्त भीरजे। कसीस कासमीर जे।
चरन्न पट्टि रत्तए। उपम्म कव्वि पत्तए।
सुयंक चंद अंकनं। सुरार तेज संकनं।
सुवंक चंद अंकनं। सुराद तेज रांकनं।
सु लंक जीवन टरै। सुनें सरूप में करै।
नपादि आद थप्पन। सुकाम केलि द्रप्पनं।
चरन्न हंस सद्दही। उपम्म कव्वि वद्दही।
सुनद होइ छंदयौ। चरन्न सेव मंदयौ।
सु पिंडि बाल सोमई। सुरंग रंग लोमई।
सुरंग कुकुमं भरी। पराद काम उत्तरी।
सुरंग जंघ ताल से। निकाम थंभ आल से।

(७) १. धा. बपंति, स. दिपंति। २. ना. छोर। ३. ना. कंकनं।

(८) १. अ. फ. पमान। २. गा. रंकनं। ३. म. उ. स. में यहाँ और है :—

दिपै न दिट्ठ लकयौ। विलोकि अप्पि अंकयौ।
उत्तंग तुंग ताभयौ। कि अग्ग लोभ कामयौ।
सु रोम राज दिट्ठयौ। रुल्लंत बेनि पिट्ठयौ।
सु चंपि चद्द गाढयौ। विपास काम चाढयौ।
जु अन्न होय सोमई। सु सिद्ध मेन लोमई।
अहत्त रंग चालई। सु लज्जि लंक हालई।
उठन्न कुच्च कत्तुमं। कि तंबु काम रच्चनं।
बजे प्रमान सज्जनं। सुमेर मध्य भंजनं।
जु पोत पुंज सोभयौ। सुचित्त काम लोभयौ।
सुजिति राह थानयौ। सु चंद बढि गानयौ।
जराह चौकि कंठयौ। उपम्म कव्वितं ठयौ।

मई सुइंद थाइयं। चरत्र चंद साहियं।
धनिस सब्ब जंपयौ। सुराह धान अप्पयौ।
चिलुक चारु सोमयौ। उधम्म कब्बि गोहयौ।
सुवास भग पत्तयौ। सुकंज सुकि जत्तयौ।
सुरत्त अद्ध रत्तऔ। लहै न ओप अंतयौ।
लो साफ कब्बि सौहयौ। प्रवाल रत्त मोहयौ।
सुधा समान सुप्पहो। दसत्र दुति रुप्पहो।
सुसद्द बद पंचमं। कलिश्र कंठ संकमं।
सुनी सुकब्बि राजई। उपम्म कब्बि साजई।
ससंद सारगं हरी। प्रगट्ट काम मंजरी।

(९) १. स. अ. फ. धनुक, उ. धनक्क, द. धनक। २. मो. ना. सुद (= मंउद) शेष में मोद।

(१०) १. मो. नयन वान, शेष में 'मनो (मनु ना., मनौं–म.) नयन' है।

(११) १. मो. मोति। २. उ. स. तालजे, तारिजे, म. भलजे।

(१२) धा. टंक। २. मो. लुम्भारए, धा. अ. फ. आरए, द. उ. स. आलुझे, म अलुझे, ना. आलुजे।

(१३) १. धा. द. जो पुले, अ. फ. पगुले, ना. ते पुले, म उ. स. जौ पुले।

(१४) १. धा. रहित्त। २. मो. लाज, ना अ. फ. लज्जि।

(१५) १. उ. स. वृत्त, ना. म. व्रत। २. मो. जु कहु (=जउ कहउ), धा. म. उ. स. जो कहै (कहे–धा.), द. जो कहैं, ना. जौ कहुं।

(१६) १. मो. हु (=उउ), धा. ते, द. ना. म. उ. स. तौ। २. धा. द. ना. म. उ. स. जन्म। ३. धा. मो लहे, मो. न लहुं (=लहउं) द. न लहै, म. उ स. ना लहै, ना. ना लहुं।

टिप्पणी—(२) साद < शब्द। (६) धुम [देशज]=धवलित करना, श्वेत बनाना। (११) तारय<तारक।

[२५]

अडिल्ल— चहूआन[१] दासिय रसि कंपिय[२]। (१)
पुरि[१] रठ्ठवर रहिय[२] दिसि[३] नंपिय[४]। (२)
बिगल केस[१] पुरिषन कहि थंपिय[२]। (३)
प्रथीराज[१] देषत[२] सिर[३] ढंकिय॥ (४)

अर्थ—(१) चहुआन (पृथ्वीराज) को एक दासी ने रस (सुख) क आकांक्षा की। (२) वह [इसलिए] दिशाओं में लुप्त होकर राठौर (जयचन्द) के पुर (कन्नौज) में रहने लगी थी। (३) वह विगलित केश (बिखराए बालों) युक्त रहा करती थी, और पुरुषों को वह कर [उनके मर्म] बता दिया करती थी। (४) उसने पृथ्वीराज को देखते ही सिर ढँक लिया।

पाठान्तर—(१) १. धा. अ. फ. ना. चाहुवान, म. उ. स. चहुवानह। २. मा. रसि कपीअ, धा. रिसि कपिय, द. अ. फ. ना. रिसि (रिस–अ. फ. ना.) कंपीय (कंपिय–अ. ना.), म. स. सिर कंपिय, उ. ना. रिस कंपिय।

(२) १. द. में पुरि, शेष सब में 'पुर'। २. मो. रठवर रहिय, धा. राठोर रहर, द. ना. म. उ. स. राठोर रहो, अ. फ. राठौर रहै। ३. म. दिम। ४. ना. छिप्पिय।

(३) १. धा. विजर वास, द. विगर केस, ना. विगुर केस, स. विगरत केस, म. विगरव केत, उ. विगरत केस, अ. विगलि केस। २. मो. पुरिषन कहि अपीय, अ. फ. पुरुषन कोइ अपिय, द. म. उ. स. पुरुष नहिं (नह-म.) अकिय (अपाय-म.), ना. पुरुषन कहि अपीय।

(४) १. धा. प्रिथीराज। २. ना. दिप्पित। ३. फ. सिर, द. सिरि।

टिप्पणी—(१) कप < काइक्ष्। (२) नय < नश् (?)=लुप्त होना, भागना। (३) अंप < अक्खा < आ+ख्या=कहना, बोलना।

[२६]

दोहरा— भय चकि[२] भूप अनूप सह[२] पुरुष सु[*३] कहि प्रथिराज। (१)
सु मनु[१] भट्ट सथ्थिहि[२] अछइ[*३] जाहि करत[४] त्रिय लाज॥ (२)

अर्थ—(१) भूप जयचन्द [तथा उस] की सभा अनुपम प्रकार से भय चकित (भौचक्के) रह गए, [और कहने लगे,] "वह पुरुष पृथ्वीराज कहाँ है? (२) वह मानो (ऐसा लगता है कि) भट्ट चंद के साथ है, जिसे वह स्त्री लज्जा कर रही है।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. मय सुकि, उ. स. अ. फ. मे चकि (वकि-फ.), ना. मयह चकित, म. नव सेवक। २. ना. सहि। ३. धा. म. उ. स. सु, मो. सुर (< सु) अ. जि, ना. द. फ. ज।

(२) १. म. उ. स. सुमति। २. धा. सत्थह, म. सुथह, ना. सत्थे। ३. मो. अछि (=अछइ), धा. अ. ना. म. उ. स. अछै, फ. अछे। ४. धा. जिह करंति, उ. स. जिहि करंत, अ. तिहि करंत, म. जिहि करिंत, ना. जिहि करत, द. फ. तिह करंत।

टिप्पणी—(१) सह < सभा। कहि < क्व, कुत्र। (२) अछ < अस्।

[२७]

दोहरा— इक कहइ[*१] बिठिय[२] सुभट इह न[३] सथ्थि[४] प्रथिराज[५]। (१)
इह[१] नृपति[०] दुहु[०] एक[०] हइ[०*२] ताहि करत त्रिय[३] लाज॥ (२)

अर्थ—(१) एक कहने लगा, "यह जो सुभट [चन्द के साथ] बैठा हुआ है, वह [उसके] साथ में पृथ्वीराज नहीं है। (२) यह (चन्द) और नृपति (पृथ्वीराज) दोनों एक—अभिन्न—हैं, [इसीसे] यह स्त्री उस (चंद) से लज्जा करती है।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
० धा. में चिह्नित शब्द नहीं हैं।

(१) १. मो. इक कहि (=कहइ), धा. एक कहिय, अ. फ. इक कहहि, ना. इक कहहि, म. उ. स. एक कहै। २. अ. फ. बिठहि, ना. बिठ्ठौ, म. उ. स. बैठे। ३. म. उ. स. इह, ना. इन। ४. अ. फ म. उ. स. सत्थ (मथ्थ-म), ना. सत्थहि। ५. धा. म. ना. प्रिथीराज।

(२) १. धा. इनि, अ. इहि, ना. इहे, म. उ. स. ए। २. मो. हि (=हइ), अ. फ. अहि (हइ-फ.)

दुइ मन इक है, म. उ. स, नृपनीवन एक है, ना. दुदु मैं एक नृप। ३. धा. जिह करंति त्रिय, अ. फ. तिहि करंति (करंत–अ.) यइ (तइ–फ.), म. उ. स. तिनह करत (तिन इरवता–म.) त्रिय, ना. तिहि करत त्रीय।

टिप्पणी–(१) विट्ठ < उपविष्ठ (?)।

[२८]

दोहरा— अपिग[१] पान सनमान[२] करि नहि[३] रष्पउ[*४] कवि गोय[५]। (१)
जु कछु इछ्छ करि मंगहिइ[१] प्रात[२] समप्पउं[*३] सोय[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चन्द को] पान अर्पित कर और उसका सम्मान करके [जयचन्द ने कहा,] "हे कवि, मैं तुझ से [कुछ भी] छिपाकर नहीं रख रहा हूँ (स्पष्ट कह रहा हूँ); (२) जो कुछ भी इच्छा कर तू माँगेगा, मैं तुझे उसे [कल] प्रातः समर्पित करूँगा।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) धा अ. अप्पिग, द. अकि, ना. म. उ. स. अप्पि। २. धा. अ. फ. पानु समानु (संमान–फ.)। ३. द. नहि रहि, म. नह। ४. मो. रषु (=रष्पउ), धा. रक्खु, म. ना. उ. स. रष्यौ। ५. अ. फ. ना. तोहि।

(२) १. धा. गंगिहइ, अ. फ. ना. मंगिहै (गम्यहै–फ.), द. म. उ. स. मंगिहौ। २. धा. करिल अ. फ. कविह। ३. मो. समपु (=समप्पउ), धा. समप्पू, ना. समप्पुं (=समप्पउं), उ. स. समप्पौं, अ. फ. म. समपौ। ४. धा. अ. फ. तोहि।

टिप्पणी–(१) अप < अर्पय्। (२) समप्प < समर्पय्।

[२९]

दोहरा— हक्कारिउ[१] रप्पत[२] नृपति कुंकुम कलस[३] सुवास। (१)
पच्छिम दिसि[+१] जयचंदपुरि[२] तिहि[३] रप्पउ[*] जाय[४] अवास[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) नृपति जयचन्द ने भृत्य को बुलाया, और उसने कुंकुम [वर्ण] के कलश वाले सुवासित (२) आवास (प्रासाद) में, जो जयचन्द पुर (कन्नौज) में पश्चिम दिशा में था, उसे (चन्द को) जाकर रक्खा—स्थान दिया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

(१) धा. हक्कारिउ, मो. हकारो, अ. हकारयौउ, फ. द. म. उ. स. हकार्‌यौ (हकार्‌यो–द.), ना. हकार्‌यो। २. धा. रपत, फ. राउत, शेष सब में 'रावत' या 'रावन' ३. म. उ. स. के के सुकि, फ. कुंकुम कला।

(२) १. मो. पच्छम दिसि, अ. पश्चिम, फ. पश्चिम वास, स. पचिछ दिसि। २. ना. मैं पुरि, शेष सब में 'पुर'। ३. म. तिह। ४. धा. रप्पइ तिय, मो. रप (= रप्पउ) जाय अ. फ. ना. सं (है–ना.) रषि

म. उ. स. रष्यौति, द. रष्यो जाइ। ५. धा. वास, म. आवास।

टिप्पणी—(१) रष्यत < रक्षित=रक्ष्य। (२) अवास < आवास।

[३०]

दोहरा—आयस[1] रावन[2] सथ्यि चलि असिय सहस[4] तिहि[5] सथ्यि[6]। (१)
जि भर भूमिह ठिल्लन कहइ[*1] त मेर भरहिं मनु वथ्थ[2] ॥ (२)

अर्थ—(१) [जयचन्द के] आदेश से रावण उसके साथ चला, और अस्सी सहस्र [भट] उसके साथ चले। (२) [वे भट ऐसे थे] जो भूमि को ठेल देने के लिए कहते थे, और जो [ऐसे लगते थे] मानो व्यस्त (अलग-अलग—एक एक) मेरु को धारण कर सकते थे।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. अ. फ. ना. आइस। २. धा. राइन, फ. राउन। ३. धा. अ. फ. म. उ. स. सथ्य। ४. म. ना. द. उ. स. अयुतं (अजुत—ना.) एक। ५. धा. भर, अ. फ. म. उ. स. भट। ६. मो. में सथि, शेष सब में 'सथ्य'।

(२) १. मो. जि भर भूमिह ठि गि कहि (=कहइ), धा. भिर भुम्मिहिठिल्लत कहइ, अ. फ. जि भर भुंमि ठिल्लन कहै, ना. जे भर भुमि जिल्लन कहै, द. म. उ. स. अग्ग (अंग—म., अग्गै-द.) राह ह्व (सौ—म.) संचरै। २. मो. त मेर भरहि मनुमथि, धा. मेरतरिल मुनिवथ्य, अ. फ. मेर (फेर—फ.) भरहि उठि बथ्य, ना. म. उ. स. मेर (मेरु—ना.) उचावहि (उचावै—ना.) बथ्य (हथ्य—म.)।

टिप्पणी—(१) भर < भट। (२) भर < भृ=धारण करना। वथ्य < व्यस्त=अलग अलग।

[३१]

दोहरा—सकल सूर सामंत घन[1] मधि कविता किय[2] चंद। (१)
प्रथिराज सिंघासन ठयउ[*1] जनु पर पुर उग्यउ[*2] इंद[3] ॥ (२)

अर्थ—(१) समस्त शूर, और घने सामन्त थे और उनके मध्य में चन्द ने कविता की। (२) पृथ्वीराज सिंहासन पर [इस प्रकार] स्थित था मानो शत्रु (पर) के पुर में इन्द्र उदित हुआ हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १ म ना. द. उ स. तहां (तहँ—ना.) ह्व (स. द. में यह शब्द नहीं है) सर सामंत मिलि। २. ना मध्य कवित्त किय, म. स. मधि नायक कवि, द. मधि कविता किव।

(२) मो. पृथीराज सिंघासन (< स्थासन) ठयु (=ठयउ), धा. प्रिथिराज सिंघासनहि, अ. फ. पृथिराज सिंघासनह (सिंघासनहि—फ), ना म. उ. स. प्रथीराज (प्रिथीराज—म ना.) सिंघासनह। २. धा पुररपउग्यो, मो. जनु पर पुर उग्यु (=उग्यउ), अ. फ. जनु उग्यपर (पर—अ.) पर, ना. मनु पर पुर उग्यौ, द. उ. स जनु परिपूरन (परपूरन—द.), म. मनहु प्रिथीपर। ३. धा. फ. इंदु।

टिप्पणी—(१) ठय < स्था। उग < उद्+गम्। इद < इंद्र।

[३२]

दोहरा— *मइत*[१] *निसा*[२] *दिसि मुदित विभु*[३] *उड नृप*[४] *तेज विराज।* (१)
कथिक[१] *सथ्थ*[२] *कथ्थहि कथा*[३] *सुष्य सयन*[४] *प्रथिराज॥* (२)

अर्थ—(१) निशा हो गई, दिशाओं में उसका वैभव मुद्रित हो गया और उडुगणों के राजा—चंद्रमा—का तेज विराजने लगा। (२) कथकसभा में कथा कहने लगा, और पृथ्वीराज सुखपूर्वक शयन [करने लगा]।

पाठांतर—(१) १. धा. भयत, फ. मइतु, ना. भईति। २. अ. फ. नुसा (सुसा–फ.)। ३. धा. दिसि मुदित वनु, अ. फ. दिन मुदि वतु, द. म. उ. स. दिन मुदित विनु (विन–म.), ना. दिसि मुदित विनु। ४. उ. स. उडपति।

(२) १. फ. कत्थकि, द. कथकि, ना. उ. स. कथक, म. कथा। २. अ. फ. कथ्य, म. उ. स. साथ ३. धा. वथहि त वथा, अ. फ. कथ्थति ति सथ (सव–फ.), द. कथ्थहि कथ, स. कथस कथा। ४. फ. सुष सय सुग, म. सुष्य सुपन।

टिप्पणी—(१) मुदित < मुद्रित। (२) सथ्थ < सार्थ=प्राणि–समूह, सभा।

[३३]

दोहरा— *मृदु*[१] *मृदंग धुनि संचरिय*[२] *अलि*[३] *अलाप*[४] *सुध*[५] *विंदु*[*६] *।* (१)
तार[१] *त्रिगांम उपंग*[२] *सुर अवसर*[३+] *पंग*[४] *नरिंदु*[५] *॥* (२)

अर्थ—(१) [इसी समय] मृदु मृदंग-ध्वनि संचरित हुई, अलि (सखियों गायिकाओं) के आलाप, जो सुधा विन्दु [के समान] थे, [संचरित हुए], (२) और ताल के तीनों ग्राम तथा उपग [वाद्य] के स्वर [भी] पंगराज (जयचंद) के अवसर (नृत्य-संगीत-समारोह) में [संचरित हुए]।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

× चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

(१) मो. मनु, म. ग्रिद। २. अ. धुनि सचरिग, फ. धुनि संचरग, ना. ध्वनि संचरिग। ३. धा. अलिय, म. अल। ४. म. आलोप। ५. ना. सुधि। ६. मो. चंदु. धा. विंद, ना. छिंद, फ. छदु, अ. छद. म. विंद, उ. स. ब्यद (=विंद)।

(२) १. ना द. म. उ. स. ताल। २. धा. त्रिगामउ पसर, अ. त्रिगम्य उपग, फ. नगम्यौ पंग, म. त्रिगान उपग, स. त्रिगम उपंग। ३. धा अउसर, फ. म. उ. स. औसर। ४. फ. ना. पगु। ५. फ. परिंदु।

टिप्पणी—(२) तार < ताल।

[३४]

दोहरा— *चलन*[१] *दीप दिप*[२] *अगर रस स*[३] *फिरि घनसार तंमोर।* (१)
जमनि कपट[१] *उघ महिल सल*[२] *जन*[३] *सरद अम्म ससि*[५] *कोर॥* (२)

अर्थ—(१) दीपों में जलने के लिए अगुरु रस दिया—डाला—गया, और घनसार (कर्पूर) तथा ताम्बूल [सभा में] फिरे (घुमाए—वितरित किए—गए)। (२) यवनिकाओं (आच्छादक पटों) के कपड़ों में [से झाँकते हुए] महिलाओं के उत्तम मुख [ऐसे प्रतीत होते थे] मानो शरद के अभ्र (बादलों) में [से निकलती हुई] शशि की कोरें हों।

यह छन्द अ. फ. प्रतियों में छूटा हुआ है अतः पाठान्तर उसी शाखा की ६० संख्यक भागचन्द्र के लिए लिखी गई भा. प्रति से दिया जा रहा है।

पाठान्तर—(१) १. म. उ. स. ज्वलन। २. ना. म. दीय। ३. यह शब्द मो. के अतिरिक्त किसी प्रति में नहीं है।

(२) १. धा. जमिनि कपट, ना. जिमनि कपट, म. ज्गनि निकटप। २. मो. उच्च महुल मुख, धा. अनमहिल मुप, ना. द. म. उ. स. उच (उच्च-म.) महल मुष (मुष-म. ना.), भा. उच महल किव। ३. मो. जानुं, धा. ना. में यह शब्द नहीं है। ४. द. म. उ. स. अम, भा. ना. अभ्र। ५. द. सिसि।

टिप्पणी—(२) १. जमनि < यवनी। कपट < कर्पट=कपड़ा। उच < उच्च=उत्तम। अम्भ < अभ्र।

[२५]

दोहरा—तत्त[१] धरम्मह , मंतु[२] यह[३] रत्तह काम सु वित्तु[४]। (१)
ता काम[१] विरुध न विधि[२] किअउ*[३] नित्त[४] नितंबिनि[५] नृत्तु[६]॥ (२)

अर्थ—(१) [जयचंद ने कहा,] "धर्म का तत्त्वपूर्ण मंत्र यही है कि चरित्र काम में रत हो, (२) [अतः] उस काम के अविरोध के लिए [मैंने] नित्य नितंबिनी नर्तकियों के नृत्य का विधान किया है।"

यह छंद भी अ. फ. प्रतियों में छूटा हुआ है, अतः इस छन्द का भी पाठान्तर उसी शाखा की उपर्युक्त भा. प्रति से दिया जा रहा है।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. तत्तु, म. उ. स. तात, द. तत्त। २. मो. धरम्मह तत्तु, धा. धरम्मह मत्तु, भा. धरमहि तत्तु, ना. धरम्मह मत्त। ३. धा. जाह, ना. म. उ. स. इह। ४. मो. ना. वित्त, धा. वित्तु शेष में 'चित'।

(२) १. ना. द. म. ता काम, शेष सभी में 'काम' मात्र। २. म. उ. स. नि विद्ध, द. निविध, भा. निवध। ३. मो. कीउ (=किअउ), धा. कियो, द. म. उ. स. कीय, भा. ना. कियौ। ४. मो. नृत, द. म. उ. स. निज (नित—म., मल—उ. स.)। ५. म. तितंबन, ना. नितबनि। ६. धा नित्त, मो. नृत, भा. ना. द. म. उ. स. नित।

टिप्पणी—(१) तत्त < तत्व। मतु < मंत्र। वित्त < वृत्त=चरित्र, आचरण। (२) नित्त < नित्य। नृत्त < नृत्य।

[२६]

साटक+— [१]दीपकांगी[२] नेत्र चंगी[३] कुरंगी। (१)
कोकाक्षी°[२] कोकिला°[२] रागवे[३] भागवानी[४]। (२)

अंगोले[१] लोल[२] डोलं एक बोलं अमोलं[३]।[४](३)
पुप्फंजलि[१] पंग सिर[२] ग्राइ जयति बिय[३] कामदेव॥[४](४)

अर्थ—(१) [उन नितंबिनी नर्तकियों में कोई] दीपक के [लौ जैसी] अंगवाली, और [कोई] कुरंगिनी के [से] अच्छे नेत्रों वाली थी; (२) [कोई] चक्रवाक के [से] नेत्रों वाली, और [कोई] भाग्य वाली कोकिला [सी] रागवती थी। (३) उनकी अंगूठियाँ [उनकी घूमती-फिरती उंगलियों के साथ] चपलतापूर्वक डोल (फिर) रही थीं और [उनके मुखों में] एक ही अमूल्य बोल था : (४) पंग (जयचंद) के सिर पर पुष्पाञ्जलि डाल कर [वे कह रही थीं,] "हे द्वितीय कामदेव, तुम्हारी जय हो !"

पाठान्तर—० चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है। इसके स्थान पर धा. में 'वार्त्ता' है।
(१) १. धा. ना. द. पात्र नाम, मो. पात्रनमा। २. धा. अ. फ. दर्पकांगी, द. ना. दीपकगी। ३. धा. नेतचगी, अ. फ. नेत्रचंगी।
(२) धा. ना. कोकाक्षी, अ. फ. कोकाछिछ, द. कोकाषी। २. धा. कोकिला, अ. द. ना. कोकिलानी, फ. ककिलनी। ३. धा. रागामे, अ. द. ना. रागन्ने, फ. रंगंभे। ४. ना. भोगवानी।
(३) १. धा. अगाल। २. द. लाल। ३. धा. एक बोल्ल अमोल। ४. मो. में यहाँ और है:
पुप्फाजली कर भंडीत सोही घर द्वदत विअकित्तीय दोय।
(४) १. मो. पुप्पाञ्जलि, द. पुहपांजली, अ. पहुपअुलि, फ. पुप्फजल, ना. पुहपांज। २. द. सुभग रागदी, ना. सुभग बीना। ३. धा. जयति विय, अ. फ. जयति तुव, ना. जैत बीय, द. जयति बिय। ४. म. उ. स. में संपूर्ण छंद इस प्रकार है :—
दीपांगी चन्द्रनेना नलिन अलि मिली नेन रंगी कुरंगी।
कोकापी दीर्घनासा सुरसरि (सुसर—उ. स.) कलिरवा नारिंगी (नारिंद—म.) सारदंगी।
इन्द्रानी लोल डोला चपल मति धरा एक बोला अमोली।
पुहपा (दुहपा—म.) वाना विसाला सुभग (सुभ—म.) गिरवरा जैत रंभा सु बोली॥
टिप्पणी—(१) चंग [देशज]=सुंदर, मनोहर, रम्य। (२) अच्छि < अक्षि=आँख। रागवे < रागवद < रागवती। (३) अगोले < अंगुलीयक=अंगूठी। (४) पुप्फंजलि < पुष्पाञ्जलि। बिअ < द्वितीय।
प्रस्तावना में दिए हुए कारणों से इस छंद के अनन्तर द. के पाठ का मिलान नहीं किया जा सका है।

[३७]

दोहरा— पुप्फंजलि[१] सिर मंडि प्रभु[२] फिरि लग्गी गुर[३] पाय[४]। (१)
तरुनि[१] तार सुर[२] धरिय चित[३] अब[४] धरणि[५] निरप्पिय चाय[६]॥ (२)

अर्थ—(१) अपने प्रभु—जयचंद—के सिर को पुष्पाञ्जलि से मंडित कर वे फिर गुरु के पैरों लगीं। (२) उन तरुणियों ने ताल-स्वर चित्त में धारण किए, और अब वे [नृत्य प्रारंभ करने के लिए] चाव (उत्साह) से धरणी की ओर निरखने—देखने—लगीं।

पाठान्तर—(१) १. मो. पुष्पाञ्जलि, फ. पुप्फंजलि, अ. पहुपंजुलि, म. उ. स. पहुपंजलि, ना. पुहपांजलि। २. मो. अ. फ. सिर (सिरु—फ.) मंडि (मड—फ.) प्रभु, म. ना. उ. स. दिसि वाग कर

करि–म. ना.) । ३. मो. धा गुह लग्गो फिरि (फिर–मो.), म. फिरि लगा गुर । ४. धा. चाइ, ना. उ. न. अ. फ. पाइ ।

(२) १. मो. तरुणी, फ. तरुन । २. मो. तार सुर, अ. रास सुर । ३. फ. धर पवित, म. धरि पवित । ४. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी प्रति में नहीं है । ५. धा. धरिनि, फ. रधनु, म. धरनि, ना. धारनि । ६. मो. निरष्पो, अ. निष्पिय । ७. धा. उ. स. अ. फ. चाइ ।

टिप्पणी—(२) तार < ताल । सुर < स्वर ।

[३८]

नाराच—
[1]ततत्तथेइ ततत्तथेइ° ततत्तथेइ°[2] सु मंडियं । (१)
थथुंगथेइ थथुंगथेइ[1] विराम काम छंडियं[2] ॥ (२)
सरीगमप्पधन्निधा[1] धुनं धुनं[2] ति रष्पियं[3] । (३)
भवंति. चोति[1] श्रंग[2] तान[3] श्रंगु श्रंगु लष्पियं[4] ॥ (४)
कला कला[1] सु भेद भेद+ भेदनं[2] मनं मन[3] । (५)
रणंकि झंकि[1] नूपुरं[2] झुलंति जे[3] झनंझनं[4] ॥ (६)
घमंडि थार[1] घंटिका[2] भनंति[3] भेप लेपयो[4] । (७)
भ्रुकुटिच्च पुत्त[1] केम पास पीत साह[2] रेपयो ॥ (८)
नति गतिस्सु[1] तारया[2] कटिस्सु भेद[3] कट्टरी[4] । (९)
कुसंभ सार[1] धावधं[2] कुसंग सार उड्ड[3] नट्टरी[4] ॥ (१०)
उरप्परंभ[1] भेप रेप[2] सेपरं[3] करक्कसं[4] । (११)
तिरप्पि[1] तिप्प[2] सिप्पयो सुदेस[3] दक्खिनं[4] दिसं ॥ (१२)
सुरं ति[1] संग गीतने[2] धरंति सासने धुने । (१३)
जमाय[1] जोग कट्टरी[2] त्रिविध्ध[3] नंच संचने[4] ॥[5] (१४)
उलट्टि[1] पलट्टि नट्टने[2] फिरक्कि[3] चक्कि चाहने[4] । (१५)
निरत्तने[1] निरष्पि[2] चानु[3] नभ पुत्ति वाहने[4] ॥ (१६)
विसेष देस भ्रूप्पदं पदं वदंन रागयो[1] । (१७)
चक्कभेप[1] चक्कवृत्ति+[2] वालि ता विराजयो[3] ॥ (१८)
उरध्ध सुध्ध[1] मंडली धरोह रोह[2] चालिनं[3] । (१९)
महंति सुत्ति दुत्तिमा[1] मत्तुं[2] मराल मालिनं[3] ॥ (२०)
प्रवीण वाणि[1] श्रध्धरी[2] मुनिंद्र मुद्र[3] कुंडली[4] । (२१)
प्रतिष्प भेप उध्धरउ*[1] सु भोगि लो श्रपंडली[2] ॥ (२२)
तलत्तलस्सुतालिता[1] मृदंग धुक्कने धुने[2] । (२३)
श्रपा श्रपा[1] मयंति मे श्रपंति[2] जानि[3] योजने[4] ॥ (२४)
श्रलप्प लप्प× लप्पने°[2] नयन° वयन[2] भूपने[3] । (२५)
नरे नरे+ नरिंद मां स[1] मेत काम सुप्पने[2] ॥ (२६)

अर्थ—(१) [उन नर्तकियों ने]-'ततत्तेइ', 'ततत्तथेइ' मॉथा (विधिपूर्वक किया), (२) [तदनन्तर] 'थुंगथेइ', 'थुंगथेइ' करके काम [के अन्तर्गत] विराम को दंडित किया। (३) उन्होंने 'स रि ग म प ध नी' आदि ध्वनियों को रक्खा—प्रस्तुत किया। (४) तानों के जो अंग होते हैं, वे [उनके] भ्रमित होते समय ज्योति बन कर [उनके] अङ्ग-अङ्ग में दिखाई पड़ने लगे। (५) कला-कला (नृत्य संगीतादि) के भेद-प्रभेद दर्शकों के मन को भेदने लगे। (६) उनके नूपुर रणकार और झंकार करके 'झननझन' बोलने लगे। (७) [उनकी कटि में लगी हुई] थार (काँसे) की, घंटियाँ [उनके नाचने से] घुमड़ने—शब्द करने—लगीं, और उनकी वेष-लेखा भी भ्रमित होने—चमावर्तित होनेलगी। (८) उनके लहराते और खुले हुए [सुनहले?] केश पाश श्लाघ्य पीत रेखा [निर्मित करते] थे। (९) यति, गति, और ताल के भेद वे कटि से काटने (कुशलतापूर्वक इंगित करने) लगीं। (१०) कुसुम-शर (कामदेव) के आयुध के सदृश कुसुंभी साड़ी पहने हुए वे ओड (उड़ीसा के) नृत्य करने लगीं। (११) [तदनंतर] उर (हृदय) से मेघ लेखा को लगाकर और कल शेखर (चंद्रिका—शिरोभूषण) को कसकर (१२) तिरप की तीक्ष्ण (गति युक्त) शिक्षा (कला) प्रदर्शित करती हुई उन्होंने सुन्दर दक्षिण [का नृत्य] दिखाया। (१३) स्वरों के साथ गीत [प्रस्तुत] करने में वे ध्वनियों का शासन धारण करती (मानती) थीं, (१४) और योग की काटें (कौशलपूर्ण क्रियाएँ) प्रदर्शित कर वे विविध नृत्यों का संपादन कर रही थीं। (१५) वे उलटे-पलटे नृत्य करती हुई फिरकी की भाँति घूम कर चकित दृष्टि से देखती थीं। (१६) नर्तन में निरत वे ऐसी दीखती थीं मानो ब्रह्मपुत्री (सरस्वती) का वाहन (मयूर) हों। (१७) विशेष देशों के तथा ध्रुवपद रागों को कहती हुई (१८) वे बालाएँ चक्रवाक का वेष और चक्रवाक की वृत्ति विशेष रूप से साज (?) रही थीं। (१९) वह मुग्धा मंडली ऊर्ध्व आरोह में चलकर जब [अव-] रोह में चलती थी, (२०) तो वह ऐसी लगती थी मानो मराल-माला द्युतिपूर्ण मुक्ता-माला ग्रहण कर (चुग) रही हो। (२१) वे प्रवीणा की वाणी का आधार लेती हुई जब मुनीन्द्रों की मुद्रा और कुंडली का प्रदर्शन करती थीं, (२२) तो ऐसा लगता था मानो भूमि पर इन्द्र का [स्वर्गीय] वेष प्रत्यक्ष उद्धृत हुआ (उतरा) हो। (२३) मृदंग जब 'तलत्तलत' की तालयुक्त सुन्दर ध्वनि कर रहा था, (२४) [उसके साथ] 'अपा अपा' कहती हुई वे ऐसी हो रही थीं मानो वे आत्म-योग में लग रही हों। (२५) अलक्ष्य और लक्ष्य लक्षणों तथा नयन, वचन और आभूषणों से (२६) वे नर-नर में और नरेन्द्र (जयचन्द) में काम-सुख का [उन्-] मेष कर रही थीं।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द मो. म. उ. तथा स. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।
(१) १. म. उ. स. में यहाँ और है: (स. पाठ) :—

उअं अलाप गह्निता सुरं सुग्राम पंचगं।
षडंग सप्प मूरछं मनुं तमान संचमं।
निसंग धारसं अलष्य जाप ते प्रसंसई।
दररसभाव नूपुरं हतव तान नेसई।
सुरं सप्त तंम कंठ चौधि राग सामरं।
रहा हुइ निरप्पितार रंभ चित्तहारं।

२. धा. ततंग'........मो. ततत थेई ततत थेई तततथे, अ. ततत्तथे ततत्तथे ततत्थे, फ. तत्थे,

तत्तथे तत्थे, ना. ततत्थेई थेई थेई, म. ततंगथेई तत्तथेई तत्तथेई, उ. स. ततंगथेइ ततथेई ततथे।

(२) मो. थथुंगथेग थथुंगथेग, धा. ततुं गतुं मं, ना. थथुंगथे, अ. ततुं गतु गतुं गथे, फ. ततुं तुतुं गतुं गथे, म. थतुं गतुं गतुं गथे, उ. थतुं गतुं गथे, स. थतुं गतुं गतुं गथे। २. ना. म. उ. स. विराम काम मंडयं (मंडियं–म. ना.), अ. फ. विराग काव छडियं।

(३) १. म. सरगमप धुंनिधी, धा. ना. सरग्गमप्पि धन्निधी (धन्निधा–धा.)। २. मो. धनु धनु, धा. धनिध्धनी, अ. फ. धनुद्धनि, ना. धनंधुनं। ३. ना. अ. निरप्पयं।

(४) १. मो. फ. योति (=जोति)। २. मो. अंगि, शेष सब में 'अंग'। ३. धा. फ. तानु, म. उ. स. मानु। ४. मो. लयियं।

(५) १. धा. अ. फ. ना. कलकला, म. उ. स. कलकलं। २. म. उ. स. सुसथ्यनं सुभेदन (सुभादनं–म.)। ३. धा. मतं।

(६) १. मो. उकि। २. धा. नोपुरं। ३. धा. अ. फ. कुनति ते, मो. बोलति ते, ना. म. उ. स. कुलंन सं (सो–ना. म.)। ४. अ. रनं झनं, फ. रुभं उनं।

(७) १. धा. धार, अ. फ. धार, ना. धाल। २. मो. धा. अ. फ. घुंटिका। ३. म. मर्मत, उ. स. मर्मति। ४. मो. म. ना. उ. स. रेषयो।

(८) १. धा. तुट्टित्त तुत्त, अ. फ. तड्डित तुत्त (तुत्त–फ.), ना. म. उ. स. तुटंति (तुटंत–म.) पुंट (घट–उ., पुट्टि–म.)। २. धा. अ. फ. ना. उ. स. स्वाद।

(९) १. धा. जतिग्गतिस्सु, उ. स. लज्जंति गत्ति, ना. जगत्ति गत्ति, म. लजति गत। २. अ. तारयो, फ. तारयौ, ना. नारया। ३. धा. अ. फ. कटिरसुभेद (कटिरसभेद–फ.), ना. कटिसु भेट, म. उ. स. कटि प्रमान। ४. म. उ. स. कंदरी, अ. फ. सुंदरी।

(१०) १. धा कुसम्भ सार, ना. कुसंभतार। २. मो. थं। ३. मो. कुसंत सोर उड, धा. कुसम्भ उड्ड, अ. फ. कुसम्भ (कुसुंभ–अ.) उड, ना. कुसम्भ चोल। ४. ना. म. उ. स. नंदरी, अ. फ. नंदरा।

(११) १. मो. उरधिरंम, धा. अरप्परंम, अ. उरप्परंभ, फ. उरप्परंम, उ. स. उरपरभ, म. उरमरात। २. म. याम तेप। ३. धा. सेषकं करकसं, मो. सेष्कंक रकसं, ना. सेषरं करे कसं, म. सेषरं कसं कस, उ. स. सेषरं कर कसं, अ. फ. सेष किकिनी दसं।

(१२) १. धा. अ. फ. तिरप्प (तिरुप्प–फ.), मो. तरपि, ना. निरप्प, म. निरपि। २. म. तीय। ३. मो. देद। ४. मो. दक्षिनं (= दक्खिनं), धा. अ. फ. दक्खिनं, म. उ. स. दच्छिनं, ना. दच्चनं।

(१३) १. मो. म. ना. सुरत्ति (< सुरति), धा. दिसादि। अ. फ. सुरादि, २. अ. गोवने, ना. गातने, म. गातनो। ३. धा. सासनं धमं, मो. सासने धने, अ. फ. सासने धनी, ना. सासने धने।

(१४) १. अ. फ. लगाइ। २. मो. कठरि, अ. फ. कट्टनी। ३. अ. विविद्धि। ४. धा. नंव संचनं, ना. नंव संचने, अ. नंव संचनी, फ. नेव सेचनी, म. नंच संचने। ५. म. उ. स. में यहाँ और है—केवल कोष्टकों के अन्तर्गत अंश म. में नहीं है—(स. पाठ):—

तिरप्पि लेत पातुरं सुबातुरं दिषावहीं।
कै मट्ठ प्रेह वीय चंद मौर कै भमावहीं।
छत्तीस राग बंधि [तार माल ता बजावहीं।
सुकम्म तारषी मृदंग चित्त बंध] संचरं।
विरम्म काम धूव बंधि चन्द धुव उच्चरं।
समीप रथ्थ भेद्यौ जुचित्त चित्त चोरई।
अनेक भांति चातुरी जु मन्न रेर होरई।
सिंगार ते कलेवर पदस्सि उम्भ रावके।
सिंगार सोम पातुरं कि चातुरं सिंगार के।

(१५) १. ना. तुरङ्ग। २. धा. पट्टि नट्टनं, अ. फ. पट्टि नट्टिनी, ना. पट्ट नचने, म. पटि नाचयो।

३. मो. वरकि, म. फिरंकि, स. फिरदि। ४. धा. वाहनं, अ. वाहनौ, फ. वाहनौ, म. उ. स. वाहनो, ना. वाहने।

(१६) १. धा. अ. फ. निरत्तते, म. निरत्तित्तं, म. उ. स. निरत्तिनें (निरत्तिनें—म.)। २. म. उ. म. नराधि। ३. मो. जान, अ. ना. म. उ. स. जानि। ४. मो. ना. ब्रह्मपुत्र वाहने, धा. बंभ जुत्त वाहनं, अ. बंभ पुत्त वाहनी, फ. बंभ सुत्ति वाहनी, म. उ. स. बंभ पुत्ति वाहनी।

(१७) १. धा. ध्रुप्पदं वदं वदंन राजयो, अ. धुप्पदं वदत्र चंद्र राजयो, फ. ध्रुप्पदं वदत्त चंद. राजयो, ना. द्रुपद वद वदत्र राज्यो, म. द्रुपदे वदंन वंन राज्यो।

(१८) १. मो. चक्रमेष, अ. फ. सुक्रमेष, शेष में 'सु चक्रमेष'। २. मो. धा. चक्रवत्ति, म. चक्रप्रति, ना. चक्रत्ति। ३. धा. वालिना विसाज्यो, मो. वालिना विसादयो, म. अ. फ. वालता विसाजयो, ना. वालना विसाजयो।

(१९) १. मो मुप। २. अ. फ. अरोहि रोहि। ३. ना. चालनं।

(२०) १. धा. मिहंन सुत्ति वत्तिमा, ना. ग्रहंति सुत्ति दुत्तिमो, म. ग्रहति सुत्ति दुत्तिमाल, अ. फ. ग्रहति (गृहति) सुत्ति उत्तिमा। २. मो. ना. मनु (=मनउ) फ. मनौ, शेष में 'मनो' या 'मनौं'। ३. ना. फ. वालनं।

(२१) १. मो. प्रवाण वाण, अ. फ. प्रवीण बाण, ना. म. उ. स. प्रवीण वान। २. धा. अंवरी, अ. फ. अद्धरं, ना. म. उद्धरी, स. उद्धरं। ३. धा. मनिद मदु, अ. फ. सु विद्रुमंति (विद्रुमंति—फ.)। ४. फ. कुडला।

(२२) १. मो. प्रतिप्यमेष उधरु (=उधरउ), धा. ना. प्रतच्छ (प्रत्यच्य—ना.) मेषयो धस्यो (धस्यौ—ना.), फ. प्रतक्ष मेषयौ धरयौ, अ. प्रतच्छि मेषयो धरयो, म. उ. स. प्रतषि (प्रतष—म.) मेष उद्धरयो। २. मो. सु मोमिलो यर्यडलो, धा. अ. फ. सु भूमि लो अपंडलो (अपंडला—फ.), ना. उ. स. सु भुम्मि (भूमि—ना.) लोइ पंडली, म. सुभूमि लोपि पंडली।

(२३) १. धा. तलत्तलस् सुतालिना, अ. तलतलस्सुनालता, फ. तलतलत सुनालिना, उ. तलं तलं सुना, स. तल तल सुतालना, म. तल सल सुतालता। २. मो. धुकने धुने, धा. धंकने धने, अ. धुंकनो धुने, फ. धुकनो धने, उ. स. धुंकने धने, म. धुकने धमें।

(२४) १. मो. अपु अंपु, शेष में 'अपा अपा'। २. धा. जुपति, म. जपंत, अ. फ. ना. जपति। ३. मो. यानि, धा. अ. फ. ना. जान। ४. म. ज्यों जमें, उ. स. ज्यों जने, अ. फ. योजने।

(२५) १. म. उ. स. अलाप लाप लापने। २. धा. अ. फ. ना. बैन, म. उ. स. बैंत (बंन—म.)। ३. धा. भूपने।

(२६) १. धा. नरे जुरे नरिंद मास, मो. नरे नरेंद (< नरिंद) मास, फ. नरे नरे नरिंद सास, ना. नरे नरे नरिंद मां सुनेम, म. उ. स. नरे नरिंद मास मेम। २. धा. मो. भेव काम सुप्पने (सुप्पन—धा.), अ. फ. सेव काम सुप्पने।

टिप्पणी—(८) धुनित [दे.] = प्रवाहित। धुत्त < क्षिप्त (?) = निमग्न, डूबा हुआ। साह < श्लाघ्य। (१०) उड्ड < ओद्। (१२) परंभ < प्ररंभ। (१४) धनु=प्रदर्शित करना। (२२) अपंडलल < आखंडल=इंद्र। (२४) अप < आत्म। (२५) अलाप < अलाप। लाप < लपन।

[३९]

दोहरा— जाम एक यनदा घटित[१] ससिहु सत्ति[२] निगारि[३]। (१)
कहुं[१] कामिनि[२] सुख रति समर[३] नृपतिहु[४] नींद विसारि[५] ॥ (२)

अर्थ— (१) एक प्रहर रात्रि [जब] समाप्त हो गई, और शक्ति ने भी अपनी शक्ति का निवारण किया, (२) कहीं पर कामिनी के सुख-रति-समर में नृपति (जयचंद) ने भी नींद भुला दी।

पाठांतर— (१) १. मो. याम (= जाम) एक दछह घटित, धा. जाम एक छनि राम घटि, अ. फ. जाम एक छिनदाछ (छिनदय–फ.) घट, ना. जाम एक थिनदा छनिद, स. जाम एक पिन दछिन घट, म. जाम एक छिनदा निघट, उ. जाम एक छिन छिन घट । २. धा. अ. सरिहु सत्ति, फ. सतिहु सत्त, ना. सतमी सत्त, म. उ. स. सत्तमि सत्त । ३. धा. नवारि, म. उ. स. निवार ।
(२) १. धा. अ. फ. किहु (क्हु–धा.) ना. कही (< कहुं), स. कहु । २. ना. कामनि । ३. म. सिपर । ४. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. भिप निय । ५. मो. मा. ना. उ. स. नाद निवारि (निवार–म.), अ. फ. नींय विसरि ।

टिप्पणी—(१) छनदा < क्षणदा । सत्ति < शक्ति ।

[४०]

साटिका— सुरत्तं सुरत्त मृदंग[१] तार[२] जघनो[३] रागं[४] कला कोषनं[५] । (१)
कंठी[१] कंठ सुभासनं+ समइतं+[२] कामं+[३] कला+ पोषनं+ । (२)
उर+ भी+ रंभ+ किता[१] गुणं हरिहरो[२] सुरभीय पवनापिता[३] । (३)
एवं[१] सुष्प सकाम[२] कुंभ गहिता[३] नयराज[४] रात्रिं[५] गता ॥ (४)

अर्थ—(१) [रति-] सुख में [संगीत-] सुख का, [कामिनी के] जघनों (नितंबों) में मृदंग के ताल का, कोक-कला में राग-कला का, (२) [कामिनी के] कंठ में [गायिकाओं के] कंठ का, वहाँ [कामिनी के] सुभाषण में [गायिकाओं के] सुभाषण का, [इस प्रकार जयचंद ने] काम-कला में [संगीत–] कला का पोषण किया। (३) [उसने] पुनः [कामिनी के] उर से [परि–] रंभण करते हुए [रात्रि के अंतिम पहर में मानो] हरि और हर के गुणों से [रंभण] किया, और निःश्वास-सुरभि को [देवार्पित सुरभि के समान] पवनार्पित किया। (४) इस प्रकार सुख-पूर्वक काम-कुंभों (कुचों) का ग्रहण किए हुए राजा जयचंद की रात्रि व्यतीत हुई।

पाठान्तर— + चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है ।
(१) १. धा. अ. फ. ना. उ. स. मिदंग, मो. मद्दंग, म. द्रादंग (< अदंग) । २. म. अ. फ. ताल, उ. स. तल । ३. मो. जघनो, धा. जघने, अ. जपनो, फ. जघुनो, ना. जघना, म. उ. स. जघनं । ४. मो. राअंयं । ५. धा. ना. कोकिलं, म. कातं ।
(२) १. म. कंनी, अ. फ. कंठं । २. धा. सुवासिनं मनयितं, मो. सुभासनं मनइतं, म. उ. स. सुभासने समजितं, ना. सुभासने ममजितं । ३. मो. कांतं ।
(३) १. धा. उभारंभ पिता । २. मो. म. उ. स. हरहरो, धा. हरिहरो । ३. धा. सुर्भीय पवना पना, मो. सुरभीय पवनारपो, अ. फ. सुभ्रीय पवनापिता, ना. म. उ. स. सुरभीय (सुरभी अ-म.) पवनं पता ।
(४) १. धा. अ. फ. ए मह । २. धा. सुनख सुराउ, ना. सुभ्म सुकाम, म. उ. स. सुष्पइ काम, अ. फ. सुष्य सुहाय । ३. मो. कुं गहिता, धा. तार सहिता, ना. कुभ कुंभ गहिना, अ. फ. कुंभ महिता ।

४ धा नै राय, ना नैराह, अ फ रानाय, म ज्पराज। ५ मो म उ. स राज, धा अ. फ राय।

टिप्पण —(१) मदग < मुद्ग। तार < ताल।

[४१]

साटिका— काती मार पुरा[१] पुनर्मद गज[२] शाखा न गडस्थल[३]। (१)
उच्छ[१] तुच्छ तुरा[×] स[×] शशि[×] कमन[१×] करि[३×] कुभ[×] निद्धादल[४×]। (२)
मधुरे[×] साइ[×] सकाइता[×] अलि[×] कुल[१] गुनार गुजा तहा[२]। (३)
तरुणे[१] प्राण लटापटा पग पग[२] जयराज समापता[३]॥ (४)

अर्थ—(१) काति भार से पूरित और मद गज [के समान मकरन्द चुवाती हुई] यह [पुष्प-तरु की] शाखा है न कि [मद बिन्दु गिराती हुई मद गज की] गडस्थली है, (२) यह ओछा—नीचे जाने वाला—तुच्छ शशि है, जो त्वरा के साथ क्रमण (गमन) कर रहा है और जो हाथी के निर्धारित (निकाले हुए) कुभ जैसा है, (३) उसी प्रकार यह अत्यत शकित मधुकर कुल है जो कि [गजों के मदगंध से आकृष्ट अलि कुल की भाँति] मधुर गुजार कर रहा है, (४) [ऐसी उन्मत्ता कारिणी प्रात काल की वेला में] तरुण प्राणों वाला, किन्तु [रात्रि में जगे रहने के कारण] लट पट पग रखता हुआ, राजा जयचद सप्राप्त हुआ— आ पहुँचा।

पाठातर—+चिह्नित शब्द फ में नहा है।

(१) १ धा मो कांता मार पुरा, अ कांती भार पुरा, ना कानो भारपुराण। २ मो पुन मदि गन, धा अ फ पुनर्मदगजे (पुनरमद गज—धा), म उ स नयौ (नयो—म) विगलिता। ३ अ फ गडस्थली, ना गहलच्छन, मो म उ स गहलस्थल (गल्हस्थल—म)।

(२) १ धा उच्छ, शेष सभी में 'तुच्छ,। २ धा पुष्प कानल, मो शसि कमल, अ फ पुष्प कमल, ना लगि कमल, म उ स लगि कमन। ३ मो में 'करि', शेष सभी में 'कलि। ४ मो निद्दादल, उ स निद्दादल, ना निद्दादल, म निदादल।

(३) १ मो मधुरे शक शका सक अलिकुल, धा मधुरे साय सकाय कुम रसिता, म उ स मधुरे (मुधुरे-म) माधुरयासि (स—म) आलि अलिन, अ मधुरे सास सकादता अलिकुल, फ —ल, ना मधुरे माधुरयासि दलनी अलिभरा। २ धा गुजार गुजारवा, अ फ गुजार गुजारव, म अलि भौंर गुजारया, उ स अलिभार गुजारया, ना गुनार गुजातवा।

(४) १ अ. फ तये, म तरुन। २ धा लग पटप्पगयरा, अ फ लटा पट पग पग, ना लग लग पग, म उ स लुगीय पग जग्गिया। ३ मो जयराज राम गत, धा जइराय सप्राप्तित, अ फ जैराइ समापता ना नैराइ समापिता, म उ स रामगता सोमत (सम्प्रति—म)

टिप्पणी—(२) उच्छ < तुच्छ=ओछा। तुरा < त्वरा। कमन < क्रमण। निद्धादल < निद्धाडिय < निर्धाटित=निष्कासित। (३) साइ < सानि=अत्यत। तहा < तथा।

[४२]

दोहरा— प्राति[१] राउ[२] समापतिग[३] जहाँ[४] दर दव[५] अनूप। (१)
सयल[१] भरइ[*२] दरबार जिहि[३] सत्त[४] सहस अस[५] भूप॥ (२)

अर्थ—(१) प्रात राजा (जयचद) वहाँ पर सप्राप्त हुआ— पहुँचा—जहाँ पर [जिसका] अनुपम

देव [तुल्य] दल था । (२) वह ऐसा भूपति था कि समस्त सात सहस्र [सामंत ?] जिसका दरबार करते थे ।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) धा. फ. म. में 'प्राति' शेष में 'प्रान' । २. म. उ. स. राव । ३. धा. संपरपतिग, ना. सम्रापतिन । ४. मो. जाहां, धा. जह, अ. फ. म. उ. स. जाह (जह—ना.) । ५ फ. देउ । ६. मो. अनोप (=अनूप), शेष में 'अनूप' ।

(२) १. धा. सयल, शेष सब में 'सयन' । २. मो. करि (=करइ), धा. अ. म. उ. स करहि, (करहि-धा.) फ. करं, ना. करे । ३. धा. जसि, अ. फ. जह, उ. स तहं, म. तहां, ना. तह । ४. धा. मो. अ. फ. सास, ना. म. उ. स. सत । ५. मो. अंस, धा. फ. जिहि, अ. जह ।

टिप्पणी—(१) दर < दल । (२) सयल < सकल ।

[४३]

दोहरा— *मिसि[१] बज्जहि[२] गंगह रवनि[३] दान° कवि° पति° सेइ[४] । (१)*

चढित[१] सुपासन समुह हुअ[२] सब[३] सामंत[४] समेव *[५] ॥ (२)*

अर्थ—(१) वाद्यों के मिष (व्याज से) रमणीय गंगा की सेवा करके दान और कवियों का पति (जयचन्द) (२) सुखासन पर चढ़ कर सब सामंतों के समेत समुहाया (सम्मुख निकल पड़ा) ।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के है ।

° धा. में चिह्नित शब्द छूटे हुए हैं ।

(१) १ धा. ना. मिस्र, म. अ. फ. मिस । २. धा. बाजत, फ. बज्जिह । ३ धा. अ. फ. गंगा (गम्ग–अ. फ.) नदिव, मो. गगह रवनि, उ. स. गंगावरन, म. गगा रवन । ४ । धा.''' मोह, अ. फ. कवि पति भग (अति–अ.) मूह (समूह–फ.), मो. दान कवि पति सोह, म. ना. उ. स. दान कवि (कविस -म., कवी–ना. स.) पति सेव ।

(२) १. उ. स. अ. फ. चढत, म. चढ । २. मो. सवासन समद (= समुह ?) हुअ, धा. सुषासन समुहो, अ. फ. म. उ. सुपासन समुहो, ना. सुषासन समुहे । ३. धा. अहि, अ. फ. ना. उ. स. जहं, म. जहां । ४. अ. फ. सावंत । ५. धा समोह, मो. समेत, म. ना. उ. स. नृपेन, अ. फ. समूह ।

टिप्पण.—(१) रवनि < रमणीय । (२) समेव < समेअ < समेत ।

[४४]

दोहरा— *दस हथ्थिय[१] मुत्तिय सघन[२] सत तुरंग जिति भाय[३] । (१)*

दव्वु[१] सरस[२] बहु[३] संगि[४] लिय भट्ट समप्पण[५] जाय[६] ॥ (२)

अर्थ—दस हाथी, सघन (बहुत से) मोती, सौ घोड़े, जो जितने भी भाव (रूप रंग) के हो सकते थे, (२) तथा बहुत सा सरस (सुंदर) द्रव्य संग में लेकर भट्ट (चंद) की समक्षा में [जयचंद] चल पड़ा ।

पाठांतर—(१) १. म. ब. स. तीस करिय (करी—म. उ.)। २. धा. सयनु, मो. सपन, फ. सथनु। ३. धा. सात तुरंग पट भाइ, ना. शत तुरंग जित्ति भाइ, फ. सत्त तुरंग बौहु भाउ, अ. सग तुरंग बहु भाइ, उ. स. ई सें (सं—उ.) तुरंग बनाय, म. द्वे से चपल तुरंग।

(२) १. मो. द्रव्य, धा. द्रव्व, अ. फ. दव्व, (दव्वु—अ.) ना. दिव्य। २. धा. दरिस, अ. फ. दरस (दरसु—अ.), उ. स. बदर, म. दरक, ना. सर्व। ३. फ. बौहु, ना निहि। ४. मो. संग, म. संगि, शेष में 'संग'। ५. मो. भट्टसमप्पण, ना. गट्टन समप्पन, उ. स. भट्ट समपन, म. भट्ट संपन चल्लि। ६. धा. अ. फ. जाइ, मो. ताय, न. राइ, म. अंग।

टिप्पणी—(२) समष्ष < समक्ष।

[४५]

कवित्त— गयउ[1] राय मिल्लान[2] चंद बिरदिया[*3] समप्पन[4]। (१)
देषि[1] सिंघासन ठयउ[*5] इह त बिट्ठइ[3] इंद[4] जन[5]। (२)
बहुत किअउ आलाप[1] आवु[2] कनवज्ज मुकट[3] मनि[4]। (३)
इह ढिल्लियसुर[1] दत्त बियउ[*2] नन कहूं[3] तुम्मक गिनि[4]। (४)
थिरु रहहि[1] थवाइत बज्र कर[2] छंडि सकारह पिसुक रहि[3]। (५)
जिहि+°[1] असी°[2] लष्प° पष्षाग्गिइहि[3]° तिहि[*4] पांन देहि दिढ हथ्थ[5] गहि ॥ (६)

अर्थ—(१) राजा (जयचंद) [चंद के] मिल्लान (डेरे) को चंद बरदिया को समक्षता में गया, (२) [तो] वह सिंहासन को देख कर रुक गया, [और उसने मन में कहा,] "यह तो मानों इंद्र बैठा है।" (३) [चंद ने जयचंद से] बहुत आलाप (वार्तालाप) किया और कहा, "हे कन्नौज-मुकुटमणि, आओ। (४) यह दिल्लीश्वर (पृथ्वीराज) का दिया हुआ है, तुम किसी और का [दिया हुआ] कहीं न गिनो (समझो)।" (५) [तदनंतर पृथ्वीराज से चंद ने कहा,] "हे ताम्बूल-वाहक, तू स्थिर रह (ठहर), और [अपने] बज्र कर को छोड़ कर एक क्षण [जयचंद के] सत्कार में रह। (६) जिसके अस्सी लाख [घोड़े] पखराने (कवचादि से सुसज्जित किए) जाते हैं, उसे तू दृढ़ हाथों से ग्रहण कर पान दे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. गयु, (=गयउ), धा. गयो, म. ना. उ. स. गयौ। २. धा. अ. फ. राय मिल्लान, ना. राइ मिल्लान, म. राय मिलांन, उ. स. रावन मेल्हान। ३. धा. बरदिदइ, अ. बरदियइ, फ. बरदियहि, ना. बरदाइ। रचना में अन्यत्र बिरदिया ही है, यथा: ३.२९, ४.१, ५.१९, १२.४०, ८.११, ८.१४। ४. धा. ना. समप्पन (समप्पनु—ना.), म. समपन।

(२) १. मो. म. उ. स. देषि, धा. अ. फ. दिषिय, ना. दिक्ष। २. मो. ठयु (=ठयउ), धा. ठयो, ना. म. ठयौ, स. सठ्यो। ३. धा. अ. फ. इह तु (अ—फ.) बयठयउ (बैठौ—फ; धा. में अंतिम शब्द नहीं है), म. ना. उ. स. पात पारस्स (पारंस—म.)। ४. धा. [इं] दु, ना. इंदु, म. उ. स. अ. फ. इंद्र। ५. म. उ. स. अ. फ. जनु (जन—म.)।

(३) १. मो. बहुत कीउ (= किअउ) आलाप, अ. फ. बहुत कियउ (कियौ—फ.) आलापु, म. ना.

उ. स. कवि आदर बहु कियौ । २. फ. आउ, म. देषि, ना. कहै । ३. ना. मुगट । ४. फ. मण ।

(४) १. धा. ध तु दिलीसर । २. मो. वोयु (= थियउ), धा. दियौ, शेष में 'दियौ' । ३. धा. तहि मिन्यौ, अ. फ. नहि गनौ, उ. स. नहि गन, म. नहि गिनै, ना. नहि कहुं । ४. धा. म. फ. गनि, अ. मनि, ना. गति ।

(५) १. धा. अ. फ. रहै, मो. रहिहि, म. रहै, ना. रहि (= रहइ) । २. धा. बिज्जु कर, अ. फ. ना. थिरन यन । ३. धा. छंडिस...करिहि, मो. छडि सीकारह पिनु परिही, अ. फ. ना. छंडि (छंड–फ.) सिकारहि (मकारहि–फ.) पिनकु रहि (रहि–ना., जिहि–अ., जिहुं–फ.), म. छंडि सकारह छिनक रहि ।

(६) १. अ. फ. में यह शब्द नहीं है । २. ना. असीउ । ३. अ. फ. म. ना. उ. स. पलानियहि । ४. मो. तिन, ना. तिहि, शेष में यह शब्द नहीं है । ५. फ. हिथ्थ ।

टिप्पणी—(१) समथ्थ < समस्त । (२) ठय < स्थग् = रोकना, बंद करना । (४) बिय < द्वितीय । (५) थवाइत < थइआइत्त < स्थगिकावत्=ताम्बूल-पात्र-वाहक । सकार < सक्कार < सत्कार ।

[४६]

दोहरा— सुनि तंबोल पट्ठिय सुकर[१] वर उठि दिट्ठिअ बंक[२] । (१)
मनु रोहनि सु यमुन[×] मिलिग[१] मनु[२] बिबि[३] उदित मयंक ॥ (२)

अर्थ—(१) [थवाइत (पृथ्वीराज) ने] 'तांबूल' [शब्द] सुनते ही अपना हाथ प्रस्थित (प्रकर्षपूर्वक स्थित) किया, और उठकर [जयचंद को] वक्र दृष्टि से देखा । (२) [यह ऐसा हुआ] मानो रोहिणी और यमुना मिल गई हों, अथवा [एक साथ] दो मृगाङ्क (चन्द्रमा) उदित हो गए हों ।

पाठांतर— × चिह्नित शब्द के द्वितीय तथा तृतीय अक्षर फ. में नहीं हैं ।

(१) मो. सुनत बोल पकार, धा. सुनि समूल सा पट्ठि करि, अ. फ. सुनि तमूल सा पिट्ठि किय, ना. सुनत बोल छड्डिय तुरग, म. उ. स. सुनि तमोर पट्ठिय सुकर । २. धा. अ. फ. वर उट्ठिय डिठि (दिठि–अ., दिठ–फ.) वंक, ना. वर कर वर दिढ बंक, उ. स. धर मुप उत करि बंको, म. मुप उन करि दिठ बंक ।

(२) मो. मन मोहनि सु (= सउं) मन मिलिग, धा. मनो मोहनि सु मन मलिग, अ. मनु रोहिणी यमुन मिलग, फ. मनो रोहणिय मिलगि, म. मनौं रोहिन सुमहि, स. मनु रोहिनि सो मिलिग, उ. मनु रहिनि सो मिन मिलिग, ना. मनु रोहिणि सुमन मिलिग । २. फ. नन, ना. ज्यु, उ. स. ज्यौं । ३. धा. नव, अ. फ. दुइ, म. ना. बीय ।

टिप्पणी—(१) पट्ठिअ < प्रस्थित । दिट्ठिअ < दृष्टि । बंक < वक्र । (२) बिबि < द्वय । मयंक < मृगाङ्क ।

[४७]

दोहरा— भुअ बंकी[१] करि पंग[२] नृप थप्पिअ[३] हत्थि[४] तंमोर[५] । (१)
मनहु वज्जपति[१] वज्ज धरि[२] सह थप्पिअ तिहि जोर[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने] भौंहें बाँकी कर पंगराज (जयचंद) के हाथों में तांबूल अर्पित किया । (२) [उसका यह अर्पण करना ऐसा लगा] मानो वज्रपति (इंद्र) ने [हाथों में] वज्र धारण करके उसे जोर के साथ अर्पित किया हो ।

(५) १. मो. इतनि (= इत्तनइ) धा. इत्तनउ, अ. फ. इत्तनो, म. ना. उ. स. इत्तनौ। २. ना. म. उ. स. सोच। ३. मो. चढु (= चढउ), धा. उट्ठो, म. उ. स. उट्ठौ, अ. फ. ना. चढ्यौ (चढ्यौ–फ.)। ४. मो. किनु (=किनउ) न भु (=भउ), धा. अ. छुनि नरिंद किन्हौं न भउ (किनौं न भौ–अ. कीनो न भौ–फ.), ना. उठी रेणु अनक अछिन।

(६) १. मो. पारस्व मंडि प्रथीराज कु (= कउ), धा. सावंत सूर हसि राज सु, अ. फ. सावत सूर हसि परसर (परसपरि–फ.), म. उ. स. सावत (सामत–म.) सूर हसि (हम—म.) राज सौं (सौ–म.), ना. भर भरणि आउ पुजीय धरीय। २. मो. कहि (= कहइ) भले, धा. कहहि भला, अ. फ. कहहि भले, स. कहहि भलो, म. कहै भलौ, ना. प्रगट अगनि। ३. मो. रजपूत सु (= सउ), अ. रजपूत सौ, फ. म. उ. स. रजपूत भो, ना. अविरुद्ध बद्धनि।

टिप्पणी—(१) पिप्प < प्रेक्ष। (२) उनहारि < अनुकार। (३) सठ < संगठन। (४) गयद < गजेन्द्र। पक्खर < पक्षधर (?) अश्वसन्नाह। (५) भुअपति < भूपति। (६) पारस्व < पार्श्व।

पाठांतर—(१) १. धा. अ. फ. मुख बंकिय, मो. उ. स. मुख बंकी, ना. मुह (= भौंह) बंकिय, म. भौंह बंकी। २. म. ना. उ. स. चीय पंग (पंगु-ना), अ. फ. कार बंक। ३. मो. अधीय, धा. अकिग। ४. धा. म. हत्थ, अ. फ. हथ्थ, ना. अच्छि। ५ धा. तंबोल, म. ना. तंबोर।

(२) १. धा. बज्ज पति, शेष में, 'बज्र पति'। २. मो. बज्र धरि, अ. फ. बज्र गहि, धा. बज्ज गहि, ना. उ. स. बज्र धर, म. बज्रधरि। ३. धा. सह पि-यो सजोर, अ. फ. सहि अप्पियो (अफिफयो-अ.) सजोर, ना. सहु अप्पौ सिहि जोर, म. उ. स. सब अप्पी (अप्पो—उ. स.) सिदि जोर।

टिप्पणी (१) बंक < वक्र। तमोर < तांबूल। (२) जार< जार (?)।

[४८]

कवित्त— पहिचानउ*[१] जयचंद इह त[२] ढिल्लियसुर पिष्पै[४]। (१)
नहिन[१] चंद उनहारि[२] दुसह दारुण तन दिष्पै[३]॥ (२)
करि संठउ[१] करि वार[२] कहइ*[३] कनवज्ज मुकुट[५] मनि। (३)
हय गयंद पष्परउ[१] भाजि[२] प्रथिराज[३] जाइ+ जिनि×[४]। (४)
इत्तनह*×[१] कहत×[२] भुअपति× चढउ×[३]* सुनत× सूर× किअउ×* न भउ[४]। (५)
पारस्स मंडि प्रथिराज कउ*[१] कहइ* भले[२] रजपूत सउ[३]॥ (६)

अर्थ—(१) जयचंद ने [पृथ्वीराज को] पहचान लिया [और उसने कहा,] "यह तो दिल्लीश्वर दिखाई पड़ रहा है यह तो। (२) चंद की [बताई हुई] उनहार का नहीं है और दुःसह दारुण तन का दीख रहा है।" (३) "संगठन करके [इस पर] वार आघात करो," कन्नौज मुकुट-मणि [जयचंद] ने कहा। (४) "घोड़ों और गजेंद्रों को पाखरो—उनपर कवचादि डालो; पृथ्वीराज भाग न जावे!" (५) इतना कहते ही भूपति (जयचंद) ने चढ़ाई कर दी, किन्तु [पृथ्वीराज के] शूरों ने भय नहीं माना। (६) वे पृथ्वीराज का पार्श्व माँड कर—उसके पार्श्व में स्थित हो कर—कहने लगे, "हम सौ रजपूत पर्याप्त हैं।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द म. में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. पहिचानु (= पहिचानउ), शेष में 'पहिचान्यं' या 'पहिचा यौ'। २. धा. इह ति अ. फ. यह त। ३. मो. ना. ढिल्लीसुर, धा. दिल्लीसर म. उ. स. दिल्लेसुर। ४. धा. ना. फ. लकुर्यौ, मो. पेषै (= पिष्पै), अ. लिष्पउ. म. उ. स. लिष्यौ।

(२) १. अ. फ. म. उ. स. नहीय। २. धा. चंद उनिहारि, फ. नंद उनिहारु, ना. चंद अनुहारि, उ. स. चंद उनिहारि, म. चंदोनहारि। ३. धा. फ. अति पिक्खुयौ, मो. तव दिष्षं, ना. म. उ. स. तन दिष्यौ, अ. अति पिष्डउ,।

(३) १. मो. करि सुठु (= सुठउ), धा. करि संथिअ अ. करि सठहु, म. उ. करि संठ्यौ, ना. कर संठौ, म. करि सठ्यौ। २. फ. करुवा, ना. करवार। ३. मो. कहि (= कहइ), धा. ना. म. कहै, फ. कहौ। ४. ना. कनवय। ५. म. मुकट।

(४) १. मो. हय गयद पष्परु (= पष्परउ), शेष समस्त में 'हय गय दल पष्परहु (पष्परउ—धा., पष्परहौ—फ.),। २. ना. भज्जि। ३. धा. अथिराज। ४. धा. जाइ जनि, म. उ. स. जाइ (जा—म) जिन, फ. जाइ जिनु।

(५) १. मो. इतनि (= इत्तनइ) धा. इत्तनउ, अ. फ. इत्तनो, म. ना. उ. स. इत्तनौ। २. ना. म. उ. स. सोच। ३. मो. चढु (= चढउ), धा. उठ्यो, म. उ. स. उठ्यौ, अ. फ. ना. चढ्यौ (चर्‌यौ–फ.)। ४. मो. किनु (= किनउ) म भु (= भउ), धा. अ. सुनि नरिंद कि हों न भउ (किनौ न भौ–अ. कीनो न भौ–फ.), ना. उठो रेणु अतक अछिन।

(६) १. मो. पारस्य मंडि प्रथीराज कु (= कउ), धा. सावत सूर हसि राज सू, अ. फ. सावत सूर हसि परसर (परसपरि–फ.), म. उ. स. सावत (साभत–म.) सूर हसि (हन—म.) रान सौं (सौ–म.), ना. मर मरणि आउ पुज्जीय घरीय। २. मो. कहि (= कहइ) भले, धा. कवहि भला, अ. फ. कहहि भले, स. कहहि भलौ, म. कहै भुलौ, ना. प्रगट अगनि। ३. मो. रजपुत सु (= सउ), अ. रजपूत सौ, फ. म. उ. स. रजपूत भौ, ना. अखिलह वहनि।

टिप्पणी—(१) पिष्प < प्रेक्ष। (२) उनहारि < अनुकार। (३) सठ < सगठन। (४) गयद < गजेन्द्र। पष्पर < पक्षधर (१) अश्वसनाह।(५) भुअपति < भूपति। (६) पारस्व < पार्श्व।

६. संयोगिता-परिणय

[१]

दोहरा— सुनउ*[१] सवें सामंत हो[२] कहइ न्रिपति[३] प्रथीराज[४] । (१)
जउ अछछुउ*[१] पिन पेतमइ*[१] तउ*[२] दक्खिन नयर[३] विराज ॥[×] (२)

अर्थ—(१) राजा पृथ्वीराज ने कहा, "अहो, सभी सामंत सुनो। (२) यदि तुम क्षण भर [रण–] क्षेत्र में रहो, तो नगर की प्रदक्षिणा विराजे (हो जाए)।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।
(१) १. मो. सुनु (= सुनउ), धा. अ. फ. सुनहु, ना. म. उ. स. सकल। २. धा. सेव्व सामंत हव, अ. सद्ध सावंत हो, फ. सव्व सावंत ही, ना. म. उ. स. सूर सामंत सब। ३. मो. किहि (= किहइ) न्रिपति, धा. कहै न्रिपति, ना. म. उ. स. वर दुल्हौ। ४. धा. ना. प्रिथिराज।
(२) १. धा. अ. फ. जउ अच्छुहु खिन खित्त (खित्ति–फ.) महि, (मह–अ. फ.) मो. जु (=जउ) अछु (= अछउ) पिन पेत मि (= मइ), उ. स. जौ रक्खौ खिन पेत में, ना. जौ रक्खौ छिनु खित्त में। २. ना. तौ (< तउ); शेष में यह शब्द नहीं है। ३. मो. दखन (= दक्खन), धा. दक्खिन नयर, ना. दख्खन नगर, म. उ. स. देषौं नगर।

टिप्पणी—(१) हं < अहो। (१) अछ् < अस्। दक्खिन < दक्षिणा=प्रदक्षिणा।

[२]

दोहरा— बोलउ*[१] कन्ह[२] अयान[३] न्रिप मति मंडन समरत्थ[४] । (१)
जउ[१] मुक्कइ*[२] सथ सत्थियनु[३] तउ*[४] कित लिन्नै*[५] सत्थ ॥ (२)

अर्थ—(१) कन्ह बोला, "हे अज्ञानी राजा, तू मति माँडने (बातें बनाने) में समर्थ है; (२) यदि तू [अपने] साथियों का साथ छोड़ता है, तो तूने उन्हें साथ ही क्यों लिया?"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
(१) १. मो. बोलु (= बोलउ), धा. अ. फ. बुल्लिय, ना. बुल्ले, उ. स. बोल्यौ, म. बंक्यौ। २. मो. कंन, फ. कहि, शेष में 'कन्ह'। ३. धा. अ. ना. आयान, फ. अच्चानु। ४. म. उ. रे मत मंडन समत्थ (समथ्थ–उ.), म. रे मन मंड समथ्थ, अ. फ. मति मंडन असमथ्थ।
(२) १. मो. जु (=जउ), धा. जउ, म. अ. फ. ना. जौ, उ. स. जो। २. धा. मुक्कहि, मो. मुकि

(=मुकर), अ. फ. म. उ. स. ना. मुक। ३. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. सत सथ्थियन (सत्यअनु-धा.), मो. सथ सथाअनु। ४. मो. तु (=तउ), धा. तो, अ. ना. म. उ. स. तौ, फ. भौ। ५. मो. किन लेनि) (धा.—लिकनः लभे,)हसि, अ. लिन्हे कत, फ. लिहौ कत, ना. वंत लिन्हे, उ. स. कित लायौ, म. कित लायौ।

टिप्पणी—(२) मुक < मुच्।

[३]

दोहरा— *जउ[१] मुकउं[२] सथ[३] सथ्थियनु[४] तउ[*५] संभरि कुल लज्ज[६]। (१)*
*दक्खिन करि[१] कनवज्ज कउ[*२] फुनि[३] संमुह[४]-मरणज्ज[५] ॥ (२)*

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने उत्तर दिया,] "यदि मैं [अपने] साथियों का साथ छोड़ूँगा तो शाकंभरी [का चहुआन] कुल लज्जित होगा। (२) [मुझे तो] कन्नौज की प्रदक्षिणा करके फिर [रण-क्षेत्र में—] सम्मुख मरना है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. जु (=जउ), धा. जउ, शेष सब में 'जौ'। २. मो. मुकु (= मुकउं), फ. मुकौ, म. मुंकौं, उ. स. मुकौं, ना. मुके। ३. मो. ना. 'सथ', शेष सभी में 'सत'। ४. ना. सत्थीयन। ५. मो. तु (=तउ), धा. तो, शेष में 'तौ'। ६. मो. धा. 'लाज', शेष सभी में 'लज्ज'।

(२) १. मो. दक्षिन (= दक्खिन) करि, म. उ. स. दिप्पन करि, ना. दष्षन करि, अ. फ. दप्पिन कर। २. मो. कुं (= कउं), धा. अ. कउं, ना. फ. कौ, म. कौं, उ. स. कौं। ३. धा. अ. फ. ना. पुनि, उ. स. फिर, म. फिरि। ४. मो. संमह, म. संमुष। ५. धा. मो. मरणाज (मरनाज—धा.), ना. मरणिज्ज, शेष सभी में 'मरनज्ज'।

टिप्पणी—(१) मुक < मुच् = छोड़ना। (२) दक्खिन > दक्षिणा = प्रदक्षिणा।

[४]

दोहरा— *भय[१] टामंक[२] दिस्सइ[*]न दिसि[३] बहु पष्षर महराउ[५]। (१)*
*मनु[१] अकाल टिड्डिय[२] सघन सु पव्वइ[*३] छुट्टि[४] प्रवाह[५] ॥ (२)*

अर्थ—(१) [इधर] ऐसी टामंक (धुंधलाहट) हुई कि दिशाएँ नहीं दिखती थीं, [क्योंकि] पाखरों (सनाह से सुसज्जित अश्व-सेना) का बहुत महराव (घिराव—आक्रमण के लिए एकत्रीकरण) हो गया था। (२) [ऐसा लगता था] मानो अकाल प्रस्तुत करने वाली सघन टिड्डियों का प्रवाह पर्वत से छूट पड़ा हो।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. भइ, फ. भे, म. उ. स. भौ, ना. भयौ। २. अ. समक, फ. समंकि। ३. मो. दिसि (= दिसइ) न दिसि, धा. दिसि विदिस हुइ, अ. दिसि विदिसि मिलि, फ. दिस विदस मिलि, ना. दिसि विदिनि दिमि, म. उ. स. दिनि (दिन—म.) विदिस कहु। ४. धा. लोह, ना. तुलि। ५. धा. तिहराउ अ. फ. महराव (महराव—फ.), म. महुराह, उ. स. बहुराव, ना. भहराइ।

(२) १. मो. धा. अ. उ. स. ना. मनु (मनुं—ना. अ.), म. मनौं । २. मो. अकाल ह्टोल, धा. अकाल तिडिय, फ. ऊकास लिटिडिम, ना. ग. अकास दिठो । ३. मो. सु पवि (= पवइ), धा. चत्थी तु, अ. फ. पावस (पाउस—फ.), ना. उ. सुपव्वय, म. स. पव्वय । ४. धा. मो. छूटि, अ फ. ना. उ. स. छुट्टि (छुट्ठि—स.), म. च्छुटि । ५. फ. प्रहार ।

टिप्पणी—(१) पाखर < पक्षर (?) = कवच = सनाह । (२) पव्वइ < पर्वत ।

[५]

भुजंग—

प्रवाहे स्वेत[१] ताजी[२] न° लज्जे प्रहारे[३] । (१)
मनउ*[१] रब्बि के रथ्थ[२] आने पहारे[३] ॥ (२)
सामि[१] संग्रामि[२] मिलइ*[३] दुधारा[४] । (३)
[१]उप्पमा[२] केम[३] दीजइ[४] धिकारा[५] ॥ (४)
साहियं[१] वग्ग[२] कढ्इ* जि लारा[२] । (५)
मनउ*[१] आवझइ*[२] हथ्थ वज्जंति[३] तारा[४] ॥ (६)
छुट्टियं[१] तेज तुट्टे जि कारा । (७)
ते[१] सज्जियं[२] सूर सव्वे[३] तुधारा ॥ (८)
पष्परे[१] प्रान से[२] मत्त वारा[३] ।[४] (९)
[१]कंध नामइ*[२] नही लोह धारा[३] ॥[४]+(१०)
घाट अवघाट[१] वेक[ता][२] निनारा[३] । (११)
[१]कंठ झूमंति[२] गजगाह[३] भारा ॥ (१२)
लोह[१] लाहउर*[२] बाजइ*[३] तुरकी । (१३)
तिने[१] धावते दीसइ नहि धूरि[२] पुरकी[३] ॥ (१४)
पच्छिमी सिंधु[१] जानइ*[२] न थक्की । (१५)
ते साथि[१] सीधी[२] वले जक्कि[३] जक्की ॥ (१६)
पवन[१] पंपीन थंपी[२] मनक्की[३] । (१७)
जे आस[१] कढ्ढे नहीं चंपि नक्की*[२] ॥[४](१८)
राग[१] यागे[२] नही सुधि[३] उरक्की[४] । (१९)
मनउ*[१] उप्पमा[२] उच आवइ*[३] धुरक्की[४] ॥ (२०)
आरबी देसावरी[१] लोह लच्छी । (२१)
गनइ*[१] को कंठ कंठीन[२] कच्छी ॥ (२२)
धरा पिष्षि[१] पुट्टंति[२] तुट्टंति°[३] बाजी । (२३)
दिष्षियइ* एक[१] अंकेक (=अर्क्क) ताजी ॥ (२४)
पंडवे[१] पंगुरे राय[२] सज्जे[३] । (२५)
दुवन[१] दल[२] दुद्धुइ[३] देषंत लज्जे[४] ॥ (२६)

एह[१] अपुब्ब[२] कवि चंद पेक्खउ*[३] । (२७)
तरणि सम तेज दुजराज[१] देक्खउ*[२]॥[३](२८)

अर्थ—(१) [संनाह से सुसज्जित अश्व-सेना के उस] प्रवाह में ऐसे श्वेत ताजी थे जो अखाड़े में [पिछड़ कर] लज्जित न हुए थे, (२) [वे ऐसे लगते थे] मानो वे रवि के रथ से अपहृत करके लाए गए हों। (३) वे स्वामी के युद्ध में दुधारे झेलने वाले थे; (४) उनकी उपमा छिकारे (हिरन) से किस प्रकार दी जाए? (५) [उनके मुखों में] बाग साधी गई है, जिससे उनके मुखों से लाला (लार) कढ (निकल) रही है, (६) [दोनों ओर से उनके मुखों में उस बाग का लगना ऐसा लगता है] मानो आउझ (ढोल की जाति के एक वाद्य) पर [दोनों] हाथों से ताल बजाए जा रहे हों। (७) [उनके शरीर से] ऐसा तेज छूट (विकीर्ण) हो रहा है जैसे कार (काल?) उठा हो। (८) ऐसे सभी तुषारों को शूर साज रहे हैं। (९) वे मतवाले [घोड़े] प्राण से (प्राण-रक्षा की दृष्टि से?) पाखरे (संनाह से सुसज्जित किए) हुए हैं। (१०) उनका कंधा लोह (तलवार) की धार के सामने नमित नहीं होता है। (११) घाट, औघाट (बुरे घाट) उन्हें निराले रूप से व्यक्त हो जाते हैं—अर्थात् घाट-औघाट को वे स्वयं समझ कर चलते हैं। (१२) उनके कंठ में भारी गजगाह झूमते (झूलते) रहते हैं। (१३) लाहौर के लोहित वर्ण के जो घोड़े हैं, जो तुर्की बाजते (कहे जाते हैं), (१४) उनके दौड़ते समय खुरों की धूल नहीं दिखाई पड़ती है। (१५) जो सिंधु के पश्चिम के घोड़े हैं, वे थकना नहीं जानते हैं। (१६) उन्हीं के साथ जो सिंधी घोड़े हैं, वे जके (बौराए) से मुड़ते-फिरते चलते हैं। (१७) पवन, पक्षी, आँख और मन की [गति] भी, (१८) यदि वे अश्व निकलते हैं, उन्हें चाँपकर—दबाकर—पिछाड़ नहीं सकती है। (१९) जब वे रागे (टाँगों के कवच पहनाए) जाकर बागे (बाग से सुसज्जित किए) जाते हैं तो उन्हें अपने हृदय (प्राणों) की सुधि नहीं रहती है, (२०) और वे ऐसे प्रतीत होते हैं मानो उच्च (श्रेष्ठ) उपमा हो जो [कवि के मानस में] आगे बढ़ती चली आ रही हो। (२१) अपर देशों के अश्वों में अरबी, जो लोहित वर्ण के हैं, लाखों हैं, (२२) और सुन्दर कंठ वाले कच्छी घोड़े इतने हैं कि कौन-सा कंठ उन्हें गिन सकता है; (२३) वे घोड़े [रण-] धरा की क्षिति पर टूट कर (वेग से बढ़कर) खुरों से खूँद रहे हैं और (२४) एक से एक बढ़कर ताज़ी दिखाई पड़ रहे हैं। (२५) फिर पंडुवे (पांडु के घोड़े) पंगुराज (जयचंद) ने सजाए हैं, जो शत्रु पक्ष के दल को छोटा देखकर लज्जित हो रहे हैं। (२७) कवि चंद ने यह अपूर्व बात देखी कि (२८) तरणि का तेज [आकाश के धूल-धूसरित होने के कारण] द्विजराज (चंद्रमा) के समान दीख पड़ा।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

× चिह्नित चरण मो. में नहीं है।

+ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. प्रवाहे स्वेत, धा. प्रवासेत, अा. ना. प्रवासे, फ. प्रवासंत, म. उ. स. प्रवाहंत। २. धा. सज्जो। ३. मो.—प्र अहारे, धा. लज्जो अहारे, ना. जाभी अहारं, अ. फ. लाजी अहारं, म. उ. स. लज्जीयहारे।

(२) १. मो. मनु (= मनउ), ना. मनुं (= मनउ), धा. उ. स. मनो, अ. फ. मनो, म. मनौं। २. धा. रथ्थे जे, अ. फ. रथ्थं, ना. रथ्थं सु, म. उ. स. रथ्थं सु। ३. धा. म. उ. स. अहारे, अ. फ. अहारं।

(३) १. धा. तिके स्वामि, उ. स. जिके स्वामि, म. जिके सांमि। २. अ. फ. ना. संग्राम। ३. धा.

झेले, मो. झिलि (= झिलइ), अ. फ. ना. झिल्लै, म. झल्ले, उ. स. झल्ले । ५. मो. दो धारा, धा. अ. फ. दुधारे, स. दुधारं ।

(४) १. धा. अ. फ. तिनं, मो. ते, म. उ. स. तिनं, ना. में यह शब्द नहीं है । २. ना. ओपमा । ३. धा. क्यूंव, अ. कोंव, फ. कों वि, म. क्योंव, ना. कुं (= कों) व, उ. स. क्योंव । ४. अ. फ. दिज्जै, म. दीजै । ५. धा. विकारे, म. ठिकारा. उ. स. अ. फ. छिकारै (छिकारे—उ. स.) ।

(५) १. धा. तिनं साहियं, म. उ. स. तिनं साहिय, फ. साहि । २. अ. फ. ना. नाग । ३. मो. कढि (< कढइ) निलारा, धा. अ. गड्ढे जिलारा, फ. तिगढे जिलारा, उ. स. गड्ढे न लारा, म. गड्ढे नलरामं, ना. गड्ढे नलारा ।

(६) १. मो. मुनु (= मुनउ), ना. मनुं (= मनउ), धा. म. उ. स. मनो, म. मनौं, अ. फ. मनौ । २. मो आवझि (< आवझि = आवझइ). धा. आवधे, उ. स. आवध, म. आयध, ना. अवझं, अ. आवझे, फ. आवझे । ३. उ. स. वज्जंत न वाज्जंत, म. छज्जंत । ४ धा. सारा ।

(७) १. धा. छुट्टियं तेजि, फ. मनौ छुट्टिज, म. उ. स. इयं छुट्टियं । २ धा. वेठे, अ. फ. वट्ठे, म. ठवे, उ. स. ठट्टे, ना घट्टे ।

(८) १. तिते, फ. जिते, ना. म. स. सयं । २. मो. साजियं, धा. सज्जय, अ. फ. सज्जिय, म. उ. स. सज्जियं । ३. ना. म. उ. स. सव्वै, अ. सद्दै ।

(९) १. म. सरे पाषरे, उ. स. सरे पष्परे, अ. फ. तहां पष्परे । २. धा. उ. स. प्रानजे, म. प्रानजै, अ. फ. प्रानते, ना. थानते । ३. धा. वाहु वारा, अ. फ. म. मारु वारा, ना. उ. स. मारवारा ।

(१०) १. धा. अके, ना. ते, म. उ. स. तिके । २. मो. नामि (= नामइ), धा. ना. नामे, म. उ. स. नामैं । ३. धा. लोह झारा, म. लोल झारा, ना. उ. स. लोह झारा । ४. धा. अ. फ. में यहां और है :

[वहै वाय वेगं] नहीं भूमिभारा । तिवं छुट्टियं जानि आकास तारा ।

कोष्टकों के अन्दर की शब्दावली धा. में नहीं है ।

(११) १. मो. बाट अवधाट, धा. पट्ट ऊघट्ट, अ. घट्ट औघट्ट, फ. मनौ घट्ट औघट्ट, ना. घाट औघाट, म. तहां औघटं घाट, उ. स. तहां धाट औघट्ट । २. मो. वेक, धा. 'फंदे' ,शेष में 'फंदि' या 'फदे' । ३. अ. फ. निन्यारा, ना. निरारा ।

(१२) १. ना तनै, म. उ. स. तिने यह शब्द धा. अ. फ. में नहीं है । २. धा. झुलति, ना. झूलंत, अ. फ. म. झूमंत (झुमत—म.) । ३. म. जगाह ।

(१३) १. अ. फ. किंत लोह, म. दिसारोह, उ. दिसाहोर, स. दिसाराह । २. मो. लाहुर (= लाहउर), धा. लाहोर, शेष में 'लाहोर' या 'लाहौर' । ३. मो. बाजि (= बाजइ), धा. बज्जइ अ. फ. ना. उ. स. वज्जे, म. वज्जै ।

(१४) १. धा. ना. तिन । २. धा. धावते दासन धुरी, अ. फ. धावते दीसे न (नुं—फ.) धूर्‌यो, ना. म. उ. स. धावते (धाव—ना.) धूर (धूरि—म. ना., धू—उ.) दीसै । ३. धा. फुरक्की, अ. फ. ना. म. उ. स. पुरक्की ।

(१५) १. धा. पच्छमी सिंध, अ. फ. सजै पश्चिमी (पच्छिमा—फ.) सिध, ना. पच्छिमी सुध्म, म. उ. स. दिस पच्छिमं (पच्छमी—म.) भूमि । २. मो. जानि (= जानइ), धा. जाने, अ. फ. ना. म. उ. स. जान ।

(१६) १. धा. निनं साथि, मा. ते साथ, अ. फ. म. उ. स. तिनं साथ, ना. जिनें सत्थ । २. मो. सीधी, ना. फ. संधी, शेष सभी में 'सिधी' । ३. धा. अ. फ. वले जक्कि, मो. चले अक्क, ना. चलं जक्कि, उ. स. चलं नाथ, म. चले ज ।

(१७) १. धा. पमः, म. उ. स. पवंनं न, फ. मनो पवन, ना. पवन्नं । २. फ. पंथी । ३. धा. मनमत्थी, अ. मनीषी, फ. मनुषी ।

(१८) १. अ. फ. जिके (जिकै–फ.) सास, ना. ते सास, म. उ. स. तिके सास। २. धा. नहीं पिं भक्खी (< नक्खी), अ. फ. न चंपै नक्खी, ना. न चपै (चंपै) तनक्को, म. स. न चपै ननक्को, उ. न चंपै भनंको।

(१९) १. म. उ. स. तिनं राग। २. धा. बरणै, ना. म. उ. स. चंपै। ३. धा. नहीं सुध, अ. न सुक्की, फ. न रक्की, ना. म. उ. स. न सुद्धी (न सुद्धी–ना.)। ४. म. उरधी, उ. स. धरक्की।

(२०) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनुं (=मनउ), धा. म. उ. स. मनो, अ. फ. में यह शब्द नहीं है। २. धा. उप्परे, अ. उप्पजे, फ. उप्पजे, ना. म. उ. स. ओपमा। ३. मो. उच आवि (=आवइ), धा. ओस आवै, अ. फ. उंच आदे, म. उ. स. उंच आए, ना. उच्च आपं। ४. ना. म. उ. स. धरक्की।

(२१) १. मो. आरबी देसावरी, शेष सब में 'अरब्बी (आरबी–ना.) विदेसी लरं'।

(२२) १. मो. गनि (=गनइ), धा. अ. फ. गणै, म. गनै, ना. उ. स. गनै। २. धा. अ. फ. को कंठ कंठील, ना. म. उ. स. कोन (कौन–म., कोक–ना.) कंठील कंठील।

(२३) १. धा. अ. फ. धरा खित्त, म. उ. स. धरं (धर–म.) पेत्त, ना. धरा पेत। २. धा. पुदंतं, ना. फ. कुदंत, अ. म. उ. स. पुदंत। ३. म. अ. सदंत, फ. सदंति, ना. रदंत, उ. स. रुदंत।

(२४) १. मो. दिपिद (=दिपिअइ) एक, धा. दिप्पियइं इक्कं, ना. दिप्पीयै इक्क, अ. फ. किते दिप्पियहि एक, म. हरैंवो इ एक, उ. स. हरंवो इर एक। २. धा. इक्कंत, अ. फ. एकंत, म. ताजीन, स. तत्तार, ना. ताजीत।

(२५) १. मो. पंडवे, धा. पंडुए, ना. पंडरे, अ. इते पंडुवे, फ. इते पंडुरे, म. तिके पंडुरे, उ. तिके पंडुरा, स. तिके पंडुए। २. मो. म. राय, शेष सब में 'राइ'। ३. मो. साजी, धा. सज्जे, अ. सज्जा, फ. ताजी, ना. राजे, म. उ. स. साजे।

(२६) १. धा. दुअण, ना. भुवन, अ. सवहि दुवन, फ. सुवहि दुवल, म. उ. स. मनों (मनौं–म.) दुअन। २. धा. बल। ३. धा. बच्छ। ४. मो. देपंत लाजी, धा. दिप्पंत लज्जैं, अ. फ. देपंत लज्जे (लज्जैं–फ.), म. उ. स. देपंत लाजे, ना. देपंत लाजे।

(२७) १. धा. इहे, ना. इह, अ. फ. तहां, म. उ. स. इसो यह (इह–म.)। २. ना. आपु पुब्ब, उ. स. आपुब्ब। ३. मो. पेषु (=पेक्खउ), धा. अ. फ. ना. म. उ. स. पिष्यौ (पिक्ख्यौ–धा.)।

(२८) १. धा. अ. फ. तरनि दुजराज सम (समे–अ. फ.) तेज (चंद–फ.), म. उ. स. तिनं रब्बि दुजराज सम (सम–म.) तेज। २. मो. देपु (=देक्खउ) ना. म. दिष्यौ, शेष में 'दिष्यौ' (दिक्ख्यो–धा.)। ३. ना. म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

> हरं डंबरी रेन अप्पै न पारं। अधीनं पधीनं सधीनं निहारं।
> तहां कोन सामंत राजंन ठट्टे। मनों मेर उत्तंग हस्ती न चट्टे।
> मुखं जोव जोवं भरं भूप भारे। तिनं काम कनवज्ज महत्ते पधारे।

टिप्पणी—(१) अहारा < अक्खाडग < अक्ष+वाटक=अखाड़ा (२) पहारे < प्रहत=आहत। (३) झिल [दे.]=ऊपर से गिरती हुई वस्तु को थामना। (४) छिकारा=हरिण। (५) साह < साध्=सिद्ध करना, बनाना। (६) आउझ < आयुज (?)=ढोल के ढंग का एक वाद्य-विशेष। तार < ताल। (७) तुट्टिय < त्रुटित। कार < काल (?)। (११) वेकत < व्यक्त। निनार < णिण्णार < निर्नगर=नगर से निर्गत, निराला। (१२) गजगाह < गजग्राह = घोड़ों के कंठ में बाँधी जाने वाली झालर जो उनके अगले पैरों के सामने लटकती है। (१६) मोधी = मिथी। वल < वल्=मुड़ना, लौट पड़ना। (१८) आस < अश्व। नंप < लंघ। (१९) राग=टाँगों का कवच। (२०) धुर=अग्रभाग। (२२) लछ्छी < लक्ष। (२६) दुवन < दुर्जन =शत्रु। (२७) अपुब्ब < अपूर्व। पेक्ख < प्र+ईक्ष् =देखना।

[६]

दोहरा— करिग[१] देव दक्खिन[२]* नयर[३] गंग तरंगह कुछ[४] । (१)
जल छंडइ*[१] अछूइइ* करह[२] मीन चरित्तनु भुछ[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) देव (पृथ्वीराज) ने नगर प्रदक्षिणा की, [तदनंतर] वह गंगा की तरंगों के कूल (तट) पर (२) अपने अच्छे (या अचित) करों से जल छोड़ने (उछालने) लगा और मछलियों के चरित्रों (खेलों) में [अपने को] भूल गया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. ना. करग। २. मा. दक्षन (=दक्खन), धा. दिख्खन, ना. दच्छिन, म. दषिन, उ. स. दच्छिन। ३. मो. नगर, उ. नयन। ४. मो. गग तरगह कुल, धा. गंग तरग अकुल, अ. गग तुरंग अकिल, फ. गगा तुरगु अकल, म. उ. स. गग तरंगह कूल, ना. गग तरग कूल।

(२) १. मो. छडिइ (< छडइ), धा. छडहि, उ. छटे, म. स. छुट्टं, ना. च्छडिके। २. मा. अछि (=अछूइ) करह, धा. अच्छहि करह, फ. अछ करहि, ना. म. स. तब इच्छ करि। ३. मो. चरित्रहि (=चरित्तहि) मूल, धा. चरित्तनु मुल, अ. चरित्तह मुछ, फ. चरित्तह भूल, ना. म. उ. स. चरित्रनि (चरित्रन-ना.) मूल।

टिप्पणी—(१) दक्खन < प्रदक्षिणा। नयर < नगर। (२) अच्छइ < अर्चित।

[७]

रासा— भूलउ*[१] नृप तिहि रंग[२] तहि[३] जुध्ध विरुध्ध सहु[४] । (१)
मुग*ति[१] मीननु[२] मुत्ति लहंति जु लप्प दह[३] ॥ (२)
होइ*[१] तुच्छ तु तंमोर*[२] सरंत तु कंठ लहु[३] । (३)
पंक[१] प्रवेस हसंत तु[२] झरंत[३] ज गंग[४] महं[५] ॥ (४)

अर्थ—(१) नृप (पृथ्वीराज) उस रंग (क्रीड़ा) में [अपने को] और उसी प्रकार [जयचंद से] सभी विरोध और युद्ध को भूल गया। (२) मछलियों के लिए जब वह [जल में] मोती छोड़ता था, तब वे दस लाख [की संख्या में आकर] उनको ले लेती थीं। (३) वह मोती तुच्छ (हल्के) तांबूल [के रस के समान लाल] हो जाता था जब वह उनके लघु कंठ में जाता था [और उसमें उनके लाल कंठ की झलक पड़ती] थी। (४) यदि वह मोती गंगा में झड़ (गिर) जाता था, तो वे हँसते हुए पंक में प्रविष्ट हो [कर उसे ढूंढने लग] ती थीं।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. भुउ (=भूलउ), धा. गुल्लयो, म. उ. स. भूलो, फ. ना. भूल्यो। २. धा. पुहवि नरिंद, फ. नृपति नरिंद, म. ना. उ. स. नृप इह रंगहि। ३. धा. त, फ. स, म. उ. स. में यह शब्द नहीं है। ४. धा. विरुद्ध सह, मो. विरुध शहु (=सहु), म. उ. स. विरुद्ध सह।

(२) १. मो. मुग नि (=मुग ति), धा. मुक्के, म. नपह, उ. स. नंपहि, ना. नंपै। २. म. मीननि, ना. उ. स. मीननि। ३. मो. लहति जू लप दह, धा. लहंतु जु लच्छि दह, म. उ. स. लहै जुअ लप्प दह, ना. लहंति जे लप्प दह।

(३) १. मो. होल, धा. ना. फ. हय, म. होय। २. मो. गुज्जु तमोर, धा. तुछ तमोर, उ. स. गुज गुच्छ सु मुरि, म. गुज सु सु भूरि, फ. ना. गुज तुल तमोर। ३. धा. सरंत जु कंठ लइ, स. सरंत न कंठ लइ, म. सरसत कठ लेहि, उ. सरंत न कंठ लई, ना. सरतति कंठ मह, फ. सरंत सुकंत लइ।

(४) १. मो. वंक, शेष सभी में 'पंक'। २. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। ३. ना. सुरंत। ४. धा. ना. जु गंग, फ. न गंग, म. उ. स. न कंठ। ५. म. महि।

टिप्पणी—(१) सत्=सभी। (२) मुग < मुच्=ओढ़ना। दह < दश। (३) तमोर=ताम्बूल। (४) वंक < पङ्क।

[८]

दोहरा— *भुल्लउ**[१] *रंग नृपति इहि*[२] *पंग पढ़ौ*[३] *हय*[४] *पुट्ठि। (१)*
सुनि[१] *सुंदरि*[२] *वर वज्जने*[३] *पढी अवासह उट्ठि*[४] *॥ (२)*

अर्थ—(१) नृपति (पृथ्वीराज) [जब] इस रंग (खिलवाड़) में भूला हुआ था, [उधर] पंग (जयचंद) घोड़े की पीठ पर चढ़ा, (२) और वह सुन्दरी (संयोगिता) बाजों को सुन कर उठ कर आवास (महल) [की छत] पर चढ़ गई।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. मो. भुल (=भुलउ), धा. भुल्यो, अ. भुल्लो, ना. स. फ. भूल्यो, म. उ. भूलौं। २. धा. अ. फ. रंग सु मीन (मीत–फ.) नृप, ना. म. उ. स. नृप इन (इह–ना. म.) रंग महि (मैं–ना.)। ३. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. चढ्या (चढ्यौ–म. ना.)। ४. मो. हय।

(२) १. मो. सो, शेष सभी में 'सुनि'। २. म. ना. उ. स. सुन्दर, फ. सुन्दह। ३. ना. अ. बज्जने। ४. धा. चढ़ी अवासन उट्ठि फ. चढी अवासहि उट्ठि, ना. चढ़ी अवासनि उट्ठि, म. उ. स. अई अपुव्व कोर (कौ–म.) दिट्ठ (दुट्ठ–उ., दुट्ठि–म.)।

टिप्पणी—(१) पुट्ठ < पृष्ठ। (२) वज्जने < वादानि =बाजे।

[९]

दोहरा— *दिष्वि त*[१] *सुन्दरि दल चलनि*[२] *चमकि चढंति*[३] *अवास*[४] *। (१)*
नर कि देव[१] *किधु*[२] *काम हर*[३] *गंग हसंति निवास*[४] *॥ (२)*

अर्थ—(१) सुन्दरी (संयोगिता) दल (सेना) का चलना देख कर आवास (महल) [की छत पर] चढ़ जाती है, (२) [और गंगा तट पर पृथ्वीराज को देखकर सखियों से पूछने लगती है कि] "यह नर है, या देवता है, या काम या हर (शिव) है जो गंगा में हँसता हुआ (प्रसन्न) निवास कर रहा है!"

पाठान्तर—(१) १. धा. दिष्षनि, ना. दिष्षत, म. उ. स. देषत। २. धा. चलनि, फ. चलिनु, अ. चलनि, ना. मिलन, म. मिलन, उ. मिलिनि, स. मिलनि। ३. मो. चढंति, धा. ना. फ. चढंति, अ. चढंत, म. उ. चढ़ी मन, स. चढी मन। ४ म. आसु, उ. स. आस।

(२) १. धा. फं. देउ। २. धा. किधुं, मो. ना. अ. किधु, फ. किधूं, म. किधां, उ. स. किधौं। ३. फ. काम हरि, ना. काम हरु, म. उ. स. नागहर। ४—धा. गंग हसंत अयास, म. उ. स. गंग हसंत निवास (सत निवासु—म.), अ. फ. किधुं (किधौं-फ.) कधु गंग बिगास।

टिप्पणी—चल < चल्=चलना, जाना। चढ=चढ़ना।

[१०]

दोहरा— एक[१] कहइ[२] दानव[३] देव हइ[४] एक[१] कहइ[५] इंद[६] मुनिंद[७] ।[×] (१)
एक[१] कहइ[२] एसे[३] कोटि नर एक कहइ[४] प्रथिराज नरिंद[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [उत्तर में] एक कहती है, "यह दानव या देवता है," और एक कहती है "यह इंद्र या मुनीन्द्र (बड़ा मुनि) है।" (२) एक कहती है "ऐसे कोटि नर होते हैं," और एक कहती है "यह नरेन्द्र पृथ्वीराज है।"

पाठान्तर—× चिह्नित चरण म. में नहीं है।

(१) १. मो. एक शेष सभी में 'इक'। २. धा. फ. ना. उ. स. कहै, अ. कहहि। ३. धा. दुर, अ. फ. दुरि, ना. उ. स. दनु। ४. मो. हि (=हइ), धा. फ. ना. है, अ. हइ, उ. स. हइ। ५. धा. फ. ना. उ. स. कहै, अ. कहि (=कहइ)। ६. धा. इंदु, फ. यदु। ७. धा. फ. फनिंद, अ. ना. उ. स. फुनिंद।

(२) १. मो. एक शेष, सभी में 'इक'। २. धा. कहैं, अ. कहहि, फ. म. ना. उ. स. कहै। ३. मो. एसे, धा. म. ना. असि, उ. स. अ. फ. अस। ४. धा. इहु, अ. फ. ना. म. उ. स. इक। ५. मो. प्रथिरान नेरेंद (< निरिंद), शेष में 'प्रिथिराज नरिंद'।

टिप्पणी—(१) इंद < इंद्र। मुनिंद < मुनीन्द्र। (२) नरिंद < नरेन्द्र। एस < ईदृक्=ऐसा।

[११]

दोहरा— सुनि रव[१] सुंदरि[२] उभ्भ तन[३] स्वेद कंप सुर भंग। (१)
मनु कमलिनि[१] कल संभरी[२] अम्रित[३] किरन तन[४] रंग ॥[५] (२)

अर्थ—(१) ['पृथ्वीराज'] का शब्द (नाम) सुन कर सुंदरी (संयोगिता) के शरीर में प्रस्वेद, कंप और स्वरभंग ऊर्ध्व (अंकुरित) हो गए। (२) [ऐसा प्रतीत हुआ] मानो सुंदर कमलिनी ने [सूर्य की] अमृत किरणों की क्रीड़ा का स्मरण किया हो।

पाठान्तर—(१) १. धा. वर। २. धा. सुंदर। ३. धा. उमय हुव, अ. फ. उब्भ हुव, मो. उमलत।

(२) १. मो. अ. फ. कमलनि, धा. कमलिनि। २. धा. समहरि.अ. फ. संहरिय। ३. धा. अम्रिभ्रित, मो. अमिरत। ४. मो. किरतन, धा. करनेतन अ. किरनि, तन, फ. किरन त। ५. धा. में 'तथा अन्तर पाठान्तर' लिखकर यहाँ निम्नलिखित दोहा भी है :

सुनि रव प्रिय प्रिथिराजे कउ उमद रोम तिन अंग।
सेद कंप सुरभंग भयउ सपत भाइ तिहि अंग ॥

अ. फ. में भी यह दोहा है, केवल 'तथा अन्तर पाठान्तर' नहीं लिखा हुआ है। म. उ. स. का पाठ है :

सुनि वर (रवि—म.) सुन्दरि श्रमै तन उमय रोग तन अंग।
स्वेद कंप सुरभंग भौ नैन पियत पृथु रंग ॥

प्रथम चरण के 'उर्मतन' और 'उभय रोम तन' में जो पुनिरुक्ति है, उससे इनमें भी पाठ (मिश्रण प्रकट है)। ना. का पाठ है :

सुनि रव सुंदरि उभ हुव उमें रोम तन अग।
स्वेद कंप स्वर भंग भौ नयन दिषि प्रयु रग॥
मानहुँ कमलिनि कल समरिय तिमर किरनि तनु रंग॥

प्रकट है कि ना. में मो. तथा म. उ. स. के पाठों का मिश्रण हुआ है।

टिप्पणी—(१) उभ = ऊर्ध्व। (२) समर = सस्मर्, स्मरण करना।

[१२]

मुडिल— *गुरुयन गुरु न निंदरिय[१] सुंदरि। (१)*
राजपुत्ति[१] पुछ्छइ न दुंदरि[२]। (२)
ग्रमु पुछ्छइ जउ*[१] दुत्ति पठावइ*[२]। (३)*
गुन[१] ग्रछ्छइ[२] पछ्छइ* करि आवइ*[३]। (४)*

अर्थ—(१) [यह देखकर संयोगिता की एक सहचरी उससे कहती है,] "हे सुंदरी, गुरुजनों और गुरुओं की निंदा न होने दीजिए [—इस प्रकार हर एक से चर्चा करने पर उनकी निंदा होगी], (२) हे राजपुत्री, द्वंद्व के साथ—इस प्रकार कि उसका घोर हो जावे—न पूछिए। (३) उसे पूछने के लिए दूती भेजिए। (४) [यदि वह पृथ्वीराज ठहरे] तो अपने अच्छे गुणों से [वह दूती] उसे [आप के] पक्ष में करके आवे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. न निंदरीय, धा. वंदिअ नहि, अ. फ. दद्दइ नहि, ना. निंदीराये न, उ. स. निंदरियं, म. निंदर पग।

(२) १. ना. राजन पुत्त। २. धा. पुच्छे कहुं सुंदरि, अ. फ. पुछ्छइ कहु दुंदरि, ना. म. उ. स. पुच्छिये (पुच्छि—ना., पुच्छियत—म.) न दुरि दुरि (दिदुरि—ना.)।

(३) १. मो. अमु पुछि (=पुछ्छइ) जु (=जउ), धा. अम्महि पुच्छन, अ. फ. अम्हइ पुछ्छन ना. हम ही पुच्छि पुच्छन, म. उ. स. अमहि पुच्छि (पुच्छ—म.) तौ। २. धा. दुत पठा वहि, मो. दुति पठावि (=पठावइ), ना. दुति पठावहि, अ. फ. दुति पठावहि, म. दुनि पठावहि।

(४) म. उ. स. कुन। २. मो. अछि (=अछइ), म. अच्छे, ना. अच्छै। ३. धा. पच्छे कर आवहि, मो. पछि (=पछ्छइ) करी (करि) आवि (=आवइ), अ. फ. पछ्छे करवावहि, म. उ. म. पुच्छवि करि आवहि, ना. पुच्छि करि आवहि।

टिप्पणी—(१) निंद < निन्द्=निंदा करना। (२) दुंद < द्वन्द्व। (३) अमु=इसको। (४) पछ्छ < पक्ष।

[१३]

रासा— *पगुरा सा[१] पुत्तिय[२] मुत्तिय थार[३] भरि। (१)*
यो प्रिय[१] जउ[२] प्रथीराज न[३] पुछ्छइ[४] तोहि फिरि[५]। (२)*
जउ[१] इन लप्पन[२] सव सहित[३] विचार न सोइ करि*[४]। (३)*
हइ[१] व्रत[२] मोहि[३] गि जीव सु[४] लेउं सजीव वरि[५]॥ (४)*

अर्थ—(१) पंगुराज (जयचन्द) की उस पुत्री (संयोगिता) ने मोतियों का थाल भरा, [और दूती से कहा,] (२) "हे स्त्री, यह यदि पृथ्वीराज हुआ, तो तुझसे फिर (घूम) कर [मोतियों के संबंध में] न पूछेगा। (३) यदि वह इन सब लक्षणों के साथ हो, तो तू उसका (मोतियों के फेंके जाने का) विचार न करे, (४) [क्योंकि] मेरा मत है कि इस नर जीव (शरीर) से ही उसको जीवन रहते वरण करूँ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) धा. पंगुराइ सा, मो. पंगुराय स, अ. फ. पंगराइ सा, उ. सब पंसर राइसु, म. स. सब पंगुरराय सु, ना. पंगुराय। २. धा. पुत्तिसु। ३. धा. थाज, म. अ. फ. ना. थाल।

(२) १. धा. जुत्तो, अ. फ. जुवती, ना. जौईय, सा. जौ हिय, म. उ. जौ तिय। २. मो. जु (=जउ), धा. जो, म. उ. स. इह, अ. फ. जौ, ना. में यह शब्द नहीं है। ३. धा. प्रिथिराजन, म. प्रिथीराजह, उ. स. प्रथिराजह। ४. मो. पुछि (=पुछ्छइ) अ. पुछ्छइ, फ. पूछै, धा. पूछहि, ना. पुच्छै, म. उ. स. अच्छहि। ५. मो. तोहि करि, धा. वीति फिरि, शेष में 'तोहि फिरि' (फिर—फ.)।

(३) १. मो. जु (=जउ), धा. जक, अ. फ. ना. म. उ. स. जौ। २. धा. इनि छिनि, अ. फ. ना. म. उ. स. इन लछ्छिन। ३. यह शब्द मो. के अतिरिक्त किसी में नहीं है। ४. मो. बिचारि न सोइ [—करि मो. में नहीं है], धा. अ. फ. नि (न—अ. फ.) सब्ब बिचारु (बिचारि—फ.) करि (करु—फ.), म. उ. ना. तौ (तो—ना.) तब्ब बिचारि करि, स. तब्ब बिचारि करि।

(४) १. मो. हि (=हइ), शेष सब में 'है'। २. मो. म. व्रत, धा. व्रतु। ३. म. सोहि। ४. मो. नृजीवउ, धा. त्रितावत, अ. फ. नृजीवत, ना. भीउत, म. उ. स. नृप जीव तौ। ५. ना. लेउ सजीव वर, म. फ. लेउ सजीव (सजीउ—फ.) वरि।

टिप्पणी—(१) थार < स्थाल=थाल। (२) तथा (३) जउ < यदि।

[१४]

रासा— सुंदरि आइसं[१] धाइ[२] विचार[३] न बोलइय[४]। (१)
जउ*[१] जल गंगह लोल[२] प्रतीत[३] प्रसंगु लिय[४]। (२)
कमल ति[१] कोमल पानि[२] कलिककुल[३] अंगुलिय[४]। (३)
मनहु[१] अघ्घ* दुज दान[२] सु अप्पति[३] अंगुलिय[४]॥ (४)

अर्थ—(१) वह सुंदरी [सहचरी] आदेशानुसार दौड़ आई; उसने [पृथ्वीराज से] अपना (मंतव्य) नहीं कहा। (२) जहाँ पर गंगा का लोल जल था, वहाँ उसने प्रतीति [उत्पन्न करने] का यह प्रसंग—पृथ्वीराज को चुपचाप मोती देते रहने का उपाय—ग्रहण किया। (३) उसका हाथ कमल सा कोमल था, और उसकी उंगलियाँ कलिका-कुल—कलियों—के समान थीं। (४) [उसका मोती अर्पित करना ऐसा लगता था] मानो वह (कमल) द्विज (चंद्रमा) को अंजुलि द्वारा अर्घ्य दान अर्पित कर रहा हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. म. आयस, ना. आइय। २. मो. धाहि, धा. अ. फ. उ. स. धाइ, म. धाय, ना. साइ। ३. धा. अ. बिचारि, फ. विचारु। ४. धा. स नांव लिय, अ. फ. स (ति—फ.) नाउं लिय,

ना. णि शुहीय, ग. न बुलिइय, उ. न वहइय, स. न बुलइय।

(२) १. धा. जो, मो. जु (=जत), ना. ज्युं, म. उ. स. ज्यौं, अ. फ. जइ। २. मो. गगइ लोल, शेष सभी में 'गग हिलोर'। ३. ना. नृपति, उ. स. प्रथीति, म. प्रथिति, ना. पृथात, अ. फ. प्रतीर। ४. उ. स. तिय।

(३) १. अ. फ. कमलिन। २. धा. अ. फ. हस्त (हस्ते—फ.), मो. पान। ३. धा केलि कुलि, म. अ. फ. उ. स. ना. केलिकुल। ४. धा. म. उ. स. अजुलिय।

(४) १. धा. मनो, ना. म. मनइं, अ. फ. मनौ। २. धा. अ. फ. दान दुज अंध (<अध्य), म. उ. स. अध (<अध्य) दुज दान। ३. धा. अ. फ. समप्पति। ४. मो. अजुरिय, धा. अ. फ. म. ना. उ. स. अजुलिय।

[१५]

नाराच— [१]अपंति[२] अ. जीय दान जान सोम लग्गये[३]। (१)
मनउ*[१] अनंग रंग वस्य[२] रंभ[३] इंद[४] पुज्जये[५]। (२)
जु[१] पानि बाहु बार यक्कि[२] थार मुत्ति[३] वित्तये। (३)
पुने पि[१] हथ्थ कंठ[२] तोरि पोति[३] पुंज अप्पये[४]। (४)
निरप्पि नयन टेरि वयन[१] ता त्रिपत्ति[२] चाहिय। (५)
तरप्पि दासि पासि पंक (पक)[१] संकियं न चाहियं[२]।[३] (६)
अनेक (अनिक ?) संग ग रूप[१] रूप जानि सुंदरी। (७)
उछंग‡ गंग‡ मझ्झि‡ धुक्कि[१]‡ सर्गपत्ति‡[२] अछूछरी‡। (८)
हुउ*[१]—‡ अछूछरी‡ नरिंदु[२]‡ नाहि[३]‡ दासि‡ गेह[४]‡ राय[५]‡ पंगुरे‡। (९)
तास‡ पुत्ति[१] बंम छाडि[२] ढिल्लिनाथ[३] आदरे[४]। (१०)
सा बंम[१] सूर चाहुवान मान[२] इंम[३] आनये। (११)
करेन[१] केहरी न पीन[२] इंदु मीन[३] थानये[४]। (१२)
प्रतप्पि[१] हीर[२] जुध धीर[३] यो सु वीर[४] संचही[५] (१३)
वरंतु[१] प्रान मानिनी[२] चलंति[३] देत[४] गंठही। (१४)
सुनंत सूर अस्व फेरि तेनि[१] ताम हंकिय[२]। (१५)
मनउ*[१] दलिद्द[२] रिध्धि पाय जाय कंठ[३] लग्गिय[४]। (१६)
कनक कोटि अंग[१] धात रास[१] वास+‡ माल चौ[३]। (१७)
रहत मउंर*[१] भौंर भौंर[२] साह छत्र[३] कांम चौ[४]। (१८)
सुधा सरोज मोज मंग[१] अलंक (अलक) रंक[२] हल्लये[३]। (१९)
मनउ*[१] मयन फंद[२] पासि[२] काम केलि घल्लये[३]। (२०)
करिस्य[१] कांम कंकन[२] सु पानिबध बध्धये[३]। (२१)
जु भावरी[१] सपी सलज्ज[२] रंभ* तुरंत बज्जये[३]।[४] (२२)

आचार[1] चारु[2×] देव सब्ब[3] दोइ[4] पष्प जंपही[5] । (२३)
गंठि[1] दिढ्ढ[2] इकचित्त लोक लोक चंपही[3]।[4] (२४)
अनेक(अनिका) मुष्प मुष्प सीस[1] जुध्य साध लग्गियं[2] । (२५)
सु[1] कंत कंत अंत ता[2] तमोरि मोरि[2] अप्पियं ॥ (२६)

अर्थ—(१) मानो वह (कमल) [चंद्रमा को] अंजुलियों के द्वारा [अर्घ्य-] दान अर्पित कर रहा हो, [इस प्रकार की] शोभा लग रही थी। (२) [अथवा] मानो अनंग-रंग (काम-क्रीड़ा) के वश में होकर रंभा इन्द्र की पूजा कर रही हो । (३) यद्यपि उस बाला के पाणि और बाहु थक गए, और थाल के मोती भी समाप्त हो गए, (४) फिर भी हाथ से कंठ-माला तोड़ कर वह उसकी पोत-पुंज (काच की गुरियों) को अर्पित करने लगी । (५) नयनों से [उस पोत-पुंज को] देखकर बचन द्वारा बुला कर नृपति (पृथ्वीराज) ने उसे देखा । (६) किन्तु वह पक्की (दृढ़) दासी [पृथ्वीराज के] पास में [होते हुए भी] तड़पकर (व्याकुल होकर) और शंकित होकर बोली नहीं । (७) [तब पृथ्वीराज ने उससे कहा,] "हे सुंदरी बाँके रंग-रूप के संग (संयुक्त) तुम [अलंकृत यश-] यूप [जैसी] हो, (८) [अथवा लगती हो कि स्वर्गपति के] उछंग (क्रोड़-या बाहुपाश) से [छूटकर] गंगा में धुक (ढुक-गिर) पड़ी हुई स्वर्गपति (इन्द्र) की अप्सरा हो ।" (९) [उसने उत्तर दिया,] "हे नरेन्द्र, मैं अप्सरा नहीं हूँ, मैं तो पंगराज के गृह की दासी हूँ, (१०) उसकी पुत्री जन्म (जीवन) [का मोह] छोड़कर दिल्लीपति (पृथ्वीराज) का [मन में] आदर करती है । (११) उसका जन्म (जीवन), हे शूर चहुवान, इस प्रकार जानिए, मानो वह (१२) करेणु (हथिनी), क्षीण (दुर्बल) केसरी, इंदु और मीनों का स्थान बन गया है—हथिनी के समान उसकी गति क्षीण केसरी के समान उसकी कटि, इंदु के समान उसका मुख और मीनों के समान उसके नेत्र हो रहे हैं । (१३) जो प्रत्यक्ष हीरक [के समान कांतियुक्त] है, युद्ध में धीर है, और जो वीर है उस [पृथ्वीराज के अनुराग] का यह संचय करती है, (१४) उसको वह मानिनी प्राण वरण करती है, इसलिए उसने [मेरे] चलते समय गाँठ दे दी है [जिससे मैं उसका यह संदेश देना भूल न जाऊँ] । (१५) यह सुनते ही उस शूर (पृथ्वीराज) ने घोड़े को फेर (घुमा) कर उस ताजी (घोड़े) को हाँका (१६) और इस प्रकार वह संयोगिता के पास पहुँच कर उससे गले मिला मानो किसी दरिद्र ने ऋद्धि प्राप्त की हो । (१७) [संयोगिता इस प्रकार की हो रही थी मानो] कोटि कनक धातु का उसका अंग हो, अथवा सुवासित मालाओंकी राशि ही हो । (१८) भँवर छंद के छंद [उस पद्मिनी संयोगिता के आस-पास] काम के श्लाघ्य छत्र की ही भाँति [उड़ रहे] थे । (१९) सुधा और सरोज के मौज से मंडित उसकी माँग अलकावली के झूले में हिल रही थी, (२०) [जो ऐसी लगती थी] मानो मदन [अपने] फंदों का पाश काम-केलि के लिए डाल रहा हो । (२१) उसके करों में जो काम कंकण [बँधे], थे वे पाणि-बंध (पाणि-ग्रहण) के बंधन हुए । (२२) भाँवरों पर उसकी सलज्ज सखियों ने जो रव (शब्द) किया, वही [मानो] तूर्य बजे । (२३) समस्त [संस्कारोचित] चारु आचार का देव-गण दोनों पक्षों से उच्चारण कर रहे थे . (२४) उनकी दृढ़ गाँठ उनकी एकचित्तता थी और लौकिक आचार उनका लोक-मर्यादा का अतिक्रमण था । (२५) [किन्तु इन] बाँके मुख्य मुखों के सिर पर युद्ध की साध [पृथ्वीराज के मन में] लगी हुई थी, (२६) इसलिए उस कान्त स्वकान्त को [संयोगिता ने] मोड़ (बीड़े बना) कर [विदाई के] तांबूल अर्पित किए ।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है ।

÷ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

‡ चिह्नित अक्षर और शब्द में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

× चिह्नित शब्द उ. में नहीं है।

(१) १. फ. ना. म. उ. स. में इसके पूर्व है (स. पाठ) :—

नराज माल छदए। कइत्त (कईत–म.) कव्वि चंदए।

२. मो. धा. अ. अर्पति। ३ म. लजए।

(२) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनु (=मनउ), धा. उ. स. मनो, म. मनौ, अ. फ. मनौ। २. धा. अ. फ. रंग अग, म. रत्ति सेय, उ. रत्त सेयौं, स. रत्त सेय, ना. रत्ति सेउ। ३. मो. मंग। ४. धा. अ. इदु, ना. इंद्र। ५. मो. पूजये।

(३) १. मो. जु, म. उ. स. सु, ना. ज। २. धा. पानि वारि वाहु थक्कि, अ. पानि हार चाहुवान, फ. पानि हारि चाहुवानु, म. पानि वाद वीर थकि, ना. जपा फुनि वाहु वार थाकि, स. पानि वार थक्कि, उ. पानि वार वाह थकि। ३. मो. थारि, म. उ. स. थाल। ४. मो. मोति, धा. अ. फ. मं. उ. मुत्ति, स. मुत्ति।

(४) १. धा. पुनप्पि, अ. फ. पुनोपि, म. पुनिपि, उ. स. पुनेपि, ना. पुनेहि। २. म. कठि। ३. मो. पाति। ४. धा. आपए।

(५) १. धा. निरक्खि बंन देखि नैन, ना. निरषि नैन फोरि वयन, म. उ. स. सु टेरि नेन (नैन–म.) फेरि रेन (वैन–म., बैन–उ.)। २. स. ता निरष्षि, ना. नृपति।

(६) १. ना. उ. स. कपि, म. केपि। २. मो. संकियं न चाहियं, धा. संकि जानि साहियं, अ. फ. सक एन साहियं, म. से कियं न वाहिय, ना. सकियं न चाहीय। ३. म. उ. स. में यहाँ और है (म. पाठ):

नराज गात श्रम दिपयी। कै स्वर्ग इंद गग में तरंग निति पिययी।

(७) १. धा. संगि रंगि रूप, ना. म. उ. स. संग रूप रंग, अ. रंग अंग रूप, फ. एक रंग रूप।

(८) १. धा. अ. फ. जान गंग मध्य (मज्झि–धा.), ना. म. उ. स. गग मध्धि धुक्कि (धुकि–ना.)। २. धा. सुर्ग पत्ति, अ. स्रगि पत्ति, ना. गर्ग पत्ति, म. स्वरग पत्ति, उ. स. स्वर्ग पत्त।

(९) १. धा. अ. फ. ति, ना. हु (=हउं), म. उ. स. हौं (हौं–स.) मो. नरेंदु, धा. म. नरिंद, ना. णरसंद। ३. धा. नाद। ४. ना. म. ग्रेह। ५. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है।

(१०) १. अ. सुजीपु पुल्लेति, म. उ. स. जुतास पुत्ति, ना. ताग्रु पुत्ति। २. धा. छोडि, ना. म. छंडि ४.। ना. दिल्लीनाथ। ४. धा. अ. फ. आचरे, म. उ. स. जद्दरे (अंदरे–म.)।

(११) १. धा. अ. फ. सवत (सावंत–अ.), मो. सांम्य (=जंम), ना. स जम्म, म. उ. स. संपज। २. म. उ. स. मत्र। ३. मो. हंन्, शेष सभी में 'एम'।

(१२) १. धा. करन्नु, अ. फ. करन्न, ना. करेण, म. उ. स. करीन। २. मो. कहरीन, म. उ. स. केहरी न दीप, ना. केहरी पर्नीन। ३. धा. मन्न, म. नाथ, उ. स. एन। ४. म. नंनिए।

(१३) १. धा. म. उ. स. भतक्स। २. म. छीर। ३. धा. धार। ४. धा. जे सवार, ना. जौवीर, म. जो सवीर, स. जौ सुवीर। ५. मो. संवाह, अ. फ. संवही, म. संठही।

(१४) १. धा. चरन्न, धा. अ. फ. म. चरंत। २. धा. म. मानती। ३. फा. चलंतु, स. चलौ सु, ना. चल्यौ सु। ४. धा. दंतु, मो. देह, म. उ. स. देन (दैन–म.)।

(१५) १. अ. फ. म. उ. स. तेज। २. धा. हंक्यो, अ. फ. बंकियौ, म. उ. स. हक्यं।

(१६) १. मो. मनु (=मनउ), धा. मनो, अ. फ. मनौ, उ. स. मनों, म. मनौं। २. धा. म. दरिद्द, उ. स. दरिद्र। ३. धा. रिद्धि पाइ जाइ कंठ, म. दत्त पाय जाय कत। ४. धा. लग्गयो, अ. फ. लगियौ, म. उ. स. लग्गयं।

(१७) १. धा. आस, अ. फ. अष्ट। २. धा राति। ३. धा. अ. फ. मालती, ना. कामची।

(१८) १. मो. रहत भुर (=मउर), ना. रहत मौर, धा रनति गोर, अ. फ. रनति मौर। २. मो. जोर जोर, धा. सोनि सोनि, अ. फ शौनि शौनि, ना. शौर शौर, म. शौर स्याद, उ. स. शौर स्याम। ३. मो. रात्र, धा अ. फ. ना. स्याह छत्र, म. उ. स. छत्र तत्र। ४ धा. अ. फ. कामती।

(१९) १ म. मौजय, ना. मौज अंग। २. धा. अ. फ. लिक रग, म. अलकि अलि, ना. चल अलिक। ३. अ. फ हलिए, म. हलयं, ना. उ. स. हलिय।

(२०) १. मो. मनु, ना. मनु' (=मनउ), धा. मनो, म. मनौं, उ. स. मनौं, अ. फ. मभौ। २. धा मयक फट्ट पासि, अ फ. मयंक फंद पासि, ना. म. उ. स. मयन्न रत्तिरन्न। ३. धा. काम काल वहुए, मो. काम केलि हलये, ना. उ. स. काम पास घलिय (घलय—म.), म. काम पास पलय, अ. फ. काम काल वज्जए।

(२१) १. धा. करिस्स, अ. फ. ना. म. उ. स. करस्सि। २. धा. कोस ककण, म. काम कक्न, फ. केम कक्न। ३. धा. अ. फ. जु पानि (तियान—अ. फ.) पत्त वधए, मो. सु पानि कथ वधये, उ. स. ति पानि फद सानए, (मान्दए—स.), ना. जुपानि फद बधए, म. जु पानि फद सान्ए।

(२२) १. अ. भांवरी, फ भाउती, ना. सु भांवरी, म. नाचरी। २. अ फ. धा. उ. स सुलज्ज, म. सुलाज। ३. धा. जुज्झ रुज्झ वज्जए, मो रुज्झ तुरयज्जये, अ. फ जूझ रज्ज वज्जए, ना झूझ सुविराजए, म. उ. स झुझ (झुझ—उ स.) सो (सौ—म) विराज्जए। ४ फ म उ स में यहाँ और है (स पाठ) अनेक संग डोररव रत्त मत्त सस्सिय। उसग ही सरोज सोभ दोस कत तस्सिय।

(२३) १. धा. ना. अचारु, मो आचरु, म ना अ फ अचार। २ धा. दारु, म अव, यह शब्द उ. में नहीं है। ३. धा. अ. फ देव सद, ना. देश सब्द। ४. धा अ. फ. दूर, ना. म. दोउ। ५. ना म उ. स. जपिय।

(२४) धा. अ फ. म. ना स। १ मो दिठ, धा दिट्ठ, ना. म. दिढ (दिठ्ठ—ना.), अ. फ. दिठ्ठ। ३. मो झपहि (—झंपही), ना. म. उ. स. चपिय, धा. अ. फ चपही। ४ ना म. उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):

सु इंद्रनी जु इद्र जानि गध्रवी विवाहयं।
मुसकि मद हासय समुप्प दिप्पि नाहयं।
सु अगुली उचकि एक देव तानि सुंदरी।
मिलंत होय वथ्थ मोहि स्वर्ग वास मदरी।

उ में पूर्ववर्ती चरण के 'एक' से लेकर इन अतिरिक्त चरणों में से तृतीय के 'एक' के पूर्व की सारी शब्दावली दुहराई हुई है।

(२५) १. अ. फ साउ (सार—अ.), ना. म उ. स. सास। २. धा. जघ सधि लग्गयं, म. उ. स. जुद्ध साध लग्गिय (लपियं—म), अ. फ. जुद्ध सधि लग्गिय, ना. जुद्ध लग्गियं।

(२६) १. धा. अ. फ में यह शब्द नहीं है। २. धा कन कति अंत अति, अ कति कति अंतरं, फ. कत कंत अति नंतित, ना कन कति अच्छना, म. उ. स. कत कति (कति—म.) अध्थिता ३ धा. म गोर। ४. धा. अप्पथं, अ फ अप्पिथ।

टिप्पणी—(१) अप < अप्प < अप्। (२) इद < इंद्र। (३) बार < बाला। (४) पोति < पोत्ती [दे०] काँच, शीशा। (५) चाह < वाञ्छ (?) (६) वाहि =आ+कृ=बोलना, कहना। (७) अनेक < आणिकृक =बाँका। (८) उछग < उत्सङ्ग=कोड, बाहुपाश। (१०) जम < जन्म। (१२) करेन < करेणु=हथिनी। (१४) गठ < ग्रंथि। (१५) तेनि < ताजी। (१७) रास < राशि (?)। (१७,१८) नी तु, एव। (१८) शौर=शुट। साह < श्लाघ्य। (१९) रक < रङ्कु=मृग। (२०) मयन < मदन। पासि < पाश। घल्ल डालना। (२२) रुध्ध < रुन्ध < रुध=आवाज करना। तुरय < तूर्य। (२३) जप < जल्प्=बोलना, कहना (२४) दोढ < दृढ। (२५) अनेक < आणिक=बाँका। (२६) तमोरि < ताम्बूल।

[१६]

दोहरा— वरि[1] चल्लउ*[2] ढिल्लियनृपति[3] सुत[4] जयचंद कुमारि[5] । (१)
गंठि छोड़ि[1] दक्खिन[2] फिरिग[3] प्रान करिग मनुहारि[4] ॥ (२)

अर्थ—(१) दिल्ली-नृप (पृथ्वीराज) तब उस कुमारी जयचंद-सुता (संयोगिता) को वरण कर चला। (२) गाँठ खोल कर वह प्रदक्षिणा में वापस हुआ, तो उसके प्राण [संयोगिता को साथ ले चलने के लिए] मनुहार (अनुरोध) करने लगे।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. फ. लै, धा. वर। २. मो. चलु (=चलउ), धा. अ. फ. चल्यौ, म. उ. स. चल्यौ। . फ. वर इंदुपति। ४. मो. सुव, १. ना. म. सुत। ५. धा. कवारि, म. कुंआरि, अ. फ. कुवारि। २) १. धा. ना. छोरि, म. उ. स. छोर। २. धा. दिच्छन, मो. दक्षिन (=दक्खिन), अ. फ. दषिन, ना. 1. उ. स. दच्छिन। ३. मो. ना. फिरग, अ. फिरिग, फ. करिग, ४. मो. मनहारि।

टिप्पणी—(२) गंठि < ग्रन्थि। दक्खिन < प्रदक्षिणा।

[१७]

गाथा— पायातु[1] पंग पुत्तीय[2] जयति जयति*[3] योगिनि[4] पुरेसं[5] । (१)
सर्वं[1] विधि निषेधस्य[2] यः तंबोलस्य[3] समादायं[4] ॥[5] (२)

अर्थ—(१) [संयोगिता कहने लगी,] "पंगपुत्री (संयोगिता) की रक्षा करो, हे योगिनी पुरेश—दिल्लीपति—तुम्हारी जय हो, जय हो। (२) सभी प्रकार से [तुम्हारे जाने के] निषेध का जो ताम्बूल है, उसे ग्रहण करो।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द धा. ना. में नहीं है।

(१) १. धा. अ. फ. पयंपि। २. धा. पंग पुत्रीय, ना. पंगु पुत्री। ३. धा. ना. जयति, मो. जय ज्यति। धा. जोगिन, ना. जुग्गनि। ४. धा. पुरइ।

(२) १. धा. सरव ना. अब्बे। २. धा. निसेधाइ, अ. फ. निषेधये, ना. निषेधाय। ३. मो. या तंबोलस्य, ना. तंबूलस्य, अ. फ. ना. तांबूलस्व। ४. मो. ना. समादर, अ. समदाय, फ. समदाइ। ५. म. उ. स. पाठ है :

श्लोक—पयाने दंग पुत्रो च जैतिक जोगिनी पुर।
विधि सर्वं (सर्वा—म.) निषेधाय तांबूलं ददतं नृपं ॥

[१८]

दोहरा— रेन[1] प्पर[2] सिरि[3] उप्परिहि[4] हय गय[5] गयु*[6] उद्धार[7] । (१)
मनु[1] ढिल्ली ठगु टगि गयु[2] रहि गयु सब[3] मुच्छार[4] ॥ (२)

अर्थ—(१) सिर पर [सैन्य-सचालन से उठी हुई] रेणु (धूल) पड़ रही थी, [इसलिए]

मोदे हाथियों का उछलना चला गया था—समाप्त हो गया था। (२) ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो दिल्ली का ठग [ठगमूरी खिला कर] ठग गया था, इस लिए सब मूर्छित रह गए थे—हो रहे थे।

पाठान्तर— *चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. रेनु, अ. रेणु, फ. रेण, ना. रैंण, उ. स. रैंन। २. धा. परइ, अ. फ. परे, ना. परि, म. उ. स. परैं। ३. अ. फ. म. उ. स. सिर। ४. धा. उप्परहि, अ. फ. उप्परइ, म. उ. स. उप्परैं। ५. धा. गन। ६. मो. गजु (< गयु), धा. ना. गज, अ. फ. गुंज, स. गतर, म. इर। ७. धा. अच्छार, उ. उछारि म. उछाह।

(२) मो. मनु, धा. अ. म. उ. स. मनहु, फ. मनहो, ना. मानहु। २. धा. ढग ढग मूल ले, अ. फ. ठग्ग ठग मूरि (चूरि–फ.) दै, म. उ. स. ना. ठग्ग (ठग–ना.) ठग भूरि लै, (लै–म.)। ३. धा. अ. फ. रहे ति सब, ना. रहि गए सब, म. उ. स. रहिग सबैं (रुबै–म.)। ४. म. मूछार, ना. मुरछार।

टिप्पणी—(१) रेन < रेणु। (२) मुच्छार < मूर्च्छित (?)।

[१९]

दोहरा— मनहू[१] बंध[२] ति भ्रज्ज भर[३] हेति न जान ति थट्ट[४]। (१)
वचन सामि[१] भंगु न करहु[२] सह[३] जोअइ*[४] नृप वट्ट[५]॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज के] भट मानो आज (इस समय) भी बँधे हुए थे, वह [भट-] समूह कारण नहीं जानता था [कि पृथ्वीराज को क्यों विलंब हो रहा था]। (२) [वे परस्पर कह रहे थे,] "स्वामी के वचन को भंग किसी दशा में न करो, हम सभी राजा (पृथ्वीराज) की बाट देखें।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधितपाठ का है।

(१) १. मो. मनुहू, धा. ना. अ. मनहु, फ. मनहो, म. मनों। २. अ. फ. बध, ना. बन्ध। ३. धा. अज हुंति भरे, अ. अज हुंति भर, फ. अज हो तिभर, उ. स. अनभूति धर, म. अनहित भरि, ना. अजहे तिभर। ४. मो. हेतिन जान निघट, धा. हेतिनि जानत थट्ट, अ. फ. है तिन जानत वट्ट, ना. म. उ. स. हेतिन जानत थट्ट (ठाट–ना.)।

(२) १. धा. बचन साइ. म. बचन स्वामि, ना. बचनर स्वामि, फ. बचन स्वामु। २. धा. ना. भंगु न करहि, अ. फ. भंग न करै, म. उ. स. भंग न करहि। ३. धा. सहु, ना. सुब अ. सब, फ. सच। ४. धा. जोवइ, मो. जोइ (=जोअइ), ना. अ. जोवहि, फ. जोउरि, म. उ. स. देषहि। ५. ना. बाट।

टिप्पणी—(१) भर < भट। (२) वट्ट < वर्त्मन्=मार्ग।

[२०]

दोहरा— धीर तनु धरि ढाल सिर[१] बाहु दंत उभ रोम[२]। (१)
नृपति[१] नयन भिय भ्रंकुस[२] मनहु मदग्गज[४] सोम[५]॥ (२)

अर्थ—(१) [उधर पृथ्वीराज का यह हाल था कि] धीर तनु पर जो ढाल वह धारण किए था, वही सिर था, उसके बाहु उसके उठे और हुए दाँत थे, (२) नृपति (पृथ्वीराज) के

रुके (निकले) नेत्रों में स्त्री का अंकुर था—स्त्री गड़ी हुई थी—हो, [इस प्रकार राजा ऐसा हो रहा था] मानो मदोन्मत्त गज शोभित हो रहा हो ।

पाठान्तर—(१) १. धा. धीरत्तनु दर दार सिर, फ. धीरत्तनु सिर डाल धरि, म. उ. स. धीरत धरि दिलिस, वर ना. धीरत्तन धरि डिली सुरह । २. धा. वातु दैतिय उभ रोम, मो. म. उ. स. वद्दुदंती उभ रोम (रोस—ना.), अ. फ. वाहु दंत उभ रोम, ना. दंती उता रोम ।

(२) १. धा. त्रिप्पु । २. मो. नयन त्रिय अंकुर, धा. नयन त्रिअ अंकुरिग, अ. फ. यन त्रिय अंकुरिग, ना. म. उ. स. नयन तन अंकुरे । ४. फ. मनौह मदगज, म. मानहु मदगज, स. मनहु मत्त गज । ५. म. सोस ।

टिप्पणी—(१) उभ > उब्भ < ऊर्ध्व= उठा हुआ । रोम < रद ।

[२१]

दोहरा— हरपवंत[१] नृप चित्त[२] हुअ[३] मेन[४] मझिहि[५] अनुराहु[६] । (१)
मिलित[१] हथ्थ कंकन[२] लषिउ*[३] कन्ह कहइ इह काहु[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) राजा (पृथ्वीराज) का चित्त हर्षित था क्योंकि वह मदन (काम) में अनुराद्ध (संप्राप्त) था । (२) जब उसके हाथ में मिला (बँधा) हुआ कंकण देखा तो कन्ह ने कहा, "यह क्या है ?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. म. हरषचंद । २. म. ना. में 'चित्त' शेष सभी में 'त्रित' या त्रित्य । ३. धा. हुआ । ४. मो. फ. में 'मेन' शेष, सभी में 'मन' । ५. धा. मझहि, उ. स. अ. फ. ना. मझह म. मंझह । ६. मो. अनुराहु, धा. जुधिराहु, म. उ. स. अ. फ. ना. जुधचाव (चाउ—फ. ना.) ।

(२) मो. ना. मिलित, फ. मिलति, शेष सभी में 'मिलत' । २. मो. स. हथ कंकन (< कंकन), धा. हस्य कंकम । ३. मो. लिष्पु (=लिष्पउ) म. लिष्यौ, धा. लखिउ, अ. फ. लष्यौ, ना. उ. स. लष्यौ । ४. मो. कन्ह कहि (=कहइ) इह काहु, धा. कहहि कन्ह यहु काइ, अ. फ. कहइ (कहै—फ.) कंक नह (इह—फ.) काव (चाउ—फ.), ना. म. उ. स. कह्यौ (कह्यौ—म.) कन्ह इह (यह—ना.) काव ।

टिप्पणी—(१) १. मेन < मयण < मदन । अनुराह < अनुराद्ध ।

[२२]

दोहरा— गगन रेण[१] रवि मुंद लिअ[२] धर सिर[३] छंडि फुणिंदु[४] । (१)
इहु[१] अपुव्व[२] धीरत्त तुहि[३] कंकन हथ्थ नरिंदु ॥ (२)

अर्थ—(१) [कन्ह ने कहा,] "गगन में [पहुँची हुई] रेणु ने रवि पर आक्रमण कर दिया है, और फणीन्द्र (शेष) धरा को सिर से छोड़ चुके हैं । (२) ऐसी दशा में यह तुम्हारी ही अपूर्व धीरता है कि, हे राजा, तुम्हारे हाथ में कंकण [बँध रहा] है ।"

पाठान्तर—(१) १. धा. रेनु, अ. फ. ना. रेणु, म. उ. स. रेन । २. धा. मुंद लिय, अ. फ. म. उ.

स. मुंदि लिय, ना. छूंद लिय। ३. म. उ. स. थर मर, ना. थर मर। ४. मो. फुणंद, धा. अ. फ. फनंदि म. ना. उ. स. फुनिंद।

(२) १. धा. इहु, मो. इहि, अ. फ. यह, म. उ. स. इह, ना. ईय। २. मो. अवूल, म. पुत। ३. मो. धीरय तुही, धा. अ. फ. म. धीरत्त तुहि, ना. धीरज्ज तुहि।

टिप्पणी—(१) रेण < रेणु। पुंद < क्षुंद=आक्रमण करना। फुणिंद < फणीन्द्र। (२) अपुब्ब < अपूर्व।

[२३]

मुडिल—

बरिय[१] बाल सुत पंगुर[२] राइ[३]। (१)
उहि मत रष्षि[१] मिलउ* तुम्ह आइ[२]। (२)
तजि[१] मुध्धहि[२] अब जुध्ध सहाइ[३]। × (३)
अगास आनि दइ* लियउं* बताइ[१]। × (४)
तिहि तजि चित्त कियउ*[१] तुम्ह पास[२]। ‡ (५)
छंडिय कन्ह रुदंति अवास[१]। § (६)
जु सउ भृत मझ्झि[१] एक भृत होइ[२]। (७)
सो नृप युवति न[१] मूंकइ[२] कोइ[३]। (८)
हम सउ रजपूत[१] सा सुंदरि एग[२]। (९)
मुकि जाइ महि[१] बंधइ तेग[२]। [३] (१०)
जउ अरि ढइ[१] कोडि[२] दल साज[३]। + (११)
तउ* ढिल्लिय तपत[१] देहुं[२] प्रथिराज[४]। + (१२)
इह नृपति न बुझ्झिये तोय[१]। (१३)
परणि मूंकि सुंदरि अरि* छेइ[२]॥ (१४)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] मैंने पंगराज (जयचंद) की सुता बाला [संयोगिता] का वरण किया, (२) और उसका [प्रणय-] मत रख कर तुम से आ मिला। (३) उस मुग्धा को छोड़ कर मुझे [अब] युद्ध ही सुहा रहा है (४) [इसलिए] आवास (भवन) में आ कर मैंने तुम्हें बता दे लिया—सूचना दे दी। (५) उसको छोड़ कर चित्त मैंने तुम सब के पास किया है (६) और उसे, हे कन्ह, मैंने [उसके] आवास (भवन) में रोता छोड़ दिया है।" (७) [कन्ह ने कहा,] "यदि हम सौ भृत्यों में से एक भी भृत्य होता (८) तो वह भी हे राजा, [तुम्हारे द्वारा परिणीता] युवती को न छोड़ता। (९) [तब जबकि] हम सौ राजपूत हैं, और एक ही सुन्दरी है, (१०) तो क्या उसे छोड़ कर और घर जाकर हम तेग (तलवार) बाँधेंगे। (११) यदि शत्रु-समूह करोड़ का दल भी साजे, (१२) मैं दिल्ली का सिंहासन पृथ्वीराज को दूँगा। (१३) हे राजा तुमसे ऐसा नहीं समझा था—ऐसी आशा नहीं थी। (१४) तुम परिणीता सुन्दरी को छोड़ कर शत्रु को छिन्न (नष्ट) करना चाहते हो।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण ना. में नहीं हैं।

‡ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

§ चिह्नित चरण अ. फ. में नहा है।

+ चिह्नित चरण म. उ. स. में दो बार आए हैं।

(१) अ. फ. चरिय। २. ना. पंगुह, म. उ. स. पगह। ३. मो. राईं।

(२) १. मो. उहि घृत रष्षि, धा. उहि चितु रषिख, फ. उछ घृत रष्पि, म. उ. स. वह मन भंग। २. मो. मिलु (=मिलउ) तुम्ह आइं, धा. अ. फ. ना. मिल्यो तुम (तुम्ह–ना.) आइ, म. मोह मन जाइ, उ. स. मोहि घृत जाइ।

(३) १. म. उ. स. तिहि, (तिहिं–म.)। २. धा. मुंघइ, मो. मुधही, अ. फ. मुंघहि, उ. मुंधहि। ३. मो. धा. सहाइ, म. सुहाय, अ. फ. सुहाइ, स. सुहाईं।

(४) १. मो. अवांस आनि दि (=दइ ?) लीयु (=लियउ) बताइ, धा. सु अब दई आवास बताइ, अ. फ. छडिय कन्ह अवासह (अवासहि–फ.) आइ, म. उ. स. [सो–उ. म.] अप्पि अवासह देउं (देउ–म.) बताईं (बताय–म.)।

(५) १. मो. कीयु (=कियउ), धा. किया, म. उ. स. कियौ ना. कियो। २. उ. स. सुम पासं, सुम पासि।

(६) १. मो. रुदंतां तौ अवास, धा. रवंत अवास, म. उ. स. रुदंत अवासं, म. रुदंत अवासि, ना. रुदंत अवास।

(७) १. मो. जु सों मृग माहि, धा. ज सउ भिन मज्झि, अ. फ. ना. सौ मृग (नति–फ.) मज्झि, म. उ. स. सौ (सो–म.) सुमट्ट महि। २. धा. इक भितु होइ, अ. फ. इक भृत (भिन–फ.) होइ, म. उ. स. एक भट होइ (होम–म.)।

(८) १. धा. त्रिप यूंदीहिन, अ. फ. तऊ (तौ–फ.) न सुंदरि, ना. तोऊ न सुंदरि, म. तो त्रिप नहि न, उ. स. तौ नृप धनहि न। २. धा. म. उ. स. अ. फ. मुक्के। ३. धा. कोई, म. कोय।

(९) १. धा. हम सउ त्रित, अ. सो रजपुत्ति, फ. सो रज्पूत, म हम सौं रज, ना. सौर पुत्त, उ. स. हम सौ रजपूत। २. मो. सा सुंद रग, धा. सुंदरी एग, अ. फ. ना. सुंदरिय (सुंदरी–फ. ना.) एक, म. उ. स. रु सुंदरि एक।

(१०) १. मो. मुनि जाइ ग्रहि, धा. ना. मुक्कि जाइ ग्रिह, अ. फ. मुक्कि जाइ ['ग्रिह' नहीं है], म. उ. स. मुक्कि जांहि ग्रह। २. १. मो. बंधि (=बंधइ) तेग, अ. फ. म. उ. स. बंधहि तेक, ना. बंधे टेक। ३. ना. में यहाँ और है: गज्जित कन्ह कही यह सह। राजन बात कीन्ह यह दह।

(११) १. मो. जु (=जउ) अरि ठर (< ठट ?), धा. जउ अरि घट्ट, अ. फ. ना. जौ अरि घट्ट (घट्ट–फ. ना.), म. उ. स. जौ अरि थाट। २. धा. अ. फ. म. उ. स. कौरि, ना. कौअरि। ३. मो. साजा, अ. फ. साजहि, म. साज।

(१२) १. यह शब्द धा. अ. फ. में नहीं है, म. उ. स. तौ। २. अ. फ. तपत। ३. धा. देउ, अ. फ. देउं, म. देहि, ना. घं (=घउं), उ. स. देहि। ४. मो. प्रथीराजा, धा. प्रिथिराज, अ. फ. पृथिराजहि, म. प्रिथीराज।

(१३) १. मो. इह नृपति न वुज्झें (< वदार) सोय, धा. अ. फ. ना. इहु (यह–अ. फ. ना.) भिपति बुज्झिये (बुझिये–अ. फ.) न सोहि, उ. स. इतनी नृपति पुच्छये सोहि, म. इतनी नृपति बुझिये सोहि।

(१४) १. मो. परणि मूंकि सुंदरि यरि (=अरि) छेइ, धा. सुंदरि तजि जीवन का मोहि, अ. फ. सुंदरि तजे जीवन क्यों मोहि, ना. सुंदरि तजै जीवन क्यु मोहि, म. उ. स. परनि (परन–म.) मुक्कि सुंदरि रह होइ (होवि–म.)।

टिप्पणी— (३) मुध < मुग्धा। (७) मृग < मृगय। (८) मूक < मुच्। (९) एग < एक। (१४) छेअ < छेदय्।

[२४]

दोहरा— चलि चलि सूर ति[१] सथ्यि[२] हुम रण निसंक[३] मनि[४] भउन*[५] । (१)
सह अचार सुख मंगलहि[१] मनहु फिरि करइ*[२] गउन*[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) शूरगण चल चलकर पृथ्वीराज के साथ हो लिए, वे रण के लिए निःशङ्क थे, और उनके मन में वह भवन था [जिसमें संयोगिता थी] । (२) [ऐसा लगता था] मानो आचारों के साथ मुख्य मांगलिक कार्य ही लौट कर गमन कर रहा हो—मानो उन्हीं को वहाँ साथ ले जाने के लिए वह यहाँ आया रहा हो ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. मो. चलचलि सूर ति, धा. चलैं सूर सह, अ. फ. चलि चलि सूर सु, म. चलि चलि सूरि त, उ. चलि चलि सूति, ना. चलि मिल सुरस । २. अ. फ. म. उ. स. सथ्थ । ३. उ. नरसिंक । ४. मो. में 'मनि' है, शेष म 'मन' । ५. मो. भुंन (=भउन), धा. अ. फ. भौन, ना. भौम, उ. स. भौन, म. मौन ।

(२) १. धा. म्रिग लहि, अ. फ. मगही, म. उ. स. मंगलह, ना. मंडलहि । २. मो. फिरि करि (=करइ), धा. करै फिरि, अ. फ. कियौ फिरि (फिरु—फ.), ना. म. उ. स. करहि (करहिं—म.) फिरि । ३. मो. गुंन (=गउन), धा. अ. ना. गौन, फ. गौनु, उ. स. गौन, म गौन ।

टिप्पणी—(१) सह=साथ ।

[२५]

गाथा मुडिल्ल— पानि परसि[१] अरु दीठ विलग्गिय[२] । (१)
सा[१] सुंदरि[२] कामागनि[३] जग्गिय[४] ॥ (२)
पिनु तनु तलप[१] अलप मन किन्नउ[२] । (३)
जउ*[२]* बरु[२] बारि[३] गए[४] तनु[५] मीनउ[६] ॥ (४)

अर्थ—(१) [संयोगिता ने पृथ्वीराज के] पाणि का स्पर्श किया था, और [उससे उसकी] दृष्टि लग गई थी, (२) [इसलिए] उस सुन्दरी की कामाग्नि जाग उठी थी । (३) एक क्षण [के लिए] वह शरीर से तल्प (पर्यङ्क) पर चली गई और उसने मन को छोटा कर लिया, (४) [उस के शरीर की दशा कैसी हो रही थी] जैसी श्रेष्ठ जल के शेष न रहने पर मछली के शरीर की होती है ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) मो. परस्य (=परसि), धा. अ. फ. उ. स. परस, म. परसि । २. धा. द्रिस्टि, अ. दिट्ठि, फ. दिष्ट, ना. द्रष्टि, म उ. स. दिठ्ठ । ३. मो. म. विलगीय (=विलग्गिय), अ. फ. विलग्गिय, धा. कलग्गिय ।

(२) १. म. सुअ । २. फ. सुदर । ३. मो. कामागति, अ. फ. कामगिनि, उ. कामाजिन, स. कामागिन । ४. मो. जगीय ।

(३) १. धा. पन तल-र, मो. पिनु तनु तल्प, अ. फ. पन तलाप, ना. उ. स. पिन तलपइ, म. पिनत पन । २. मो. अलप मन किनु (किनउ), धा. अल-प मनु कीनै, अ फ. लाम मनु कीनउ (कीनौ—फ.), म. तनइ मन कीनो, ना. उ. स. अलपइ मन कीनौं ।

(४) १. मो. सुं (< ज़ु= से), धा. जै, अ. फ. ज्यौं, ना. ज्यु (=ज्यउं), उ. स. ज्यों, म. जौ। २. धा. बहि। ३. फ. बात। ४. धा. उ. स. गये, म. अ. गय, ना. गयं, फ. गयौ। ५. अ. फ. उ. स. सन, म. तिन। ६. धा. मंने, मो. मानु (=मानउ), म. ना. फ. मौनौ (मौनों—ना.), अ. मानउ।

टिप्पणी—(३) तल्प < तल्प=पर्यंक।

[२६]

अडिल्ल— फिरि फिरि[१] बाल[२] गवष्पिन[३] अष्पी[४] । (१)
ता सिष देहि[१] वयन[२] वर सष्पी[३] ॥ (२)
विन[१] उत्तर तु मौन[२] मुष[३] रष्पी[४] ।+(३)
जिम चातुकि पावस रति नष्पी[१] ॥+(४)

अर्थ—(१) बाला (संयोगिता) की आँखें पुनः-पुनः [जाते हुए पृथ्वीराज को देखने के लिए] गवाक्षों में [जा लगतीं], (२) तो उसको उसकी सखियाँ श्रेष्ठ वचनों में सीख देतीं। (३) [किन्तु संयोगिता] उन्हें उत्तर दिए बिना मुख को मौन रखती, (४) जिस प्रकार चातकी पावस ऋतु को बिताती है।

पाठान्तर—+ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

(१) १. मो. फिर फिर। २. फ. बालि। ३. धा. गवक्खह, मो. गवाषिन, अ. गवष्पिनि, फ. गउष्विन, उ. स. गवष्पनि, म. गरषविन, ना. गवष्पन। ४. मो. अंषी (=अष्षी), धा. अष्षी, शेष में 'अष्षिय'।

(२) १. फ. सुषदेह, अ. सषि देहि, म. ना. सिष दैन, ना. उ. स. सिख देन। २. ना. म. बैन, फ. वयर। ३. मो. संषी (=सष्षी), ना. म. सिष्षीय।

(३) १. धा. बिनु। २. धा. अ. मोहन, ना. उ. स. सु मौन, म. सौ मौन। ३. मो. मष, ना. म. उ. स. मन। ५. ना. म. रषीय।

(४) १. धा. जिम चातग पावस ऋतु नखी, मो. जीम (=जिम) चातुकि (< चातुकि) पावस रति नंषीय (=नष्षीय), अ. ना. जिमि चातिक (चात्रिग जिम—ना.) पावस रितु नष्षिय, म. उ. स. मन बच क्रम प्रीतम रस कष्षिय (चषीय—म.)।

टिप्पणी—(१) अष्पी < अक्षि=आँख। (२) सिष < शिक्षा। (४) रति < ऋतु। नष्प < नश= काटना, बिताना।

[२७]

मुडिल्ल— अंगना अंग सउ[*१] चंदनु लावइ[*२] ।+(१)
अरु अंगन लाजन[१] समुझावइ[*२] ॥+(२)
दे[१] अंचल चंचल द्रिग मुद्दइ[*२] । (३)
कुल सभाउ[२] तुरी जिम कुद्दइ[*२] ॥ (४)

अर्थ—(१) वह अंगना (संयोगिता) अपने अंगों से चन्दन लगाती, (२) और अपने अंगों को लज्जावश समझाती [कि उन्हें अपनी आतुरता प्रकट न करनी चाहिए], (३) वह अंचल

देकर अपने चंचल नेत्रों को मूँदती, (४) [किन्तु वे उसी प्रकार न मानते] जिस प्रकार अपने कुल-स्वभाव के कारण [बाँधने पर भी] घोड़ा कूदा-उछला करता है।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) + चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

१. मो. अगना अग सु (=सउ), धा. अगना अगह, अ अगन अगन, ना. अगनि अग सु, म. उ. स अगन अगसु। २. मो. चदन लावि (=लावइ), धा ना. म उ म चंदनु (चदन—ना म. उ. स.) लावहि, अ. चंदन चावहि।

(२) १ धा. असु लाजनु राननु, अ. अरु लाजन राजन, म ना. उ स, अरु रानन लाजन। २. मो समुझावि (=समुझावइ), धा अ फ. म. उ स ना समुझावहि (समझावहि—म.)।

(३) अ. फ. म. ना. उ. स. दे। २. मो. मुदि (=मुदइ), ना. म. अ मुदहि, फ. मुदहि, शेष में 'मूदहि' (मुदहि—अ. फ.)।

(४) १. धा. अ. फ. ना कुल सुभाइ (सुभाइ—अ. ना, सभाइ—फ) तुरिया जिम (जिय—धा, जिमि—अ. फ.) मुदहि, मो. कुल समाउ तुरी जिम कुदि (=कुद्दइ), म उ स विर (चिर—म.) दावन दाइन रवि उद्दहि।

टिप्पणी—(३) मुद्दइ < मुद्रय्=बंद करना, मूँदना।

[२८]

मुडिल्ल—
बहुत जतन सजोगी* समवे[१] । (१)
सोम अमृत कमल तुम्ह नु छवे[२] ॥ (२)
इह कहि बाल गवखिन* पत्तिय[१] । (३)
पति देषत[१] मन महि[२] नहि रत्तिय[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) संयोगिता ने [विकलता निवारण के लिए] बहुतेरे यत्न किए [किन्तु वे व्यर्थ गए यह देखकर उसने कहा,] (२) "हे सोम (चन्द्रमा), अमृत, और कमल, तुम्हें कोई भले ही न छुवे [क्यों कि तुम्हारे स्पर्श से शीतलता की अपेक्षा करना व्यर्थ है।]" (३) यह कह कर वह बाला गवाक्षों को सम्प्राप्त हुई (पहुँची)। (४) किन्तु जब उसने पति (पृथ्वीराज) को [युद्ध में न लगकर अपने पास आते] देखा, वह मन में [उस पर] रक्त (प्रसन्नता) नहीं हुई।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सयोगि (=सजोगी) समव, म सजोगि समाव, शेष सब में 'सजोगि (सजोग—धा.), समाए'।

(२) १. मो. सोम अमृत कमल तुम्ह न छवे, धा. ना अ. फ. सोम कमल अमित दरसाए, ना म उ स. सोम (जनु साम—म. उ) कमल दिनवर (दिनयर—ना., दिनियर—म.) दरसाए।

(३) १. मो. इह कहि बाल गवाखिन (=गवाखिन) पत्ताय, धा अ फ. ना. म. उ स. दुसकि दुसकि (दुसिकि—म.) दिष्पउ (दिख्यो—धा उ. स, दिष्यो—ना म) पन पत्तिय (पुन पत्तिय—धा प्रनपत्तिय म उ. स, प्रणपत्तिय—ना)।

(४) १. धा. देष्यो, अ. देषत, फ देषति, ना. म. उ. स. दिष्पत। २ मो. मिहि (< महि)। ३. धा. अ. फ. ना. अनुरत्तिय, म. उ. स. अभिरत्तिय।

टिप्पणी—(१) समव् (हन्+अव्) = लगाना, प्रयुक्त करना। (२) तु (गु) = व्यंग्य, अपमान अथवा अमान सूचक अव्यय। छव < छिय < स्पृश्=छूना। (३) गवष < गवाक्ष। पत्त < प्राप्त। (४) रत्त < रक्त।

[२९]

श्लोक— गुरु जनो नि मनो[१] नास्ति तात भ्रात्तात वर्जिता। (१)
तस्य कार्य[१] विनश्यंति यावत्[२] चंद्र दिवाकर[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) [संयोगिता ने अपने मन में कहा,] "यदि किसीके मन में गुरुजन [के प्रति आदर] नहीं होता है, और वह तात (पिता) तथा आप्त (ज्ञानी पुरुषों) से वर्जित (रहित) रहता है, (२) तो उसके कार्य जब तक चंद्र तथा दिवाकर होते हैं—अर्थात् सदैव—नष्ट होते हैं।"

पाठान्तर—(१) धा. गुरुजनो नाम, अ. फ. गुरुजनो नमो, ना. गुरुजन नमो, म. गुरं्जनंनमो, उ. गुर ज्नं मयो, स. गुरर्ज्न मनो। २. धा. अ. फ. तात मात विवर्जितः, म. उ. स. तात आशा (अशा—म. उ.) विवर्जित। ना. तात तातत्र विवर्जितः।

(२) १. धा. म, ना. म. उ. स. अ. फ. कार्य (कार्द—ना. म. उ. स) म. कार्ज्यं। २. धा. जाम। ३. मो. म. उ. चंद्र दिवाकर, धा. चंद्र दिवाकरः, अ. फ. चंद्रो दिवाकर, ना. स. चंद्र दिवाकरौ।

टिप्पणी (१) आत्त < आप्त = ज्ञानी पुरुष।

[३०]

दोहरा—इह[१] कहि सिर धुनि सषिन सउ*[२] दिष्षि[३] संजोगि[४] सुरज्ज[५]। (१)
जिहि[१] प्रिय तन अंगलि फिरइ[२] तिहि[३] प्रियजन[४] कहा* कज्ज[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) राजा (पृथ्वीराज) को देख कर संयोगिता ने सखियों से यह कहा और सिर पीट लिया, (२) "[सखियो,] जिस प्रिय की ओर [लोगों की] उंगलियाँ फिरें—उठें, उस प्रियजन से [ही] क्या कार्य (प्रयोजन)?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. ना. यह। २. मो. सुषिन सुं (=सउं), ना. सषिन सुं (=सउं), धा. उ. स. सखिनि सौं, अ. सषिनि स्यौं, म. फ. सखिन सौं, ना. सषिन सुं। ३. धा. अ. फ. देषि। ४. मो. संयोग सु, फ. संजोग सु, ना. म. उ. स. संजोगिय। ५. मं. में 'रज्ज', शेष सभी में 'राज'।

(२) १. फ. जिहु, म. जिहि। २. मो. प्रयज्न अंगलि फिरइ, धा. पियज्न अंगुलि फिरिय, अ. प्रियतन अंगुलि फिरै, फ. प्रियतनु अंगुलि फिरहि, ना. प्रीयन अंगुलि फिरै, म. उ. स. प्रियज्न अंगुलि करै। ३. धा. ना. अ. उ. म. तिहि, अ. फ. सो। ४. मो. पयज्न। ५. मो. काहा कज, धा. कह काज, अ. म. उ. स. किहि काज, फ. कहि काज, ना. कह काज।

टिप्पणी—(२) कहा कथम् < कथं।

[३१]

दोहा— सुनत[१] सामंतन[२] सत्त कहि[३] पंग पुत्ति[४] धर मंथ[५] । (१)
इहि सथ्थहि सामंत सुभट[१] ज वइ*[२] ठिल्लहिं[३] गय[४] दंत ॥ (२)

अर्थ—(१) यह सुनते ही सामन्तों ने सत्य [ही] कहा, "हे पंगपुत्री (संयोगिता), यह [पृथ्वीराज] जो धरा का मस्तक है, और इसके साथ जो सामन्त सुभट हैं, वे हाथियों के दाँतों को भी ठेल देते हैं, [इसलिए यह न समझना कि पृथ्वीराज [युद्ध से भयभीत होकर तुम्हारे पास आया है ।]"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. धा. सुनि, ना. म. स. ए । २. धा सावतनि, ना. सामंतहि, म. सामंत जु, स. सावंत जु । ३. धा. संत कहि, मो. सत किद्दि । ४. धा. पुत्ति । ५. धा ना. स. घटि मंत, म. घट मत ।

(२) १. मो. इहि सथ्थहि यत सुभट, धा. तुम्ह सत्थहि मा त सुभट, ना. इह सत्थ सत मद सुभट, म. रा. एक लष्य भर लष्पियँ (लषयौ—म.) । २. मो. ज वि (=वइ), धा. के, ना. म. जे, स. जै । ३. धा दिल्लहि, म. गढै, ना. स. कट्टै । ४. धा. म. ना. स. गज ।

टिप्पणी—(१) धर < धरा । मंथ < मस्तक । (२) गय < ग- ।

[३२]

गाथा— मदन[१] सराल ति विवहा[२] निमिष दइत[३] प्रांन प्रानेन[४] । (१)
नयन[१] प्रवाह ति[२] विवहा दिवा कथय वथा[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) मदन के शर रूपी काल से विनष्टा [संयोगिता] के प्राण एक क्षण के लिए दयित (प्रिय, पति) के प्राणों से [अभिन्न रहे] । (२) [किन्तु] उस विनष्टा के नेत्र-प्रवाह उस दिवस की कथा कहते ही रहे ।

पाठान्तर—(१) १. स. मदनं । २. मो. सिरालति विवहा, स. सरालति विविहा, म. सराल निवहा, फ. सरालति विपहा । ३. मो. निमिष दइति, धा. विवहारे देत, अ. फ. विवहा (विवह—फ.) दंत, म. ना. उ. स. निह्रा रट्योसि । ४. ना. मान प्रायेन, उ. स. प्रान प्रानेसं ।

(२) १. ना. पत । २. धा. प्रवाहि, अ. प्रवाहित, फ. प्रवाहिन । ३. धा. अहवा कामा कथ दोह, अ. फ. अहवा काती वथा, ना. अहवामा काती कथा, म. उ. स. अहवमा कन (दांत—उ. स.) कथ्थायं ।

टिप्पणी—आल < काल । विवहण < विध्वंसन=विनाश । दइत < दयित=प्रिय ।

[३३]

कवित्त— हे[१] प्रथिराज वामंग[२] संग जो[३] कन्ह[४] नन्ह[५] दल ।° (१)
हउ*[१] चहुआन समथ्थ[२] हरउं*[३] रिपुराय तथ्थ वल[४] ।° (२)
मोहि विरुद[१] नरनाह दंद को[२] वरइ*[३] भुजनि[४] पर ।°(३)
मोहि कंप[१] सुरलोक कंप तपिय तह[२] नाग[३] नर । (४)

मम कंपि कंपि[१] सुंदरि[२] सपहु[३] चड्डिग[४] कोडि कायर[५] रषत[६] । (५)
इहि[१] भुवनि[२] ढिल्लि[३] कनवज्ज करउं[४] इहि[५] अप्पउ*[६] ढिल्लिय[७] तपत ॥ (६)*

अर्थ—(१) [यह देख कर कन्ह ने पुनः कहा] "हे पृथ्वीराज की नामाङ्क, यदि कन्ह के साथ नन्हा-सा भी दल हो, (२) तो मैं समथ चहुवान रिपुराज से वहाँ (रण-क्षेत्र में) [उसका] बल हर लूँ। (३) मेरा विरद 'नरनाह' है, कौन मुझसे [अपनी] भुजाओं के बल से द्वन्द्व करेगा ? (४) मुझसे सुरगण काँपते हैं, और उसी प्रकार नाग और नरगण काँपते और त्रस्त होते हैं। (५) हे सुन्दरी, तुम मत काँपो, मत काँपो, कोटि कायर रक्षित (भृत्य) [अपने] प्रभु (जयचन्द) के साथ चढ़ चुके—चढ़ाई कर चुके हैं। (६) [फिर भी] मैं [अपनी] इन भुजाओं से कन्नौज को दिल्ली कर सकता हूँ और इस (तुम्हारे पति) को दिल्ली का तख्त अर्पित कर सकता हूँ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के पाठ है।
• चिह्नित चरण धा. में नहीं है।

(१) १. अ. फ. में यह शब्द नहीं है। २. मो. प्रथिरान बर्माग, ना. पृथीयराज वार्मग। ३. अ. फ. म. उ. स. ना. जो। ४. मो. कन, शेष में 'कन्ह'। ५. अ. उ. स. नन्ह, फ. मन, म. न, ना. भी नन्ह।

(२) १. मो. हूं (<हुं=हउ), अ. फ. हौं, म. ना. हु (=हउ), स. हो। २. मो. समथ, अ. फ. समत्थु। ३. मा. हर (=हरउ), अ. फ हरौं, ना. हरू (=हरउं—ना.), स. हरू, म. हनो, उ. हरौं। ४. मो. रिपुराय निध्य बल, अ. फ. रिपुराह तथ्थबल, ना. उ. स. रिपुराइ भुज्ज (भुजनि—ना.) बल, म. रिपुराय भुज्बल। (तुलना-चरण ३)

(३) १. ना. विरद। २. मो. अ. चंद को, ना. दुंद को, म. उ. स. दद को, अ. चंद की, फ. चंद को। ३. मो. करि (=करइ), अ. फ. ना. म. उ. स. करै। ४. म. भुज्न, उ. स. भुजन।

(४) १. धा. अ. फ. म. उ. स. मो कंपहि, ना. मुहि कंपै। २. मो. कप सपिर तह, धा. अ. फ. सच पायाल (पाताल—धा.), ना. दस पनग अरु, म. उ. स. दंति पंनगरु (पगनरु—म.)। ३. ना. नाम, म. भ्रम, उ. स. भूमि।

(५) १. धा. अ. फ. जंपि, ना. सकि, म. स. चपि, उ. में यह शब्द नहीं है। २. फ सुंदरु, म. सुंदर। ३. मो. सपुहु, धा. अ. सपहु, ना. म उ. म सुपहु। ४. मो. चढ्ढिग, धा. चिढिग, अ. चढ्ढिग, म. चढिगे, फ. चुढिग, ना. स. चढ्ढिग। ५. धा. कोरि कायर, अ. फ. कोर कायर (कायरु—फ.), ना. कोरि कायर, म. उ. स. कोटि कायर। ६. फ. रक्खलि।

(६) १. अ. फ. इह, ना. म. उ. स. इन। २. धा. अ. फ. भुवहि, ना. म. स. भुजन, उ. भुज्ज। ३. मो. अ. फ. ढिल्लि, ना. उ. स. ढिल्लि। ४. धा. कनवज करउ, मो. कनवज करु (=करउ), ना. कनवज करुं (=करउं) अ. फ. कनवज्जनी, म. उ. स. कनवज्ज कों। ५. धा. इह, अ. फ. ना तुहि, म. तौ, स. तों, उ. तो। ६. मो ना. अपुं (=अप्पउं), धा. अप्पउं, अ. फ. अप्पौं, स. अप्पौं, म. अपउ। ७. ना. स. दिल्ली, अ. फ ढिल्लिय, म. दल्ली।

टिप्पणी—(२) समथ < समर्थ। तथ < तत्र=वहाँ। (३) दद < द्वन्द्व। भुव < भुज। बर < बल। (४) तह < तथा। (५) पहु < प्रभु। कडि < कोटि। रषत < रक्षित=भृत्य। (६) भुव < भुज।

[३४]

रासा— *सुंदरि सोचि[१] समज्झिय[२] गहगहत[३] कंठ गरि। (१)*
तबहि[१] प्रान[२] प्रथिराज[३] त पच्चिय[४] बाहु करि[५] ॥ (२)

दिय हय पुट्ठिय[१] भार[२] सु[३] सव्व सु लष्पिनउ[*४] (३)*
करति[१] तुरंग सुरंग[२] पुच्छि ति वच्छ नउ[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) समक्ष (प्रत्यक्ष के विषय–युद्ध) को सोच कर सुन्दरी हर्ष से पूरित हो गई और [उसने] कंठ भर लिया, (२) तब उसके प्राण पृथ्वीराज ने उसे [उसकी] बाँह के द्वारा खींच लिया, (३) और उस सर्व सुलक्षणा का भार घोड़े की पीठ को दिया, (४) और वह तुरंग घोड़ा भी पूँछ तथा छाती के सुरंग (सुन्दर खेल) करने लगा।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. फ. सोच। २. धा. समज्झि, अ. समुज्झि सु, फ. समझ सु, उ. म. समुज्झि उ, ना. समुझिन, म. विचारि। ३. धा. गहग्गह, म. समझीय।

(२) १. मो. तवहु, धा. तवहि, फ. तवाह, शेष में 'तवहि'। २. धा. प्रान, अ. फ. राज, म. पान, ना. उ. स. पानि। ३. धा. प्रिथिराइ। ४. धा. सु पिंचिय, अ. सुषंचिय, म. सु षचीय, फ. सुषींय। ५. अ. फ. बाहु भरि, म. ना. बाह करि।

(३) १. मो. पुट्ठिय, अ. म. उ. स. पुट्ठहि, फ. पुट्ठिह, ना पुच्छहि। २. धा. भानु, म. उ. मीर, स. मोर। ३. धा. अ. जु, फ. ज, ना. में यह शब्द नहीं है। ४. मा सर्व सुलिष्पनउ, धा. अ. फ. सव्व सुलच्छिनिय, म. उ. स. सव्व सुलच्छनिय, ना. सवु सुलष्पिनों।

(४) १. धा. करउ, अ. ना. म. उ. स. करत। २. म. सुर। ३. मो. पुच्छित वच्छनउ, धा. स पुच्छति वच्छ निय, अ. फ. ति (सु–फ.) पुच्छनि अच्छनिय, उ. स. सु पुच्छनि वच्छ निय, म. पुठिनि ववनीय, ना. सु पुंछनि बच्छनों।

टिप्पणी—(१) समच्छ < समक्ष। गहगह [दे०]=हर्ष से भर जाना। (३) पुट्ठि < पृष्ठ। सुलष्पि < सुलक्षणी। (४) पुच्छि < पुच्छ। वच्छ < वक्ष।

७. पृथ्वीराज-जयचन्द-युद्ध (पूर्वार्द्ध)

[१]

दोहरा—परणि[१] राउ[२] ढिल्लिय मुषह[३] रुप किन्निय*[४] मन[५] श्रास । (१)
कहइ*[१] चंद नृप पंग सउ*[२] जिहि[३] जुध्ध जुरहि[४] जम हास[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) राजा (पृथ्वीराज) ने संयोगिता का परिणय करके दिल्ली की ओर रुख (मुँह) करने को मन में आशा की। (२) चंद ने इस समय पंगराज (जयचंद) से [इस प्रकार] कहा, जिससे यम (काल) के हास [सदृश], युद्ध जुटे (हो)।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. फ. परन। २. ना. राज, म. राय, स. राइ। ३. धा. अ. फ. समुह, मो. ना. मुषह, म. समुष, उ. स. सुमुष। ४. मो. रुप कंनीअ, धा. रुष कीनों, अ. फ. रूप किन्निय, ना. मुषि कि माय, म. उ. स. रुष किन्नो। ५. धा. मनु।

(२) १. मो. किहि (=किहइ), धा. ना. कहहि, ना. कहिहि, अ. फ. कहै, म. उ. स. कहौ। २. मो. पंगसु (=सउ), धा. पंग रसु, अ. फ. म. उ. स. पंग दल, ना. संग भी। ३. ना. जिहि जुद्ध, धा. जुज्झ, मो. जुध, अ. फ. म. उ. स. जुद्ध। ४. मो. जुरिहि, धा. अ. फ. ना. जुरहि, म. उ. स. जुरे। ५. मो. यम दास, धा. जिम दास, ना. जम हास।

टिप्पणी—(१) रुष < फा० रुख=मुँह।

[२]

गाथा— स न रिपु[१] ढिल्लियनाथ[२] सो ध्वंसनं जग्गियं आये[३] । (१)
परणेवं[१] तव[२] पुत्ती जुध्धं[३] मंगति[४] भूषनं[५] सोइ[६] ॥ (२)

अर्थ—(१) "जो तुम्हारा रिपु दिल्लीश्वर है, वह तुम्हारे यज्ञ को ध्वस्त करने आया था। (२) तुम्हारी पुत्री को परिणीत करके अब वही तुमसे [तुम्हारी कन्या के लिए] आभूषण [के रूप में] युद्ध माँग रहा है।"

पाठान्तर—(१) १. धा. अ. फ. सन रिपु, मो. सो न रिपु, ना. सानाह, उ. स. सायाहि, म. सायाहि। २. धा. दिल्लिय नाथो, अ. फ. ढिल्लियनाथे, म. उ. स. दिल्लिनाथो, ना. दिल्ली थानं। ३. धा. स एव आला अग्य धुसन, अ. फ. स एव ए आये या ध्वंसनाय, उ. स. साद तु जग्य विध्वंसनो, म. साद तु जिग विध्वंसनो, ना. सादंतु जगविध्वंसन।

(२) १. मो. परणेव, फ. परनौवा, शेष में 'परणेवा' या 'परनेवा'। २. मो. तव, शेष में 'पंग' या 'पंगु'। ३. धा. प जुद्ध, अ. फ. जुद्धाइ (जुद्धाइ—फ.)। ४. अ. फ. ना. मागति, म. मागन, स. मांगत। ५. फ. भूषनं। ६. यह शब्द मो. के अतिरिक्त किसी में नहीं है।

[३]

दोहरा—सुनि स्रवनन[१] चहुआन कउ*[२] भयउ*[३] निसानहिं[४] घाउ[५] । (१)
जानु भद्दव[१] रवि अस्तमन[२] चंपइ*[३] वद्दल[४] वाउ[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) श्रवणों से चहुआन (पृथ्वीराज) को सुनने पर निशानों पर [इस प्रकार] आघात हुआ [और जयचंद की सेना चारों ओर से दौड़ पड़ी] (२) मानो भादों में अस्त होते हुए सूर्य को वायु [और उससे प्रेरित] बादल दबा (घेर) लें।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सुनी श्रवन, म. सुन श्रवनन, शेष में 'सुनि स्रवननि' (या 'श्रवननि')। २. मो. चहुआंन कु (=कउ), धा. अ. फ. प्रिथिराज कहुं (कहु–धा), ना म उ स चहुवान (कौं–म, कौ–उ. स.)। ३. मो. भयु (=भयउ), धा. उ स. भयो, म. अ फ ना भयौ। ४. धा अ ना. निसानह, म. उ. स. नसानन। ५. अ. म. उ. स धाव, ना. थाउ।

(२) १. धा. उ. भद्दव, अ फ. ज्यौं भद्दवं, म जनौ भद्दव, ना जनुभद्दु (= भद्दउ), उ. स. जनु भद्दव २. धा. असमनइ, अ. अस्तगइ, फ. आगस्तगड्ड, म. उ. स. अस्तमनि। ३ मो. चपि (= चपइ) धा., म. उ. स. चपिय, ना. चपहि, अ. चपय, फ. चप। ४. फ. बइठ दल। ५. म. अ. वाव, स. वांव।

टिप्पणी—(१) भदव < भाद्रपद। अस्तमन < अस्तमायन = अस्त होता हुआ।

[४]

भमरावलि— सलिता जन[१] सत्त समुद्द[२] लियं । (१)
दुहु राय[१], महाभर[२] य[३] मिलियं ॥ (२)
करकादि निसा[१] मकरादि दिन । (३)
वर[१] वध्धति[२] सेन दुआल मनं ॥ (४)
दुहु राय[१] रपत्त[२] ति रत्त[३] उठे*[४] । (५)
विहुरे जन[१] पावस अभ्भ[२] वुठे*[३] ॥ (६)
निसि अध्ध विढे ति[१] निसांन घुरे । (७)
दरिआइन[१] जान[२] पहार[३] गु रे[४] ॥ (८)
सहनाइ नफेरिय काहलिय[१] । (९)
रस वीरह वीर चली मिलिय[१] ॥ (१०)
घननंक ति घट[१] ति घंट[२] घुरं[३] । (११)
कल कउतिग*[१] देव पयाल पुरं ॥ (१२)
लगि अंबर[१] बंबर[२] डंवरियं[३] । (१३)
विसरी दिसि अट्ठ ति धुंधरियं[१] ॥ (१४)
समसेर दुसेर[१] समाहि लसइ*[२] ।[×] (१५)
दमकइ*[१] दल° मम्भि°[२] तराइन° सइ[३]*° ॥[×] (१६)

चमके चवरंग[१] सनाह घनं ।+×. (१७)
प्रति विंबित[२] मित्त मऊष्ष[२] वनं ॥+× (१८)
दरसी दल कंदल झल्लरियं° ।[१] (१९)
समरे घर कायर बल्लरियं ॥ +×§ (२०)
जिनके मुष मुच्छ ति मच्छरिय[१] । (२१)
निरपे तिनके[१] तन अच्छरियं[१] ॥+×§ (२२)
त्रिप जोय फवज्जह[१] बंटि लियं ॥[२] (२३)

अर्थ—(१) सरिताएँ मानो सप्त सिन्धु में लिप्त हो रही (मिल रही) हों, (२) इस प्रकार जब दोनों राजाओं के महाभट मिले। (३) कर्क के आदि से रात्रि तथा मकर के आदि से दिन [जिस प्रकार बढ़ता है], (४) [उसी प्रकार] सेनाओं के द्विपादों (सैनिकों) के मन [उत्साह से] खूब बढ़ रहे थे। (५) दोनों राजाओं के रक्षित (भृत्य) युद्ध के लिए राते हो उठे, (६) मानो पावस के बहुरने (लौटने) पर बादल व्युत्थित हुए हों—उमड़ पड़े हों। (७) आधी रात्रि के विढत्त (अर्जित—प्राप्त) होने पर निशान (धौंसे) घुमड़ पड़े (८) [और ऐसा लगा] मानो समुद्रों में पहाड़ गिर पड़े हों। (९) शहनाई, नफीरी और काहल [की सम्मिलित ध्वनि में] (१०) वीरों का वीर रस मिल चला। (११) घटों ही घटों का घन-घन घुमड़ने लगा, (१२) और कलह का कौतुक देवपुर (आकाश) और पातालपुर में [व्याप्त हो रहा]। (१३) चवर (धूल) का डवर आकाश में जा लगा, (१४) और अष्ट दिशाएँ धुंधलेपन के कारण विस्मृत हो गई। (१५) शमशीर (तलवार) और दुसेल (दोमुहे सेल) की समाह (सज्जा) शोभित हो रही थी; (१६) वह (सेना) के मध्य इस प्रकार दमक रही थी जैसे [आकाश में] तारागण हों। (१७) चतुरंगिणी सेना का सघन सन्नाह चमक रहा था, (१८) [और] मित्र (सूर्य) का मयूख-वन (किरण-जाल) उसमें प्रतिबिम्बित हो रहा था। (१९) कंदल (युद्ध) के [लिए तैयार] उन दलों की झालरें दरसीं—दिखाई पड़ीं—तो (२०) कायरों ने [भागने के लिए] घर और वन का स्मरण किया। (२१) [किन्तु दूसरी ओर] जिनके मुखों पर मूँछें थीं—जो वीर थे—और जो मात्सर्य-पूर्ण थे, (२२) उनके शरीरों के लिए अप्सराएँ आँखें लगाए हुए थीं। (२३) नृप (पृथ्वीराज) ने [यह] देखकर फौज को बाँट लिया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
§ चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण अ. में नहीं है।
× चिह्नित चरण फ. में नहीं है।
° चिह्नित शब्द अथवा चरण ना. में नहीं है।

(१) १. मो. धा. ना. जन, अ. शा. स. जनु, फ. जाने। २. मो. मुद।

(२) १. धा. दुइ राइ, अ. फ. दुदु राइ (दुहौ राइ—फ) ना. दोऊ राय, शा. स. दोउ रान। २. फ. भउ। ३. अ. फ. यौ।

(३) १. मो. नशा।

(४) १. अ. फ. जनु (जनौ—फ.)। २. धा. वर्धति, फ. बढ़त, ना. वर्धत, शा. स. बिढत। ३. धा. दुवाल मर्न, अ. दुपाल मन, फ. दुपालि मनं, ना. दुवाल मनं, शा. स. दुवालमिनं।

(५) १. धा. अ. दुदु राइ, (दुहौ राइ—फ.), शा. स. दोउ राज, ना. दोऊ राउ। २. धा. ना.

निरवाह चंदेल ति ~द्दमने ।
हय मुक्ति लरे जम स. जुरने ।
तिनि म ट्टिल त संभरि धायु जिसो ।
भुन अर्जुन अर्जुन राउ जिसो ।
ममराउउलि छंद प्रवान थिय ।
निप जोइ फवज्जइ बट लिय ।

अन्तिम चरण दो बार आया है, और उसका यह पुनरावृत्ति हाशिये के क्षेपक के सम्मिलित किए जाने के कारण हुई ज्ञात होती है, इसलिए पुनरावृत्ति के बाद की पंक्तियाँ प्रक्षिप्त मानी गई हैं।

टिप्पणी—(१) सलिता < सरिता। समुद्द < समुद्र। (२) भर < भट। (४) बप्प < वपुं। द्विप=दो पैर वाले, मनुष्य। (५) रयत्त < रश्मि=भुन्य। रत्त < रक्त। (६) अम < अन्न। मुठे < मुष्टिपत। (७) विढे < विढत [दे०]=अर्जित, प्राप्त। (११) कउतिग < कौतुक। पयाल < पाताल। (१६) तरायन < ताराणग। (१७) चवरग < चतुरंग। (१८) मित्त < मित्र=सूर्य। मउप < मयूख। (१९) कौंदल < कन्दल=युद्ध। (२०) वहर=वन, अरण्य। (२१) मुच्छ < श्मश्रु। मच्छर < मात्सर्य। (२२) अच्छरी < अप्सरा।

[५]

कवित्त— थ[1] दिन रोस रट्ठिवर[2] चपि चहुआंन गहन[3] कह[4] । (१)
सउ*[1] उप्परि[2] सउ*[3] सहस वीह[4] अगनित लप्प दह[5] । (२)
तुटि[1] गिर जम[2] थल[3] भरिग[4] भजिग[5] जल गंग प्रवाहह*[6] । (३)
लह अच्छरि[1] अच्छरिहि[2] विमान[3] सुरलोक नाग तह[4] ।×(४)
कहि[1] चंद दंद दुहु[2] दलि[3] भयउ*[4] घन जिम सिरि[5] सारह झरिग[6] । (५)
भर सेस हरी°[1] हर ब्रह्म तन[2] तिहि समाधि तिहि दिन[4] टरिग[5] ।।‡(६)

अर्थ—(१) जिस दिन राठौर (जयचन्द) को रोष हुआ और उसने [चारों ओर से] दबा (घेर) कर चहुवान (पृथ्वीराज) को पकड़ने के लिए कहा, (२) [उस दिन पृथ्वीराज के] सौ [राजपूतों] के ऊपर [जयचन्द के] सौ हजार [टूट पड़े] और [उसकी] अगणित वीथियों (पंक्तियों) में [तो] दस लाख [सैनिक] थे। (३) गिरियों के टूट टूट कर गिरने से जैसे भूमि भरी, [उसी प्रकार] गंगा के प्रवाह का जल भी [समुद्र की ओर] भागा (वेग से प्रवाहित हुआ)। (४) सभी अप्सराएँ [मृत वीरों का स्वागत करने के लिए] विमानों पर सुरलोक तथा नागलोक में [आ डटीं]। (५) चंद कहता है कि दोनों दलों में द्वन्द्व (युद्ध) हुआ, और बादलों के समान योद्धाओं के सिर पर तलवारें झड़ीं। (६) [सेनाओं के] उस भार से शेष, हरि, हर, तथा ब्रह्मा की समाधि उस दिन टल (छूट) गई।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।
‡ यह छन्द ना. में दो स्थानों पर है ३३. १०७ तथा ३५. ५। दिए हुए पाठान्तर प्रथम स्थान पर के हैं।

रपत्ति ति, अ. नरप्पति, शा. स. रमत्त ज । ३. अ. फ. रत्ति । ४. मो. उठि (=उठे), धा. अ फ. शा. स. उठे।

(६) १. मो. विहुरे जन, धा. विहरे जनु, मो. अ. फ. बिहुरे जन, शा. स. बहुरे मन (मनु–शा.)। २. धा. अ. फ. अम ना. अभ्र। ३. मो. धा. अ. फ. उठे, शा. स. बुठे, ना. छुठे।

(७) १. धा. विधत्त, अ. फ. विभेत, ना. वभेति, शा. स. विभत्ति। २. शा. स. धुरं।

(८) १. धा. ना. शा. स. दरियादिव, अ. फ. दरिया दव। २. धा. ना. अ. फ. शा. स. जानि। ३. मो. पाहार, शेष सभी में 'पहार'। ४. धा. तुरे।

(९) १. धा. सहवाइ फेरि कलाहालियं, मो. सहनीइ नफेरी मला इलियं, अ. फ. सहनाइ नफेरिय (नफीरिय–फ.) काहलियं, ना. शा. स. सहनाइ (सनाइ–ना.) नफेरि कुलाहलियं।

(१०) १. अ. फ. चले मिलिय, ना. शा. स. मिले बलियं।

(११) १. धा. अ. डहनंकित, फ. ठहनकिनि, शा. स. अ. ठहन कित, ना. धनंनकिन। २. धा. अ. फ. ना. शा. स. घंट निघंट, मो. घठति घूट। ३. ना. धुरं।

(१२) १. धा. कल कोतिग, मो. कल कुतिग (=कउतिग), अ. फ. कल (कलि–फ.) कौतुक, ना. शा. स. कल कौतिग।

(१३) १. शा. डंबर, ना. अम्मर। २. ना. ढढर। ३. ना. शा. स. उंमरियं।

(१४) १. मो. अठु ति घुघरीय, अ. अध ति, घुघरिय, फ. अधि तु घुघरिय।

(१५) १. अ. फ. दु सेल, शा. स. दुसेन। २. मा. समादि लसि (=लसइ), धा. समाइ निसे, अ. फ. सवाइनि सौ, शा. स. समाइ नसे, ना. समाहि नसे।

(१६) १. मो. दमकि (=दमकइ), धा. ना. दमके, अ. फ. शा. स. दमकै। २. मो. मध्य, धा. अ. फ. मझ्झि, शा. स. मधि। ३. मो. सि (सइ), अ. फ. सौं।

(१७) १. धा. चमके चत्तरंग, शा. स. चमकै चवरग।

(१८) १. धा. प्रतिविंवित, शा. स. प्रति विंव ति। २. धा. मित्ति सऊख, शा. स. मित्त मयूष, ना. मित्त मयूष।

(१९) १. धा. दरसै दल वददल ढलरिया, अ. फ. दरसी दल कीबर ढलरिया, शा. स. दरसी दल कौं दल ढलरियं।

(२०) १. मो. समरी (< समरि < समरे) घर, ना. अ. सुमिरे भर, फ. सुमरे घर, शा. स. सुमिरैं घर। २. अ. फ. बहरिया।

(२१) १. धा. मुंछति मुंछरिया, अ. मुछ तु मछछरियं, ना. मूंछनि मछरीयं, शा. स. मुंछ नमछरियं, फ. मुंछ नरु मछ्छरियौ।

(२२) १. अ. फ. तन केसन। २. फ. अछ्रियौ।

(२३) १. धा. फवज्जनि, अ. फवज ति, फ. फवजि तु। २. धा. वट्टि (< वटि), मो. वंटि, अ. वंदि, फ. वद। ३. यहाँ सभी प्रतियों में निम्नलिखित चरण और हैं (धा. पाठ):—

> गुरु माहिरिक चवक राउ दिय।
> मुज दक्खिन अब्बुअ राउ रच्यो।
> सिरि छत्र संमेत जु मानि सच्यो।
> मय कौ दिसि साम पंहार भरयौ।
> कट काम ःबंधव गिरंग लरयौ।
> कूरंमे अरंम जु अंभ अनी।
> सु धरी कवि चंद सुनी सु मनी।
> दल पुट्ठि न मोरिय राउ सुन्यो।
> कवियत्तनि संच सुन्यो सु मन्यो।

निरवाह चदेल ति न्दूदमने ।
हय मुकि लरे चम सु जुरने ।
तिनि मज्झि स संभरि यायु जिसो ।
सुन अर्जुन अर्जुन राउ जिसो ।
ममराउवलि छद प्रमान थिय ।
तिप जोइ फवज्जइ बट लिय ।

अन्तिम चरण दो बार आया है, और उसका यह पुनरावृत्ति हाशिये के लेख के सम्मिलित किए जाने के कारण हुई ज्ञात होती है, इसलिए पुनरावृत्ति के बाद की पंक्तियाँ प्रक्षिप्त मानी गई हैं ।

टिप्पणी—(१) सलिता < सरिता । समुद्द < समुद्र । (२) भर < भट । (४) बध्ध < बर्ध्य् । द्विप=दो पैर वाले, मनुष्य । (५) रषत < रक्षित=मृत्य । रत्त < रक्त । (६) अग < अभ्र । वुठे < व्युत्थित । (७) विढे < विडत्त [दे०]=अर्जित, प्राप्त । (१२) कउतिग < कौतुक । पयाल < पाताल । (१६) तराइन < तारागण । (१७) चवरग < चतुरग । (१८) मित्त < मित्र=सूर्य । मऊष < मयूख । (१९) कंदिल < कन्दल=युद्ध । (२०) पहार=वन, अरण्य । (२१) मुच्छ < श्मश्रु । मच्छर < मात्सर्य । (२२) अच्छरी < अप्सरा ।

[५]

कवित्त—' य[1] दिन रोस रट्ठिवर[2] चपि चहुवांन गहन[3] कह[4] । (१)
सउ[*1] उप्परि[2] सउ[*3] सहस षीह[4] अगनित लष्ष दह[5] । (२)
तुटि[1] गिर जस[2] थल[3] भरिग[4] भजिग[5] जल गंग प्रवाहह[*6] । (३)
सह अच्छरि[1] अच्छहिं[2] विमान[3] सुरलोक नाग तह[4] ।×(४)
कहि[1] चंद दंद दुहु[2] दलि[3] भयउ[*4] घन जिम सिरि[5] सारह झरिग[6] । (५)
भर सेस हरी[°2] हर ब्रह्म तन[3] तिहि समाधि तिहि दिन[4] टरिग[5] ।।‡(६)

अर्थ—(१) जिस दिन राठोर (जयचंद) को रोष हुआ और उसने [चारों ओर से] दबा (घेर) कर चहुवान (पृथ्वीराज) को पकड़ने के लिए कहा, (२) [उस दिन पृथ्वीराज के] सौ [राजपूतों] के ऊपर [जयचंद के] सौ हजार [टूट पड़े], और [उसकी] अगणित वीथियों (पंक्तियों) में [तो] दस लाख [सैनिक] थे । (३) गिरियों के टूट टूट कर गिरने से जैसे भूमि भरी, [उसी प्रकार] गंगा के प्रवाह का जल भी [समुद्र की ओर] भागा (वेग से प्रधावित हुआ) । (४) सभी अप्सराएँ [मृत वीरों का स्वागत करने के लिए] विमानों पर सुरलोक तथा नागलोक में [आ डटीं] । (५) चंद कहता है कि दोनों दलों में द्वन्द्व (युद्ध) हुआ, और बादलों के समान योद्धाओं के सिर पर तलवारें झड़ीं । (६) [सेनाओं के] उस भार से शेष, हरि, हर, तथा ब्रह्मा की समाधि उस दिन टल (छूट) गई ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
° चिह्नित शब्द ओ० में नहीं है ।
× चिह्नित चरण म० में नहीं है ।
‡ यह छन्द ना० में दो स्थानों पर है. ११. १०७ तथा २५. ५ । दिए हुए पाठान्तर प्रथम स्थान पर के हैं ।

(१) १. धा. जि, ना. अ. फ. ज, म. उ. स. त। २. धा. राठौर, मो. रढिवर, अ. फ. ना. राठौर, म. उ. स. रट्ठौर। ३. अ फ. गहम। ४. अ. फ. ना. कहु, म. उ. स. कहि।

(२) १. मो. सु (=सव), धा. सँ, अ. फ. ना. म. उ. स. सौ। २. म. उ. स. उप्पर, फ. उप्पह। ३. मो. सु (=सउ), धा. सँ, ना. म. अ. फ. माँ, ना. उ. स, स. स। ४. मो. दीह, धा. बाँस, अ. फ. बीय, ना. बिवह। ५. म. उ. स. दहि, ना. दहु।

(३) १. धा. तुट्टि, अ. ना. डुट्टि, फ. पुट्टि, उ. स. छुटि, म. छुठि। २. मो. गिर अस, शेष में 'डूगर' या 'डुगर' (डूगा–ना.)। ४. ना. सुरिग। ५. धा. अ. फ. भरिग, ना. भजिग, म. उ. स. फुट्टि (फुदि–स.)। ६. मो. जलगंग प्रवाह [< प्रवाहइ], धा. थल जलनि प्रवाहिग, अ. फ. म. उ. स. जल थलति (बलनि–अ. फ.) प्रवाहिग (प्रवाहिगु–फ.), ना. जलगंग प्रवाहहि।

(४) १. धा. अच्छर, ना. अस्थरि। २. मो. 'अछिछहि' ना. अस्थरि, शेष में 'अछ्छहि'। ३. अ. त्रिवान, फ. बिना, ना. विवानु। ४. मो. सुरलोक नर नाग तह, ना. सुरलोक नाग तिहि, शेष सभी में सुरलोक (सुरलोग–धा.) बनाइग (विनाइग–धा.)।

(५) १. सभी प्रतियों में 'कहि'। २. यह शब्द मो. में नहीं है, धा. दुह, फ. दुही। ३. अ. फ. ना. दलि शेष, में 'दल'। ४. मो. भयु (=भयउ), धा अ. ना. भयो, फ. म. उ. स. भयी। ५. धा. सर, मो. ना. सिर। ६. धा. धरिग, अ. फ. झरिय, ना. झरिगु।

(६) १. धा. भर सेसु हरी, अ. हर सेसहार, फ. हरि सेसहार, ना. धर सेसहार, म. उ. स. हरि सेस ईस। २. म. उ. स. महानि तनि (तति–म.)। ३. धा. अ. फ. तिहु, म. उ. स. तिहुं, ना. त्रिहुं। ४. अ. फ. म. उ. स. तद्दिन, ना. ता दिन। ५. अ. फ. टरिय, म. ढरिग।

टिप्पणी—(२) बोह < बोथि=श्रेणी, पङ्क्ति। (३) तुट < तुट=टूटना। गिर < गिरि। (४) सह= सभी। तह < तथा। (५) दद < द्वन्द्व। सार=लोह (तलवार आदि लोह के शस्त्रास्त्र) (६) भर < मार।

[६]

भुजंग— सज्जतं[१] धूम धूमे[२] सुनंतं[३]। (१)
कंपिय[१] तीनपुर केलि पत्तं[२] ॥ (२)
डमरु डहडह किय[१] गवरि कंतं। (३)
जानियं[१] जोग जोगादि अंतं ॥ (४)
किम किमे[१] सेस सिर[२] भार रहियं[३]। (५)
किमे[१] उच्चासु रवि रथ्थ नहियं ॥° (६)
कमल सुत कमल[१] नहि थंतु[२] लहियं। (७)
संकियं मस[१] ब्रह्मांड गहियं[२] ॥+ (८)
राम[१] रावन्न कवि किन[२] कहिता[३]। (९)
सकति[१] सुर महिप बलि दान[२] लहिता[३] ॥° (१०)
कंस[१] सिसुपाल पुर जवन[२] प्रभुता। (११)
आमिया[१] जेन[२] मय लप्पि*[३] सुरता[४] ॥ (१२)
पट्टियं[१] सूर आजान[२] बाहुं। (१३)
तुटिग धन सघन[१] बड्डी मलाहुं[२] ॥ (१४)

गंग[१] जल जिमन[२] धर हलिय[३] घोजे[*४] । (१५)
पंगरे[१] राय राठउर[*२] फोजे[३] ॥ (१६)
उप्परइ[*१] फोज[२] प्रथिराज[३] राज । (१७)
मनउ[*१] नामरा लग्गि लकाहि[२] गाज[३] ॥ (१८)
जग्गियं[१] देव देवा[२] उनिंद[३] । (१९)
दिप्पियं दीन इंदं[१] फनिंदं[*] ॥ (२०)
चंपियं[१] भार पायाल दुंदं[२] ।, (२१)
उड्डियं[१] रेन[२] आयास मुद्दं ॥ (२२)
लहइ[१] कोन[२] अगनित्त राउत्त रत्ता[३] । (२३)
छत्र[१] पिति[२] भार।दीसइ[*३] न पत्ता ॥ (२४)
आरंभ चक्री[१] रहे कोन[२] संता[३] । (२५)
चोराह[१] रूपी न कंधे[२] धरंता ॥ (२६)
सेन सन्नाह नव[१] रूप रंगा । (२७)
मनउ[*१] झिलिवइ[*] ति[२] त्रिनेत्र गंगा[३] ॥[×४](२८)
[१]टोप टंकारि[२] दीसे[३] उतंगा ।[+](२९)
मनउ[*१] बद्दले पंत्ति[२] बंधी बिहंगा ॥[+](३०)
जिरह जगीन[१] गहि अंगि[२] जाई[३] । (३१)
मनउ[*१] कंठ कंथीन गोरप्प पाई[१] ॥ (३२)
हत्थरे हत्थ[१] लग्गे सुहाई[२] । (३३)
घाय[१] लग्गइ[*] न[०२] थक्कइ[*३] थकाई ॥ (३४)
राग जरजी[१] बनाइत्त[२] अछे[३] । (३५)
देषिअइ[*१] जानु[×] जोगिंद[×२] कच्छे[×] ॥ (३६)
सत्त[१] छत्तीस[×] करि[×] कोहु[×] संजइ[×२] । (३७)
इत्तने[×] सूर[×] वाजित्र बज्जइ[१] ॥ (३८)
नीसान सादंति[*१] बाजे[*२] सुचंगा । (३९)
दिसा देस दक्खिन्न[*१] लघ्घी[२] उपंगा ॥ (४०)
तबल तंदूर[१] जंगी[२] मृदंगा । (४१)
मनउ[*१] नृत्य[२] नारद कट्ठे[३] प्रसंगा ॥ (४२)
बजहि वंस विसतार[१] बहु रंग रंगा । (४३)
जिने मोहि करि[१] सथ्थि[२] लग्गे[३] कुरंगा‡ ॥ (४४)
वीर[१] गुंडीर सा सोम मृंगा[२]‡ । (४५)
नचइ ईस सीस[१] धरो जासु[२] गंगा ‡॥[×](४६)

सिंधु[१] सहनाइं[२] श्रवने[३] उतंगा ।[×](४७)
*सुने[१] अच्छरिय अंच्छ मज्जइ[*२] सुभंगा[३] ॥[×](४८)*
नफेरी नवरंग[१] सारंग भेरी । (४९)
*मनउ[*१] नृत्य नइ[२] इंद्र आरंभ केरी ॥ (५०)*
सिंधु सावमझनं गेन गेरी[१] । (५१)
झमे आवमझ हथ्थ[१] करेरी ॥ (५२)
उच्छरहि घाउ[१] घनघंट घेरी[२] । (५३)
चिंतिता अधिक[१] बध्धे[२] कुबेरी ॥ (५४)
उप्पमा पंड नव, नैन झग्गी (लग्गी)[१] । (५५)
*मनउ[*१] राम रावन्न हथ्थेव लग्गी[२] ॥ (५६)*

अर्थ—(१) [सुभट जब] धूम-धाम से सजते हुए सुनाई पड़े (२) तो तीनों पुर (आकाश, पाताल, मर्त्यलोक) कदली पत्र [के समान कंपित] हो गए। (३) [क्या] गौरीकान्त (शिव) ने डमरू को 'डह डह' किया (४) [क्योंकि] उन्होंने जाना कि योग-योगादि का अन्त हो गया ? (५) क्या शेष का सिर भार-रहित तो नहीं हो गया ? (६) [अथवा] क्या उच्चाश्व (उच्चैःश्रवा) रवि-रथ में नाच रहा ? (७) [अथवा] कमल-सुत (ब्रह्मा) ने अम्बु (जल—क्षीर सागर) में कमल को नहीं पाया (८) और [इसलिए] शंकित होकर ब्रह्माण्ड को पकड़ लिया। (९) इसे राम और रावण [का युद्ध] कवि क्यों न कहे ? (१०) [अथवा यह क्यों न कहे कि] शक्ति महिषासुर का बलिदान लाभ कर रही थी ? (११) कंस, शिशुपाल और प्रद्युम्न की जो प्रभुता थी (१२) वह लक्ष्मी जैसे उन से भयभीत होकर [जयचंद में] रत हुई [यहाँ] भ्रमित हो रही थी। (१३) आजानु बाहु ये [इस प्रकार] चढ़ चले, (१४) [मानो] सघन वन में अनल-आभा टूट (उत्पन्न हो) कर बढ़ रही हो। (१५) [जिस प्रकार] धरा पर गंगा-यमुना की ओजें (ओजपूर्ण लहरें) हलरा रही हों, (१६) उसी प्रकार पंगराज (जयचंद) की फौजें थीं। (१७) उनके ऊपर राजा पृथ्वीराज की फौज [ऐसी] थी (१८) मानो बंदर लंका गढ़ पर लग (चढ़) कर गर्ज रहे हों। (१९) देव-देव (शिव) उन्निद्र होकर जग गए, (२०) और इन्द्र तथा फणीन्द्र (शेष) दीन दिखाई पड़ने लगे। (२१) [एक ओर जहाँ सेनाओं के] भार ने पाताल में द्वन्द्व उत्पन्न कर दिया था, (२२) [वहाँ दूसरी ओर] उनके संचरण से उड़ी हुई रेणु ने आकाश को मूंद दिया था—आच्छादित कर लिया था। (२३) उस युद्ध में सम्मिलित अगणित राते (सुसज्जित) रावतों को कौन जान सकता था ? (२४) क्षिति पर उनके छत्रों के भार से पचा नहीं दिखाई पड़ता था। (२५) चक्रवर्तियों के आरंभ [हलचल] से [भला] कौन शांत रह सकता था ? (२६) वाराह रूप [भगवान] भी पृथ्वी को कंधे पर नहीं धारण कर रहे थे। (२७) सेना की नवीन रूप-रंग की सन्नाह [ऐसी लग रही] थी (२८) मानो त्रिनेत्र (शिव) उस प्रकार (शरीर पर) गंगा को झेल रहे हों। (२९) वह तुङ्ग (ऊँचे) टोपों (लोहे की टोपियों) की टंकार (पंक्ति ?) इस प्रकार दीखती थी, (३०) मानो बादलों में विहगों ने पंक्ति बाँधी हो। (३१) जगीन (मजबूत) जिरह अंगों से कस कर लगाए गए थे, (३२) [वे इस प्रकार लगते थे,] मानो गोरखपंथियों ने कंठ में कंथा डाल लिया हो। (३३) उनके हाथों में हथ्थे (दस्ताने) सुंदर लगते थे। (३४) उन्हें घाव लगता था किन्तु वे थकावट से थकते नहीं थे। (३५) उनके राग (टाँगों के कवच) और जरकीन ऐसी बनावट के [लगते] थे (३६) मानो योगीन्द्रों को [कछौटा] काछे देख रहे हों। (३७) मो

इसके छत्तीस प्रकार के शस्त्र वे सैनिक सजे हुए थे। (३८) फिर, इतने ही शूर नादों को बजा रहे थे। (३९) निशान (धौंसा) अच्छा शब्द कर रहे थे, (४०) दक्षिण दिशा के देश से लब्ध (प्राप्त किए हुए) उपंग थे, (४१) तबल, तदूर, तथा जागी मृदंग थे, (४२) [ऐसा लगता था] मानो ये नारद के नृत्य के प्रसंग में निकले हों। (४३) वंशी विस्तृत रूप से नाना रंगों में—नाना प्रकार से—बज रही थी, (४४) जिन पर मोहित कर कुरंग (मृग) साथ लग गए थे। (४५) वीर गुंडीर (गुड देश के सैनिक) सिंधा बाजों के साथ इस प्रकार शोभित थे (४६) मानो ऐसे शिव नृत्य कर रहे हों जिनके सिर ने गंगा को धारण किया हो। (४७) शहनाइयों में [गाया जाता हुआ] सिंधू [राग] श्रवणों में [इस प्रकार] ऊँचा (उत्कृष्ट) [प्रतीत होता] था (४८) [मानो] शून्य (आकाश) में अच्छ (निर्मल) अप्सराएँ अपने सुंदर अंगों को मंडित कर रही हों—स्नान करा रही हों। (४९) नफारी, धारग, भेरी का नया ही रंग था (५०) [जो ऐसा प्रतीत होता था] मानो निउ (बिल्कुल) इन्द्र के केलि आरम (अखाड़े) का नृत्य हो। (५१) [नर] सिरे और साउझ इस प्रकार बज रहे थे जैसे गगन में भेरी बज रही हो। (५२) झाँझ और आवझ भी बड़े हाथों से बजाए जा रहे थे। (५३) घनघंट पर हुए आघात का स्वर घेर (घुमड़) कर उच्छलित हो रहा था। (५४) इस कुवेला में [रण वाद्यों से] चेतनता अधिक बढ़ रही थी। (५५) [प्रस्तुत] युद्ध के लिए नरों में जो छंदों की उपमाएँ जागीं किन्तु (५६) मानो [दोनों पक्ष] राम और रावण के हैं, यही उपमा हाथ लगी।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित चरण मो. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द या चरण म. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।
‡ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।

(१) १. मो. साजतें, ना. साजय, म. उ. स. भर साजते (साजतै—म.)। २. धा. धून धुन्ने, म. उ. स. धौं धुम्ने (धुम—म.), फ. धुम तते। ३. फ. सतत।

(२) १. धा. कथयह, फ. कथाय, म. उ. स. तहाँ कथिय। २. धा. अ. फ. ना. तीन पुर जेनि (जेम—ना.) पत्त (पत्त—ना.), मो. नाम पुर केलि पत्त (=पत्तं), म. उ. स. केलि तियपुर कपत्त।

(३) १. धा. टकर वर डहकिय, अ. डवरु डहडह किय, फ. डवर डहडहि हुय, उ. स. तहाँ डवरु (डंमरू—म.) कर डहकिय, ना. टमरु डुड डुड काय।

(४) धा. मानय, म. उ. स. विन जानिय।

(५) १. म. तव किम किमारू, ना. किनकिम, उ. स. तव कम कमिरु। २. धा. अ. फ. सह। ३. ना. रहाय, म. उ. स. रहिय।

(६) १. म. उ. स. तहा दिमघ्घ, ना. विमरा। २. अ. फ. उच्चेसुवा नयन वहिय, ना. उच्चास रवि रत्थ रहीय, म. उच्चास रवि सथ रहिय।

(७) १. धा. कमलसुन कमठ, अ. फ. कमठ सुत कमठ, म. उ. स. वही कमठ सुत कमल, ना. कमठ सुत कमल। २. म. नह भग्गु, ना. उ. स. नहि भग्गु, धा. अ. फ. नहि भ्रमु।

(८) १. धा. अ. जुकि महान, उ. म. तब सकि मह्यान, म. तब धकि महमह, ना. सकि महमान। २. म. हियस हिय।

(९) १. उ. स. उन राम, म. उवरान। २. धा. कवि कन्ह, मा. कवि कन, ना. कवि कंत, म. उ. स. कवि किन। ३. मो. कहिना, शेष में 'कहता'।

(१०) १. म. उ. स. उन (उन—म.) सकति। २. अ. फ. सुरलोक वरदान, ना. म. उ. स. सुर (·· र—म.) महिप वलधत्त (वलदुत्त—ना.)। ३. धा. अ. फ. ना. कहता।

(११) १. म. मनौ किस्न, उ. स. मनो कंस। २. मो. पुरयवन (=पुरल्वन), धा. जुरि मम, ना. जरा जमनु, शेष में 'जुरजमन'।

(१२) १. धा. सांकयं, ना. भ्रम्मीयं, म. तमं भ्रम्मियं, अ. भम्मियं, फ. भ्रमीयं, म. उ. स. तिनं भ्रम्मियं। २. धा. अ. फ. एन, ना. म. उ. स. एम। ३. मो. लंप, धा. अ. म. उ. स. ना. लंच्छि, फ. तनि। ४. म. मुरता।

(१३) १. म. उ. स. भरं चड्डियं। २. म. अजांन, ना. अज्जन, अ. आनानु।

(१४) १. धा. दुट्टि वन सिंघ, फ. डुट्टि नव सघन, ना. अ. डुट्टि बन सपन, म. उ. स. तिन तुट्टि वन सिंघ। २. थट्टीन लाइ, धा. तट हीन लाइ, अ. फ. थट्टी न लाइं, उ. स. दीसत लाइ, म. दिसते ताइ।

(१५) १. म. उ. तिन गग, ना. गगा। २. धा. जमन, अ. ना. जमुन, फ. जमनु, म. उ. स. मौन। ३. धा. धरहिलय, फ. धर लई, ना. सर हलीय, अ. धर हलं, ४. मो. उजे (=ओजे), धा. जुझे, ना. ओजं, उ. स. ओजे, म. औजे, अ. फ. मौजै।

(१६) १. धा. पंगुरा, ना. पंगुरे, म. उ. स. भरं पंगुरे (पंगुरै—म.) २. मो. राठुर (=राठउरु), धा. फ. राठोर, अ. राठौड़, म. राठौर, ना. रट्ठौर। ३. म. उ. स. मौजै (मौजै—म. स.), अ. फौड़ं, फ. फौजे, ना. फौजं।

(१७) १. मो. उपरि (=उपरइ) धा. उप्परे, अ. उप्परइ, फ. उप्परं, ना. उप्परहि, म. उ. स. तबै उप्परें (उपरि—उ., उप्परे—म.)। २. अ. फ. रोस। ३. धा. ना. प्रिथिरा।

(१८) १. मो. मनु (=मनउ), धा. मनो, ना. मनुं (= मनउ), ? मनो। २. धा. अ. फ. लंक लगेहि, ना. लंक लकाहि, उ. स. लेन ते लक, म. लिनतक। ३. धा. माज, अ. फ. काजं।

(१९) १. मो. जागियं, म. उ. स. तबं (तबे—म.) जग्गियं, ना. गज्जियं। २. ना. म. देवदेवं, फ. देवी देव। ३. मो. उनद, फ. उन्यदं, ना. उनिंद निंदं।

(२०) १. धा. दुक्खियं दीन इंद, अ. तहाँ दिष्पियं दीन इंद, फ. तहाँ दष्पियं दीन दीय, म. उ. स. तिनं चंपयं पाय, मारं (तुलना० चरण २१)। २. मो. फनदं (<फनिंदं), शेष में 'फनिंदं' या 'फुनिंद'।

(२१) १. अ. फ. जहां चंपियं, म. उ. स. तबै चापियं (चपियं—म.)। २. धा. पायाउ दंदं, अ. फ. म. उ. स. पायाल दुंदं, ना. पायाल दुदं।

(२२) १. अ. फ. तहां उड्डियं, म. उ. स. घनं उड्डियं। २. ना. रेणु।

(२३) १. म. ना. उ. स. गिन, अ. फ. लहै। २. मो. कीन। ३. धा. रखत्त अगणित्त रत्ता, ना. अगनित्ति रावत्त रत्ता।

(२४) १. म. उ. स. तिन छत्र। २. धा. छति, अ. फ. ना. उ. स. छिति। ३. मो. दीखि (=दीशइ), धा. दीसइ, अ. दीसे, फ. म. उ. स. दासै, ना. सुझं।

(२५) १. धा. आरम चत्रा, म. उ. स. जु आरंभ चक्को (चक्को—म.)। २. मो. रहे केन, ना. रहे कौन। ३. ना. सरा।

(२६) १. म. उ. स. सु बाराह, अ. फ. जु बाराह, ना. जो बाराह। २. फ. भेकं।

(२७) १. धा. सिरे सन्नाख नव, म. उ. स. अ. फ. जु सेन सनाहं नव, ना. सन्नाहि निव।

(२८) १. मो. मनु (=मनउ), धा. ना. में यह शब्द नहीं है, अ. फ. म. मनो, उ. स. तिनं। २. धा. सलिवं सीस, मो. झिलिवे (<झिलिवइ) नि, अ. झिलवं सीस, अ. फ. किटवें सीस, स. झिटवें तेग, ना. उ. झिलवें तेग। ३. ना. त्रिजेंत संगा। ४. म. में इस चरण के स्थान पर भी चरण ३० दिया हुआ है।

(२९) १. अ. तहा, म. उ. स. तिनं, मो. ना. में यह शब्द नहीं है। २. धा. टंकाल, अ. फ. म. ना. उ. स. टंकार। ३. धा. अ. फ. ना. दीसं।

(३०) १. मो. मनु (=मनउ) ना. मनु (=मनउ), धा. अ. मनो, म. मनौं, उ. स. मनों। २. धा. जद्दे सति, मो. बादले पति, अ. बद्दलंपति, ना. बद्दल पति।

(३१) १. मो. म. उ. स. जिरह जगान, धा. जिरह जिगीन, अ. फ. जिरह जनीर, ना. जरह जीर। २. मो. गहि भंग, धा. अ. फ. गहि अंग, ना उ. स. बनि अग मन्नि-नि अग। ३. ना. आई।

(३२) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनु (=मनउं), अ. फ. म. मनों, शेष सभी में 'मनो'। २. धा. कछ रक्खीन गोरक्ख पाई, अ० फ. ना. केह गोरष्प (रोरष-फ.) कर्गा्र रषाई (षकाई-फ.), म. उ. स. ठु (कठ-म. उ.) कंनी (कर्यी-म.) सु गोरक्ख बनाई।

(३३) १. म. उ. स. तिन हत्थ रें (रै-म.) हत्थ, फ. अ. ना. हत्थ रै हत्थ। २. लग्गी पुहामी, अ. लग्गिय सुहाई, ना. म. उ. स. लग्गै सुहाई।

(३४) १. धा. दांव, ना. धाइ, अ. फ. म. उ. स. तिनं धाइ (ध्याइ-फ.)। २. धा. मो. लगि (=लगइ), . ना. अ. फ. गजे न, म. जेन। ३. मो. थकि (=थकइ), म. थकै न, ना. थक्के।

(३५) १. मो. राग ज्न नी, धा. राय जल जीन, ना. अ. फ. राग अरजीन, म. उ. स. तिनं राग -नर जीव। २. मो. नाहन, धा. विश्रवन, अ. फ ना. म. उ. स. बनि बान। ३. म. आजे, ना. अ. फ. अच्छे।

(३६) १. मो. देषि इ (=देखिअइ), धा. ना. दिक्खयं, म. उ. स. भरं दिष्षियं, अ. फ. दिष्षियहि। २. धा. मानु नर भेष, ना. जानि जोगेंद्रे, अ. फ. मनों नट भेष।

(३७) १. उ. स. मन मत्त। २. मो. ना. कोइ साजे, अ. फ. कोइ सज्जइ (सजाई-फ.), म. उ. स. लोह साजे।

(३८) १. मो. एतने सूर बाजित्र बाजे, धा. इतने सोर बाजित्र बज्जे, अ. फ. तिइत्तनं सौर (सोर-फ.) बाजित्र बज्जइ (बजाई-फ.), उ. स. इसे सूर सामंत सो राज राजे, म.—सो राज राजे, ना. इतनीयें भांति बाजित्र बाजे।

(३९) मो. नीसान सार (< साद ति ?), धा. अ. फ. निसानं निसाहार, ना. म. उ. स. निसानं दिसानं सि (ह—ना., त—म.)। २. धा. ना. बज्जे, मो. बाजि (=बाजे), म. बाजे।

(४०) १. मो. दिशा देस दक्षन (=दक्खन), धा. अ. फ. दिशा देस दच्छिन, म. दिसा दिषनं देस, ना. दिसा दच्छिन देस। २. अ. लछुआ, फ. लछी, उ. स. लीनी, म. लीने।

(४१) १. धा. अ. फ तबल' ति (त—अ. फ.) दूरं ति, ना. तिबल तंदूर, म. उ. स. तबल' ति दूरं (तदूरं—म.) सु। २. धा. जग्गी (< जगी), म. गोरं, फ. जंगा।

(४२) १. मो. मनु (=मनउ), धा. झुले, अ. फ. झुनं, ना. मनुं (=मनउ), म. मनौं, स. मनो। २. धा. निच्चि, अ. फ. नित्त। ३. मो. कटे, धा. काढे, अ. फ. काढे, ना. म. उ. स. कढ्ढ।

(४३) १. मो. वजिहि वंग बिसतार, धा. बध बंस बिसातल (< बिसताल), अ. फ बध बंस बिस्तार, ना. म. उ. स. बजे (बजे—म.) बस बिसतार।

(४४) १. धा. जिसे मोहिय, अ. फ. जिनं मोहिय, म. उ. स. तिन मोहियं। २. अ. फ म. उ. स. सम्य। ३. फ. नगो।

(४५) १. धा. म. उ. स. वरं बीर, अ. फ. सद्दो बीर। २. धा. तेसे सुरंगा, अ. फ. तैसे सुरंगा, म. उ. स. संसे ससगा।

(४६) १. धा. नचै इस सीसं, उ. स. तिन नच्चई ईस। २. धा. धरो आस, अ. फ. धरै आन, उ. स. ते सीस।

(४७) १. उ. स. सिरं सिंधु। २. ना. सहनादि, फ. समधिताइ। ३. धा. स्रवपे (< स्रवणे)।

(४८) १. धा. अ. फ. सुनं, ना. सुनं। २. मो मजि (=मजइ) धा. मज्जे, म. उ. स. अ. फ. ना. मजे। ३. ना. म. उ. स. में यहाँ और है : इसे सूर सामंत सुनि जग रगा।

(४९) १. मो. नफेरा नव रग, धा. नफेरी नवा रंग, अ. फ. नफेरी नवे रग, म. उ. स. नफेरी नवं रंग, ना. नफीर नव रग।

(५०) १. मो. ना. मनु (=मनउ), धा. उ. स. मनों, म. मनौ, अ. फ. मनो। २. मो. नूल न, धा. म. मिलनी, अ. फ. ना. नुलनी, उ. स. फ्लनी।

(५१) १. मो. सिधु सामवन गेन मेरी, धा. सिव सावज्ज उगा न नेरी, अ. फ. सिंग सावक उगे न नेरी, ना. सिंध सावद्द नग्गा ननेरी, म. उ. स. सुने (सुनि-उ.) मिगि (सग-म.) सावद (सावद्द) नगी न नेरो (त नेरी-म.)।

(५२) १. धा. सज्झि आवद्ध इर्थ, अ. फ. बजे झिझि (झिझ-फ.) आवद्द (आवद्ध-फ.) इर्थे, म उ. स. मना (मनों-म.), झिज्ञ आवद्ध हर्थे (इथे-म.), ना. मनु झिझि आवद्ध इरथ।

(५३) १. धा. उच्छरे धाइ, म. उ. स. करो उच्छरौ धाव, ना. उच्छरे धाउ, अ. फ. उच्छरे (उछरे, धाइ। २. धा. घिर घट टेरे, अ. फ. घर (घट-फ.) घंट टेरी, ना. म. उ. स. घन घंट टेरी।

(५४) १. धा. चित्त ते नाहि, अ. चितत नही, फ. चितत नाहि, म. चित चित्त तिन हीन, उ. स. चित चिति तन हीन, ना. चित्त तन हीन। २. धा. बट्टी, अ. फ. न ट्टै, ना. बट्ठ, म. धाटी, उ. स. बाटी।

(५५) १. धा. उपमा खड नव नयन लग्गी मो. उप्पमह घंट नवनै न लग्गी, अ. फ. उप्प घंड नव नयन मग्गी (लग्गी-अ.), ना. ओपम घडनने न लग्गी, म. उ. स. अन्य आपमा घट नेननि मग्गी, ना. उप्पम घट ननन लग्गी।

(५६) १. मो. ना. मनु, (=मनउ), म. मनौ, अ. फ. मनो, धा. म उ. स. मनो। २. मो. इथेय लग्गी, म. इर्थ बिलग्गी, शेष में 'इथे (इरथ-ना) बिलग्गी'।

टिप्पणी—(२) केलि < कदली। पत्त < पत्र। (५) रहिय < रहित। (६) उच्छाइ < उत्साह। (७) अंबु < अम्बस्। (११) पुरयवन < प्रस्रुत। (१५) जिमन < यमुना। (१८) गाज < गर्ज्। (१९) उम्मिंद < उन्निद्र। (२१) पायाल < पाताल। दुंदं < द्वन्द्व। (२२) मुद्द < मुद्रय्। (२५) चक्की < चक्रिन्। संत < शांत। (३९) साद < शब्द। (४०) लध्धो < लब्ध। (४७) उत्तग < उत्तुंग। (४८) अच्छछरिय < अप्सरस्। (५०) नइ=निश्चय-सूचक अव्यय। केरी < केलि। (५१) गेन < गगन। (५४) बधूव < बर्ध्।

[७]

दोहरा— सुनि वज्जन[१] राजन[२] चढिग[३] बहु पप्पर समहाउ[४]। (१)
मनुह[१] लंक विग्रह करन चलउ[*२] रघुपतिराउ[३]॥[४] (२)

अर्थ—(१) [जयचंद के] बाजों को सुनकर बहुत सी पाखरों और [युद्ध की] सामग्री [के साथ] राजा (पृथ्वीराज) ने [इस प्रकार] चढ़ाई कर दी (२) मानो लंका पर विग्रह करने के लिए राजा राम चले हों।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) धा. सुणिम बयण, अ. फ. सुनि वयन, ना. सनीय बज्ज, उ. स. सुनि वज्जन, म. सुनि बाजन। २. ना. रज्जन। ३. धा. चढिय, फ. चढिग्गु, अ. ना. उ. स. चढिग। ४. मो. बहु पप्पर समहाउ, धा. बहु पक्खर भरराहु, अ. फ. ना. म. उ. स. सहस सप धुनि चाव (चाय-म., चार-ना. चाह-उ. स.)।

(२) १. अ. मनहु, फ. मनौ, म. मनों, उ. स. मनों। २. मो. चउ (=चलउ), अ. फ. ना. म. उ. स. चढ्यौ। ३. अ. राव, म. राय, उ. स. राह। ४. धा. में इस चरण का पाठ है :

मनु अकाल तडिय सघन प्रलय छुट परवाहु।

[प्रथम चरण का 'भरराहु', तथा यह चरण धा. में धा. २०० की स्मृति से आगए लगते हैं।]

टिप्पणी—(१) वज्ज < वाद्य। चढ=चढ़ना।

[८]

दोहरा— रामद्दल°[१] बंनर° सयम्र°[२] उहि रष्पस बहु बंधु[३] । (१)
घतौ[१] लष्ष[२] सउ* सम मिरिग[४] सु[५] धनि[६] प्रथिराज नरिंद[७] ॥ (२)

अर्थ—(१) राम के दल में समस्त बंदर थे, और उस (रावण) के [दल में] उसके बहुसंख्यक राक्षस-बंधु थे। (२) [किन्तु यहाँ तो] अस्सी लाख [सेना पृथ्वीराज के] केवल सौ [राजपूतों] के साथ भिड़ी, [इसलिए] नरेन्द्र पृथ्वीराज धन्य है।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
(१) १. अ. फ. ना. म. उ. स. राम दलह। २. ना. म. उ. स. बंद (बदर—उ.) बिसम। ३. धा. ओहि (< उहि) रक्खस बहु बंध, अ. फ. उहि रष्ष सम दल बद (बंद—फ.) ना. म. उ. स. रष्पस (रावण—म.) रावन बृंद (बधि—ना.)।
(२) १ धा. अ. फ. असिय। २. धा लाष। ३. मो. सु (= सउ) सम, धा. पर सं, ना. दल सुं (= सउं), अ. फ. म. उ. स. सौ (सौं—म.) सौ, ना. सौ सुं (= सउं)। ४ धा. भिरग, फ. भिरयु, ना. म. उ. स. तुरिग। ५. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। ६. धा. मो. धन, अ. म. उ. स. धनि। ७. मो. प्रथिराज नरेंद (< नरिंद १), शेष में 'प्रिथिराज नरिंद'।
टिप्पणी—(१) सदल < सकल। रष्पस < राक्षस।

[९]

दोहरा— दल संमुह दंतिय[१] सघन[२] गणि को कहइ*[३] अगणित्त[४] । (१)
मनु पव्वय°[१] विधि° चरण°[२] किय° सहि[३] दिष्पिय[४] मयमत्त[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) सेना के मुख भाग में घने हाथी थे; उन्हें गिनती करके कौन कह सकता है, अगणित थे। (२) [वे ऐसे प्रतीत होते थे] मानो पर्वतों को विधाता ने चरण [प्रदान] कर दिए हैं; वे सभी मदमत्त दिखाई पड़ते थे।

*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
पाठांतर—(१) १. धा. संमुह दंती, ना. म. समूह दंतिय (दंती—ना.)। २. मो. सघन। ३. मो. गणि विहि (= विहइ), धा० गणि को कहि (= कहइ), अ. फ. ना. गनि कु (= को) कहै, म. म. गनन न बनि, उ. गनन बनि। ४. फ. अगनित्त म. अगिनत।
(२) १. अ. मनु परवत, फ. मन सु परबति, म. उ. स. मनों (मनो—म.) पब्बत। २. ना. चरनन। ३. धा. सहु, अ. फ. ना. म. उ. स. सह। ४. धा. दिष्षह म. दषियत। ५. अ. फ. मयमंत।
टिप्पणी—(१) संमुह < संमुख। (२) पव्वय < पर्वत। सह=समस्त। मयमत्त < मदमत्त।

[१०]

भुजंग— दिप्पिअइ*[१] इक्क गय मत्त मत्ता[२] । (१)
छत्र सह रत्त[१] भग्गइ* घत्ता[२] ॥ (२)

जे (१) न घंदून[२] छूटे+* जुरंता[२] । (३)
वाय[२] बहु वेग झटकंत दंता ॥ (४)
जिने[१] सिघली सिंघ[२] सुंढे[३] प्रहारे । (५)
ते[१] सार संमुह[२] धाइ पहारे[३] ॥ (६)
उजये वान[१] सज्जे हकारे[२] । (७)
अंकुसे[१] कोस ते नहि[१] चिकारे[३] ॥ (८)
मिठ मगूल[१] चहु[२] कोद[३] वके । (९)
भूप[१] बाहूठ[२] बाजून[३] हके ॥ (१०)
तेह[१] तर जोर[२] पट्टे न[३] झिल्ले*[४] । (११)
चंपिग्रइ*[२] पानि[२] तउ*[३] मेर[४] ढिल्ले°*[५] ॥ (१२)
रैस रैसमिस्र यारी ति[१] भल्ली ।‡ (१३)
सेस संदेह संदूलि[१] मिल्ली ॥°‡ (१४)
जु[१]‡ रेप‡ वइरप्प*‡[२] रत्त§ पीत‡ चल्ला[४] । (१५)
मनो वनराइ ढाले ति हल्ली[१०] । (१६)
घंट घोरं न[१] सोरं[२] समान । (१७)
हल्लये मन[१] लग्गे विमानं[२] ॥ (१८)
सिंधु सा बंधु[१] बंधे‡ धुरंगा[३] । (१९)
सग संगी त[१] हरि येभ[२] संगा ॥ (२०)
सीस संयूत[१] गज झंप[२] झपइ*[३] । (२१)
देषि[१] सुरलोक सहि* देस[२] कंपइ* ॥ (२२)
दंत[१] मणि मुत्ति जर जटित लप्पे+[२] ।° (२३)
बीज[१] चमकति[२] घन[३] मेघ पप्पे +[४] ॥° (२४)
इत्त नी (निश्र) ध्यास सम्माधि रहियं[१] । (२५)
कहइ*[२] प्रथिराज प्रथिराज गहियं ॥ (२६)

अर्थ—(१) एक (कुछ) गज मत्त-उन्मत्त दिखाई पड़ रहे थे, (२) जो सभी [अपने] आ
रक्त [वर्ण का] छत्र धारण किए हुए थे, (३) जो अंदुओं (शृंखलाओं) से छूटकर उनसे जुरं
(बँधते) नहीं थे, (४) जो वायु में बहुत वेग से अपने दाँतों को झटक रहे थे। (५) जो सिंघल
[हाथी] थे, वे सिंहों पर अपनी सूँडों से प्रहार करते (करने वाले) थे; (६) वे [युद्ध में] सा
(लोह—शस्त्रास्त्र) के सम्मुख दौड़कर प्रहार करते थे, (७) हँकार (पुकार) लगाने पर उद्य
हो कर वे बाना सजते थे, और (८) अंकुश—कोप [के गड़ाने] पर भी चीत्कार नहीं करते थे
(९) उनके मिठ (महावत) चारों ओर बाँके मगोल थे, (१०) भूप गण उनको बाहुँटे और बाज
हाँकते थे। (११) उन्हीं के समान कुछ वेगवान् भी थे जो पाद-प्रहार नहीं झेलते थे, (१२) य
उन्हें हाथ चाँपा (लगाया) जाता तो वे मेरु को हिला देते। (१३) [उनके हाँकने के निमित्त

रेशमी रेखों (लच्छियों) वाली नाजीकें तथा मछलियाँ (बछियाँ) थीं, (१४) जो उनके देह से स्पिष्ट तथा उन पर रक्खे गए सन्दूक से मिली थीं। (१५) [उन पर] जो लाल-पीले वैरखों की रेखा (पंक्ति) चलती थी, (१६) [वह ऐसी लगती थी] मानो वनराजि की डालें हिल रही हों। (१७) उनके घोर घंटों का भार [पृथ्वी तल पर] समा नहीं रहा था, (१८) [इस लिए] मानों उनके लग कर विमान हिलने लगे थे। (१९) सिन्धु देश के धुरंग (आगे पर धूल डालने वाले—हाथी) बन्धन से बंधे हुए थे। (२०) इन [हाथियों] के संग जो संगी-साथ रहने वाले—थे, वे भी इन इभों (हाथियों) के संग [रहते हुए] डरते थे। (२१) इनके सिरों से संयुक्त (जुड़ा हुआ) गजदान उनको झाँप रहा था, (२२) इनको देखकर सुरलोक तथा समस्त देश काँपता था। (२३) इनके मणि मुक्ता तथा (जर—चाँदी-सोना) से जड़े हुए दाँत [इस प्रकार] दिखाई पड़ते थे, (२४) [मानो] घने मेघों के पक्ष में विद्युत चमक रही हो। (२५) वहाँ निज (स्वकीय) आशा और समाधि (सुध) में रहते हुए (२६) [जयचंद] कह रहा था, 'पृथ्वीराज को पकड़ो' 'पृथ्वीराज को पकड़ो'।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित चरण मो. में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

‡ चिह्नित चरण या शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. मो. दिपिद, धा. ना. दिस्सियहि, अ. फ. दिष्षिय, उ. स. देषियहि, म. दषिदहि। २. मो. इक मद मत्त मता, धा. मत्त मय मत्तमत्ता, म. मत मयमत मता, शेष में 'मंत मयमत (मयमंत—म. फ.) मता (मत्ता—अ. फ.)'।

(२) १. धा. ना. उ. स. छत्र छह रंग, छत्र सहरंग, अ. फ. छत्र ह रंग (अंगु—फ.)। २. धा. अगि दुरंता, मो. आगि (= आगइ) धरता, अ. फ. आगि दुरता, ना. आगि दुरंता, म. उ. स. चौरे (उ. चुरै, स. चौरं) दुरता।

(३) १. मो. ज (< जे ?) न अंदून, धा पमि अ—इसके अनंतर बाद के 'छूटे' शब्द तक धा. में नहीं है, अ. फ पम अदूनि (अदूल—फ.), उ. स. छके जेह अंदून, ना. म. जेह अदून। २. मो. छूटि (= छूटे) जुरता, अ छुटे जुरंता, फ ते छुट्टे जुरता, ना. उ. स. छुट्टे जुरता, म. छुट्टे दुरता।

(४) १. धा. जो वई, अ. फ. वार।

(५) १. धा. जे, अ. फ. जि, म. उ. स. जिते, ना. जितौ। २. अ. फ. सीस सिंदूप, म. सिंधका सिंध। ३. धा. सुटे, अ. फ. छुटे (संटे—फ.) म. ना. उ. स. सुडो।

(६) १. धा. अ. फ. में यह शब्द नहीं है, मो. ना. ते, म. उ. स. तिते। २. मो. समुह, शेष में 'समूह'। ३. धा. धावं पहारे, मो. धाइ प्रहारे, अ. फ. धावइ करारे, ना. धाप हकारें, म. उ. स धावं (धावे—म.) हकारे।

(७) १. म. उज्जर बान। २ मो. साजे हकारे, अ. फ सज्जे हकारे, ना. आवं हकारें, म. स. आवं वकारे।

(८) १. धा. अ फ अकुमद, ना. म. उ. स. अंकुमं। २. फ. तिह नहि, नहि, ना. ते नवि, म. उ. स. तेन। ३. ना. धिकारे।

(९) १. धा. मन्न मगोल मो. मिलं मगूल, अ. फ. मेठ (मंठ—फ.) मंगोल (मगोस—फ.), उ. स. मीठ मंगोल, ना. मिछ मंगोल, म. मोन मगोल। २. फ. चढ़ी। ३. म. दोद, अ. फ. कोट।

(१०) १. म. मनौ भूप, स. इसे भूप। २. मो. बाहूठ, धा. बाजुनि, फ. बाजुन, अ बाजनि, शेष में 'बाजूनि'। ३. धा. म उ स बाजून, अ. बापूनि, फ. नापनि, ना बाजूनि।

(११) १ अ. फ. तेर, ना तेन। २. म. नर जोर, अ. फ. हजेर। ३. अ. फ. पट्टेनि, उ. स. पट्टेव।

४. धा. ढिल्ले, मो. झिलि (=झिले), अ. ढिल्हे, फ. म. झल्ले, उ. स. झिल्लै; ना. झिठे।

(१२) १. मो. नंपीइं (=चपिजइं), धा. कंपिये, अ. फ. चंपिए, ना. म. उ. स. चंपियं। २. धा. पाणि, अ. फ. पानि, मो. म. ना. उ. स. पान। ३. मो. तु (= नउ), शेष में 'ते'। ४. धा. अ. मेरु, फ. मरुव। ५. मो. ढिलि (= ढिलि), धा० ढिले, अ. फ. ठिल्ले, स. ढिले, उ. ठिलै, म. तिलै।

(१३) १. धा. अ. रेस रेसम्म नीरोति, म. उ. स. रेसमी रेस नारीति, ना. रेस रसमीति नारीति।

(१४) १. धा. ना. सेस सदेह सिंदूक (सेंदूरि-धा.), अ. मोस सिंदूर सिंदूष, म. उ. स. सिरो सीस सिंदूर सोभा (सोभं-म.) सु।

(१५) १. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसीमें नहीं है। २. मो विरय (= वइरय)। ३. मो. रत्त नील पीत, धा. म. उ. स. पतिपात, अ. फ. पत्तिपत्ति, न. पतिवत्त। ४. धा. ना. वही।

(१६) १. धा. मनो वनराइ ढालेति ढली, अ. फ. मनी वनराज वालेति (ढालेति-फ.) ढली, म. ना. उ. स. मनहु वनराइ द्रुम डाल ढली।

(१७) १. उ. स. घंटे घेन घोरंन, म. घट घोरन सोर, ना. धनं घंट घोरन घोरं। २. मो. सारं, म. सत्ती, फ. सज्जे।

(१८) १. मो. हलवे मत, धा अ. फ. ना. हल प. मत (मत-ना.), म. उ. स. हलं हालर (हालयं-म.) मंत। २. ना. अ फ. विवानं।

(१९) १. धा. सीधु संबंध, अ. फ. पो सिंधु संबधे, ना. विरुद्ध वरदाइ, म. उ. स. विरद वरदाइ (वरदाय-म.)। २. धा. वंधइ (< वधे ?) सुरगा, ना. म., उ. स. आगे (आगे-म. अग्गे-ना.) मृदंगा (म्रिदंगा-ना.)।

(२०) १. धा. सुर्गा सुग्गी, अ. सुर्गं सुग्रीव, फ. सुर्गं सुगीत, ना. सुगा संगीत, म. उ. स. मनौं स्वर्ग संगीत। २. धा डरि ईंद्र, अ. फ. डरि चंद्र (डरि इंद्र-अ.), उ. स. करि रंभ, म. डरि रंभ।

(२१) १. धा. अ. फ. उ. स. सीस सिंदूर ना. सीस संजुत्त, म. रासी सिंदुराजं। २. धा. गय झिंपि, उ. स. गज अप, म. रज झंप। ३. मो. झंपि (= झंपइ), धा. अ. फ. ना. झंपे, म. उ. स. झपे

(२२) १. धा. ना. दिखिए, म. मनौं देखि। २. मो. सिहि देस, फ. सबें देव, ना. सहि देव, शेष में 'सहदेव'। ३. मो. कंपि (= कपइ), धा. अ. फ. ना. कंपे, म. उ. स. कपे।

(२३) धा. दंत अ. फ. म. उ. स. दंति। २. ना. म. उ. स. जरये (जरीयं-म., जरीये-ना.) सुलभ्मी।

(२४) १. अ. फ. म. उ. स. मनी (मनौं-म.) वीज, ना. मनुं बीज। २. ना. झलकंति, म. झलकंत, उ. स. झमकंत। ३. फ. पति। ४. ना. म. उ. स. पपी।

(२५) १. धा. अ. फ. हत्तनहि सास (सीस-फ.) धरि (धरि-अ. फ.) वारि रहियो (रहियौ-फ.), म. उ. स. हत्तनिय (हत्तना-म.) आस धरि मध्य (मिधि-म.) रहियं, ना. हत्तनी आस धरि मघव रहीयं।

(२६) १. मो. कहि (= कहइ) प्रथीराज प्रथीराज गहियं, धा. जु कहि जु कहि प्रिथिराज गहियो, अ. फ. न. कइहि प्रथिराज प्रथिराज गहियो (गहियौ-फ., गहियं-ना.), म. उ. स. कइहि प्रथिराज गहियं सु गहियं।

टिप्पणी—(१) गय < गज। (२) रत्त < रक्त=लाल। (५) सुंड < शुण्ड=सूँड़। (६) पहार < प्रहार। (७) उज्जय < उज्ज्वल। वान < वर्ण। (८) चिकार < चीत्कार। (९) मिठ [दे०]=महावत। मंगुल=मंगोल। बंक < वक्र। (१०) तेड < ताडय। (११) तर < वेग, बल। पट्टे < पट्टया [दे०]=पाद-प्रहार। (१२) मेर < मेरु। (१३) रेस रेसमिंग < रेशमी रेशे (लच्छियाँ)। णारी < नालीक=एक प्रकार का भाला। (१४) सेस < श्लिष्ट=मिला हुआ। (१५) रत्त < रक्त=लाल (१६) वनराइ < वनराजि। डाल < डाल। (१८) मत=मनु, मानो। (२०) येभ < इभ=हाथी। (२२) सहि=सभी। (२३) जर < जुर (फा०)। (२४) वीज < विद्युत्। पप्प < पक्ष। (२५) निम < निज=अपना।

[११]

दोहरा— *गहि गहि१ कहि२ सेना ति सह३ चलि हय गय मिलि तव्व४ । (१)*
जिम१ पावस पुव्वइ२ अनिल हलिगत बद्दल सव्व३ ॥ (२)

अर्थ—(१) [जब] उसने समस्त सेना को 'पकड़ो', 'पकड़ो' कहा, हय, गजादि तब सब मिल कर [इस प्रकार] चल पड़े (२) जैसे पावस में पूर्व की हवा से सब बादल हिलग—एक दूसरे से मिल—जाते हैं।

पाठान्तर—(१) १. मो. गिहि गिहि, शेष में 'गहि गहि'। २. मो. किहि, अ. कवि। ३. धा. सेना न सव, मो. सेना ति सइ, अ. फ. सेना उ सव ना. म. उ. स. सैना सकल। ३. मो. चलि हय गय मिलि सव, धा. अ. फ. चलि (हलि–फ.) हय गय मिलि (मिल–फ.) इक्क (एक–धा, इक्ख–फ.), ना. म. उ. स. हय गय चल उठि (उठि–म.) गव्व।

(२) १. धा. जाणूं, अ. फ. म. उ. स. जनु, फ. जुत्त। २. मो. पवि (पव्वइ), धा. चुव्वइ, म. अ. पुव्वइ, फ. पुव्वहि, उ. स. पुव्वइ। ३. मो. हय गय बद्दल सव्व, धा. अ. फ. हलि बद्दल (चंदलु–फ.), बहु भिष्य (भेक–धा., मभिष–फ.), ना. म. उ. स. हलि गति (हलि गत–ना., हिलि गति–म.) बद्दल सव्व।

टिप्पणी—(१) सह=समस्त। (२) हलिगना=हिलगना, पास आना।

[१२]

अर्ध नाराच— *हयग्गयं नरम्मरं२ । (१)*
उनव्वि नय१ जलघ्घरं२ ॥ (२)
दिसा निसान१ वज्जये२ । (३)
समुद्द सद्द, लज्जये१ ॥ (४)*
रजोद मद्द उप्पली१ । (५)
व्योम१ पंक संकुली२ ॥ (६)
तटाक१ पाल२ रंगिनी । (७)
चकी चक१ वियोगिनी ॥ (८)
पयाल पाल+२ पल्लये२ । (९)
दिगंत१ मंन२ हल्लये× ॥ (१०)
अनंद ते१ निसाचरे ।× (११)
कु१ कंपि२ तुंड साचरे३ ॥× (१२)
मगंत१ गंग थुल्लये२ । (१३)
समुद्द१ सून२ फुल्लये३ ॥ (१४)
प्रवत्ति१ छरा२ छत्तये ।× (१५)
सरोज मोज१ हल्लये ॥× (१६)

अपंड रेन मंडने१ । (१७)
हरपि इंदु छंडने१ ॥ (१८)
कमठ पिट्ठ१ निट्ठुरे२ । (१९)
प्रसलष१ भार२ मिथ्थरे१ ॥ (२०)
साप° हंस°, गग्गये । (२१)
समाधि, आध२ जग्गये ॥ (२२)
अपूरवं ति बंधये१ । (२३)
जटालु कालु लुब्भये१ ॥ (२४)
नरिंद पंगु, पायसं । (२५)
स छत्रि मग्गि१ आयसं२ ॥ (२६)
गहन जोगिनी१ पुरे२ । (२७)
थाप थाप१ विथ्थुरे ॥ (२८)

अर्थ—(१) हय, गज, नर और भट (२) उन्नत होकर नत हुए जलधरों के समान [लगते] थे। (३) दिशाओं में निशान (धौंसे) बजने लगे, (४) [जिससे] समुद्र का शब्द भी लज्जित हो रहा था। (५) [सेना के संचरण से] रजोद—रज देने वाली भूमि—का मद उत्खंडित हो गया, और (६) व्योम पंक-संकुल हो गया। (७) [रात्रि का आगमन समझ कर] तडाग [—तट] की रंगिनी-क्रीड़ा करने वाली—बाला (८) चकवी चकवे से वियोगिनी हो गई। (९) पाताल [सेनाओं के भार से दबकर] पिलपिला उठा (१०) और दिशाओं के मत्त [गज] हिल गए। (११) निशाचर [रात्रि का आगमन समझ कर] आनंदित हुए, (१२) पृथ्वी काँप गई और तुंडवाले जीव—संचरण करने लगे। (१३) [आकाश-] गंगा के कूल पर भाग कर आए हुए (१४) समुद्र-सुवन (चंद्रमा) फूलने (प्रसन्न होने) लगे। (१५) उन्होंने [अपनी किरणों का] छाता तान दिया, (१६) जिससे सरोज का मुख हिल गया। (१७) [किन्तु] अखंड रेणु से मंडित होने के कारण (१८) इंदु भी डरकर [आकाश गंगा को] छोड़कर भाग निकला। (१९) निष्ठुर कमठ-पीठ (२०) प्रसरण-भार [पड़ने के कारण] मिथ्थुर (विस्थूल) हो गई। (२१) सर्प (शेष) हंस (प्राणों) की याचना करने लगे, (२२) और [महादेव] समाधि-आधि से जग गए। (२३) अपूर्व रूप से उन्होंने [जटा को] बाँधा, (२४) और उन जटालु—शिव—ने काल को भी लुब्ध कर लिया। (२५) पंगराज (जयचंद) का आदेश था, [अतः] (२६) क्षत्रियों ने उससे आदेश माँगा, और (२७) योगिनी पुरेश-पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए (२८) वे आप ही आप फैल गए।

पाठान्तर—° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
§ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।
(१) १. ना. सुनिम्मरं।
(२) १. धा. उनेविये, अ. फ. उनें विनें, ना. उनें विनें, म. उन्नंनयं, उ. उमन्बियं, स. उनम्मियं।
२. धा जलहरं।

(३) १. म. उ. स. दिस दिसान । २. अ. फ. पज्जए ।
(४) १. मो. साद, शेष सभी में 'सद्द' । २. फ. लज्जे ।
(५) १. मो. रजोद मद उप्पली, धा. रजाद मिद अंगुली, म. रजोद सद अंपुली, फ. सरताद सद्दए अंपुली, उ. रजोद मद उप्पली, ना. रजोद मद उप्पली, म. स. रजोद मोद उप्पली ।
(६) १. मो. पेम, धा. वियोम, अ. फ. व्योम, ना. सु व्योम, उ. स. सव्याम, म. सयोम । २. ना. संकली ।
(७) १. ना. सटाकि । २. धा. वालु, अ. फ. बान, म बार । ३. अ. फ. रंगनी, म. सोगिनी, उ. स. रौंगनी ।
(८) १. फ. जु चक सो वियोगिनी, अ. फ. जु विक सो वियोगिनी, म. उ. स. सुचक्यो वियोगिनी, ना. चवक्कि संठि जोगिनी ।
(९) १. धा. पहल, अ. फ. पल्ह, ना. म. उ. स. पाल । २. म. पलरं ।
(१०) १. उ. स. द्रगंत, फ. दिगचि, ना. द्रिगंत । २. फ. मंति ।
(११) १. धा. अ. फ. अनदने, उ. स. अनदिते ।
(१२) १. मो. में 'क' शेष सभी में 'कु' । २. धा. कुंप, ना. कुपि । ३. ना. कुंद वासके ।
(१३) १. मो. मंगन । २. अ. फ. म. कूलए ।
(१४) १. उ. स. समुद्र । २. ना. पुंन । ३. अ. फ. म. ना. फूलए ।
(१५) १. धा. चरंति, अ. फ. प्रवर्त, ना. प्रवर्ति उ. स. प्रवृत्ति । २. ना. छत्र, फ. छत्र, उ. स. छत्रि ।
(१६) १. धा. मोज सत्तए, अ. फ. मोज सत्तए, ना. मौज सुम्मए, उ. स. मौज लज्जए ।
(१७) १. धा. मंडणे, ना. मंडले, म. मंडयो, उ. स मंडयो ।
(१८) १. धा. छंडणे, ना. इंदु छंडले, म. स. इंद्र छंडयो, उ. इंद्र छंदयो, ना. इंद छंडिले ।
(१९) १. मो. पीठ, अ. फ. पिट्ठि । २. फ. रनं, म. निठुरं, स. निट्ठुरं, ना. निट्ठुरं, ।
(२०) १. धा. प्रमार, अ. फ. प्रसङ्कि, म. उ. स. प्रसाल, ना. प्रसह्ल । २. म. उ. स. माल । ३. धा. भित्थरं, अ. भिच्छुरं, ना. बिस्सुलं, फ. म. उ. स. विच्छुरं ।
(२१) १. धा. में 'हंस' के 'स' के पूर्व चरण का अंश त्रुटित है, मो. ना. सपानि हंस, अ. फ. साप हंस, म. उ. स. छिपान हंस ।
(२२) १. म. समधि । २. धा. अ. ना. आदि, म. आस ।
(२३) १. धा. अ. फ. अपूरवं ति बंधयो, ना. अपूर बंच बद्धए, म. उ. स. अपूर धूर बद्धए ।
(२४) १. धा. भाग्गयो, अ. भग्गयो, फ. भग्गए उ. स. लुद्धए, म. लग्गए ।
(२५) १. मो. नरेंद (< नरिंद ?) पंगु, धा. म. उ. स. नरिंद पग, अ. फ. नरिंद पाइ ।
(२६) १. मो. छत्री मंगि, धा. गसा भुयनि, अ. फ. गसा भ्रमति, ना. सभूत भगि, म. उ. स. सु छत्रि (पत्र—म.) मंगि, स. भूता मगि । २. धा. आइसं, अ. फ. आयिसं ।
(२७) १. फ. जोगनी । २. ना. पुरेस ।
(२८) १. धा. जु अप्प अप्प विप्फुरे, मो. आप आप विप्फुरे, अ. फ. सु अप्प विफ्फुरे अरे, ना. आप आप विफ्फुरेस, उ. स. सु अप्प अप्प विप्फुरे, म. सु अप जेम विफुरे ।

टिप्पणी—(१) मर < मद । (२) उनव < उण्णम < उद्+नम् । न५ < नत । (४) साद < शब्द । (५) उप्पली < उक्खलिय < उत्खण्डित=उन्मूलित, उत्पाटित । (९) पयाल < पाताल । (१२) माचर < संचर । (१३) कुल < कूल । (१४) सुज < सूनु=पुत्र । (१५) प्रवरा < प्रवर्तय् । (१७) रेन < रेणु । (१९) निट्ठुर < निष्ठुर । भित्थुर < विस्थूल । (२०) प्रसलन < प्रसरण । (२१) साप < सप=शेष । (२५) पायस < प्रादेश । (२६) आयस < आदेश । (२८) विप्फुर < वि+स्फुर् ।

[१३]

दोहरा— सह समांन सह[१] छत्रपति सह[२] सम जुध्ध[३] संजुत[४] । (१)
गहन[१] मीन बंदन कहइ*[२] जिहि लग्गइ*[३] सहु वत्त[४]+ ॥ (२)

अर्थ—(१) [जयचंद-पक्ष के सामंतों में] सभी समान थे, सभी छत्रपति थे, और सभी युद्ध में समानरूप से सद्युत (प्रशसित) थे, (२) किन्तु पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए मीर बदन ने कहा (बीड़ा लिया), जिसे यह लघु बात लग रही थी।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+ चिह्नित चरण धा 'गहन' के बाद का ० शा म. फ. में नहीं है।
(१) १. धा मो. अ. फ. स. सह समान सह, म. उ. तुम सह समान, ना. नम वि समान सह । २. मो. धा. सत्र, अ. फ. ना. म. व. स. सह । ३ मो गुध, फ. क्रुद्द, म जुद्ध। ४. धा. सजुत्त, अ. फ. सरिजुत्त (सरियुत्त-फ.), म. उ. स. सजुद, ना. समत्त।
(२) १. अ. फ गहहू। २. मो म र बदन कीउ (= किअउ), धा. मीर वदन हतो, ना. म. उ. स. मीर बंदन कहै। ३ मो लगि (= लगइ), धा. लमे, ना. म. उ. स. लग्ग। ४. धा. लघुमत्त, म. लहुवान, उ. लहु वह, स. लहु रह, ना. वहुवत्त।
टिप्पणी—(१) सह = समस्त। सयुत्त < सस्तुत। (२) लहु < लघु। वत्त < वत्ता < वार्ता=बात।

[१४]

छप्पय— परठिया[१] पंगु राय[२] सु+ रीसं[३] । (१)
भपइ[*] दोइ[१] दुम्मीन[२] हीने न[३] दीसं ॥ (२)
नीच कंधे[०१] प्रही[०२] रोम सीस[३] । (३)
उप्परइ[*१] फोज प्रथीराज रीस[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) पंगराज (जयचद) ने [उसे] रोष पूर्वक नियुक्त किया। (२) वह दो दुम्मियाँ—मोटी दुमवाली भेड़ें खाता था और [इसलिए] हीन (क्षीण) नहीं दिखाता था। (३) उसके कंधे नीचे थे और सिर के बाल खड़े हुए थे। (४) उसने पृथ्वीराज की सेना के ऊपर रोष किया।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
(१) धा. पट्ठिय, अ. फ पठ्ठिय, ना. पट्ठीयं, म. पच्छियं, उ. स. सवे पट्ठियं। २. धा. अ. फ. राइ पंगा, म. उ. स. पंग रायं, ना पगुरायं। ३. मो. रीस, धा. अ. फ. म. उ. स. सुहीसं।
(२) १. सबे दोइ, मो. भषि (= भषइ) दोइ. म. मषे बोय। २ धा. दुम्मान, अ. फ. दुर्यान, उ. स. द्रुम्मीन। २. मो. ही नयन, अ. फ. ना. ही नैन।
(३) १. अ. फ. निचट्ट, म. नीच कंधे. ना. उ म. कियं नीच कंध। २. मो. प्रही, शेष में तुछ्छ (तछ्छ-फ.)। ३. म. रोमं स सीस।
(४) १. मो. उपरि (= उपरइ), धा. उप्परे, अ. फ. उप्परें, ना. म. उ. स. परी उपरं, फ. पंगा। २. धा. राय प्रिथिराज। ३. धा. द सं, म. उ. स. ईसं।
टिप्पणी—(१) परट्ठिअ < पट्ठिठविय < परिस्थापित अथवा प्रतिष्ठापित। (३) प्रहा = झड़ना [यथा बालों का झड़ना]

[१५]

रसावला—

जे[1] कोल[2] पलभ[3] भषी[4] । (१)
मेछ सब्बं[1] भषी । (२)
रोम राहं रषी[1] । (३)
वीर बाहु[1] पषी[2] । (४)
संभरेन[1] लषी । ‡ + (५)
बनेचरं तं[1] मुषी । × (६)
बान बाहू पषी[1] ।‡× (७)
संध+ सा बध्धषी[1] । (८)
टंक अट्ठार षी[1] । (९)
दिव्य[1] बाह लषी[2] । (१०)
दुम्मि साह[1] मुषी । (११)
बोलते[1] न लषी । (१२)
पारसी[1] पालषी[2] ।[3] (१३)
पंग पारठ षी[1] । (१४)
स्वामिता[1] चित्तषी । (१५)
ढिल्लि ढिल्लइ*[1] झषी ।[2] (१६)
सट्ठि हज्जार षी[1] ।+ (१७)
पवंग सा[1] पारषी ॥ (१८)

अर्थ—(१) जो कोल होते हैं, वे पल (मांस) भषी होते हैं, (२) [किन्तु] म्लेच्छ सर्वभक्षी होते हैं। (३) वे रोमप्रिय और नखी (बड़े नखों वाले) होते हैं, (४) वे वीर और बाहु पक्षी—बाहु का आश्रय लेने वाले होते हैं। (५) वे स्मृति से लक्ष्य करने वाले होते हैं। (६) वे वनेचरों बंदरों (?) के मुख वाले होते हैं। (७) उनका बाण का [सा] हीन होता है। (८) वे शरीर के संधों (जोड़ के स्थानों) को बाँध रखते हैं। (९) अठारह (?) टंक [का धनुष] खींचते (?) हैं। (१०) वे दिव्य बाहु—लक्षी (?) होते हैं। (११) वे मुख पर दुम (दाढ़ी) का शासन करते हैं। (१२) वे बोलते नहीं दिखाई पड़ते—कम बोलते हैं। (१३) वे फारस और बल्लख (?) के होते हैं। (१४) वे पंग (जयचंद) द्वारा परिस्थापित हैं। (१५) उनके चित्तों में स्वामि भक्ति है। (१६) वे दिल्ली को ढीला (शिथिल) करने को झांख रहे हैं। (१७) वे साठ हजार हैं। (१८) प्लवगों (घोड़ों) के वे पारखी हैं।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।
‡ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

(१) १. धा. अ. फ. उ. स. में यह शब्द नहीं है। २. ना. छोक। ३. मा. ना. म. पलभ, शेष में 'पल'। ४ धा. स. लषी।

म. संभवनवं, उ. मेस सवं,
(२) १. मा. मेस सवं, धा. मेछ सरवं, अ. फ. मेछ सव्वं, ना. मेछ सवं, म. संभवनवं, उ. मेस सवं,
स. मेस सवं।
(३) १. मो. म. रषी, शेष में 'नर्ष'। २. म. उ. स. में यहाँ और है : वेग्रजे विद्धषो (विद्धषी–म.)
(३) १. मो. म. रषी, शेष में 'नर्ष'। २. म. उ. स. दाहु। २. धा. चखी।
(४) १. धा. चाहि, मो. मेइं, ना. बाह, अ. फ. म. उ. स. दाहु। २. धा. चखी।
(४) १. धा. सभे नारं, म. उ. स. मुमरे नां।
(५) १. धा. में ये दो शब्द नहीं है, ना. वच रत्तं।
(६) १. धा. में ये दो शब्द नहीं है, ना. वच रत्तं।
(६) १. मो. ह, धा. ना. बाह
(७) १. मो. ह, धा. ना. बाह
(७) १. धा. संध सावखी, मो. सिध सावधषी, अ. फ. संध सा वंधषी, ना. सर्वदा विद्धषी, म. उ.
(८) १. धा. संघ सावखी, मो. सिध सावधषी, अ. फ. संध सा वंधषी, ना. सर्वदा विद्धषी, म. उ.
१. विद्धि (विद्ध–म.) सा बदषी।
(९) १. म. स. अद्दरषी। २. मो. के अतिरिक्त सभी में यह और है (स. पाठ) :—
खच (खचि–म.) विम्मारषी। लोट नाराचषी (नारं जषी–म.)
और मो. म. तथा ना. के अतिरिक्त सभी में है:
प्राण जोर लषी। कूल वाह (कोल वाहे–म.) चषी।
(१०) १. अ. फ. हिद्दि, ना. विज्जु, म. स. बाज। २. धा. बाहू नखी, ना. बाहे लषी, म. स.
बाहे लषी।
(११) १. धा. द्रुम्म सिसा, अ. फ. धर्म साह, ना. दुमी साहे, स. द्रुम्म साहं, म. दुमि साहे, उ.
द्रुम साहे।
(१२) १. अ. फ. बालते, म. बोलने।
(१३) १. म. पारसं। २. म. उ. स. पारषी। ३. ना. म. उ. स. में यहाँ और है :
बान बाह पषी।
(तुलना० चरण ४)
(१४) १. धा. पारठ्ठकी, म. पारंढषी, ना. पारढषी।
(१५) १. धा. स्वामि ना. म. सामिता।
(१६) १. मो. ढिल ढिली (<ढिलि=ढिलइ) धा. ना. ढिल्ल ढाहं, म. ढिल्लि ढाहं, म. स. ढिल्लि ढाहं।
२. ना. म. उ. स. में यहाँ और है : वीचरत्तं मुषी (वीखरत्तं मुषी–म.)। ना. में यहाँ और भी है:
रज्ज रज्ज रषी।
(१७) १. धा. अ. फ. साहि हजारषी, मो. सठि हेम रषी, म. सठि हजारं मुषी।
(१८) १. धा. पंगवे, स. पवंगे, म. पवंगं, फ. पवंगम।
टिप्पणी—(१) पलअ < पल [क]=मांस। (३) राह < राध। (४) पष < पक्ष। (५) संभर < स्मरण।
(१२) पालष < वलख (?)। (१४) पारठ्ठ < परिस्थापित।
बाह < व्याध। वलख [दे०]=हीन।

[१६]

भुजंग—

हय दल पय दल[१] अग्गइ[*] सुंडारे[२]। (१)
नृपतिन छत्रिन[१] लध्धे न[२] पारे। (२)
सूर[१] सामंत मम्मे[२] हजारे। (३)
मनउ[*२] विटिय[२] कोट मम्मे[३] मनारे[४]॥ (४)

अर्थ—(१) अश्व-दल और पद-दल के आगे [जयचंद की सेना में] सुंडारे (हाथी) थे, (२) नृपतियों और क्षत्रियों का तो पार नहीं मिलता था। (३) शूर और सामंत [उस सेना के] मध्य में हजारों थे, (४) [जो ऐसे लगते थे] मानो कोट (परकोटे) के मध्य में वेष्टित मीनार हों।

दसंशोधित पाठ के हैं।

। नहा है।

हय पर दल, ना. हय दल पय दल, म. उ. स. हय सेन पय सेन। २. धा. अ. फ. गि (=अगाइ) सुडारे। ना. अर्गो सुडारे, म. अग सुडारे, उ. स. अर्ग सुढारं। ३. फ. है।

धा. नृपतिन छत्तु, अ. नृपतिन छनन, फ. नृपतिम छत्रति, म. विपं तीन, ना. उ स आन (नुछत्र नु–ना.)। २. धा लक्षन, अ फ. लर्क्षन, ना. लक्षत, म. उ. स. लक्षं न।

(३) १. म. उ. स. तिन सूर। २. मो. मध्ये, अ. फ. मद्धे, ना. म. उ. स. मध्य।

(४) १. मो. ना. मनु (=मनउ), म. मनों, शेष सभी में 'मनो'। २. म. विदीय, ना. वीदीय। ३. धा. मकॅम, म. उ. स. मंझे। ४. धा. उ. स. मुनारे, अ. फ. मनारे, म. सुनारे।

टिप्पणी—(२) लघु < लघु। (४) विदिय वेष्टित।

[१७]

भुजंग— मोरिय[१] राज प्रथीराज[२] वग्ग[३]। (१)
उठ्ठियं[१] रोस श्रायास लग्ग[२]। (२)
पथ्थ[१] भारथ्थि[२] गरि[३] होम[४] जग्ग[५]। (३)
पुट्ठियं[१] पग्ग पंडु वन[२] लग्गं॥ (४)
उठ्ठिय[१] सूर सामंत तज्जे[२]।‡ (५)
पोखिय सिंघ* साहथ्थ लज्जे[१]। (६)
वाजने[१] वीर रा पंग[२] गज्जे[३]। (७)
मनउ*[१] श्रागमे[२] मेह[३] श्रापाढ गज्जे[४]॥ (८)
मिले योघ वथ्थे[१] न हथ्थे हकारे[२]। (९)
उठे[१] गयन लग्गे समं सार[२] झारे। (१०)
कटे[१] कंघ[२] कावंघ[३] सघे[४] ननारे[५]। (११)
परे जग रंगं मनउ*[१] मत्तवारे॥ (१२)
झरे[१] संमरे राय[२] स[३] सार[४] सारे[५]। (१३)
जुरे[१] मल हल्लइ*[२] नही जे[३] श्रपारे। (१४)
जवे हारि हल्लइ*[१] नही को[२] पघारे। (१५)
तये[१] कोपियं[२] कन्ह[३] मयमत्त[४] भारे[५]॥ (१६)
जवे[१] श्राप्पियं मारु हथ्थे[२] दुघारे।° (१७)
फुटे[१] कुंभ झुम्म नीसान भारे।° (१८)
गये[१] सुंड दतांनु[२] दंता उभारे[३]। (१९)
मनउ*[१] कदला कंद मिट्टी[२] उपारे॥ (२०)
परे पंडुरे[१] वेम ते[२] गीरु सीस[३]। (२१)
मनउ*[१] जोगिनी पोग[२] लागति रीस[३]। (२२)

रहे हों। (२३) समान (धनुष) बाण प्रवाहित कर रहे थे। [जिसके कारण] भानु नहीं दिखाई पड़ रहा था। (२४) [योद्धाओं के गिरने के कारण] गिद्धिनी और गिद्ध [इधर-उधर] चक्कर काट रहे थे, और [वहाँ शवों के पास] जाने नहीं पा रहे थे। (२५) उस, रक्त [वर्ण के] क्षेत्र में शोर करते हुए कराल पक्षी (काग) विचरण कर रहे थे, (२६) [जिसके कारण] कंठी (कोकिल) बोल करके कंठ नहीं उभाड़ (खोल) रहे थे। (२७) शोणित का वह रंग-स्थल एक सर [बन गया] था, जिसमें पल (मांस) का पंक पड़ा हुआ था, (२८) [जिसमें और भी] मांस जा रहा था, दुर्गंधि खिंच रही थी, और करंक (हड्डियाँ) निवास कर रही थीं। (२९) वे ढाल जो लोल थीं, और हिलती हुई थीं [आने को] द्रुम, बतला रही थीं। (३०) जो हंस (प्राण) नष्ट होकर निकले रहे थे, वे ही वे हंस थे जो अपने सुंदर घरों को जा रहे थे। (३१) पाणि, जङ्घ, घड़ [शरीर से] अलग पड़े हुए थे; (३२) [वे ऐसे लगते थे] मानो [उस सरोवर के] मच्छ-कच्छ हों जो उसके तीर (तट पर) तैर रहे हों। (३३) [कटे हुए] सिर सरोज थे, और कच शैवाल थे; (३४) अंतड़ी लिए हुए जो गिद्धिनी थी, वही उस सरोवर पर शोभित मराली थी। (३५) उस [सरोवर] का रम (शब्द पूर्ण ?) रक्त तट चीरों से भरा हुआ था; (३६) कितने ही [उन में से] श्याम और श्वेत तथा कितने ही नील और पीत थे। (३७) वे सुभट गण सुन्दर अगागों [को प्राप्त कर उन] का विलास कर रहे थे, (३८) जितनों ने (जिन्होंने) अपने शरीर को स्वामि कार्य में समर्पित किया था। (३९) [वहाँ पर] हाथी काल के यम जाल के समान थे। (४०) इतने युद्ध के अनंतर भानु अस्तमित हो रहा।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

० चिह्नित चरण धा. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. उवं मोरियं। २. मो. रायं प्रथिराज, शेष में 'राज प्रिथिराज'। ३. मो. ना. वागं, शेष सभी में 'पग्ग'।

(२) १. धा. अड्डिय, फ. उड्डिया, म. उ. स. वरं बड्डियं। २. मो. लग्ग, शेष में 'लग्ग'।

(३) १. धा. ना. पथ, म. उ. स. मनो (मनौ—म.) पथ्थ। २. अ. मारथ्थ, ना. म. पारथ, शेष में 'पारथ्थि'। ३. अ. भरि, शेष में 'हरि'। ४. धा. हेम। ५. धा. जिग्गे।

(४) १. मो. पुलियं, धा. ना. खोलियं, म. मनो लखियं, उ. स. मनो पोलियं, शेष में 'पोलिय'। २. धा. खड्‌डौन, अ. फ. पंडुल्लन, म. उ. स. खड्डून, ना. मंड्यौन।

(५) १. मो. उड्डियं, धा. अ. ना. उट्ठियं, म. उठियं रन, उ. स. धरं उट्ठियं। २. धा. ना. साजे, मो. सागे, म. सजे, अ. उ. स. सज्जे।

(६) १. मो. पोलियं संघ सद्दय लागे, धा. रोहिया सिंघ साहल्य आजे, अ. फ रोहियं सिंघ साहय्य छज्जे, म. उ. स. तव पोलियं पग्ग साहस्य रज्जे, ना. पोलिय पग्ग साहाय्य राजे (तुलना० चरण ४)।

(७) १. म. उ. स. सुरं वाननं। २. अ. झोररा धंधु, फ. भार रायंगु, ना. पगरा बीर बीर। ३. उ. स. बज्जे, अ. फ. म. बज्जे।

(८) १. मो. मनु (=मनउ), धा. मनो, अ. फ. मनी, ना. मनुं (=मनउ)। २. म. आग में। ३. मो. मेह, शेष में 'मेघ'। ४. अ. फ. म. गज्जे।

(९) १. उ. स. मिले लोह हथ्य, ना. म. मिले जो धहथ्थ। २. धा. न लगे हंकारे, अ. फ न लगे ककारे, मो. न इच्छे हंकारे, म. उ. स. झुरथ्थ हकारे, ना. ति वथ्थं हकारे।

(१०) १. धा. उडे, म. अ. फ. ना. उडे, उ. स. उडुं। २. स. सकंसार।

(११) १. मो. कट, धा. कट्टे, अ. फ. ना. उ. स. कटै, म. कटे। २. यह शब्द मो. में नहीं है।

बहइ*[१] बान कम्मान[२] दीसं[३] न भानं । (२३)
भमइ*[१] सिध्धनी गिध्ध[२] पावै न जानं[३] ॥ (२४)
हलि पेत रत्त[१] परंतं[२] करारं[३] । (२५)
बोलि[१] कंठ कंठी[२] न लग्गी[३] उभारं । (२६)
सरं[१] श्रोणि[२] रंगं पलं पारि[३] पंकं[४] । (२७)
वजइ*[१] मंस पंचि गंधि वासि[२] वरंकं[३] ॥ (२८)
दुमं ढाल लोलंति हालंति देसं[१] । (२९)
गये हंस नंसीय गेहे सुवेसं[१] । (३०)
परे पांनि जघ[१] घरंगं निनारे[२] । (३१)
मनउ*[१] मच्छ कच्छ[२] तरे तीर भारे[३] ॥ (३२)
सिरं सा सरोज[१] कचे[२] सा सिवाली[३] । (३३)
गहे[१] ग्रंत ग्रघ्घी[२] सु सोहै[३] मराली[४] । (३४)
तटं[१] रंग रत्त[२] भरंतं[३] विचीरं[४] । (३५)
कतं स्याम स्वेतं[१] कतां[२] नीरं[३] पीरं[४] ॥ (३६)
सुरे[१] श्रंग श्रंगे[२] सुरंगे[३] सुभट्टं । (३७)
जिते[१] स्वामि[२] कज्जे[३] समप्पे सुघट्टं[४] । (३८)
काल[१] जम जाल, हथ्थी[२] समानं[३] । (३९)
इत्तने[१] जुध्ध ग्ररतमित भानं[२] ॥ (४०)

अर्थ—(१) राजा पृथ्वीराज ने बाग (लगाम) मोड़ी, (२) तो [उसका] रोष उठा और बा
आकाश से जा लगा, (३) [जिस प्रकार] पार्थ महाभारत में अहं भाव (?) से भर कर जाग पड़े थे
(४) और उनका खड्ग खांडव वन [को दग्ध करने] में लग गया था। (५) शूर-सामंत तर्जि
होकर उठ पड़े, (६) और सिंह के समान लज्जित होकर उन्होंने हाथ खोले। (७) पंगराज के बा
बज उठे, (८) मानो आषाढ़ में मेघ आकर गज उठे हों। (९) योद्धा व्यस्त (अलग-अलग) मिले
और उन्होंने हाथों को हँकारा (वापस या पीछे बुलाया) नहीं, (१०) [उनके उठे हुए हाथ
गगन से जा लगे, और समान रूप से उन्होंने सार (शस्त्रास्त्र) झाड़े—चलाए। (११) कंधे, कबं
सघ—शरीर के जोड़—कट कट कर अलग जा पड़े (१२) और वे जग (रण) के रंग स्थल में पे
जा पड़े जैसे मत वाले [पड़े] हों। (१३) सांभर राज (पृथ्वीराज) के द्वारा सारे सार (शस्त्रास्त्र
झाले गए। (१४) [किन्तु जयचंद पक्ष के योद्धा उसी प्रकार नहीं हिले] जैसे अखाड़े में जुटे हु
मल्ल नहीं हिलते हैं। (१५) जब इस प्रकार हार कर भी वे हिल नहीं रहे थे, और किसीने प्रचा
(ललकारा), (१६) तब अति मदमत्त हो कर कन्ह कुपित हुआ। (१७) जब उसने हाथों
दुधारे की मार दी, (१८) तो [गजों के] कुंभ फूट कर झूमने (झूलने) लगे, और भारी निशा
(धासों) बजा। (१९) दंतियों (हाथियों) के शुण्ड [कट] गए और उनके दाँत [इस प्रकार
उखाड़ लिए गए (२०) मानो गिहुनी ने कंदल [लता] के कंद उखाड़े हों। (२१) मारों के
पाडुर वेष में [इस प्रकार] पड़े हुए थे (२२) मानो किसी योगिनी का योग [—यंत्र] दिखाई

रहे हों। (२३) कमान (धनुष) बाण प्रवाहित कर रहे थे। [जिसके कारण] भानु नहीं दिखाई पड़ रहा था। (२४) [योद्धाओं के गिरने के कारण] गिद्धिनी और गिद्ध [इधर-उधर] चक्कर काट रहे थे, और [वहाँ शवों के पास] जाने नहीं पा रहे थे। (२५) उस रक्त [वर्ण के] क्षेत्र में शोर करते हुए कराल पक्षी (काग) विचरण कर रहे थे, (२६) [जिसके कारण] कंठी (कोकिल) बोल करके कंठ नहीं उमाड़ (खोल) रहे थे। (२७) शोणित का वह रंग-रूप एक सर [बन गया] था, जिसमें पल (मांस) का पंक पड़ा हुआ था, (२८) [जिसमें और भी] मांस जा रहा था, दुर्गंधि खिंच रही था, और करंक (हड्डियाँ) निवास कर रही थीं। (२९) वे ढाल जो लोल थीं, और हिलती हुई थीं [अपने को] द्रुम, बतला रही थीं। (३०) जो हंस (प्राण) नष्ट होकर निकले रहे थे, वे ही वे हंस थे जो अपने सुंदर घरों को जा रहे थे। (३१) पाणि, जंघ, धड़ [शरीर से] अलग पड़े हुए थे; (३२) [वे ऐसे लगते थे] मानो [उस सरोवर के] मच्छ-कच्छ हों जो उसके तीर (तट पर) तैर रहे हों। (३३) [कटे हुए] सिर सरोज थे, और कच शैवाल थे; (३४) अंतड़ी लिए हुए जो गिद्धिनी थी, वही उस सरोवर पर शोभित मराली थी। (३५) उस [सरोवर] का रम (शब्द पूर्ण ?) रक्त तट चीरों से भरा हुआ था; (३६) कितने ही [उन में से] श्याम और श्वेत तथा कितने ही नील और पीत थे। (३७) वे सुभट गण सुन्दर अगारों [को प्राप्त कर उन] का विलास कर रहे थे, (३८) जितनों ने (जिन्होंने) अपने शरीर को स्वामि कार्य में समर्पित किया था। (३९) [वहाँ पर] हाथी काल के यम जाल के समान थे। (४०) इतने युद्ध के अनंतर भानु अस्तमित हो रहा।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण फ. में नहीं है।

० चिह्नित चरण धा. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. दवँ मोरिय। २. मो. राय प्रथिरान, शेष में 'राज प्रिथिराज'। ३. मो. ना. वागं, शेष सभी में 'वग्ग'।

(२) १. धा. अड्डिय, फ. उड्डिया, म. उ. स. वरं वड्डियं। २. मो. लग्ग, शेष में 'लग्ग'।

(३) १. धा. ना. पंथ, म. उ. स. मनो (मनौं—म.) पथ्य। २. अ. भारथ्य, ना. म. पारथ, शेष में 'पारथ्थि'। ३. अ. भरि, शेष में 'हरि'। ४. धा. हेम। ५. धा. जिग्गं।

(४) १. मो. पुलियं, धा. ना. खोलियं, म. मनौ लषिणं, उ. स. मनो पोलियं, शेष में 'पोलिय'। २. धा. खाड्योन, अ. फ. पंडुव्वन, म. उ. स. खड्डून, ना. मंड्षीन।

(५) १. मो. उड्डियं, धा. अ. ना. उड्डियं, म. उडियं रन, उ. स. मरं वट्ठियं। २. धा. ना. ताजे, मो. तागे, म. तज्जे, अ. उ. स. तज्जै।

(६) १. मो. पोलियं संध सहय लागे, धा. 'रोहिया सिध साहस्थ आने, अ. फ. छोहियं सिध साहय्य छज्जे, म. उ. स. तत्र पोलियं पग्ग साहथ्य रज्जै, ना. पोलिय पग्ग साहत्थ राजै (तुलना० चरण ४)।

(७) १. म. उ. स. सुरं वाप्पनं। २. अ. दोररा पंगु, फ. भाट रापंगु, ना. पगरा बीर बीर। ३. उ. स. बज्जे, अ. फ. म. बज्जे।

(८) १. मो. मनु (=मनउ), धा. मनो, अ. फ. मनी, ना. मनुं (=मनउ)। २. म. भाग में। ३. मो. नेह, शेष में 'मेघ'। ४. अ. फ. म. गज्जे।

(९) १. उ. स. मिले लोह हथ्यं, ना. म. मिले जो पहथ्य। २. धा. न छभो हंकारे, अ. फ न छभो करारे, मो. न हच्छे हंकोरे, म. उ. स. सुरथ्यं हकारे, ना. ति वथ्यं हकारे।

(१०) १. धा. उडे, म. अ. फ. ना. उडे, उ. स. उडं। २. स. सकमार।

(११) १. मो. कट, धा. कट्टे, अ. फ. ना. उ. स. कट्टं, म. कटे। २. यह शब्द मो. में नहीं है।

३. धा. कंबंध, ना. कम्धंध । ४. मो. संधे, म. संधि, शेष में 'संधं' । ५. अ. म. उ. स. निनारे, ना. मितारे ।

(१२) १. मो. मनु, ना. मनुं (=मनउ), अ. फ. म. मनौं ।

(१३) १. धा. झरे, मो. जुरे, म. उ. स. झरं, फ. झरें । २. धा. अ. फ. राइ, म. उ. स. राव । ३. अ. फ. सा, ना. सुं (=सउं), म. उ. स. सो । ४. फ. मार । ५. ना. म. उ. स. हारे ।

(१४) १. जुरं । २. मो. हलि (=हलइ) धा. अ. फ. हल्लें । ३. धा. ते, मो. जे, म. ज्यौं, शेष में 'ज्यों' ।

(१५) १. धा. जीवे हारि हल्ले, मो. जुरे हइ हलि (=हइइ), ना. म. उ. स. जवै हार (हारि—ना.) मन्ने (मंने—म.), अ. फ. जवै हारि हल्लै । २. धा. चो, म. का ।

(१६) १. अ. फ. दयें, ना. दवें । २. अ. फ. वोपियो । ३. धा. कोस । ४. मो. नीसान (तुल० चरण १४) म. में सत । ५. धा. मारे ।

(१७) १. अ. फ. जहां । २. अ. फ. मध्ये, म. ना. दयं ।

(१८) १. अ. फ. कटें, म. उ. स. फूटे, ना. फटें ।

(१९) १. धा. गये, अ. फ. लें, उ. स. गहे, ना. म. गहे । २. ना. दंडहि । ३. धा. दता उपारे, ना. दंता उमारे, म. दंतौ उमारे, अ. फ. दंती उपारे ।

(२०) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनु (=मनउ), म. मनौ, शेष में 'मनो' । २. अ. कंदरा, म. कदरा । ३. मो. विडी, ना. माली (< मीली), म. उ. स. मीलं ।

(२१) मो. परं पंडरे, उ. स. परे पंगुरें, म. अ. परे पत्तरं । २. ना. भेस से, उ. स. पंडुरे, म. पंगुरं । ३. फ. मीसं ।

(२२) १. मो. मनु (=मनउ), ना. मनुं (=मनउ) अ. फ. म. मनौ, शेष में 'मनो' । २. धा. जोगिनी जोट, मो. योगिनी योग, अ. जोगिनी पत्र, फ. जोगिनी जत्र । ना. जोगीयं जोग, म. स. जोग जोगीय, उ. जोगि जोगीय । ३. अ. फ. लगंत दीसं, ना. म. उ. स. लागत रीसं ।

(२३) १. मो. वहि (=वहइ), धा. ना. म. अ. फ. वहै । २. मो. में यह शब्द नहीं है । ३. ना. सुजई ।

(२४) १. मो. भमि (=भमइ), अ. फ. भमें, म. उ. स. भ्रमै । २. धा. ग्रिझणी गिद्ध, अ. फ. गिद्धिनी गिद्ध (गिद्धि—फ.), म. उ. स. गिद्धनी (ग्रिद्धनी—म.) गिद्ध । ३. म. उ. स. में यहाँ और है (सं. पाठ):

> लगे रोह रत्ते अरत्ते करारं । मनो गज्जियं मेघ फट्टे पहारं ।
> दई कन्ह चहु आन भरि पील सीसं । कही चंद कव्वी उपम्मा जगीसं ।
> तितं भंग संधी महापील मध्यं । मनो पंचियं द्रोन वरबाय पुत्तं ।
> किधौ पंचियं राम हथिना पुरेसं । किधौं पंचियं मथन गिरि सुर सुरेसं ।
> किधौं पंचियं कन्ह गिरि गोपि काजं । भरी सीस ऐसी सुभट्टं विराजं ।

(२५) १. धा. रुले पेत रत्तं, मो. रुलि पेत रत्तं, अ. फ. रुलें पेत अंसं, ना. म. उ. स. रूरे (रुरे—म.) पेत रत्तं । २. ना. सरत्तं, म. उ. स. सुरत्तं । ३. मो. भिरार, शेष में 'करारं' ।

(२६) १. मो. वोलि धा. घुले, अ. फ. घुलें, उ. स. घुरें, म. घुरे, ना. घुरे । २. धा. संठी । ३. धा. लंगी, ना. लग्गें, म. लागें ।

(२७) १. धा. अ. फ. ना. सरं, म. उ. स. सुरं । २. धा. सोन, अ. फ. श्रौन, ना. म. श्रोन, उ. श्रोन । ३. धा. पार । ४. ना. वंकं ।

(२८) १. मो. वजि (=वजइ), म. वजे, ना. वजै । २. धा. मंस नसं सुवंसे, मो. मंस पंचि गंधि वासि, अ. फ. वंस नंसं सवंसे (वंसे—फ.), ना. म. उ. स. मंस (वेस—म.) नेसं सुवंसं (सुवेसं—म. उ. स.) । ३. ना. वरकं ।

(२९) १. मो. दुमि दाल लालंति हालंति देसं, धा. दुमं दाल लोलंति हालं सुदेसं, अ. फ. दुमं

(पुर्म-फ.) हठि दालंति हाल सुदेसं ना. म. उ. स. द्रुमं (समं-ना.) दाम दा सुलाल सुदेसं (सुदेसं-ना.)।

(३०) १. धा. अ. फ. हंस नासं लगे हंस वेसं, ना. म. उ. स. हंसु नंसी (हंसां-ना.) मिले (मिले-ना., मिलं-उ.) हंस वेसं।

(३१) १. ना. जंपद्द। २. अ. निन्यारे, फ. नन्यारे।

(३२) १. मो. मनु, ना. मनुं (=मनउ), म. मनौं, शेष में 'मनो'। २. धा. मरथ मत्थं। ३. धा. अ. फ. ना. तरंतीर भारे, उ. स. तिरंत उभारे, म. तिरफं उभारे।

(३३) १. मो. सरासंनं। २. मो. कचे, शेष में 'कच'। ३. अ. सिवालं, फ. सिवालं, ना. सबेलो।

(३४) १. धा. मद्दे, म. गद्दे। २. धा. म. उ. स. ना. गिद्धी, अ. फ. गिद्ध। ३. मो. सु सोहि (=सोहइ), धा. स सोमै, ना. स सोहै, अ. फ. सु सुंभै। ४. मो. ना. मराली, धा. मुराली, अ. फ. मराल, उ. स. मुनाली, म. म्रिनाली।

(३५) १. धा. वढं, म. तटे, अ. फ. टरं। २. मो. थरंतं, धा. रंतं, अ. फ. रोसं, म. उ. स. थंभं। ३. धा. मरतं। ४. धा. पिचारे, अ. फ. विचारे, ना. बचीरं, म. उ. स. बचीरं।

(३६) १. ना. पेतं। २. अ. फ. कुतं, म. उ. स. कितं। ३. म. नाल (< नील), धा. नील। ४. धा. फ. पारे।

(३७) १. धा. घरे, म. अ. फ. बरे, ना. परे, उ. स. वरे। २. अ. फ. अंनं। ३. मो. सुरंगे, धा. अ. फ. ना. म. उ. स. सुरंगं।

(३८) १. मो. जित, धा. जिते, ना. जितै, शेष में 'जिमो'। २. ना. स्याम, म. सामि। ३. मो. कातो। ४. मो. श्रमं पं, धा. अ. फ. ना. समप्प (समप्पै-अ. फ.) सुघट, म. समपे जु घटं।

(३९) १. धा. अ. फ. तहां काल, म. उ. स. तिते। २. मो. हाथी, धा. म. अ. फ. हथ्थी, ना. हस्सी। ३. धा. मसागं।

(४०) १. धा. अ. फ. भयो हत्तने, हुअे हत्तने, म. हुअं हतने, ना. हत्तनी। २. धा. अस्तमित भाणं, अ. अस्तंम जान फ. अस्तं म भानं।

टिप्पणी—(१) वग्ग < वल्गा=लगाम। (२) आयास < आकाश। (३) पथ्थ < पार्थ। होम < अहं (?) (४) षग्ग < खड्ग। (५) तानै < तनित। (८) मेह < मेघ। गाज < गर्ज। (९) वथ्थ < व्यस्त=अलग। (१०) गयन < गगन। (१४) अषारा < अक्खाडग < अक्ष वाटक। (२२) दीस < दृश। (२८) वज्र < वज्र। (२९) दुम < द्रुम। देस < देशय्=कहना, बतलाना। (३३) सिवाली < शैवाल। (३४) अत < अंत=आंत। (३६) कत < कति < कियत्=कितना। (३७) सुर=विलास करना।

[१८]

गाथा— निसि[१] गत बंछीय[२] मानं चक्की[३] चकाय सूर सा चित्त[४] । (१)
विधु[१] संयोग वियोगे[२] कुमुदिनि[३] कली[४] कातरा थारा[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) जिस प्रकार चक्की और चक्रवाक निशा के गत होने पर भानु [के आगमन] की वाञ्छा करते हैं, उसी प्रकार शूरों का चित्त था, और (२) जिस प्रकार वियोग में कुमुदिनी कलिका विधु-संयोग [की वाञ्छा करती है], उसी प्रकार कायर नर [उसकी वाञ्छा] कर रहे थे।

पाठान्तर—(१) १. म. निस। २. मो. वथोय, धा. छछिअ, अ. फ. वंछहि,-म. बंछिय (< बंछिय), उ. स. बंछिअ। ३. धा. चकाइ, ना. चक्कीय। ४. धा. सा रयनी, फ. सा रयनी, अ. सूर मार भनी।

(२) १. मो. विधि, धा. ना. अ. फ. म. उ. स. विधु (विध-म.)। २. धा. संजोगे, अ. फ. वियोगो,

ना. दिजोगी, ना. म. उ. स. वियोगी। ३. मो. कुमदनि, फ. कुमुदिनी, म. कुमुद, ना. कुमुदिन। ४. मो. कलि, धा. कलिके, अ. फ. तु, ना. कलिकाइ। ५. धा. कंत राने, अ. फ. कातरा परा, म. उ. स. कातरा नार्न, ना. कातरानां।

[१९]

दोहरा— उभय सहस हय गय परित[१] निसि[२] निग्रह[३] गत[४] भांन। (१)
सात सहस[१] असि मीर हणि[२] थल[३] विटउ[*४] चहुआंन॥ (२)

अर्थ—(१) दो हजार अश्वों और गजों के गिरने पर भानु निशा के निग्रह-गत हो गया। (२) इसी प्रकार से सात हजार मीरों [की सेना] को मार कर चहुआन (कन्ह) ने रण-स्थल को वेष्टित कर दिया (पाट दिया)।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. ना. म. उ. स. परिग। २. म. निस। ३. धा. अ. आगत, फ. आगति। ४. मो. स।

(२) १. धा. सत सहरस, म. सहस सत, ना. उ. स. सत्त सहस। २. म. उ. स. अस मीर हनि, ना. अस मर हनी। ३. मो. थलि, उ. थल बिल, शेष में 'थल'। ४. मो. विट्ठ (=विटउ), धा. विट्यो, ना. म. अ. फ. विट्यो।

टिप्पणी—(२) विंट < वेष्ट्=वेष्टन करना।

[२०]

कवित— परउ[*१] गंजि[२] गहिलुत्त[३] नाम[४] गोविंद[५] राज[६] वर। (१)
दाहिम्मउ[*१] नरसिंघ परउ[*२] ना गवर[३] जास घर। (२)
परउ[*१] चंद पुंडीर[२]‡ चंद‡ पेक्खो[३] मारंतउ[*४]। (३)
सोलंकी सारंग[१] परउ[*२] असि बर[३] झारंतउ[*४]। (४)
कूरंभ राय[१] पालन्ह देउ[२] बंधव[३] तीन निघट्टिया[४]। (५)
कनवज्ज[१] राडि[२] पहिलइ[३] दिवसि[४] सउ मइ[*५] सत्त[६] निवट्टिया[७]॥ (६)

अर्थ—(१) [रण क्षेत्र में] वह गुहलौत गंजित होकर (मारा जाकर) गिरा जिसका श्रेष्ठ नाम गोविंदराज था। (२) दाहिमा नरसिंघ पड़ा जिसकी धरा नागौर थी। (३) चन्द्र पुंडीर गिरा, जिसको चंद ने मार काट करते देखा था। (४) सोलंकी सारंग पड़ा, जो श्रेष्ठ असि (तलवार) झाड़ (चला) रहा था। (५) कूरंभ राजा पाल्हन देव के तीन बांधव घट गए (मरे)। (६) इस प्रकार कन्नौज-युद्ध में प्रथम दिवस सौ [राजपूतों] में सात समाप्त हो गए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. परु (=परउ), धा. पर्‌यो, ना. म. पर्‌यौ, शेष में 'पर्‌यें'। २. धा. गज, मो. म. गंज, अ. गय, फ. गंधि, ना. स. गंजि। ३. मो. गहिलुत, धा. गुहिलोतु, फ. गुहिलोत, ना. गहिलोत,

अ. म. उ. स. गहिलौत। ४. धा. राम। ५. धा. ना. गोइंद, म. उ. स. गोयंद। ६. धा. जासु।

(२) १. मो. दाहिमु (=दाहिमउ), शेष में 'दाहिम्मौ' (दाहिम्मो—धा.)। २. मो. परू (=परउ), धा. पलौ, शेष में 'परयौ'। ३. धा. मो. नागवर, शेष में 'नागौर'।

(३) १. मो. पर (=परउ), शेष में 'परयौ'। २. धा. पठर। ३. मो. पेखो (=पेक्खो), धा. दिट्ठयौ, अ. फ. म. ना. उ. स. पिख्यौ। ४. मो. मारंतु (=मारंतउ), धा. मारंतो, शेष में 'मारंतौ'।

(४) १. धा. अ. फ. सोनकी सारंग, ना. सालकी, सिरदार। २. मो. पर (=परउ), शेष में 'परयौ' (धा. परो)। ३. मो. असमर, शेष में 'असि वर'। ४. मो. झारंतु (=झारंतउ), धा. झारंतो, शेष में 'झारंतौ'।

(५) १. धा. कुरम्भ राइ, मो. कोरंभ (< कुरंभ) राय, ना. फ. कूरम्भ राउ, शेष में 'कूरंभ राव'। २. मो. पालन देउ, अ. फ. पज्जून सौ, ना. पाल्हननंद, म. पाजन दे, शेष में 'पाल्हन दे'। ३. धा. बंध्यो। ४. धा. तिन्न तिहिट्टिया, अ. तिकट्टिया, फ. कट्टिया, म. उ. स. सु कट्टिया, ना. निवट्टिया।

(६) १. मो. कनज, शेष में 'कनवज्ज'। २. धा. मो. राडि, शेष में 'रारि'। ३. म. पहिलि (=पहिलइ), धा. पहिलइ, ना. अ. म. फ. पहिल। ४. धा. मो. ना. दिवसि, शेष में 'दिवस'। ५. मो. सुमि (=सउमई), धा. सउमइ, अ. फ. म. ना. उ. स. सो मैं (सौमे—स.)। ६. मो. अ. फ. सात, धा. सत्त। ७. धा. निघट्टिया।

[२१]

कवित्त— *अध्ध रयणि[१] चंदनी[२] अध्ध[३] अग्गइ[*४] अंधियारी[५]। (१)*
*भोग भरणि अष्टमी सुक्रवारइ[*१] सुदि रारी[२]।+(२)*
*च्यारि[१] जाम जंगलीराय[२] निसि[३] निद्द न पुट्टउ[*४]। (३)*
*थल विंटउ[*१] कमधज्ज रहउ[*२] कंदल आहुट्टउ[*]। (४)*
*दस कोस कोस[१] कनवज्ज तइ[*२] कोस कोस अंतरि[३] अनी[४]। (५)*
*बाराह रोह निमि पारधी[१] इम रोकउ[*२] संभरि[३] धनी[४]॥ (६)*

अर्थ—(१) आधी रात [तक] चाँदनी थी, आगे की आधी [रात] अँधेरी थी। (२) भरणी (नक्षत्र) का योग था, अष्टमी की तिथि, शुक्रवार और शुक्ल पक्ष थे, जब रार (लड़ाई) हुई। (३) चार पहर रात्रि तक जांगल-नरेश (पृथ्वीराज) ने नींद नहीं छूटी। (४) कमधज्ज (जयचंद) ने रण स्थल वेष्टित कर दिया (पाट दिया) और युद्ध में अधिस्थित (?) रहा। (५) कन्नौज से दस कोस की दूरी तक उसने कोस-कोस के अन्तर पर सेना लगा दी और (६) बाराह को जिस प्रकार शिकारी रुद्ध करता है, इसी प्रकार उसने साभरधनी (पृथ्वीराज) को रुद्ध किया।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।

(१) १. म. रयन, अ. रैनी, फ. ना. रैन। २. अ. चदिनी, फ. म. चंदनीय। ३. मो. अरध, शेष में 'अद्ध' या 'अध्ध'। ४. धा. फ. म. उ. स. अग्गै, ना. अग्गे, मो. आगि (=आगइ), अ. अग्गे। ५. म. अंधारीय।

(२) १. मो. सुक्रवारि (=सुक्रवारइ), धा. वार मगल, अ. फ. सुकवारे (सुकारे—फ.), उ. स. सुक्रवारह, म. सुक्रवा। २. म. रारीय।

(३) १. धा. चार, ना. पारि, फ. चारि। २. धा. जंगली राउ, अ. फ. जंगलों रह्यौ, ना. म. उ. स. जंगलों (जंगलीय—म.) राव। ३. अ. तहं, फ. तिह। ४. मो. निद न पुट्ठ (=पुट्टउ), धा. नींद न, छुट्यौ, अ. फ. नींद (निंद) न छुध्या, ना. निंद न पौट्यौ, म. निंद न पुट्यौ, उ. स. निंद न छुट्यौ।

(४) १. धा. विद्यौ, मो. विंद्ध (=विंदउ), ना. विटं, अ. फ. विंद, म. उ. स. विंद्यौ। २. मो. रह (=रहउ), धा. रह्वो, अ. फ. ना. म. उ. स. रह्यौ। ३. मो. ना. कमधज्ज, शेष में 'चहुवान'। ४. मो. आहुट्ठ (=आहुटउ), धा. म. उ. स. आहुट्यौ, ना. आट्यौ, अ. फ. आहुथा।

(५) १. अ. फ. कोस अंत, ना. कोस कोस कोस। २. मो. ति (=तइ), धा. ते, ना. तैं, म. तै, शेष में 'ते'। ३. फ. अंतरि, शेष में 'अंतर'। ४. म. अनीय।

(६) १. अ. निमि पारथी, फ. जिस पारथी। २. मो. रोकु (=रोकउ), धा. अ. फ. म. ना. उ. स. रुक्यौ। ३. ना. सैंभरि। ४. म. धनीय।

टिप्पणी—(१) रयणि < रजनी। (२) निद < निद्रा। (४) विंद < वेद्दय। आहुट्ट <अधिष्ठित (?)। (६) रोह < रुध्।

[२२]

रासा— *मित्तः महोदधि मज्झ[२] दिसंत[३] ग्रसंत[४] तम[५]। (१)*
पथिक[१] वधू पथि[२] दिट्ठ[३] अहुट्टिय[४] चंग[५] जिमि। (२)*
जुव जन जुवती गंजि°[१] सुमत्ति अनंग भय[२]। (३)
जिम[१] सारस रस+ लुध्ध[२] त° मुध्ध मधुप्प लय[३]। (४)

अर्थ—(१) मित्र (सूर्य) महोदधि के मध्य [जा चुके] थे, दिशाओं को तम ने ग्रस लिया था, (२) पथिक-वधू की दृष्टि [प्रियतम के] पथ में उसी प्रकार अधिष्ठित (?) थी जैसी [खिंची हुई] चंग (पतंग) होती है, (३) युवाओं और युवतियों की सुमति अनंग-भय से [उसी प्रकार] नष्ट हो चुकी थी (४) जिस प्रकार रस लुब्ध सारस की अथवा [मधु—] मुग्ध मधुप की हो जाती है।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

° चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. धा. मत्त। २. धा. मज्झि, अ. फ. मंझ, ना. मध्य। ३. धा. दीसत। ४. धा. ना. अ. ग्रसंत, फ. ग्रसंति। ५. म. फ. तिम, ना. इम।

(२) फ. पियग, ना. पथिग। २. धा. मो. पथ, फ. पंथिह। ३. धा. द्रिस्टि, अ. द्रिष्टि, ना. दिट्टि, फ. दिष्ट, म. द्रष्टि। ४. मं. अहोटीय (< अहुटीय)। ५. धा. जग।

(३) १. मो. जुव जन जुवनी (=जुवती) गजि, धा. जिम जुव जुवतिन गत, ना. जुव्वन जुवतिनि गत्ति, अ. फ. जुव्वन जुवनी रत्ति (रत—फ.), म. उ. स. जुव जन जुवतिन गंजि (गज्जि—म.)। २. धा. मत्त अंदं गुले, मो. सुमंत अनंग भय, अ. फ. सुदृष्टि (दिष्ट—फ.) अप्पनउ, ना. सुमत्ति अनंग लौ, म. उ. स. सुमंति (सुमंत—म.) अनंग लिय।

(४) १. अ. फ जिमि। २. फ रस लुध्ध। ३. धा. स मुंध मधुप्प ले, मो. मुध मधुप्प यल, अ. फ.

जु मद्धु मधुप लउं, ना. समुद्र मधुप्प लौं, म. समुद समुधतिय, उ. सुमधु मद्धु तिय, स. समुद्दह मध्धु तिय।

टिप्पणी—(१) मित्त < मित्र=सूर्य (२) अहुट्ठिय < अधिस्थित (?)। (४) लुध्ध < लुब्ध। मुध्ध < मुग्ध।

[२३]

रासा— येचरह कउ* उयउ* इंदु[१] इंदीवर उद्दयउ*[२] । (१)
नव विरही[१] नव नेह नव जल नय रुद्दउ*[२] । (२)
भूषन[१] सोभ[२] समीपनि[३] मंडित‡[४] मडि तन[५] । (३)
मिलि मृदु मंगल[१] कीन मनोरथ सव्व मन ॥ (४)

अर्थ—(१) आकाशचरों (तारिकाओं) के [हर्ष के] लिए इंदु का उदय हुआ, और इंदीवर (नील कमल) उदित हुआ (खिल गया)। (२) नव विरही (पृथ्वीराज और संयोगिता) नव स्नेह के नव जल (अश्रु) का रुदन कर रहे थे। (३) उन्होंने [इसलिए] आभूषणों को समीप ही शोभित होने दिया, उनसे शरीर का मडन नहीं किया। (४) केवल [दोनों ने] मिलकर मृदु मंगल किया, और मन में सभी प्रकार के मनोरथ किए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. मो. षेचरह कु (=कउ) उयु (=उयउ) इंदु, धा. अ. फ. परह चाए चें इंदु, ना. पहह चाए रवि इंदु, उ पह चारुचि इंद, म. स. पह चारु रुचि (अचि–म.) इद (यंद–म.)। २. मो. इंदीवर उदयु (=उदयउ), धा. अ मदियवर उदय, अ. फ. जु इंदीवर मुदय, म. उ स. इंदीवर (इद्रीवर–म.) उदयौ, ना. इंदुवर उदय।

(२) १. धा. विरहिनि, म. विरहा, उ. स. विहार। २. मो. नव जनय मन रुदयु (=रुदयउ), धा. अ. फ. नवजलु (नव जल–अ. फ.) नवं रुदय, म. उ. स. नवजल रुदयौ, ना. नव जल ने रुदय।

(३) १. अ. फ. भीषम। २. मो. सोम, शेष सभी में 'सुम्भ'। ३. धा. अ. म. समीपन, फ. समीपनु, ना. महिपन्न। ४. धा. मडनु, अ. फ. मंडिय। ५. धा. मडि तनु, म. अ. फ. गडि तन, उ स. गड तन।

(४) १. धा. मुद मंगल, अ. मुदु मंग।

टिप्पणी—(२) रुदय < रुद्=रोना।

[२४]

श्लोक— यतो[१] नीरे[२] ततो[३] नलिनी[४] यतो नलिनी ततो नीर[५] । (१)
त्यजति गहं न यत्र गहनी[१] यतो गहनी ततो गह[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) जहाँ नीर होता है, वहाँ नलिनी होती है और जहाँ नलिनी होती है, वहाँ नीर होता है; (२) वह गृह त्याग दिया जाता है जहाँ गृहिणी नहीं होती है, [अतः] जहाँ गृहिणी होती है, वहाँ गृह होता है।

पाठान्तर—(१) १. अ. फ. जेतो, म. जित, उ. स. जित। २. धा. नलिनी। ३. म तित। ४. धा. नीर। ५. धा. अ. फ. यतो (जेतो–अ. फ.) नीर ततो नलिनी (देखिए चरण का पूर्वार्द्ध), म. जतं

नलिनी तितं जऊं ।

(१) १. धा. यत्र गेह गेहिनी तत्र, मो. रयजति ग्रह न यत्र ग्रहनी, अ. फ. ति जंत (जति–फ.) ग्रेह ग्रेहनी जत्र, म. उ. स. जतो गृह (जितो ग्रह–म., जतो ग्रह–उ.) ततो (तितो–म.) ग्रहिणी, (ग्रहनी–म.), ना. जत्र गेह ततो ग्रहनी । २. धा. यत्र गेहिनी तत्र गृह, अ. फ. जत्र ग्रहनी तत्र ग्रह, म. उ. स. जत्र गृहिणी (ग्रहनी–म.) ततो गृह (ग्रह–म.), ना. जत्र गेहनी ततो गृह ।

[२४]

कवित— दिनिअर सुय दिन जुध्ध[१] जूह[२] चंपइ[३] सामंतन[४] । (१)
भर[१] उप्परि[२] भर[३] परहिं[४] परइ* धरहि[५] धावंतन[६] । (२)
दल दंतिय[१] विच्छुरहिं[२] हय जुहय हय[३] कननंकइ*[४] । (३)
अच्छिर[१] वर[२] हर[३] हार धीर धारा[४] झननंकइ*[५] । (४)
जय जय जु[१] घंट[२] जोगिनि[३] करहिं[४] करि कनवज[५] ढिल्ली वयर[६] । (५)
सामंत[१] पंच पेतह[२] परिग[३] गिरइ*[४] मंति[५] गए[६] बिप्पहर[७] ॥ (६)

अर्थ—(१) दिनकर-सुत (शनि) के दिन युद्ध में [पृथ्वीराज के] सामंतों ने [शत्रु के] यूथों को दबाया। (२) भट के ऊपर भट गिरने लगे, और दौड़ते हुए [सैनिक] धरा पर गिरने लगे। (३) सेना के हाथी विछुड़ने–निकल भागने—लगे और हय (घोड़े) हिनहिनाने किनकिनाने लगे। (४) हर-हार में अक्षर (मोक्ष) का वरण कर धीर धीर तलवारों को झनझनाने लगे। (५) कन्नौज और दिल्ली के वैर [के उपलक्ष्य] में योगिनियाँ 'जय जय' करती हुई घंटों की ध्वनि कर रही थीं। (६) [पृथ्वीराज के] पाँच सामंत खेत रहे, और युद्ध में दो प्रहर हो गए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. दिनियर सवि दिव जुद्द, मो. दिनीअर सुयदिन जुध (=जुध), ना. अ. फ. दिन उग्गत (ऊगति–फ., ऊगत–ना.) भय (भौ–फ.) जुह (जुद्ध–फ., जुद्ध–ना.), म. उ. स. दिनयर सुअ दिन जुद्ध । २. मो. यूह (=जूह) । ३. मो. चंपि (=चंपइ), धा. चंपर, अ. फ. चंपै, म. उ. स. चपिय, ना. चंपिय । ४. धा. सावतहि, अ. फ. सावंतनि, मो. म. उ. स. सामंतन, ना. सामंतनि ।

(२) १. धा. पर । २. अ. फ. ना. उ. स. उप्पर । ३. धा. सर । ४. मो. परहि, धा. परइ, म. नरहि, उ. स. भर । ५. मो. परि (=परइ) धरहि, धा. ना. परहि उप्परि, अ. फ. धरइ (धरहि–फ.) उप्पर, म. उप्परि, उ. स. परिहि उप्पर, ना. परहि उप्पर । ६. धा. धावंतहि, अ. धावतनि, फ. धाव तिन, म. धावंतत ।

(३) १. धा. दंती, अ. फ. दंतीय, म. दतन, ना. दंतिनि, उ. स. दंतिन । २. फ. छिछुरहि । ३. म. छ । ४. धा. किननकति, मो. कननंकि (=कननंकइ), अ. फ. करनकहि, म. किननकइ, ना. म. उ. स. किन नंकहि (नकहि–ना.) ।

(४) १. धा. अ. ना. उ. स. अच्छरि, मो. अछिछर, फ. म. अछछर । २. धा. पर, अ. दरि, फ. दर, ना. वरि । ३. ना. हरि । ४. धा. धार धारनि, मो. धर धीरा, अ. फ. धार धरनिय, ना. धार धारणि उ. स. धार धारन, म. धार धार । ५. धा. झननंकति, मो. झननंकि (=झननंकइ), अ. फ. ना. झननकहि, म. झननंकइ, उ. स. झननंकहि ।

(५) १. फ. जय सु, ना. जया सु, दूसरा 'जय' फ. ना. में नहीं है, म. उ. स. जय जया, अ. फ. जय

जय हु । २. अ. फ. म. उ. स. सद । ३. मो. जोगिनि, धा. जुग्गिनि, शेष में 'जुग्गिन' या 'जुग्गिनि' । ४ धा. करइ, अ. कहदि । ५. धा. ना. म. उ. स. कलि वनवन, अ. फ. वनवज्जिय । ६. म. दिल्लिय वर ।

(६) १. अ. फ. सावत । २. धा. पित्तहि, मो. पेतइ, ना. म. उ. स. पिल्लइ, अ. मिरइ, फ. मिल्लहि । ३. धा. पथिग, फ. परि । ४. मो. भिरि (=भिरइ), धा. ना. म. उ. स. भिरत, अ. भरित, फ. रित । ५. ना. म. उ. स. पंच । ६. धा. भर, म. भय । ७. धा. विरहर, अ. फ. विप्पहर, उ. दुप्पहर ।

टिप्पणी—(१) दिनिअर < दिनकर । सुय < सुत । जुह < यूथ । (२) मर < मद । (४) अठिहर < अक्षर । (६) वि < द्वि ।

[२६]

गाथा— *विपहर[१] पहट्ट[२] परिध[३] हय गय नर मार सार[४] पंडेन*[५] । (१)
रहरोस पंग[१] भरिअं उध्धरियं[२] वीर विवेन[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) [जब] दोपहर प्रहृष्ट हुआ, मारी हय, गज, नर, तथा सार (शस्त्रास्त्र) के खड खड होने से (२) पंग (जयचंद) रभस् (उत्साह) युक्त रोष से भर गया, और वह वीर बव (?) के साथ निकल पड़ा ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. धा. फ. विपहर, अ. विपहरह, म. विपहर, उ. स. विप्पुर । २. धा. पहट्ट, मो. पाटह, ना. पट्टह, म. महुरति, उ. स. पहुरति, अ. पहट्ट, फ. पट्ट । ३. धा. परम, फ. परिध । ४. फ. सीर । ५. मो. पंनेन (< पंडेन ?), धा. अ. फ. ना. हत्थेन (हथ्थने—अ. फ.), म. उ. सत्थेन, स. नत्थेन ।

(२) १. मो. रोस रंग, म. उ. स. रग रोस, ना. रंग जेस । २. धा. ओधरिय, म. उ. स. उद्धियं, ना. उच्छीयं, अ. फ. उधरोयं । ३. मो. वीर व्यंवेन (=विवेन), अ. फ. चीर (चीर—फ.) विदेन, म. वीर बंधेन ।

टिप्पणी—(१) वि < द्वि । पहट्ट < पहट्ठ < प्रहृष्ट । (२) रह < रभस् । विव < ववनामक, धीर (?) ।

[२७]

कवित्त— *परउ*[*१] *माल चंदेलु जेन[२] धवली धर गुरजर[३] । (१)*
परउ[*१] *भान भट्टी[२] भुआल[३] थट्टा[४] धर[५] अग्गर । (२)*
परउ[*१] *सूर सामलउ*[*२] *जेन[३] बानो[४] मुधि[५] मुद्दह[६] । (३)*
हसउ[*] *तिनिहि[१] पंमार[२] जेन विरदावलि[३] अछिद्दह[४] । (४)*
निर्वान[१] धीर धार तनउ[*२] *रुक्कत हक नरेंद दल[३] । (५)*
पर धंत पच[१] भये विप्पहर[२] अगनित भंजि अभंग दल[३] ॥ (६)

अर्थ—(१) [युद्ध में] माल चंदेल गिरा जिसने गुर्जर धरा को धवलित किया, (२) भूपाल भान भट्टी गिरा जो थट्टा की धरा का अग्र (प्रमुख) था; (३) सामन्त सूर गिरा, जिसका बाना मुक्त मुग्ध था; (४) [वह परमार भी गिरा] जो उस पर हँसता था और जिसकी विरदावली 'अच्छ' थी, (५) धार का निर्वाण धीर भी [गिरा] जिसकी हाँक पर नरेन्द्र (जयचंद) का दल

रुक जाता था, (६) ये पाँच [जयचंद के] अभंग (न हटने वाले) दल के अगणित योद्धाओं भंजन करके दोपहर होते-होते तक पड़ (गिर) रहे।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. पडु (=पडउ), धा. परयो, शेष सभी में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. धा. जिन्ह, मो. जे अ. फ. जेनि (जैनि—फ.)। ३. मो. गुरजर, शेष सभी में 'गुज्जर'।

(२) १. मो. पर (=परउ), धा. पर्‌यो, शेष समो में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. म. मान भा फ. मान भट्टीय, स. मान भट्टी। ३. ना. भुवाल। ४. धा. घंटा, अ. फ. घट्टा। ५. धा. घर।

(३) १. मो. परु (=परउ) धा. पर्‌यो, शेष सभी में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. मो सामंत (=सामंत लउ), धा. सावरो, अ. सावरा, फ. साउरो, ना. म. उ. स. सामलो। ३. अ. फ. जेनि (जैनि फ.), ४. धा. बानो, मो. बानेत, अ. फ. वानो, ना. उ. स. वानै, म. बानह। ५. ना. मुषि, शेष मुष'। ६. धा. गुच्छहि, ना. म. उ. स. मच्छह।

(४) १. मो. हस्र (=हसउ) तिनिहि, धा. हसे जेतु, अ. फ. ना. हसं तिनहि, उ. स. हँसैं तेन, हसे तेम। २. धा. फ. पावारु, अ. पावार, म. उ. स. पंवार। ३. अ. फ. बिरद बाना दल (दलि—अ. ना. बिरदावलि। ४. मो. अछ्छिइ, धा. अच्छहि, म. अच्छरि, शेष में 'अच्छह'।

(५) १. ना. श्रीवान (< ग्रीवान)। २. मो. धार तनु (=तनउ), धा. धरवर धनुह, अ. फ. ध (धाउर—फ.) धनी, ना. धावन धनी, उ. स. धावर धनू, म. धावर धरह। ३. धा. नवतर एक नरिंद द मो. रुकत इक नरेंद दल, अ. फ. गन्यो त (ति—फ.) इक नरिंद दल, ना. हनै अनेक नरिंद दल, म. स. हनुय (धनुय—म., हनिय—उ.) नरिंद अनेक बल।

(६) १. धा. अ. फ. ए परत पंच, ना. इन भिरित पंच, उ. स. म. इन परत पंच। २. धा. मउ जुग प अ. फ. मय (मज—फ.) जुग पहर, ना. म. उ. स. मय (भय—ना.) विप्पहर। ३. धा. अगनित भं पंग बल, मो. अगनित भंजि अभंग दल, अ. फ. अगनित भंजि (भंज—फ.) अभंग पल, ना. म. उ. अगनित (अगनत—म., अगनं—उ.) भंजि असंष दल।

टिप्पणी—(१) घर < धरा। (२) अग्गर < अग्र। (३) मुच्छ < श्मश्रु=मूँछ। (६) वि < द्वि।

[२८]

कवित्त—चढउ[*1] सूर मध्यांन[2] पंगु परतंग गहन किय। (१)
पुर त[1] पेह[2] पह मिलित[3] स्रवन सुनिजे[4] सुलीय लिय[5]। (२)
तब नरिंद[1] जंगलीय कोह कढ्ढिय[2] सुवंक[3] असि। (३)
घर[1] धुम्मिलि[2] धुंधुलीय[3] मनहु वद्दल[4] दुतीय[5] ससि। (४)
अरि[1] अरुण रत्त[2] कउतिग[*3] कलह[4] भयउ[*5] न गवह[6] भितंस[7] भर। (५)
सामंतन घट[1] तेरह परिग नृपति सुपट्ठिय[2] पंच सर[3]॥ (६)

अर्थ—(१) सूर्य मध्याह्न में चढ़ा तो पंग (जयचंद) ने [पृथ्वीराज को] पकड़ने प्रतिज्ञा की। (२) खुरों से [उड़ी हुई] धूल आकाश से मिल रही थी, और श्रवणों से सुन पड़ता था—'लिया, लिया'। (३) तब जंगली नरेंद्र (जंगली राय) ने क्रोध-पूर्वक बां तलवार निकाल ली। (४) धूमिल और धुँधली धरा पर [वह इस प्रकार लगती थी] मा बादलों में द्वितीया का शशि हो। (५) [इस समय] शत्रु [पक्ष] के अरुण रक्त का कल कौतुक हुआ, किंतु वह भट भ्रम-भय से भीत (?) नहीं हुआ। (६) [पृथ्वीराज के] तेरह सा

गिर कर पड़ रहे [सात पहले मारे जा चुके थे—धा० २५६, पाँच फिर मारे गए थे—धा० २८९, एक यह जगली राय मारा गया], और नृपति (पृथ्वीराज) को भी पाँच बाणों ने विभूषित किया।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. चढ्ढ (=चढउ), धा. उ. स. चढयो, म. फ. चढ्ढयो, अ. चढ्ढउ, ना. चढ्यो। २. धा. उ. स. मध्यान्ह।

(२) १. धा. पभिर, अ. फ. पभरि, ना. ब. पुरणि, म. पूरनि, उ. सुरनि। २. म. पड़। ३. धा. अ. फ. म. उ. स. मिलिय। ४. धा. म. उ. स. इह धुनिय, अ. फ. इक धुनिय, ना. इनियं सु। ५. धा. लो जु लिय, म. अ. फ. लिय सु लिय।

(३) मो. नरेंद (< नरिंद), शेष में 'नरिंद'। २. धा. काढोय, अ कढ्या, फ. कढ्या, ना. म. उ. स. कढ्ढी। ३. धा चंक (< बंक), उ. स बंकि।

(४) १. धा. धीर, अ. फ. बरि। २. अ. धमिल, फ. धमिछि, म. धुम्मउ, उ स. धूमिलि, ना. धुंधिमिलि। ३. धा. धुवरिम, अ. फ. धुंधरिग, ना. धूमकोय, म. उ. स. धुम्मरिय। ४. धा. दल मस, अ. धन मध्य, फ. धन मद्धि, ना. दल मध्य, म. दल मझ, उ. स. दल मद्धि। ५. अ. फ. दितिय, म. दुतिय।

(५) १. अ. अह, फ. अने। २. फ. बहु रन रन। ३. धा. कौतुक, मो. कुतिग (=कउतिग) अ. फ. कौतुक, ना. म. कौतिग, उ. स. कौतिक। ४. म. कल, ना. उ. स. कलस। ५. मो. मतु (=मयउ), धा. अ. मयो, फ ना. म उ. स. मयौ। ६. ना. मयह, अ. फ. मवह, म. उ. स. मयह। ७. मो. मिरंस, फ. मिरंति, शेष में 'मिरंत'।

(६) १. धा. म उ. स. सामननि घट (निघटि—म.), मो. म. सामंत नघट, ना. सामंत त्रिघट्टि, अ. फ. सावंत सु (नि—अ.) घट। २. धा. मो. सुपटीय (सुपट्टिय—धा.), अ. न छगिग, फ. छगति, उ. स. सपिट्टिय, म. सपठिय ना. सरठीय। ३. मो. ससर, शेष में 'सर'।

टिप्पणी—(१) चढ=चढ़ना। परतंग < प्रतिज्ञा। (३) कोह < क्रोध। (५) कउतिग < कौतुक। (६) पड < पड्=गिरना। पट्टिय [दे०]=विभूषित, अलङ्कृत।

[२६]

दोहरा— संझ सपट्टिय[१] नृपति रण[२] दिय[३] पारस परि[४] कोट। (१)
*रहउ[*१] सुर सामंत चकि[२] चाहि[*३] नृपति न[४] चोट॥ (२)*

अर्थ—(१) सध्या को [इस प्रकार] अलंकृत नृपति (पृथ्वीराज) ने [शत्रु के] परकोटे के पार्श्व में रण दिया (किया); (२) किंतु उसके शूर सामंत [यह देख कर] चकित रहे कि नृपति (पृथ्वीराज) को चोट नहीं लगी थी।

पाठान्तर—*चिह्नित संशोधित पाठ के है।

(१) १. मो. सपठिय, धा. सपट्टिय, अ. फ. म. संपट्टिय, ना. सपट्टे, मैं 'सपट्टिय'। २. म. त्रिपनि रन, ना. त्रिपति नर। ३. धा. दिय, अ. फ. करि, ना. परि, म. उ. स. बिय। ४. ना. करि म पर।

(२) १. मो. रहु (=रहउ), अ. फ रहे, ना. म. उ. स. रहै। २. ना. छुकि। ३. धा. दिखिय, मो. चाहि (< चाहि), अ. फ दिष्षहि, ना. देह, म. उ. स. देषि। ४. धा. ना. म. उ. स. नृपति तन।

टिप्पणी—(१) संझ < संध्या। पट्टिय [दे०]=अलङ्कृत। पारस < पार्श्व। (२) चकि < चकित (?)।

[३०]

कवित्त— निसि[१] नवमी सिरि[२] चंदु हक वज्जी[३] चावदिद्‌सि[४] । (१)
भर[१] अभंग सामंत[२] वीर[३] वरषंत[४] मत्त[५] असि ॥ (२)
अजुत जुत्त[१] आवध्ध[२] इष्ट आरंभ सत्त[३] वर[४] । (३)
एक[१] जीव दस घटित[२] दसति[३] ठिल्लइ[४] जुसहस[५] भर[६] । (४)
दिट्ठउ[१] न देव[२] दानव भिरत यूह रत्ति सूरत्त पल[३] । (५)
सामंत सूर[१] सोरह[२] परिग गण्यउ* न[३] पंग अभंग[४] दल ॥ (६)

अर्थ—(१) नवमी की निशा में चन्द्रमा सिर पर था जब चारों दिशाओं में हाँक बीज; (२) अभंग (न हटने वाले) भट और सामंत वीर मत्त [होकर] असि वर्षा कर रहे थे। (३) वे अयुत आयुधों से युक्त होकर श्रेष्ठ सत्य का इष्टारंभ कर रहे थे। (४) एक-एक जीव दस-दस को मारता था, और दस [जीव] सहस्र भरों को ठेल (पिछड़ा) देता था। (५) इस प्रकार भिड़ते हुए देवता और दानव भी नहीं देखे गए थे, वे युद्ध (?) की रति में अनुरक्त होकर स्खलित हो रहे थे। (६) [पृथ्वीराज के] सोलह शूर सामंत गिर गए जिन्होंने पंग (जयचंद) के अभंग (न हटने वाले) दल को गिना नहीं—कुछ नहीं समझा।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. फ. ग. निस। २. अ. गत, फ. गति, ना. म. उ. स. सिर। ३. धा. वाजी, ना. वज्जीय। ४. मो. चाविदसि।

(२) १. म. अ. भिरि, फ. संभरि, ना. भड। २. धा. अ. फ. सावंत, ना. सूरिमा। ३. म. वर, स. वारि। ४. धा. वरषंति। ५. धा. ना. मत्त, मो. अ. फ. ना. मत्त, म. उ. स. मंत्र।

(३) १. मो. अयुत युत (=अजुत जुत्त), धा. ना. अजुत जुद्ध, अ. फ. सुजुद्ध जुद्ध, म. उ. स. अयुत जुद्ध। २. ना. आवंत, म. आयुध, फ. आउध। ३. म. अ. फ. ना. सत्ति। ४. म. वत।

(४) १. धा. अ. फ. ना. इक। २. ना. घटति म. घटि। ३. धा. अ. फ. त। ४. मो. ठिल्लि (=ठिलइ), धा. ठिल्लहि, अ. ठिल्लइ, फ. ठिल्लै, ना. लेहि म. छेलै (< ठेलै)। ५. धा. सहस, अ. फ. सहस्स, उ. स. सु सहस, म. सुसह, ना. जुत्त सथ्थ। ६. म. सत।

(५) १. धा. दिट्ठउ, मो. दिषो (< दिषु ?), अ. दिष्यो, ना. फ. दिष्यौ, म. उ. स. दिठे (दिठे—म.)। २. फ. देउ। ३. धा. जुद्दर रत्त रत तिय सुपल, मो. युहरती सुरत पल, अ. फ. सुद्दर रित्त तिय (तीय—फ.) पियति छल, ना. म. उ. स. जूह रत्त रत्तिय (रत्ते—ना.) सुपल।

(६) १. ना. सावंत सुभट, अ. फ. सावंत सूर। २. धा. सोलह। ३. धा. अ. फ. गन्यो न, ना. गनौ न मो. गण्यु (=गण्यउ) न, म. मारे। ४. मो. ना. अरंग (< अभंग)।

टिप्पणी—(३) आवध्ध < आयुध। सत्त < सत्य। (५) यूह < युद्ध (?)। पल < स्खलित।

[३१]

भुजंग प्रयात—भए*[१] राइ[२] दूइ इक[३] अंके[४] प्रमानं[५] । (१)
परे सूर सोलह[१] तिने[२] नांम[३] आनं ॥ (२)
परउ*[१] मंडली राय[२] मालंन हंसउ*[३] । (३)
जिने[१] हक्किआ[२] पंग रा[३] सेन गंसउ*[४] ॥× (४)

परउ[*१] जावलउ[*२] जाल्हु[३] सामंत मारे[३] ।[×] (५)
जिने[*१] पारिया[२] पंग पंधार सारे[३] ॥ (६)
परउ[*१] बागरी[२] बाघ[३] बाहइ[*] दु हत्थो[४] । (७)
भिरे[१] पंग[२] भागइ[*३] दुहइ[*] लग्ग[४] वत्थो[५] ॥ (८)
परउ[*१] वीर जद्दउ[*२] बलीराय[३] थांना[४] । (९)
जिने[*१] नंषिया गयणु[२] गज[३] दंत दांना[४] ॥ (१०)
परउ[*१] साहतो साह[२] सारंग गाजी[३] । (११)
दुहइ[*१] सत्त भापउ[२] मलउ[*३] हत्थ माझी[४] ॥ (१२)
परउ[*१] पावरीय[२] रायु[३] परिहार राना । (१३)
पुले[१] सेर[२] साजे वजे[३] पंगु थांना ॥ (१४)
[१]उपटए[२] पंग[३] आविधि[४] नीरं । (१५)
तिहां[१] सांपुला सीह[२] भुज पार[३] भीरं ॥ (१६)
परउ[*१] सिंघली राइ[२] सातछ[३] गोरी । (१७)
लगइ[*१] लीह षंगे[२] जगी[३] जानि[४] होरी ॥ (१८)
भिरइ[*१] भोज भाजइ[*२] नहीं सार भग्गे[३] । (१९)
भिरइ[*१] मल्ल मानै[२] नही लोह लागे[३] ॥ (२०)
परउ[*१] राय[२] भोयाल[३] उक[४] चंद सप्पी[५] । (२१)
ए कु कुसम नापे इ[२] एकइ[३] किति भापी[४] ॥[५] (२२)

अर्थ—(१) दोनों राजा एक ही अंक के (बराब) रप्रमाणित हुए। (२) जो सोलह शूर [पृथ्वीराज-पक्ष के] गिरे उनके नाम [समक्ष] ला रहा हूँ। (३) मालन-हंस महली राय गिरा, (४) जिसकी हाँक पंग (जयचंद) की सेना को गाँस (शूल) [जैसी] होती थी। (५) जावला तथा जाल्ह नामक भारी सामंत गिरे, (६) जिन्होंने पंग (जयचंद) के सारे पंधारी सैनिकों को गिरा दिया था। (७) बागरी बाघ [राय] गिरा, जो दोनों हाथों से [तलवार] चलाता था, (८) उससे भिड़ने पर पंग (जयचंद) भाग निकला जब उसको व्यस्त रूप से बाघराव बागरी की दोनों [तलवारों] से घाव लगे। (९) बली राय थाने वाला वीर जादव गिरा, (१०) जिसने गगन में गज दंत दान करते हुए फेंके। (११) शाह शहाबुद्दीन को वश में करने वाला सारंग [राय] तथा गाजी (?) गिरे, (१२) दोनों ने सत्य भाषण किया तथा हाथ में भला (यश ?) लिया। (१३) पावरी राय, और परिहार राणा गिरे, (१४) जिन्होंने खुले सेलों को साजा और जिन [के आक्रमण] से पंग के थानैत भाग गए। (१५) जहाँ पर पंग के (जयचंद) के आयुधों का पानी प्रकट हुआ, (१६) वहाँ सांपुला और सिंह [राय] ने अपनी भुजाओं से उस पर पीड़ा डाली थी, (१७) सिंहली राय तथा सातछ गोरी भी गिरे, (१८) जिनके अंगों में [जो रुधिर की] रेखा लगी हुई थी, वह ऐसी लगती थी मानो होली [की लालिमा] लगी हो। (१९) भोज [गिरा जो] ऐसा भिड़ा था कि सार (लोह-तलवार) के भग्न होने पर भी नहीं भागता था, (२०) मल्ल [गिरा जो] ऐसा भिड़ा था कि शस्त्रास्त्रों के लगने पर भी मानता नहीं था। (२१) भोआल (भूपाल) राय गिरा, जिसकी साखी चंद ने की, (२२) एक चंद ने उस पर कुसुम फेंके और एक ने उसकी कीर्ति कही।

पाठान्तर—• चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण ना. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. मो. भइ (=भए), धा. भयौ (< भइ=भए), अ. फ. भई, (< भइ=भए), शेष में 'भये'। २. धा. शरीर, फ. रार, ना. म. उ. स. राय। ३. धा. टूकंक, अ. फ. दुहु कंक, ना. म. उ. स. दुव (दुव—ना.) कंक। ४. धा. मो. अंके, अ. फ. अंक, म. इके, ना. उ. स. इक्के। ५. ना. म. उ. स. समान। ६. म. नान।

(२) १. अ. फ. सोरह। २. धा. तिके, म. उ. स. तिनं, अ. फ. ना. तिने। ३. म. नान।

(३) १. मो. पर (=परउ), धा. परे, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. धा. मडली राउ, अ. मंडली राइ, फ. मडणे राइ। ३. मो. आलन हंस (=हसउ), धा. माल्हन हंसो, अ. फ. ना. म. उ. स. माल्हन (मल्हन—म.) हसो (हंसौ—ना., माल्हण हंसा—फ.)।

(४) १. धा. जिने, अ. ना. म. उ. स. जिने, फ. जिने, फ. जिना। २. धा. हंकिया, मो. हाकिआ, म. उ. स. पारिया, अ. फ. हक्किया। ३. म. पंगरं। ४. मो. सेन गंस (=गसउ), धा. सरयन गसो, अ. फ. सेन गंसो।

(५) १. मो. पर (=परउ), धा. पर्‌यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. मो. आवल (=आवलउ), धा. आवला, शेष में 'आवलो' या 'आवलौ'। ३. धा. अ. फ. म. उ. स. जाल्ह, म. जल्ह। ४. धा. अ. फ. सावंत (साउंत—फ.) मारो (मारौ—अ. फ.)।

(६) १. मो. जेने (< जिन), धा. जिने, शेष में 'जिने' या 'जिनें'। २. धा. पारियं, अ. फ. पारियौ (पारियो—अ.), म. पारिया, ना. पारीआ। ३. धा. अ. फ. पंधार सारो (सारौ—अ. फ.), म. संधार सारे।

(७) १. मो. पर (=परउ), धा. प यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. धा. बारी, ना. बागुरी, म. बगरी। ३. धा. मो. बाघ, ना. बाघु, अ. फ. बाग, म. राव। ४. धा. दुहत्थं, अ. फ. दुहथ्या, ना. म. उ. स. दुहथ्यं।

(८) १. मो. मिर (=मिरउ), धा. अ. फ. भिरे, ना. भिरयौ, म. उ. स. भिरे। २. मो. म. पग्ग, धा. अ. फ. पंगु (पंग—अ. फ.)। ३. मो. भागि (=भागइ), धा. अ. फ. भग्गे, ना. भग्गं, उ. स. भग्गौ, म. भग्गं (?)। ४. मो. दुहि (=दुहइ), लग्ग, धा. अ. फ. भरे हत्थ, ना. म. उ. स. मिल्यौ (मिल्यो—ना.) हथ्थ। ५. धा. वथ्थं, अ. फ. बथ्था, ना. म. उ. स. वथ्थं।

(९) १. मो. पर (=परउ), धा. पर्‌यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. ना. जादुवं, धा. जंदा, अ. फ. जद्दो, ना. जदू (=जदउ) म. जादौं, उ. स. जादौं। ३. धा. फ. ना. राउ, अ. म. उ. स. राव। ४. ना. म. उ. स. बानं।

(१०) १. मो. जेने (< जिने), धा. जिने, शेष में 'जिने' या 'जिनें'।। २. धा. फ. नाथिया नेन, अ. नंथिया नेनि, ना. नाथीया नैन। ३. धा. गय, अ. फ. गे। ४. धा. अ. फ. नाना, ना. तानं, म. उ. स. पानं।

(११) १. मो. पर (=परउ), धा. पर्‌यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ'। २. धा. साहजो सर, ना. सत्ति सावंत, फ. सत्त साउंत, म. साहतो सार, उ. स. साहितो सार। ३. फ. लाजी।

(१२) १. मो. दुहि (=दुहइ), धा. दुहं, अ. फ. दुहू, ना. म. उ. स. दुहुं। २. धा. अ. फ. सथ्थ मथ्थो, ना. म. उ. स. सथ्थ मथ्थो (मथ्थौ—म. ना.)। ३. मो. मल (=मलउ), धा. भले, शेष में 'भलो' या 'भलौ'। ४. म. उ. स. माजी।

(१३) १. मो. पर (< पर ?)। धा. पर यो शेष में 'पर्‌यो' या पर्‌यौ'। २. ना. म. उ. स. पहरी। ३. धा. अ. फ. ना. राउ, म. उ. स. राव।

(१४) १. अ. पुले। २. धा. सेरु, मो. सेर, ना. सैल, शेष में 'सेल'। ३. धा. सारंग ले, अ. फ. साजै पुले, ना. सज्जे पुलै, म. उ. स. साजे पुले (पुले—उ. स.)।

(१५) १. धा. जवे, अ. फ. म. उ. स. जयं, म. जबे। २. धा. हप्पदे, अ. फ. ना. हप्पटें, म. उप्पट्यौ,

उ. स. उप्पटी । ३. धा. पंग (< पंग) । ४. धा. अ. फ. ना. म. . स. आवद्द ।

(१६) १. धा. अ. फ. तहां, ना. उ. स. तन । २. फ. साधि । ३. मो. पाल, धा. अ. फ. पारि, ना. म. उ. स. मानि (मान—म.) ।

(१७) १. मो. परु (=परउ), धा. पर्‌यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ' । २. धा. सींघ सिघाम, अ. फ. सिंघली सिंघ, ना. म. उ. स. सिंधु था सिंधु । ३. धा. सादूर फ. सादिल, म. उ. स. सादल, ना. सादूल ।

(१८) १. मो. लगि (=लगइ), धा. जगी, अ. फ. ना. लगी, म. उ. स. लगे। २. धा. अ. फ. लोह भग्गी, ना. म. उ. स. लोह अग । ३. धा. लगी, म. उ. स. लगी । ४ धा. ना. जानु ।

(१९) १. मो. मर (< मरि=मरइ), धा. अ. फ. भिर्‌यो, म. भिरे, ना. उ. स. भिरे । २. मो. माजि (=माजइ), धा. अग्गो, अ. फ. मग्गी, म. मग्ग' उ. स. मर्गा, ना. भग्गो । ३. मो. सारि भागि (=भाग), धा. सार जग्गे, म. अ. फ. सार भग्गे, उ. स. सार भग्ग, ना. सार भग्गो ।

(२०) १. मो. भरि (=भरइ), धा. ढर्‌यो, अ. फ. ढुर्‌यो, ना. धर्‌यो, म. उ. स. पर्‌यो । २. धा. पग मानो, अ. फ. मझ हल्ल, म. उ. स. मल्ह (माल—म.), मानो (मनों—म.) ना. मझ मन्नु (=मन्नउ)। ३. मो. लोह लागे, धा. जूर लग्गे, म. उ. स. अ. फ. जूह लग्गे, ना. जूह लग्गो ।

(२१) १. मो. परु (=परउ) धा. पर्‌यो, शेष में 'पर्‌यो' या 'पर्‌यौ' । २. धा. अ. फ. ना. राउ, म. उ. स. राव । ३. मो. भोआल, धा. ना. उ. स. फ. भुहा, ना. म. भौहा, अ. लोहा । ४. मो. उक, धा. उनो, अ. तुलै, फ. उभा, ना. म. उ. स. उभै । ५. धा. अ. फ. सष्पा, शेष में 'साषी' ।

(२२) १. धा. म. इके, अ. फ. ना. उ. स. इकै । २. मो. कुसम नांवोइ (< नांविइ=नावेइ), धा. कुसुम नखो, अ. फ. कुसुम नंषी, म. उ. स. कुसम नंषै (नषे—म.), ना. कुसस नषै । ३. मो. एकि (=एकइ), शेष में 'इके' या 'इकै' । ४. मो. कित माषो, धा. अ. फ. किति भष्षो, शेष में 'किति माषी' । ५. यहाँ धा. मो. को छोड़कर सभी में और है :

जिसी मारयं भोहिनि दस अड्ड होगी । चैत सुदि रारि निसि पढ नौमी ।

टिप्पणी—(८) खग्ग < खड्ग । वथ्थ < व्यस्त=अलग-अलग । (११) साह् < साध=वश में करना । (१४) सेर < सेल । बज < व्रज=नाना । (१५) आविधि < आयुध । (१९) भग्ग < भाग्न=टूटा । (२१) भोआल < भूपाल । उक < उक्त < उक्त=कथित । साखो < साक्षी । (२२) नांव < नंव < नम्=गिराना । किति < कीर्ति ।

८. पृथ्वीराज-जयचन्द-युद्ध (उत्तरार्द्ध)

[१]

कवित— मिले[१] सव्व सामंत बोलु[२] मग्गहिं[३] त नरेसर[४]। (१)
अप्प[१] मग्ग लग्गिअइ[२] मग्ग रख्खिइ[३] ति इक्क भर[४]। (२)
एक एक[१] झूझंति[२] दंति दंती[३] ढढोरइ[*४]। (३)
जिके[१] पंग राय[२] भिच्च[*३] मारि[४] मारि कइ[*५] मोरइ[*६]। (४)
हए बोल[१] रहइ[*] कालि[२] अंतरि[३] देहिं[४] स्वामि पारथ्थिअइ[*]। (५)
अरि असीइ[१] लष्प को[२] अंगमइ[*३] परथ्थि[४] राय[५] सारथ्थिअइ[*६]॥ (६)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज के] सब सामंत मिले और तदनंतर वे नरेश्वर पृथ्वीराज से यह वचन माँगने लगे, (२) "आप [दिल्ली के] मार्ग लगें और [उसके] मार्ग की रक्षा एक [एक] भट करे। (३) एक-एक [भट] जूझते-जूझते दंतियों के दाँत खींच निकाले (४) और जो भी पंगराज (जयचंद) के भृत्य हों, उनको मार-मार कर मोड़ दे—युद्ध स्थल से भगा दे। (५) हमारा यह वचन रह जाए कि कलह के अंतर-से कलह से दूर रखते हुए—हम स्वामी को पार स्थिति देंगे, (६) अन्यथा अस्सी लाख शत्रु [सेना] को कौन अंगवेगा—झेलेगा, हे राजा आप सार स्थिति का परिणय कीजिए—वास्तविक स्थिति को स्वीकार कीजिए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. मेलि, म. उ. स. मिलिए। २. धा बोउ, ना. म. बोलि। ३. मो. मांगिहि, धा अ फ मंगहि (=मग्गहि), म मांगहि, ना मग्गहि। ४ धा फ ति नरेस्सुर, अ उ. स ति नरेसर, म स नरेसवर।

(२) १ मो आप, धा अप्पु, म अ, फ ना अप्प। २ मो लगीइ (=लग्गिअइ), धा. लग्गियइ, अ फ ना म उ स लग्गिये। ३ ध अ रख्खहिं, फ रेप, म उ स रष्षें, ना. रष्षीयें। ४ धा अ फ प्रगट्ट भर, म. स. इक इक (इक्क—सं.) उ इक्कक भर, ना. त इक्क भर।

(३) १. अ. फ. म. ना. उ. स. इक्क इक्क। २. धा. अ. ना. म. स. झझंत। ३. धा. दंत दंती, अ. फ. दांति दंतिय, ना. दंति दंतिनि, उ. स. दंति दंतन, म. दंत दंतनि। ४. मो. ढंढोरि (=ढंढोरइ), धा. ढंढोरे, अ. फ. म. ना. उ. स. ढढोरहिं।

(४) १. धा. जिते, मो. के (‹ जि) के, अ. फ. जिते; म. उ. स. जिके, ना. जिगे। २. मो. राय शेष में 'रा'। ३. मो. भीछ (‹ भीच), ना. भिच (= भिच्च), फ. मीच, धा. अ. उ. स. मीछ, म भिग। ४. म. ते मारि, ना. मार। ५. मो. मारि कि (=कइ), धा. मारिमुड़, अ. मारि कर, फ. मारि करि, ना. मार करि, उ स. सारिन मुष, म. सारन मुष। ६. मो. मोरि (=मोरइ), धा. मोरे, अ फ म. उ. स. मोरहिं।

(५) १. अ. फ. ना. बोलि । २. मो. रिहि (< रहइ), शेष में 'रहै' । ३. स. कल । ४. मो. अतरि, धा म. उ. स. अंतरे, अ. फ. स. अंतरै । ५. अ. फ. देह । ६. मो पारथीइ (=पारथिअइ), धा. ना. म. उ. स. पारथिये, अ. फ. पारथ्थियो ।

(६) १. मो. असीइ, शेष में 'असी' । २. अ. कुण, फ. कुण, फ. कुन, स. की । ३. मो. अगमि (= अंगमइ), शेष में 'अगम' । ४. धा. परिणि, फ. परिन, ना म. उ. स. विना । ५. धा. राइ । ६. मो. सारथीइ (=सारथिअइ), धा. ना. म. उ. स. सारथिये, अ. फ. सारथ्थियो ।

टिप्पणी— (१) नरेसर < नरेश्वर । मग्ग < मार्गय्=माँगना । (२) मग्ग < मार्ग । (४) मीच > मिच्च < मृत्य । (५), (६) थिअइ < स्थिति (?) ।

[२]

कवित्त— मति घट्टी[1] सामंत[2] मरण हुअ*[3] मोहि[4] दिखावहु[5] । (१)
जम[1] चीठी[2] विणु[3] कदन*[4] होइ जउ* तुमउ* बतावहु[5] । (२)
तुम गंजउ*[1] भर भीम तास+ गव्वह[2] मयमत्ता[3] । (३)
मइ*[1] गोरी साहव्वदीन[2] सरवर[3] साहता[4] । (४)
मुहि सरणहि[1] हींदू तुरक तिह[3] सरणागत[4] तुम[5] करहु[6] । (५)
बूझिथइ*[1] न° सूर सामंत हो[2] इतउ*[3] बोझ[4] अप्पन धरहु[5] । (६)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा], "हे सामंतो, तुम्हारी मति घट गई है जो [रण] भूमि में मरने का हउवा तुम मुझे दिखा रहे हो । (२) यदि यम की चिट्ठी के बिना कदन (नाश) होता हो, तो तुम्हीं बताओ । (३) तुमने भट भीम [चौलुक्य] का नाश किया और उसी गर्व में तुम मदमत्त हो गए हो (४) मैंने भी गोरी शहाबुद्दीन को सरवर (सारोले ?) में साधा (वश में किया) है । (५) मेरी शरण में हिन्दू तुर्क [दोनों] हैं और उसी मुझको तुम शरणागत कर रहे हो । (६) तुम शूर सामंत होकर भी समझ नहीं रहे हो, अपना इतना बड़ा बोझ (अहसान) तुम [अपने पास] रखो ।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
+चिह्नित शब्द फ. में नहीं है ।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है ।

(१) धा. अ. ना. घट्टिय, फ. घट्टय । २. अ. सावत, फ. सावंत । ३. मो. मरण हु (=हुउ), धा. मरण भय, शेष में मरन 'भय' । ४. मो. भूमि, शेष में 'मोहि' । ५. धा. दिषायो, अ. दिष्षावउ, फ. दिष्षायौ, ना. सुनावहु ।

(२) १. मो. धा. म. जिम, शेष में 'जम' । २. धा. अ. चिट्ठिय, फ. चिट्ठय, म. चिटी, ना. स. चिट्ठी । ३. मो. विर, धा. विणु, ना. विनु, शेष में 'बिन' । ४. धा. म. उ. स. कहन, ना. मरन, अ. फ. होइ । ५. धा. होइ के मोहि करायो, अ. फ. कदन (कहिन—फ.) क्यों तुमहि सुझायउ (सुझायौ—फ.) म. उ. स. होइ (होइ—म) सो मोहि बतावहु, ना. होइ तौ मोहि दिखावहु ।

(३) १. मो. तुम गजु (=गजउ), धा. तुम गज्जुर, अ. तुम गज्या, ना. तुम्ह गज्यौ, शेष में 'तुम गज्यौ' । २. धा. गेरव, म. मवइ । ३. धा. उ. स. मै मतो, म मै मत्तौ, ना. मय मतौ, अ. फ मय मत्तउ ।

(४) १. मो. मि (=मइ) शेष में 'मैं' या 'मै' । २. धा. वगोरि साहिब्ब साहि, अ. फ. म. ना. उ.

स. गोरी साहाब,माहि। ३. धा. सारवर, अ. फ. सारील। ४. धा. साहत, अ. फ. सुमरउ, ना. म. उ. स. साहतौ (साहतो–म.)।

(५) १. धा. मो. सरण सरण, अ. फ. मो. चरन सरन, ना. मोहि शरण, म. उ. स. मेरैं (मेरैं–म.) ज (जु–उ. म.) सुरनर (–सरनि–म.)। २. मो. हीदू तुरक, फ. हिंदू तुरक, अ. हिंदुव तुरक, ना. हांदू तुरक। ३. मो. तिहि, शेष में 'तिहि'। ४. अ. सरनग्गति, फ. सानगति। ५. ना. तुम्ह। ६. मो. करह, धा. करो, शेष में 'करहु'।

(६) १. मो. वूझीइ (=वूझिजइ) फ. ना. म. वूझीयै, अ. बुझिय। २. धा. हुइ, फ. हु, ना. तुम, म. हौ। ३. मो. हतु (=हतउ), अ. फ. म. हतौ, ना. में शब्द छूटा है। ४. मो. वूझ, ना.–झ, शेष में 'बोझ' (बोझ–म.)। ५. धा. धरो, मो. धरह, म. रहु, शेष में 'धरहु'।

टिप्पणी—(१) हउ < मय। (२) जम < यम। (२) गव्व<गर्व। मयमत्त<मदमत्तो। (४) साह< साध्=वश में करना। (६) वूझ < बुद्धि [यथा 'सूझ-बूझ' में]।

[३]

कवित— वन रष्पइ* जउ*[१] सधु विंझ[२] वन रष्पइ[३]* सिंघहि[४] । (१)
धर[१] रष्पइ ति भुयंग[२] धरणि[३] रष्पइ त भुयंगहि[४]* । (२)
कुल रष्पइ[१] कुल वधू वधू रष्पइति[२] अप्प[३] कुल । (३)
जल रष्पइ जउ*[१] हेम हेम रष्पइ* त[२] सव्वु जलु । (४)
अवतारह जब लगि जीवनउ*[१] मरन जीवन जम आवतह[२] । (५)
रावत्त° कइ*° स°रय° रष्पनउ*°[१] राजत रष्पइ* राय कह[२] ॥ (६)

अर्थ—(१) [सामंतों ने कहा,] "यदि सिंह वन की रक्षा करता है, तो विंध्य वन भी सिंह की रक्षा करता है; (२) धरा को भुजग (शेष) रक्षा करता है, तो धरणी भी भुजग (शेष) की रक्षा करती है; (३) कुल कुल-वधू की रक्षा करता है, तो वधू भी अपने कुल की रक्षा करती है, (४) जल हिम को [ओले के रूप में] रखता है, तो हिम भी समस्त जल की रक्षा करता है। (५) जब तक [के लिए] अवतार (जन्म) है, तब तक जीवन भी है, उसी प्रकार मरण तब होता है जब जीवन में यम का आगमन होता है। (६) रावत की कभी राजा रक्षा करता है, तो रावत भी राजा की रक्षा करता है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं।

(१) मो. वन रषि (=रषइ) जु (=जउ), धा. थान रषै तें, अ. फ. ना. वन रष्पै जौ, म. वन रष्यौ जे, उ. स. वन राषै ज्यौं। २. धा. वीह, अ. बींझ, फ. बींग, ना. सींह। ३. मो. रषि (=रषइ) धा. रषै, अ. फ. ना. रष्षहि, म. उ. स. राषहि। ४. मो. सींघहि, धा. ना. सिंघह, म. सिंघह।

(२) १. फ. धइ। २. मो. रषि (=रषइ) ति भुअग, धा. रषै जु भुवंग, अ. फ. रष्षइत भुजग, ना. रष्पै जु भुजग, म. उ. स. रोषै सौ भुयग (भुयंग–म.)। ३. फ. धरनें। ४. मो. रषि (=रषइ) त भुयगहि, धा. रषै जु भुअगह, अ. रष्षइत भुजगहि, फ. रष्पहि तौ भुयगहि, ना. रष्पै तो भुजंगह, म. उ. स. रषैति भुअगह (भुयग ह–म.)।

(३) १. मो. रषति, धा. रषतै, अ. फ. रष्पइ, म. ना. उ. स. रष्पै। २. मो. रषिन, धा. रषै जु, अ. रष्षइति, फ. रष्षइस म. रष्षति, ना. रष्पै जु। ३. अ. अप्पु।

(४) १. मो. रषि तु (=रषइ ज्उ), धा. रक्खे जो, अ. फ. रष्षइ जौ, ना रष्षै जो म. ड. स. रष्षै ज्यों (ज्यु—म.)। २. मो. (रषि=रषइ) ति, धा. रक्खे तु, अ फ रष्षइति (ति—फ.), ना. रष्षै ती, म. ड. स. रष्षति।

(५) १. मो: अवनारइ जब लगि जीवतु (=जीवनउ), धा. अ. फ. आव रहै तव लग (लगि—अ.) जियन (फ. में 'जियन' शब्द नहीं है), ना. म. ड. स. अवनार ज्वहिं लगि जीवनौ। २. धा. जिवन जम्मु सातुल रहै, मो. मरन जंमन वम आव वह (?), अ. जियन जम्म आव वह, फ. जीवन यम आउ वह, ना. आवन जन सह आवनह, म. ड. स. जियन जम्म सब आवतह।

(६) १. मो. रावन कै (<अइ) सरय पसु (=पनउ), अ. फ. रावत रष्षै राइ जौ, ना. रावत जेम रारष्षनै, म. ड. स. रावत्त तेह रा (राव—म.) रष्पतौ। २. मो. रावत रष्षइ राय कई, २. धा. रावत रक्खहिं राव तिह, अ. रतन रावत रष्षै राइ कहं, फ. रवत रष्षै राइ कह, स. राजन रष्षहि राव तह, ना. राइ ज रष्षै राव तह।

टिप्पणी—(५) सह <सधा=उसी प्रकार। (६) रावत < राजपुत्र। कइ < इदा=कभी। रय < राआ।

[४]

कवित्त— तै* रापउ*[१] हिंदुथ्थान[२] गंजि[३] गोरी गाहंतउ*[४]। (१)
तै रापउ*[१] जालोर[२] चंपि चालुक चाहंतउ*[३]। (२)
तै रापउ*[१] पंगुरउ*[२] भीम भट्टी दइ* मथ्थउ*[३]। (३)
तै रापउ*[१] रणथंभ[२] राय जादव[३] सइ हथ्थउ*[४]। (४)
इह[१] मरण- किति राय[२] पंग की जियन किति रा[३] जंगली। (५)
पहु परणि[२] जाय[३] दिल्लिय लगइ*[३] होइ[४] घरिघ्घरि[५] मंगली॥ (६)

अर्थ—(१) [सामंतों ने कहा,] "[हे पृथ्वीराज] तू ने गाहन करते हुए—पैठते हुए—गोरी [शहाबुद्दीन] को नष्ट करके हिंदुओं की रक्षा की; (२) तूने चाहते हुए—[विजय की] आकांक्षा करते हुए—चालुक्य [भीम] का दमन कर जालोर की रक्षा की; (३) तूने भीम भट्टी को मस्था (हार ?) देकर पंगुर (?) की रक्षा की, (४) तूने यादवराज के हाथ से रणस्तंभ (रणथंभौर) की रक्षा की। (५) [यह युद्ध] पंगराज की मरण कीर्ति और जांगल राज (पृथ्वीराज) की जीवन-कीर्ति का है। (६) प्रभु [संयोगिता का] परिणय करके दिल्ली जा लगें और घर-घर मंगल हो, [हम सब की यही कामना है]।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. ति राषु (= तैं रापउ), धा. तैं रक्खे, अ. फ. तैं रष्षो, म. तैं रष्यौ, ना. ड. स. ते (तैं—ना) रष्यौ। २. धा. हिंदुवाण, म फ. ना. हिंदवान। ३. मो. गज, शेष में 'गंजि'। ४. मो. गाहतु (=गाहतउ), धा. गाहतो, शेष में 'गाहतौ'।

(२) १. मो. ते राषु (=रापउ), धा. तैं रक्खे, म. अ. फ. तैं रष्यो, ना. ड. स. तें (ते—ना.) रष्यौ। २. ना. जालोरि। ३. मो. चाहंतु (=चाहतउ) धा. साहतो, फ. चाहतो, अ. म. ना. चाहतौ।

(३) १. मो. तैं राषु (=रापउ), धा. तैं रक्खो, म. अ. फ. ना. तैं रष्यौ, ड. स. तें रष्यौ। २. मो. पगुरु (=पगुरउ), धा. पगुल्लिय, अ. पंगुरा, फ. पमलौ, ना. म. ड. स. पगुरौ। ३. मो. भटी दि मथु (=दइ मथउ), धा. भट्टिय दे मत्थे, अ. ना. म. ड. स. भट्टी दें मथ्थं (मथ्थे—म.), फ. भट्टी नें मंथौ।

(४) मो. ते रापु (=रापउ), धा. तै रख्यौ. अ. फ. म. ना. सैं रप्यौ उ. स. तैं रप्यौ। २. धा. म. रिनथंमु। ३. मो. जादव, धा. जाद्दौ, ना. जादु (जादउ), म. जदव, उ. स. जदौं। ४. मो. सि हिथु (=सइ हिथउ), धा. म, सैं हर्त्थं, अ. फ. सौं हर्त्थं, ना. उ. स. सैं हर्त्थ।

(५) १. धा. उ. स. इहि, म. ना. इह, अ. फ. यह। २. धा. कीरती, अ. फ. हित्ति राइ, म. ना. उ. स. कित्तिरा। ३. धा. मा. ना. उ. स. रा, अ. फ. राइ, म. रय।

(६) १. धा. अ. म. उ. स. पहु परनि, मो. पुहु सरणि, फ. यौ परन। २. धा. म. नाइ, मो. जाय, अ. फ. ना. जाइ, स. जाई। ३. मो. लगि (=लगइ), धा. लगै, म. लगें, शेष में 'लगे'। ४. धा. जु होइ, म. तौ होय। ५. धा. घरे घरु, ना. धराधर।

[५]

कवित— सूर मरण मंगली स्याल[१] मंगल घरि[२] आए*[३]। (१)
वाय मग्ग[१] मंगली[२] धरणि[३] मंगल जल पाए*[४]। (२)
कृपन[१] लोभ मंगली दांनि[२] मंगल कछु दिन्नइ×[३]। (३)
सत×[१] मंगल× साहसिह×[२] मंगल× मंगन×[३] कछु×[४] लिन्नइ[५]। (४)
मंगल वार हइ* मरन की[१] ते[२] पति सथ्थइ*[३] तन षंडिअइ। (५)
पेत चढि[१] युध्ध कम धज सउं[२] मरन सनम्मुप[३] मंडिअइ[४]॥ (६)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "शूर मरने में मंगली होता है—मंगल प्राप्त करता है, और स्याल (कायर) का मंगल [युद्ध से भाग कर] घर आने में होता है; (२) वायु मार्ग प्राप्त करने में मंगली होता है—मंगल प्राप्त करता है, और धरणी का मंगल [मेघ से] जल पाने पर होता है; (३) कृपण लोभ में मंगली होता है—मंगल प्राप्त करता है, और दानी का मंगल कुछ देने पर होता है; (४) साहसी का मंगल सत (सत्य-प्रयोग) में होता है, और मंगन का मंगल कुछ लेने (पाने) पर होता है। (५) मंगल का द्वार मरण से होकर है, इसलिए पति (स्वामी) के साथ तन (शरीर) को कटाइए; (६) रण क्षेत्र में पहुँच कर कमधुज (जयचंद) से युद्ध कीजिए और सन्मुख मरण माँडिए।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द म. में नहीं हैं।

(१) १. धा. म. सार, अ. फ. स्यार। २. मो. मंगल घर, धा. मंगली ग्रिह, ना. मंगल घरि, फ. मरनथर। ३. मो. आइ (=आए), धा. आये, अ. धा. आयैं, ना. स. आयैं, म. उ. आयौ।

(२) १. धा. वार मंगल, अ. फ. वाइ मंगली, म. वाय मगल, ना. उ. स. वाइ मेघ। २. मो. मंगल म. मंगलीय, शेष में मंगली। ४. मो. पाइ (=पाए), धा. पाये, अ. फ. पायैं, ना. उ. स. पायैं, म. पायौ।

(३) १. धा. क्रिपण, फ. कपिन, ना. कृपण, स. कृपन। २. धा. दीन, मो. अ. फ. म. स. दान, उ. दानि। ३. मो. दिनि (=दिनइ), धा. दीनइ, ना. दिन्ने, उ. स. दिन्नै, फ. दीने।

(४) १. मो. सत, धा. रत, फ. मत। २. धा. साहिसइ, अ. फ. साहसत, ना. उ. स. साहसीय। ३. मो. मंगलन मगन, धा. अ. फ. मंग मंगल, ना. मंगिन मंगल, स. मँगन मगल, उ. मगन मंगल। ५. फ. कुछ। ६. धा. लीनइ, मो. लिनि (=लिनइ), अ. फ. म. लिने, ना. उ. म. लिन्नै।

(५) मो. मंगल वार हि (=हर) मरन की, धा. मगली जु वार होइ मरण की, अ. फ. वार है मंगली मरन कोय, न. ना. उ. म. मंगली वार हो (है—म. ना.) मरन की (काय—ना.)। २. धा. अ. फ. में

नहीं है, म. उ. स. जो। ३. मो. मथि (=मथइ), धा. अ. फ. ना. मथै, उ. म. सथइ, म. सथतन। ४. मो. पंडीय (=पंडियइ), धा. पंडियइ, अ. फ. म. उ. स. पंडिहै, ना. छंडियै।

(६) १. मो. ना. पेत चढि (=चढइ), धा. अ. पित चढ्डि, फ. पिति चढ्डि, ना. पेतचढि, म. उ. स. चढि पेत। २. मो. सुध, कमधज स. (=मउ), धा. राइ राठोर सर, अ. फ. ना. राइ कमधुज्ज सो, ना. कमधुज्ज राइ सुं (=मुउ), म. उ. स. राइ (राय-म.) पहुपंग सों (सौं-म.)। ३. मो. मत्रुप, शेष में 'सनंमुष'। ४. मो. मंडीय (=मडिअइ), धा मडिअइ, अ. फ. म. ना. उ. स. मंडियै।

टिप्पणी—(१) स्याळ < सृगा। (२) मग्ग < मार्ग। (५) बार < द्वार।

[६]

कवित— मरणु[१] दीजइ पृथिराज[२] हसहि[३] छत्र[४] करि[५] पइट्ठउ[*६]। (१)
मीच लग्ग निअ[१] पायि[*२] कहइ[*३] आइ घरि[५] बइट्ठउ[*६]। (२)
पंच घट्टि सो[१] कोस कहइ[२] ढिल्लिअ[३] अस[४] कथ्थउ[५]। (३)
इक्कु इक्कु[१] सूरया[२] पेषि दल वाहत[३] नथ्थउ[४]। (४)
घर घरणि परणि राउ[१] पंगुकी[२] पहुचइ[*३] यह[४] वड्डत्तणउ[*५]। (५)
जब लगि[१] गंग जल[२] चंद रवि तब लगि चलइ[*३] कवित्तणउ[*४]॥ (६)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "हे पृथ्वीराज, यदि क्षत्रिय को मरण दीजिए, तो वह उसमें प्रवेश करके हँसता है। (२) मृत्यु को अपने पास पाकर वह कहता है, 'आकर घर में बैठो।' (३) सौ में पाँच कोस कम दिल्ली है, ऐसा कथन लोग कहते हैं। (४) एक एक शूर [रण में] न्यस्त (स्थापित) हो कर [शस्त्र] चलाते हुए [शत्रु] दल को देखें। (५) पंगराज (जयचंद) की [कन्या] को घर-घरनी (पत्नी) के रूप में वरण करके दिल्ली पहुँचा जाए, यही बड़प्पन है। (६) जब तक गंगा में जल और चन्द्र-रवि रहेंगे, तब तक [इस विषय का] कवित्व चलता रहेगा।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. सरण, फ. सरन। २. मो. दीजि (=दीजइ) प्रथिराज, धा. दिजइ प्रिथिराज, अ. फ. दीयौ प्रथिराज, म. दिजे प्रथिराज, ना. उ. स. दिये प्रिथिराज। ३ धा. हसहि, अ. फ. सहै, ना. हसै, म. हमैं, उ. स. हसैं। ४. धा. उ स. छत्रिय, ना. अ. फ. छत्री, म. छित्रीय। ५. ना. फ. म. कर। ६. मो. पइठु (=पइठउ), धा. पयठो, अ. पटेठे, फ. पैठ, ना. गैठ, म. पिटहि, उ. स. पट्ठिहि।

(२) १. म. उ. स. लगीमीय, धा लगमेय, ना. लग मया। २. धा. अ. फ पाइ मो. पायइ, (<पायि) उ. स. म. ना. पाय। ३. मो. कहि (=कहइ), धा. कहै, अ. फ. कहयो, ना. म. उ. स. कहै (कहै— स.)। ४. मो. मरण मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। ५. मो आइ घरि, धा. धरि आव, म. ना. अ. फ. आयो (आयौ-म. फ. ना.) घर। ६. मो. बइठु (=बइठउ), अ. फ. बैठे, म. विटहि, ना. बैठे, उ. स. बैठहि।

(३) १. धा. पंच घाट सो, मो. पाँच घाट सो, अ. फ. पाँच घाटि सौ, म. स. पच पंच सो, ना. पंच घट्टि सौ, उ. पंच सो। २. धा. कहइ, मो. कहि (=कहइ), अ. फ. म. ना. उ. म. कहै। ३. ना. दिल्ली। ४. अ. फ. स। ५ धा. कथ्यइ, म. अ. फ. कथ्थै, उ. स. कथ्थै।

(४) १. धा. इक इक, मो. इकु इकु (=इक्कु इक्कु), अ. फ. म. उ. स. एक एक। २. मो. धा. सुरवा, ना. सुरिया, म. सुरिवां, उ. सुरवां, ना. स. सुरिया। ३. धा. उ. स. पिरख चाहते, अ. फ. विपि चाहतो (चाहै तें—फ.), ना. म. पिष्पि चाहते। ४. मो. नवड, धा. वत्तइ, अ. फ. म. वध्धै, ना. वत्थै, उ. स. बध्धै।

(५) १. धा. ह. स. परनि रा, अ. फ. परनि राई, म. परिनि रय, ना. परणि राय। २. धा. के। ३. मो. पहुचि (=पहुचइ) धा. पहुचे, शेष में 'पहुचै'। ४. धा. म. उ. ना. इहै, अ. फ. कहां, ना. यहै। ५. मो. वहुंतणु (=वहुतणइ), धा. वहितनी, अ. फ. वडत्तनी, म. ना. वडप्पनी, ना. उ. स. बडप्पनी।

(६) १. ना. लगे। २. मो. जज, धा. धर, शेष सभी में 'धर'। ३. मो. चलि (=चलइ), धा. चलै, शेष में 'चलै'। ४. मो. कवित्तणु (=कवित्तणउ), धा. अ. फ. कवित्तनौ, ना. म. उ. स. कविप्पनौ।

टिप्पणी—(१) पइड्ड < प्रविश। (२) मीच < मृत्यु। निज < निज। (४) नध्य < न्यस्त=स्थापित। (५) वड्डत्तण [दे०]= बड़प्पन। (६) कवित्तण < कवित्व।

[७]

गाथा—मिटूयउ[1] *न*[2] *जाइ कहयौ*[3] *वय*[4] *कवि चंद सार*[5] *सा मंत*[6] *। (१)*
प्राची हय गय‡ वहयौ रहयौ[1] *गत चिंता नरेंद्र तह*[2] *॥ (२)*

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] "जो कथन मेटा नहीं जा सकता है, कवि चंद यह सार मंत्र कहता है। (२) [दिल्ली की ओर प्रस्थान के लिए यह समय उपयुक्त है जब कि] प्राची (पूर्व दिशा—कन्नौज) के हय, गज, वाहन, रथादि तथा नरेन्द्र (जयचंद) गतचिंता [हो रहे] हैं।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

पाठान्तर—(१) १. मो. मिटयु (=मिटयउ), धा. अ. फ. मिट्यो, ना. म. मिटयौग। २. अ. ह.। ३. धा. अ. जाइ कहणो, मो. जाइन दहनो, उ. म. जाइ कहिनो, म. जाय कहनौ, ना. जाइ कहनौ। ४. धा. अ. वहणो, फ. गइना, ना. कहना, म. उ. स. कहनौ। ५. धा. ना. म. उ. स. सूर। ६. धा. सावंत।

(२) १. धा. प्राची हयगय वहणो, अ. फ. प्राची हय गय वहणो (फ. में 'गय' नहीं है), म. उ. स. प्राची क्रम्म (क्रम—म.) विश्रामं। २. धा. रहणो चित्त निदावत, अ. फ. गत चित्त निदावंत (नंदाउत—फ.) म. उ. स ना. मानं भावई गम, ना. गत चित्त गूर सानंत।

टिप्पणी—(१) वय < वद। मंत < मंत्र। (२) रह < रथ। तह < तथा।

[८]

गाथा— सत भट[1] *किरण*[2] *समूरउ*[*3] *सुरंगो* अरेन° आन°[4] *आयेस°। (१)*
जोगिनिपुर पति[1] *सूरो*[2] *पारस मिसि*[3] *पंगु रायेस ॥ (२)*

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज के] सौ भटों ने, जो सुरंग (रंगीन) किरणों के समान थे, कहा और कर से नाना आदेश (नमस्कार) किया; (२) "योगिनीपुर पति (पृथ्वीराज [स्वतः]) शूर है, पंग (जयचंद) [अपनी] पारस (पारसीक सेना) के मिस (बख्तर) राजेश है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं

° चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं।

(१) १. धा. सनु भट, अ. सत्त भट, फ. सम भट, ना. शत भट, म. उ. स. सिलद। २. अ. किरण, फ. म. किरन, ना. करण, उ. स. किरनि। ३. मो. सुमुरु (=सुमुरउ), धा. समूछे, अ. फ. समूद्दो ना. समूरो, म. उ. स. समूरो। ४. धा. सूरो''मो. सुरगो अरेन जानि, अ. सुग्गो ओरणि आणि, फ. सूगो आरेनु आणि, ना. उरि आरेणि सुग्ग, म. उ. सरे, परनयं (सेन–म.) पंग।

(२) १. मो. योगिनि (=जोगिनि<पुरपति, धा. अ. फ. जुग्गिनि (जोगिणि–धा.), ना. पुरपति, जुग्गनिपुर पति, म. उ. स. जुगिग नि पति मर। २. धा. सूरे, म. सुती। ३. धा. पारस मिसि, मो. ना. पारसो मिसं, म. उ. स. पारस मिलि, अ. फ. पारसपति।

टिप्पणी—(१) समूरव < समुद्दव < समुद्द+लपू=बोलना, कहना। अरेन < करेण। आएस < आदेश। (२) राएस < राजेश।

[९]

त्रोटक—

परि[१] पंग कटक्क ति[२] घेरि[३] घनं। (१)

दस पंच ति[१] कोस निसान धुनं[२]। (२)

गजराज[१] विराजित[२] मध्य घनं[३]। (३)

जनु[१] वद्दलि[२] अभ्र[३] सुरंग वनं। (४)

परि पष्षर-सार तुरंग[१] घनं[२]। (५)

जनु[१] हल्लति[×] हेल[×२] समुद्र[×३] अनं[×४]। (६)

पर वइरष[*१] चंवरि[२] छत्र तनी[३]।[×] (७)

विचि[१] माहीय साहीय[२] सिंघ[३] रनी[४]।[×] (८)

घर पेह मजप त पीतपनी[१]।[×] (९)

दिपि[×१] लज्जति[२] रैणा[३] सरद्द[४] तनी। (१०)

भननंकहि[१] भेरि[२] अनेक[३] सयं[४]। (११)

सहणाइय[१] सीधुअ[२] राग[३] लियं[४]। (१२)

निसि[१] सर्व नृपत्ति[२] अनीनु फिरइ[*४]।° (१३)

जानु[१] मांवरि[२] भानु सुमेर[४] करइ[*५]। (१४)

दल सव्व[१] संभारि[२] अरत्ति[३] करी। (१५)

जिन[१] जाय[२] निकस्सि नरिंद[३] अरी। (१६)

गत जांम ति[१] जांम सुपीत परी[२]।‡ (१७)

जयजाय देव अयास[१] करी।[२]‡ (१८)

नृप जग्गति सव्व तुरंग[१] चढे। (१९)

विनु भान प्रयान नु[२] लोह कढे। (२०)

चहुआन कमान ति[१] कोपि[२] लियं। (२१)

मिलि भउहनि* पंचि कसीस[२] दियं। (२२)

सर छुट ति पप्पन सद्द भयउ*¹ । (२३)
मद गंध गयंदन² सूकि² गयउ*³ । (२४)
सर इक्क ति विध्धति² सत्त² करी । (२५)
दल देषति नेक* ठुठक परी ¹ ॥² (२६)

अर्थ—(१) पंग (जयचंद) की कटक [कन्नौज के चारों ओर] सघन घेरा डाले हुए पड़ी है। (२) पन्द्रह कोस तक निसानों (धौंसों) की ध्वनि [व्याप्त हो रही] है। (३) उस वन के मध्य [जयचंद की सेना के] गजराज [इस प्रकार] विराज रहे हैं (४) मानो आकाश में सुरंग (सुंदर हो बादलों का वन (=समूह) हो। (५) सार (लौह) की सघन पाषरें जो तुरंगों पर पड़ी हैं [इस प्रकार लगती हैं] (६) मानो हेला से अन्य समुद्र ही हिल रहा हो। (७) नैरखों (ध्वजाओं) और छत्रों की थबर (तड़क-भड़क) बहुत है (८) और उनके बीच में मानों सिंह की रणस्थली साधित (निष्पादित) है। (९) धरा की धूल [उड़कर] सूर्य की किरणों में [ऐसा] पीलापन ला रही है। (१०) कि उसे देखकर शरद की रजनी भी लज्जित हो जाए। (११) अनेक शत भेरियाँ भननक रही हैं (१२) और शहनाइयाँ सिंधू राग में लिप्त हो रही हैं। (१३) शर्व (काली) निशा में नृपति (जयचंद) की सेनाएँ [इस प्रकार] फिर रही हैं (१४) मानो भानु सुमेरु की भाँवरें भर रहा हो। (१५) समस्त दल को सँभाल (तैयार) कर जयचंद ने एक अरति (बेचैनी) उत्पन्न कर दी है, (१६) जिससे कि उसका शत्रु नरेन्द्र (पृथ्वीराज) निकल कर भाग न जाए। (१७) इस प्रकार तीन प्रहर गत होने पर रात्रि पीत पड़ गई (१८) और देवताओं ने आकाश में [पृथ्वीराज का] 'जय-जय' किया। (१९) नृप (जयचंद) शर्व (काले) तुरंग पर चढ़ा माग रहा है (२०) और बिना भानु (दिन) के ही सेना के प्रयाण के हेतु शस्त्रास्त्र निकल पड़े हैं। (२१) चहुआन (पृथ्वीराज) ने कुपित होकर कमान (धनुष) लिया (उठाया) (२२) और [उसे] भौंहों से मिलाकर खींचा और [उसे] कम्पित दी (तनाव दिया)। (२३) शरों के छूटने से [उनमें लगे हुए] पंखों का शब्द हुआ, (२४) [जिससे] गजेन्द्रों का सुगंधित मद सूख गया। (२५) उसके एक शर ने सात हाथियों को बेध डाला, (२६) यह देखकर जयचंद के दल में नेक (बहुत) ठिठक पड़ गई।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
§चिह्नित शब्द ना. में त्रुटित हैं।
×चिह्नित शब्द और चरण म. में नहीं हैं।
०चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
‡चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।
(१) १. म, उ, स, में इसके पूर्व और है :
निप मंगिय राज तुषार चढे। कवि चंद जयज्जय राज पढे।
२. फ. कटिकति, उ. स. कटिकसति, ब. स. करक्कत। ३. ना. घेर।
(२) १. अ. सि, फ. धि। २. ना. म. उ. स. सुन।
(३) १. ना. गज—['राज नहीं है'] २. धा. विराजहिं, म. अ. फ. विराजत, ना. विराजति। ३. अ. फ. वनं।
(४) १. मो. जन, म. जनों, शेष में 'जनु'। २. धा. बद्दर, मो. बदलि, शेष में 'बद्दल'। ३. मो. धा. अ. फ. अंम (=अभ्र), ना. म. उ. स. अम्म। ४. म. इनं, अ. फ. उनं (<वन ?)।

(५) १. धा. पसंग । २. धा. म. उ. स. घनौ, ना. भणी, अ. फ. रेनं ।

(६) १. म. जनौ । २. धा. फ. हेम । ३. ना. समुद । ४. धा. उ. स. अनौ, म. ना. फ तनौ, अ. मन ।

(७) १. मो. विरष (= वइरष), धा. अ. फ. ना. वैरष । २. धा. ना. अ. फ. वंबर, मो. चंपरि । ३. धा. तणी ।

(८) १. धा. अ. फ. विच, ना. विचि, मो. विरच (?) । २. मो. महीय सहीय, ना. उ. स. माहिय स्याहिय (उ. में 'स्याहिय' नहीं है), अ. फ. माहि सुअसवह (असछहि—फ.) । ३. मो. सिध, अ. फ. हीस, ना. संघ । ४. ना. रणी, अ. फ. धनी ।

(९) १. धा. अ. फ. हरि पटिंव (वत्त-अ.फ.) हिमाउम (हिमाधन-अ.) पीत पत्ती, ना. उ. स. हरि पण्प दुमा (हम—स., उमा—उ.) उपरीत (अपीत—स., पति पीत—उ.) वनी (पनौ—ना. उ.) ।

(१०) १. धा. अ. फ. देखि, स. ज्नु । २. धा. यत्थिय, अ. फ. त्थिवत, ना. में यह शब्द नहीं है, म उ. स. लइअत । ३. अ. रैनि, फ. रेनि, उ. स रैनि । ४. फ. मरिर; ना समुद ।

(११) १. मो. मननंतहि, धा. भण्णंषिय, ना. अ. म. उ. स. मननवहि, फ. घननषहि । २. मो. मेर । ३. धा. लनेग, अ. फ. अनेक । ४. ना. मियं ।

(१२) १. मो. सरणार, धा. मरण हनि, अ. सहनाइन, फ. सेहनाइन, म. उ. स. सहनाइय, ना. सहनाइनि । २. मो. सीधू, धा. म. उ. स. सिंधुअ, अ. फ. ना. सिंधुव । ३. मो. आग, धा. पूरि । ४. अ. फ. म. उ. स. लयं ।

(१३) १. म. निस, फ. निश । २. ना. अ. सव्व, फ. सबि, म. उ. स. सब्ब । ३. मो. सिहौ नृपति, ना. हि नृप । ४. मो. फेरि (< फिरइ ?) म. फिरै शेष में 'फिरै' ।

(१४) १. धा. ना. म. उ. स. अ. जनु, फ. जानौ । २ धा. भावर, फ. भाउर, ना. भामरि । ३. धा. भाण । ४. धा. समेर, फ. तुमेर । ५. मो. केरि (< किरइ ?), धा. करयो, फ. करी, स. करैं, शेष में 'करं' ।

(१५) १. म. उ. स. सब्ब, फ. सतू । २. मो. संभरि, धा. समोरि, ना. सम्हारि । ३. धा. वरक्त, अ. वरत्ति, फ. वरेर, म. उ. स. अरत्ति ।

(१६) १. म. जिनि, मो. जन (< जिन), अ. फ. जिल्लि, ना. जिन । २, धा. ना. जाइ । ३. धा. नरेंद, ध. म उ. स. ना. नरिंद, ना. अ. फ. विपत्ति ।

(१७) १. ना. त्रि । २. म. करौ ।

(१८) १. धा. सथ सद कथारसनु देव, ना. म. उ. स. जधरद कथारसह (कथारसद—म.) देव । २. धा. उ. स. में यहाँ और है :

कर चंपि नरिंद संजोगि महीं । उपमा चारचाह (वरचाह—म.) सुभट्ट कहीं ।
मनौं भोर दुसारसि अग्गितपी । कलिका गजराज कमोद झपी ।
य चपि रकेवनि वाल चढ़ी । रवि वेलि किधौं गह काम बढ़ी ।
तरतोन चमंकत पच्छ दिठी । जु मनो तन भान मयूष उठी ।
मुष दपति चंद विराज वरं । उदै अस्त सभी रवि रथ्थ परं ।

(१९) १. मो. नृप जागति सर्व तुरग, धा. अ. फ. ना नृप जग्गति (जग्गत—अ., गज्जत—फ., जागति—ना.) सब्ब तुरग, म. उ. स. भर अप्प सजे (सजैं—उ.) ह्य तुरग (तरग-स.) ।

(२०) १. धा. विणु भाणु पयाणहि, अ. फ. विन भान पयानह, म. उ. स. मनो भान पयान ति (त—म.), ना. विन भान पयान ति ।

(२१) १. धा. वि । २. मो. कोपि, धा. फ. ना. कोप ।

(२२) १. मो. मुंहनि (= मंडहनि), धा. अ. फ. ना. मोहनि, म. सोहन, उ. स. मोहनि । २. ना. पंच किसीस ।

(२३) १. धा. तर छुट्टति पंखिण सद भयं, मो. सर छूट ति पंषन सद भयु (= मयउ), अ. फ. सर

दध्धर (सवदध्धुर–फ.) होत अनर मयं, ना. म. ढ. स. सर छुट्टति (छुट्टत–उ. स.) पंघ ति (पंघनि–ना.) सद्द भय (सयं–उ. स.) ।

(२४) १. धा. अ. फ. गयदनि । २. धा. सुक्ख, उ. स. सुक्कि, म. अ. फ. ना. सुक्क । ३. मो. गउ (= गयउ), शेष में 'गय' ।

(२५) १. धा. सर एक सविक्खित, अ. फ. सर विद्धत (विद्धन–फ.) इक्क, म. सर एक सुविधति उ. स. सर एक सुविधन । २. अ. फ. सात ।

(२६) १. मो. दल देषिति निक (< नैक) ठठु करी, धा. दल लिक्खित नयकव ठक्क परी, अ. फ. ना. दल दिष्षत (दिषिसि–फ.) नैंक (नेकु–ना.) ठठुक्क (ठट्ठक–फ.) परी, म. उ. स. दल दिष्षत नैंन (सैंन–म.) ठठुक्क परी । २ उ. स. में यहाँ और है :

तरवारि (तरवारां–उ.) हजारक च्यारि परी । प्रथिराज करंत न संक करी ।

इसी प्रकार यहाँ धा. अ. फ. में और है :

जहं जानइ सूरन भीर परी । ठिहइ चहुवान धु अपूप परी ।

किन्तु यह दोनों अतिरिक्त चरण उस उक्ति-शृंखला को भग करते हैं जो इस छंद के उपर्युक्त अन्तिम चरण तथा आने वाले छंद के प्रथम चरण में है । मो. म. ना. इस प्रक्षेप से मुक्त हैं ।

टिप्पणी—(३) धुन < ध्वनि । (४) वद्दलि < वार्दलिक (?) = छोटे बादल । अब्भ < अभ्र = आकाश (६) अन < अन्य । (८) साहोय < साधित=निष्पादित । (९) मऊष < मयूख । (१०) रैण < रजनी । सय < शत । (१२) लिय < लिप्त । (१३) सर्व < शर्व (१५) अरत्ति < अरति । (१६) अयास < आकाश । (१९) सर्व < शर्व । (२४) पष्प < पक्ष । सद्द < शब्द शब्द । (२४) गयद < गजेंद्र । (२६) नेक [न + एक] = बहुत ।

[१०]

भुजंग— उठके सव सेन नइ*[१] मीर मिल्ले[२] । (१)
विजे सब सेन तिवके नक्के[१] । (२)
गिर[१] चहुआन राठौर जाले[२] । (३)
देषिअइ*[१] पंगुरे[२] नयनउ लाले[४] ।[५] (४)
कोपियं[१] वीर पिथपाल[२] पुत्तं । (५)
थाविअं जंम हा मार दुत्तं[१] । (६)
संघरे सैन सन्नीह दीहं[१] । (७)
नौमि तिथि पहिल[१] पृथीराज सीहं[२] । (८)
राजसं तामसं वग[१] प्रगट्टं । (९)
मुक्कियं सत्त[१] सातुक्क[२] वट्टं[३] । (१०)
सार संपत्त[१] घातप्प रच्छं[२] । (११)
मनउ*[१] धावमं इंद्र रुद्र निषरसं[२] । (१२)
निझ्झरहिं[१] ढाल गय[२] मत्त[३] मत्तं । (१३)
उट्ठियं सूर तामस[१] रत्तं । (१४)
भूमि भर परग पीठ रे सुर्पथ । (१५)

सथिय[२] चिय हथ्थिश प्रथीराज सथ्थं[४] । (१६)
चढे[२] वीर सामंत सा वीर[२] रूपं । (१७)
जिसे सयल सद्दूर संदेश[२] जूपं । (१८)*
चढे विग्रा वाये सु माये उदंता[२] ।[×](१९)
जिसे अर्क फल फूटते ही अ ंता[२] ।[×] (२०)
कंपि ते कायर लोह रत्तं[२] । (२१)
जिसे[२] अनिल[२] आरंभ पारंभ[२] पत्तं[४] । (२२)
इसउ[२] युध्ध अनुध्ध[२] मध्यान हूअ[२] । (२३)*
रहे हारि हथ्थं ति जूआरि[२] जूअं[२] ।°(२४)
नामियं अस्सि[२] डिल्ली दिसानं ।§(२५)
पुट्टिरे[२] पंगु वज्जे निसानं ।§(२६)
चंपइ[२] चाहि[२] चहुयान[३] हरसिंघ[४] नायउ*[५]।(२७)*
जिसे[२] सेयल ते[२] सिंघ[३] गजजूथ पायउ[४]।।[५](२८)*

अर्थ—(१) सब सैनिक ठिठक गए और अमीर म्लान हो गए। (२) सब सैनिक भाग खड़े ए और उन्होंने लड़ने से इनकार कर दिया। (३) चहुआन (पृथ्वीराज) ने राठौर (जयचन्द) ो चिरकाल तक जलाया—संतप्त किया—था, (४) [इसलिए इस समय] पंग (जयचन्द) े नेत्र लाल दिखाई पड़ रहे थे। (५) वीर विजयपाल का पुत्र (जयचन्द) कुपित हुआ (६) ौर अपने जन्म (जीवन) को भारहीन करने के लिए द्रुत आया। (७) किन्तु [पृथ्वीराज ने सके] दीर्घ सैन्य-समूह का संहार किया (८) और नवमी तिथि को उस [सैन्य-समूह] को ृथ्वीराज सिंह ने [रणस्थल में] डाल दिया। (९) रजस् और तमस् के काव्य वहाँ प्रकट हुए, १०) सबने सात्विक मार्ग का त्याग कर दिया। (११) उस युद्ध में संप्राप्त सार (शस्त्रास्त्र) ातपत्र (छाते) हो रहे थे, (१२) और [वे आयुध ऐसे लगते थे] मानो इन्द्र और रुद्र ने आयुध नेकाले हों। (१३) मत्त गज-मद के निर्झर (!) ढाल रहे थे। (१४) शूर और सामंत लाल हो उठे। १५) [रण] भूमि में धृष्ठ भट स्वपथ को धरण करने लगे। (१६) पृथ्वीराज के साथी दोनों ाथों में [अस्त्र धारण करने वाले] हो रहे थे। (१७) [उसके] वीर सामंत ऐसे वीर रूप में ढ रहे थे (१८) जैसे वे सब सन्देश (संदेह देवो) के यूप (स्तंभ) के सिरे हों (१९) भानु के उदित ोने पर विग्रह (!) के खाने वाले [इस प्रकार] गिरने लगे (२०) जैसे अर्क का फल फूटते ही अनत [सुवों के रूप में] हो [कर उड़] जाता है। (२१) कायर लोग रक्त लौह (शस्त्रास्त्र) देख कर [इस प्रकार] काँपने लगे (२२) जिस प्रकार अनिल के आरम्भ (वेग से चलने) से पत्तों में लवल हो जाती है। (२३) मध्याह्न तक इस प्रकार का अनुद्धत (अपरिरक्षक) युद्ध हुआ (२४) [मानो] जुआड़ी जूए में हाथ (दाँव) हार गए हों। (२५) [इसी समय पृथ्वीराज ने] अपना श्व दिल्ली की दिशा में मोड़ा (२६) और उसकी पीठ पर पंग (जयचन्द) के धौंसे बज उठे। २७) [जयचंद की सेना पर] आक्रमण करने के लिए चाव (उमंग) पूर्वक चहुवान हर सिंह ूक पड़ा (२८), जैसे शैल शिखर से सिंह गजयूथ पाकर टूट पड़ा हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के है

§ चिह्नित चरण मो. ना, म. ब, स. में नहीं है।

× चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।

० चिह्नित चरण धा. में नहीं है।

(१) १. मो. ठक्के सब सेनि नि (=नइ), धा. ठक्की सेनि समि, अ. फ. ठट्टुरा। सेन सब, म. उ. स. ठट्टक्के सुसेनं मनं, ना. ठट्टक्के सेन मन। २. मो. मिल्लो, शेष सभी में 'मिल्ले'।

(२) १. मो. विज्झे सब सेन तिके नकरे, धा. विड्डरिग सेन सब्बे नकल्ले, अ. फ. ना. विडरियं (विड्डुरी–ना.) सेन सब्बे (सब्बं–फ. ना.) निकल्ले, म. उ. म. टर विड्डुरी सेन सब्बे (सबं–म.) निकल्ले।

(३) १. मो. चिर, धा. थरि, अ. फ. चाइ, म. उ. स. थर थंर, ना. थेर। २. म. रठौर। ३. मो. जाले, धा. जूरे, अ. फ. रढ, ना. म. स. झाले, (झालें–स.), उ. झले।

(४) १. मो. देषोइ (=देषिअइ), धा. दिषियो, अ. फ. दिषियषदि, म. उ. म. तवे लषियं (सषीयं–म.), ना. दिष्षे। २. धा. पगरे, अ. ना. म. उ. स. पंगुरा, फ. पिगुरी। ३. अ. प. म. उ. स. नेन, ना. नंन। ४. धा. भरे, अ. फ. म. उ. स. लहं (लउँ–म. उ. स.)। ५ ना म उ. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

तिन+ उप्पजी रोस उर अग्ग अगो। उसं+ निकारे नियनि यै नैन मग्गी।
तिनं+ लुबियं नैन दीसैं दिमान। तव+ चापिय राजनं चाहुआन।
तिन+ उप्पजी रोष धुनि सिंगिनारं। तिन+ मक्किय नह नीसान भारं।
लय+ लग्गिय क्रम राजं सजोई। तिन+ अप्पिय कत कोवड जोई।
तिने+ सुमरियं चित्त गध्रव्व सद्द। उत+ जोइयं मुष्प सामत दद्द।
वचन्नं सुसदं कवी चद बोल्यौ। तवै+ भगियं कन्ह भो सो अबोलं।
सबें+ लग्गियं मान रायंति रायं। उनं+ देषिय आज को जुद्ध चायं।

+ ना. में चिह्नित शब्द नहीं है।

(५) १. धा. कुप्पियो, अ. कप्पियउ, फ. कपिया, ना. कोपीयं, म. उ. स. तव कोपियं। २. धा. वीर विजैपाल, ना. वो [र] विजैपाल। ३. म. सुतं।

(६) १. धा. अवद्ध राइ जम गार दत्तं, अ. फ. आवधं करहि जमजाल जुत्तं, म. स. तिनं आवधं (आवधं–म) धारि जमजालि दुत्तं, उ. तिन आवधारि जमजालि दुत्तं, ना. आवध कार जमजार दुत्तं।

(७) १. धा. संपरे सेन सह सदाह, अ. फ. सहर्यौ सेन मनि सो सदोह, म. उ. स. सब संघरी (संहरे–उ, संधरे–म.) सेन (सेन–म. उ.) संनीह (सीन्नह–स.) दोहं, ना. संघरे सेन सनाह दोह।

(८) १. मो. नौमि तिथि थाल, धा. अ. नौमि तिथि थलह, फ. नौमि तिथि थलि, उ. स. हसो नौमि तिथि थान, म. हसौ नौमि तिथ, ना. नौमि तिथि थाल। २. धा. प्रिथिराज साहं।

(९) १. मो. रानसं तामसे वग, धा. राजस तामसं वेग, अ. फ. राजस तामसं वेदं (वे–अ.), म. उ. स. तिसं राजस तामसं वे, ना. राजसं तान सव्वे।

(१०) १. धा. मुक्कियं एक, अ. फ. मुक्कियं इक, ना. मुक्कीयं सव्व, म. उ. स. भर मुक्कियं सव्व। २. धा. सातुक, म. सापुक। ३. स. बहूं।

(११) १. फ. सार संपत्ति, म. उ. स. सर सार संपत्ति (संपत्त–म उ.)। २. धा. ना. पत्ते तिरच्छं; म अ. फ. पत्तेति रच्छ, उ. स. पेतित्ति रच्छ।

(१२) १. मो. मनइ, धा. उ. स. मनो, ना. मनु (=मनउ), म. अ. फ. मनौ। २. धा आबद्ध रुद्र इंद्राति कत्थ, अ. फ. आवर (आउद्ध–फ.) रुद्ध इंद्रानि कछ्छ, ना. आवध रुद्रानि करथ, म. उ. स. आवध इद्द रुद्रानि (रुद्रनि–उ., रुद्रान–म.) कच्छ।

(१३) १. धा. मो. निढरहि, अ. फ. ना निढ्ढरइ (निढ्ढरं–फ.), म निढरहि. उ. स. वरं निड्ढरी। २. फ. में यह शब्द नहीं है। ३. अ. फ. गंत, ना. म. उ. पत्त, स. पत्ति।

(१४) १. धा. पुट्ठि सावंत सामित्त, अ. फ. पुट्ठि सामंत सीमंत, ना. उढ्ढिय सूर सामंत, म. उ.

स सर्वे छुयं सर सामंत।

(१५) १. धा. फ. भूमि (भौमि-फ.) मारत्थि (मारय—अ. फ.) दर (दरै—अ. फ.) लोह पत्थ, म. उ. स. उत्तं भूमि भर (भर—म.) धरनि (धरनि-म.) ढहि ढरि सुपथ्थं, ना. भूमि पर धरणि ढहि ढरि सु पत्थं।

(१६) १. म. उ. स. तन अंथिय। २. फ. वह, म. वस। ३. अ. ना. इत्थि, शेष में 'इथ्थ'। ४. धा. अ. फ. इथ्थं।

(१७) १. धा. बढे, अ. फ. विढइ। २. मो. स. बीर, फ. सा बीत।

(१८) १. मो. जिसे सयल सिंदूर (=सिंदूर), धा. जिसे सयल सादूल सदेस, अ. फ. जिसौ सेल सादूल सदेस, ना. म. उ. स. जिस सेल (तेल-उ., सैल—ना.) संदूर (सिंदूर—ना.) संदेस (सदेह—ना.)

(१९) १. धा. उठे विगावाने स माने छढंतं, ना. म. उ. स. उठे विग्र वाने (वाने-ना.) सु माने (सुमाने—ना. म.) उदंता।

(२०) १. धा. जिरे अंकुलाये निकट्टे अनंतं, उ. स. जिसे अर्क फल फुटि होते अनंता, म. जिसे सेल सदूक (तुल० चरण १८) फल फुटि हो ते अनता, ना. जिम अर्क फूट हिते अनंता।

(२१) १. मो. कंपि ते कायर लोह रत्तं, धा. फ. कपे काइरह लोह रत्ते सरंतं, अ. कपे काइरय लोह रत्तौ सरत्त, ना. कपोयं कायरं लोह रत्तं, म. उ. स. तत्ते कपियं काइरं (कायरं—म.) लोह रत्तं (रत्त—स.)।

(२२) १. धा. जिसो, अ. जिसौं, फ. यिसो, म. उ. स. मनो (मनौं—म.), ना. मनु (=मन)। २. धा. अनल। ३. फ. पारंभ, ना. उ. स. प्रारंभ। ४. धा. तं।

(२३) १. मो. इसु (=इसउ), ना. इसा। २. धा. अ. फ. अनुरुद्ध, म. उ. स. आवद्ध, ना. आनुद्ध। ३. ना. हुव्वं।

(२४) १. अ. जिसो बाप, फ. जिसो रूप, म. उ. स. जु जूझारि (जूझारि—म.), ना. जिसं जुव्व। २. ना. जुव्वं।

(२५) १. अ. फ. अस्व। २. धा. निसानं।

(२६) १. अ. फ. पुट्टय।

(२७) १. मो. चंपि (=चंपइ), धा. म. चंपे, अ. ना. उ. स. चपै, फ. चपौं। २. धा. अ. फ. उ. स. चार, ना. रार, म. चाय। ३. मो. चहवान। ४. धा. हरि सिंघ। मो. नायु (=नायउ), शेष में 'नायो' या 'नायौ'।

(२८) १. अ. जिसो, ना. म. जिसै। २. धा. सयल तें, अ. फ. सेल तें, ना सेल मैं, म. उ. स. सेल मैं (मैं-उ. स.)। ३. मो. संघ (< स्तंभ)। ४. मो. पायु (=पायउ), धा. पायो, शेष में 'पायौ' या 'पायौ'। ५. मो. ना. म. उ. स. में यहाँ और हैः करे कूह (कह—मो.) गग जूह सनमुष धायु (धायौ—ना. म. उ. स.)। मंगुराय दल समिटि चहु कोद छायु (छायौ—ना. म. उ. स.)। किन्तु स्वीकृत अगले छंद की प्रथम पंक्ति के साथ इस छंद की स्वीकृत अंतिम पंक्तियों की उक्ति-शृङ्खला प्रकट है।

टिप्पणी—(२) विज=भागना। (३) जाल < ज्वालय्=जलाना (६) जंम < जन्म। दुत्त < द्रुत। (७) सन्नीह < सन्निधि=संग्रह। दीह < दीर्घ। (८) घाल < घल=फेंकना। (९) बग < वग्ग < वाक्य। (१०) मूक < मुच्=छोड़ना। सातुक < सात्विक। बट्ट < वर्त्मन्। (११) संपत्त < संप्राप्त (१२) आवद्ध < आयुध। (१३) निट्टर < निर्झर (?)। (१४) रत्त < रक्त। (१५) पीठ < पृष्ठ। (१६) अत्थि < अस्थिन्। थिय < द्रय। (१८) सयल < सकल। सदूर < शार्दूल। (१९) वह < पत्=गिरना। विग्रा < विग्रह (?)। (२२) पारंभ < प्रारंभ। पत्त < पत्र। (२३) अनुद्ध < अनुद्धृत=अपरित्यक्त। (२५) अरिम < अप। (२८) सेयल < शैल।

[११]

कवित्त— करि जुहार हरसिंघु[१] नायउ*[२] चहुआन पहिल्लउ*[३] । (१)
धरी अनी सां वरिय[२] लप्पु[३] सउ*[४] भिडउ*[५] इकिल्लउ*[६] । (२)
अगम कयाहउ*[१] फिरिय* धरणि पुर पुर सउं*[३] पुंदइ*[४] । (३)
एक[१] लप्प सउं*[२] भिरइ*[३] एक[४] लप्पइ*[५] रण[६] रुंधइ*[७] । (४)
तिल तिल हुइ त्रुट्टउ* नहि मुरउ*[१] जय जय जउ*[२] आयास[३] भयु[४] । (५)
इम जंपइ[१] चंद विरद्दिया*[२] च्यारि[३] कोस चहुआन गयु[४] ॥ (६)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने जब दिल्ली की दिशा में बाग मोड़ी,] उसको जुहार करके पहला योद्धा चहुआन हरसिंह झुक पड़ा। (२) उसने [शत्रु की] जिस अनीक (सेना) का वरण किया, उसका वरण कर ही लिया, [उससे मुड़ा नहीं] और [शत्रु के] लाख सैनिकों से वह अकेला भिड़ गया। (३) उसका अगम [नाम का] कयाह [जाति का] घोड़ा भी, जब वह [रणभूमि में] फिरने लगा, धरणी को अपने क्षुर (खुरे) के सदृश खुर से खूंदने लगा। (४) [हरसिंह] एक लाख से भिड़ा और एक लाख को उसने रण में रोक रक्खा। (५) वह तिल-तिल होकर टूटा (कट गया) किन्तु [युद्ध से] मुड़ा नहीं, जब [उसकी इस वीरता पर] आकाश में 'जय जय' हुआ। (६) चन्द विरदिया कहता है, इस प्रकार [हरसिंह के जूझने से] चहुआन पृथ्वीराज [दिल्ली की दिशा में] चार कोस [आगे निकल] गया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. धा. ना. म. हरिसिंघ, अ. वरसिंघ, फ. उरसंघि, स. नरसिंघ। २. मो. नायु (=नायउ), धा. अ. नयो, म. फ. ना. नयौ। ३. मो. पहिलु (=पहिलउ), धा. पहिलो, शेष में 'पहिलो' या 'पहिलौ'

(२) १. धा. वरिय। २. धा. अ. उ. स. सावटी, फ. सावटी, ना. सामंटा। ३. धा. अ. म. उ. स. लष्ष, फ. लषि। ४. मो. सु (=सउ), धा. सं, अ. सन, फ. सत्र, ना. सुं (=सउं) उ. स. सों, म. सौं। ५. मो. भडु (< भिडउ), धा. लरयो, अ. फ. ना. म. उ. स. भिरयो। ६. मो. इकिलु (=इकलउ), धा. अकल्लो, अ. फ. अकिल्लो, ना. म. उ. स. इकल्लो।

(३) १. मो. कहायु (=कहायउ), धा. कयाहो, अ. फ. कयाहै, ना. कयाहु (=कयाहउ), उ. स. कायहुअ, म. कायकरि। २. मो. फिरिय (< फिरिय), फिर्‌यो, ना. फिरैं, शेष में 'फिरयो' या 'फिरयौ'। ३. मो. ना. पुर पुर सुं (=सउं), धा. तिल तिल पुर (तुल० चरण ५), अ. पुर पुर सो, फ. धुरस्यो, म. उ. स. पुरसौं पुर (पुर—म.)। ४. धा. खुदे, मो. षोदि (< षुदइ ?), अ. फ. खुंदइ, ना. पुंदै, म. उ. स. पुंदहि।

(४) १. धा. अ. फ. इक। २. मो. सु (=सउ), धा. सो, ना. सु (=सउ), अ. फ. म. उ. स. सौं। ३. मो. भिरि (=भिरइ), धा. भिरे, अ. फ. लरइ (लरै—फ), ना. उ. स. भिरे, म. भिर्‌यौ। ४. धा. अ. फ. ना. इक। ५. मो. लषि (=लपइ), अ. म. उ. स. लषइ, फ. ना. लषहि। ६. उ. रिन, ना. नर। ७. मो. रुंधि (=रुंधइ), धा. रुंधे, ना. रुंधे, म. उ. स. रुंधहि।

(५) १. मो. तिल तिल हुइ तुडु (=त्रुटउ) नहि मरु (=मरउ), धा. तिलतिल तुट्यो नहीं मुरयो, अ. इतिल तिल होइ तभो जही, फ. तिहीं लोयन भीर ही, म. उ. स. असि धार (धार—ग.) धाइ (धाय—म)

वज्जै (व जे–म.) विषम, ना. तिल तिल कै टुट्यौ नहि मुर्‌यौ । २. मो जय जय जु (= जइ), धा. अ. फ. ग़ुरि हय हय, ना. जय जय जय, म. उ. स. जै जै जै । ३. धा. अ. फ. म. उ. स. आयास, मो. ना. आकास (आकाश–ना.) । ४. धा. अ. फ. मउ, ना. भय, म. उ. स. भौ ।

(६) १. मो० जपि (= जंपइ), धा. लंपे, शेष सभी में 'जंपे' । २. मो. म. विरद्दिय, ना. विरुदीय, शेष में 'विरद्दिया' । रचना में अन्यत्र 'विरद्दिआ' ही है, यथा ८. १४, २.२९, ३.१, ५.१९, ५.४५, १२. ४०, १२.४९ । ३. अ. फ. चारि (चार–फ.) । ४. धा. अ. फ. गउ, ना. गय, म. उ. स. गौ ।

टिप्पणी—(५) आयास <आकाश । (६) जंप<जल्प् ।

[१२]

दोहरा— परत धरयि हरसिंघ[१] कहं[२] हरषि पंगु[३] दल सब्ब[४] । (१)
*मनहु जुद्ध[१] जोगिनि[२] पुरह तनु[४] मुक्कयउ[*५] सब[६] गब्ब[७] ॥ (२)*

अर्थ—(१) हरसिंह के धरणी पर पड़ते—गिरते—ही सारा पंग (जयचन्द) दल हर्षित हो उठा, (२) [उसे ऐसा प्रतीत हुआ] मानो युद्ध में योगिनीपुर (दिल्ली) के गर्व ने ही [हरसिंह के रूप में] शरीर छोड़ा हो ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. धा. हरिसंघ, मो. हरसिंघ (< हरस्यंघ), अ. स. नरसिंघ, फ हरसिंघ, म. ड. हरसिंघ ना. हरिसिंह । २. मो. ना. कह, धा. अ. फ. कहु, म. कै, उ. स. कहुं । ३. धा. हरिस पंगु, ना. ह रकिग पंगु, म. रकिय पंग, स रकिय गयंद । ४. धा. सब्ब, उ. सब्ब, म. स. थब्ब ।

(२) १. धा. मनुह, ना. मनुहूं, फ. मनोह । २. मो. युध, म. जुध, ना. जुद्ध । ३. धा. म. स जोगिन, ना. जुग्गनि । ४. धा अ. फ. तन, ना. म. उ. स. तिन । ५. मो मुक्यु (=मुक्कयउ), अ. फ मुक्यो, ना म. मुक्यौ, स. मुक्कयौ । ६. म. अब । ७. ना. चब्ब, म. ग्रब, स. अब्ब ।

टिप्पणी—(२) मुक्क < मुच् । गब्ब < गर्व ।

[१३]

दोहरा— फुनि[१] प्रथिराज अछिछ्[२] देह[३] धलु[४] रट्ठिवर[५] नरेस । (१)
*सिर सरोज चहुआन कउ[*१] भमर[२] सल्ल[३] सम भेस ॥ (२)*

अर्थ—(१) तदनतर पृथ्वीराज को आंखों से देखकर राठौर नरेश (जयचंद) घूम पड़ा । (२) चहुआन (पृथ्वीराज) का सिर सरोज [के सदृश हो रहा] था, और [उसके ऊपर मँडराने वाले] शल्य भ्रमर के सदृश वेश के [हो रहे] थे ।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. धा. अ. फ. पुनि । २. मो. प्रथीराज अछि देह, धा. प्रिथिराजहि अस्थि, अ. ना. प्रिथिराजह अछिछ, फ. प्रिथिराजहि अछिछ, म. उ. प्रथिराज सु कच्छ, स. प्रथिराज सुपच्छ । ३. मो. देह, धा. दल, शेष सभी में 'दल' । ४. अ. दश, फ. वलि, म. उ. स. वर । ५. धा. राटोर, अ. फ. ना. राठौर, म. उ. स. रट्ठौर

(२) १. धा. के, अ. फ. कौ, ना. म. उ. कै । २. धा. भंवर सार, अ. फ. सार भंवर, म. उ. स. भवर सल्ल, ना. भ्रमरि शल्ल ।

टिप्पणी—(१) अछिछ < अक्षि=आँख । देह < देक्ख < दृश् । घल < घल्=घूम पड़ना ।

[१४]

कवित्त— *दिप्पि सुनहुं प्रथिराज[१] कनक नायो[२] बड गुज्जर[३] । (१)*
हम तुम[१] दुस्सह मिल नु§ स्वामि§[२] हूनइ§[३] तु अप्पु*[४] घर§ । (२)*
हउं§[१] रविमंडल§ भेदि§ जीव§ लगि सत्त न छडहुं[२] । (३)*
पंड पंड हुइ[१] तुंड[२] मुंड[३] हर[४] हार सु मंडहु[५] । (४)
इह वंसि भज्जि[१] जानइ[२] न कोइ[३] हउ*[४] पति पंक अलुज्झयउ[५]* । (५)*
इम जंपइ[१] चंद विरद्दिआ[२] पट त[३] कोस चहुवान गयु[४] ॥ (६)*

अर्थ—(१) कनक बड़गूजर झुका, और उसने कहा, "हे पृथ्वीराज [सारी परिस्थिति] देख कर सुनो; (२) हमारा और तुम्हारा [पुनः] मिलना दुस्सह (कठिन) है, [इसलिए] हे स्वामी तुम स्वयं तो अपने घर हो (पहुँच जाओ), (३) और मैं *रवि-मंडल का भेदन करूँ—वीर गति प्राप्त* करूँ; जीवन (प्राणों) के लिए सत्य नहीं छोड़ूँगा; (४) मेरा तुंड (मुख—सिर) खंड-खंड हो जाएगा, तो मैं [अपने] मुंड से हर-हार को तो मंडित करूँगा । (५) इस (मेरे) वंश में भागना कोई नहीं जानता है, मैं तो स्वामी के [लाज—] पंक में आबद्ध हुआ हूँ ।" (६) चंद विरदिया कहता है, इस प्रकार [कह कर कनक बड़गूजर के जूझते-जूझते] चहुवान (पृथ्वीराज छः) कोस निकल गया ।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

§ चिह्नित अक्षर और शब्द अ. फ. में नहीं हैं ।

(१) १. धा. देषि सुनहु प्रिथिराज, फ. दिष सुनहु प्रथिराज; ना. म. उ. स. मो आयस (आइस—ना.) प्रथिराज । २. म. नांयौ । ३. धा. बर गुजर, मो. बड गूजर, शेष सभी में 'बड़ गुज्जर' ।

(२) १. ना. तुम्ह । २. फ. सि । २. ना. म. सामि । ३. मो. हूजि (=हुज्इ), धा. हुइ जाइ, स. हुज्जै, म. न. उ. हुज्जै । ४. मो. तु अपु (<अप्पु), धा. अपन, ना. इव अप्प, म. उ. स. सु अप्प ।

(३) १. मो. हुं, धा. मो, ना. हुं (= हउं), म. हौ, उ. स. हौं । २ धा. छंडउं, मो. छंडडु, ना. छडुं (=छडउं), म. षंडौ, उ. स. षंडो ।

(४) १. धा. षंड षंड हु अ, फ. पंड पंड होइ, म. उ. स. षंड षंट करि, ना. षंडि षंड करि । २. मो. अ. तुंड, धा. रुंड, शेष सभी में 'रुंड' । ३. मो. मंड । ४. फ. हरि । ५. मो. हार सु मंडहु, धा. हार ज मंडउं, अ. फ. हारहि मंडौं, उ. स. हार सु मंडौ, म. हार सु मंडौ, ना. हार सु मंडुं (= मंडौ)

(५) १. धा. इह वंस भाजि, अ. इह वंस भज्जि, म. उ. म. इह वंस भग्गि, ना. इहि वंस भग्गि । २. मो. जानि (=जानइ), धा. जानइ, अ जाने, फ. गवरे, ना. म. उ. स. जाने । ३. फ. स. कोइ, ना. न कुइ, म. उ. स. न को । ४. मो हु (= हउं), ना. हुं (= हउं), धा. हो, अ. गुरि, फ. जुक, म. हो, उ. स. हौं । ५. धा. पंक अलुज्झयउ, मो. पंक अलुझयु, अ. पंक अरुझयउ, फ. पंक अमझयउ, ना. उ. स. पंक अलुझ्झयौ, म. एक अलुझ्झयौ ।

(६) १ मो. जपि (= जपइ), धा. जंपइ, शेष में 'जंपै' । २. मो. विरदीउ (= विरदिअउ), ना. विरुदीया, शेष में 'वरदिया' । ३. धा षट सु, म. उ. स. षट्, ना. षट ति । ४. धा. अ. फ. गउ, म. ग्यो, उ. स. गौ, ना. गयो ।

टिप्पणी—(५) अलुज्झ < आरुद्ध (?) ।

[१५]

दोहरा— वड हथ्थह[१] वड गुजरह[२] जुम्मिफ[३] गयउ[४] वैकुठि[५] । (१)
भीर सघन स्वामिहि[१] परत चषि[२] कबंध[३] अरि दीठि ॥ (२)

अर्थ—(१) बड़े हाथों वाला बड़ गूजर (कनक) जूझ कर वैकुंठ गया; (२) स्वामी पर सघन (घनी) भीड़ (आपदा) पड़ने पर उसे आंखों से [केवल] शत्रु [पक्ष] का कबंध दिखाई पड़ता था (उसको शत्रु का संहार करने के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझता था) ।

पाठान्तर—(१) १. धा. हथ्थहि, फ. हथ्थ, ना. हथ्थी । २. मो. गूजरह, धा. गुज्जरह, अ. फ. गुज्जरत, ना. म उ. स. गुज्जरह । ३ धा. अ. जुज्झि, मो. म. झुझि (= झुज्झि), फ. रुज्झि, ना. झुझि । ४. मो. ना. फ. म. उ. स. गया (< गयउ), धा. अ. गयउ । ५. मो. बकुठि, धा. बैकुठ, शेष सभा में 'बकुठ' ।

(२) १. मो. सघन स्वामिहि, फ. सघन स्वामिह, ना. सघन सामिह, उ. स. सघन सामित, म. सघन सामित । २. मो. चष्य (< चष्य=चषि), अ. फ. चषि, ना. मा उ. स. चख । ३. धा अ. फ. कम धुज्ज (कम धज्ज-धा.), ना. कमध, म. निडर, उ. स. निड्डर । ४. धा. अरिनद, अ. फ. स (सु—अ.) दिठ्ठ, ना. म. उ. अरि दिठ्ठ ।

[१६]

कवित— धर फुट्टइ[१] खुरधार[२] लार[३] तुट्टइ[*४] सिर[५] उप्परि । (१)
तब[१] नायउ[*२] रठ्ठिवर[३] नृपति[४]‡ पृथिराज सामि छर[५] । (२)
पग्गह सीसु हनंत[१] पग्ग पुप्परिय[२] परप्पर[३] । (३)
सोनित[१] बिंदु[२] परंत[३] पंक[४] निध्धिय हि त गय धर[५] ॥ (४)
विरचियउ[*१] लोह[२] वर सिंघ सुअ[३] षंडषंड‡ तन[४] षंडियउ[*]।[५] (५)
नीडर[१] निसंक जुम्मफत रया[२] अट्ठ कोस चहुआन गयु[३] ॥ (६)

अर्थ—(१) [जब] धरा घोड़ों के खुरों की धार से फूट रही थी, और उनकी लाला [सैनिकों के] सिरों पर टूट रही रही थी, (२) तब राठौर [निडर राय] स्वामी नृपति पृथ्वीराज के छल (छद्म) में झुक पड़ा । (३) खड्ग से सिरों का मारते (काटते) हुए उसने खोपड़ियों पर खड्ग खड़खड़ाई । (४) [उसके संहार से] जो शोणित बिंदु गिरे, उनके पंक में गज धरा में विंध (फँस) गए । (५) वरसिंह के पुत्र निडर ने इस प्रकार लौह (तलवार) की रचना की, [तदनन्तर] उसका तनु खंड-खंड होकर खंडित हुआ । (६) [इस प्रकार] निश्शङ्क होकर निडर के जूझते-जूझते चहुआन (पृथ्वीराज) आठ कोस चला गया ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं हैं ।

(१) १. मो. फुटि (=फुट्टइ), धा. तुट्टइ, ना. पट्टै, फ. म. फुट्टै । २. मो. धा. धार, अ. ताल, फ. तालु, ना. म. उ. स. तार । ३. धा. लाल, अ. लाइर, फ. मूह, ना. धार, म. उ. स. तार । ४.

धा. फुट्टे, मो. तुटि (=तुट्टइ), अ. तुट्टइ, ना. तुट्टि (= तुट्टइ), फ. फुटे, म. उ. स. तुट्टं । ५. ना. में यह शब्द नहीं है । ६. म. ऊपरि, धा. उप्पर, ना. उप्परि शेष में 'उप्पर' ।

(२) १. फ. भव, म. उ. स. तहाँ । २. मो. नायु (= नायउ), धा. अ. म. उ. स. नायो, ना. निडुर, फ. नग । ३. मो. म. रठ्ठवर, ना. रठ्ठौर, धा. राठोर, अ. राठ्ठोर, फ. गतपरो । ४. म. त्रिप । ५. धा. मो. अ. फ. स्वामि छर, म. सामि वरि, ना. सामि छर ।

(३) १. मो. सीसह अनत, शेष सभी में 'सीस हनंत' (सीसु हनत-धा.) । २. मो. लुप्परिय, धा. लुप्परिव । । ३. धा. अ. फ. परप्पर (परप्पर-फ.), मो. ना. म. उ. स. पलप्पल (पलंपल-ना.)

(४) १. धा. स्रोनित, अ. फ. उ. स. श्रोनित, ना. म. श्रोनति । २. धा. अ. ना. म. उ. स. हुद, फ. हुंदहि । ३. फ. परतु । ४. म. उ. स. पग । ५. मो विधिवहित गय धर, धा. बिद्धिय गमंद धर, अ. बिद्धिया गयध्धर, फ. विद्धिा ज पश्नर, ना. विद्धी इयगय सम, उ. स. विद्धीय घरध्धन, म किद्धिय धन मम ।

(५) १. धा. अ. विरंचि, फ. बिहौपेपि, मो. बिरचिउ (= बिरचिअउ), ना. उ. स. बिरचयौ, म. तहां बिरंचि । २. फ. साहि, म. बोली ३. ना. जय सिंघ सुम । ४. ना. पड पड तनु, फ. पंडतु । ५. मो. पंडीय्यु (पंडिय्यउ), धा. अ. फ. पडयउ, ना. पडयो. म. उ. स. पंडयो ।

(६) १. मो. अ. नीडर, धा. निडर, ना. म. उ. निड्डुर, स. निड्डुर । २, मो. झझत रण, धा. जुझंत रन, अ. जुझ्झत रनह, फ. जुझझत रिण, म. दाझत रिनि, उ. स. झुझ्झत रन, ना. अनसकि रण । ३. धा. अ. चहुवान गउ, फ. चहुवान गौ, ना. म. उ. स. नृप हिंदयो ।

टिप्पणी—(१) लार < लाला । (२) छर < छल । (३) षग्ग < खड्ग । (४) धर < धरा । (५) सुम < सुत ।

[१७]

दोहरा— सम रट्ठउरनि रट्ठवर[१] निडर[२] झुज्झि गय[३] जाम । (१)
दिनिअर[१] दल प्रथिराज कउ*[२] चंपि पंग सम[३] ताम ॥ (२)

अर्थ—(१) जब कि राठौरों (अपने सजातीयों) के साथ अडर (निडर) राठौर भी जूझ गया, तब याम (प्रहर) गत हो चुका था, (२) और पृथ्वीराज के दिनकर दल को पंग (जयचंद) ने तमस् (अंधकार) के समान दबाया ।

पाठान्तर—चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. मो. सम रठुरनि (= रठउरनि) रठवर, धा. समर रठोरनि राठवर, अ. फ. ना. सम राठोरनि (राठोरन-फ.) राठवर (राठवरि-फ, रट्ठवर-ना.), म. सम रठ्ठौरन रिठवर, उ. सम रठ्ठौरन रठ्ठवर, स. सम रठ्ठौर रठ्ठवर । २. मो. अडर, धा. निडर, अ फ. निदर, ना. उ. निड्डुर, म. नियड्डुर, स. निडुरि । ३. मो. झुझि (< झुझिइ) गय, धा. अ. फ. जुज्झ गिरि, ना द झुझि गय, उ. स. झुझिगग, म. झुझि गर (= झुझि गर) ।

(२) १. धा. अ. म. उ. स. दिनयर, ना. दिणयर, फ. दिनयर । २. मो. कु (= कउ), धा. कौ, म. अ. फ. ना. कौ, उ. स. कौं । ३. धा. चंपिउ पंग सम, अ. फ. चंप्यौ पंगुस, म. उ. स. ना. राइ पंगु हुव, म. उ. स. राइ पंग मम ।

टिप्पणी(१)—गय < गत । (२) दिनअर < दिनकर । ताम < तमस ।

[१८]

दोहरा— चंपत पिछोरिय गति[१] चषह अपन[२] तन दिष्ष[३] । (१)
तन तुरंग तिलु ति तिलु कर[१] भयउ*[२] कन्ह[३] मन मिष्ष[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) दवाव के कारण पीछे की ओर ही [अपनी] गति होने पर [कन्ह ने] अपनी आँखों से अपने को देखा, (२) और अपने शरीर और तुरंग (घोड़े) को [कटाकर] तिल-तिल करने के लिए कन्ह के मन भिक्षा आकांक्षा (!) हुई।

पाठांतर—* चिह्नित संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. चप ति पिछोरिय गति चखह, मो. चंपग पछिउर गवि, अ. फ. चापंतह (चापंतिह-फ.) पिछ्छोर (पिछ्छोरि-फ.) दिसि (दिसु-फ.), ना. चंपित अच्छरि डिम लगि, म. उ. स. चरत अच्छरि दिद (दिठ-उ.) लगि। २. धा. अ. फ. हय पट्टन, ना म. उ. स. चषि (चष-ना. म.) अ पन (आपन-ना.)। ३. मा. तन देषि, धा. तनु दख, अ. फ. तन दिष्प, ना. तन दिष्षि, म. तर देष, उ. स. तन देषि।

(२) १. धा. तुरंग तिल तिअ करन, अ. फ. म. उ. स. तुरग तिल तिल करन, ना. तरंग तिल तिल करण। २. मो. मयु (=भयउ), धा. भया, शेष में 'भयो' या 'भयौ'। ३. मो. कन, शेष सभी में 'कन्ह'। ४. धा. मनु भेष, मो. मन मषि, अ. ना. मन मिष्ष, फ. तिसति सिष्प, म. उ. स. मन भेष।

टिप्पणी—(१) चष < चक्षु। (२) मेषि < मैक्ष (?) भिक्षा।

[१९]

कवित्त— सुनहि[१] बात[२] पपरैत[३] लेहि[४] उठ्ठउ* दल रुकउ[५]* । (१)
चिहिरु होइ चंपइ* त[१] स्वामि चुटि महि न चुक्कउ[२]* । (२)
पहु पट्टन[१] पल्लानि हटकि हउ*[२] हनउं*[३] गयंदह[४] । (३)
समर[१] वीर[२] संघरउं[३] भीर नहि[४] परइ*[५] नरिंदह । (४)
रुकियउ*[१] छगन[२] जयचंद दलु सिर तुट्टइ*[३] असिवर कढउ*[४] । (५)
तव[१] लगि तिहि[२] दल रुकियउ[३] जब लगि कन्ह[४] हय[५] वर चढउ*[१] ॥× (६)

अर्थ—(१) [छगन से] कन्ह ने कहा, "हे पखरैत (पाखर डालने वाले) [छगन], मेरी बात सुन; तू [शत्रु के] उठे (उमड़े) हुए दल को रोक। (२) चारों ओर से [शत्रु का] दवाव पड़ रहा है; स्वामी पर चोट पड़ते हुए [इस समय] मही पर मत चूक। (३) प्रभु पृथ्वीराज के [अश्व] पट्टन को पलान कर मैं गजेन्द्रों को भी दूर कर उन्हें मारूँगा। (४) समर में वीरों का संहार करूँगा, जिससे नरेन्द्र (पृथ्वीराज) पर भीड़ (संकट) न आए। (५) [यह सुनकर] छगन ने जयचंद की सेना को रोका; उसकी असि के निकलते ही सिर कटने लगे। (६) उसने तब तक शत्रु के दल को रोका जब तक कन्ह उस श्रेष्ठ अश्व (पट्टन) पर चढ़ा।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।

(१) १. फ. सुनिव, म. उ. स. सुनहु, ना. सुनीय। २. म. अ. वत्त, फ. वत्त। ३. मो. वपरेत, धा. विखरेत, अ. ना. वपरंत, फ. म. उ. स. पपरंत। ४. अ. फ. लेह, ना. लोह, म. लेहु, उ. स. लेहु। ५. मो. वठ (< वद्ध=उद्धृत) दल रुक, धा. बढ्ठो दल रषिराउ, अ. फ. बाढो दल (दल-फ.) रक्यौ (रष्यौ-फ.), ना. उढ्यो दल रुक्यौ, उ. स. ओढ्यौ दल रक्यौ, म. औढो दल रुक्यौ।

(२) १. मो. विहिर दाह चंपित (=चंपइत), धा. चिहुरे होइ चपंत, अ. ना. चिहुर होइ चापंत, ऊ.स. चिहुं ओर चपंत, म. चहुं ओरन चपत। २. धा. अ. फ. स्वामि अदंद्धुद (अदभुत-अ. फ.) हइ (हइ-फ., यह-अ.) पिषिराउ (पिष्यौ-अ. फ.) मा स्वामि लुटि मद्दि न लुकु (=लुकउ), ना. म उ. स. अत ओटह किम लुक्यौ (लुक्यौ-म.)।

(३) १. मो. पुहुपरन, ना. पुहपट्टनि। २. मो. हटकि हु (=हउ), धा. कटक उह, अ. हटकि हो, फ. हलह, ना. हटकि हुं (=हउं), म. उ. स. हटकि करि। ३. मो. हनु (=हनउ), ना. हनुं (हनउं), धा. हने, फ. स्यौह, म. हनौ, शेष में 'हनौं'। ४. फ. नयुंदह।

(४) १. म. अ. फ. ना. स वर। २. धा. धीर। ३. मो. संघर (=संघरउं), म. परयौ, ना. संघरौं, उ. स. समहैं। ४. धा. भीर वह, म. उ. जिम भीर नह, स. भीरनह। ५. धा. परी, मो. परि (=परइ), अ. फ. ना. परैं।

(५) १. मो. रुकिउ (=रुकियउ), धा. रुक्यो सु, अ. फ. ना. म. उ. स. रुक्यौ। २. फ. उन। ३. मो. तुटि (=तुट्टइ), धा. तुट्यो, अ. फ. छुट्टं, शेष में 'तुट्टं'। ४. मो. कढु (=कढउ), धा. बढ्यो, म. बढ्यौ, शेष में 'कढ्यौ' या 'कढ्यो'।

(६) १. धा. अ. फ. जव। २. धा. सहु, अ. फ. सुतिह, ना. सुतहि, उ. स. सुतास। ३. मो. रुकिउ (=रुकियउ), धा. रुकियो, अ. फ. ना. उ. स. रुक्यौ। ४. धा. फ. तव सुकन्ह, अ. तब सुकांह ना. जब लगि सुवन्ह। ५. उ. स. हैं, फ. य। ६. मो. चढु (=चढउ), धा. चढ्यो, शेष में 'चढ्यौ' या 'चढ्यो'।

टिप्पणी—(३) पहु < प्रभु। (५) तुट्ट < त्रुट्।

[२०]

दोहरा—चढत कन्ह[१] सामंत हय जय जय कहि सहु[२] देव। (१)
मनहु[१] कमल करि वर किरण[२] कुहर[३] पंगु दल सेव॥ (२)

अर्थ—(१) सामंत कन्ह के उस अश्व [पट्टन] पर चढ़ते समय सब देवता 'जय जय' कहने लगे। (२) [ऐसा प्रतीत हुआ] मानो कमल कलिका पर [सूर्य की] श्रेष्ठ किरण [आसीन होकर] पंग (जयचंद) दल रूपी कुहरे (कुहासे) का सेवन कर रही हो।

पाठान्तर—(१) १. अ. फ. कान्ह। २. मो. कहि (=कहइ) सु, धा. कहै सहु, अ. फ. कहि सव, ना. कहै सु, उ. स. करहि सु।

(२) १. धा. मनो, फ. मनीह। २. ना. उ. करिवर भ्रमर, स. कलिमल भ्रमर। ३. ना. कहर।

टिप्पणी—(२) करि < कलिका।

[२१]

कवित—तब सु कन्ह[१] चहुआन[२] तुरिय[३] पट्टनु पल्लानउ*[४]। (१)
हिंसि कनकि वर उठउ[१] गरन अपयाउ*[२] पहिचानउ*[३]। (२)

उहि करि[१] असिवर लिअउ[२] *गहिवि[३] गजकुंभ उपट्टइ[४] । (३)*
उहु मारिहि लातहुं घाय[१] देषि[२] अरि दंतह[३] कट्टइ[४] । (४)
उह[१] नरु निसंकु[२] हइ[३] *वर सुघरु[४] दिष्षहुं वित्तक वित्तयउ*[५] *। (५)*
उहुं[१] मुंडमाल हर संठयो[२] उहि रवि रथ ले[३] जुत्तयउ[४] *॥[५](६)*

अर्थ—(१) तब कन्ह चहुआन ने पट्टन घोड़े को पलाना। (२) वह श्रेष्ठ घोड़ा हींस और गिनगिना उठा, और उसने अपना मरण पहिचान लिया। (३) उस (कन्ह) ने श्रेष्ठ असि को पकड़ा, और उसको ग्रहण करके गज कुंभों को उत्पाटित करने लगा। (४) और वह (पट्टन) दौड़ते हुए लात मारने और शत्रु [—पक्ष के सैनिकों] को देख कर उन्हें दाँतों से काटने लगा। (५) वह निश्शंक नर (कन्ह) श्रेष्ठ घोड़े पर [उस रण—] धरा में था, जब कि देखो, यह बीतक बीता। (६) वह (कन्ह) हर के मुंडमाल में संस्थित हुआ और वह (पट्टन) लिया जाकर रवि रथ में जोता गया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. तब कान्हो, अ. फ. तबहि कान्ह। २. फ. चोहुवानु, ना. चहुवान। ३. म. तुरी, ना. तुरीय। ४. मो. पलानु (=पलानउ), धा. पल्ह न्यो, अ. फ. पल्हान्यो, म. ना. पलान्यौ।

(२) १. धा. हंस किरन चित उट्ठि, मो. हिंस कनकि ऽठु (=ऽठउ), अ. फ. हांस (हास-फ.) कंम करि उठ्यो, म. ना. उ. स. हिंसि (हसि—म.) किनकि (कनकि—ना.) वर उठ्यौ। २. मो. अपणु (=अपणउ), धा. अप्पही, ना. अपनो, म. उ. स अप्पन। ३. मो. पहिचानु (=पहिचानउ), धा. अ. फ. पिछान्यो, म. ना. उ. स. पहिचान्यौ।

(३) १. धा. कह करि, फ. कह कर, म. वह कर, ना. उ. स. उहि कर, केवल मो. म. मे 'उहि करि'। २. मो. लीउ (=लिअउ), धा. लयो, ना. उ. म. लयौ, स. लह्यौ, अ. फ. गहे। ३. धा. गहव, मो. गहिवि, अ. फ. गहवि, ना. गहिग, म. उ. स. गहिव। ४. मो. उपटि (=उपटइ), धा. अ. उपट्टइ, फ. ना. उ. स. उपट्टै, म उपटै।

(४) १. मो. उहु मारिहि लात हू धाय, धा. वह मारइ हु धाइ, अ. फ. वह मारे लहं (बहं—फ.) धाइ, म वह मारैं लत्तनि घाय, स. मारैं लत्तनि धाय, ना. वह मारै लातनि धाइ। २. मो. धा. देषि, अ. फ. ना म. उ. स. जुद्दि। ३. ना. म. उ. स दंतनि। ४ मो. कटि (=कटइ), धा अ. कट्टइ फ. कट्टहि, म. कटै, ना. कट्टै।

(५) मो. उह, धा. वह, शेष में 'वह'। २. ना. णिसंकु। ३. मो. हि (=हइ), धा हय, म. फा हैं, ना. हूं, ना. है, म. है। ४. ना. सुधरु, म. उ. म. सुधर। ५. मो. दिष्षहुं वित्तक वित्तयु (= वित्तयउ), धा. अ. फ. पिष्षहु (पिखिहि—फ.) चित कुभितयो, ना. म. उ. स. पिष्षहु वित्तक (चित्तक—ना.) वित्तयौ।

(६) १. मो. उहु, धा. म. अ. फ. वह, स. वर, ना. तह, उ. स. वर। २. मो. मुंड माल हर सुठयो, धा. म. रुंड माल हर संठयो, अ. फ. सीस हार हरगुं थयौ, ना. उ. स. मुंड माल हर संठयौ। ३. फ. रथ्थहि, अ. ना. रथ्थह। ४. मो. युनयु (=जुत्तयउ), धा. जुत्तयो, ना. म. जुत्तयौ, शेष में 'जुत्तयो'। ५. मो में यहाँ और है: इम जंपिय चंद बिरद्दिह दस कोस चहुआन गउ।

टिप्पणी—(३) उपट्ट < उत्पाटय्। (६) संठव < संस्थापय्।

[२२]

दोहरा— *धरणी कन्ह परत प्रगट[१] उट्ठि[२] पंगु त्रिप हंकि[३] । (१)*
मनु[१] *अकाल[२] अवली[०] जरल*[३] *गहि[०] प्रतुहि*[०४] *घनु*[०५] *रंक[६] ॥ (२)*

अर्थ—(१) प्रकट रूप में कन्ह के धरणी पर गिरते ही, पंगु राज (जयचन्द) [इस प्रकार] हुंकार उठा, (२) मानो अकाल में उस [रंक] अवली ने जो रो रहो हो अटूट धन प्राप्त किया हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. धरनह कन्हह परत ही, अ. फ. धरनी कन्ह परत ही, ना. मा. उ. स. धरनि कन्ह परतह प्रगट (प्रगटि–म.)। २. धा. अ. फ. प्रगट, मो. उठि, ना. म. उ. स. उठ्यौ। ३. धा ना. त्रिप हक, अ. फ. दल हक, म. ए. स. नृप हकि।

(२) १. धा. मन, मो. मनु, अ. फ तनु, ना. मनु (= मन- ?), म. मनौ, उ. स. मनौं। २. यहाँ से 'रंक' के पूर्व तक का अंश धा. में नहीं है। ३. मो. अवला जरज, अ. फ. अवली उरज, ना. म. उ. स. सकरह (सकद्दर–मा. संकर–उ.) हसि। ४. मो. गहिअ तुटि, अ. फ. गहहि ढुट्टि, ना. गहें टूटि, म. ए. गहिय तुट्टि। ५ मो. धनु, शेष में 'निधि'। ६. मो. रंकि, धा. रक, शेष सभी में 'रंक'।

टिप्पणी—(२) रक < रट्=रोना, चिल्लाना।

[२३]

दोहरा— तब झुकित[१] अलहन पग्ग गहि[२] भयउ[*३] अप्प[४] बल रूप[५]। (१)
सिर अप्पउं[*१] स्वामी कज्जह[२] हनउं[*३] गयंदन[४] यूप[५]॥ (२)

अर्थ—(१) तब अल्हन! खड्ग ग्रहण करके झुका और स्वयं बल रूप हुआ; (२) [उसने कहा,] "मैं स्वामी के कार्य के लिए [अपना] सिर अर्पित करूँगा और हाथियों के यूप (युद्ध-अग्रभाग) को मारूँगा"।

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. झुकित, शेष सभी में 'झुकि'। २. मो. पंगहि, शेष सभी में 'पग्ग गहि'। ३. मो. भयु (= भयउ), शेष में 'भयो' या 'भयौ'। ४. मो. ना. आप, शेष में 'अप्पु' या 'अप्प'। ५. ना. कोटि, म. उ. स. कोट।

(२) १. मो. अपु (= अपउ,), म. अपौं, ना. अप्पौं। २. अ. फ. कर (करि–फ.) स्वामिकै, ना. कर स्वामि कह, म. कार सामिकौ, उ. स. कर स्वामि को (कौं—उ.)। ३. मो. हनु (= हनउ) ना. हन्यौ, शेष में 'हनौं'। ४. मो. गय घर, ना. अ. फ. गयंदनि, म. उ. स. गयंदन। ५. मो. अ. जूथ (जूप–मो.), ना० जोटि, म. उ. स. जोट।

टिप्पणी— (१) पग्ग < खड्ग। (२) कज्ज < कार्य।

[२४]

कवित—सिर तुट्टइ[*१] रुंधइ[*२] गयंद षड्डउ[*३] वट्टारउ[*४]। (१)
तउ[*१] समरी[२] महामाय[३] देवि दीनउ[*४] हुंकारउ[*५]। (२)
अमिय कलस[१] आयास लिअउ[*२] अच्छरी[३] उच्छंगह[४]। (३)
तब सु गई परतक्खि[१] करीत करीत कहत कह[२]। (४)

अल्हन कुमार विभ्रम भयउ[1] *रण‡ किहि‡ वानकि मनि मन्यउ*[*2] । (५)*
तिम तिम[1] *तिलोयन*[2] *गंगधर तिम तिम संकर सिर धुन्यउ*[*3] ॥ (६)*

अर्थ—(१) [अल्हन का] सिर जब टूटने (गिरने) लगा, उसने कटार निकाल ली और वह गजेन्द्रों का रुद्ध करने लगा । (२) तब उसने महामाया का स्मरण किया और [उसके स्मरण पर] देवी ने हुङ्कार दया (किया) । (३) आकाश में अमृत-कलश अप्सरा ने उसको क्रोड़ (गोद) में ले लिया, (४) और 'अरिक्त' 'अरिक्त' [अर्थात् अब अल्हन के आगमन से स्वर्गक रिक्तता दोष नहीं रहा] कहती हुई वह प्रत्यक्ष हुई । (५) [किन्तु] अल्हन कुमार को विभ्रम हुआ; [उसके] मन में यह विचार बना हुआ था कि रण किस वर्णक (रूप) में हो रहा था, (६) [अतः] ज्यों ज्यों वह यह विचार करता था, त्यों त्यों त्रिलोचन, गंगाधर, शंकर अपना सिर पीट रहे थे [कि यह वीर अब भी पृथ्वी की माया से अपने मुक्तकर उनकी मुण्डमाल में स्थान नहीं ग्रहण कर रहा था] ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।
‡ चिह्नित शब्द ना. में त्रुटित हैं ।

(१) १. मो. तुट्टि (=तुट्टइ), धा. म. उ. स. तुट्टै, अ. ढुट्टइ, ना. फ. ढुट्टै । २ मो. रुंधि (=रुंधइ), धा. रुंधयो, अ. फ. ना. धर धयौ, म. उ. स. रुध्यौ (रुध्यौ–म.) ३. मो. गयंद कढु (=कढउ), धा ना उ. स गयंद कढ्यौ, म करह कढयौ, अ. फ. गेंद कढ्ढियो । ४. मो. कटार (=कटारउ), धा. कट्टारो, शेष में ना. कट्टारौ ।

(२) १. मो. तु (=तउ), धा. तिह, अ फ. तह, ना तहं, म. उ. स. तहाँ । २. अ. फ. सुमिरी, म. समरीय, उ. स. सुमरिय, ना समरो । ३. मो. माहमाय, धा. फ. महामाइ, अ. उ. स. महमाइ, ना. म. महमाय । ४. मो. देवि होगु (> दीनउ), धा. देवि दोन्हो, ना. देवदिन्नौ, अ. फ. देवि दिन्नै, म. उ. स. देवि दीनी । ५ मो. हुंकारु (=हुंकारउ), धा. हुंकारो, म. ना. हुंकारौ, शेष में 'हुकारौ' ।

(३) १. फ. असी सकल, म. अमिय सद । २. मो. लीउ (=लियउ), धा. लियो, फ. सियौं, ना. म. लयौ । ४. अ. फ. उछंग तह ।

(४) १. धा. भयो परत तिहि रुह, मो. तब सुभई परतकि, अ. फ. भइ पर तिप्पि सु (सि–फ.) तथ्य, ना. म. उ. स. तह (तहाँ मनह–ना.) सुभई परतष्पि । २. धा अ. फ. ना. रुह जय जय सु कहकह, म उ. स. अरित अरि कहत नहगह ।

(५) १. म. कुमार विभ्रम हयु (< भयउ), धा. अ फ. कुमार विभ्रम, सुभौ (मो–धा.), उ. स. कुमार विभ्रम सुभ्यौ, म. कुमार विभ्रम भ्रमौ, ना. कुमार सुसुयौ रिषह । २. धा. रनक विमानहि मनु मन्यौ, मो. रण किहि वानकि मुनि (< मनि) मुन्यु (< मन्यउ), अ. फ. भौ ववि रन मान मन्यौ, म. उ. स. रनकि विमानह मनु (मन–म. नु–उ.) मन्यो (मन्यौ–म.), ना.–ति मन मन्यौं ।

(६) १. धा. तिम थहि, अ. फ. तिम आहि, ना. तामीहि, म. उ. तिहि वरस, स. तिहि वसरि । २ धा. सो लोयन, मो. लोयन, म. उ. स. ति (त्रि–म. उ.) लोचन । ३. मो. तिम तिम संकर सिर धुन्नु (धुन्यउ), धा. ना. म अ. फ. तिम तिम संकर सिर धुन्यो (धुन्यौ–म.), उ. स. तिम संकर सिर धर धन्यौ ।

टिप्पणी—(१) तुट्ट < त्रुट् । (२) समर < स्मरम् । (३) अमिय < अमृत । आयास < आकाश । अच्छरी < अप्सरा । उछंग < उत्संग । (४) परतक्खि < प्रत्यक्ष । अरीत < अरिक्त । वह < कथा । (५) वानक < वर्णक । (६) तिलोयन < त्रिलोचन ।

[२५]

दोहरा—धुनि[१] सीस[×] ईस सिर[२] अल्हनहं[३] धनि धनि[४] कहि[५] प्रथिराज । (१)
सुनि कुप्पउ[१] अचलेस वर[२] मुहि वर देषिवि राज[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) ईश (शिव) अल्हन के लिए सिर पीट रहे थे, [यह देखकर] पृथ्वीराज ने कहा, "अल्हन धन्य है, धन्य है।" (२) यह सुन कर अचलेश कुपित हुआ, और [उसने कहा,] "राजा मेरा बल देखें।"

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. ना. म. उ. धुनत, स. धुनित। २. ना. भिर। ३. मो. अल्हनहं। ४. मो. धिन धिन, धा. धन धन। ५. मो. किहि (< कहि)।

(२) १. धा. कुप्यो, मो. कोप्यो, अ. फा. कुप्पउ, ना. म. उ. स. कुप्यौ। २. म. भर, ना. आ. फ. तर। ३ धा. मही वरन दिविराज, अ. फ. महिवर देव विराज, ना. म. उ. स. मुहि बल (बह-ना.) देषिव (देखिसु-म., देषिव-उ.) राज।

टिप्पणी—(२) वर < बल।

[२६]

कवित— करि ज[१] पइज*[२] अचलेसु क्रुकित[३] चहुवान पग्ग गहि[४] । (१)
धरि दल बल संघरउ*[१] पूरि[२] धर‡ भरत[३] रुधिर द्रह[४] । (२)
मच्छ ति[१] हेवर[२] फुरहि[३] कच्छप गज कुंभ विदारहि[४] । (३)
उप्पर[१] हंस उडि[२] चलहि हंस[३] मुख कमल विराजहि[४] । ‡ (४)
चउसठि[१] सद् जय जय करहिं छत्रपति वरि[२] संचरिग[३] । (५)
बोहित्थ वीर बाहर तनउ[१] दिल्लिय पति चढि उत्तरिग[२] ॥ (६)

अर्थ—(१) जब अचलेश ने प्रतिज्ञा की और वह चहुआन (पृथ्वीराज) को खड्ग ग्रहण कर झुका, (२) उसने अरि-दल-बल का संहार किया और धरा में रुधिर के द्रह पूरित होकर भर गए। (३) [उस द्रह में] मत्स्य श्रेष्ठ अश्व थे, जो स्फुरित हो रहे थे, कच्छप वे गज कुंभ थे, जिनको वह विदीर्ण कर रहा था, (४) जो हंस (प्राण) ऊपर [निकल कर] उड़ रहे थे, वे ही हंस थे और जो मुख थे, वे ही उसके कमल थे। (५) चौंसठ [योगिनियाँ] 'जय जय' शब्द कर रही थीं, और वे छत्रपतियों का वरण कर के संचरण कर रही थीं। (६) [इस द्रह से पार होने के लिए] बोहित (जहाज) वीर बाहर पुत्र अचलेश था, जिस पर चढ़ कर दिल्ली पति (पृथ्वीराज) उस द्रह से पार हुआ।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित शब्द या चरण फ. में नहीं है।

(१) १. मो. करिज, धा. करिइ, अ. फ. करिस, ना. करिय, म. करवि, उ. स. करिवि। २. मो. पिज (पइज), धा. ना. म. पेज। ३. धा. झुकति, मो. ना. झुकित, अ. झुकित, फ. धुकिजि, म. प्रबल, कमुकल, म. झुकल। ४ धा. गहि, मो. गिहि (< गहि), अ. फ. या गह।

(२) १. धा. संप्परिग, मो. सिधुरं, अ. संघरिग, फ. संगरिट, म. संघरयौ, उ. स. संहरयौ, ना. संघरो। २. फ. पूर। ३. धा. भरति, अ. भरिग, फ. भरगं, म. भिरत, ना. उ. स. भरित। ४. धा. ना. दह, म. उ. स. दहि।

(३) १. ना. मुरच्छिउ। २. धा हयवर, अ. फ. हयनर, ना. म. उ. हैवर (हैंवर–म.)। ३. मो. फुरिहि (< फुरहि), ना. फिरहि, म. उ. स तिरहि। ४. धा. ना. अ. फ. म. उ. स, विराजहि, मो. मात्र में 'विराहि'।

(४) १. धा. उभर, अ. फ. उपरि। २. धा. अ. फ. उड, म. डिग। ३. अ. फ तन्न। ४. म. सुराजहि।

(५) १. मो. चुनठि (=चउसट्ठि), धा. चउसट्ठठ, ना. चोसठिठ, म. चवसठ, अ. फ. चवसट्ठि। २. धा. छत्रपतिर परि, अ. फ. छत्रपति ति वह (वर–अ.), ना. छत्रपतिन परि, उ. स. छत्रपत्ति परि, म. वन (> छत्र पतिपरि। ३. अ. संगरिग, फ. समरिग, म उ. स. संचरिय।

(६) १. मो. नाहर तनु (=तनउ), धा. बाहर भरिउ, ना. अ. बाहर तनौ, फ. बाहरि तनौ, म. बारह (< बाहर) तनौ, उ. स. बाहर तनैं। २. धा. चढिदउ तुरिग, म उ. स. चढि उत्तरिय, फ. चचढि उत्तरिग।

टिप्पणी—(१) षग्ग < खड्ग। (२) दह < द्रह। (३) मच्छ < मत्स्य। हे < हय। फुर < स्फुर्। (४) उभर < उपरि। (५) सद < शब्द।

[२७]

दोहा — अचल अचेत ज[1] पेत हुअ[2] परी[3] पंग बहुराय[4]। (१)
पट्टनवइ- पहु पट्ट छर[1] बिंझ बिरच्यहु धाय[2] ॥ (२)

अर्थ—(१) जब [रण–] क्षेत्र में अचलेश अचेत हुआ, पंग (जयचंद) की सेना लौट पड़ी (उसने पुनः आक्रमण कर दिया); (२) [इस समय] पट्टन पति के पट्ट प्रभु को (?) छलने वाले विंझ ने दौड़ कर [युद्ध की] रचना की।

पाठान्तर—(१) १. धा. जु, अ. फ. म. उ. स. तु, ना. नि। २. ना. हुव। ३. मो. परी, शेष सभी में 'परिग'। ४. धा. बहुराइ।

(२) मो. पट्टनवर पहु पट्ठछर, धा. पट्टनवइ पट्ट पट्टछर, अ. पट्टन कलयउ पट्टउर, फ. पत्ता। कलयउ पट्ट छर, ना. म. उ. स. पट्टनउर अरु पट्टउर। २. मो. बहु (=बठउ) बीरच्युहु धाय, धा. बिधु बिरचर धाइ, अ. बिझ बिरच्चहु धाय, फ. बिझ बीर बहु धाय, म. उ स. उठे (उठें–म.) बिझ बिरच्चाय, ना. उठे बीर बिरच्चाय।

टिप्पणी—(२) वइ < पति। पहु < प्रभु।

[२८]

आर्या कवित्त—कज[1] न कलउ*[2] धरियन[3] तुं[4] मिलउ*[5] मरहरि न[6] भग्गउ[7]। (१)
अबल न लिग्रउ*[1] जसहीन न भयउ*[2] अमग्ग न लग्गउ[3]। (२)
पहु[1] न लज्यउ[2] जीवत न गयउ[3] अपजस नहि[4] सुनयउ[5]। (३)
इयर[1] जिम[2] दव्वर[3]ग्गि रहउ*[4] गाहंत°[5] न° गहयउ°[6]। (४)

चलि गयउ[१] न मंदिर दिसि°[२] रहउ[३] मरण जाणि जुझ्झउ[४] धनी[५] । (५)*
विंझ° लगि°[१] दाग°[२] तिलक°[३] मिसि°[४] बहु° बहु‡° बहु‡° भग्गुलधनी[५] ॥ (६)

अर्थ—(१) [विंझ ने] कल (चैन) नहीं किया, वह शत्रुओं से नहीं मिला, और न भय-भीत होकर [रण से] भागा। (२) उसने अयश नहीं प्राप्त किया, और वह यशहीन नहीं हुआ, न वह अमार्ग में लगा। (३) उसने प्रभु (स्वामी) को लज्जित नहीं किया, वह जीते जी [रण क्षेत्र से] नहीं गया और उसने अपयश नहीं सुना। (४) इतर जनों की भाँति वह दबैल नहीं रहा और पकड़े जाते हुए पकड़ा नहीं गया। (५) वह मंदिर (घर) की दिशा में लौटकर नहीं चला गया, वहीं बना रहा, और मरना जानकर सेना (युद्ध) में जूझा। (६) विंझ का दाग लगा तो तिलक के मिस। [अतः] हे भग्गुल धनी, तुम धन्य हो, धन्य हो, धन्य हो।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के है।
‡ चिह्नित शब्द फा. में नहीं है।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. धा. अ. म. उ. स. कलि, मो. ना. कल, फ. कल्य। २. मो. कलु (=कलउ), धा. अ. कल्यउ, फ. कय्यय, ना. ए. स. कल्यौ, म. कलियं। ३. धा. अरिजन, म. अरिय, फ. अरियत, उ. स. अरियन। ४. धा. मो. नु, शेष सभी में 'न'। ५. मो. मिलु (=मिलउ), धा. मिलिउ, अ. फ. मिल्यउ, ना. उ. स. मिल्यौ, म. मिलिय। ६. धा. भरहर विलु, अ. फ. भरहरि विन, ना. हरि भरि नहि, म. भरहरि नह, उ. स. भरहरि नहि। ७. मो. भगु (=भगउ), अ. भग्गउ, धा. भग्यो, ना. म. उ. स. भग्गौ।

(२) १. मो. अजरस न लीउ (=लियउ), धा. अजस न लिय, अ. फ. अजसु न लयउ, ना. अजस न लयौ, म. उ. स. अजसु (अजसु–म.) न लयौ। २. मो. जसहिन भयु (=भयउ), धा. जसहीन भगायो, ना. जसहीन न भयौ, अ. फ. जसहीन न भयउ, म. जस विन भयौ, उ. स. जसविनि भयौ। ३. धा. अगमन लग्यो, मो. अमग न लगु (=लगउ), अ. फ. मागमग (आसंग–फ.) न लग्यउ, ना. अमगि नहिन लग्यौ, म. उ. स. अमग्ग न लग्गौ।

(३) १. मो. पुहु, धा. पहु, शेष सभी में 'पहु'। २. मो. लीउ (=लियउ), धा. लियउ, अ. फ. लज्यउ, ना. लीयौ, म. उ. स. लयौ (< लयौ=लज्जौ)। ३. मो. जीवत न गयु (=गयउ), धा. जीवत गयो, अ. जीव न गहियउ, फ. जीव ना गहिउ, ना. म. उ. स. जीवत न गयौ। ४. फ. नाही, म. उ. स. नह। ५. धा. सुन्यो, मो. सुनयु (=सुनयउ), ना. म. उ. स. सुनयौ।

(४) १. मो. ईयार, धा. कायर, अ. फ. इयर, ना. अवरणि, म. उ. स. और न। २. मो. धा. ना. जिम, अ. फ. जेम, म. उ. स. ज्यों। ३. मो. –र, धा. दवरि, ना. दवर, फ. दज्जुरि, शेष में 'दवरि'। ४. धा. न रह्यो, मो. णि रहु (=रहउ), अ. न रहाउ, फ. ना हिउ, म. लयो, उ. स. न गयो, ना. णि रह्यौ। ५. म. आद माहंत। ६. ना. म. उ. स. न गह्यौ, अ. फ. न गयउ।

(५) १. धा. ना. चलि गयो, मो. चलि गयु (=गयउ), फ. वलि गयउ, अ. चलि गयउ शेष में 'चलि गयो' या 'चलि गयौ'। २. फ. मंदरु दिसि, म. मंदिर दिसि, ना. मंदिर दिशह। ३. मो. रहु (=रहउ), धा. रह्यो, अ. रहयउ; शेष में 'रह्यो' या 'रह्यौ'। ४. मो. जानि झुझु (=झुझ्झउ), धा. जानि झुझ्यो, अ. जानि जुझ्यौ, फ. जान जुझ्यो, म. झुझ्यौ, उ. स. ना. झुझ्यो। ५. धा. म. उ. स. अनिय।

(६) १. अ. फ. विंझह, म. उ. स. विंझहिय, ना. बीझह्यौ। २. म. दा, ना. दागु। ३. अ. तिलक, फ. जलीक, म. तिलकहि, ना. उ. स. तिलकह। ४. ना. म. उ. स. मिसह, अ. मिस। ५. मो. बहुल भंगि संभरि धनी, धा.—भग्गुल धनिय, अ. बहु बहु बहु भग्गुल धनी, फ. बहु भगल धनो, म. बह

बह बह भगुर धनीय, उ. स. बह बह बह मग्गल धनिग, ना. — हु भंग समर धनी।

टिप्पणी—(२) अभग्ग < अमार्ग। (३) पट्ठु < प्रसु। (४) इयर < इतर। (५) वल < बलय्= लौट पड़ना। बट्ठु < बाह [फा.]।

[२९]

दोहरा—परत देपि चालुक[1] धर[2] करिग्ग[3] पंग दल कूह। (१)
जिम[1] सु[2] देव इंदहि परसि[4] रहे विटि[5] अरि जूह[6]॥ (२)

अर्थ—(१) चालुक विक्ष को धरा पर गिरते देख कर पंग (जयचंद) के दल ने [इस प्रकार] कुहराम किया, (२) जिस प्रकार इंद्रदेव के पार्श्व में (पास) [आकर] अरि यूथ [राक्षस दल] उन्हें वेष्ठित कर (घेर) रहे।

पाठांतर—(१) १. मो. फ. चालुक। २. ना. रिण, फ. धर। ३ म. उ. स. ना. करिग।

(२) १. धा. इम, अ. जिमि। २. फ. स.। ३ मो इंदिहि, ना. इदह, म. उ. स. इंद्रह। ४. अ. फ. परसि। ५. मो. ना. अ. फ. विट, धा. विरि, धा विरि, म. वट, उस. वीटि। ६. म. उ. स. अनजूह।

टिप्पणी—(२) परस < पार्श्व। विट < वेष्ठित।

[३०]

कवित—राहु रूप[1] कमधुज्ज गज्जिर लग्गउ*[3] आयास बहु[4]। (१)
धार तित्थ उरि१ जांनि फिरउ*[2] पंमार न्हान[3] तहं४। (२)
रुधिर[1] मधु[2] जव जीव करि ततु तिल गिलि पिंड उसि[3]। (३)
सु रत्त सीस अरि गहिग[1] पांनि[2] [सो]* गहे[3] केसि[4] कुसि[5] (४)
करि भिपति[1] सार नृप पंगु दल[2] अब्बू[3] पति जप सब्ब किय[4]। (५)
उमहउ*[1] महन[2] प्रथीराज रवि सलप अलप भुव[3] दान दियु[4]॥ (६)

अर्थ—(१) कमधुज्ज (जयचंद) राहु रूप होकर गर्जन करके आकाश को जा लगा [और उसने रविरूप पृथ्वीराज को ग्रसना चाहा]। (२) [उस ग्रहण से अपने स्वामी को मुक्त करने के लिए] धारा तीर्थ (रण क्षेत्र) को हृदय में [अच्छा तीर्थ] जानकर [सलख] पमार उसमें स्नान करने के लिए मुड़ा (३) रुधिर का मधु था, जीवों का यव था, हाथियों के शरीर का तिल था इस प्रकार सब मिल कर उसका [दान का] पिंड बना; (४) शत्रुओं के रक्त सिर जो उसने पकड़ रक्खे थे, वही उसने हाथों में कुश-काँस पकड़ रखे थे; (५) सार (शस्त्रास्त्र) से पंग नृप (जयचंद) के दल को तुस कर आबूपति (सलख) ने सब जप किए, (६) तदनंतर सलख ने अल्प भुजदान (प्रहार) देकर पृथ्वीराज रवि को उस ग्रहण से मुक्त किया।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. राहो रोपि, शेष सभी में 'राहरूप'। २. अ. फ. कमधुज्ज गज्ज, ना. कम धज्जगजि। ३. धा. लग्यो, मो. लगु (= लगउ) अ. फ. लग्यउ, म. लग्गो, ना. उ. स. लग्यौ। ४ धा. आयासहि,

अ. फ. आयास कइ, ना. आयास कई, उ. स. आकामह, म. आसनह ।

(२) धा. धारि सत्थं उर, फ. धार तिथ्थ उरि, अ. म. धार तिथ्थउर, ना. धार तिथ्थ तिसे । २. मो. फिरु (= फिरउ), धा. फिरिउ, अ. फ. फिर्यो, ना. म. उ. स. फिरयौ । ३. मो. पंमार कंहइ, धा. पोवारु नन्हइ, शेष में 'पामार न्हान' । ४. धा. तहि, फ. तिह ।

(३) १. धा. रुधि, अ. फ. रुदसु (म-फ.) शेप में शेष में 'रुधिर' । २. ना. मझि. । ३. धा. जब करि जीव तनु तिलमिलि पिड उसि अ. फ. जब (जब-फ.) जीव तिल सु (स-फ.) तन सीस पिंड उस, ना. जब जीव ततुत तिल मिलहि पिंड उस, म. उ. स. जब करिय जीव तनु (तन-म.) तिल नि पंड असि (पड असि-म.) ।

(४) १. धा. रत्त सीस अरि गहिग, मो. जुरत सीस अरु गहिग, अ. फ. रत्त सुजल कर दग, म. उ. स. जुरित सीस अगि (अरि-म.) गहिय, ना. नचित सीस अरि गहहि । २. अ. फ. तहा, म. मानि, शेष में 'शानि' । ३. मो. गहे, धा. सुहियइ, अ. फ. सोहि यं, म. ना. उ. स. सोमियहि । ४. फ. दुसा । ५. मो. धा. कुसि, ना. कुश ।

(५) १. धा. अ. फ. ना. म. उ. स. त्रिपति, केवल मो. में 'त्रिपति' । २. अ. फ. पंगह नृपति । ३. ना. अनुब, म. अनूप । ४. मो. जप सब किउ (= कियउ ?), फा. जप सब्बु किय, अ. फ. ना. जस पुव्व (पुब्व.-ना.) किय, म. उ. स. जद सब्ब किय ।

(६) १. मो. उग्रहु (= उग्रहउ), धा. अउ ग्रहो, अ. ना. म. उ. स. उग्रह्यौ । २. धा. ग्रहति, ना. गहन । ३. मो. भुव, धा. भुअ, शेष में 'भुज' । ४. मो. दियु (= दियउ ?), धा. दिय, शेष में 'दिय' ।

टिप्पणी—(१) राह < राहु । गज्ज < गर्ज । (२) तिथ्थ < तीर्थ । (५) त्रिपति < तृप्ति ।
(६) भुव < भुअ < भुज ।

[२१]

दोहरा—दिअउ दान जब्ब पंमार बलि[१] अरि पंगह सम[२] पेल । (१)
मरन[१] जानि[२] मन[३] मम्मह तत्तु[४] लरिग लषन बघेल[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) जब [लखन] पमार ने [इस प्रकार] बलि का दान दिया, और शत्रु (जयचंद) के साथ उसने खेल किया, (२) मन में मरण का ही तत्व जानकर लखन बघेल लड़ गया ।

पाठान्तर—(१) १. धा. दीउ (=दिअउ) दान पावार जब, मो. दीउ (=दिअउ) दान जब पमार बल, अ. दिअउ (दियो–फ.) दान पावार जब, ना. दीय दान पामार जब, म. उ. स. दियौ दान पम्मार बलि (बल–म.) । २. धा. पंगह सब, म. उ. स. सारंगसम ।

(२) १. फ. परति । २. फ. मानि । ३. मो. मर (< मन), फ. म । ४. धा. मझ रिउ, अ. मम रन, फ. विदिश रन, म. उ. स. महि रत, ना. मम्मरत । ५. मो. लरिग लषन बघेलि, धा. गिरि लषित बघेल, अ. फिरि लष्पनह बघेल, फ. फिरि लष्पन हट्टो, ना. म. उ. स. लरि लष्पन बघेल ।

[२२]

कवित—जिति समरि[१] लष्षन बघेल अरि हनिग[२] पग्ग वर[३] । (१)
ति घर हुट्टि[१] धरनिहि[०२] परिग्ग[०३] निवरंति[०४] अध्ध[५] घर । (२)

तिहि गिध्धारव[1] रुलिग°[2] अंत्र°[3] गहि° अंतर लुकिग । (३)*
तरुणि[1] तेज रस वसिग[2] पवन पवनह घन वज्जिग[3] । (४)*
इहि नादि[1] ईश मथ्थउ धुनउ[2] अमिय बिंदु[3] ससि° उल्लसउ*[4] । (५)*
बिहुरउ धवर[1] संकिय गवरि टरिग[2] गंग संकर हसउ[3] ॥ (६)*

अर्थ—(१) समर में जहाँ उलन बघेल ने श्रेष्ठ खड्ग से शत्रुओं का हनन किया, (२) [वहीं] उसका भी धड़ टूट कर धरणी पर गिर पड़ा और उसने आधे घड़ी में समाप्त कर दिया। (३) उसके [धड़ के] लिए गीधों का शोर होने लगा, और वे [उसकी] आँतों को लेकर अंतरिक्ष में लुक गए (अंतर्हित हो गए)। (४) [उसके सूर्य लोक में पहुँचने पर] तरणि (सूर्य) का तेज और रस (सौन्दर्य) [उसके तेज और रस (सौन्दर्य) के सामने] बासी पड़ गया; उसके पवन (प्राण) पवन में मिल गए और घन बजने लगे—एक प्रचंड निनाद करने लगे। (५) उस निनाद को सुनकर [और ऐसे वीर का निधन जानकर] ईश (शिव) ने माथा पीट लिया, और [उनके मस्तक के] चन्द्रमा ने उल्लसित होकर अमृत बिंदु गिरा दिए; (६) [किंतु इस नाद से ही जब] उनका धवल बैल भड़क गया, गौरी शंकित हो गईं, गंगा हट गईं, और शंकर हँस पड़े।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में त्रुटित हैं।

(१) १. धा. जिते समर, मो. जिति (=जितइ ?) समरि, म. जिति (=जिनइ ?) समर, अ. ना. जिता समर, फ. जित समर, स. जीति समर। २. धा. आहनाति, अ. फ. आहनिय, ना. अरि हने। ३. म. यंग (८ पंग) बल।

(२) १. अ. धुकि, फ. धुंक, ना. ढुक्कि, स. धुक्कि। २. अ. धरि निय, फ. धरनिह, उ. स. धरनहि, म. ना. धरनिय। ३. अ. फ. परत, ना. ढुकत, म. उ. स. धुकंत। ४. अ. ना. उ. स. निवरंत, फ. निवरनि, म. निवरत। ५. म. अध अध।

(३) १. धा. तहाँ गिद्ध——, मो. तिहि गिधारवौ, अ. रातह अंतावलि, फ. तिह अंतरि पिन, म. उ. स. तह (तहाँ—म.) गिद्धारव, ना. तिहि गिधारव। २. अ. दलर, फ. तुलिर, ना. म. उ. स. रुरिग। ३. मो. अंत्र, अ. गिद्ध, फ. गद्धि, ना. म. उ. स. अंत। ४. धा. अंतर लुगयौ, मो. अंतर लुकगि, अ. अंतर लुम्याउ, फ. अंतर लिगउ, ना. अंतह लज्यौ, म. अतह लगीय, उ. स. अंतर लग्गिग।

(४) १. मो. तरुणी, धा. फ. तरुन, अ. तरुनि, ना. तरुणि, म. उ. स. तरनि। २. धा. सब्बासु, अ. फ. गइ (गय—फ.) सुक्कि (सुकि—फ.), ना. म. उ. स. रसवसह। ३. धा. पमुकि पावन घन चग्ग्यौ, मो. पवन पवनइ घन बज्जगि, अ. फ. लग्गि पवनाहत वगगउ (हवगउ—फ.), ना. प्रमुकि पवन घन बज्यौ, उ. स. पवन पवना घन वज्जिग, म. पवन धन धन बगीय।

(५) १. धा. अ. फ. ना. तिहि (तिहि—ना.) सद्द, म. उ. स. तिहि नाद (नाई—उ.)। २. मो. ईस मथु (=मथउ) धुनु (=धुनउ), धा. सीस संकर धुन्य, अ. फ. ईस मथ्थउ (मथ्थय—फ.) डुल्यउ, ना. ईश मथ्थह धुन्यौं, म. उ. स. ईस मथ्यौ (मथौ—म.) धुन्यौ। ३. अ. फ. ना. म. उ. स. बुंद। ४. मो. उलसु (=उलसउ), धा. उल्हस्यौ, अ. फ. उल्हस्यउ, ना. म. उ. स. उह्रस्यौ।

(६) १. मो. विहरु (=बिहरउ) धवर, धा. बिहुरयउ धवल, अ. बिहुरि धवल, फ. विहरीय धवल, म. बिहुरयौ धवल, ना. उ. स. बिहरयौ धवल। २. धा. अ. फ. डरिग, ना. डरीय, म. उ. स टरिय। ३. मो. संकर हसु (=हसउ), धा. सक्कर हस्यौ, अ. संकर हस्यउ, फ. ईसर हस्यउ, उ. स. संकर हस्यौ, ना. म संकर हस्यौ।

टिप्पणी—(१) षग्ग < खड्ग। (३) रुल < रोरूल्=खूब शोर करना। छुक=छिपना। (४) बसिअ < उषित्=बासी, पर्युषित। (५) मथ्थ < मस्तक। अमिअ < अमृत।

[३३]

दोहरा—परत[1] बघेल्ल सुमेल्ल[2] किय रन[3] राठउर*[4] सुमार। (१)
जब दस कोस ढिल्लिय रही[1] फिरि तोमर पाहार[2] ॥ (२)

अर्थ—(१) बघेल [लखन] के गिरते ही रण में राठौर (जयचंद) ने भारी मेला (हल्ला-धावा) किया। (२) जब दिल्ली दस कोस रह गई, तब तोंवर पहाड़ राय [युद्ध के लिए] लौटा।

*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

पाठान्तर—(१) १. फ. परित। २. धा. सुमेल। ३. धा. रठि, म. रिन, फ. राउ। ४. मो. राठुर (=राठउर), धा. राठौर, अ. राठ्यौर, फ. राठौर, म. ना. उ. स. रठ्ठौर।

(२) १. धा. मो. जब दस को दिलो (दिलोय–मो.) रहिय (रही–मो.), अ. फ. ना. दस कोसन ढिल्ली परहि (परहू–ना.), म. उ. स. कनवज ढिलो (ढिलीय, म. उ.) ककरह। २. धा. फिरि तोंवर स पहार, अ. फ. फिर तोंवर पाहार, ना. फिरि तूवर पाहार, म. उ. स. तोंवर (तोंअरि–म.) लिह पहार।

[३४]

कवित—दल पंगनि[1] रट्ठवर[2] फुनि ले[3] चंपिय ढिल्लिय धर[4]। (१)
तब जंपइ* प्रथिराज[1] पंड बंसह[2] पाहार नर[3]। (२)
हर हथ्थहि[1] हरि गहहि[2] बाम रष्पिहि[3] इनि बारहि[4]। (३)
सेस सीसु कंपियउ[1] दाढ[2] डुल्लिय[3] भुवि[4] भारह[5]।× (४)
कहइ*[1] चंद अपुब्ब[2] सुनु[3] नृप रष्षइ*[4] बिहु भुज[5] भरउ*[6]। (५)
फिरि कंपि संकि[1] जयचंद दल तोमर सिरि[1] टट्टर धरउ*[2] ॥ (६)

अर्थ—(१) राठौर पंग (जयचंद) के दल ने फिर दिल्ली की धरा को दबाया, (२) तब पृथ्वीराज ने कहा "पांडव वंश में पहाड़ [राय] नर [उत्पन्न हुआ] है।" (३) हरि ने हर का हाथ पकड़ा और कहा, "हे वामदेव इस बार तुम्हीं रक्षा करो।" (४) शेष का सिर काँप गया और उनकी डाढ़ भूमि के भार से डोल गई। (५) चंद कहता है, "यह अपूर्व [बात] सुनो, हे नृप, (पहाड़ राय) तुम [इस धरती को] दोनों भारी भुजाओं से रक्खो।" (६) तदनंतर जयचंद का दल काँप कर शंकित हो गया कि तोमर [पहाड़ राय] ने सिर पर टट्टर (शिरस्त्राण) धारण किया है।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण म. में नहीं है।

(१) १. म. उ. स. छपंग। २. धा. फ. राठोर, अ. राठ्योर, ना. रठ्ठौर, उ. स. रट्ठिवर, म. रवि किरनि। ३. धा. आनि थानि, मो. फुनि ले, अ. फ. पिच्च (पिचि–फ.), ना. म. उ. स. जाम। ४. मो.

दल्लिय धर, ना. दिलीधर, फ. ढिलि धारत, म. ढिलीय भर, उ. स. ढिल्लिय भर।

(२) १. मो. तब जंपि (=जंपइ) प्रथीराज, धा. तब जंप्यो प्रिथिराज, अ. फ. तव जंपै पृथिराज, म. उ. स. तब जंपिय प्रिथिराज, ना. तुंअर तिहि पहार। २. ना. वंसीय। ३. धा. पहुरण हर, मो. म. उ. उ. पाहर नर, अ. पहार नर, फ. पाहारत नर।

(३) १. धा. मो. हरि हथ्थहि, अ. हर हथ्थहि, फ. हर हथ्थहि, ना. हरि हत्थह, म. उ. स. हरि हथ्थां। २. फ. गहि, स. गहिहि। ३. धा. बान रवत्तहिं, अ. फ. ना. बाम रप्पइ (रप्पै—फ. ना.), म. उ. स. वाम रप्पे (रपे—म.)। ४. धा. हनि वारह, अ. फ. इहि (इह—फ.) बारह, ना. वर वारह, म. इह बीरह; उ. स. इहि बीरह।

(४) मो. कंपेउ (=कंपियउ), धा. कंपियउ, अ. फ. ना. कंपियौ, उ. स. कंपियै। २. धा दाढ, अ. फ. ना. डाढ, उ. स. दड्ढ। ३. धा. दिल्ली, मो. दिलीय, अ फ. ढिलीय, ना. उ. स. ढुल्लिय। ४ धा. मई, ना. भुंई, अ. फ. भूमि। ५. स. मारह।

(५) १. मो. कहिहि, धा. कहै, अ. फ. म. उ. स. कवि, ना. कहि (=कहइ)। २. मो. अपुव, धा. इस अपुव, म. अ. फ. एह अपुब्ब, ना. उ. स. एह आपुब्ब। ३. धा. अ. फ. ना. भुवि। ४. रपि (=रपइ), धा. अ. फ. रवराहि (रप्पहि—अ. फ.), म. उ. स. बीर मत्र, ना. नृप रंपन। ५. धा. विहु भुव, अ. फ. विहु (वेहू—फ.) भुव, ना. दुहुं भुज, म. उ. स. इहर। ६. मो. भर (=भरउ), धा. भरयो, अ. फ. म. उ. स. भरयौ, ना. भिरद्यो।

(६) १. अ. फ. फिरि (फिर—फ.) कपियो जंपि, उ. स. ठठुक्यो सेन, म. ठठुक्यो देपि। २. मो. फ. तोमर म्रिर, अ. तोमर सिरि, स. तोमर जप, उ. तोमर तब, म. तब तोमर, ना. तिन सम लरि। ३. मो. टट्टर धर (=धरउ), धा. टटट्टर धरयो, अ. फ. म. उ. स. टट्टर धरयौ, ना. तुंवर परयौ।

टिप्पणी—(४) दाढ < दंष्ट्रा। भुवि < भूमि।

[३५]

कवित—वेद कोस[१] हर सिंघ[२] उभय[३] त्रियत[४] वड गुज्जर[५]। (१)
काम[१] बान हर नयन निडर[२] नीडर[३] सोइ[४] सुम्मर[५]। (२)
छगन पटन[१] पल्लानि कन्ह[२] पंची[३] दिग पालहे[४]। (३)
अल्हन द्वादस सकल[१] अचल विद्या गनि[२] कालह। (४)
सिंगार[१] विम्क[२] सलपह[३] सुकथ[४] लपन पाहार आहार सुउ[५]। (५)
इत्तनइ* सूर झूझंति ही[१] ढिल्लियपति प्रथिराज भउ[२]॥ (६)

अर्थ—(१) वेद [४] कोस हर सिंह [खींच ले गया], और उभय त्रियत [६] बड गूजर [कनक]; (२) काम-बाण [५] तथा हर नयन [३—अर्थात् आठ कोस—निडर नीडर उसी बीच में (सीधे दिल्ली की दिशा में) [खींच ले गया]; (३) छगन ने पटन [नामक घोड़े को] पलाना तो कन्ह ने [पृथ्वीराज को] दिग्पाल [१०] कोस खींचा, (४) अल्हन ने कुल द्वादश कोस [खींचा] और अचलेस ने काल की गणना कर (?) विद्या [१४] कोस खींचा, विझ ने शृंगार [१६], सुकथ—पंचाख्यान—[५ ?] सलप, लषन तथा पहाड़ राय ने आहार [१०, १० ?] कोस [खींचा], ऐसा मैंने सुना है। (६) इतने शूरों के जूझते ही पृथ्वीराज दिल्लीपति हुआ—अथवा दिल्ली पहुँच गया।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. म. वेदे कोस। २. मो. हर संघ, धा. ना. हरि सिंघ, म. हरसिंह। ३. फ. उभउ। ४.

धा. तिमतिहि, अ. तिम्गनि, फ. तियगुन, ना. एतोय। ५. मो. गुज्जर, धा. गुज्जर, शेष में 'गुज्जर'।

(२) १. धा. अ. फ. इक, मो ना. म. उ. स. काम। २. फ. तिडर। ३. म. निडुर (< निडुर), ना. निडुर। ४. धा. भुर, मो. सोर, अ. फ. भय, ना. भौ, म. उ. स. भूमि। ५. मो. सज्झर, धा. मज्झर, अ. फ. रज्झर, म. स. झुज्झर, उ. सुदर, ना. झुम्मर।

(३) १. धा. छगन पत्त, अ. छगन पत्त, फ. छगनं पति, ना. उ. स. छगन पट्ट, म. चाज पटन। २. मो. कन, शेष सभी में 'कन्ह'। ३. धा. ना. पचीय। ४. धा. अ. फ. म. ना. दुगपालह-(दुगपालहि-फ.)।

(४) १. धा. अ. फ. अरह चाल (चाल-फ.) द्वादसनि, ना. म. उ. स. अल्ह (अल्हन-ना.) चाल द्वादसह। २. अ. विधा भनि, फ. बिना मनि।

(५) १. अ. फ. म. ना. शृंगार (शृंगारु-फ.)। २. ना. वीर। ३. मो. सिषिह, धा. साकप्प, ना. सकप्पन। ४. धा. दिय, अ. फ. ना. लवन। ५. धा. अ. फ. पगुराउ फिरि गेह गउ, मो. लवन पाहार आहार सुउ, ना. सुकथ पहार तिदच घौ, म उ. स. लवन पहारनि (पनदहारि-म.) पंच चय।

(६) १. धा. अ. फ. सामत सत्त जुट्टे प्रथम, मो. इतनि (= इतनइ) सूर सु झर तिहि, म. उ. स. इतने सूर सब झुझे (ज्झा-म.) तह ना. इतन सर झुम्भ त रण। २. मा. धा. अ. फ. ढिल्ली (दिल्ली-मो. ढिलीय-अ. फ.) पति प्रिथिराज (प्रथीराज-मा.) भउ, ना. म. उ. स. सारौं (सोरं-म.) पुर (परि-ना) प्रथिराज जय (मी.-ना.)।

टिप्पणी—(२) सुज्झ < शुद्ध-सीधा। (५) सुअ < श्रुत = सुना गया। (६) पत्त < प्राप्त।

[२६]

दोहरा— दुहु नृपतिन रण धर कुसल[१] लभ्यु[२] सु कित्तिय[३] भूरु[४]। (१)
जिहि गुनि[१] प्रगटत[२] पिंड किय तिहि संघरि गए[३] सूरु[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) दोनों नृपतियों का रण धरा पर कुशल हुआ, और दोनों ने भूरि कीर्ति लाभ किया। (२) अपने जिस गुण से अपने पिंड प्रकट किए थे, उसी गुण से शूर संहार को प्राप्त हुए।

पाठांतर—(१) १. धा. त्रित धर कुसल न जेतु भइ, अ. फ. राजन भुत धर (धरि-फ.) कुसर हुव, ना. राजाधृति धर कुशल हुव, म. उ. स. राजत त्रित (त्रत-म.) धर केलि सह। २. म. लाभ, ना. लब्ध। ३. मो. धरधीय। ४. ना. नूर, म. उ. स. पूर।

(२) १. धा. तिहि गुन, अ. फ. ना. म. उ. स. जिहि गुन। २. धा. प्रगटनु, फ. प्रगटिति, म. प्रगट। ३. धा. तिहि सघरि गय, अ. फ. ते सघरि गय, ना. तिहि संहारिय, उ. स. तिहि संहरि सूर, म. तिहि संहर सुर। ४. म. उ. स. सूर।

टिप्पणी—(१) धर < धरा।

९. पृथ्वीराज-संयोगिता का केलि-विलास और षड् ऋतु

[१]

अडिल्ल— *दिल्लिय[1] पति ढिल्लिय[2] संपत्तउ*[3] । (१)*
फिरि पहु[1] पंग राय[2] घरि[3] जत्तउ[4] । (२)*
जिम राजन[1] संजोगि[2] सुरत्तउ[3] । (३)*
सुह दुह[1] कहन[2] चद[3] हउ*[4] रत्तउ*[5] ॥ (४)*

अर्थ—(१) दिल्ली पति (पृथ्वीराज) दिल्ली संप्राप्त हुआ—पहुँचा, (२) तदनंतर प्रभु पंगराज (जयचंद) घर कन्नौज गया। (३) जिस प्रकार राजा (पृथ्वीराज) संयोगी में अनुरक्त हुआ, (४) [उस] सुख-दुःख के कहने के लिए मैं चंद अनुरक्त हुआ।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. म. उ. स. दिल्लिय (दिल्लीय– मा. न.) ना. ढिल्ली। २. मो. ढिल्लिय, म. ढिल्लीं, ना. ढिल्ली। ३. मो. संपतु (= संपत्तउ), धा. संपत्तउ, अ. फ. नु संपत्तउ (संपत्तौउ–फ.), म. उ. स. संपत्तौ, ना. संपत्तौ।

(२) १. मो. प्रु; शेष में 'पहु'। २. धा. रायराउ। ३. धा. फ. उ. स. ग्रह, अ. ना. गृह, म. ग्रेह। ४. मो. जतु (= जत्तउ), धा. जत्तउ, अ. ना. उ. स. जत्तौ, म. जत्तौ, फ. जुत्तउ।

(३) १. मो. फिरि प्रुह पग राय, ना. जिम जिम राइ। २. मो. संयोग, शेष सभी में 'संजोगि'। ३. मो. सु रतु (= सुरत्तउ), धा. फ. सुरत्तउ, अ. म. उ. स. ना. सुरत्तौ।

(४) १. मो. सुह दुह (< दुःख), धा. फ. म. उ. सुहदुह, ना. दुह दुह। २. म. उ. स. कहन। ३. मो. कंन्ह, म. वंदि। ४. मो. हु (= हउ), धा. मनु, अ. फ. न, म. उ. स. महि, ना. मन। ५. मो. रतु (= रत्तउ), धा. फ. रत्तउ, अ. रत्तउ, ना. म. उ. स. मत्तौ।

टिप्पणी—(१) संपत्तउ < संप्राप्त। (३) रत्त < रक्त। (४) सुह < सुख। दुह < दुःख।

[२]

दोहरा— *दिव[1] मंडन[2] तारक[3] सयल[4] सर[x] मंडन[x] कमलांनु[x] । (१)*
जस[x1] मंडन[x] नर[x] भर[x] सयल[x2] महि[3] मंडन महिलानु[4] ॥ (२)

अर्थ—(१) आकाश के मंडन (आभूषण) समस्त तारे होते हैं, और सर के मंडन (आभूषण)

कमल होते हैं, (२) [राजाओं के] यश के मडन (आभूषण) समस्त भट जन होते हैं और मही के मंडन (आभूषण) महल होते हैं।

पाठांतर—× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. अ. दिवि। २ फ. मडक। ३. म. तार। ४. मो. सर, अ. सधन, फ. सयनु, ना. म उ. स. सकल।

(२) १. अ. ध. स. रन, फ. रतु, म. दिन। २. मो. सय, धा. सयल, म. गहर, अ. फ. सुदर, उ. स. सुमर, ना. में भी 'सयल' रहा होगा, जिस कारण उसमें प्रथम चरण के 'सयल' के बाद दूसरे चरणके 'सयल' तक की शब्दावली उसमें छूट गई। ३. मो. मिहि, ना. घर। ४. मो. मिहिलान, धा. महिलतु, फ. महिलाल।

टिप्पणी—(१)-(२) सयल < सकल।

[३]

दोहरा—*महिलउ**[१] *मंडन नृपति मिह*[२] *कनक कति*[३] *ललनानि*[४] *। (१)*
तिहि[१] *उप्परि*[२] *सजोगि नग*[३] *धरि रष्पउ**[४] *वर वानि*[५] *॥ (२)*

अर्थ—(१) महलों के भी मडन (आभूषण) राजा (पृथ्वीराज) के रनिवास की कनक-कांतिवाली ललनाएँ थीं, (२) और उनके ऊपर [राजा ने] नग के समान वर वर्णी (अच्छे वर्ण वाली) सयोगिता को रक्खा।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. मिहिल (< मिहिलउ), धा. अ. फ. महिलहि, ना. महिलै, म. उ. स. महिलन। ३. मो. नृपति मिहि, म. मडन रानमिह, ना. मड नृपति गृह। ३. मो. कन, शेष सभी में 'कति'। ४. धा. अ. फ. उ. स. ललनानि, मो. म. ललनान।

(२) १. म. फ. तिनि, ना. म. स. ता, ड. तान। २. मा. ऊपरि, धा. फ. म. ना. उप्परि, अ उ स. उप्पर। ३. मो. सयोगन, फ सजोगि नागु, म. संजोगि नग, शेष में 'सजोगि नग'। ४. मो. धरि रषु (=रष्पउ), धा धरि रक्खयो, अ फ. विधि रष्षिय, ना. धनि राष्न, म. उ. स. धरि राजन। ५. मो म उ. स. वलतान (वलतांन-म.), धा. बलिवान, अ. फ वर वानि, ना. वलिवानि।

टिप्पणी—(१) कति < कान्ति। (२) वानि < वर्णी।

[४]

दोहरा—*सुभ*[१] *हरम्य*[२] *गढिग*[३] *निपति दिपति*[४] *दीप*[५] *दिव लोक । (१)*
मुकरु[१] *मउप*[२] *अमृत*[३] *झरहि करहि*[४] *सु मनहि*[५] *असोक ॥ (२)*

अर्थ—(१) नृपति (पृथ्वीराज) ने शुभ (सुखदायक) हर्म्य बनवाया, जिसके दीप आकाश लोक तक प्रदीप्त होते थे। (२) उसके मुकुरों में [चद्रमा की] मयूखों का अमृत झड़ा करता था, जो [दपति के] मन को विशोक किया करता था।

पाठान्तर—(१) १. अ. सुभग, फ. सुज। २. म. फ. हरम्मि। ३. धा. मढिम, अ फ. मढिय। ४.

मो. दीपत, स. दीपति । ५. ना. दीप ।

(२) १. मो. मुकल, धा. मुकल, अ. फ. मुकल, ना. मुकर, उ. म. मुकुर, म. मुकर । २. धा. मो. अ. मुप (=मउप), फ. मुउ, ना. म. मयूप, उ. स. मउप । ३. अ अमृति । ४. मा. करिहि, ना. करह, ५. धा. तु मतुह, फ. म. ति मनह ।

टिप्पणी—(२) मुकल < मुकुर । मउप < मयूप ।

[५]

रासा—घगर धूम[१] धुप गउप[२] उनयउ[३] मेघ जनु । (१)*

त[१] मोर मराल[२] निरत्तहिं रत्तहिं[३]‡ मत्त[४] धुन[५] । (२)

सारंग सारिग[१] रंग पहक ति[२] पंषि रसि[४] । (३)

विज्जुलिका कलसति[१] झमंकहिं[२] जासु[३] मिसि[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) [उस हर्म्य के] गवाक्षों के मुखों में अगुरु धूम [शोभित] था, [जो ऐसा लगता था] मानों उन्नमित मेघ हो, (२) जिस [मेघ सदृश धूम] को देख कर मोर तथा मराल नृत्य करते और मत्त ध्वनि में शब्द करते थे, (३) सारंग (चातक) और सारिका क्रीड़ा करते थे और पक्षी गण आनंद पूर्वक चहकते थे, (४) और जिस मेघ सदृश धूम के मिस से [उस हर्म्य के] कलश बिजली [के सदृश] चमकते थे ।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है
‡ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है ।

(१) ना धूप, म. उ. स. धुम्म । २. मो. गुप्प (< गउप), धा. गोउप, अ. ना. गौप, फ. गौषि, म. उ. स. गौपह (गोपइ–म.) । ३. धा. उन्नए, मो. उनयन, अ. फ. कि उन्नय, ना. म. उनयौ, ना. उ. स. उन्नयो (उन्नयौ–ना. म.) ।

(२) १. मो. त, धा ना. अ. फ. में यह शब्द नहीं है, म. उ. स. तहय । २. म. उ. स. मल्हार । ३. मो. निरत्त रेरहि, धा. निरताहि रत्तहि, अ. फ. म. उ. स. निरताहि, ना. निरतहि रहहि । ४. धा. मित्त । ५. मो. धुनं, धा. फ. धनु, अ. धुन, ना. म. उ. स. धनु (धन–उ. स.) ।

(३) १. मो. शारिग सारिग, शेष में 'सारग सारग' । २. धा. ना. म. उ. स. पहुकहि, अ. पहकहि, फ. पहकरि । ३. मो. अ. फ. ना. पंष । ४. मो. रस, धा. रसि, म. रिस ।

(४) धा. अ. बिज्जल थाक लसति, मो. विज्जुलि काक सति, फ. बिज्जलका कलसंत, स. बिज्जुलि कोकल सानि, म. उ. बिज्जुलिका कल सानि । २. धा. झमकहि, अ. झम घुहि, ना. किनकहि । ३. मो. जास, धा. जासु, शेष सभी में 'जासु' । ४. मो अ. ना. मिस, शेष में 'मिसि' ।

टिप्पणी—(१) गउप < गवाक्ष । उनयउ < उन्नमित । (२) रणु=शब्द करना । धुन < ध्वनि । (३) सारिग < सारिका । पंषि < पक्षी । (४) बिज्जुलिका < विद्युत् । कलस < कलश ।

[६]

रासा—दादुर सादुर[१]+‡° सोर नव नूपुर[२] नारि घन । (१)

मिलि सुरमध्धि[१] मधु° व्रत[२] माधुर[३] मंजुरी[४] मन । (२)

सालूक[१] पंच पचीस[२] प्रजंक त[३] दून[४] तस[५] । (३)

तहं तहं[१] अथ्थि[२] सुवीन[३] प्रवीन ति[४] दासि[५] दस ॥ (४)

अर्थ—(१) [उस हर्म्य में] सघन नारियों के नव नूपुरों का रव दादुर तथा शार्दूल के घोर के सदृश था। (२) [उन नूपुरों के] स्वर के मध्य मधुमती और मधुर-प्रिय मधुकर मंजु मन से आ मिलते थे। (३) [उस हर्म्य में] पाँच-पचीस (अनेक) शालिकाएँ (सारियाँ) थीं, और उनमें उनकी दूनो पर्यङ्क (पलँग) [प्रत्येक में दो-दो] थीं। (४) और उन [सारियों] में वीणा में प्रवीण दस दस दासियों की अथाइयाँ थीं।

पाठान्तर—० चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
\+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
¶ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. 'सादुर' शब्द धा. अ. फ. में नहीं है, पूर्ववर्ती शब्द से साम्य के कारण छूट गया है, ना. दादुर, उ. साहर। २. मो. नव नूपरर, धा. जु नूपुर, अ. सु नूपुर, फ. सुनूंपुर, ना. म. उ. स. नवन्पुर।

(२) १. मो. मिलि सुर मध्य, धा. मिमिलि सुर मध, अ. मिलिसुर मद्धि, फ. मिलि सुर मधु। २. धा. में—कदाचित् पूर्ववर्ती 'मध' के साम्य के कारण 'मधु व्रत' या 'मधु' धा. में छूट गया है, फ. उ. स. मधुव्रत। ३. फ. माधुर, म. माधुरं, ना. मधुर। ४. मो. में यह शब्द नहीं है, अ. मंजि, फ. ना. मंज, म. उ. स. मद्धिम।

(३) १. मो. फ. सालुक। २. फ. पाविस, म. पचीस। ३. मो. प्रजंतक, अ. म. उ. स. प्रजंकति, फ. प्रयंकित, ना. प्रजंकति। ४. अ. फ. में यह शब्द छूटा हुआ है। ५. अ. दस, फ. धिस, ना. रस, म. दस।

(४) १. धा. तह तह, मो. ताहां ताहां, अ. फ. ना. तह तह, उ. स. तह, म. तहां। २. धा. म. अथि, अ. फ. इथ्थि, ना. अथि०। ३. मो. सुचि, धा. सुरचीन्ह, अ. ना. सुवोन, फ. सुथान, उ. स. परवीन, म. प्रवी—। ४. म. स वीनति, उ. स. सुवीनति। ५. मो. अ. फ. दास, शेष में 'दासि'।

टिप्पणी—(१) सोर < शोर [फा.]। (३) सालक < शालिका—घर के कमरे। प्रजंक < पर्यङ्क। (४) अथ्थि < आस्थान = अथाई। वीन < वीणा।

[७]

रासा—के[१] जुव[२] जूथ[३] जि[४] वाद[५] प्रमादहिं[६] मंद[७] गति। (१)
के चल[१] अंचल[२] वायु[३] निरूपहिं[४] सद्द[५] रति[६]। (२)
के वर[१] भाष[२] पराकृति[३] संकृति[४] देव सुर। (३)
के गुन ग्यान सुजान[१] विराजहिं[२] राज वर॥ (४)

अर्थ—(१) [उस हर्म्य में] या तो जुवती यूथ, जो [वाद्यों का] वादन करता था, अपनी मंद गति से [राजा को] प्रमादित करता था, (२) या तो वह अपने हिलते हुए अंचल के वायु से शब्द-रति (ध्वनि प्रेम) का निरूपण करता था, (३) या तो वह श्रेष्ठ प्राकृत अथवा देव-स्वर (देव-वाणी) संस्कृत में संभाषण करता था (४) और या तो वह गुण-ज्ञान-सुजान श्रेष्ठ राजा का मनोरंजन (?) करता था।

पाठान्तर—(१) १. धा. कैव। २. मो. घुत्र, धा. सुव, म. जुअ, शेष सभी में 'जुत'। ३. धा. सुग्र, म. ना उ. स. जुध्य। ४. अ फ. ना. म. उ. स. ज। ५. म. वाचि, ना. वाद्रि, अ. फ. वाचि। ६. धा. प्रमादति, फ प्रवाहरि, ना. प्रमादिहि। ७. मो. माद, शेष सभी में 'मद'।

(२) १. म. उ. स. ना. बल, अ. बर, फ उर। २. अ फ. अम्बर। ३. धा. बाड, अ बाइ, फ. बौय, ना. वान, म. वाय, उ. स. पाय। ४. धा. निरुप्पहि, अ. फ तिरूप्पहि। ५. अ अघ, फ. अदि, ना. साद, म. उ स. सरद। ६. म. रिति।

(३) १. म. तेवर। २. धा. भाषि, फ. माषु। ३ धा. पराक्रिति, अ. फ. पराक्ति, उ. स. ना. पराकत, म. पराक्रित। ४. धा. संक्रिति, अ फ. राकुनि, म. ससक्रित, उ. स. संकृत, ना. आकृत।

(४) १. अ. फ ना. म. उ. स. वर बीन (वर बीन प्रबीन—फ.) (तु० पूर्ववर्ती छन्द का अंतिम-चरण)। २. अ. फ. विराजहि बीर वर, उ स. विराजित राजहि वार वर, म. विराजत राज दरवार वर, ना. विराजहि राजहि राव।

टिप्पणी—(२) सद < शब्द। (३) पराक्रति < प्राकृत। सक्रति < सस्कृत।

[८]

रासा—इह[१] विधि विलसि विलास असार सुसार[२] किय[३]। (१)
दइ*[१] सुष जोग संजोगि[२] सोइ[३] प्रथिराज जिय[४]। (२)
अहनिसि सुधि° न° जानहि[१] माननि[२] प्रौढ रति। ‡ (३)
गुरु बंधव भृत[१] लोइ[२] गई विपरीत[३] गति ॥‡ (४)

अर्थ—(१) इस प्रकार विलासों को विलस कर [पृथ्वीराज ने] सुसार (सामर्थ्य—शक्ति) को भी असार कर दिया; (२) वह संयोगिता को सुख योग प्रदान करे, यही पृथ्वीराज के जी में रहा करता था; (३) मानिनी (संयोगिता) की प्रौढ रति में [पड़ कर] वह दिन और रात की भी सुधि नहीं जानता था—नहीं जानता था कि कब दिन होता है और कब रात, (४) परिणाम स्वरूप उसके गुरु, बाधवों, भृत्यों और लोक (प्रजा) की गति विपरीत [उसके विरुद्ध] हो चली।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं हैं।

(१) १. म. उ. स. इन। २. धा. फ. असार तिसार, अ. असार तसार, ना. असार ससार, म. म. आसर सुसार। ३. म. कीय।

(२) १. मो. दि (—दइ), धा. दिव, अ. फ. म. उ. स. छं। २. मो. मोग सयोग, म. जोगि संयोगि, अ. फ. जोग सयोजन (सयोजनि—फ.) शेष में 'जोग सजोगि'। ३ धा अ. फ. उ. स. प्रिथी, ना. प्रथी, म. जोगि। ४. म. प्रीय, ना. प्रिय।

(३) १. धा. अह निसि सुधि म जानत, म. अह निसि सुधि न जानिये, ना. दै सुष सुष सजोग (तु० चरण २)। २. धा. माननि, म. मानिय, ना. प्रमानी।

(४) १. धा. बंध धव भृति, ना. भयौ।

म. में यह छंद ९.२४ तथा १२. ६२० पर दो बार आता है। ९.२४ का पाठांतर ऊपर दिया जा चुका है और १२. ६२० में इन चरणों का पाठ है :

ज्यौं रति संगम मार न जानें रयन (रयनि–म.) दिन ।
केत कि कुसुम सुभाय रह्‌यौ मनु (मैनु–म.) भ्रमर मन ।

म. में यह छंद दो प्रसंगों में आता है; एक तो पृथ्वीराज के कन्नौज-प्रयाण के पूर्व (९.२४) और पुनः यहाँ पर। प्रथम स्थान पर पाठ धा. मो. का ही है, दूसरे स्थान पर पाठ उ. स. का है। अ. फ. में ये दोनों चरण नहीं है।

टिप्पणी—(४) भृत < भृत्य। लोइ < लोक।

[६]

साटिका—सामग्गं कलधूत नूत[२] सिखरा[३] मधुलेहि[४] मधु[५] चेष्टिता[६] । (१)
वाते[१] सीत सुगंध मंद सरसा[२] आलोल सा चेष्टिता । (२)
कंठी कंठ[१] कुलाहले मुकलया[२] कामस्य[३] उद्दीपनीं[४] । (३)
रत्ते रत्त वसंत पत्त° सरसा°[१] संजोगि°[२] भोगाइते°[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) [जिस वसंत में वृक्षों के] शिखरों पर [पुष्पाभरण के कारण] नूतन कलधूत (सोने-चाँदी) की समग्रता हो गई है और मधुलेहिन (भ्रमर) मधु-चेष्टित हो रहे है, (२) वात (वायु) शीतल मंद और सुगंधित तथा सरस हो गई है और वह चपलता के साथ चेष्टित हो गई है—बह रही है, (३) कंठी (कोकिल) के कंठ के कोलाहल से मुकुलों (कलियों) में काम का उद्दीपन हो रहा है, (४) तथा जो वसंत सरस [लाल] पत्तों के कारण लाल हो रहा है, संयोगिता ऐसे वसन्त में [पृथ्वीराज द्वारा] भोगायित हो रही है।

पाठान्तर—० चिह्नित शब्द धा में नहीं है।

यह छंद ना. में २९.८६ आ. तथा ४१.१० है। यहाँ पर ना. का पाठान्तर ४१.१० का दिया जा रहा है।

(१) १. मो. सामंता, अ. फ. स्यामंग, ना. सामग्ग, म. उ. स. स्यामंगं। २. धा. अच्छ, मो. नू। ३. अ. सिषिरे, फ. ना. शिषरे, म. उ. सिषरे, स. सिषरं। ४. धा. अ. फ. म. मधुरेहि, ना. मधुरेय, उ. स. मधुरे। ५. म. उ. समधू। ६. म. चेष्टिता।

(२) १. अ. फ. वाता। २. धा. सरिसा। ३. म. स।

(३) १. धा. अ. फ. कूल, मो. म. उ. स कंठ। २. धा. वकुलया, अ. फ. वहछ, कामानि, ना. कामाय। ४. धा. उद्दीप—'अ. फ. उद्दीपनो' म. उ. स. उद्दोपने, ना. उद्दीपनं।

(४) १. धा. में 'रत्ते रत्त वसत' के अनंतर की छद नहीं शब्दावली की है। अ. फ. रे (रैं–फ.) तेते दिवसा तपंति सरिसा, म. उ. स. रत्ते रत्त वसंत मत्त सरसा। २. मो. सयोग, अ. फ. म. उ. स. संजोग ना. संजोगि। ३. मो. भोगायनी, अ. फ. मोगाइते, ना. म. उ. स. भोगायते।

टिप्पणी—(१) सामग्गं < सामग्र्य–सम्पूर्णता। (४) पत्त < पत्र।

[१०]

साटिका—दीहा[१] दिव्य[२] सदंग[३] कोप[४] अनिला [५]आवर्त्त मित्ताकर[६] । (१)
रेन[१] सेन[२] दिसान[३] थान मलिना[४] गोमग्ग धाडंबर[५] । (२)

नीरे नीर[१] अपीन[२] छीन[३] छपया[४] तपया तरुपया तनं[५] । (३)
मलया चंदन[१] चंद मंद[२] किरणा[३] सु ग्रीष्म[४] आसेचनं[५]‡ ॥ (४)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज से संयोगिता कहती है,] "[जिस ग्रीष्म में] दिन दिव्य (तप्त लौहादि) [के समान] हो रहे हैं, अनिल (वायु) शब्द करती हुई कुपित हो गई है, और मित्राकर (सूर्य की किरणों) से उत्पन्न आवर्त्त (ववंडर) उठने लगे हैं, (२) रेणु की सेनाओं से दिशाएँ तथा स्थान मलिन हो रहे हैं, [यथा] गो-मार्ग (गायों के खरिक में जाने-आने के मार्ग) में उठे हुए आडंबर (गर्द-गुबार) से हों, (३) जहाँ जो भी नीर था वह अपीन (क्षीण) हो गया है, रात्रि भी क्षीण हो गई है, और तप (गर्मी) का तनु तरुण हो गया है, (४) मलय [समीर], चंदन और चंद्रमा की मंद किरणें ही [ऐसे] ग्रीष्म में [मुरझाते हुए प्राणों का] आसेचन (सिंचन) करने वाले हो रहे हैं।"

पाठान्तर—‡चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. मो. दिहा। २. धा. दव्व, मो. दिव्व, अ. फ. म. उ. स. दिव्व। ३. मो. शादंभ, धा. म. उ. स. सद्दंग, अ. फ. सुदग, ना. समंद। ४. धा. कुप। ५. मो. अनिली, म. अनिलं, फ. अनिलु। ६. मो. धा. अ. फ. मित्राकरं (=मित्ताकरं), ना. म. मित्ताकरे।

(२) १. धा. रेणे, अ. फ. रेने, ना. म. उ. स. रेनं (रेणं—ना. म.)। २. धा. सेणि। ३. धा. तदीस, मो. दि, शेष अंश शब्द का नहीं है, अ. फ. दिसेन। ४. ना. उ. मलिन, स. मिलनं, म. मलिने। ५. मो. आडंभरं, म. ना. आडंवरे।

(३) १. अ. फ. नीरे नीर, म. नीर पीर। २. धा. अपीन, फ. अपीव। ३. धा. छीनि, फ. छीन। ४. धा. म. छिपया। ५. स. तरुर्या। ६. फ. तमं।

(४) १. फ. चंदल। २. अ. फ. नंद। ३. धा. किरणा, मो. म. ना. किरणी, अ. फ. किरणे, म. उ. स. किरनं। ४. धा. अ. फ. म. ग्रीष्मे च, ना. ग्रीष्मे सु, उ. ग्रीष्मं च, स. ग्रीष्म चे। ५. मो. अषेमनं, धा. आसेचनं, अ. आपेचनं, उ. स. आपेचनं, म. आपेमन, फ में 'आ' के बाद अगले छंद के 'वसुंधरा' (चरण. ३) के 'व' तक का अंश नहीं है।

टिप्पणी—(१) दीहा < दिवस। सद < सद्द < शब्द। (२) रेन < रेणु। थान < स्थान। गोमग्ग < गोमार्ग। (३) छीन < क्षीण।

[११]

साटिका—आर्द्रे[१] वद्दल[२] मत्त मत्त[३] विषया[४] दामिनि[५] दामायते ।‡(१)
दादुर्ले[१] दल[२] सोर मोर सरसा[३] पप्पीहान्[४] पीहायते ।‡(२)
श्रृंगाराय‡[१] व‡सुंधरा[२] ललितया[३] सरिता[४] समुद्रायते[५] । (३)
यामिन्या[१] सम वासरे[२] विसरता[३] प्रावृट्[४] पश्यामि ते ॥ (४)

अर्थ—(१) "[जल से] आर्द्र बादल विषय में मत्त हो रहे हैं, और [उनकी प्रिया] दामिनी दमक रही है; (२) दादुरों का दल मोरों के साथ ही शोर कर रहा है और पपीहे पीत्कार कर रहे हैं; (३) लालित्यपूर्वक वसुन्धरा ने शृंगार किया है, और सरिता [बढ़कर] समुद्रायित हो रही (समुद्र बन रही) है (४) यामिनी के समान ही [अंधकार पूर्ण] होकर वासर (दिन) भी जा

रहे (व्यतीत हो रहे) हैं, वर्षा में ऐसा दिखाई पड़ रहा है ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।
‡ चिह्नित अक्षर, शब्द और चरण फ. में नहीं हैं ।
+ चिह्नित चरण अ. में नहीं है ।

(१) १. उ. अद्दे, म. स. अब्दे । २. मो. बादल, धा. अ. म. ना. उ. स. बद्दल । ३. यह शब्द फ. में नहीं है । ४. अ. दिसया, ना. दिशेशा, उ. स. विसया । ५. मो. दामिनी, धा. अ. ना. उ. स. दामिन्य म. दामन्य ।

(२) १. धा. दद्दूरे, मो. दादुले अ. फ. म. उ. स. दादूरं, म. धादूलं, ना. दादुल्यं । २. उ. स. दर ३. धा. उ. स. सरिसा, ना. करणं । ४. मा. पपीहान (< पपीहान), धा. म. ना. उ. स. पप्पीह ।

(३) धा. अ. सिंगाराय, स. शृंगारीय । २. मो. चतुधरा । ३. धा. अ. फ. सुलछिता, म. ससलिता स. मछिलना, उ. सलिलना । ४. मो. सालिना, म. अ. ए. लीला । ७. म. समुद्राय, उ. मुद्रायते ।

(४) १. ना. जामन्यं । २. उ. स. वासुरो, म. वासरो । ३. धा. अ. फ. विसरिता, मो. ना विसरजा (विशरजा—म.), म. विसुरता, उ. स. विसरता । ४ मो. परवट, धा. अ. प्रावृट सु, फ. प्रावृस्य ना. पुरपट्ट, उ. स. पावरन, म. पावस्य । ५. मो. पदच्चामिते, ना. वरदामिते, उ. स. पंचानते, म. पंचामदी

टिप्पणी—(१) अद्दे < आर्द्र । (२) दादुल्ल < दर्दुर । चीह = चीत्कार करना । (३) सलिना < सरिता ।

[१२]

साटिका—पित्ते पुत्त[१] सनेह गेह[२] भुगता[३] युक्तानि दिव्या दिने[४] । (१)
राजा छत्रनि साजि[१] राजि[२] पितया[३] नंदाननब्भासने[४] । (२)
कुसमे[१] कातिक[२] चंद निम्मल[३] कला दीपांनि वर दायते[४] । (३)
मां मुकइ*[१] पिय बाल नाल[२] समया सरदाय दरदायते[३] ॥ (४)

अर्थ—(१) "जो पिता-पुत्रादि के स्नेह और गृह का भोग कर रही है, [अथवा] जो युक्ता (संयोगिनी) है, उसके लिए दिन दिव्य है; (२) राजागण छत्रों को साजकर और [अपनी] क्षिति पर शोभित होकर आनंद युक्त आननों से भासित हो रहे है; (३) कुसुमों और चन्द्रमा की कलाएँ कार्तिक में निर्मल हो गई हैं, और दीप वरदायी हो रहे है—दीप दान से लोग वाञ्छित फल प्राप्त कर रहे हैं; (४) हे प्रिय, बाला को इस [कमल] नाल [के निकलने] के समय में ने छोड़ो [क्योंकि] शरद का दल दिखाई पड़ रहा है ।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।

(१) १. धा. पत्ते, पत्त मो. पित्ते पित्र, अ. फ. उ. स. पित्ते पुत्त (पुत्र—फ.) म. पुते पिति, ना. पुत्र पुत्ति । २. धा. नेह, ग्रेह । ३. धा. भुगतान, मो. भुक्तान, अ. भुक्ता, फ. भुक्तादि, ना. जुगतानि, उ. स. जुगतान, म. जुकान । ४ म. दिव्यादने, धा. ना. स. दिव्यादने, फ. दिव्यादन ।

(२) १. धा. अ. फ. साज । २. धा. अ. फ. म. राज । ३. धा. अ. फ. म. ना. छितया, उ. स. क्षितिया । ४. मो. निंदाननभयासने, धा. निंदादला भासिते, उ. फ. निंदाचला भासिते (भासितो—अ.), उ. स. निंदायिनीवासने, म. सदाननभास्ने, उ. स. निंदायिनी वासने, ना. नंदानित व्यासते ।

(३) १. धा. कुसुम अ. म. उ. स. ना. कुसुने। २. धा. अ. फ. कातिग, ना. म. कतिक (=कत्तिक), उ. स. पंतन। ३. धा. निम्मल, शेष में 'निर्मल'। ४. धा. अ. फ. दीपान (दीपन-फ.) वरदायते (वायते-धा.), उ. स. दीपायं वरदायने, म. दीपा वरदाइने, ना. दंपायन वरदायते।

(४) १. मो. मुकि (= मुक्कइ), धा. अ. फ. म. उ. स. मुक्के, ना. मुके। २. म. जाल। ३. फ. सरदाइ दरदाइते, उ. स. सरदाय दरदायने, म. सरदावर दाइने।

टिप्पणी—(१) गेह < गृह। (२) खित < क्षिति। (३) मुक < मुच्। (४) दर < दल। दा श < दर्शय् (?) = दिखलाना।

[१३]

साटिका—क्षीनं[१] वासर स्वास दीघ[२] निसया शीतं जनेतं[३] वने[४]। (१)
सज्ज[१] संजर[*२] वान यौवन तया[३] आनंग[४] आनंगने[५]। (२)
यउ[*] बाला तरुणी निवृत्तपत्र नलिणी[१] दीना न जीवा पिणे[२]। (३)
मा कांत[१] हिमवंत[२] मत्त[३] गमने[४] प्रमदा[५] न आलंबने[६]॥ (४)

अर्थ—"(१) वासर श्वास के सदृश क्षीण हो रहा है, और निशा दीर्घ होने लगी है, वस्तियों और वनों में शीत व्याप्त हो रहा है, (२) यौवन के कारण शय्या संज्वर-कारिणी हो गई है, और अनंग ही अनंग [का अधिकार] हो गया है, (३) जो बाला तरुणी है, वह निवृत्त-पत्र (जिसके पत्ते झड़ गए हैं, ऐसी) नलिनी के सदृश इस प्रकार दीन हो गई है कि क्षण भर भी जीवित न रहेगी। (४) हे कान्त, मत्त हेमंत में गमन न करो, क्योंकि प्रमदा आलंबन (अवलंब) हीन हो जावेगी।"

पाठान्तर—(१) १. धा. अ. फ. खीनं, म. क्षीनं, ना. उ. स. छिनं। २. मो. सास दीघ, धा. स्वास दिग्ध, ना. म. दिग्घ दिग्घ, उ. स. सीन दीघ। ३. धा. सीतं जीतं, अ. फ. सीते (सीत-फ.) न जीतं। ४. धा. अ. ना. वने, मो. वनं, फ. पिते, म. तने।

(२) १. धा. अ. फ. सज्जा, स. सेजं, उ. सेतं, म. सिज्जा। २. धा. साझर, म. सिज्जर, मो. अ. फ. ना. उ. स. सज्जर (< संजर)। ३. धा. बाण जुब्बन तया, अ. फ. यास जुद्द तन्या, ना. बान वा बनतया, म. उ. स. बानया वनितया (वनितया-म.)। ४. धा. आमग। ५. धा. आमदने, अ. आनगते, फ. आनंगिते, उ. स. आलिंगने, म. आगमने।

(३) मो. यु (=यउ) बाला तरुणी अनंपत्त नल्णो, धा. अ. फ. बाला ततु निवृत्त पत्त (निवृत्ति पत्ति-फ.) नलिनी, उ. स. यों बाला तरुणी वियोग दत्तन, म. ज्यों बाला नलिनी निवृत्ति पतिनी, ना. पे बाला तरुणी प्रतप्ति नलिनी। २. मो. दोनेश दीना न जीवा पिणे, धा. अ. फ. दीना नि (न-अ. फ.) जीव छिने, म. दीना न नावाक्षने, उ. स. नलिनी दहते हिम।

(४) १. धा. अ. फ. सा क्रांति, ना. मा कंते, म. माकं ते, धा. उ. स. मा मुक्के। २. मो. हिमवंत, ना. हिमवत्त। ३. धा. समंत, ना. वत्त। ४. अ. फ. गवने, ना. गहने। ५. मो. म. प्रमुदा। ६. धा. अ. निआलंबने, फ. निआलविने, उ. स. निरालंबन।

टिप्पणी—(२) सज्ज < शय्या। संजर < संज्वर। (३) खिण < क्षण।

[१४]

साटिका—रोमाली घन नीर निम्न पयोर गिरि डंग[२] नारायते[३]। (१)

पव्वय[१] पीनर कुचानिः जानि सयला[४] फुंकार[५] झुंकारये[६] । (२)
शिशिरे सर्वरि[१] वारयो घर विरहा[३] मम[४] हृदय[५] विद्दारये[६] । (३)
मा कांत[१] मृगवध्य[२] सिंघ[३] गमने[४] किं देव[५] उव्वारये[६] ॥ (४)

अर्थ—(१) "[मेरी] रोमावली वन है, श्रेष्ठ स्नेह-नीर ही गिरि और दंग की जल की धारा है, (२) [मेरे] पीन कुच मानो समस्त पर्वत हैं, मेरी जो फुत्कार (सीत्कार) है, वही मानो [पवन का] झकोर है, (३) शिशिर की शर्वरी (रात्रि) में विरह ही वह वारण (हाथी) है जो मेरे हृदय [की वाटिका] को तहस-नहस कर रहा है, (४) उस विरह रूपी मृग (वनचारी वारण) का वध करने वाले सिंह, हे कांत, तुम गमन मत करो; हे देव क्या, नारी के हृदय को इस विरह-वारण से उबारोगे ?"

पाठान्तर—(१) १. धा. रोमाली घन नील भूधरवरं, अ. फ. रोमाली घननील भूधर (भूधरि—फ.) वरं, ना. म. उ. स. रोमाली (रोमावली—म., रोमावलि—ना.) वन (ना. में यह शब्द नहीं है) नीर निद्ध (निद्धि—म.) चरयो (निझयो—उ., चरयौ—ना.) । २. धा. रुंगु, अ. फ. उंगु (ऊंग—फ.), म. ना. स. दंग, उ. दंत । ३. धा. नारा ते, मो. रारायते, म. नीरायते, ना. नाराइते ।

(२) १. मो. अ. फ. पवया, म. पचय । २. ना. पीर । ३. म. कुचानि । ४. अ. सिथिला, फ. सिथला, ना. सञ्चया, म. उ. स. सलया । ५. अ. फ. कुंकार (कुकाह—फ.), म. हुंकार, ना. फुंकार । ६ मो. झकारये, धा. झूंकारया, अ. फ. झुकारया, ना. म. उ. स. झुंकारय ।

(३) १. मो. शशिरे सर्वन्नि, फ. शिशिरे सर्वनि, ना. ससिरे सव्वरि । २. धा. ना. वारुणी च, अ. वारिणेयं, फ. वारणेय, म. वारणोच, उ. स. वारुनीय । ३. म. विरही । ४. धा. सा, मो. मम, शेष में 'मा' । ५. मो. दृदय, धा. हिर्द, अ. फ. हद्द, ना. उ. स. हद, म. सद । ६. धा. मुदारया, ना. मुव्वारय, उ. स. 'मुव्वारय, म. संवारय ।

(४) १. धा. कांति, अ. फ. क्रांति, ना. म. उ. स. कंते । २. धा. म्रिगवग्ग, अ. फ. मृगवद्ध । ३. म. उ. स. मध्य, ना. सद्ध । ४. धा. गमणे, अ. फ. गवने । ५. मो. देश अ. फ. दोव, उ. स. दय । ६. धा. पुव्वारया, अ. उद्धारये, फ. उजारया, ना. म. उ. स. उव्वारये ।

टिप्पणी—(१) रोमाल = रोमावली । निधुध < स्निग्ध । दंग < द्रङ्ग = नगर । नार < जल ।(२) पव्वय < पर्वत । सयल < सकल । (३) वारुण < वारण। (४) उव्वार < उद्+वर्तय (?) ।

१० : पृथ्वीराज का उद्बोधन

[१]

मुडिल्ल— सकल लोइ[१] पुच्छन[२] गुरु इच्छहि[३] । (१)
गुरु पट मास राज नहि[१] दिप्पहि । (२)
जब[१] (I) परजानु[२] प्रपंच[३] उपायउ*[४] । (३)
तब गुरु पुच्छन[१] चंदहि[२] आयउ*[३] ॥ (४)

अर्थ— (१) समस्त लोक (प्रजा गण) गुरु (राजगुरु) से यह पूछने की इच्छा करते थे, (२) "हे गुरु, राजा छः महीने से नहीं दील रहा है।" (३) जब प्रजागण ने यह प्रपंच उत्पन्न किया, (४) तब गुरु (राजगुरु) चद से पूछने के लिए [चद के पास] आए।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द सशोधित पाठ के हैं।

(१) १. शा. लोक। २ मो. पुंछन (= पुच्छन)। ३. मो गुरुच्छिहि (= गुरु [इ] च्छहि), शा. स. गुरु अच्छहि।

(२) १. धा. अ. फ. अन (अनु–फ.), शा. स. विन।

(३) १. अ. फ. यह शेष, में 'तब' (< जब ?)। २. मो. परधान, धा.प्रजानु, अ. प्रजानै (< प्रजानि), फ. प्रधानै (< प्रधानि।), ना. शा. स. परजानि। ३, धा. परपंच फ. परपच। ४. मो. उपाउ (= उपा अउ), धा. उपायो, फ. उठायो, शेष में 'उपायो'।

(४) १. धा. मो. पूछन, अ. पुच्छन, फ. पूछनु। २. मो. चंदुह, शा. चदह, शेष में 'चंदहि'। ३. मो. आयु (= आयउ), धा. आयो, शेष में 'आओ' या 'आयौ'।

टिप्पणी— (१) लोइ < लोक = प्रजा। (३) उपाअ < उद्+पादय् = उत्पन्न करना।

[२]

दोहरा— आदर[१] चंद अनंद[२] किय ग्रिह[३] आवत[४] गुरुराज[५] । (१)
सम सुत त्रिय*[१] चरननि परिग[२] आगइ*[३] फिरिग[४] सब साज[५]॥ (२)

अर्थ—(१) चंद ने गुरुराज के गृह आने पर [उनका] आदर किया और आनंद मनाया; (२) [अपने] पुत्र तथा स्त्री के साथ वह [गुरुराज के] चरणों में गिरा और उसके आगे सब साज फिर गया (समस्त अभिप्राय स्पष्ट हो गया !)।

पाठांतर—*चिह्नित शब्द सशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. आदूर.। २. अ. फ. अनंत। ३. मो. ग्रिहि, धा. ग्रिह, शेष मे 'ग्रिह'। ४. फ. आउति। ५. शा. गुरराम।

(२) १. मो मैं. यह शब्द नहीं है, धा. सतियनि, अ. फ. सत्रियणि, ना. त्रिय, शा न. त्रियनि सु, स. त्रियन सु। २. मो. चरणन परिग, धा. अ. शा. स. चरन (चरण–अ.) परि, फ. चरन परत, ना. चरननि परिग। ३ मो. आगि (= आगइ), धा अ. फ. गिर (सिर–फ.), ना. अगैं। ४. धा. अ. फ. ना. फेरिग। ५. शा. दाम।

[३]

मुडिल्ल—तव[१] गुरराज[२] राजकवि[३] बुज्झइ[४] । (१)*
तुहि[१] वरदाइ[२] तिन[३] पुरु सुज्झइ[४] ‡ (२)*
जिहि[१] अहनिसि[२] सेव देव[३] गुरु बानी[४] । (३)
तिहि[१] षटु मास मिले विनु जानी[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) तब गुरराज राजकवि (चंद) से पूछने लगे, (२) "हे वरदाई, तुझे तीनों पुर—आकाश पाताल और मर्त्य लोक – सूझते हैं; (३) अहर्निश (दिन रात) देवता तथा गुरु की सेवा करना जिसकी बान थी, (४) उस [पृथ्वीराज] को [मुझसे] मिले बिना छः मास हुआ जानो।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।

(१) १. धा. तिहि, ना. सुनि, शेष में 'तव'। २. ना. कविराय। ३. मो. ना. रानगुर (राजगुर–ना.) शेष में 'राजकवि'। ४. मो. बूझि (= बूझइ), ना. बुज्झहि, शा. सा. बुझ्झे, अ. फ. बुझ्यौ।

(२) १. अ. फ. तूं, शा. तोहि। २. शा. स. वरदाय, धा. वरदाई। ३. धा. तिन्नि, मो. तिन, अ. तिहुं, फ. तिहौं, शा. स. तीन। ४. मो. सुझि (= सुझइ), अ. सुझझउ, फ. सुझ्यो, शा. स. सुझ्झे।

(३) १. धा. शा. स. में यह शब्द नहीं है, फ. जिह। २. अ. फ अहिनिसि। ३. ना. शा. स देव सेव, अ. सेव तेव। ३. धा. मानिय, ना. शा. वानीय, स. वानिय।

(४) १. शा. स. सो। २. धा. ना. जानिय।

टिप्पणी—(३) बानि।< वर्ण = आदत।

[४]

दोहरा— हसउ[१] चंद गुरराज°[२] सउ*°[३] तुम जानहु[५] बहु भंति। (१)*
जिहि कामिनि°[२] कलहु किअउ*[३] सो*[४] जांमिनि[५] बिलसंति॥ (२)*

अर्थ—(१) चंद गुरराज से हँस [कर कह–] ने लगा, "तुम बहुत सी भाँतें [अथवा बहुत भाँति से] जानते हो, (२) जिस कामिनी (संयोगिता) ने [जयचंद–पृथ्वीराज में] कलह [उपस्थित] किया, वही यामिनी में [पृथ्वीराज को] बिलस रही है।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. मो. हसु (= हसउ), धा. हस्यउ, अ. ना. हस्यो, फ हस्यौड। २. अ. फ ना. वर विप्र। ३. अ. स्यउ, मो. ना. सुं (= सउ)' स. सौं, फ. सौ, शा. स्यौं। ४. धा. तुम्ह। ५. मो जानु (= जानउ), धा. जानहु, फ. जानति, शेष में 'जानहु'।

(२) १. मो. तिहि, शेष में 'जिहि'। २. फ. कामिनु। ३. मो. कलहु (= कलहउ ?) कीउ (= कीअउ), धा. लोकलउ, फ. कलहि कियौ, कलह कियउ, ना. कलहनु कीयो' शा. स. कलहौ कियौ। ४. मो. सु (= सो), शेष में 'सो'। ५. फ. धा. यामिनि (= जामिनि), ना. जांमनि।

[५]

अडिल्ल— कहइ*[१] चंदु पर[२] विप्र . न[३] मानइ*[४] । (१)
सिर धुनि धुनि कवि[१] बात न जानहि*[२] । (२)
जिहि[१] धन[२] त्रिय मरणु[३] त्रिनि[४] परि जानइ*[६] । (३)
सो[१] काम देव[२] (?) त्रिय वसि करि[३] मानइ*[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) चन्द कह रहा था परन्तु विप्र (राजगुरु) नहीं मान रहा था, (२) वह सिर ोट पीट [कर कह] रहा था, "हे कवि, तुम बात (तथ्य) नहीं जानते हो; (३) जो धन, ी और मरण से तृण को श्रेष्ठ जानता है, (४) उसको कामदेव और स्त्री के वश में हुआ [कैसे] ाना जाए ?"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. कहि (= कहइ), धा कहइ, ना. कहो, शेष में 'कहिय'। २. धा. पर, ३. शा. सु। . मो. मानि (= मानइ), धा. मानहि, शेष में 'मानिय'।

(२) १. अ. फ. रहि रहि कवि सोइ, ना. रहि रहि कवि सें। २. मो. मानि (= मानइ), धा ानहि, शेष में 'जानिय'।

(३) १. यह शब्द धा. अ. फ मे नहीं है। २. अ. फ. धनु। ३ फ. मरे शा. स. रन। ४. ा. अ. त्रिनं, ना. शा. स. त्रिन, फ. त्ननु। ५. धा. वरि, शेष में 'वर'। ६. मो. जानि (= जानइ), ा. जान्यो, अ. फ. मानिय, ना. जानीय, शा. स. आनिय।

(४) १. धा. में नहीं है मो. अ. फ. शा. स. सु (= सो) ना. स। २. धा. किम देवी, मो. काम , म. किमि देव, फ. किम देउ, ना. कसु देव, फ. किम देउ। ३. फ. त्रि वस्य कनइद। ४. मो. मानि (= मानइ), धा. म. यों, अ. फ. जानिय, ना. शा. स. मानिय।

टिप्पणी—(१) वर < परन्। (२) वरि < परन्।

[६]

मुडिल्ल— तुम[१] समदिट्ठ[२] अरिट्ठ[३] न . देखउ*[४] । (१)
जब [१] अरियं[२] लष्ष दल गहि गहि[३] भखउ*[४] । (२)
प्राण समान परत द्रप[१] छोहउ*[२] । (३)
पइ*[१] मरनु छोडि[२] महिला मुष[३] मोहउ*[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "तुम समदर्शी हो [इसलिए ऐसा सोचते हो]; तुमने उस अरिष्ट (संकट) को नहीं देखा (२) जब [उसने] [विपक्ष के] अरी लक्ष दल को पकड़ पकड़ कर खा डाला—नष्ट कर डाला, (३) अपने प्राणों के समान दर्प (अभिमान, यश, पराक्रम) को पड़ता (गिरता, नष्ट होता) देख कर वह [जब इस प्रकार] क्षुब्ध हुआ था, (४) किंतु [अब] वही [रण में] मरण छोड़कर महिला (संयोगिता) के मुख पर मुग्ध [हो रहा] है।"

[३]

मुडिल्ल—तव[१] गुरराज[२] राजकवि[३] बुझ्झइ*[४] । (१)
तुहि[१] वरदाइ[२] तिन्न[३] पुर सुझ्झइ*[४] ।‡ (२)
जिहि[१] अहनिसि[२] सेव देव[३] गुरु बानी[४] । (३)
तिहि[१] षट्ट मास मिले विनु जानी[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) तब गुरराज राजकवि (चंद) से पूछने लगे, (२) "हे बरदाई, तुझे तीनों पुर—आकाश पाताल और मर्त्य लोक – सूझते हैं; (३) अहर्निश (दिन रात) देवता तथा गुरु की सेवा करना जिसकी बान थी, (४) उस [पृथ्वीराज] का [मुझसे] मिले बिना छः मास हुआ जानो।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।
(१) १. धा. तिहि, ना सुनि, शेष में 'तव'। २. ना. कविराय । ३. मो. ना. राजगुर (राजगुर–ना.) शेष में 'राजकवि' । ४. मा. बुझि (= बूझइ), ना. बुझ्झहि, दा. सा. बुझ्झे, अ. फ. बुझ्यौ।
(२) १. अ. फ. तूं, श. तोहि । २. श. स. वरदाय, धा. बरदाई । ३. धा. तिन्नि, मो. तिन, आ. तिहूं, फ तिहों, श. स. तीन । ४. मो. सुझि (= सुझइ), अ. सुझ्झइ, फ. सुझ्यौ, श. स. सुझ्झे।
(३) १. धा. श. स. में यह शब्द नहीं है, फ. जिह। २. अ. फ अहिनिसि । ३. ना. श. स देव सेव, अ. सेव तेर । ३. धा. मानिय, ना. श. वानीय, स. ठानिय ।
(४) १. श. स. सो । २. धा. ना. जानिय ।
टिप्पणी—(३) बानि]< वर्ण = आदत ।

[४]

दोहरा— हसउ*[१] चंद गुरराज°[२] सउ*°[३] तुम जानहु[४] बहु भंति । (१)
जिहि* कामिनि°[२] कलहु किअउ*[३] सो*[४] जामिनि[५] बिलसंति ॥ (२)

अर्थ—(१) चंद गुरराज से हँस [कर कह—] ने लगा, "तुम बहुत सी भाँति [अथवा बहुत भाँति से] जानते हो, (२) जिस कामिनी (संयोगिता) ने [जयचंद–पृथ्वीराज में] कलह [उपस्थित] किया, वही यामिनी में [पृथ्वीराज को] विलस रही है।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
(१) १. मो. हसु (= हसउ), धा. हस्यउ, अ. ना. हस्यौ, फ हस्यौव । २. अ. फ. ना. बर विप्र । ३. अ. स्यउं, मो. ना. सुं (= सउ)' स. सों, फ. सौ, श. स्यौं । ४. धा. तुम्ह। ५. मो जाणु (= जाणउ), धा. जानहु, फ. जानति, शेष में 'जानहु'।
(२) १. मो. तिहि, शेष में 'जिहि' । २, फ. कामिनु । ३. मो. कलहु (= कलहउ) कीउ (= कोअउ), धा. कोयाल्हु, फ. कलहि कियौ, कलह कियउ, ना. कलहजु कीयौ' श. स. कलहै कियौ । ४. मो. सु (= सा), शेष में 'सो' । ५. फ. धा. यामिनि (= जामिनि), ना. जामनि ।

[५]

अडिल्ल— कहइ*[१] चंदु पर[२] विप्र न[३] मानइ*[४] । (१)
सिर धुनि धुनि कवि[२] बात न जानहि*[२] । (२)
जिहि[१] धन[२] त्रिय मरणु[३] त्रिनि[४] वरि जानइ*[६] । (३)
सो[१] काम देव[२] (१) त्रिय वसि करि[३] मानइ*[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) चन्द कह रहा था परन्तु विप्र (राजगुरु) नहीं मान रहा था, (२) वह सिर [पी]ट पीट [कर कह] रहा था, "हे कवि, तुम बात (तथ्य) नहीं जानते हो; (३) जो धन, [स्त्री] और मरण से तृण को श्रेष्ठ जानता है, (४) उसको कामदेव और स्त्री के वश में हुआ [कैसे] [मा]ना जाए ?"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. कहि (= कहइ), धा कहउ, ना कही, शेष में 'कहिय'। २. धा. पर, ३ धा सु। मो. मानि (= मानइ), धा. मानहि, शेष में 'मानिय'।

(२) १. अ. फ. रहि रहि कवि सोइ, ना. रहि रहि कवि तुं। २. मो. मानि (= मानइ), धा [जा]नहि, शेष में 'जानिय'।

(३) १. यह शब्द धा. अ. फ में नहीं है। २. अ. फ. धनु। ३ फ. मरे शा. स. रन। ४. [धा], अ. त्रिन, ना. शा. स. त्रिन, फ. त्रनु। ५. धा. वरि, शेष में 'वर'। ६. मो. जानि (= जानइ), [धा] जान्यो, अ. फ. मानिय, ना. जानीय, शा. स. आनिय।

(४) १. धा. में नहीं है मो. अ. फ. शा. स. सु (= सो) ना. स। २. धा. किम देवी, मो. काम [देव], म. किमि देव, फ. किम देउ, ना. क्यु देव, फ. किम देउ। ३. फ. त्रि वस्य मनइह। ४. मो. मानि [(] = मानइ), धा. म. यो, अ. फ. जानिय, ना. शा स. मानिय।

टिप्पणी—(१) वर < परन्। (२) वरि < वरन्।

[६]

अडिल्ल— तुम[१] समदिट्ठ[२] अरिट्ठ[३] न देषसउ*[४] । (१)
जब[१] असिवं[२] लष्ष दल गहि गहि[३] भक्खउ*[४] । (२)
प्रान समान परत दप्प[१] छोहउ*[२] । (३)
पइ*[१] मरनु छोडि[२] महिला मुष[३] मोहउ*[४] ॥ (४)

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "तुम समदर्शी हो [इसलिए ऐसा सोचते हो]; तुमने उस [अ]रिष्ट (संकट) को नहीं देखा (२) जब [उसने] [विपक्ष के] अस्सी लक्ष दल को पकड़ पकड़ कर [ख]ा डाला—नष्ट कर डाला, (३) अपने प्राणों के समान दर्प (अभिमान, मद, पराक्रम) को पड़ता [ग]िरता, नष्ट होता) देख कर वह [अब इस प्रकार] क्षुब्ध हुआ था, (४) किंतु [अब] वही [रण में] मरण छोड़कर महिला (संयोगिता) के मुख पर मुग्ध [हो रहा] है।" —

[३]

मुडिल्ल—तव[१] गुरुराज[२] राजकवि[३] बुम्फइ[४] । (१)*
तुहि[१] वरदाइ[२] तिन[३] पुर सुम्फइ[४] ।‡ (२)*
जिहि[१] अहनिसि[२] सेव देव[३] गुरु वानी[४] । (३)
तिहि[१] षटु मास गिले विनु जानी[२] ॥ (४)

अर्थ—(१) तब गुरुराज राजकवि (चंद) से पूछने लगे, (२) "हे वरदाई, तुझे तीनों पुर—आकाश पाताल और मर्त्य लोक—सूझते हैं; (३) अहर्निश (दिन रात) देवता तथा गुरु की सेवा करना जिसकी बान थी, (४) उस [पृथ्वीराज] का [मुझसे] मिले बिना छः मास हुआ जानो।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण ना. में नहीं है।

(१) १. धा. तिहि, ना सुनि, शेष में 'तव'। २. ना. कविराय । ३. मो. ना. राजगुर (राजगुर-ना.) शेष में 'राजकवि' । ४. मा. बूझि (= बूझइ), ना. बुझ्झहि, शा. सा. बुझ्झई, अ. फ. बुझ्यौ।

(२) १. अ. फ. तूं, शा. तोहि । २. शा. स. वरदाय, धा. वरदाई । ३. धा. तिन्नि, मो. तिन, आ. तिहूं, फ तिहौं, शा. स तीन । ४ मो. सुझि (= सुझइ), अ. सुझझउ, फ. सुझ्यौ, शा. स. सुझ्झई।

(३) १. धा. शा. स. में यह शब्द नहीं है, फ. जिह। २. अ. फ अहिनिसि । ३. ना. शा स देव सेव, अ. सेव तेर । ३. धा. मानिय, ना. शा. वानीय, स. ठानिय ।

(४) १. शा. स. सो । २. धा. ना. जानिय ।

टिप्पणी—(३) वानि।< वर्ण = आदत ।

[४]

दोहरा— हसउ[१] चंद गुरुराज°[२] सउ*°[३] तुम जानहु[५] बहु भंति । (१)*
जिहि कामिनि°[२] कलहु किअउ*[३] सो*[४] जामिनि[५] बिलसंति ॥ (२)*

अर्थ—(१) चंद गुरुराज से हँस [कर कह—] ने लगा, "तुम बहुत सी भाँति [अथवा बहुत भाँति से] जानते हो, (२) जिस कामिनी (संयोगिता) ने [जयचन्द-पृथ्वीराज में] कलह [उपस्थित] किया, वही यामिनी में [पृथ्वीराज को] विलस रही है।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. मो. हसु (= हसउ), धा. हस्यउ, अ. ना. हस्यौ, फ हस्यौ । २. अ. फ. ना. वर विप्र । ३. अ. स्यउं, मो. ना. सुं (= सउं)' स. सौं, फ. सौ, शा. स्यौं । ४. धा. तुम्ह। ५. मो जानु (= जानउ), धा. जानहु, फ. जानति, शेष में 'जानहु'।

(२) १. मो. तिहि, शेष में 'जिहि' । २. फ. कामिनु । ३. मो. कलहु (= कलहउ ?) कीउ (= कीअउ), धा. लोककहु, फ. कलहि कियौ, कलह कियउ, ना. कलहजु कीयौ' शा. स. कलहौ कियौ । ४. मो. सु (= सा), शेष में 'सो' । ५. फ. धा. यामिनि (= जामिनि), ना. जामनि ।

वह वार्ता कहो; (२) वह रमणी किस वय और किस रूप की है, और किस प्रकार उसके रस (अनुराग) में राजा रँगा हुआ है।"

पाठांतर—(१) १. मो. सम्रु (= समउ), धा. समव, ना. समो, शेष में 'समो'। २. अ. फ. कहि। ३. धा. कवि सह, फ. कवि इह, ना. कवि यह।

(२) १. मो. धा. किमि, अ. फ. किम, ना. किनि, ना. स. किंहि। २. धा. किमि पूरन, ना. स. किंहि रूपनि, अ. कम रूपह, फ. किम रूपहि। ना. किमि रूपह, ३. अ. फ. किम। ४. मो. रस। शेष में 'रत'।

टिप्पणी—(१) वत्त < वार्ता। (२) किम < कथम् = किस प्रकार। रवनि < रमणी। रत्त < रक्त।

[९]

दोहरा—— जुव्वन[१] तनु तनु[२]‡ मंडनउ[३] सिसु[४] मंडन तन[५] डोल[६]। (१)*
बालप्पण सहि[१] बिछुरनि[२] तिहि[३] चित चंचल झोल[४]॥ (२)

अर्थ—[चंद ने कहा,] "(१) अब यौवन उसके शरीर का मंडन (आभरण) [हो रहा] है, और शैशव उसके शरीर का मंडन (आभरण) होकर [जाने के लिए] डोल रहा है (चंचल हो रहा है)। (२) बालपन की सखी—शिशुता—से उसका बिछुड़ना हो रहा है, इसीलिए उसका चित चंचल होकर झूल (झकोरे) रहा रहा है।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

‡ चिह्नित शब्द फ. ना. में नहीं है।

(१) १. मो. योवन (= जोवन), धा. ना. ना. स. जुव्वन, अ. फ. जोवन। २. धा. तन मन, फ. तन, ना. तना, ना. स. ज्यौं (जों-ना.) तन। ३. मो. मंडनु (= मंडनउ), धा. मंडनो, शेष में 'मंडनो'। ४. मो. शश, फ. सिस। ५. धा. तउ। ६. ना. बोल।

(२) १. धा. अ. सहि, मो. फ. ना. सह। २. धा. अ. बिछुरन, फ. बिछुरत। ३. धा. पिहि, फ. तिह। ४. मो. झोल, धा. झोल, शेष में 'लोल'।

टिप्पणी—(१)-तनु = का। (२) सहि < सखि।

[१०]

गाथा—— जं जोई संजोई[१] जोइत्तं[२] सिध्धि[३] जन्मांनि[४]। (१)
नं जोई[१] संजोई[२] जोइत्तं[३] सिध्धि[४] जन्मांनि[५]॥ (२)*

अर्थ—(१) "संयोगिता से योग (युक्तता) की जो दशा [प्राप्त हुई] है वह जन्मों की सिद्धि का योग [प्राप्त हुआ] है; (२) यदि संयोगिता से योग (युक्तता) की दशा न [प्राप्त] होती, तो जन्मों की सिद्धि गोपित [रह जाती]।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) धा. स सजोई, मो. संजोइ, अ. निजोई। २. मो जोयत्तं (= जोइत्तं), धा. जोईते, शेष में 'जोईत्तं'। ३. ना. सध, अ. फ. सि, ना. सिद्ध। ४. मो. जन्मनि, धा. नमानि, अ. फ. जनमानि, ना. स. जम्माई।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. सम, ना. वाम, शेष में 'तुम'। २. धा. सम दिट्ठ, अ. फ. सम द्रिट्ठि। ३. फ अदिट्ठ, शा. अदिट्ठ, स. अदिट्ठि। ४. मो. देखु (= देखउ), धा. दिष्यउ, शेष में 'दिष्यौ'।

(२) १. मो. शा. स. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. शा. स. असी। असी। ३. ना. गह्यो, शा. महि गहि। ४. मो. मधु (= मध्यउ), शेष में 'मच्यौ'।

(३) १. धा. पर, ना. दल। २. मो. छोडु (= छोडउ), छांडयो, धा. अ. फ. छोडउ, शा. छोड्यो, शेष में 'छोड्यौ'।

(४) १. मो. पि (= पइ), शेष में यह शब्द नहीं है। २. धा. छड, अ. फ. छाडि, ना. शा. स. छंडि। ३. धा. ना. शा. मन, स. सुध। ४. धा. मोद्यो, शेष में 'मोद्यौ'।

टिप्पणी—(१) दप < दप्प < दर्प।

[७]

अडिल्ल— तिहि[१] महिला महिला[२] विसराई। (१)
अरु[१] गुरु देव सेव सुनि साई[२]। (२)
विभउ[१]* भुम्मि[२] भ्रतु[३] जाउ[४] सु[५] जाई[६]। (३)
सुनि सुनि[१] समउ*[२] राज गुरु नाई[४]।।[५] (४)

अर्थ—(१) "उस महिला ने [अन्य] महिला [गण] को विस्मृत करा दिया (२) और [हे गुरुराज,] सुनो, उसने गुरु और पग-देव सेवा को भी [इस सीमा तक] अतिके साथ [विस्मृत करा दिया] कि उसका वैभव, उसकी भूमि और उसके भृत्य जाएँ तो जाएँ; (४) हे राजगुरु, राजा का यह समय (वृत्तान्त) सुनो और समझो।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. जिहि। २. मो. मिहिला, शेष में 'महिला'।

(२) १. ना. सेव सुधि नाइ, मो. सेव सुनि साई।

(३) १. मो. विभू (= विभउ), धा. विभव, फ. मत्यौ, शेष में 'विभौ'। २. मो. भमि (<भुम्मि) शेष में 'भूमि'। ३. ना. भृत सव। ४. धा. जान, ना. शा. स. जाहु। ५. ना. तु। ६. ना. शा. स जाही।

(४) १. अ. फ सुनि। २. ना. शा. स. सा। ३. धा. समो, मो. समु (= समउ), ना. समों शेष में 'समौंहे'। ४. अ. राई, फ. माई, ना. ताहि, शा. स. नाही। ५. मो. में यहाँ और है: जानि गुरराज रहहिं। (तुल० बाद वाले दोहरे का प्रथम चरण)।

(२) साई < सावि (= स+अति)। (३) भ्रतु < भृत्य। (४) ना < ज्ञा = जानना, समझना।

[८]

दोहरा— समउ[१] जानि गुरराज रहि[२] कहि कहि कवि[३] सु[३] वत्त। (१)
किम[१] वय किम[२] रूपह[३] रयनि किम[३] राजन रस रत्त[४]।। (२)

अर्थ—(१) उस समय (वृत्तान्त) को गुरुराज जान रहे [तो भी उन्होंने कहा,] "हे कवि

बिचनं । (२५)
जिन[२] पंडनं । (२६)
सु[२] नंदनं । (२७)
मुदित[२] वंदन[२] । (२८)
मधुरया[०] [२] मधु सद्या । (२९)
न कंठ[२] कोकिल[२] वद्या । (३०)
भ्रम[२] गवन[२] जीवन[२] नासिका । (३१)
नेसु, खंजन[२] प्रिय[२] ग्रासिका[२] । (३२)
कलमलति*[२] खवन[२] अटंकता । (३३)
रथ भग[२] अर्क विलंबिता । (३४)
चक्खु[०] [२] इच्छ इच्छइ[२] वंकसी[२] । (३५)
हुग्र[२] लज्ज सैसव[२] संक्सी[२] । (३६)
सित[२] असित उररि[२] अपंगयो[२] । (३७)
अभिसरहि*[२] पंचन वद्धयो[२] ।× (३८)
वरु[२] वरुणि[२] सुव[२] वर वरग्गन[४] ।× (३९)
नव नृति[२] अलि सुत[२] अंगन[२] ।× (४०)
तस मध्य[२] मृग[२] मद बिंदुना । (४१)
जस[२] इंदु[२] नंद ति[२] सिंधुजा[४] । (४२)
कच वक्र[२] सर्प ति[२] कुतलं । (४३)
तस[२] उपपमा[२] नहि[२] भूतलं । (४४)
नथि पंच[२] पुप्प सु[२]दीसये[२] । (४५)
जानु[२] कन्ह[२] कालीय[२] सीसये[४] । (४६)
त्रिसरावलि[२] धनि[२] वेनियं[२] । (४७)
अवलंबि[२] अलिकुल सेनियं[२] । (४८)
चित चित्ति[२]§ चित्रति[२] अंबरं । (४९)
रति मांन[२] वर्धति[२] संवर[२] ॥[४] (५०)

अर्थ—(१) "संयोगिता का यौवन जैसा बना (सुन्दर) है, (२) उसे हे राज[illegible] र सुनो। (४) उसके चरण-तल आधे अरुण हैं, (४) मानो श्रीखंड (चंदन) ने [illegible] [illegible] की हो। (५) उसके [चरण-] नख सुदेश (सुंदर) और मिले (सटे) हुए कुंद [[illegible] [illegible] जिनसे सुदेश (सुंदर) शोणित प्रतिबिंबित होता है (झलकता है)। (७) [उ[illegible] , स्वर्ण और हीरे को स्थापित करने वाले हैं (उसके चरणाभरण इनसे [illegible] [illegible] और [अपनी मंद गति से] गजों और हंसों के मार्गों को उत्थापित करने ([illegible]

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. तम, ना. धाम, शेष में 'तुम'। २. धा. सम द्रिष्ट, अ. फ. सम द्रिष्टि। ३. अदृष्ट, शा. अदिष्ट, स. अदिष्टि। ४. मो. देखु (= देखउ), धा. पिष्यउ, शेष में 'दिष्यो'।

(२) १. मो. शा. स. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. शा. स. असी। असो। ना. गहो, शा. महि गहि। ४. मो. मक्षु (= मक्खउ), शेष में 'मष्यो'।

(३) १. धा. पर, ना. दल। २. मो. छोडु (= छोडउ), छाड्यो, धा. अ. फ. छोड्उ, छोड्यौ, शेष में 'छोड्यौ'।

(४) १. मो. पि (= पइ), शेष में यह शब्द नहीं है। २. धा. छड, अ. फ. छाडि, ना. स. छडि। ३. धा. ना. शा. मन, स. छप। ४. धा. मोष्यो, शेष में 'मोष्यौ'।

टिप्पणी—(३) दप < दप्प < दर्प।

[७]

मुडिल्ल— *तिहि[१] महिला महिला[२] विसराई। (१)*
अरु[१] गुरु देव सेव सुनि साई[२]। (२)
विभउ[१] भुम्मि[२] भ्रतु[३] जाउ[४] सु[५] जाई[६]। (३)*
सुनि सुनि[२] समउ[३] राज गुरु नाई[४]॥[५] (४)*

अर्थ—(१) "उस महिला ने [अन्य] महिला [गण] को विस्मृत करा दिया (२) [हे गुरुराज,] सुनो, उसने गुरु और जग-देव सेवा को भी [इस सीमा तक] अतिके [विस्मृत करा दिया] कि उसका वैभव, उसकी भूमि और उसके भृत्य जाएँ तो जाएँ; (४) राजगुरु, राजा का यह समय (वृत्तान्त) सुनो और समझो।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. जिहि। २. मो. मिहिला, शेष में 'महिला'।

(२) १. ना. सेव सुवि साहीं, मो. सेव सुनि माई।

(३) १. मो. विभू (= विभउ), धा. विभव, फ. मन्धो, शेष में 'विभो'। २. मो. भमि (< शेष में 'भूमि'। ३. ना. भ्रत सव। ४. धा. जान, ना. शा. स. जाहु। ५. ना. तु। ६. ना. शा. जाही।

(४) १. अ. फ. मुनि। २. ना. धा. स. रा। ३. धा. समो, मो. समु (= समउ), ना. शेष में 'समोशे'। ४. अ. राई, फ. माई, ना. साहि, शा. स. नाही। ५. मो. में, यहाँ और है: गुरराज रहहि। (तुल० बाद वाले दोहरे का प्रथम चरण)।

(२) साई < साति (= स+अति)। (३) भ्रतु < भृत्य। (४) ना < ज्ञा = जानना, समझना

[८]

दोहरा— *समउ[१] जानि गुरुराज रहि[२] कहि कहि कवि सु[३] वत्त। (१)*
किम[१] वय किम[१] रूपह[२] रवनि किम[३] राजन रस रत्त[४]॥ (२)

अर्थ—(१) उस समय (वृत्तान्त) को गुरुराज जान रहे [तो भी उन्होंने कहा,] "हे

वह वार्त्ता कहो; (२) वह रमणी किस वय और किस रूप की है, और किस प्रकार उसके रस (अनुराग) में राजा रंगा हुआ है।"

पाठांतर—(१) १. मो. समु (= समउ), धा. समउ, ना. समो, शेष में 'समौ'। २. अ. फ. कहि। ३. धा. कवि सहु, फ. ववि इह, ना. कमि यह ।

(२) १. मो. धा. किमि, अ. फ. किम, ना. किनि, शा. स. किहि। २. धा. किमि पूरन, शा. स. किहि रूपनि, अ. कम रूपइ, फ. किम रूपहि। ना. किनि रूपइ, ३. अ. फ. किम। ४. मो. रम। शेष में 'रस'।

टिप्पणी—(१) वत्त < वार्त्ता। (२) किम < कथम् = किस प्रकार। रवनि < रमणा। रस < रक्त।

[९]

दोहरा— जुव्वन[१] तनु तनु[२]‡ मंडनउ*[३] सिसु[४] मंडन तन[५] डोल[६] । (१)
बालप्पण सहि[१] बिछुरनि[२] तिहि[३] चित चंचल झोल[४] ॥ (२)

अर्थ—[चंद ने कहा,] "(१) अब यौवन उसके शरीर का मंडन (आभरण) [हो रहा] है, और शैशव उसके शरीर का मंडन (आभरण) होकर [जाने के लिए] डोल रहा है (चंचल हो रहा है)। (२) बालपन की सखी—शिशुता—से उसका बिछुड़ना हो रहा है, इसीलिए उसका चित चंचल होकर झूल (झकोरे) रहा सा है।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।
‡ चिह्नित शब्द फ. ना. में नहीं है।

(१) १. मो. योवन (= जोवन), धा. ना. शा. स. जुव्वन, अ. फ. जोवन। २. धा. तन मन, फ. तन, ना. तना, शा. स. ज्यों (जौं—शा.) तन। ३. मो. मंडनु (= मंडनउ), धा. मंडनो, शेष में 'मंडनौ'। ४. मो. शमू, फ. रिस। ५. धा. तठ। ६. ना. बोल।

(२) १. धा. अ. महि, मो. फ. ना. सइ। २. धा. अ. बिछुरन, फ. बिछुरत। ३. धा. तिहि, फ. तिह। ४. मो. शोल, धा. कोल, शेष में 'लोल'।

टिप्पणी—(१)-तनु = का। (२) सहि < सखि।

[१०]

गाथा— जं जोई संजोई[१] जोइत्तं[२] सिधि[३] जम्मांनि[४] । (१)
नं जोई[१] संजोई[२] गोइत्तं[३] सिधि*[४] जम्मांनि[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) "संयोगिता से योग (युक्तता) की जो दशा [प्राप्त हुई] है वह जन्मों की सिद्धि का योग [प्राप्त हुआ] है; (२) यदि संयोगिता से योग (युक्तता) की दशा न [प्राप्त] होती, तो जन्मों की सिद्धि गोपित [रह जाती]।"

पाठांतर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) धा. म सजोई, मो. संजोए, अ. निजोई। २. मो. जोयतं (= जोइतं), धा. जोईते, शेष में 'जोईतं'। ३. धा. सध, अ. फ. सि, ना. सिद्ध। ४. मो. जम्मनि, धा. नमानि, अ. फ. जनमानि, शा. स. जम्माई।

(२) १. मो. सजोइ, ना. मंजोइं, शेष में, 'नंजोइं, । २. मो. संजोइं, शेष में 'संजोइं' । ३. मो. गोइसं, धा. गोईसं, ना. गोईसं, शेष में 'गोईसं' । ४. धा. संध, मो. अ. फ. सिध, ना. सब्ब । ५. धा. जनमानि, शा. स. जम्माई ।

टिप्पणी—(१) जोइत < योजित । (२) गोइत < गोपित ।

[११]

डंडमाल—

[१]संजोगि[२] जोवन[३] जं बनं[४] । (१)
सुनि श्रवण दे[१] गुरुराज नं । (२)
तर[१] चरण[२] अरुणति[३] अघन[४] । (३)
जनु[१] श्रीय श्रीषंड लछनं[२] । (४)
नष कुंद मिलिय[१] सुमेसनं[२] ।‡ (५)
प्रतिबिंब श्रोणि[१] सुदेसनं । (६)
नग हेम हीर[१] जु[२] थप्पनं । (७)
गय हंस मग्ग[१] उथप्पनं । (८)
कसि[१] कासमीर सुरंगनं । (९)
विपरीत रंभ ति जघनं । (१०)
रसनेव[१] रंज[२] नितंबिनी[३] । (११)
कुसुमेप[१] एप[२] विलंबिनी । (१२)
उर भार मध्य[१] विभंजनं[२] । (१३)
दिय रोम राइ स[१] थंभनं । (१४)
कुच कंज[१] परसन[२] पंजली[३] । (१५)
सुप* मउप*[१] दोप[२] कलकली[३] । (१६)
हिय मयन मयन[१] ति संथयउ*[२] । (१७)
भज* गहन गहन निरंथयउ*०[१] । (१८)
जानुं[१] हीन फोन[२] ति कचुकी[३] । (१९)
भुज षोट*[१] जोट[२] ति पंचकी[३] । (२०)
नलिनाभ*[१] पानि वियछूछपउ[२] । (२१)
जनु कुंद[१] कुंदन[२] [illegible][१२] । (२२)

अधर[१] पक्क[२] सु[३] बिंबनं । (२५)
सुक सालि[१] भाजिन[२] पंडनं । (२६)
दसन सुत्ति*[१] सु[२] नंदनं । (२७)
प्रतिभास[१] सुदित[२] चंदनं[३] । (२८)
मधु मधुरया°[१] मधु सद्दया । (२९)
कल कंठ[१] कोकिल[२] बद्दया । (३०)
भ्रम[१] भवन[२] जीवन[३] नासिका । (३१)
नेसु । अंजन[१] प्रिय[२] त्रासिका[३] । (३२)
झलमलति*[१] श्रवन[२] त्रटंकता । (३३)
रथ अंग[१] अर्क विलंबिता । (३४)
चक्खु°[१] इच्छ इच्छइ[२] वंकसी[३] । (३५)
वुध[१] लज्ज सैसव[२] संकसी[३] । (३६)
सित[१] असित उररि[२] अपंगयो[३] । (३७)
अभिसहि*[१] पंजन । वद्धक्षयो[२] ।[४] (३८)
वरु[१] वरुणि[२] भुव[३] धर वरयान[४] ।[४] (३९)
नव नृत्ति[१] अलि सुत[२] अंगन[३] ।[४] (४०)
तस मध्य[१] मृग[२] मद बिंदुना । (४१)
जस[१] इंदु[२] नंद ति[३] सिंधुजा[४] । (४२)
कच चक्र[१] सर्प ति[२] कुंतलं । (४३)
तस[१] उपभ्रमा[२] नहि[३] भूतलं । (४४)
मणि बंध[१] पुष्प सु[२]दीसये[३] । (४५)
जांनु[१] कन्ह[२] काजीय[३] सीसये[४] । (४६)
त्रिसरावलि[१] धनि[२] वेनियं[३] । (४७)
अवलंबि[१] अलिकुल सेनियं[२] । (४८)
चित चित्ति[१]ऽ चित्रति[२] अंबरं । (४९)
रति भांन[१] -वर्धति[२] संवरं[३] ॥[४] (५०)

अर्थ—(१) "संयोगिता का यौवन जैसा घना (सुन्दर) है, (२) उसे हे राज गुरु, श्रवण र सुनो। (३) उसके चरण-तल आधे अरुण हैं, (४) मानो श्रीखंड (चंदन) ने भी (रोली) की हो। (५) उसके [चरण-] नख सुवेश (सुंदर) और मिले (सटे) हुए कुंद [सदृश] हैं। जिनसे सुदेश (सुंदर) शोणित प्रतिबिंबित होता है (झलकता है)। (७) [उसके चरण] , स्वर्ण और हीरे को स्थापित करने वाले हैं (उसके चरणाभरण इनसे जटित हैं) और [अपनी मंद गति से] गजों और हंसों के मार्गों को उत्पाटित करने (उखाड़ने)

(१) १. मो. नजोइ, ना. संजोई, शेष में, 'नजोई, । २. मो. राजोई, शेष में 'संजोई' । ३. मो. गोइतं, धा. गोईतं, ना. गोईत, शेष में 'गोइत' । ४. धा. सध, मो. अ. फ. सिध, ना. सध्य । ५. धा. जनमानि, शा. स. जन्माई ।

टिप्पणी—(१) जोइत < योजित । (२) गोइत < गोपित ।

[११]

इंदमाल—

[1]संजोगि[2] जोवन[3] जं बनं[4] । (१)
सुनि श्रवण दे[1] गुकराज नं । (२)
तर[1] चरण[2] अरुणति[3] अध्धनं[4] । (३)
जनु[1] श्रीय श्रोपंड लष्षनं[2] । (४)
नय कुंद मिलिय[1] सुमेसनं[2] ।‡ (५)
प्रतिबिंब श्रोणि[1] सुदेसन । (६)
नग हेम हीर[1] जु[1] मप्पनं । (७)
गय हंस मग्ग[1] उथप्पनं । (८)
कसि[1] कस्समीर सुरंगनं । (९)
विपरीत रंभ ति जघनं । (१०)
रसनेव[1] रंज[2] नितंबिनी[3] । (११)
कुसुमेष[1] एष[2] विलबिनी । (१२)
उर भार मध्य[1] विभंजन[2] । (१३)
दिय रोम राइ त[1] थंभनं । (१४)
कुच कंज[1] परसन[2] श्रंजली[3] । (१५)
मुष* मउष*[1] दोप[2] कलकली[3] । (१६)
हिय भयन मयन[1] ति संथयउ*[2] । (१७)
मज* गहन गहभ निरंथयउ*°[2] । (१८)
जानु[1] हीन भौन[2] ति कचुकी[3] । (१९)
भुज श्रोट*[1] लोट[2] ति पंचकी[3] । (२०)
नलिनाभ*[1] पानि विघछूछयउ[2] । (२१)
जनु कुंद[1] कुंदन[2] संघयउ*[3] । (२२)
कल ग्रीव[1] रेह त्रिवलिया[2] । (२३)
जांनु[1] पंचजन्न[2] सु ठिल्लया[3] । (२४)

अधर[१] पक्क[२] सु[३] बिंबनं । (२५)
सुक सालि[१] आलिन[२] पंडनं । (२६)
दसन। सुत्ति*[१] सु[२] नंदनं । (२७)
प्रतिभास[१] सुद्दित[२] चंदन[३] । (२८)
मधु मधुरया°[१] मधु सद्दया । (२९)
कल कंठ[१] कोकिल[२] बद्दया । (३०)
भ्रम[१] भवन[२] जीवन[३] नासिका । (३१)
नेसु। थंजन[१] प्रिय[२] भासिका[३] । (३२)
झलमलति*[१] श्रवन[२] भटंकता । (३३)
रय भ्रंग[१] धर्क विलंविता । (३४)
चक्खु°[१] इद्धछ इद्धछइ[२] वंकसी[३] । (३५)
तुछ[१] लज्ज सैसव[२] संकसी[३] । (३६)
सित[१] असित उररि[२] अपंगयो[३] । (३७)
अभ्भिसहिं*[१] पंथन वधूछयो[२] ।× (३८)
वरु[१] वरुणि[२] भुव[३] वर वरयान[४] ।× (३९)
नव नृत्ति[१] अलि सुत[२] अंगन[३] ।× (४०)
तस मध्य[१] मृग[२] मद विंदुना । (४१)
जस[१] इंदु[२] नंद ति[३] सिधुजा[४] । (४२)
वच वक्र[१] सर्प ति[२] कुतलं । (४३)
तस[१] उपपमा[२] नहि[३] भूतलं । (४४)
मणि धंघ[१] पुष्प सु[२]दीसये[३] । (४५)
जांतु[१] कन्ह[२] कालीय[३] सीसये[४] । (४६)
त्रिसराथलि[१] धनि[२] वेनियं[३] । (४७)
अवलंबि[१] अलिकुल सेनिय[२] । (४८)
चित चित्ति[१]§ चित्रति[२] अंबरं । (४९)
रति मांन[१] वर्षंति[२] संवरं[३] ॥[४] (५०)

अर्थ—(१) "संयोगिता का यौवन जैसा बना (सुन्दर) है, (२) उसे हे राज गुरु, श्रवण देकर सुनो। (४) उसके चरण-तल आधे अरुण हैं, (४) मानो श्रीखंड (चदन) ने श्री (रोली) प्राप्त की हो। (५) उसके [चरण–] नख सुवेश (सुंदर) और मिले (सटे) हुए कुंद [सदृश] हैं। (६) जिनसे सुदेश (सुंदर) शोणित प्रतिबिंबित होता है (झलकता है)। (७) [उसके चरण] नग, स्वर्ण और हीरे को स्थापित करने वाले हैं (उसके चरणाभरण इनसे जटित हैं) (८) और [अपनी मंद गति से] गजों और हंसों के मार्गों को उत्थापित करने (उखाड़ने)

वाले हैं। (९) काश्मीर [की केशर] के सुंदर रंग को खींच कर [उनसे रँगे हुए] (१०) उलटे [रक्खे हुए] रंभा (कदली) के सदृश उसके जघे हैं। (११) उस नितंबिनी की रसना (मेखला) इस प्रकार रंजन करती है (१२) [मानो] कुसुम-शर (कामदेव) के शरों को विलंबित करने वाली [प्रत्यंचा] हो। (१३) उर (उरोजों) के भार को मध्य से विभाजित करने वाली (१४) उसकी रोम-राजि स्तंभ के समान दी हुई है। (१५) अंगुलियों के स्पर्श के लिए उसके कुच कंज (कमल) [वत्] हैं और (१६) उनके मयूख (प्रकाश की किरण) [सदृश गौर अथवा द्युतिमान] [मुख पर जो दोष (कालिमा) है, वह कल-कलित (सुन्दर) है। (१७) उसके हृदय-अयन (मंदिर) में मदन संस्थित है, (१८) जो निरस्त्र होकर (निकाला जाकर) इस गहन-गहन (गहनतम स्थान) में रहने लगा है। (१९) उसकी कंचुकी (चोली) इतनी झीनी है मानो है ही नहीं। (२०) उसकी भुजाओं की ओट में पाँच [उँगलियों ?] का चोट (समूह) है। (२१) नलिनी की आभावाले उसके विशेष [या दो] स्वच्छ पाणि हैं; (२२) [जिनमें उँगलियों के नख इस प्रकार शोभा दे रहे हैं] मानो कुंदन के साथ कुंद संचित हों। (२३) उसकी सुन्दर ग्रीवा में त्रिवली (तीन बलवाली) रेखाएँ हैं, (२४) जिनके कारण वह ग्रीवा ऐसी लगती है मानो शुद्ध (?) पांचजन्य [शंख] हो। (२५) उसके अधर पक्के बिंब [वत्] हैं, (२६) [कहीं] उन्हें [बिंब समझकर] शुक-सारिका हठ-पूर्वक खंडित न कर दें। (२७) उसके दाँत शुक्ति-नंदन (मोती) हैं, (२८) जो वंदन (रोली) [जैसे मसूड़ों] में मुद्रित (बिठाए हुए) प्रतिभासित होते हैं। (२९) उसके शब्द मधु [सदृश] मधुर हैं, (३०) और वह कोकिल कैसे कल कंठ से बोलती है। (३१) उसकी नासिका जीवन के भ्रमों का भवन है, और (३२) अंजन-प्रिय (रँगा जाना जिनको प्रिय है ऐसे) ओठों को त्रास देने वाली है। (३३) उसके श्रवणों में ताटंक (तरिवन) झलमलाते हैं (३४) [और ऐसे लगते हैं] मानो अर्क (सूर्य) के रथाङ्ग (रथ के पहिए) लटक रहे हों। (३५) उसके चक्षुओं में बाँकी इच्छाएँ-आकांक्षाएँ सी हैं, तथा (३६) तुच्छ (अल्प) लज्जा और शैशव की शंकाएँ सी हैं। (३७) इन चक्षुओं के अपांग (प्रान्त भाग) सित-असित (श्वेत और श्याम) उररि (बकरे) [के सदृश] हैं, (३८) वे चक्षु ऐसे लगते हैं मानो खंजन-वत्स [उड़ने का] अभ्यास कर रहे हों। (३९) उसकी वरौनियाँ श्रेष्ठ (सुन्दर) हैं और भौंहें श्रेष्ठ वर्ण वाली अर्थात् सुंदर हैं। (४०) वे ऐसी लगती हैं मानो आँगन में [या अंग में] नव अलिशुत (नवजात भ्रमर) नृत्य कर रहे हों। (४१) उनके मध्य जो मृगमद (कस्तूरी) बिन्दु है, (४२) [वह ऐसा लगता है] जैसे सिंधु से उत्पन्न नव इन्दु में इन्दु-नंदन (मृग) हो। (४३) उसके वक्र कच-कुन्तल सर्प [सदृश] हैं, (४४) जिनकी [सुन्दरता की] उपमा भूतल में नहीं है। (४५) [उन कचों के ऊपर] मणि-बन्ध (मणि-ग्रथित) पुष्प (शीश-फूल) ऐसा दीखता है (४६) मानो कालीय नाग के सिर पर कृष्ण हों। (४७) उसकी त्रिशिरावली (तीन लटों वाली) वेणी ऐसी बनी हुई (सुन्दर) है, (४८) मानो अलि-कुल-श्रेणी अवलंबित हो रही हो (लटक रही हो)। (४९) उसका अम्बर (वस्त्र) चित्र-विचित्र प्रकार से चित्रित है। (५०) सम्पूर्ण रूप से [पृथ्वीराज के साथ वह ऐसी लगती है] मानो रति स्मर (कामदेव) का वर्धन (मंडन) कर रही हो।

● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित चरण या शब्द फ. में नहीं है।
× चिह्नित चरण स. में नहीं है।
पाठांतर—(१) १. धा. स. में इसके पूर्व है:—

गुरपंच छंद मुर्च ॥ । कहु जाति अपर धामरे । सतिपीन पिंगल बंधए । मीय मालती प्रति छंदए ।
२. धा. ना. संजोग, मो. संयोग, शेष में संजोगि । ३. मो. योवन (= जोवन), (शा. पाठ) शेष में 'जोवन' । ४. अ. फ. जंमनं ।

(२) १. धा. मो. सवंदा, अ. फ. श्रवण दे, शेष में 'सवंदा' (अब्बदा–ना., अवदा–शा.)।

(३) १. मो. तर, फ. पलि, शेष में 'तल' । २. फ. चहनि । ३. मो. अरुण, धा. अरुनति, फ. मरुनित, शा. अदन सु । ४. धा. अ. अर्पनं, शा. स. अदयं ।

(४) १. मो. जन, धा. जनु, फ. जनो, शेष में 'जनु' । २. मो. श्री पंडल घनं, धा. आरखंडल घनं, ना. श्रीफल लघनं, शा. स. श्रीपंड लखय ।

(५) १. धा. मिछिल, अ. फ. मरिल, ना. माल । २. मो. शुभेसनं (= सुमेसनं), धा. सुवेसनं, शेष में 'सुवेसनं' ।

(६) १. मो. श्रोणि, धा. स्रोणि, अ. फ. ना. श्रोन (श्रौन–फ.)।

(७) १. मो. धा. ना. शा. स. 'नग हेम हस' (तु० चरण ८),[1] अ. नग हेम हीर, फ. ह्रग हेम हीर
२. फ. ज ।

(८) १. धा. मय मग्ग हंस, मो. शा. स. मय मग्ग हस, अ. गय हंस मग्ग, फ. हय हेम मग्ग ।

(९) १. धा. किछि, स. करि ।

(१०) १. फ. रंमनि मंजनं ।

(११) १. धा. रसनेस । २. धा. रंज, शा. स. रंजि । ३. फ. नितंवनं, ना. नितंवनी ।

(१२) १. धा. कुसुमेसु, मो. कुसमेषु, ना. कुसुमेक । २. धा. अ. पष्प, मो. पक, फ. पप, ना. काम, शा. इप, स. इक ।

(१३) १. अ. फ. मदि । २. मो. विर्मनन (< विर्मजनं), धा. मा. शा. स. विगंजनं ।

(१४) १. मो. रोम राजस, धा. रोमराइ सु, फ. रोज रोज जु, अ. रोम राजि जु, ना. शा. रोम राजीय, स. रोम राय सु ।

(१५) १. धा. कुम । . धा. परसत, फ. परसनि । २. धा अ. फ. अंगली, शा. अजुली, स. अमली ।

(१६) १. मो. मो, धा. मोप, अ. फ. मौप, (< मुप = मउप), ना. स. शा. मधुप । २. धा. देषि । ३. धा. शा. स. कलंकली, मो. किलिकली, अ. कलकली, फ. कली कली ।

(१७) १. धा. नैन नैन, अ. फ. अइन सइन, ना. अयन मयन, शा. स. अयन सयन । २. धा. संधयो, मो. संधयो, अ. मइनयउ, फ. मंनयउ, ना. सिंधयो, शा. स. सिद्धयौ ।

(१८) १. धा जुल गहन गहन''' ''', मो. लज (< गज ?) गहन गहन निरंधयो, अ. फ. लजि गृहन जिय सइ (तिइ–फ.) रंजयो, ना. लजि गहन गहन सु रिंगयो, शा. स. मजि ग्रहन ग्रहन तिरिद्धयो ।

(१९) १. धा. ''जु, ना. शा. स. उर । २. मो. डीन (< ड्रीन), धा. ना छीन, शा. स. छील ।
३. धा. पंचकी ।

(२०) १. मो. उट (= ओट), फ. बोट । २. मो. ओठ, धा. ओत । ३. धा. पुंचकी, मो. पंगुकी, अ. फ. पंचुकी, शा. स. पंचकी ।

(२१) १. धा. फ. नलनाभि, अ. नलिनाभि, ना. नलनील, शा. स. नलिनील । २. अ. फ. नाभिति अछूछयउ (अछूछयौ–फ.), ना. पानि विअच्छयो, स. पनिव अछूछयौ ।

(२२) १. अ. फ. कुन्द । २. फ. कुंडन । ३. अ. सच्चयो, फ. संचयो, ना. सचयौ, शा. स. सुच्छयौ ।

(२३) १. फ. कलिगोव । ना. लगोव । २. धा. तिवलिया, अ. मिवल्लियो, फ. बल बलयौ, ना. त्रिवलया ।

(२४) १. मं जानु, फ. जनी, शेष में 'जनु' । २. मो. पंचनन, धा. पंचजन्य, फ. पचजनु, शेष में

'पंचजन्य'। १. धा. जुधलिया, अ. सुधलियो, फ. मुधलयौ, ना. सुधलया, श. सुधलया।

(२५) १. मो. अधर, ना. अधरेच (< अधरेव), शेष में 'अधरेव'। २. धा. पक्क, मो. पक (= पक्क), फ. जकि। ३. मो. स।

(२६) १. धा. मो. श. सालि, अ. फ. सारि। २. अ. फ. आरिन, ना. आलिनि।

(२७) १. धा. दसनस्य मुकति, मो. दसन पंति, अ. दसनेव मुक्ति, फ. दसनेउ मुक्ति, ना. दसनेव सिसि, स. दसनेव मुक्ति। २. फ. स।

(२८) १. अ. फ. प्रतिवास, ना. प्रतिभासि। २. मो. मुदित, अ. फ. तुरकित, शेष में 'मुद्रित', (मुद्रत–श.)। ३. मो. चंदनं, शेष में 'वंदनं'।

(२९) १. फ. माधुरजा।

(३०) १. मो. कलि कठ, अ. फ. कलयंठ, ना. कलयठि, श. कलकंठ, स. कलयंत। २. फ. काकिल।

(३१) १. अ. फ. हुव। २. मो. भ्रमत, धा. अ. भवन, फ. भवनी, ना. भ्रम्म, श. भुवन। ३. मो. जीमन, ना. दीपक, शेष में, जीवन' (जीउन–फ.)। ४ फ. नासका।

(३२) १. धा. ना. म. श. नयु अंजनी, मो. नयन रुजन, अ. नेसु अजनी, फ. नेस अंजनी। २. फ. प्रय। ३. अ. फ. तासिका।

(३३) १. मो. झलमलनि (< झलमलति) फ झलमलय, शेष में 'झलमलत'। २. फ. अवनि। ३. धा. अव तटंकटा, फ. तिटंकता, ना. ग्राटकता, श. ताटकता।

(३४) १. मो. रथअंगि, धा. श. स. रथ संग, फ. रथ अंग, ना. रथचक्र, अ. फ. रथ अंग।

(३५) १. म. चक्षु (= चक्खु), अ. फ. भ्रुव। २. धा. अ. फ. ना. इच्छ (ईछ–ना.) इच्छहि, श. स. तुच्छ इच्छहि। ३. मो. बंकसि (=वकसी ?), धा. वकनो, अ. बंकसी, ना. इंछसी, श. स. इच्छसी।

(३६) १. धा. सुक, अ. जनु, फ. जनौ, ना. श. चप, स. घप। २. अ. फ. च्याप उदा वन (उन–फ.)। ३. मो. संकसि (= संकसी ?), धा. संकनो शेष में 'संकसी'।

(३७) १. फ.— मिस। २. अ. फ. रत तल, ना. उरसि। ३. धा. अपंगवे, अ. फ. अपंगयं, ना. अपंग ज्युं, श. स. अपिगं ज्यौ।

(३८) १. मो. अमिइ, धा. अभ्यसहि, अ. फ. अभिसरत, ना. अभिसाहि, श. अभिसाह। २. धा. वंछवं (= वछुछवें), अ. फ. वछुछय, ना. वरद ज्युं, श. अंग ज्यौं।

(३९) १. अ. फ. ना. भ्रुव, श. भुअ। २. फ. वरन्न, ना. वरनि। ३. मो. सु, धा. ना. श. सुव, अ. फ. भूव। ४. अ. फ. वरन्नन (वरन्नयं–फ.)।

(४०) १. धा. नव निरत, अ. नव निकसि, ध. भव निकसि, ना. श. नव नृत्य। २. धा. अलसत, मो. अलिसति, अ. फ. अलिसुत, ना. अलिसत, श. अलितस। ३. श. में यहाँ और है; सित असित उर रिय पंग ज्यों। जनो सेउ दवर बंव ज्यों। (तुलना० चरण ३७)। स. में श. का प्रथम अतिरिक्त चरण नहीं है।

(४१) १. मो. तस मध्य, धा. तसु मध्य, सु. फ. सुन इंदु, ना. श. स. तसु मद्धि। २. धा. भग।

(४२) १. धा. जव, अ. चप, फ. वप, ना. सुतौ, श. द्युति, स. दुति। २. फ. रंति। ३. धा. निंदिय, मो. नंदति, अ. फ. निंदइ, ना. श. निंदति, स. निंदत। ४. मो संपुजा, शेष में 'सिंधुजा'।

(४३) १. धा. थकवक्र, म. कच चक्र, अ. फ. कच चक्र। २. धा. सक्रति, अ. चक्रति, फ. स. चक्रति, ना. भक्रित, श. चक्रत।

(४४) १. मो ना. तस, धा. न. स. तसु, अ. फ. तत। २. ना. श. स. ओपमा। ३. श. स. नइ।

(४५) १. धा. श. स. मणि बंध, मो. ना. मणि बिंब, अ. मणि वृंद, फ. मनु वृंद। २. धा. पुष्पति, अ. पुहपति, फ. पुज्वति, ना. पहुपति। ३. अ. फ दीसियो (दीस यौ–फ.)

(४६) १. मो. जानु, फ. जानौ, शेष में 'जनु'। २. मो. कन, शेष में 'कन्ह'। ३. मो. फाली' शेष में

'कालिमा' । ४. अ. फ. सीसयो (सीसयौ–ना.) ।

(४७) १. धा. तिरमुल बलि, श. त्रिमत्रावली. स. त्रिसरावली । २. धा. बल, अ. फ. बेनि, ना. विनि । ३. धा. वेनयं, मो. मेनये, अ. श, वेनियं, फ. बेलिय, स. बनियं ।

(४८) १. धा. श. स. अविलव, मो. ना. अविलावि, अ. अवलवि, फ. अवलनि । २. मो. धा. सेनय अ. फ. सेनियं, स. सिनिय, श. सेनिय ।

(४९) १. धा. ना. चित्त, अ. चित्र, श. स. चित्र । २. धा. अ. फ. चितति, ना. वृदति, श. स. चिमित ।

(५०) १. धा. अ. फ. नाचि । २. धा. नदंति, मो. ना. स. नृधति, (= नृत्यंति), अ. वदंति, फ. बधिन, सा. नृदत । ३. धा. मो. अ. फ. संवरं, श. स. सम्मरं, ना. संमरं । ४. श. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

जनु सीम फूलति अच्छयी । मनु कनह कालिय सुच्छयी ।

(तु० चरण ४६) ।

टिप्पणी—(३) तर < तल । (४) लच्च < लग्न । (५) मिलिय < मिलित । (६) श्रोनि < श्रोणित । (१२) कुसंमेय < कुसुमेषु । धम < धनु । (१४) राइ < राजि । थंम < स्तंभ । (१६) मऊष < मयूख । (१७) संवयो < संचित । (१८) निरंधयो < निरन्न । (१९) छीन < क्षीण । (२२) रेह < रेखा, लेखा । त्रिवलिया < त्रिवली । (२४) पंचजन्न < पाञ्चजन्य । सठिल्लया < सुठु (?) । (२५) पक < पक्व । (२६) सालि < सारिका । (२७) सुत्ति < शुक्ति । (२८) मुदित < मुद्रित । (३२) नेत्र < णेत्र [दे.] = अधर । (३३) श्रटंक < ताटङ्क । (३५) चष < चक्षु । (३७) वरि [दे०] = वक्ता । अपग < अपाङ्ग । (३८) अभ्भिस < अभ्यस् । वच्छ < वत्स । (४०) मिचि < नृत्य । (४८) सेनी < श्रेणी । (५०) संवर < स्मर ।

[१२]

दोहरा—समर स[१] मंडन समर मिह[२] समर सुरप्पुर[३] भोग । (१)
समर सु[१] जितिय[२] पंग[३] नृप तिहि[४] वल्लहि[५] संजोग[६] ॥ (२)

अर्थ—(१) यह [रति के सदृश] स्मर (काम) का मंडन (आभरण) है, स्मर (काम) का निवास स्थान है और स्मर (काम) का सुरपुर का (स्वर्गीय) भोग है; (२) समर (युद्ध) में जिस (पृथ्वीराज) ने पंगराज (जयचंद) को जीता है, यह संयोगिता उस (पृथ्वीराज की वल्लभा है ।"

पाठांतर—(१) १. श. समरस । २. मो. मिहि, फ. मह, शेष में 'मिह' । ३. ना. सरवर, स. सुरप्पर ।

(२) १. धा. सि, मो. श. स. सु, शेष में 'स' । १-२. ना. स जितिय । ३. फ. पग । ४. धा. अ. फ. तं । ५. धा. अ. फ. ना. ना. वलह, श. चलन, स. चहन । ६. मो. संयोग (= संजोग) ।

टिप्पणी (१) समर < स्मर । (२) वल्लहि < वल्लभा । संजोग < संयोगिता ।

[१३]

दोहरा— किय मभिरन तव[१] राजगुरु भ्यायनु[२] राज रसरच ।[३] (१)
जस[१] भावी नर[२] भोगवइ[३] तस बिधि[४] अप्पइ[५] मत्त[६] ॥ (२)

अर्थ—(१) तब राजगुरु ने आश्चर्य किया "[और कहा,] यह उचित ही है कि राजा रस-रक्त (प्रेमानुरक्त) हो रहा है; (२) जैसी भावी मनुष्य भोगता (भोगने वाला होता) , विधाता उसको उसीके अनुरूप मत (विचार) भी देता है।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. कीयो अचरज। २. धा. न्याइ। ३. मो. धा. के अतिरिक्त समस्त प्रतियों में पाठ है: मानि (मन्नि-ना स.) राजगुरराज रस (रसि—फ.) तैं कवि (कविवर—ना. स. ना.) बरनी (बरनी—फ.) सत्ति। (२) १. ना. ज। २. ना. स सस। ३. मो. भोगवि (=भोगवइ), धा. ना. भुग्गवै, अ. भुग्गवे"। ४. मो. कुद्धि। ५. मो. अपि (=अपइ), धा अप्पहि, शेष में अप्पे'। ६. धा. मो. मत्त, शेष में 'मत्ति'।

टिप्पणी—(१) अचिरज < आश्चर्य। रत्त < रक्त। (२) अप्प < अर्पय्। मत्त < मत।

[१४]

दोहरा— उहि उहि उभय रस[२] उप्पनउ*[२] मिले चंद गुरुराज। (१)
कइ* बंधव संउ[×] मनसिनउ*[२] कइ[×] धन[२] निरष्पिपति[३] राज[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [इस प्रकार] उसको उसमें और उसको उसमें रस (अनुराग) उत्पन्न हुआ। [अथवा उसको और उसको, दोनों को रस (आनन्द) उत्पन्न हुआ] जब चंद तथा गुरुराज मिले; (२) [उन्होंने निश्चय किया,] "या तो राजा बांधवों से मनसिन् (बांधवों का ध्यान रखने वाला) होगा, और या तो राजा [अपनी] स्त्री (संयोगिता) को ही देखेगा।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. उहि उभय रस, धा. उभय उभय रिस, शेष में 'उभै अभै रस'। २. मो. उपनु (=उपज्जउ), धा. उप्पज्यो, अ. उप्पजो, फ. ना. स. उप्पज्यो।

(२) १. मो. के (< कि = कइ) बंधव सु (= सउं) मनसिनु (= मन सिनउ), धा. के बयनन नयनन मिलहि, अ. फ. कै बिध वहि अवनिहि (अवनहि—फ.) मिलै, ना. बैन बयन अपननि मिलहि, ना. सा. कवि बयनन (वैननि—ना.) आनन मिलिहि। २. धा. ना. स. नयन, मो. कि (= कइ) धन, ना. के धरिण, अ. कै नैनि, फ. कै नैन। ३. मो. निरषिपति, शेष में 'निरष्पहि'। ४. ना. आन।

टिप्पणी (१) मनसिन् = ध्यान रखने वाला।

[१५]

रासा— मिलिय[१] चंद गुरुराज[२] बिराजयि[३] राज दर। (१)
जहां पंगानि प्रमान[१] कियउ*[२] प्रथीराज कर[३]। (२)
तिह अपुव्व रसरास[१] बिलास ति[२] सुंदरिय। (३)
भूत[१] बिन नृप[२] दरबार सु[३]नग बिनु मुंदरिय॥ (४)

अर्थ—(१) चंद और गुरराज मिले और वे राजद्वार पर जा विराजे, (२) जहाँ पृथ्वीराज का किया हुआ पंगानी (संयोगिता) का प्रमाण था (आदेश चलता था), (३) तथा उस सुन्दरी का अपूर्व रस-रास-विलास [चलता रहता] था; (४) [यहाँ पर] भूपों के बिना [पृथ्वीराज का] दरबार [इस प्रकार लगता] था, [जिस प्रकार] नग के बिना मुद्रिका हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. मिलिय शेष में 'मिलै'। २. अ. ना. गुरराज, फ. गुरराजु। ३. मो. बिराजहि, शेष में 'बिराजहिं'।

(२) १. धा. जहाँ पंग त्रिप पुत्ति आनि, मो. जिहि पग नृप आन, अ. फ. तहाँ पंगान प्रमान, ना. जहाँ पंगानि प्रमानि, शा. स. जहाँ पंगानि (पंगा—स.) प्रमानु। २. मो. कीयु (> कीयु = कीयउ), धा. किय, शेष में 'कियो' या 'कियौ'। ३. धा. अ. कर, मो. धर, फ. करि, ना. शा. स. वर।

(३) १. धा. तिह अपुब्ब रस रास, मो. तिहि अपूव बाल सरस, अ. तहाँ अप्पुव रस वास, फ. ना. शा. स. तहाँ (तह—ना.) अपुब्ब रस रास। २. अ. फ. बिलासहि, धा. बिलासत।

(४) धा. भ्रत, फ. भ्रस्य। २. मो. जिम, धा. छप, शेष में 'नृप'। ३. धा. अ. फ. जु, ना. शा. ज्युँ, स. जि।

टिप्पणी—(१) दर (फा०) = द्वार। (३) तिह < तथा।

[१६]

दोहरा— अप्पु कहि[१] कवि राज गुरु[२] कंपि कपाट निवार[३]। (१)
को गुदरै[१] नरेस कउं*[२] दिस[३] गज्जने[४] पुकार॥ (२)

अर्थ—(१) काँप कर (भयपूर्वक) कपाट का निवारण कर (किवाड़ खोल कर) कवि और राजगुरु ने आप (स्वगत) कहा, (२) "राजा को (के पास) ग़ज़नी की दिशा की पुकार कौन गुदरे (पहुँचावे)?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा. अ. फ. जपि कह्यो, मो. थपु कहि (=कहे ?), ना. शा. स. इम जपै। २. धा. गुरु राज कर। ३. अ. फ. कवि कपाट निवारि, शा. स. कपिग पट्टन (पटन—शा.) बार।

(२) १. धा. को गुदराउ, अ. फ. कोइ गुदरै, ना. को गुदरैव, शा. को गुद्दरैव, स. को गुरदेव। २. मो. नरेसु कु (=कउं), धा. नरेस कूं, अ. फ. नरेस सौं, ना. शा. नरेस सुं। ३. मो. दिस, शेष में 'दिसि'। ४. धा. अ. फ. ना. गज्जनै, शा. गज्जनीय, स. गज्जनी।

टिप्पणी—अप्पु < आत्म। (२) गुदरना < गुजारना [फा०] = पहुँचाना, पेश करना।

[१७]

रासा—तब कुडिल[१] मोह*[२] घप सोह*[३] ति[४] मोहन[५] दासि दस[६]। (१)
कछु हसि कछु[१] पय लग्गि[२] पयंपइ जीय रसि*[३]। (२)
तुम संदविग्ग[१] सु कब्बि[२] राज[४] गुरु[३] राज सम। (३)
तुम तन सुमन[१] निरप्पि गए पति[२] पाप[३] हम॥ (४)

अर्थ—(१) तब कुटिल भौंहों, और शोभायुक्त चक्षुओं वाली, मोहिनी दस दासियों ने, (२) कुछ हँसते और कुछ [राजगुरु तथा कवि के] पैरों में पड़ते हुए रस (सुख)-पूर्वक कहने लगीं, (३) "हे सुकवि, तुम सर्वज्ञ हो और राज गुरु राजा के ही समान हैं, (४) इसलिए सद्भाव से तुम्हारी ओर देखने से हमारे दोष-पाप चले गए।" .

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. धा. कुटिल, ना. शा. स. तब कुटिल, फ. उटिल, शेष में 'कुटिल'। २. मो. भुह (=भोह ?), धा. भोह, शेष में 'भौंह'। ३. मो. चष सुह (= सोह), अ. चखु सोह, फ. चपु सोह, ना. चष सौंह, शेष में 'चखसोह'। ४. मो. नृप, ना. सु, शेष में 'ति'। ५. शा. स. मोहति। ६. मो. दस्य, फ दश, शेष में 'दस'।

(२) १. ना. शा. स. कछुक हसिय (हसी—ना.)। २. मो. पय परी, धा. पय लग्ग, शा. स. पय लग्गि, अ. फ. पँ लग्गि, ना. पय लग्गि। ३. मो. बोलिग बयन सुर तसि (<तस ?), धा. पयपइ लालि रस, अ. पयपइ अली रस, फ. पयपय अलोय रसि, ना पयपी अलि अलस, शा. स. जपिय लीय लसि।

(३) १. मो. तम (<तुम) सरवगइ (<सरवगि), धा. तुम सर्वग्य, अ. फ. तुम सरवग्गि, ना. शा. स. तुम सरवग्य। २. धा. सुकवी, ना. कवि। ३. फ. पृथी।

(४) १. मो. तुम सु, धा. अ. फ. तुम तन (तनि—फ.) सुमन (सुमनि—फ.), शा. स. तुम तन समुह। २. धा. ते। ३. धा. पाख, स. पाय।

टिप्पणी—(१) कुटिल < कुटिल। भोंह < भ्रू। (२) सुर < स्वर। (३) सरवग्गि < सर्वज्ञ।

[१८]

दोहरा— आसन आइस सुधि दियं[१] कच झारिय तह[*] रेनु। (१)
सुभ सिंगार[२] सुंदरिय[२] अंगे[३] आभरनेन॥ (२)

अर्थ—(१) उन्होंने आदेश (नमस्कार) – पूर्वक आसन दिया, और तब कच (बालों) से उन्होंने उनकी [चरण -] रेणु झाड़ी। (२) अंग (शरीर) में आभरणों के द्वारा उन सुन्दरियों का शृंगार शुभ हो रहा था।

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. मो. असन आइस सुधि दिय, धा. आयसु अप्पु दिय चरन कं', अ. फ. आसन दिय अनु चरन (चरनि—फ.) परि (अ० 'पय लग्गि' पूर्ववर्ती छंद में), ना. आसन अप्पु दिय चरण लिय, शा. स. आसन अप्पु दिय चरन रज। २. मो. कच झारीय ति (= तह) रेनु, धा० कच झारी तिन रेन, अ. फ. कच झारी तन रेन (रेनु—फ.), ना. कच झारी पग रेण।

(२) १. धा. सुभ सिंगारिय, मो. सुभ सिंगार, अ. फ. सुभहि सिंगारहि (सिंगारइ—फ.), ना. स. शा. सभ्भ सिंगार सु (सु.—ना. स.)। २. धा. सुंदरी। ३. मो. अंगे, धा. अ. फ. शा. स. आदर (आदर—फ.), ना. अगह। ४. धा. मो. आभरनेन, अ. फ. शा. स. आभरनैन ना. आभरनेण।

टिप्पणी—आइस < आदेश। तह < तदा।

[१९]

दोहरा— आदर दर दिन्नौ तिनहि[१] आयसु सम पुच्छ्छउ*[२] दासि[३] । (१)
कहा[१] पयंपइ[२] त्रिपति सउ*[३] कहिय चंद गुरु भासि ॥ (२)

अर्थ—(१) उन्हें कुछ (!) आदर देकर आदेश (नमस्कार) के साथ दासियों ने पूछा, "राजा से क्या कहा जाय, हे चंद और गुरु, आप भासित कर कहें।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) मो. आदर ऊतर दीधु सू तिहि धा. आदर दर दिन्हो तिन्है, अ. फ. आदर अति दिन्नौ तनहि, ना ध. स. आदर दर दिन्नौ (दिन्नौं—ना.) कविहि । २. मो. यायसु (< आयसु) सम पुछु (= पुछउ), शेष में 'आइस (आयस—ना.) मग्गो (मंग्गौ—ना.)' । ३ फ. दास ।

(२) १. मो. का, शेष में 'कहा' । २. मो पयइपि (अयइपइ), धा. फ. पयपइ, अ पयपहि, ना. धा. स. पयपदु । ३. मो. ना. सु (= सउ), धा. ए, शेष में सौ' । ४. धा कहो, मो. कहिय, फ कहौहि, ना. कहौ, शेष में 'कहहु' ।

टिप्पणी —(१) दर—कुछ (!) । आयसु < आदेश । (२) पयप < प्रजल्प् ।

[२०]

दोहरा—कग्गरु[१] अप्पिय[२] राज[३] कर[४] सुप[५] जंपइ[६] या*[७] वत्त । (१)
गोरी रत्तउ*[१] तुव धरा*[२] तु[३] गोरी अनुरत्त[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [उन्होंने कहा,] "[यह] कागज (चिट्ठी) राजा के हाथ देना, और मौखिक रूप से यह बात कहना, "(२) गोरी (शहाबुद्दीन) तुम्हारी धरा पर अनुरक्त है, और तुम गोरी (संयोगिता) पर अनुरक्त हो।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. धा कागद, मो. कग्गुर, फ कग्गरि, शेष में 'कग्गर' । २. मो. अपीअ, धा. ना अप्पहि, अ. अप्पउ, फ. अप्पौ, धा. अप्पहु, स अप्पह । ३. अ. फ. दासि । ४. धा. गुरु । ५. धा. मुषि । ६. अ फ. जपी, ना जपहि, धा जंपहु, स. जंपइ । ७. मो अ. धा इह, ना. यहय, शेष में 'यह' ।

(२) १. मो. गोरी रतु (=रतउ), धा गोरी रत्तो, शेष में गोरीय (अथवा गोरिय) रत्तौ । २. मो. [तु] व धार (< धरा), फ. धनि, ना. धरणि, शेष में 'धरनि' । ३. मो. तु , शेष में 'तू' । ४. स. रसरत्त ।

टिप्पणी—(१) अप्प < अर्पय । जप < जल्प् । वत्त < वार्त्ता । (२) रत्त < रक्त ।

[२१]

दोहरा—अन्य महिल[१] दासी निरषि परषि पयंपन[२] जोगु[३] । (१)
उन्नत[१] सुप रुप[२] राज किय नृपति[३] सपत्तउ[४] लोगु[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) दासी ने [राजा को] अन्य महल (एकान्त मंदिर) में देखकर उससे कहने का

सुयोग परखा। (२) जब राजा ने [अपना] मुख उठा कर उसकी ओर किया [तो उसने कहा,] "हे राजा, लोग सप्रास हुए हैं—आए हैं।"

पाठान्तर—(१) १. मो. आइ निसिसइ, धा. अन्य महिल, शेष में 'अन्य महल'। २. मो. परपि अपतु (= अपनउ), धा. ना. शा. स. परपि पर्यंपन, अ. फ. परपि पजंपन। ३. धा. फ. जोगु, शेष में 'जोग'।

(२) १. धा. ना. उश्रिस, फ. उन्नसि। २. धा. दुख। ३. शा. मिपतो। ४. धा. अ. फ. समपतउ (समप्तौ–फ.), मो. स. मंतो, ना. सपत्तौ, शेष में 'संपत्तउ'। ५. धा. फ. लोगु, शेष में 'लोग'।

टिप्पणी—(१) पर्यंपन < प्रजल्पन। (२) संपत्त < संप्राप्त।

[२२]

दोहरा— इह[१] कहि दासी[२] अप्पि[३] कर[४] लिपि जु दिअउ[५] कवि[६] चंदु। (१)
पहली[१] आवलि*[२] बंचि करि[३] हिर धर[४] जाय[५] नरिंदु ॥‡ (२)

अर्थ—(१) यह कह कर दासी ने [राजा के] हाथों में वह [लेख] अर्पित किया जो कवि चंद ने लिख कर दिया था। (२) [उस लेख की] पहली अवली (पंक्ति) बाँच कर राजा लज्जित हुआ और भूमि पर जा पड़ा

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

‡ फ. में यह १४. दो० १५ तथा १४. दो० १६ है। नीचे दिया हुआ पाठान्तर फ. १४. दो० १५ का है।

(१) १. अ. इक, फ. स. इय, ना. यह। २. अ. फ. ना. स. शा. दासिय। ३. धा. फ. ना. अप्प। ४. फ. ना. करि। ५. मो. दीअ (=दीअउ), धा. जु दियो, अ. जु दीयउ, फ. ज दियो, ना. जु दीयौ। ६. फ. ना. शा. स. गुरु।

(२) १. मो. पहली, शेष में 'पहिली'। २. मो. अउरि, धा. ओलहि, अ. आवलि, फ. अवली, ना. ओवलि, शा. ओली, स. औली। ३. मो. बंचि करि, धा. अ. बच्चियो, ना. बाचीये, शेष में 'बंचियौ'। ४. मो. हिरि धर, धा. रे भुमि, ना. र भुमि, शा. भूमर, स. भूमिय, अ. रे भुमि, फ. रे भुम। ५. मो. जाय, शेष में 'जाइ'।

टिप्पणी—(१) अप्प < अर्पय्। (२) आउरि < अवली। हिरि < ह्री=लज्जित होना।

[२३]

कवित— गज्जनेस आयेसु[१] असंमु सह[२] सेन३ सकल्लिय[४]। (१)
दियो चारु[१] आदरु अनंद[२] ढिल्लिय[३] दिस[४] मिल्लिय[५]*। (२)
दस हजार वारुग्गि[१] विलास[२] दस अप्प[३] तुरंगम[४]। (३)
तहि*[१] अनेय[२] भर सुभर[३] और[०] गंभीर[०][४] अभंगम। (४)
अप्पज्ज वान[×१] चहुआन[२] सुनि प्रान रषिक[३] प्रारंभ करि। (५)
सा मंत न ही[१] सामंत[२] करि जिनि[३] बोलइ*[४] ढिल्लिय[५] जु धरि[६] ॥[७] (६)

अर्थ—(१) [उस पत्र में था,] "गज्जनेश (शहाबुद्दीन) की आज्ञा से [उसकी] समस्त असंभ (अपूर्व) सेना एकत्रित हो गई है। (२) उसने उसे चाव आदर दिया है और वह आनन्द पूर्वक (उस आदर से प्रसन्न होकर) दिल्ली की दिशा में [चलकर] मिल रही है। (३) उसमें दस हजार हाथियों का विलास (वैभव) है, और दस लाख घोड़े हैं। (४) इसी प्रकार उसमें अनेक सुभट तथा योद्धा अमीर हैं जो गंभीर और अविचलित रहने वाले हैं। (५) हे चहुवान, सुन; प्राण तो अपने अधीन है, [इसलिए यदि और कुछ तुझ से न हो सके तो उसके ही द्वारा] प्रारंभ (उद्योग) करके [अपने] प्राणों की रक्षा कर; (६) सामंत नहीं तो भी वह मैन कर कि दिल्ली की धरा को तू डुबो न दे (तेरे कारण वह डूब न जाए)।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
○ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. आये, धा. अ. फ. आइस (आइसु—फ.), ना. शा. स. आयो। २. अ. फ. सब। ३. ना. सयनु। ४. मो. शा. स. सकिल्लिअ (सकिल्लिय—शा. स.), धा. सकल्लिग, फ. सिकिल्लिगि, शेष में 'सकिल्लिग'।

(२) १. धा. अ. ना. दर (दं—ना.) चावर (चावरि—अ., वादर—फ.)। २. अ. फ. आदरिय आनि (आन—फ.)। ३. मो. दिलीय, शेष में 'ढिल्लिय'। ४. धा. ततु, अ. फ. सन, ना. दिशि। ५. मो. शा. स. मिल्लिय शेष में 'मिल्लिग' (मिल्लिगि—फ.)।

(३) १. धा. वारन। २. मो विलास, शेष में 'विसाल'। ३. अ. लाष। ४. ना. तरंगम।

(४) १. मो. ताह (< तहि ?) धा. तिहि, अ. फ. तहं, ना. तिहां, शा. स. तहाँ। २. धा. अनेय, शेष में 'अनेक'। ३. मो. धा. ना. सुभर, शेष में 'सुहर'। ४. फ. ना. भंगीर।

(५) मो. अपज वान, धा. फ. आवर्तवान, अ. आवर्त वात, शा. स. आवरन वान (?), ना. आवर्त। २. मो. चहुन, फ. चौवान। ३. मो. रषिक, शेष में 'रषि'।

(६) १. अ. फ. सावंत नहीं शेष में 'सामंत नही'। २. अ. सावंत, फ. साउंति, शा. स. सोमंत। ३. शा. स. जिन। ४. मो. बोलि (=बोलइ), फ. घोरहि, अ. ना. शा. स. बोरहि। ५. मो. दिलीय, ना. दिल्ली। ६. मो. जुधरि, अ. फ. शा. स. सुधरि, ना. सुधर। ७. धा. में इस चरण का पाठ है:—

इन पुल्ले प्रथ तुज्झ किलि पन सामंत नहि सामंत करि।

[ऐसा लगता है कि चरण का पूर्वार्द्ध ही बच रहा था, उसमें प्रारम्भ में कुछ और शब्द बढ़ाकर चरण-पूर्ति कर दी गई।]

टिप्पणी—(१) आयेसु < आदेश। असंभ < असंभाव्य ? सब=समस्त (?)। (४) तहि < तथा=इसी प्रकार। भर < भट। (५) अप्पज्ज < अप्पज्झ [दे०] = आत्म-वश। (६) बोल < मोडय्=डुबाना। धरि < धरा।

[२४]

दोहरा—सुणि कग्गल[१] पिट्टउ* सुकर[२] धरा‡ रप्पइ*[३] गुर भट्ट। (१)
तरकि तोन[१] सजियउ*[२] स किरि[३] जिमि[४] वेप छंडि सु नट्ट[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने] उस लेख को सुनकर अपना हाथ पीटा और कहा "धरा (राज्य) की रक्षा गुरु तथा भट्ट करें [और मैं विलास-लिप्त रहूँ]। (२) उसने [तदनन्तर केलि-विलास

छोड़कर] तद्दप कर तोन (तूणीर) [इस प्रकार] सजा दी, जिस प्रकार कोई सुभट [पूर्ववर्ती] वेष छोड़ [कर नवीन वेष धारण कर] ता है।

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित 'र' का अक्षर फ. में नहीं है।

(१) १. धा. कागर, फ. ना. कग्गद। २. धा. फिट्टउ सुकर, मो. पिटक, अ. फ. कुट्यो सुकर (सुकरि–फ.), ना. फट्यौ सुकर, शा. स. फार्‌यो सुकर। ३. मो. रषि (=रषइ), धा. रक्खे, शेष में रष्पै' या 'रष्षै'।

(२) १. धा. तरकि तोम, मो तरकि तोर (< तोन ?) स, अ. फ. तमकि तून, ना. शा. स तरकि तोन। २. मो. स सजीयु (=सजियउ), धा. सज्जिय, अ. फ सिगिनि (सिगनि–फ.), ना. सज्यो, शा. स. सज्यौ। ३. धा. अ. सुकर, फ. सुकरि, ना. नृपति, शा स. भूपति। ४. ना. शा. स. जनु। ५. मो. वेष छंडि स. नट्ट, शेष में 'बदल्यो रस (रस=फ.) नट्ट'।

टिप्पणी—(१) कग्गर < कागज। (२) किरि < किल=री–पाद पूर्ति के लिए प्रायः प्रयुक्त।

[२५]

कवित्त—कहु[१] सुप्रियह*[२] पउमिनिय*[३] कंत धन[३] धरउ*[४] तउ न*[५] धन[६]। (१)
सुष सुष मार[१] आरोहु[२] असर[३] संसार मरण मन। (२)
दिन दिनियर[१] दिन[२] चंदु रयनि[३] दिन दिन‡ हों[४] आवहिं[५]। (३)
जंतु जंतु इह रमनि[१] स्रवन[२] लग्गवि[३] समझावहिं[४]। (४)
धरधंग धरा[१] अरधंग[२] हम[३] अरधंगी°×[४] अरधंग° करि°[५]। (५)
जस°[१] हंस° हंस तह[२] हंसनी[३] सर सुक्कइ*[४] पंकजन परि[५]॥ (६)

अर्थ—(१) प्रिय (पति) से पद्मिनी (संयोगिता) ने कहा, "हे कान्त, यदि धन रक्खा रह गया तो वह धन नहीं है। (२) वही सुख सुख है जिसमें मार (कामदेव) का आरोह (उत्कर्ष) हो, स्मर (काम)–विहीन [जीवन] संसार में मानो मरण है। (३) प्रतिदिन दिनकर आता है, प्रतिदिन चंद्रमा आता है, रजनी और दिन भी प्रतिदिन आते हैं, (४) किन्तु जन्तु (जीव) [एक दिन] चला जाता है", यह रमणी (संयोगिता) [पृथ्वीराज के] श्रवणों में लगकर समझाती है; (५) "धरा तुम्हारी अर्द्धाङ्गिनी है तो मैं भी तुम्हारी अर्द्धाङ्गिनी हूँ; मुझ अर्द्धाङ्गिनी को तुम [अपना] अर्द्धाङ्ग करो। (६) जिस प्रकार हंस हंस होता है, उसी प्रकार हंसिनी भी [हंसिनी होती] होती है [आजीवन दोनों साथ रहते हैं], सर सूखता है तो पंकज भी शेष नहीं रहता है [सर और पंकज भी अंत का साथ निभाते हैं]!"

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।
° चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. मो. कहु (=कहउ), धा. कह, अ. फ. ना. कहै। २. धा. ना. शा. पीय, मो. सु प्रयह (< प्रियह), अ. सुप्रिय, फ. स प्रिय। ३. मो. पूमनीय (=पउमनीय), धा. पोमिनिय (<पोमिनिय),

अ. पोमिनी, फ. कामिनी, ना. पोमिनीय (< पोमिनीय), धा. स. पोमिनिय। ४. धा. मो. धनु, शेष में 'धन'। ५. मो. धह (=धरउ), धा. धरिउ, शेष में 'धर्‌यो' या 'धर्‌यौ'। ६. मो. तु (=तउ), फ. तौ शेष में 'तो'। धा. धनु, शेष में 'धन'।

(२) १. मो. सुध सुधमार, धा. सुप समीर, अ. फ. सुप कुमार, ना. सक सुमार, धा. स. सुप सुमार। २. धा. आ रह्यो, मो. आरोहु, अ. आरह्यो, फ. आरह्यौ, ना. धा. स. आरोह। ३. मो. असर, शेष में 'सार'।

(३) १. मो. दनियर, धा. दिनयर, शेष में 'दिनियर'। २. धा. निन, निसि। ३. ना. रैण। ४. मो. दिनहो, दिनसो, शेष में 'दनियर'। ५. धा. मो. आवहि, शेष में 'आवै'।

(४) १. मो इह रमनि, ना. यहा रयनि, धा. स. इह रयनि, अ. फ. यह वरन (वरनु—फ,)। २. मो. वन, धा. सुवन, शेष में 'सवन' या 'श्रवण'। ३. मो. कही कही, ना. लग्गिवि, शेष में 'लग्गवि'। ४. धा. मो. समझावहि, फ. समकावै, शेष में 'समझाव'।

(५) १. मो. धा. धर, ना. फ. धार (धाद—फ.), धीर, धा. स. धरा। २. धा. अरधगि। ३. ना. हैउ, ना. स. हुम। ४. धा अरधगी अरधग करि, अ. फ. अर अर धर अरधग करि, फ. अरि अर धर अरधग करि, ना.—अरग करि, धा. अरि अंग रंग अरधंग करि, स. अरि अग अंग अरधंग करि।

(६) १. धा दय्यु, अ. फ. जस, धा. स. जिय। २. अ. फ. हंस जस, (जस—अ. फ.), म. हंस तउ, ना. हंसु ज्स, धा स. रहत तस। ३. अ. फ. हसिनीय, ना. हसिनीय। ४. मो. सरसकि (=सुकर), धा. अ. फ. सरसुक्कै (सुम—अ. फ), ना. सुर सुक्कै, शेष में 'सर सुक्कै'। ५. मो. पंकन परि, धा. पंकजनि करि, अ. फ. पङ्कजनि परि, ना. धा. स. जिम पक परि।

टिप्पणी—(१) पउमिनिय < पद्मिनी। कंत < कान्त। (२) अमर < अ+स्मर=काम-विहीन। मन=मानो। (३) दिनियर < दिनकर। रयनि < रजनी। (४) जंतु < 'या' से='जाता है' या 'जानेवाला'। (६) सुक < शुष्। परि=शेष।

[२६]

दोहरा— सुनि प्रिय प्रिय[१] दिष्यौ[२] वदन[३] किय जिय निर्भय पाथ[४]। (१)
बाहूं पुज्जउ[१] बरह तुह[२] कहि स° मुघ्ध[३] रति नाथ[४]॥ (२)

अर्थ—(१) यह सुनकर प्रिय (पति) ने प्रिया का वदन (मुख) देखा, और जी को निर्भय (कठोर) पाथ (स्थान) बना लिया। (२) [उसने प्रिया से कहा,] "तुमने, हे श्रेष्ठ स्त्री, [मेरे] बाहुओं की पूजा की है, और वही तुम मुग्धा, [इस समय] रतिनाथ की [बातें] कह रही हो।"

पाठान्तर—० चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. धा. मो. सुनि प्रिय प्रिय, अ. सुप्रिय प्रिय, फ. सुप्रय प्रय, ना. सुप्रीय अप्रीय, धा. स. प्रिय अप्रिय। २. धा. देख्यो। ३. फ. वदति। ४. धा. जार प्रिय साधु, अ. फ. जिय निर्भय साथ, ना. जीय नृभय सथ्थ, धा. जिय नृप से सथ्य, स. जिय भय भी सथ्य।

(२) १. धा. वहुँ पुज्जउ वय, मो. वाहू पूज्यो, अ. फ. वहु पूज्यो वय, ना. वहु पूजुं वर, स. हूं पूज्यों वर, धा. हुं पुज्जुवर। २. अ. वनह तुह, फ. वनहि कहि, ना वरहि तुहि, स. धा. वरह तुहि। ३. मो. कहि (=कहह ?) मुछ (=मुग्ध), धा. कहि समदिउ, ना. कि समध्यो, अ. धा. किहि समध्यो, स. कहि समध्यो, फ. समध्यो रतिया। ४. ना. धा. रति नथ्थ स. रतिकथ्थ।

टिप्पणी—(२) तुह=तुम। मुध < मुग्धा।

[२७]

दोहरा—तब[१×] कहइ[२] राजइ संजोगि[४] सुनि[५] सुकथइ[६] कहत[७] अकथ्थ । (१)
श्रवन[१] मंडि कनवज्जनी[२] सा[३] सुपनंतरि[४] तथ्थ[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) तब राजा [संयोगिता से] कहने लगा, "हे संयोगिता सुन, मैं एक अकथ्य सुकथा कह रहा हूँ; (२) हे कनवजिनी, स्वप्नांतर के उस तथ्य पर कान लगा।"

पाठान्तर—× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. मो. किहि (< कहि), धा. कहइ, अ. कहि (=कहइ), फ. ना. शा. स. कहै। ३. अ. फ. राजा। ४. मो. सं[जो] ग, फ. संजोगु। ५. ना. सुं (=सउं)। ६. धा. कथ्यो, अ. सुपनइ, फ. सुवनइ। ७. अ. फ. तथ्थ, ना. कहयइ।

(२) १. धा. सुभ्रन, फ. स्रवनि। २. अ. फ. कनवज्जिनी। ३. धा. स। ४. धा. फ. सुपनतरि, शेष में 'सुपनंतर'। ५. ना. कथ्थ, शा. स. अथ्थ।

टिप्पणी—(२) तथ्थ < तथ्य।

[२८]

कवित—सपनंतरि[१] सुंदरिय लग्गि आरंभ[२] परिरंभह[३] । (१)
*तांह[१] तव संग[२] सुकीय तेज अछरिय[३] रवि गिंभह[*४] । (२)*
*तिन मिलि के[१] करि झगुर[२] गहइ[*३] कर बरु बरु[×४] जंपहि[५] । (३)*
तहां[१] अदिट्ठ[२] अरिट्ठ[३] दिट्ठ[४] ता दंतनु[५] चंपहि[६] । (४)
तेह न हउं[*] न तह[१] अछ्छरिय[२] हर हराह[३] सुर[४] उप्पयउ[*] । (५)
*जानिय[*१] न देव देवांन मतु[२] किहि निम्मान[३] काहा[*४] निम्मयउ[*५] ॥ (६)*

अर्थ—(१) "स्वप्न में एक सुंदरी [मुझसे] आरंभ-परिरंभ करने लगी; (२) उस समय उसका स्वकीय (पति) भी संग था, जिसका तेज, हे अप्सरा, ग्रीष्म के रवि का था। (३) उस पुरुष ने [मुझसे] मिल कर झगड़ा किया, और [मेरा] हाथ पकड़ कर—अथवा हाथ से मुझे पकड़ कर—वह बड़ बड़ बकने लगा (बड़बड़ाने लगा)। (४) [इस प्रकार] वहाँ एक अदृष्ट अरिष्ट (संकट) [उपस्थित हो गया] और दिखाई पड़ा कि वह [रोष पूर्वक] दाँतों को दाब (कटकटा) रहा है। (५) तदनंतर न मैं था न उसी प्रकार वह अप्सरा थी, और 'हर हर' का स्वर उत्पन्न था। (६) पता नहीं कि देवताओं की सभा का क्या [अभि–]मत है, और किस निर्माण के लिए (उद्देश्य से) उन्होंने क्या निर्मित किया है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. धा. सपनंतरि, अ. फ. अज्ज सुपन, ना. सा सुपनंतरि, शा. स. सुपनंतरि। २. मो. लग्गि आरंभ, शेष में 'रंभ लग्गी (लग्गीय–ना.)'। ३. फ. परिरंभय।

(२) १. धा. ना. तह, अ. फ. स. तहं, शा. तहां। २. धा. मो. तव संग, अ. फ. तुव तीय, ना.

सुव पीय, धा. स. सुम संग। ३. मो. ते अजछरीय, ना. सेन अछिय, स. सेज अछिय, धा. सेज अछीय, शेष में 'तेन अछरिय'। ४. मो. विहंगाह, धा. बिस्सइ, अ. ना. रवि गंमइ, फ. रवि मगय, धा. स. रवि गिम्मइ।

(३) १. धा. तिनि मिलि कै, मो. तिन मिली के, अ. फ. तिनि सुम मिलि, ना. स. तहं तुम मिलि, धा. तहाँ तुम मिलि। २. धा. झग्गरिउ, अ. फ. झग्गरयउ, ना. झगरी। ३. मो. गहि (=गहइ), धा. ना. धा. स. गइहि। ४. धा. स. करि बर कर। ५. मो. जपिहि, अ. फ. जंपे।

(४) १. मो. तांहां, धा. यहाँ, अ. फ. धा. स. तहं, ना. तह। २. मो. अइट, शेष में 'अदिस्ट' या 'अदिट्ट'। ३. अ. फ. आदिट, ना. जरि दिट्ट। ४. धा. क्रस्टि, अ. द्रिट्ठि, फ. दृष्ट, ना. दिट्ठ, धा. स. दुष्ट। ५. मो. ता दंतनु, धा. ता मंतनु, शेष में 'दानव तन'। ६. अ. फ. चंपे।

(५) १. धा. तह हेम तत्र तिनि, मो. तेह नहु (=हउं) नतह, अ. तहं हत त्रत्र नन, फ. तहं हवत तथव, ना. धा. स. तहां तून छून नन (नह—ना. धा.)। २. फ. अक्षरिय। ३. मो. हर हार हार, धा. हरि हहार, अ. फ. हर हराह, ना. हर हारा, धा. स. हर हर हर। ४. मो. स्वर, धा. सिर, शेष में 'सुर'। ५. धा. उप्पयो, मो. उपयु (=उप्पयउ), अ. उप्पज्जयउ, फ. उप्पज्जौ।

(६) १. मो. जान्य (<जानिय ?), धा. जानो, अ. जानउ, फ. ना. जानौ, धा. स. जाने। २. धा. देव देवा मरन, अ. फ. देव देवान (देवानि—फ.) गति, ना. देव देवान सुम। ३. मो. किहि निर्मनि (< निम्मनि); धा. कह निमान, अ. कहि मिमान, फ. कद तिमातु, ना. धा. स. कह त्रिमान (त्रिमान—ना.)। ४. धा. केहि, मो. कांहां, अ. तिहि, फ. तिहुं, धा. स. कह, ना. कहि। ५. मो. निर्मयु (=निर्मयउ), धा. निम्मयो, अ. निर्मयउ, फ. निर्मज्यौ, ना. धा. स. निपज्यौ।

टिप्पणी—(२) गिम < ग्रीष्म। (३) जंप < जल्प्। (५) तेह=तत्तदनंतर (?)। उप्पय < उत्पत्। (६) देवान < दीवान [अ०]=राज सभा।

[२६]

*कवित्त—सुनि सुभग्ग प्रिय वचन[१] राज गुरु गुरु कवि[२] बोलयउ[*३]। (१)*
सोइ सपनंतर सुनवि[०] [१] तरुणि तिन प्रति मुष[२] खोल्यउ[३]।×(२)
*सुवर मथ्थ तिन हथ्थ[१] अभय पंजर पढ़ि[२] दिनउ[*३]। (३)*
*कलस सहस भर खीर[१] अरघ[२] रवि ससि कहुं[३] दिनउ[*४]।+(४)*
दस वारण वृष दान दस महिप ति मोति अनंत दिय[१]। (५)
तिहि दिवस[२] देव[०] प्रथीराज तव[२] संझ[३] सुभट[४] भरु महल किय॥ (६)

अर्थ—(१) सुभग्ग (संयोगिता) ने प्रिय (पति) के वचनों को सुनकर राजगुरु और कवि गुरु (चंद) को बुलाया। (२) उस स्वप्नांतर की [घटना का फल] सुनने के लिए तरुणी (संयोगिता) ने उनके प्रति मुख खोला। (३) [पृथ्वीराज के] श्रेष्ठ मस्तक पर हाथ [रख कर उन्होंने] अभय-पंजर [मंत्र] पढ़कर दिया, (४) और सहस्र कलश भर कर खीर रवि-शशि को अर्घ्य-दान किया। (५) दस हाथी, [दस] वृष, दस महिष तथा मोती अनंत ही दान किए। (६) उसी दिन देव पृथ्वीराज ने तदनंतर संध्या समय सुभट-भटादि का महल (महल का दीवान) किया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

० चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।
+ चिह्नित चरण अ में नहीं है।
× चिह्नित चरण ना. में नहीं है।

(१) अ. फ. ना. सो सुपनतर सुनिव (सुनवि–फ), शा. स. सुपनतर पुच्छनह। २. अ. फ. अनु कवि, ना. शा. स. कवि गुर। ३. मो. बोल्यु (= बोल्यउ), धा. बुल्यो, अ. बुल्यउ, फ. बुल्यौ, ना. शा. स. बुल्लिय।

(२) १. सुनिवि, अ. सुनिव। २. मो. तरुणि तिन प्रसि मुप, शेष में 'तेन (तेनि–अ) मुष तिन (तिनि–फ.) प्रति'। ३. मो. बल्यु (= बोल्यउ), धा. बुल्यो, अ. बुल्यउ, फ. बुल्यौ, शा. स. बुल्लिय।

(३) १. धा. सुबर मधे तिन हथ्थ, अ. फ. सवर हथ्थ मनमथ्थ, ना. सुबर मत्थ तिहि हत्थ, शा. स. सुबर हथ्थ दै मथ्थ। २. धा. पजर परि, फ. पजरि पढि। ३. मो. दि दिनु (= दइ दिनउ), शेष में 'दिन्नो' या 'दिन्नौ'।

(४) १. ना. नीर। २. धा. धा. अभय। ३. धा. ना. कह, मो. कहु। ४. मो. दिनु (= दिन्नउ), धा. दिन्नो, शा. स. दीनो, ना. किन्नौं।

(५) १. मो. दस धारण कृप दान दस मिहिप ति मोति अनन्त हिल, धा. दस वर दिसान दस दस महिस हति अनन्त तिन दान दिय, अ. फ. ना. शा. स. दस (देस–फ) वलि (वल–फ. मा.) दिसान दस (दिश–फ.) महिष अह (अहि–फ., हनि–ना. शा. स.) तिमत अनन्तक, (मुत्ति अनन्तत–ना., मित अनन्त मित–स., मित अनत सब–शा.) दान दिय।

(६) १. फ. तिह देवस। २. मो. तव, धा. वर, अ. कर, फ. करि, ना. रवि, शा. स. दर। ३. मो. सिंह, शेष में 'सह'। ४. धा. सुबर, अ. फ. सुहर। ५. धा. अ. फ. दिय।

टिप्पणी—(३) पजर=यन्त्र (जतर)। (६) सुभर भर < सुभट भट।

११. शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज-युद्ध

[१]

दोहरा— सब्ब सेन[१] सत्तरि सहस घटि वधि[२] वरनत[३] बार । (१)
जे[१] भर मीर[२] सम्मुह चले[३] ते[४] बत्तीस हजार ॥ (२)*

अर्थ—(१) पृथ्वीराज की सब सेना [मोटे ढँग पर] सत्तर सहस थी; इससे [जो कुछ] कम-अधिक [रही होगी उस] का वर्णन करने में समय लगेगा । (२) इनमें से जो भट उस संकट के समय सम्मुख चले, वे बत्तीस हजार थे ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. धा. ना. सवे (सवै—ना.) सयनु, अ. फ. सव सयन, शा. स. सवें (सर्वे—स.) सेन । २. मो. वधि, शेष सभी में 'वढि' । ३. फ. वर्त्तन, मा. शा. स. व्रतत ।

(२) १. मो. ना. जि (=जे), धा. शा. स. जे । २. फ. भार । ३. मो. समुह चलि (=चले), धा. समुह सहहि, अ. फ. ना. संमुह सहै, शा. तमुह सधे, स. समुह सधे । ४. अ. फ. ने ।

टिप्पणी—(१) वध < वर्धय्, या वृध् , (२) सम्मुह < सम्मुख ।

[२]

दोहरा— सहहिं[१] मीर न्रिप पीर जिहिं[२] जिन सिर झरहि दुधार[३] । (१)
लाज धरहिं[१] तिन वरि गन्यहिं[२] ते पुहु[३] पंच[४] हजार ॥ (२)

अर्थ—(१) जो संकट को सहन करते थे, जिन्हें राजा की पीड़ा थी, जिनके सिर पर दुधारों का आघात होता था, (२) जो लज्जा धारण करते हुए [दुधारों के उन आघातों से] तृण को अधिक गिनते थे, ऐसे [योद्धा] पृथु (विस्तृत) पाँच हजार थे ।

पाठान्तर—(१) १. अ फ. ना. सहै । २. धा. तिम, अ. फ. जिय, ना. जिन । ३. धा. अ. फ. जिनि (जिम—धा.) सिर झरहि (वारहि—फ) दुधार, ना. शा. स. लज्जा (लज्या—ना.) धर (धरन—शा.) भर भार ।

(२) १. धा. लज्याधर, अ फ लज्जाधर, ना शा. स भरनि (भिरणि—ना.) धरणि । २. मो. तिन वरि गजिहिं, धा. तिणि वरि गणिहि अ. फ. धर तिन (तिनु—फ.) गनै (गिनै—फ.), ना. शा. स. तिन वर गिनैं (गनत—स.) । ३. मो. पुहु, शा. स. भर, शेष में 'पहु' । ४. धा. अ. फ. पच, मो. ना. शा. स. बीस ।

टिप्पणी—(१) पीर < पीड़ा । (२) वरि < वरम् । पुहु < पृथु ।

[३]

दोहरा— पंच[1] हजार ति[2] मम्भि दुइ[3] जे[4] आया वर सामि[5] । (१)
वर वज्जइ[1] वज्जइ सहइ[2] ते से पंच[3] अछ्छामि[4] ॥ (२)

अर्थ—(१) उन पाँच हजार में से दो [हजार] ऐसे थे जो स्वामी की आज्ञा का वरण करते थे; (२) और जो अपने वज्र-कर से वज्र सहन करते थे, वे (ऐसे) उनमें पाँच सौ थे।

(१) १ मो. ना. शा. स. बीस, धा. अ. फ. पंच। २. धा. अ. फ. हजारह, ना. शा. स. हजारणि। ३. धा महि जुडइ, अ. फ. मझि दुइ (दो—फ.), मो. ना शा. स. मझि (मद्धि—ना. शा. स.) दस। ४. अ. फ. ते। ५. धा. अ. फ. स्वामि (स्वामु-फ.), मो. शा. साम, ना. सांमि, स. स्वाम।

(२) १. मो. करवजि (= वजइ), धा. वार वज्जी, अ. फ. कर वज्जिय, ना. कर वज्जी, शा. वर वज्रइ, स. कर वज्रइ। २. मो. वजि (=वजइ) सहि (=सहइ), धा. वजइ सहइ, अ. फ. वज्जिय सहन (सघनु—फ.), ना. वज्रइ सहै, शा स. वज्री सहै। ३. धा. ते सौ पञ्च, मो. तेइ सइ पञ्च, अ. फ. तै से पंच, ना. शा. स ते पहु पच। ४. धा अ अछामि, मो. इथाम, फ. अनाम, शा. स. इठाम, ना. इथान।

टिप्पणी—(२) वज्ज < वज्र। स < सइ < शत।

[४]

दोहरा— तिन महिं सौ जे भयहरण[1] सील सत्त जम जित्त[2] । (१)
तिन महिं दस वारुण दलण[1] उप्पारहिं[2] गय[3] दंत ॥ (२)

अर्थ—(१) उनमें सौ ऐसे थे, जो भय का हरण करने वाले और शील और सत्य में यम को जीतने वाले थे; (२) उनमें भी दस हाथियों का संहार करने वाले थे, और वे हाथियों के दाँत उखाड़ लेते थे।

(१) १. मो. तिन मद्द सोगन दोइ गनीय, धा. अ. फ. तिन महि (मैं—फ.) सौ जे (सो—अ. फ.) भयहरन, ना. तिनमहि कवि गिन वीस सैं, शा. तिनमहि कवि गनि पंच सैं। २. धा. सील सत्त जम जित्त, मो. सोल सत्त जिन जित्त, अ. सील सत्त सम जुत्ति, फ. सील सत्त समयुत्त, ना. सीलन सत्तत जंत, शा. सीलसत्त जिन थंत।

(२) धा. तिन महिं दस वारुण दलण, अ. फ. तिन महिं (तिन मैं—फ.) दस दारुण दलन, मो. तिन मि (= मइ) दनसि (= सइं) अरि दलन, ना. शा. तिन महि (मैं—शा.) दस सैं अरि दलन। २. धा. उप्पारहि, अ. उप्पारण, फ. उप्पारनु, मो. उपारि (= उपारइ), ना. शा. जे कढ्ढैं। ३. ना. गज।

टिप्पणी—(२) वारुण < वारण। गय < गज।

[५]

दोहरा—तिनमहिं पंच प्रपंच से[1] लखिय न गति तिन काज[2] । (१)
देवगति देवान[1] सउ[*2] तिनमहिं पहु[3] प्रथिराज ॥ (२)

अर्थ—(१) उनमें भी पाँच [विधाता के] प्रपंच की भाँति ऐसे थे कि उनके कार्यों की

देखी नहीं जा सकती थी; (२) वे देवगति वाली सभा के समान थे, और उनमें (उनके बीच) प्रभु पृथ्वीराज थे।

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. धा. अ. फ. तिन महि पच प्रपच से, मो. तिनमि (=मइ) कवि गनि पच सि (सइ ?) हि, ना. शा. स. तिनमहि कवि गनि (कवि गिन–ना , फिरि गिनि–शा) पच सें (सै–ना.)। २ धा अ. फ. सखिय न (सं–फ.) गति तिन (तिन गति–अ. फ) काज, मो. ना. शा स. सांभभाप दिठउ (दृढ–ना. शा., द्रढ–स.) काज।

(२) १. मो. तिन मि (=मइ) दिवगति देवन। २. धा सु (= सउ), अ. फ सो, मो. समुह, ना. ध (=सव), शा. स. सों। ३. मो. तिनिमहि पुहु, फ. तिनमाहि।

टिप्पणी—(२) देवान < दीवान [अ.] = राजसभा। पहु < प्रभु।

[६]

दोहरा—पावस आगम धर अगम[१] दल सज्जे*[२] दुहु[३] दीन। (१)
अंबर छाइउ*[१] अम्मु* तिन[२] षिति छाही षित्रीन[३]॥ (२)

अर्थ—(१) पावस के आगमन से धरा अगम्य हो रही थी, [जब] दोनों दीनों (हिन्दू और मुसलमान) ने दल सजे। (२) आकाश में अभ्र (बादल) छा गए, [उसी प्रकार] क्षिति (पृथ्वी) को उन क्षत्रियों (योद्धाओं) ने आच्छादित कर लिया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो आगधर। २. मो. सज्जु (=सज्जयउ), धा. सज्जहि, शेष में 'सज्जे'। ३. फ. दुहौ, ना. शा. स. दोउ।

(२) १. मो. छाइ (=छाइउ), शेष 'छायो' या 'छायौ'। २. मो. मदमु (=अम्मु) तिन, धा अभ्र तिन, अ. फ. अभ्रनु, ना. अम्मयनि, शा स. अम्भरन। ३ धा अ. फ. ना छिति (छित–फ.) छायी छत्रीन (छत्रीन–अ फ., छत्रीनि–ना.), मो षिति छाहा षित्रीन, शा स खिति (छिति–स) छाई (छाइय–स.) छत्रीन।

टिप्पणी—(१) छाइ < छादय्। अम्भ < अभ्र। (२) षिति < क्षिति। षित्री < क्षत्रिय।

[७]

कवित्त—सिंधु उतरि सुलतांन[१] कहइ* पुरसान पान संउ*[२]। (१)
पां तितारि[१] रस्तमा[२] तुमिक तुम कहु सप मुक सउ*[३]। (२)
भइ[१] आलम आलम[२] सकिलि*° लिए°[३] हिंदु राइ[+] पर। (३)
जिहि हउं* गहि छंडियउ*[१] चार सत हउ*[१] अप्पउ* कर[२]। (४)
तिहिं गहन हउं* इछूछहू[१] सुमन सच[२] करतार[३] कह। (५)
मग्गहु[१] अगम्म[२] भूत[३] संग हउ*[४] धरहु लज्ज[५] लज्जहुं न मर[६]॥ (६)

अर्थ—(१) सिंधु [नद] पार करके सुलतान (शहाबुद्दीन) खुरासान खाँ से कहने लगा, "(२) तातार और रुस्तम खाँ से पूछ कर तुम मुझे बताओ; (३) मैंने आलम (दुनिया) के आलम (लोगों) को हिन्दू पति (पृथ्वीराज) के ऊपर [आक्रमण करने के लिए] धकेल लिया है (इकट्ठा किया है), (४) [उस हिन्दू पति पर आक्रमण के लिए] जिसने मुझे पकड़ कर छोड़ा, और जिसे मैंने सात बार कर अर्पित किया [अथवा जिसने मुझे सात बार पकड़कर छोड़ा, और जिसे मैंने कर अर्पित किया]। (५) उसी को पकड़ने (बंदी करने) की मैं इच्छा कर रहा हूँ, मेरा वह मनोर्थ करतार सच करे; (६) मार्ग में भी अगम्य (अत्यधिक) भृत्यों का संग्रह करो; हे भटो, तुम लज्जा धारण करना, और मुझे लज्जित न करना।"

पाठान्तर—० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द मो. में नहा है।

(१) १. धा. सुरताण, अ. फ. सुरितान। २. मो कहि (= कहइ) सुरसान पानसु (= सउ), धा. कहिउ सुरताज खान सु (= सउं), अ. फ. कह्यो सरताण खान सौ (स्यौं–फ.), ना. कह्यो पान सुरतानसह, शा. स. वत्त कहि पौ पुरसानह।

(२) १. मो. तितार, शेष में 'ततार'। २. धा. रस्तमा, शेष में 'रुस्तमा'। ३. मो. बुझि तुम कहु सच्च मुझ सु (=सउं), धा. पान मसार मान सूं, अ. गहहु सच्च मुसाफ तुम, फ. गहो सबह औसाफ तुम, ना. छुवौ साच मुसाफ कहु, शा. स. छुओ तुम साफ मुसाफह (मुसाफइ–शा.)।

(३) १. मो. मि (=मइ) धा. हू, शा. वे, शेष में 'मै'। २. शा. आमल आमल। ३. मो. सकिहि लीप, अ. फ. सकेकि हा, ना. सकिलिह हिंदु राइ पर, शा. स. सकल हिंदू राउप्पर।

(४) १. मो. जिहि हूं (=हउं) गहि छंडिउ (=छंडियउ), धा. जिहि गति छंडयौ सात, अ. फ. जिहि गहि छंड्यो सत्त, शा. स. जिहि ग्रहि छड्यौ वार, ना. जिहि गहि छड्यौ सद्ध। २. मो. वार सत हूं (=हउं) अपू (=अप्पउ) कर, धा. अ. फ. बार हूं (हौं–अ. फ.) अप्पु अप्पु (अप्पु अप्प–अ. फ.) कर, ना. बार अप्प अप्प कर, स. वेर सो आप अप्प कर, शा. वार सें आप अप्प कर।

(५) १. मो. तिहि गहन हु (=हउं) इछहु, धा. तिहि गहन हु (=हउं) ति इच्छउं सुमन, अ. फ. ता गहन हौं (हो–फ.) त अछ्छ सुमन (सुम–फ.), ना. ग. उ. स. तिहि गहन हेत इछो (इछौ–शा., इंछयौ–ना.) सुमन। २. धा. ग. फ सुमनु (सुम–फ.) सच्चु, ना. शा. स. साच सू ंठ। ३. मो. किरतार, शेष में 'करतार'।

(६) १. धा. अ मग्गहु, ना. मगहु, फ. मग्गो। २. धा. अ. फ. ना. अभंग। ३. धा. ना. अ. शा. फ. मृत, स. मत। ४. धा. संगहहु, अ. सग्रहो, फ. समग्रो, ना. शा स. सग्रहे। ५. मो. धरहुं लाज, धा. धरह लज्ज, शेष में 'धरहु लज्ज'। ६. मो. लजाह न भर, धा. भग्गो न भर, अ. फ. भजहु न भर, ना. जनि डुलहु भर, शा. स. निज डुलन भर।

टिप्पणी—(४) अप्प < अर्पय्। (६) मृत < भृत्य। भर < भट।

[८]

कवित्त—तथ‡ पांन पुरासान ततार षांन[१] रुस्तम‡ कर°‡ जोरह°‡[२]।×(१)
षान°‡[१] साहि°‡ मरदान°‡[२] षान°+[३] सु° बिहान°[४] बिछोरहि। (२)
हउं°[१] हमीर हिंदू न°[२] दीन°‡° रोजा°[३] रमजानहि[४]। (३)
पंच[१] निवाज‡[२] बिकाल[३] करि न[४] गोरी गुम्मानहि[५]। (४)

सुरतान भान चहुआन सउ[१] जउ*[२] न[३] चाल बंधिवि[४] भिरहि । (५)*
दे[१] हथ्य[२] हथ्थ दे[१] अज्जु हम[३] नहिं दुरोग[४] दोजक[५] परहि[६] ॥ (६)

अर्थ—(१) तब खुरासान खाँ, तातार खाँ और रुस्तम खाँ हाथ जोड़ [कर कह] ने लगे, "(२) शाह (शहाबुद्दीन) की आन (शपथ) है, कल सुबह हम [शत्रु-पक्ष के] मर्दों (योद्धाओं) की आन छुड़ा देंगे। (३) हे अमीर, हम हिन्दू नहीं हैं, हमारा दीन (धर्म) रोज़ा और रमज़ान [का] है; (४) हमारी पाँच नमाज़ें बेकार हों; [यदि इससे विपरीत हो]; हे गोरी, तू [हमारे संबंध में] गुमान (बुरी धारणा या संदेह) न कर। (५) सुलतान की आन (शपथ) है, यदि हम [कल] चहुआन से चाल बाँध कर न भिड़ें। (६) [तुम्हारे] हाथ में आज हम हाथ दे रहे हैं—तुमसे प्रतिज्ञा करते हैं: हम न दरोग (झूठ) [कहेंगे] और न दोज़ख (नर्क) में पड़ेंगे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण ना. में नहीं है।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।
◊ चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) धा. तबहि खान खुरसाण खान, अ. फ. ना. स. खाँ। (पुनि—ना., पुनि—स.) खुरसान ततार (ततारु—फ.) खान। २. मो. कर जोरी (= जोरइ), फ. कर जोरेहि, ना. स. जोरहि।

(२) १. फ. अन्य। २. फ. हमीदानु, ना. सुरतान। ३. खान। ४. ना. स. चहुआन। ५. धा. विछोरहि, मो. विछोरिहि, अ. फ. विछोरे, ना. विछोरहि, स. विछोरही।

(३) १. मो. हुं (= हउं), धा. अ. हा, फ. हो, ना. हं, ना. स. है। २. मो. हिंदुआन, धा. हिंदू—अ. फ. हिंदून। ३. अ. फ. रोजा। ४. धा. अ. फ. रंमानहि, ना. रोजानहि, ना. स. नहि जानहि।

(४) १. अ. फ. पंचि। २. धा. मयाजि। ३. मो. धा. बिकाज, अ. ना. स. बेकाज, फ. बिकाइ, ना. बेकाज। ४. मो. करिन, धा. अ. फ. जाइ, ना. जोन, ना. स. जाय। ५. मो. गुब मानहि, धा गुम्मानह, शेष में 'गुम्मानहि'।

(५) १. मो. चहुआन सु (= सउ), धा. चहुवान सू, अ. फ. चहुवान (चौहवान—फ.) सों, ना. चहुआन सु (=सउं)। २. मो. जु (= जउ), धा. जउ, अ. फ. जे, ना. औ, ना. स. जो। ३. फ. नु। ४. मो. बंधिय, धा. वंधवि, फ. मंधिवि, फ. वंधुवि, ना. बधव, ना. स. बंधे।

(६) १. मो. धा. ना. दे, शेष में 'दै'। २. ना स. मथ्थ। ३. मो. दे अजू हम, धा. दे आज हम, अ. फ. अजहू (अजहो—फ.) मनहि, ना. दे अप्पु मह, ना. स. सिर अज्ज हम। ४. मो. नहीं दु रोज़, धा. नहिं दुरोग, अ. जो दरोग, फ. जो दयो रोज, ना. नह दरोग, ना. स. नहि दरोग। ५. धा. दोजग। ६. मो. परिहि, शेष में 'परहि'।

टिप्पणी—(२) मरदान < मर्दां [फा०] =मर्दोंको। (३) हमीर < अमीर [अ०]। रोजा < रोजः [फा०] ।रमजान < रम्ज़ान [अ०] (४) निवाज < नमाज़ [फा०]। गुम्मान < गुमान [फा०]=शंका, संदेह। (६) दुरोग < दरोग [फा०] = झूठ। दोजक < दोज़ख़ [फा०]=नर्क।

[६]

दोहरा— *मेच्छ[१] मसूरति सत्ति[२] किय[३] धंचि[४] कुलांन[५] कुरांन[६] ।*
चीर° चिरकुवत तिहि कियउ[१] दियउ*[२] मिलांन मिलांन[३] ॥*

अर्थ—(१) म्लेच्छों (मुसलमानों) ने सच्चो मशवरत (सलाह-परामर्श) की और कुलों-सवों-ने कुरान वाँची (वाँचकर शपथ ली), (२) तयैव उन वीरों ने बातें थोड़ी कीं और फिर [कूच करके] पड़ाव पर पड़ाव किए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द सशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. मो. मछ, शेष में 'मेछ' या 'मेच्छ'। २. मो. धा. स. सस्य, शेष में 'सत्ति'। ३. धा. किय। ४. धा. विच्चि। ५. मो. कुर्आन, धा. ना. कुराण, अ. फ. कुरान, शा. उरान, स. उराम। ६. धा पुराण।

(२) १. मो. चिकुवत (=चिक्कुवत्त) तिह किघु (=कियउ), शेष में 'बीर विचार ति (त—अ. ना.) रत्त (रत्ति— धा. शा. स.) हुआ। २ मो. दीउ (= दिअउ), धा. दीह, अ. फ. दिए, ना. दीय, स. दिय। ३. धा. मिल्हाण मिल्हाण, स. मेलान मिलान।

टिप्पणी—(१) मेछ्छ < म्लेच्छ। मशूरति < मशवरत [अ०] (२) चिक < स्तोक = थोड़ी। बत्त < वार्ता। तिह < तथा।

[१०]

पध्धडी—सजि[१] चलउ*[२] साहि[३] आलमु असंभु[४]। (१)
उप्पटउ*[१] आनि[२] सायरनु अंभु[३]। (२)
जल थलति थलति जल होत दीस[१]। (३)
उनयउ*[१] मेछ्छर[२] बल अइर*[३] रीसि। (४)
बज्जहि[१] विसाल[२] घन जिम[३] निसान[४]। (५)
दामिनिय तेग[१] बर कर[२] कमान। (६)
वारुन[१] वहंत[२] मद गंध बुंद[३]। (७)
सुम्मझइ[१] न भान दिसि विदिसि[२] धुंध[३]। (८)
धुंमलिय[१] मिलिय°[२] कल[+] कलन[३] सद्द[४]। (९)
झुंमझाथि[१] झाम[२] महि माल मद्द[३]।[+×४](१०)
चक्कीय चक्क[१] सुकिवि[२] चलंति[३]। (११)
रस सरस दरस सारस[१] गिलंति[२]। (१२)
प्रतिबिंब[१] अंभ अबरन[२] तार। (१३)
भुगतइ*[१] न मुगति[२] मंजरि सिवार[३]।[४](१४)
चकित सु[+] चित्त[२] मन मित्त[२] मित्त[३]। (१५)
सर[१] उभय[२] भमिय[३] आनंद चित्त। (१६)
दप्प आदप्प[१] आलोल[२] नयन। (१७)
विसरीय[१] कोक[२] सुरमग्ग[३] बयन।[४](१८)
हसि चक्क चकिय[१] तम कहिग[२] छंद। (१९)

मनिय मान[१] यामिनिय चद[२] । (२०)
पति असंभ धर[२] गहन हिंदु[२] । (२१)
पेथउ* मल्ल[२] गोरी नरिंदु । (२२)
प्रहि[२] पंथ पट्टनइ*[२] सिध्धु[२]। (२३)
मिलि चलिग[२] अग्ग[२] आरंभ[२] गिध्धु[४]।[५] (२४)
अच्छइ*[१] सुरेश[२] पंछी[२] पुकार । (२५)
अमावसि संकमइ सन्निवार । (२६)
रवि घरहि[२] राहु अरु[२] केत[२] गत्ति । (२७)
जानियइ* चदु समहन मत्ति[२]॥[२] (२८)

अर्थ—(१) शाहे आलम (दुनिया का बादशाह) [शहाबुद्दीन] अपूर्व रूप से [सेनादि] सज कर चला; (२) [ऐसा ज्ञात हुआ] मानो [सातो] सागरों का जल उमड़ पड़ा हो। (३) जल स्थल और स्थल जल होते दीख पड़े, (४) म्लेच्छ सेना वैर और रिस (क्रोध) पूर्वक उन्नमित हो पड़ी। (५) विशाल धौंसे बादलों के जैसे बज रहे थे। (६) तेग (तलवारें) दामिनी तथा हाथ में ली हुई कमानें [इंद्र-धनुष के समान] थीं। (७) वारण (हाथी) मद युक्त मद की बूँदें बहा रहे थे। (८) भानु दिशाओं विदिशाओं के धुँधली पड़ने के कारण सूझ नहीं रहा था। (९) उस धुँधलेपन में [सेना का] कोलाहल का शब्द मिल रहा था। (१०) मर्दित होकर मही पर बाग-बगीचे मुरझा और झुलस गए थे। (११) [अँधेरा होने के कारण रात्रि का आगमन समझ कर] चकवी और चकवा एक दूसरे से छूट (बिछुड़) रहे थे, (१२) और [पारस्परिक] दर्शन के सरस रस में [सिक्त होकर] सारस-युग्म मिल रहे थे। (१३) अबर (आकाश) के तारागणों का प्रतिबिम्ब [सरोवरादि के] अम (जल) में पड़ने लगा था, (१४) यद्यपि वह [किंचित् प्रकाश के कारण] शैवाल-मंजरी से मुक्ति का भोग नहीं कर पा रहा था (उनके प्रतिबिंबों के साथ साथ शैवाल-मंजरी भी दिखाई पड़ रही थी)। (१५) [किंतु] पुन: मित्र (चकवे) के मित्र (सूर्य) [के दर्शन] से चकवी मन में सुचित्त हो रही थी (१६) और दोनों (चकवा-चकवी) आनंदयुक्त चित्त से सरोवर [के किनारे] पर भ्रमण कर रहे थे। (१७) कोक (चकवे) के नेत्र दर्प से आदर्प [किन्तु] चपल हो रहे थे, (१८) उसका [अपने] स्वर-मार्ग का (सुरीला) बोल विस्मृत हो रहा था। (१९) हँसकर चकवे ने चकवी से यह छद कहा, (२०) "हे मानिनी, सूर्य मानो यामिनी का चन्द्र हो रहा है, [इसलिए हम आज उस यामिनी का सुख क्यों न उठाएँ जो हमें अप्राप्य रहता है ?] (२१) [यह अपूर्व अवसर तो हमें इसलिए प्राप्त हो रहा है कि] धरा पर के असंभ (अपूर्व) हिंदु अश्वपति [पृथ्वीराज] को पकड़ने के लिए (२२) मल्ल (योद्धा) गोरी बादशाह (शहाबुद्दीन) कुपित हुआ है।" (२३) पत्तन (दिल्ली) की सीध (दिशा) के पथ प्रज्वलित हो रहे हैं, (२४) होने वाले आरम (मुठभेड़) के आगे ही (पहले ही) गिद्ध-गण मिल (जुट) कर चलने लगे हैं। (२५) पक्षी [परस्पर] पुकार रहे हैं कि "रजनी [हो गई] है, (२६) [अथवा] शनि के द्वार पर अमावास्या ने संक्रमण किया है, (२७) अथवा रवि के घर में राहु और केतु का गमन हुआ है, (२८) अथवा इसे चद्रमा के संग्रहण की मति (युक्ति) जानिए।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
 • चिह्नित शब्द मो में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द या चरण फ. में नहीं है।

× चिह्नित चरण अ. में नहीं है।

(१) १. अ. फ. सहि। २. मो. चल्लु (=चलउ), धा. चल्यो, ना. चढ्यौ, शेष में 'चल्यौ' या 'चल्यौ'। ३. धा. मही। ४. फ. संभ।

(२) १. मो. उप्पटु (=उप्पटउ), धा. अ. फ. उप्पटिय, ना. स. शा. उप्पट्यौ। २. धा. जानु। ३. मो. सयरनु अंभ, अ. साइरनि अभ, फ. साइर असंभ।

(३) १. फ. जलति थल होति दीस, ना. थल जल होत दीस, शा. स. थलति सेना सुदीस।

(४) १. मो. उनयु (=उन्नयउ), धा. उट्ठिय, अ. फ. उन्नय, ना. स. शा. उनयो। २. अ. फ. मेघ। ३. मो. विरख, शेष में 'बैर' या 'वयर'।

(५) १. मो. शा. स. वाजहि, शेष में 'बज्जहि'। २. शा. दिमान, स. निसान। ३. धा. त्रिभि। ४. स. दिसान।

(६) १. धा. तेज, अ. तेक, फ. ते। २. धा. सम बवख, अ. फ. ना. बरवर, स. बरबक।

(७) १. मो.-वारुणीय, धा. अ. फ. वारुणि, ना. वारण। २. धा. फ बहंति, शेष में 'वहत'। ३. मो. गंध बंधु, धा. गंध लुंध, अ. गध बंध, फ. गधु अंधु, ना. स. सुद गंध, शा. गंध सुंद।

(८) १. मो. झुझि (=झुझइ), अ. फ. झुझइ, शेष में 'झुझ्झे'। २. ना. विदिश। ३. मो. सिंधु, शा. दुंद, शेष में 'धुंध'।

(९) १. मो. फ. धुंमकिय, शेष में 'धुम्मिलिय'। २. धा. मलत, फ. धुमलिय। ३. धा. कलमलित, अ. कलकलय, फ.-कलय, ना. कक्कननि, स. शा. कलमनिग। ४. शा. स. संद।

(१०) १. धा. झझुझकिथि, ना. स. शा. झंतलिग। २. धा. डास, ना. शा. स. सूर। ३. धा. महि माल मद, मो. हिमराल मंद, ना. महिमाल मंद, शा. स. सुह सुरिग मंद। ४. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है: रिधि राय (रघुरहि—ना.) धरिणि (धरणि—ना.) संचरि (सचरहि—ना.) सानि।

सुनिये न सवन ते (सह—ना.) दूरि (दुरिग—ना.) कांन।

(तुल० प्रथम अतिरिक्त चरण की आगे आए हुए चरण २५ से)।

(११) १. धा. चक्कीय चहूं, फ. चक्कीत चक्कि। २. मो. ना. शा. स. मुकलि, शेष में 'मुक्किवि'। ३. शा. स. फ़लंत, अ. फ. ना. चलंत।

(१२) १. मो. सरिस, शेष में 'सारस'। २. अ. फ. ना. शा. स. मिलंत।

(१३) १. शा. प्रतिम्बंव। २. मो. अंम अतरन, धा. अंम अबरन, अ. फ. ना. अंब अंबरनि (अंबरिति—फ., अंबरणि—ना.)।

(१४) १. धा. भुमतो (<भुगति=भुगतइ), मो. भुगते (<भुगति=भुगतइ), शेष में 'भुगतै'। २. धा. मुक्ति, मो. भुगति, शेष मे 'मुकति'। ३. फ. मजसि सिंचारि। ४. ना. शा. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

झुंकार झुनति गाजहि निरंग। दस दिग्ग धरा पूरे सगंग।

(१५) १. मो. चकिन चित, धा. चक्रनु सुचित्त, फ. चकित चित्त, शेष में 'चकित सुचित्त'। २. धा. मातंगि, फ. भिंगि। ३. धा. मत्त।

(१६) १. मो. शर, शेष में 'रस'। २. धा. अमय। ३. अ. भ्रमिये, फ. भ्रमियौ, शा. स. भ्रम्म।

(१७) १. धा. अ. फ दर्पक अदर्प, ना. दर्प आदर्प, शा. स. दीपैः अदप्प। २. मो. आकोय, शेष में 'आकोल'।

(१८) १. ना. विरसरिय, अ. बिसरियै। २. फ. को। ३. मो. सुमग्ग, धा. सुरगान, फ. सुरवैन, अ. सुरगैन, ना. सुगमग्ग, शा. स. सुरमग्ग। ४. धा. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है:

निद्दरिय डाल दरदरिय कोक। संचिय सुसाल संभरिय लोक (सर मरिय लोक—धा.)।

(१९) १. धा. चक्किम चक्कवि, मो. चरक चकिय, अ. फ. चक्क चक्क, ना. चरक चक्कि, शा. स. चरक चकी। २. मो. सम कहिग, धा. सुक्कतिग, अ. सुकहिग, फ. सुछहि, ना. सुं कहिग, शा. स. सौं कहिग। ३. फ. नरिंद।

(२०) १. अ. फ. ना. जानि। २. मो. यामिनिय चंद, धा. जामिनितु चंद, अ. फ. जामिनि (जामिनु—फ.) अनंद।

(२१) १. मो. असम्भर, असंभु भर, अ. अंहुम धर, फ. अंहु भर, शा. स. असंम धर। २. धा. अ. फ. गहन हिंदु, मो. गहिनो हिंदु, ना. गह नरिन्द, स. गहन हिन्द।

(२२) १. मो. कोपीतु (=कोपियउ) मत्त, धा. कोपिय कमाल, अ. फ. कुप्यौ (कुप्यो—फ.) सुजानि (सुजोनि—फ.), शा. स. कोप्यौ कमाल, ना. कोप्यौ सुकमल।

(२३) १. धा. प्रक्षालहि। २. मो. पट्टनि (= पट्टनइ), धा. अ. स. पट्टननि, फ. पटनन, शा. पट्टननि, ना. पट्टनि। ३. धा. मिद्धि, मो. सिधु, अ. फ. ना. सिद्ध, शा. स. सिध।

(२४) १. अ. फ. चल्लहि। २. ना. शा. संग, स. सिगि। ३. मो. अरंभ, ना. आरंभ, शेष में 'आरम'। ४. धा. गिद्धि, शेष में 'गिध्य' या 'गिध्धु'। ५. मो. धा. ना. शा. स. में यहाँ और है:—

दिय दिवस साल एक करहि फेर (बार फिक्करहि फेर—धा.)।
जोगनि अनंद अच्छरिय (जुग्गनि अनंद अच्छर—धा.) सुमेर।
बहु पक्क (कुहि कलि—धा.) किसान बिसतरहि वीर।
तप्फरइ (तप्फरहि—धा.) मीन धर गहन नीर।

(२५) १. मो. अछि (= अजइ), धा. अ. फ. अच्छी, ना. अग्गे, शा. अगि, स. अग्गें। २. मो. रेणु, ना. रमण। ३. धा. पच्छहि, फ. पंथी, ना. शा. स. पछ्छे।

(२६) १. धा. शा. स. मावसिअ संकवणु (संक्रमन—शा. स.) सनिवार, मो. अमावसि संक्रमइ सिनवार, अ. फ. माव सनु संक्रमन (संक्रमन—फ.) सनिवार (मचि वार—फ.), ना. माव रम सक्रान सनिवार।

(२७) १. धा. मो. फ. धरहि, शेष में 'धरइ'। २. अ. अन, फ. अनि। ३. फ. केहि।

(२८) १. धा. जानिय न चंद ग्रह ग्रहण मत्ति, मो. जानीइ (=जानियइ) न चंद संग्रहन मत्ति, ना. शा. स. जानी न चंद ग्रह ग्रहन मत्ति (मत्ति—ना., मत्त—शा.), अ. फ. जानें सु (सु—फ.) चंद ग्रह गहनि (ग्रहनि—फ.) मत्ति (मत्त—फ.)। २. मो. ना. में यहाँ और है:—

उच्चरै चंद बर भरम (भर भरन—मो.) कान।
रप्पहुत (रायीद्—मो.) आप (आप—मो.) प्रिथिराज राज।

टिप्पणी—(१) असभु < असभूत (?)। (२) उप्पट < उत्+पत्। अंमु < अम्भस्। (४) मेछ < म्लेच्छ (७) वारन < वारण। (९) सद < शब्द। (१०) मुंझलिय [दे०] = मुर्झाए हुए। दाम [दे०] = दग्ध। माल [दे०] = आराम, बाग। मद < मृद् = मसलना। (११) ढुक्क < ढुक्। (१४) मुगति < मुक्ति। सिवार < शैवाल। (१५) मित्त < मित्र। मित्त < मित्र = सूर्य। (१६) भम < भ्रम्। (१७) दप्प < दर्प। आदप्प < आदर्प। (१८) सुर मग्ग < स्वर्-मार्ग। वयन < वचन। (२१) अमराति < अमरपति। असंभ < असंभूत (?)। भर < भरा। (२४) मग्ग < मग्न। (२५) रैण < रजनी। पंछी < पक्षिन्।

[११]

दोहरा—दरसइ*[१] दनु वहज विषम लागुड* लगि[१] निसान[१]। (१)
मिले पुब्ब[२] पच्छिम[२] हुति[३] पातिसाह चहुआन[४]॥ (२)

अर्थ—(१) [दोनों] दल विषम बादलों के समान [अथवा दोनों विषम दल—बादल]

दिखाई पड़े, और घोड़ों पर लकड़ी लगी; (२) पूर्व और पश्चिम से पातशाह (शहाबुद्दीन) तथा चहुआन (पृथ्वीराज) [के दल] मिले।

पाठान्तर—• चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. दरसि (=दरसइ), धा. दरम, अ. फ. दोऊ, ना. शा. स. दरसे। २. मो. राग लउ लगि, धा. राग लाग अलि, अ. फ. लागस (लागुर–फ.) लाग, ना. शा. स. रागर लाग (लाग–शा.)। ३. फ. तिसानु।

(२) १. मो. पूरब, शेष में 'पुब्ब'। २. शा. पच्छिम। ३. मो. हुति, धा. हुती (< हुति), अ. फ. ना. हुते, स. हते। ४. मो. पातिसाह चहुआन, शेष में 'चहुआन सुरताण' (अथवा–'सुरतान')।

टिप्पणी—(१) दरस < दर्शय्। बद्दल < [दे० वार्दल]=बादल। लागुर < लकुट = लकड़ी। (२) पुब्ब < पूर्व। पातिसाह < पादशाह (फा०)।

[१२]

भुजंग— *मिले जाय[१] चहुआन सुरताण[२] धग्गे[३]। (१)*
मनउ[१] धारुणी धकि पे धार[२] लग्गे[३]। (२)*
उठे हंकि हंकार[२] कहंकूह[३] फालं। (३)
जुरे[१] जोध जोधा[२] तुटे[३] ताल[४] तालं। (४)
बढे सो धोजग्गी*[१] घनी[२] धार धारं। (५)*
भयी[१] सेन दुम्मइ[२] दुहु मार मारं[३]। (६)*
मिले सहर सउं पहर जुरे जंग तेगं[१]।[२] (७)*
भयी सेन मिल्ले[१] घनी एक मेगं[२]।[३] (८)
छुटे[१] धान चहुआन आवध्ध राजं[२]। (९)
लगे मेघ अंगं[१] मनउ*[२] पउन बाजं[३]। (१०)*
तुटे संग संनाह के[१] अंग[२] अंगं। (११)
उठे स्रोन छिछे[१] जुरे जान[२] दंगं।[३] (१२)*
चढे[१] वीर नंदीस सूली[२] अनंदी। (१३)*
नचइं[१] भूत[२] भइरव[३] बकइं*[४] जान[५] बंदी[६]।[७] (१४)*
चबइं[१] स्रोन संगं[२] किलिधार छुट्टे*[३]। (१५)*
महे मेघ भग्गे[१] जुरे[२] सूर छुट्टे[३]। (१६)*
भिरे[१] जांम दोइ[२] जुध्ध[३] हींदू हमीरं[४]।×‡ (१७)*
परे[१] पंच पंचास चामंड[२] वीरं।×‡ (१८)*
[१]परे×‡ धाइ×‡ चालुक×‡ [१]ते×‡ साहि[२]×‡ दूने[३]। (१९)
जुरे[१] गोरिआ सव्व भये जात[२] सूने[३]। (२०)*
परे सहस छ सूर[१] कूरंम धाला[२]।[३] (२१)

परे पीचिमा पग्ग पेलै सुखाला[१] ।° [२](२२)
परइ* जइत* पंमार[१] श्रब्बू सु राया[२] ।×‡ (२३)
करी श्रप्प[१] चहुश्रान° प्रथिराज[२] छाया[१०] ।×‡ (२४)
परे पांच सै पांच[१] चहुश्रांन चढ्ढे[२] ।×‡ (२५)
रहे सात घर सात[१] प्रथिराज ठढ्ढे[२] ।×‡ (२६)
परे सहस सोरह सह[१] सेन गोरी ।° (२७)
रहे जानि हिंदू तुरक खेलि[१] होरी । (२८)
भिरे[१] देव° दानव्व° जिम° वैर*°[२] चीतउ*[३] । (२९)
मुरे[१] सेन चहुश्रांन सुरतान जित्तउ*[२] ॥[१](३०)

अर्थ—(१) चहुमान (पृथ्वीराज) और सुल्तान (शहाबुद्दीन) [के दल] खड्ग युक्त होकर [इस प्रकार] जा मिले, (२) मानो वारुणी (मदिरा) में छककर दो समूह या यूथ लग (भिड़) रहे हों। (३) उस कुहराम के काल में वे हाँकें लगा उठे; (४) योद्धा से योद्धा भिड़ गए और उनका ललकारना और ताल ठोकना छूटने (समाप्त होने) लगे। (५) श्रोलगि (सेवक—भृत्य) आगे बढ़े और धार से धार बजने लगी। (६) सेनाएँ दुर्मति हो उठीं और दोनों में मारा-मारी होने लगी। (७) सुभट प्रहार करते हुए [परस्पर] मिले और जंग (युद्ध) में तेग जुड़ (टकरा) गए, (८) सेनाओं के मिलने से अनीकें एकमेक हो गईं। (९) चहुआन (पृथ्वीराज) के बाण छूटे, जो आयुध-राज थे; (१०) वे म्लेच्छों के अंगों में [इस प्रकार] लग रहे थे मानो वज्र चल रहे हों। (११) सन्नाह के संग उनके अंग (शरीर) [अतः] टूट रहे थे, (१२) और उनसे शोणित के छींटे [ऐसे] उड़ रहे थे, मानो द्रंग (बड़ा नगर) जल रहा हो। (१३) शूली (महादेव) वीर नन्दी पर आनन्द युक्त होकर चढ़े; (१४) [उनके साथ] भूत नाच रहे थे और भैरव इस प्रकार बक रहे थे जैसे बन्दी (भाँट) हों। (१५) [योद्धाओं के शरीरों से] शोणित चू रहा था, और वे (भूतादि) किलकार के संग उसे घूँट रहे थे; (१६) म्लेच्छ (मुसलमान) [अपने] घरों को भागने लगे, और जो शूर एकत्रित हुए थे वे छिटकने लगे। (१७) दो प्रहर तक हिन्दू और अमीर (पृथ्वीराज तथा शहाबुद्दीन के सैनिक) भिड़े, (१८) [इस युद्ध में] पाँच पचास (ढाई सौ) वामंड वीर खेत रहे। (१९) चाव (उत्साह) पूर्वक लड़ते हुए साठ के दूने (एक सौ बीस) बालुक्य योद्धा गिरे। (२०) वे [कटकर] शून्य हुए जा रहे थे, जब कि वे मुड़ (लौट) पड़े और [उन्होंने शत्रुओं को] मोड़ (पिछड़ा) दिया। (२१) बाल (तरुण) कूरंभ शूर छः हजार गिरे, और (२२) खीची [शूर] गिरे जो सुख से खड्ग खेलते थे। (२३) जैत पँवार गिरा, जो आबू राज था, (२४) [और उसके गिरने पर] आप पृथ्वीराज चहुआन ने [उस पर] छाया की। (२५) पचीस सौ चहुआन गिरे, जो चढ़े (युद्ध में सम्मिलित हुए) थे; (२६) [केवल] सात और सात (चौदह) [सौ ?] योद्धा और पृथ्वीराज खड़े रहे। (२७) गोरी (शहाबुद्दीन) के सोलह सहस्र सैनिक गिरे। (२८) [ऐसा लगा] मानो हिन्दुओं और तुर्कों ने होली खेली हो, [अथवा] जैसे देवों और दानवों ने [प्राचीन] वैर का स्मरण कर युद्ध किया हो। (३०) चहुआन (पृथ्वीराज) की सेना मुड़ गई—लौट पड़ी—और सुल्तान (शहाबुद्दीन) विजयी हुआ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित चरण या शब्द ना. में नहीं है।

ते सोन छुट्टै, अ. फ. ना. ते सोनधुंटे (घुंटे—फ.), शा. स. किलकंत छुटे ।

(१६) १. मो. गहे मेछ मगे, धा. भिदे सोह मग्गा, अ. फ. मडै मोह मग्गा, ना. मते मेछ मग्गे, शा. स. मड मेछ लागे। २. अ. फ जनो, ना. शा. स. जुरे। ३. मो. छुट्टि (=छूटे), धा. छुट्टे, अ. ना. छुट्टै, फ. छुटै ।

(१७) १. मो. मरि (=भरे), धा. ना. भिरे, शा. स. भिरे। २. मो. दोइ, धा दुइ, शा स. दुअ। ३. मो. सुर (=सु-र), ना. सु। ४. मो. हींदू हमीर, धा. गासुध्य मार, शा. स. हिंदू सुमीर।

(१८) १. मो. परि (=परे), धा. ना. परे, स. परें, शेष में 'परें'। २. शा. स. चावंड। ३. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है (मो. पाठ):—

> परे दाहिया बागरो हाक दूने। परे देवरा दून दून वषान (जोह ते दून ऊने—ना. शा. स.)।
> परे सापुला सज्ज भट्टी सुराने। परे हस माल्हन मिल्ले सथाने।
> परे राय राठुर रनभूमि दूरे। मनु सार संसार सनमंध तोरे।

(१९) १. अ. फ. में इसके पूर्व है (अ. पाठ है):—

> परे मेछ पुंडीर मिलिया सुमारे। गडे गात गोरी जरे हिंदु गोरे।

२. धा. मिने नूप साहूप मालिन, शेष में 'परे भाइ चालुक (चालुक—मो) ते मार (साठि—मो.)'। अ. फ. में यह पूरी शब्दावली छूटी हुई है, और धा. में भरती की और निरर्थक है। ३. धा. अ. फ. दूने, शेष में 'ऊने'।

(२०) १. ना. परे। २. मो. भये जस (< जात ?), धा. ना. शा. स. भए जाति, अ. भइ जाति, फ. भइ जानि। ३ धा. सुने।

(२१) १. मो. ना. शा. स. सहस छ (छोह—ना. पट—शा. स.) सूर, धा. साहसी हुर (< हुर) जाति, अ. फ. सहस सें दून। २. मो. शा. स. बाला, ना. वाली, धा. अ. फ. वाले। ३. धा. ना. शा. स. में यहाँ और है:—परे मज्ज सिंदूक (मज्झ सिंदूष—धा.) ते ढाल (ये दो शब्द धा. में नहीं हैं) ढाला (ताले—धा.)।

(२२) मो. ना. शा. स. परे पाँचौआ पग्ग पेक्के सुकाला, (सुकाले—ना, सुपाला—शा. स.), अ. फ लरे जध्य जग झुंड सडे विहाले। २. मो. ना. शा. स. मे यहाँ और है (मो. पाठ):—परे राय चदेल पंडीर माला। सहइ मीर रण रग रण तग लाला। ना. शा. स. में यहाँ और है (स पाठ):—चले मद्ध हस खुल्ले मुक्ति माला।

(२३) १. मो. ना परे (< परि=परइ), शा. स. परें। जित (=जइत) (जैत—ना. शा. स. पमार), धा. पर्‌यौ जेतु पावार। २. मो. अब्बू सु रायर, धा. आबू सु राऊ, ना. अब्बू स राया, शा. स. आबू सु राया।

(२४) १. मो. शा. स. क्ष्प्र, धा. ना. दौरि। २. ना. पृथिराज आयौ। ३. यह दर्शनीय है कि यद्यपि यह अर्द्धाली अ. फ. में नहीं है, इसी भाव का निम्नलिखित दोहा अ. फ ना. शा. स. में है:—
पर्‌यौ राउ जैतह सरण पति अब्बू धन धार। सूर राज सोमेस सुत धरी अप्प सिर ढार ॥ (स. ६६.१२४५)
धा. ना. में यहाँ पर और है: भिरे दौरि भट बीर पुंडीर मारो। परे सहस दुइ पेत हज्जार धारो। इनमें से प्रथम चरण धा. में नहीं है, दूसरा उसमें भी है।

(२५) १. धा. अ. फ. स. पंच सें पच, ना. पाँच सें पाँच। २. ना. बड्डे।

(२६) १. मो. सात सर सात, धा. सत्त भर सत्त, ना. सत्त सामन्त, अ. सत सर सत्त। २. धा. बड्डे, ना. कड्डे।

(२७) मो. सहस पंचीस सह, अ. फ सहस सोरह सवै, ना. सहस पचास सव, शा. स. सहस पच्चीस सव।

(२८) १ मो. रहे हिंदू आ तुरक पेलत, ना. स. रहे मनो (मनु—ना.) हिंदू तुरक खेलि।

(२९) १. मो. मरे, शेष में 'भिरे'। २. मो. विर (= वैर)। ३. मो. चीतु (= चीतउ), धा. चीत्यो, ना. शा. स. चित्यो, शेष में 'चीत्यो'।

(३०) १. मो. मुरे, धा. मुरयो, शेष में 'मुरयौ'। २. मो. जितु (= जितउ), ना. जित्यौ शेष में

'गौरयो'। ३. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है (मो. पाठ) :—

मले पांन सुरतान रणभूमि पेषु। तिहाँ एक देवार सम देव देषु।

धा. ना. शा. स. में यहाँ और भी है—परी लच्छ (लच्छि—धा. लछि—ना. शा. स.) अगणित्त जानु म (जानौं न—ना) सख्या। रयी (रहे—ना.) जानु नागेन्द्र (जोगेन्द्र—ना.) सामुह (मुष—ना) दख्या। [किंतु चरण २७ में 'सहस सोलह' या 'सहस पच्चीस' की संख्या दी हुई है]

टिप्पणी—(१) खग्ग < खड्ग। (२) वे < द्वय। थार = समूह, यूथ। (४) लाल = ललकार। ताल = तालो (ताल ठोंकना)। (५) ओलगी < ओलग्गि < अवलागिन् = सेवक, भृत्य। (६) दुम्मइ < दुर्मति। (७) सहर < सुहर < सुभट। पहर < प्रहार। (८) एकमेग < एकैक। (९) आवध्य < आयुध। वाज् > मज् = गमन करना। (१२) श्रोन < शोणित। जुर < ज्वलय्। दंग < द्रङ्ग = महानगर। (१७) हमीर < अमीर [अ०]। (१४) अप्प < आत्म। (२७) सह = समस्त।

[१३]

दोहरा— देषउ*[१] देवर[२] सम दयतु[३] रनि ठढ्ढउ*[४] चहुआन[५]। (१)
फिरि*[१] घेरो[२] गोरो[३] सयन जिम* नक्खत्तनु*[४] भान[५]॥ (२)

अर्थ—(१) [उस समय] पृथ्वीराज को [गोरी के सैनिकों ने] इस प्रकार [रणक्षेत्र में खड़ा] देखा जैसे दैत्यों ने देवल (देवमूर्त्ति) को देख लिया हो; (२) फिर तो उसे गोरी की सेना ने इस प्रकार घेर लिया जैसे नक्षत्रों ने भानु (सूर्य) को घेर लिया हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. देषु (= देषउ), धा. अ. फ. दिष्यो, ना. शा. स. देष्यौ। २ अ. देवल, फ. देउल। ३. स. समदयत। ४. मो. न. ठढु (= ठढउ), धा. अ. रण ठढ्ढौ फ रनि ठढ्ढौ, ना. रन ठढ्यो, स. रन ठढ्ठौ। ५. धा. फ. चहुआनु।

(२) १. मो. पेरि (< फिरि), धा. अ. शा. स. फिरि, फ. फिरु। २. मो. घेरो, शेष में 'घेरयो'। ३. धा. गोरिय, शेष में 'गोरी'। ४ मो. जि (< जिम ?), नक्षत्रहि (= नक्खत्तहि), शेष में 'मनहु (मनोह—फ.) नछत्रनि (नछत्रनु—धा., छत्रनि—फ, नछत्रिनि—ना. नछत्रन—स.)। ५. धा. भानु।

टिप्पणी—(१) देवर < देवल = देव प्रकृति का मनुष्य। कई पौराणिक व्यक्तियों का यह नाम भी मिलता है। दयत < दैत्य। (२) सयन < सेना।

[१४]

दोहरा— कहहि[१] मेच्छ[२] मुह[३] अग्गरे रे कुफार[४] फरजंद। (१)
बांह पांन षुरसांन की[१] सिंगनि[२] डारि[३] नरिंद[४]॥ (२)

अर्थ—(१) म्लेच्छ [पृथ्वीराज के] मुख के आगे कह रहे थे, "रे काफिरों के पुत्र! (२) रे राजा, तू [अब] खुरासान खाँ की बाँह में [अपनी] सिंगिनी (सींग का बना धनुष) डाल दे।"

पाठान्तर—(१) धा. कहिहि, मो. कहहि, शेष में 'कहै'। २. अ फ. मुरछ, शेष में 'मेछ'।

१. ना. सुप। मो. धा. स. काफर (कफर-ना.), धा. अ. फ. कुफार (कुपार-धा.), ना. में कफर।

(२) १. ना. सुरतान कुं। २. धा. सिंगणि, मो. सिंगनि, अ. सिंगिनि, फ. संगुनि, ना. संगनि, शा. सिंगन। ३. मो. टारि, ना. अप, शेष में 'अप्पि' (अप्फि-धा.)। ४. मो. नरेन्द (< नरिंद), शेष में 'नरिंद'।

टिप्पणी—(१) अग्गर < अग्र। कुफार < कुफ्फार ('काफ़िर' [अ०] का बहुवचन)। फरजंद [फा०] = पुत्र, संतान।

[१५]

दोहरा—सहज*[१] न बोल समुहु हन्यउ*[२] बान[३] षांन पुरासान। (१)
दुहु दुज्जन पूजिय घरी[१] दिन पलटउ*[२] चहुआन॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने] उसका बोल न सहा और खुरासान खाँ को उसने सम्मुख ही बाण मारा, (२) दुःख और दुर्जन (शत्रु) की घड़ी पूरी हो आई, और चहुआन (पृथ्वीराज) के दिन पलट (बदल) गए।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सहु (=सहउ), धा. सह्यो, अ. फ. सहि, ना. शा. स. सह्यौ। २. मो. हन्यु (=हन्यउ), ना. हयो, शेष में 'हन्यो' या 'हन्यौ'। ३. शा. स. बांह।

(२) १. मो. दुहु दुज्जन (< दुजन) पूजीय, धा. दुहं दुज्जी दुज्जी घरी, अ. फ. दुहु दुजी पुजी (दुजी पुजी-फ.) घरी, ना. शा. स. इह (यह-ना.) अपुब्ब सजोगि (संजोग-शा.) सुनि। २. मो. पलट (< पलटु=पलटउ), धा. पलट्यो, शेष में 'पलट्यो' या 'पलट्यौ'।

टिप्पणी—(१) समुहु < संमुख। (२) दुह < दुःख।

[१६]

दोहरा—दिन पलटउ*[१] पलटउ*[२] न मनु भुज वाहत सम शस्त्र। (१)
भरि भिटइ*[१] मिट्यउ*[२] न कोइ[३] लपउ* विधाता[४] पत्र॥ (२)

अर्थ—(१) उसके दिन तो परिवर्तित हो गए, किन्तु मन नहीं परिवर्तित हुआ, उसकी भुजाएँ [अब भी] समस्त शस्त्र चला रही थीं, (२) शत्रु से भेंट—भिड़ने—में भी किसी ने विधाता के पत्र के लेखों को [कभी] वेष्टित नहीं किया है—ढँका नहीं है।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. पलटु (=पलटउ), धा. पलट्यो, अ. पलटव, फ. पलट्टु, ना. स. पलट्यो, शा. पलटे। २. मो. पलटु (=पलटउ), धा. ना. शा. स. पलट्यो, अ. पलट्यो, फ. लट्यो। ३. धा. शा. स. बाहे, अ. फ. ना. बाहे।

(२) १. मो. भिटि (=भिटइ), धा. भिट्यो, ना. भिट्टत, शा. स. भिटन, शेष में 'भिट्यौ'। २. मो. मीट्यु (=मीट्यउ < विट्यउ ?), धा. ना. शा. स. मिट्टं, अ. फ. मिटे। ३. मो. न कोइ, धा. न को, अ. फ. कवनु। ४. मो. लषु (=लषउ) विधाता, धा. अ. फ. लख्यो (लिख्यो-अ. फ.) सु धात्र, ना. शा. स.

किम्यौ बिनाता।

टिप्पणी—(२) बिट < वेष्ट्।

[१७]

श्लोक— विधात्रा[१] लिखित[२] यस्य न त[३] मुंचति[४] मानवा[५]। (१)
म्लेच्छं मूर्धं हस्ते[१] साहनं दिल्लीश्वर[२] ॥ (२)

अर्थ—(१) विधाता का जो कुछ लिखा होता है, उससे मानव मुक्त नहीं हो सकता है; (२) [देखो,] म्लेच्छ सरदार के हाथ में दिल्लीश्वर (पृथ्वीराज) साधन हुआ।

पाठान्तर—(१) १. मो. पत्रहि, धा. अ फ विधात्रा, ना शा स विधाता। २. मो. लक्षतं, शेष में 'लिखित'। ३ धा तेन, ना ते, शेष में 'त'। ४. धा मुच्यति, मा मुन्चति, शेष में 'मुंचति'। ५. मो. मानव, धा मानवा।

(२) १. मो. म्लेच्छ मुर्धं हस्तीय, धा म्लेच्छ मूर्धं हस्त च, फ म्लेच्छ मूर्खेन हस्तेन, ना. म्लेच्छानां मूर्धं हस्त, शा स. म्लेच्छानां बधन हस्ते। २. मो स हन दिल्लीश्वर, धा साहन दिल्लिय सर, अ फ ग्रहण पृथिवी (पृथ्वी) पते, शा साहान दिल्लीश्वर, शा. स सुविहान दिल्लेश्वरः।

टिप्पणी—(२) साहन < साधन।

[१८]

कवित—जिहि करवर°[१] ग्ररि जाहिं[२] जरउ*[३] फरु खिय[४] तेह[५] कढ़ित[६]। (१)
जिहि सकति[१] मुहु[२] सकति सकति पषित°[३] सक°[४] छंडित°[५]। (२)
जिहि बानावलि[१] बान[२] प्राण कपइ*[३] मद[४] सिंधुर[५]। (३)
तिहि[१] मद[२] सिंधुर सुंड दंड[३] सिर[४] छत्र नृपति[५] पर। (४)
जिहि मुह[१] साह×[२] समुहउ*[३] सहि न तिहि मुह+जपइ*[४] गहु[५] गहन[६]। (५)
प्रथिराज देव दूवन[१] गहउ*[२] रे छत्रिय[३] कर पग गहु न[४] ॥ (६)

अर्थ—(१) जिस श्रेष्ठ कर से शत्रु जर जाते थे, वह कर उसी प्रकार शत्रु को [देश से] निकालने में जल गया; जिसकी शक्ति मुख (आदेशों) की शक्ति थी, [जिसके द्वारा वह जिसे चाहता] खींच (पकड़) या छोड़ सकता था, (३) जिसकी बाणावली के बाणों से मद-मत्त सिंधुरों के प्राण काँपते थे, (४) और इसी से मद मत्त सिंधुर अपने शुण्ड दण्ड में उस राजा के सिर पर छत्र धारण करते थे, (५) जिसके मुख को शाह (शहाबुद्दीन) सम्मुख सहन नहीं कर सकता था, उसी के लिए अपने मुख से [शाह] 'गहन रूप से पकड़ो' कह रहा है। (६) पृथ्वीराज देव को दुर्जन ने पकड़ लिया। हे क्षत्रियो, [अब] हाथ में तलवार न पकड़ो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के है।
° चिह्नित शब्द मो में नहीं है।
× चिह्नित शब्द ना में नहीं है।

+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. करि, फ. करवरि, अ. करिवर, शेष में 'करवर'। २. मो. अरि गरिहि, ना. अरि झरहि, शेष में 'अरि जरहि'। ३. मो. जर (=जरउ), धा. जरिउ, अ. फ. जन्यो, ना. जरव, शेष में 'जर्‍यो'। ४. मो. कर णिय, धा. कव निय, अ. फ. निय करि, ना. करणी, शा. स. तिस कर। ५. मो. सेह, धा. अ. शा. स. तिहि, फ. जहु, ना. कर। ६. मो. फ. कदिन, धा. कर, अ. शा. वट्टव, ना. स. वट्टति।

(२) १. शा. स. सकति। २. मो. मुड़, शेष में 'मुष'। ३. शा. स. पच्चिन, ना. पंचति। ४. अ. फ. छक। ५. शा. स. छंडिति।

(३) १. ना. बानावर, शा. स. बानावरि। २. स. पान। ३. मो. कपि (=कपइ), शेष में 'कपहिं'। ४. फ. मधु। ५. मो. सिध नर, शेष में 'सिधुर'।

(४) १. मो. धा. तिहि, अ. फ. जिहि, ना. शा. स. तिन। २. ना. मदन। ३. धा. मुंड दंड, अ. फ. मुंडि दडि, ना. मुंडा दंड, शा. स. मुंड दंड। ४. अ. फ. किय, शेष में 'सिर'। ५. शा. स. त्रिपति। ६. धा. घर, फ. परि।

(५) १. स. जि मुह, ना. जिहि मुष। २. धा. मुहि सहाव, मो. मुह साव, शेष में 'मुख सहाव'। ३. मो. समहु (=समहउ), शेष में 'समुह'। ४. मो. मुह जपि (=जपइ), धा. जपे, ना. मुष जंप, शा. स. मुष जंपन, अ. फ. जंप्यो। ५. मो. ना. गहु, धा. फ. शा. स. गह, अ. गहि। ६. धा. गहम, शेष में 'गहन'।

(६) १. मो. दूबन, धा. दुबननि, अ. ना. दुबननि, फ. दुबनि, शा. दुअनन, स. दुवनन। २. मो. गहु (= गहउ), शेष में 'गह्यो'। ३. धा. छत्री, मो. अ. फ. छत्रिअ (छत्रीअ--मो.)। ४. मो. बर मग गहु न, धा. गुर मग्गह न, फ. वर मग्गहि नि, ना. गुरु मग्गह न जिन, स. शा. गुर मग्ग हन।

टिप्पणी—(१) णिय = निज, धी। (५) संमहउ < संमुख। जंप् < जल्पय्। (६) मग < मग्ग < खड्ग।

१२. शहाबुद्दीन और पृथ्वीराज का अन्त

[१]

कवित— गहि चहुआंन नरिंद गयउ*[१] गज्जने साहि घरि[२] । (१)
सा[×] दिल्ली[१] हय हय गंडार[२] तेहि[३] तनय[४] थप्पि[५] धर[६] । (२)
बरस एक[१] तिहि अध्ध[२] मुध्ध किन्हउ*[३] नयन[४] बिनु । (३)
जंम[१] जंम जुग[२]‡ अवरुध्ध[३] जाइ[४] प्रथिराज[५] इक[६] पिनु[७] । (४)
सुनत श्रवननु धरि परउ*[१] हरि हरि हरि हरि[×] देव सु कह[२] । (५)
तजि पुत्र मित्र माया सकल[१] गहिग[२] चंद गजनेर रह[३] ॥ (६)

अर्थ—(१) चहुआन नरेन्द्र (पृथ्वीराज) को पकड़ कर ग़ज़नी का शाह (शहाबुद्दीन) घर गया। (२) उसने दिल्ली के हय, गज, भाण्डार, तथा धरा (राज्य) को उसके पुत्र को अर्पित किया। (३) एक वर्ष के आधे (छः महीने) में उस मूर्ख ने [राजा को] नयन-विहीन कर दिया, (४) [फलतः] पृथ्वीराज को एक-एक क्षण जन्म जन्म या एक एक युग की भाँति अवरुद्ध होकर बीत रहा था। (५) कानों से यह सुनते ही [चन्द] धरा पर गिर पड़ा, और 'हरि, हरि, हरि, हरि देव' उसने कहा। (६) [तदनंतर] पुत्र मित्रादि समस्त माया [के बन्धनों] को छोड़ कर चन्द ने ग़ज़नी की राह पकड़ी।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. गयु (< गयउ), धा. गयो, अ. गयव, फ. गजउ (< गयउ), शेष में 'गयो' या 'गयौ'। २. मो. धर, धा. ना. धरि, शेष में 'धर'।

(२) १. मो. ना. दिल्ली, धा. ढिल्ली, अ. फ. ढिल्लिय, शा. स. दिल्लिय। २. ना. शा. स. द्रव्य। ३. मो. तेहि, धा. अ. तिहि, फ. तिह, ना. स. शा. ताहि, । ४. धा. तन, ना. शा. स. तन (तिन—ना.) यह (यह—ना.) सु। ५. अ. फ. अथ्यि, ना. अप्प। ६. फ. घर।

(३) १. मो. एक, धा. अध्य, शेष में 'अद्ध'। २. मो. तिहि अधो, धा. ना. तिहि अद्ध, अ. फ. तिहि अद्ध, शा. स. तस अद्ध। ३. मो. किन्हु (= किन्हउ), धा. किन्हा, अ. किन्नो, फ. शा. कीनो, ना. कीयौ। ४. मो. शा. स. नयन, धा. नयननु, अ. फ. नेननि, नयननि।

(४) १. ना. जाम। २. मो. पुग (< युग = जुग), धा. जुग्ग। ३. धा. रुद्ध, अ. फ. वर रुद्ध (रुद्धि—फ.), ना. अवर, शा. स. अवरु। ४. मो. जाभ, धा. तथा शेष में 'जाइ'। ५. मो. पथिरान, अ. फ. पृथिराज, शेष में 'प्रिथिराज'। ६. धा. एकु। ७. मो. धा. पिनु, अ. फ. छिन, ना. शा. स. छिन।

(५) १. मो. सुनत श्रवनतु पड़ पड़ (= परउ), धा. सुनि स्रवण सवण सुनि धरि पर्यो, अ. फ. सुनि

श्रवननि धरनिय (धरनिय–फ) परिग (परिगु–फ.), ना. शा. स. सुनत श्रवन धरनिय (धरनिहि–ना.) परिग। २. मो. हरि पी हरि देव सु कह, धा. हरि हरि हरि हरि देव वहि, अ फ हरि हरि हरा सुनारि कह (कहि–फ.), ना. हरि हरि रसना सु कह, शा स हरि हरि हरि सुप जपि।

(६) १. शा. स. उठ्यौ मनहु विश्राम करि, धा. तथा शेष में 'तजि पुत्र मित्र माया सकल'। २. मो. गहिग, शा. स. भयौ, धा. तथा शेष में 'गहिय'। मो. गजनेव रह, धा गजनह रह, अ फ गज्जन सुरह, शा. स मयौ विभ्रिन (विभ्रम–फ.) मन कपि।

टिप्पणी—(२) अप्प < अर्पय्। धर < धरा। (३) मुघ्घ < मुग्ग=मूर्ख। (४) पिन < क्षण। (६) रह < राह [फा०]।

[२]

दोहरा— *गहिय[१] चंदु रह गज्जने[२] जहां सजन सु[३] नरिंद*[४] *। (१)*
कब हउं नयन निरष्षिहउ*[५] *मनहु रवि[२] अरविंद ॥ (२)*

अर्थ—(१) चन्द ने गजनी की राह पकड़ी जहाँ [उसका] स्वजन नरेन्द्र (पृथ्वीराज) था; (२) [मार्ग में वह सोचता जाता था,] ' कब मैं उसे नेत्रों से [इस प्रकार] देखूँगा, मानों रवि (सूर्य) का अरविंद [देखता हो] ?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. ना. शा. स. गहिग, धा. गह्यौ। २. ना. रह उज्जने, शा. स गज्जन सुरह। ३. मो. जाहां सजन सु, धा. जह सजन नूं, ना. जह सज्जन सु, शा. जहा साजन, अ. फ जह (जहा–फ.) सज्जन स्वामि। ४. मो. नरेन्द (< नरिंद), शेष में 'नरिंद'।

(२) १. धा. कि बहु नयन निरष्षियै, मो. कव हू (= हउ) नयन निरषिह (= निरषिहउं), अ बवहि नयननि पिष्षिहौं, फ ववहीं नयननु पिष्षियौं, ना वब हु (= हउ) नयन निरष्षिहु (= निरष्षिहउ) शा. स. कब हौं (हु–शा.) नयननि (नैंन–स) निरषिहौं (निरष्षिहौं–स)। २. धा. मनहु नवि (< नवि < रवि), मो मनहु रवि, अ. फ मनहु नयौ, ना शा स. मनौ (मनहु–ना) सर।

टिप्पणी—(१) रह < राह [फा०], सजन < स्वजन।

[३]

दोहरा—*वपु विभूति[१] बहु[२] विहुयउ*[३] जट बंधी[४] जम जूट[५] *। (१)*
मनु माया मुकइ गहइ*[१] सु तथ्य जाय[२] अवधूत ॥ (२)*

अर्थ—(१) उसने वपु (शरीर) में बहुत-सी विभूति (राख) लपेट ली और यम के जूट (केश कलाप) [जैसी] जटा बाँध ली। (२) जिसका मन माया को [कभी] छोड़ता [कभी] पकड़ता था, ऐसा अवधूत कहाँ जा रहा था !

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो वप विभूति, फ. बपि भिभूत। २ मो बद, शेष में 'बहु'। ३. मो. विहुउ (= विहुयउ), धा. व—, अ. फ. बिहुई, ना. उद्धुमी, शा. स. विटयौ, अ. फ बिहुई। ४. मो. जट बधी, धा. अ जट

बंधी, फ. ज्द बंधयो, ना. ज्द बंधी। ५. मो. जम दूत, धा. जिम जूस, अ. फ. जम (जमु–फ.) जूट, ना. शा. स. जम जूत।

(२) १. मो. मनु माया मुंकि (= मुकइ) गहि (= गहइ), धा. मनु मायहि मुके गहे, अ. फ. माया मुके म्न गहे, ना. शा. स. मन माया मुक्वि (मुक्वि–ना) चल्यौ। २. मो. सु वध (= वध्य ?) जाय, धा. तथा शेष में वधौ (कौ–अ. शा. स., किम–ना., कै–फ.) पुज्जइ (पूजै–फ, पुज्जै–अ. फ. ना. शा. स.)।

टिप्पणी—(१) विद्ध < वेध्य्। (२) मुक < मुच्। कध्य < कृत।

[४]

दोहरा—सरसइ*[१] वल भ्रम कंठ वल[२] भ्रम हिईइ*[३] वर वीर।
हिंदू कहइ*[१] हम देव हइ*[२] मेछ कहइ*[३] हम पीर॥

अर्थ—(१) उसे सरस्वती का बल था और अपने कण्ठ का बल था, और हृदय में भी वह श्रेष्ठ वीर था, (२) [इसलिए उसे देखकर] हिन्दू कहते "यह हमारा देवता है" और म्लेच्छ कहते "यह हमारा पीर है"।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सरसि (= सरसइ), धा. सरसइ, ना. सरसै, शेष में 'सरसै'। २. मो. गंठिवर, धा. कंठबरु, ना. कठव्वर, शेष में 'कठव्वर'। ३. मो. हईइ (< हिईइ), धा. हियवरु, अ. हियवर, ना. स. सु हिय, शा. सु हियौ।

(२) धा. हींदु कहहि, मो. हिंदू कहि (= कहइ), शेष में 'हिंदु कहै'। २. मो. देव हि (= हइ), धा. देव वर, शा. दीन है, शेष में 'देव ०'। ३. मो. वहि (= कहइ), धा. कहहि, शेष में 'कहै'। ४. ना. पीर।

टिप्पणी—(१) सरसइ < सरस्वती। वर < वल। हिअय < हृदय। (२) मेछ < म्लेच्छ। पीर [फ़ा०] = महात्मा, सिद्ध।

[५]

दोहरा—इह[१] विधि पत्तउ*[२] गज्जनै[३] जहाँ[४] गोरिय[५] सुरतान*[६]। (१)
तपइ×[१] मेछु×[२] इछ अप्पनी×[३] मनउ*[४] भान[५] मध्यान॥ (२)

अर्थ—(१) इस प्रकार वह गज़नी पहुँचा जहाँ गोरी सुल्तान (शहाबुद्दीन) था, (२) [जहाँ] वह म्लेच्छ अपनी इच्छा पूर्वक [इस प्रकार] तप रहा था मानों वह मध्यान्ह का भानु हो।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं हैं।

(१) १. मो, धा. इह, शेष में 'इहि'। मो. पत्तु (= पत्तउ), धा. पिहुत, अ. फ. पत्तउ, ना. शा. स. पत्तौ। ३. मो. गर्जन, धा. गज्जने, मो. गर्जन, शेष में 'गज्जनं'। ४. मो. जाहां, धा. जिह, अ. जह, फ. जहाँ। ५. धा. अ. फ. गोरी। ६. धा. सुरताण, फ. सुलतान।

(२) १. मो. तरि (= तरइ), धा. तरै । २. धा. मेच्छु, मो. तथा शेष में 'मेछ' । ३. मो. अरनो, धा. अन्नलिय, फ. अन्नलें, शेष में 'अन्नलो' । ४. मो. मनु (= मनउ), धा. अ. मनहु, फ. मनो, शा. स. मनों । ५. ना. भिस ।

टिप्पणी—(१) यष < ग्रास । (२) मेछ < म्लेच्छ ।

[६]

दोहरा—हय[१] गय[२] अम्भु[*] ति सुम्भ[४] गति नट नाटक बहु सार[५] । (१)
इह[१] चरित्त दीषत[२] नयन गयउ[*३] चंद दरबारि[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [वहाँ] हय-गजादि अभ्र (आकाश) की (जैसी) शुभ्र गति के थे, और [रंग-] शालाओं में बहुत-से नट तथा नाटक (नट्टक < नर्तक) थे; नयनों से यह चरित्र देखता हुआ चंद [शहाबुद्दीन के] दरबार में गया ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. अ. ग्य, शेष में 'हय' या 'है' । २. मो. गय (< गय), शेष में 'गय' या 'गै' । ३. मो. अभूनि, धा. अभनि, अ. उभति, फ. उभति, ना. सुभन, म. अभुन, शा. अभन । ४. मो. ना. सुम (= सुम्म) धा. अ. फ. सुभ, म. सुभन, शा. सुभन । ५. मो. ना. सार, शा. स. सार ।

(२) १. अ. यह । २. मो. दीषन, धा. दिष्षिय, अ. ना. शा. दिषत, फ. दिष्षो, स. दिठान । ३. मो. गयु (= गयउ), शेष में 'गयो' या 'गयौ' । ४. ना. दरबार ।

टिप्पणी—(१) अम्भ < अभ्र = आकाश । सुम्भ < शुभ्र । नाटक < नट्टक < नर्तक (?) । सार < शाला ।

[७]

वस्तु[१]— तह[२] सु अग्गइ[*३] चलि[४] गयउ[*५] निरषिदर वान[४१] । (१)
कनक लकुटि[१] रतन[२] जडित[३] । (२)
रटित सुभ चंद सुभ[१] दिट्ठउ[२] । (३)
त्वच[१] अंबरु[२] संभरु[३] नही[४] । (४)
अहित चित्त बोलइ[*१] तु[२] मिट्ठउ[३] । (५)
वपु[१] विभूति पाषंड घन[२] धूत धुत[३] सिर[४] पट्ट । (६)
भवन भोग रहि[१] छंडि करि[२] किमि[३] तइ[४] जोगी भयु[५*] भट्ट[६] ॥ (७)

अर्थ—(१) इस प्रकार वह आगे चला गया, और उसने दरबान (द्वारपाल) को देखा । (२) [उस दरबान की] लकुटि (लकड़ी) रत्नजटित थी । (३) उसने शुभ (या शुभ्र) [चन्द] को देखा, तो शुभ चिल्लाकर कहा, (४) "[तेरी] त्वचा पर अंबर (वस्त्र) नहीं है, [साथ में] संबल (पाथेय) नहीं है, (५) तेरे चित्त में अहित है, [यद्यपि] तू मीठा बोलता है; (६) तेरे शरीर पर विभूति है, [किन्तु] तेरा घन पाषंड है, तू धूर्तों का भी धूर्त है और सिर पर पट्ट [धारण कर

रहा] है। (७) (आगा-पीछा बिना सोचे हुए) भवन के भोगों को छोड़कर तू, हे भट्ट, किस प्रकार योगी हुआ ?"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. मो. शा. स. कवित, धा. वस्तुबंध, अ. में छन्द का नाम नहीं है, फ. रुंदित है, ना. त्रिपुवा। २. धा. तिहि, मो. अ. तह, ना. तह। ३. मो. सू (= सु) अगि (= अगर), धा. सु अगे, अ. सु अग्गें, ना. सु अग्ग। ४. मो. चलि गयु (= गयउ), धा. तिहि सु अग्गे, ना. गयौ। ५. मो. दरवान बल, धा० दरबार, अ. दरग्गह।

(२) १. अ. कनक कल कुटि, ना. कनक कुटि। २. धा. रतनतु, अ. रजननि मनि। ३. मो. जडित, धा. अ. ना. जटित।

(३) १. मो. सुम जब सुम (= सुम ?), धा. सुम जब भट्ट, अ. सुम तब दुम, ना. सुभ जबा सुम। २. मो. दिठु (= दिठउ), धा. दिठ्ठउ, अ. ना. दिठ्ठौ।

(४) १. मो तुव (< तुव), धा. तुच, अ. ना. तुच्छ। २. मो ना. अंमक, धा. अ. अंबर। ३. ना. संमर, धा. समर, अ. संवल। ४. धा. त हिय (< न हिय)।

(५) १. मो. बोलि (= बोलइ), धा. बोल्हि, अ. बुल्यो, ना. बुल्ले। २. मो. धा. ना. सु, अ. तु (< तु)। ३. मो. मिठु (= मिठउ), धा. मिठ्ठउ, अ. ना. मिठ्ठौ।

(६) १. मो. वप, धा. वपु। २. मो. बापड धन, पापड धन, धा. वहु विटियो; बहु बुड्ढो। ३. धा. धुत्त, दुत्त। ४. मो. धा. ना. सिर, अ. पर।

(७) १. रहि, धा. रहु, अ. ना. रह। २. धा. कै, शेष में 'करि'। ३. धा. किम, ना. जिम। ४. मो. ति (= तइ), शेष में नहीं है। ५. मो. जोगी भय, (< भउ), धा. जोगे (< जोगि < जोगी ?) रहु, अ. जोगी रह, ना. जोगी भयौ। ६. शा. स. में छन्द का पाठ इस प्रकार है :

तहँ अग्गे (अग्गे—शा.) गय निरषि कनक रकुटीय नग जट्टित।
इय गय नर अमरान (असुरान—शा.) थान इंद्रासन (इंद्रासन—शा.) घट्टित।
गज्जनवै सुरतान भान सम तेज सु दिट्ठौ।
तुश (तुछ-शा.) अमर संमर न अद्दिन जिन बुल्लिस सु मिट्ठौ (मिठौ—शा.)।
बुट्यौ (बुड्यौ—शा.) विभूति वपु भंति बहु चंद धूत सिर बधि पट।
भव भोग भवन रहि छंडि कै किम जोगी भय भट्ट नट (शा. में 'नट' नहीं है)।

स्पष्ट है कि मो. परंपरा के 'कवित' शीर्षक को देख कर इसे 'छप्पय' वाची 'कवित्त' बना दिया गया है।

टिप्पणी—(१) तह < तथा = इस प्रकार। दरवान [फा०] = द्वारपाल। (२) जडित < जटित। (३) रट् < रट् = चिल्लाना। सुम < शुभ या शुभ्र। (४) तुव < त्वचा। अंमर < अंबर। संवर < शम्बल। (६) धूत < धूर्त। (७) रह < रभस = पूर्वापर का अविचार।

[८]

घत्तु[१]— हउं* सु जोगिय हउ*‡ सु‡ जोगिय[२]‡ जमन परदार[१]। (१)
ति×[१] जथ्य जसु[२]‡× जोगिनि[३] पुरंदर[४]। (२)
घतव गन* गुरु यति सकज।°[१] (३)

कल कवित्त जानउ*, सब छंदर ।°[२] (४)
रसन[१] रसायन भायन[२] पुनि[३] गीय[४] गाह गुन[५] ग्यांन[६] । (५)
सकल इच्छि[१] पुच्छे[२]* कहहुं जउ* गुदरइ* सुरतांन ॥ (६)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा] "हे यवन (मुसलमान) पहरेदार, मैं वह (ऐसा) योगी हूँ, (२) यथा यम योगियों का इन्द्र होता है। (३) जितने गण, गुरु, यति आदि छन्दों के अंग होते हैं, (४) उन सबको तथा कविता के सम्पूर्ण सुन्दर छन्दों [की रचना] को मैं जानता हूँ। (५) रसीले रसों, भावों, और फिर गीतों तथा गाथाओं के गुणों का ज्ञान [रखता हूँ]। (६) इन सब को इच्छा करके [सुल्तान] पूछने पर कह सकता हूँ, यदि तू जाकर सुल्तान से निवेदन करे।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं हैं।
° चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
‡ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

(१) १. मो. कविन, धा. वसुर्दन, अ. में नाम नहीं है, फ. खण्डित है, ना. शा. स. विथूरा। २. मो. तव पेषु (= पेषउ), धा. वहु स जोगी वहु संजोगी, अ. हम सुजोगीय, शा. म. हौं (< हुं = हउं ?) सुजोगिय हौ सुजोगिय, ना. तत्र दिपं। ३. मो. यमन (= जमन), धा. अ. ना. शा. जमन, स. जनन। ४. मो. शा. स. परदार, धा. परदार, अ. ना. परिदार।

(२) १. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है। २. मो. जथ मम, धा. जरर जमु, अ. जथ्थ, शा. स. जोग जम (जमन–धा.)। ३. मो. योगिनो (< योगिनि), धा. योगिन, अ. जुगनि, शा. स. जोगिनि। ४. ना. पुरंदह।

(३) १. मो. जतव गुन (गन) गुरु यति, अ. सरस सवैति पारसि त्रिविधि, शा. स. सुरस त्रिविधि, ना. जति गननि मह भत्त।

(४) १. मो. सकल राग गीय जानुं (= जानउं) छंदर, अ. कल कवित्त जानौ सुछंदेति हर, ना. सकल सुरगौ गीय छदह, शा. कवित्त जानौं सब छंदर, स. कल कवित्त जानो सब छदर।

(५) १. ना. रस राम, शा. स. सरस। २. मो. मायन, धा. माय, अ. माइ, ना. माइनह। ३. मो. गुन, धा. पुनि (< पुनि ?) अ. नहि। ४. मो. गीत, धा. तथा शेष में 'गीय'। ५. अ. गुरु। ६. धा. गान, ना. आन।

(६) १. धा. अ. शा. सयल इच्छ, मो. सयल इछ, स. छैल इच्छ, ना. जो पुच्छै। २. मो. पुछि (= पुच्छे) गहइ, धा. पुच्छइ कहहु, अ. पुच्छ कहौं, शा. अच्छी कहुं (= कहउं), स. अच्छी कहौ, ना. सो सह कहुं (= कहउ)। ३. मो. जु (= जउ) गुदरी (= गुदरइ), धा. जे गुदरइ, अ. ना. जौ (जा–ना.) गुदर, शा. स. जौ पूछं (पुछे–शा.)।

टिप्पणी—(१) जमन < यवन। परदार < पहरादार [फ़ा०]। (२) जथ्थ < यथा। जम < यम। (४) छंदर < छद। (५) गाय < गीत। गाह < गाथा। (६) गुदर < गुज़ार=निवेदन करना, पेश करना।

[६]

दोहरा— हसउ*[१] जमन पर दार× तय× तुहि[३] जानउ*[४] कवि चंदु । (१)
मिलन*[१] इक दरहि बिलंबियइ*[२] कवि न करइ*[३] मनु मंदु ॥ (२)

अर्थ—(१) तब यवन (मुसलमान) पहरेदार हँसा, [और उस ने कहा,] हे कवि चन्द, मैं तुझे जानता हूँ। (२) एक क्षण द्वार पर विलम्ब करो [रुको] और मन को मन्द (हतोत्साह) न करो।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द या चरण अ. में नहीं है।

(१) १. मो. हसु (= हसउ), धा. तथा शेष में 'हस्यौ'। २. अ. परि— [शेष नहीं है]। ३. धा. तोहि। ४. मो. अ. ना. जानुं (= जानउं), धा. जान्यो, शा. जानौं, स. जानौ।

(२) मो. खिनु (= खिनु), धा. छन, शेष में 'छिन'। २. मो. विलंबीह (= विलंबियह), धा. विलंबिय, ना. विलंबीये। ३. मो. करि (= करह), धा. करिय, ना. करहि, शा. स. करहु।

टिप्पणी—(१) परदार < पहरादार [फा०]। (२) दर [फा०] = द्वार।

[१०]

दोहरा— तह[१] विरांम[२] कवियन[३] करिग[४] रुचित[५] अप्पणी[६] इच्छ। (१)
सह सहाब दर[२] दिप्पियह*[३] जु[४] कछु[५] भुम्मि*[६] पर मिछ्छ॥ (२)

अर्थ—(१) तथा (तदनुसार) कविजन (चन्द) ने विराम किया—वह रुका रहा, जो उसे अपनी इच्छानुसार रुचा [भी], (२) [क्योंकि उसने सोचा,] "शहाबुद्दीन के द्वार पर वह सब देखना चाहिए जो कुछ म्लेच्छ की भूमि पर है।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. तह, धा. तिहि, अ. तहं, शा. तहाँ, स. तब। २. मो. विरांम, धा. ना. विलंब, अ. विरंमु, शा. स. विरम्म (विरम—शा.)। ३. मो. कविअन। ४. अ. करिय, शेष में 'करिग'। ५. मो. रुचि, धा. अ. सुरुचि, ना. शा. स. रुचिन। ६. मो. अप्पणी, धा. अप्पनिय, अ. अप्पनी।

(२) १ ना. सर। २ अ. गुरु। ३. मो. दिप्पीह (= दिप्पियह), धा. शा. स. दिक्खियै, अ. दिप्पहि। ४. मो. सु, धा. अ. शा. जु, ना. जि। ५. मो कछू, अ. कुछु, शेष में 'कछु'। ६. मो. भमि (< भुम्मि), धा. तथा शेष में 'भूमि'। ७. धा. तर मिच्छ।

टिप्पणी—(१) कवियन < कविजन। (२) सह = समस्त। दर [फा०] = द्वार। मिछ्छ < म्लेच्छ।

[११]

भुजंग—
रोहंमी रोहंगी[१] रुहेले[२] सुरंमी[३]। (१)
सुहक्की लवनी[१] सुहक्के परंमी[२]। (२)
घरंते तरंते सुधारे सुमेले[१]।[२] (३)
तुरक्की[१] ममक्की[२] मनच[३] जलेले[४]। (४)
हबरसी हकम्मे रहन्ने सुहन्ने[१]। (५)
पर्यंने पर्यंगी पवन्ने सुपन्ने[१]। (६)

मिथाजी बिराजी सकज्जे हसल्ले[१]। (७)
समन्नी सुसुन्नी मुगल्ले मसल्ले[१]।[२] (८)
सुभ[१] सेषजादे अवादे[२] पठाणे।[३] (९)
दिपे साहि गोरी गरज्जे सु[१]ठाने[२]॥[३] (१०)

अर्थ—(१)—(८) रोहंमी आदि उल्लिखित विभिन्न जातियों के (९) शुभ शेख़ज़ादे और अवध्य पठान (१०) गोरी शाह के स्थान पर गरजते हुए दीख पड़े।

पाठान्तर—(१) १. धा. अ. ना. शा. स. रुहम्मां रुहंगो (रहंगी—अ. ना.)। २. अ. रुहिल्ले, शा. स. सुहिल्लो, ना. सुदिल्ली। ३. स सुरोंगा, स. शा. सुहन्नी कुरोमी।

(२) १. अ. श्रवन्नी बसन्नो, ना. सुहन्नो भवन्नी, शा. स. सहन्नी सियांजी। २. धा. सहक्के करम्मी, अ. सहका ररम्मी।

(३) १. धा. अ. धरंती (धरत्ती—अ.) धरत्ता (धरत्ती—अ.) धरत्ते (धरत्ता—अ.) सुमाले (सुमल्ले—ना.)। २. शा. स. में यहाँ और है : हरब्बी सहेबी सरंते शुसल्ले।

सवन्नो तिपन्नो पुरन्नी पुबेसी। मरब्बान भट्टी तिलगार गोसी।
धरन्नी धरंती समल्ले मुसल्ली।

(४) १. धा. अ. शा. स. तुरक्का, ना. तुरक्की। २. धा. ममक्का, अ. नमक्का, शा. स. नचित्तं, ना. ममक्की। ३. धा. अ. तनत्ता (तनंता—अ.), शा. स. चिगने, ना. मनुने। ४. धा. अ. जल्लाले, शा. स. तुसल्ली, ना. जमल्ले।

(५) १. धा. हवस्सी हसम्मी हहंसे सहन्नी, अ. हवस्सी हहम्मी पवन्ने सुपन्नी, शा. स. हवस्सी सुगोरी सुकव्वी सुपन्नी, ना. हमस्मी हकमे रहन्ने सुहन्नी।

(६) १. धा. पवगे सगे पवन्नं सुपन्ना, अ. कुरेसी पुरेषी गरुवे शुरन्नो, शा. स. प्रकारं प्रवानं प्रवानो तिवन्नी, ना. पवगे पवंगी पवन्ने सुपन्नी।

(७) १. धा. नियाजी विराजी सकाजी तुसल्ले, अ. नियाजी विराजी सुकाजी कुसल्ले, शा. स. नियाजी सुवाजी सुकाजी कुसल्ले, ना. निवाजी विराजी सकज्जे हसल्ले।

(८) धा. अ. सवानो मसानो (मसामी—अ.) सुगल्ले शुमल्ले, ना. सुमन्नी ममन्नो सुमल्ले मुसल्ले, शा. स. सजे जम्म तेजं करं वज्र झल्ले। २. शा. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

तुरक्की ममक्की रानने जलल्ले। पवगे पवन्ने वनचार गल्ले।

(९) १. ना. सुभे। २. ना. अवद्दे। ३. शा स. में यहाँ और है:

महा मंत्र जुद्धंग सुद्धंग जाने।
निमाज सुरोजं नमो पंचवानं। पढै अथि कोरान सोरान ग्यानं।
सिपारा त्रिवारी पढै तीस तामं। धरै राह अप्पं सुतप्पं सुधामं।
चलै अग्गि सा जामि अप्पं सुराह। तिनं गात लग्गै न रं जीव गाह।
नहीं मेह माया निराया विरागं। तिनं गाह बंछै धरंतीव तागं।
इसे वेस देसं सुवेसं सुरेसं। दिष्यो साहि गोरी दरब्बार सेसं।
अनेक धरं मन मंने वियाने।

(१०) १. ना. दिठे। २. मो. सुहाने, धा. सुठाने, अ. सुथाचे, ना. सुहन्ने। ३. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है। (मो. पाठ) :—

मको जिल्लदानी पवी विरज लायो । तुभंगा हरासे दरंमी इलावो ।
गर्न धौन इच्छे निते मेछ जाती । अहे आइ जान दर दिव्वि माती ।

टिप्पणी—ठान < स्थान = निवास ।

[१२]

दोहरा—त[१] इनि[२] विधि जाम दोइ[३] बीति गए[४] भयउ त्रतिय पहुरन[५] । (१)
हदफ साह पेलन[१] चढउ*[२] मनुहु[३] उवयु (=उग्यउ) अरंणान । (२)

अर्थ—(१) इस प्रकार से दो पहर बीत गए, और तीसरा पहर हुआ; (२) [इस समय] शाह (शहाबुद्दीन) हदफ् (लक्ष्य वेध) खेलने के लिए [इस प्रकार] चढा (निकल पड़ा), मानों अरुण [सूर्य] उदित हुआ हो ।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. मो. के अतिरिक्त यह शब्द किसी में नहीं है । २ मो. इनि, धा. ना. इह, शेष में 'इहि' । ३. मो. दोइ, धा. अ. दु., ना. दुइ, शा स. दु । ४. मो. बीति गए, धा. बित्ति गया, अ. बित्तगो, ना. वित्त गय, शा. स. बिति गय । ५. मा. त्रतिय पहुरन, धा. भया तीहि पहरान, अ भयो तीयो पहरान, ना. शा. स. भयो तृतीय पहरान ।

(२) १. मा. पेलन, धा. तथा शेष में 'खिलन' । २. मो. चढु (= चढउ), धा. अ. ना. चढ्यो, शा. स. चढन । ३. मा. मनुहु, धा. मनहु, शा. स. दियौ, शेष में 'मनहु । ४. मो. उवयु अरणन, धा. अ. फ. ना. उदधि अररान (उररान–ना.), शा. स. आप फुरमान ।

टिप्पणी—(१) जाम < याम = प्रहर । पहर < प्रहर । (२) हदफ् [फा०] = निशाना । उवय < उदय ।

[१३]

पध्धडी— सह[१] सलाम[२] मग्गह त[३] मीर । (१)
रहे धंधि फिरि फौज तीर[१] । (२)
अंगुलिय परगि धरि करि मसंद[१] । (३)
सिर नाइ[१] भयौ जब[२] नजरि[३] मंद । (४)
पारस सहस्र[१] लकरीय[२] लाल । (५)
परण सोभि ति पवंरि मनउ* प्रवाल[१] । (६)
अग्गे[१] सुहति[२] नसुरत्ति[३] पांन । (७)
दस[१] पंच हथ्थ उतसे[२] विहान ।[३] (८)
आसने हंस[१] ताजी[२] सु[३] साहि । (९)
नग जडित[१] चीन[२] रवि ससि चाहि[३] । (१०)
कंचन मुहुछ किरणीय वगंम[१] । (११)

नउ* लपह* तुरिय तहि अलिय रंग[2] ।+ (१२)
सिरताज साहि सोभिय* सदीस[2] । ×§ (१३)
सुरु दनुज उदइ* किअउ* दनुजसीस[2] । ×§ (१४)
कटि कसैं° साहि° सर सत्त तौन[2] । (१५)
जमनेस भेस धनुरत्ति[2] द्रोन[2] । (१६)
सिंगिनी सु अनिअं सज्जइ* सुहथ्थ[2] । §× (१७)
जिम सेन वज्र साजिअउ* पथ्थ[2] । §×र (१८)
रंग तीय तीय[2] अंबर[2] सुरंग । (१९)
दिष्पिअउ* इक्कु[2] चंदह विरंग[2] । (२०)
आलंम अदब्ब देषखौ*[2] न जाय । (२१)
रक्कयउ* मग्ग कवि चंद धाय । (२२)
तन विभूति[2] अवधूत दीस । (२३)
कर अन्यन[2] दीधी[2] असीस ॥ (२४)

अर्थ—(१) उसके मार्ग में समस्त अमीर सलाम करते हुए [खड़े] थे; (२) फिर (उनके पीछे), उनके तीर निकट फौज बँध रही थी (पंक्ति बद्ध बनी हुई थी); (३) धरती पर उंगलियाँ रखकर मसन्दों (?) ने (४) उसे सिर नवाया, जब उन्हें उसकी नजरमन्दी हुई (उसका दर्शन प्राप्त हुआ)। (५) फारस के सहस्रों लाल लक्करी (लकुटि धारण करने वाले) (६) किनारे-किनारे इस प्रकार शोभित थे मानों प्रवालों की पवँरि (पंक्ति) हो। (७) आगे आगे नसरत खाँ शासित हो रहा था। (८) [उससे] पन्द्रह हाथ तक उत्त्रस्त करने का विधान था—अर्थात् इस पन्द्रह हाथ की सीमा के भीतर आने वाले का त्रस्त (पाड़ित) करने का विधान था। (९) शाह (शहाबुद्दीन) हंस (सूर्य) [के समान दीप्तिमान] तख्तों पर आसीन था, (१०) उसकी नग-जटित जीन रवि-शशि के समान दिखाई पड़ती थी। (११) उस घोड़े का मुहल (मुहड़ा) सोने का था, [जिससे] किरणें अनुगमन (अनुसरण) कर रही थीं; (१२) वह नौलखा घोड़ा था, और उसका रंग अलि (भौंरे) का था। (१३) शाह (शहाबुद्दीन) के सिर पर ताज शोभित दीख पड़ता था। (१४) [वह ऐसा लगता था, मानो] दनुज के शीश पर दनुज-गुरु (शुक्र) ने उदय किया हो। (१५) कटि में शाह (शहाबुद्दीन) सौ (या सात) शरों का तूणीर कसे हुए था, (१६) वह ऐसा लग रहा था मानो यवनेश (यवनराज) के वेष में धनुर-पति द्रोण हों। (१७) सिंगिनी से अन्वित (युक्त) उसका हाथ [इस प्रकार] शोभित था। (१८) जैसे पार्थ ने श्वेत वज्र साजा हो। (१९) [दर्शिका] एक-एक स्त्री के अंबर का रंग सुरंग था, (२०) एक मात्र चंद विरंग (रंग-हीन, बदरंग) दिखाई पड़ता था। (२१) [शाह-ए] आलम (शहाबुद्दीन) का अदब (आतंक) ऐसा था कि [उसे] देखा नहीं जाता था, (२२) [किन्तु] कवि चंद ने दौड़कर उसका मार्ग रोका। (२३) तन पर उसके विभूति (राख) थी, और वह अवधूत दिखाई पड़ता था; (२४) अन्य (बाएँ) हाथ से उसने आशीर्वाद दिया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

+ चिह्नित चरण अ. में नहीं है।

× चिह्नित चरण स. में नहीं है।

० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

§ चिह्नित चरण शा. में नहीं है।

(१) १. शा. स. में इसके पूर्व है :

चढि चल्यो साहि गोरी प्रमान। जाने कि ग्रीव श्रीपम भान।

२. ना. साहि सलाम, शा. स. तब सह सलाम। ३. मो. मगह (= मग्गह) त, धा. मंगन (= मग्गन) सु, ना. गंडंनि, शा. स. मंडहि त, अ. मग्गह सु।

(२) १. धा. ग्रहे बंधि फिरि फौज तीर, मो. रहे बंधि फिरि फौज तीर, अ. तह रहै बंधि फिरि फौज तीर, ना. शा. स. फिरि बंधि (बंधि फिरि–ना.) फौज रहै तीर तीर।

(३) १. मो ना. धरि (धर–ना.) फरि मसंद, धा. धरक मयंद, अ. धर धर मसंद, शा. स. करि करि मसद।

(४) १. मो. शा. सिर नाइ (नाय–शा.), धा. अ. सिर नयो, ना. स. सर णाइ (नाइ–स.)। २. धा. अ. अबहि भई। ३. शा. नजरि, स. निजर।

(५) १. अ. सहस। २ धा. लक्करिय, अ. लश्करिय।

(६) १. मो. बरण सोभिति पवरि मनु (= मनउ) प्रवाल, धा. अवन सुभति (सुभहि–अ.) पवारिनु (पवारी–अ.) मनहु भाल, ना. शा. स. परनत (वरणन–ना.) मानहु (मनुवन–ना.) प्रवाल।

(७) १. अ. अगं। २. मो. सुहति, धा. अ. सुबधु, ना. सुहत। ३. मो. मसुरति थान, धा. निसुरत्ति थान, ना. निसरत्ति थान, शेष में 'नसुरत्ति' थान।

(८) १. स. दरम। २. मो. ना. उतसे (उतसे–ना), धा. उमोसु, अ. उतसु। ३. मो. ना. शा. स. में यहाँ और है (मो. पाठ) :—

गोरी तास सोहि तर थाहि। पुछ नि बात चढि साहि ताँहि।

को गनि थान आलमु असंधि। लिष्यिइ साहब जुग जगत अषि।

(९) १ धा. आसन दस, अ. आसनह हंस, स. आसनह अंस। २. ना. तेजी। ३. धा. स।

(१०) १. मो. जडित, धा. तथा शेष में 'जटित'। २. अ. गीम। ३. मो. रवि ससि थाहि, धा. लग्गे सुंभाहि, अ. लग्गे जु ताहि, ना. शा. स. रवि ससिन (सिसी–ना.) चाहि (चाय–शा. स.)।

(११) १. मो. कचन मुहल किरणीय यव गम, धा. कचन मुहाल किर मज वग्ग, अ. कचन मुहाल करि भंशि वग्ग, शा. स. कचन लाल करनीय जग्ग, ना. कंचन महल्ल किरणीया जग्ग।

(१२) मो. धा. नु (= नउ) लसह, (मनु लसय–धा.) तुरिय नहि (नहि–धा.) अलिय (अलय–धा) रंग (वग्ग–धा.), ना. चित रहीय औधि मन भ्रमय लग्ग।

(१३) १. धा. सिरताज साहि सुमई (=सुम्मइ) मदीस, मो. सिरताज साहि सोभीइ (=सोभिय ?) सुदेमि, अ. सिरताज साहि सुभ सदीस, ना. सुरतान सहित सोभा सुदीश।

(१४) १. मो. गुरु दनुज उदि (= उदइ) कीउ (= कियउ) दनुजु सीस, धा. गुरु दनुजु उदय किय दिनन सीस, ना. गुरुदेव दनुज कियो उद सीस, अ. गुरु दनुज उदै किय तनुज सीस। २. मो. ना. में यहाँ और है (मो. पाठ) :—

राग पीत पग सेत याल। परसि भगट्ट मानु जपित्र लाल।

(१५) १. मो. कट्टक साहि सरसत्त तोन, धा.—सरसत्त तोन, अ. कटि कसे साहि सरसत्त तोन, ना. कटि कसे आसुर तंडीरतोन, शा. स. कटि किमछ सूर सब बार तोन।

(१६) १. धा. जगपत्ति। २. अ. दोन।

(१७) १. मो. सोगनां सुं अनीमं सजि (= मज्जइ) सुहय, धा. अ. सिगिनि सुरग्ग करि अप्प हथ्थ,

ना. सिंगिनिय बान सज्जे सुदच्छ ।

(१८) १. मो. जिम सेत बज्ज साजीउ (= साजिअउ) पथ्थ, धा. अ. मनु सेत (स्वेत—अ.) बाजि सज्य सुपथ्थु, ना. मनु सेत बाजि सज्जीय पथ्थ। २. ना. में और है :—

कंचन सुढाल किर मध्य बाग। मनौं रूप सुरोय नहिं इक्के राग। (तुलना० निर्धारित चरण ११, १२)
बिन सिरस हित सुभ्मिय सुदेश। सुभ उदय कीयो जनु सांस नेश। (तुल० निर्धारित चरण १५, १४)
तिहि करी साहि सजीय सुरंग। रंग बति बतिय अमर सुरंग। (तुलना० निर्धारित चरण १९, २०)

तथा धा. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

कक्करिय ढाल अड्डिय करंत। उब्भी सुदिट्ठ दिष्यौ तुरंत।
पर दुजन देस जानैं अकाज। निय सामि चड्ढ अप्पन काज।
गुर एक घरी चित्तत्त तंम। आवाज साहि किन्नौ हुकम।
तब बज्जी बेग आलंम सज्जि। घन जेम मट्ट नीसानु बज्जि।
भननंक भेरि भारथ्थ सज्जि। सुरपत्ति कपि द्रिग झंपि रज्जि।
दिसि दिसा मिलि सहेम दान। घर धमकि दंध अचव अदान।
सौभंत पौरी मनौ मल्ल। दै रूप होत असु पुरी हल्ल।
लक्करी लाख इत मांम तान। ओ पंम चंद जंपै सुबान।
जानैं कि साह रिनि सब्ब भूप। निकरयौ अंग धरी कोठि रूप।
सुनि हथ्थ राज किल्कार कोर। यों भरयौ अग्ग सुरतान जोर।
मानौं किरीट द्वै सीस भान। दुहुं परी होइ फिरनिट्ट जान।
पहरीय कुन्न गंभीर ओप। जान्यौ कि मंड्यो मीन जसु कोप।
धारुन निसा अहि छुट्टि बिवाह। जाने कि रूप बहु करै राह।
मंड्यौ सुछत्र सुरतान सीस। सुरतान जित्ति चहुआन कीस।
मनौ भान सूर सहरे छांह। चल्ले जु कामधरि रूपवाह।
दुहु पास बाह चालुक्क हीर। तिन दिष्प रूप सुरतान मीर।
नं।यज्ज खान निज बध मान। सामुद्ध परी लज इन्द्रभान।
बंधे सु अंग द्वै सं कुबान। उप्पंम चंद जंपै निदान।
सिंगिनि सबद बेधी सुपान। मारथ्थ बेर अरजुन समान।
दत्त बेर सूर सूरन सलाम। बर हुकुम चढत देपत ताम।
बर मट्ट भेम पथ अनिष होत। पैं भूप जानि सच्चे समोत।

(१९) १. अ. रंगह सुतीय, ना. रंग रंग अंग। २. धा. मंवर, ना. अम्मर, शेष में 'अंबर'।

(२०) १. मो. दिषिउ (= दिष्यिअउ) इकुं (= इक्कु), धा. दिखियसु एक, धा. विष्यिय इक्क, ना. दिष्योयौ इक्क। २. मो. धा. चंदह बिरंग, अ. चंदै बिराम।

(२१) १. मो. देखौ (देक्खौ), धा. ना. दिख्यौ, अ. दिष्यौ।

(२२) १. मो. हकयु (= हक्कयउ), धा. हक्कोस, अ. ना. हक्कौसु।

(२३) १. मो. तन विभूति, धा. अ. तन बहु विभूति, ना. विब्भूत तनह।

(२४) १. मो. कर अन्यन, धा. कर अनन्व, अ. करि करइ दंदि, ना. धा. स. वर (कर—ना.) दुन उन्न। २. मो. दीनी, धा. दीधी, ना. दीनौं।

टिप्पणी—(१) सह < सभा = सभी। मीर < अमीर [अ०]। (४) नजरिमंद < नजर-मंदी = दर्शन। (६) बरण = तट, किनारा। (८) उतस < उद्+त्रास्=उत्त्राहित करना। विहान < विधान। (१०) नडित < जटित। (११) सुडुल < सुग्र भाण्डक = सुहड़ा। अवगमन = अवगरग। (१५) सत्त < सप्त या मत। सोन < तूण। (१७) अनिक < अन्वित। (१८) सेत < श्वेत। पथ्थ < पार्थ। (१९) कदर < [अ०] = भारंड।

[१४]

दोहरा— देखत[१] असीस न[२] सिर नायउ[*३] विन अछ्छित[४] फुरमान । (१)
दुसह भट्ट देषित[१] नयन[×] वे[×] पुछ्छइ[×२] सुरतान[×३] ॥ (२)

अर्थ—(१) आशीर्वाद देते समय [चंद ने] सिर नहीं झुकाया, और वहाँ विना फ़र्मान के वह [उसके मार्ग में आ पड़ा] था । (२) सुल्तान (शहाबुद्दीन) ने नेत्रों से उस दुस्सह [लगने वाले] भट्ट को देखकर उससे [उसका परिचय] पूछा ।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है ।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है ।
(१) १. धा. दरत, ना. देखत, शेष में 'देत' । २. ना. असीसति, धा. स. असीसइ । ३. मो. नाम्रु (= नायउ) धा. तथा शेष में 'नयो' । ४. धा. वन अच्छ्यो, शा. सा विन अच्छन, अ. विन अछ्छ ।
(२) १. मो. देषिय, धा. अ. पिष्यौ, ना स. दिष्यौ । २. धा वे पूज्यो, मो. वय पूछि (= पुछ्छइ), अ. वे पुच्छे (< पुछिछ) । ३. अ. सुरितान, शा. स. सुलतान ।
टिप्पणी—(२) वय < वे [फ़ा०] = विना ।

[१५]

पद्धरी— [१]विन बोलत[१] बोलयउ[*२] छंद । (१)
हउं[*]ज[१] साहि पर भट्ट चंद । (२)
करतार लीन प्रथिराज साथि[१] । (३)
उठि गहहु[१] अत्त[२] अछ्छइ[*३] अनाथ[४] ।[५] (४)
मइ[*] सुनउ[*१] साहि[२] तिन[३] अपि कीन । (५)
तजि भोग[१] जोग मइ[*२] तित्थ[३] लीन ।[४] (६)
मइ तपयउ[*१] तत्थ[२] बदरीय[३] थान । (७)
थिर रहउ[*१] तत्थ[२] सुनि सुरतान[३] ।[४] (८)
वे[१] चंद अब मइ[*२] रिस ज[३] कीन । (९)
पर पंक[१] दीठ[२] छंडइ[*३] न मीन[४] ।‡ (१०)
विहान‡[१] थान‡ रष्पि‡ जइ[२] घदच्चु । (११)
किरतार[१] हथ्थ वरिध्य जु[२] गच्चु[३] । (१२)
हम[१] चंद जाथि[२] विहइ[*३] हदप्पु[४] । (१३)
दोइ[१] गरह परह करि[२] पतहि[३] तप्पु । (१४)
[१]फिरि[२] साहि तेहि फुरमान दीन । (१५)
तिहि बहुत[१] चंद महिमान कीन ॥ (१६)

अर्थ—(१) उस (बादशाह) के [इस प्रकार] बोलते हुए [चन्द ने] छन्द में कहा, (२) "हे शाह मैं श्रेष्ठ भट्ट चन्द हूँ। (३) मैंने पृथ्वीराज के साथ अवतार (जन्म) लिया है, (४) उसे तुमने पकड़ लिया, तो मैं आप अनाथ हो गया। (५) [फिर] मैंने सुना कि शाह (तुम) ने उसे बिना आँख का कर दिया, (६) [तो] मैंने भोग छोड़कर तीर्थ में योग [का मार्ग] लिया, (७) और मैंने बदरी स्थान (बदरिकाश्रम) में तप करना ठाका (निश्चित किया)।" (८) यह सुन कर सुल्तान वहाँ स्थिर हो (रुक) रहा [और उसने कहा,] (९) "हे चन्द वह (पृथ्वीराज) अंधा इसलिए हुआ कि मैंने उस पर रिस (रोष) किया, (१०) किन्तु [फिर भी] वह [अपनी] भिन्न चक्र टेढ़ छोड़ नहीं रहा था। (११) [इसलिए] विधान के अनुसार मैंने अदब (क़ायदे) की दृष्टि से उसको (नियंत्रण में) रख दिया; (१२) मनुष्य कर्त्तार के हाथ में है, [उसे] गर्व न करना चाहिए। (१३) हे चन्द, हम जाकर हदफ़ (लक्ष्यवेध) खेलेंगे, (१४) तुम [यदि चाहो तो] कल [मुझसे] दो बातें करके तप के लिए जा सकते हो। (१५) फिर (तदनंतर) शाह ने उसे फ़र्मान दिया, और उसने चन्द का बहुत आतिथ्य किया।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

‡ चिह्नित चरण का शब्द अ. में नहीं है।

(१) १. धा. स. में इसके पूर्व और है :

सुरतान षान कहेसि मीर। इहां बोल्यिचंद मन मंद बीर।

२. मो. ना. बिन (बिनु—ना.) बोलत, धा. बलि सुललित, अ. बिन हुसत। ३. मो. बोलयु (= बोलयउ), धा. बोलयो म, अ. कुन्यो सु, ना. बोलयो।

(२) १. मो. हूं (= हउं ?) ज, धा हम स, अ. हम सु, ना. हूं (= हउं) सु, धा. स. सुनो।

(३) १. धा. साधि, ना. साथ शेष में 'सथ्थ'।

(४) १. धा. अ. न. श. स. वह गही, मो. एहि गहुदु। २. मो. अप, धा. इमत, अ. हौंन, ना. शा. हुं (हउं) व, स. हौव। ३. मो. अछि (= अछइ), धा. अच्छ, अ. शा. स. अच्छौं, ना. अच्छुं (= अच्छउ)। ४. धा. ना. अनाथ. शेष में 'अनथ्थ'। ५. शा. स. में यहाँ और है (स. पाठ):—

संग्राम धार मोकलि पसीठ। जालंधराय हम्मीर पीठ।

निहि होत मीर सुरतान सथि। पाल्य थान मो चद बंधि।

संमस राज मारथ्थ कीन। सुरतान बधि जस जीत लीन।

सुरतान बंधि सुबिहान सार। आगुड समर खग छोन धार।

हिन्दवान पस दोउ अमत बीर। नच्यो जु काम सहित सरीर।

(५) १. मो. मि (= मइ) सुन (< सुनु=सुनउ), धा. तथा शेष में 'मैं सुन्यो'। १. मो. साह, धा. तथा शेष में 'साहि'। ३. मो. बिन, धा. तथा शेष में 'बिनु'।

(६) १. धा. भोग, मो. तथा शेष में 'भोग'। २. मो मि (= मइ), शेष में 'मैं'। ३. मो. तिथ्थ, धा. तिरथ (< तिरथ), शा. स. तप्प शेष में 'तिथ्थ'। ४. शा. स. में और है (स. पाठ):—

यह धरग बिय सुरतान जानि। भै अट्ठ राज मन अनत पानि।

हूं अंध जम प.रछै न जाइ। बैराग राग छुअ बेधि पाउ।

सुरतान आन तप भषत थान। अस भट्ट सज्जि जोगिंद राज।

(७) १. मो मि (= मइ) रुपु (रुपउ), धा. मैं रुप्यो, शेष में 'मैं तक्यो'। १. अ. तक्य। ३. मो. ना. बदरीव, धा. बद्रीक, अ. बद्रिका, शा. स. बद्री सु।

(८) १. मो. रहु (= रहउ), शेष में 'रह्यो' या 'रह्यौ'। २. धा. तप्प, ना. शा. स. सुनत। ३. धा. मो. सुनि सुरताव, अ. सुनि सुविहान, ना. शा. स. सुरतान थान। ४. शा. स. में यहाँ और है :

परि दक सोचि बोल्यो सु साहि। रिस अग भग्गि पच्यौ सुराह।

(९) १. मो. वय, धा. वै, ना. वे, शेष में 'वै'। २. मो. मि (= मइ), धा. तथा शेष में 'मैं'। ३. मो. रिस ज, धा. रिसउ (< रिसनु), शेष में 'रिसन'।

(१०) १. ना. चंदक, शेष में 'वरंक'। २. मो. दीठ, शेष में 'दिट्ठ' या 'दिस्ट'। ३. मो. छंडि (= छंडइ), धा. तथा शेष में 'छंडे'। ४. मो. मीन, धा. लीन, ना. शा. स. भीन।

(११) १. मो. विहान, धा. तथा शेष में 'सुविहान'। २. मो. रपि ज, धा. रक्ख, ना. न रपे, शा. स. रप्पे।

(१२) १. मो. किरतार, धा. तथा शेष में 'करतार' (भी करतार—ना.)। २. धा. न करियइ, मो. करिअ न, ना. जन करहि, शेष में 'न करिअ'। ३. शा. स. में यहाँ और है (स. पाठ) :—

'करतार केलि जानी न जाइ। चितवैं आन आनइ सु पाइ।
बलिराइ कीन जीतन सुइंद। बंध्यो विधान आनइ पुनिंद।
धरि लद्ध रह्यो तिनवार तब्ब। सुरतान बोलि वर कहिग सब्ब।

(१३) १. अ. अवा २. ना. आहि। २. मो. पिछि (= पिछइ), धा. पिर्क्ल, ना. पेकंन, शेष में 'पिर्क्ल'। ३. मो हदफु, धा. हदप्फु, शेष में 'हदप्फ'।

(१४) १. मो. दाइ, धा. ना. दुइ, अ. द्वै। २. अ. काहिइ, धा. कल्ह ना. कालि, शेष में 'कल्ह'। ३. धा. अ चलहु, मो. चलहि, शेष में 'चलहिं'।

(१५) १. शा. स. में इसके पूर्व है (स. पाठ) :—

- बुल्यो सुवीर सुविराग जान। हबसी स बोलि सुविहान थान।

२. धा. फिर, मो. फिरि। ३. मो. तेहिं, धा. साहि, अ. जाहि, ना. शा. स. ताहि।

(१६) १. धा. जिहि बहुत, ना. तिन बहुत, शा. स. हम बहुत।

टिप्पणी—(४) अस्त < आरतन्=आर। (६) तित्थ < तीर्थ। (७) (११) थान < स्थान। (८) तथ्थ < तत्र=वहाँ। (१०) वंक < वक्र। दीठ < दृष्टि। भीन < भिन्न। (११) विहन < विधान। अदब [अ०] = कायदा। (१३) हदप < हदफ़ [अ०] = निशाना। (१४) गल्ह < गल या गल्ल (?) = बात। कल्ह < कल्य = कल। (१६) महिमान < मेहमान [फ़ा०] = पाहुना।

[१६]

दोहरा— करिग[१] चंद महिमांन तव[२] अगर धूप दिय[३] देह। (१)
भिदइ[*] न तेह[१] सुप दुष्ष मन[२] [३]मृतक वरांगन[४] नेह॥ (२)

अर्थ—(१) उसने चंद का तब आतिथ्य किया, और उसके शरीर में अगुरु-धूप [आदि सुगंधित द्रव्य] दिये (लगवाए)। (२) किन्तु उसे (चंद को) वह सुख नहीं भेद पा रहा था, [क्योंकि] उसके मन में दुःख था, [उसी प्रकार जिस प्रकार] मृतक को वर (श्रेष्ठ) अंगना [अथवा वाराङ्गना] का स्नेह नहीं भेद पाता है।

पाठांतर— ● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ का है।

(१) १. मो. करिग, धा. करहि, अ. करहिं, शा. स. करत। २. मो. तव, धा. तथा शेष में 'तब'। ३. मो. दीअ, धा. दिय, अ. दिवि, ना. शा. स. दिय।

(२) १. मो. भिदि (= भिदइ) न तेह, धा. भइद (< भिद) न तिहि, अ. भेदहि न तिहि, ना. शा. स. भिदैन सुप। २. ना. शा. स. तन (तिहि—ना.) दुष्ष बढ़ि (बढ़ै—शा., मन—ना.)। ३. धा. स. में यहाँ 'ज्यों' है, जो और किसी में नहीं है। ४. धा. वरंगिन, अ. ना. वरंगन।

टिप्पणी—(१) महिमान < मेहमान [फ़ा०] = पाहुना। (२) वरांगन < वर+ अंगना अथवा वारांगना।

[१७]

दोहरा— दह भट हदफ करि[१] पिछ्यो[२] घर[३] आयौ[४] सुरतांन । (१)
झपत चदु मन महि तब[१] सुइ अच्छौत विहान ॥ (२)

अर्थ—(१) दस भटों को [लक्ष्य बना ?] कर उसने हदफ (निशाने) का खेल खेला, और सुल्तान घर आया । (२) चद तब मन में झपने (संतप्त होने) लगा कि शुचि (पवित्र) प्रभात होता ।

पाठान्तर—(१) १. मो. दह भट हदफ करि, धा. अ. हदफ हरषि (हरष—अ.) करि, ना. दह करि हदफ, शा. दे हदफ करि, स. दे हदफ करि । २. स. षेदयौ । ३. धा. अ. ग्रहि (गृह—अ.), ना. घरि । ४. मो. आयौ, धा. आयौ ।

(२) १. मो. तिहि तब, धा. मरन म., अ. नहि मरन, ना. मह सुनिसि, शा. स. में सुनिसि । २. मो. मो सुइ अछोत, धा. इम इच्छयो, अ. इमि इच्छे सु, ना. इम अछ्यौ त, स. इमि अर्घ स ।

टिप्पणी—(१) दह < दश । हदफ [अ.]=निशाना, लक्ष्य-भेद । (२) झख=संतप्त होना । सुइ=शुचि । विहान प्रभात ।

[१८]

दोहरा—भयु[१] विहान सुरिताण[०२] दर वज्जि+[३] निसांन+[४] निसांन+ । (१)
तमचूरन+ जूरण+[१] किरणि+ त+[२] प्रगटि+ दिसांन+ दिसांन[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) प्रभात हुआ और सुल्तान के द्वार पर धौंसे ही धौंसे बजने लगे; (२) ताम्रचूडों को कष्ट देने वाली [सूर्य का] किरणें दिशाओं दिशाओं में प्रकट हुईं ।

पाठान्तर—+ चिह्नित शब्द अ. में नहीं है ।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है ।

(१) १. धा. भउ, अ. भौ, ना. शा. स. भय । २. मो. ना. शा. स. सुविहान (पूर्ववर्ती शब्द की पुनरावृत्ति) । ३. मो. वाजि, धा. बजे, ना. शा. स. बनि (=वज्जि) । ४. धा. तादव्व, मो. निसान, ना. नौबत्ति, शा. स. नवबत्ति ।

(२) १. मो. तम बीर चरण, धा. तम चूरन पूरन, शा. स. तम चूरन जूरन, ना. तामचूर चूरण । २. यह शब्द मो. के अतिरिक्त किसी में नहीं है । ३. धा. दिसा ज निसाद, मो. तथा शेष में 'दिसान दिसान' ।

टिप्पणी—(१) विहान = प्रभात । दर [फा.] = द्वार । तमचुर < ताम्रचूड = मुर्गा । जूर < जूर् = झुरना, सूखना ।

[१९]

चउपई— इम चितत[१] चित्यो[२] सुरतांन[३] । (१)
वे[१] कहां[२] भट निसुरत्ति थांन । (२)

वइराग[१] राज[२] बनि थाइ[३] चंदु । (३)
दोइ[१] कहहि[२] गरुह[३] दुनिआं सु[४] दंदु ॥ (४)

अर्थ—(१) इस प्रकार [कवि के] चिंता करते समय सुरतान (शहाबुद्दीन) ने भी [भट्ट की] चिंता की [और निसुरत खाँ से पूछा,] (२) 'रे निसुरत खाँ, वह भट्ट (चंद) कहाँ है ? (३) विरागियों का राजा चंद वन में हो रहे, (४) [और इसके पूर्व, जैसा वह चाहता है] संसार के द्वंद्व की दो बातें [मुझसे] कह ले।"

पाठांतर— 1 चिह्नित शब्द अ. में नहीं है।

(१) धा. अ. चिंतित, फा. ना. चिंतति। २. मो. चित्यौ, धा. चिंत्यौ। ३. धा. फुरमान, शेष सब में 'सुरतान'।

(२) १. धा. अव, मो. केय, ना. श. स. वे। २. मो कहाँ।

(३) १. मो. विराग (= वइराग), धा. तथा शेष में 'वैराग'। २. अ. राग, ना. रज। ३. मो. बनि जाय धा. बन थाइ, ना बजाइन, शेष में 'वन जाइ'।

(४) मो. श. स. दोइ, धा. दइ, अ. दै, ना. दुइ। २. धा मो. फ. कहहि, ना. कह, अ. करहि, श. स. करै। ३. धा. मो गरुह, शेष में 'गरु'। ४. धा. स. स, मो. ना. श. सु, अ. य, फ. न।

टिप्पणी—(२) वे = वह। (४) गरुह < गरु अथवा गरुः।

[२०]

दोहरा— *तब ततारषांन[१] अरदास करि[२] ये आदमी सुविनांन[३] । (१)*
नट नाटक[×] डंभी डमरु[१] नहि[२] पुच्छिय सुरतांन[३] ॥ (२)

अर्थ—(१) तब ततारखाँ ने निवेदन किया, "यह आदमी सुविज्ञानी (सुचतुर) है; (२) नट, नर्तक, पाखंडी और डमरू को सुल्तान न पूछें—इनका विश्वास न करें [क्योंकि जिस प्रकार डमरू ध्वनि बहुत करता है किन्तु अन्दर से खोखला होता है उसी प्रकार ये भी ऊपर से बने हुए होते हैं, अंदर से सर्वथा रिक्त होते हैं]।"

पाठान्तर— × चिह्नित अक्षर फ. में नहीं है।

(१) १. मो. तब ततार षांनि, धा. ततार षां, अ. यो तत र, ना. पुनि ततार, श. भो ततार, फिरि ततार। २. मो. ना. श. स. करि, धा. कर, अ. किय। ३. मो. यं (< ये) आदमी सुविनांन, धा. वे आदमी सुविहान, अ. फ. वे अदम्म (अदम्ज—फ) सुरितान, श. स. वे आलम सुविहान, ना. ये आदम सुलितान।

(२) १. मो. डंभी डमरु, धा. अ. डंफिनि डउर (डवरु—अ. फ.), ना. श. स. डिंभी डमर। २. ना ना। ३. मो. पुंछय सुविहान, धा. पुच्छइ सुरतान, अ. पुछछै सुविहान, ना. श. स. पुच्छहि सुलतान

टिप्पणी—(१) अरदास < अर्ज़दास्त [फ़ा०] निवेदन। सुविनान < सुविज्ञान। (२) डंभी < दम्भिन्।

[२१]

दोहरा—पे[1] फकीर अरु[2] जाय तप[3] हम करामाति[4] सुरतान[5] । (१)
जउ कहहुं[1] गल्ह[×2] दोइ[3] पुछियइ[*4] अरु जु लियइ[*5] कछु[6] दान ॥ (२)

अर्थ— (१) [शहाबुद्दीन ने कहा,] "वह फकीर है और तप के लिए जा रहा है और हम करामाती (अद्‌भुत कार्य करने वाले) [अथवा करामातियों के] सुलतान हैं [इसलिए उससे बातें करने में कोई हानि नहीं है]। (२) यदि वह कहे (पूछे) तो दो बातें [मुझ से] पूछ ले, और यदि ले तो कुछ दान ले ले।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द फ. में नहीं है।

(१) १. मो. धा. स. पे, धा. वह, अ. फ. वहु, ना. यह। २. फ. अर, शेष में 'अरु'। ३. मो. जाय तप, धा. जाइ तप, ना. जाय (< जाय) तु, शेष में 'जाय। जाइ तप'। ४. मो. करामात, धा. करीम, अ. धा. स. करामाति, फ. करामातु। ५. मो. सुरतान, धा. अ. दुविहान, धा. स. सुलतान।

(२) १. मो. जु (= तउ) कहहुं, धा. जउ कहु, अ. कहहु, ना. जौ कहहि, धा. स. कहिग। २. मो. धा. गल्ह, शेष में 'गल्ह'। ३. मो. दोय, धा. दुइ, अ. दे। ४. मो. पुछीइ (= पुच्छिइइ), धा. पुच्छियइ, अ. फ. पुच्छियहि, ना. धा. स. पुच्छिये। ५. मो. जु लीइ (=लियइ), धा. जुलेहि, अ. जुलेइ, फ. ज लेइ ना. लिए। ६. धा. कछु।

टिप्पणी—(१) फकीर [अ०] = भिक्षुक, विरागी। करामत [अ० करामत का बहु०] = अद्‌भुत व्यापार। (२) गल्ह < गल अथवा गल्ह।

[२२]

दोहरा—तव[1] सहाव[2] सन उचरयउ[*3] मियाँ[4] मलिक जु+[5] षांन । (१)
धाइ[1] चंद संमुहि[2] चले[3] पे[*4] बोलइ[*5] सुरतान[6] ॥° (२)

अर्थ—(१) तब मियाँ, मलिक, और खानों ने शहाबुद्दीन से कहा, (२) "हे सुल्तान अब हम दौड़कर चंद के सम्मुख उसे बुलाने के लिए जा रहे हैं।"

पाठान्तर—° चिह्नित चरण धा. में नहीं है।
+ चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. ना. धा. स. तव, धा. तह, अ. फ. यह। २. मो. साहब, फ. सहाव, शेष में 'सहाव'। ३. मो. सन उचरयु (= उचरियउ), धा. संमुह पयो, अ. फ. मुष उच्चरिय, ना. मुख उच्चरयो, धा. स. मुष चवह इम। ४. फ. माया (< मांया)। ५. मो. यू (= जू), धा. वे, अ. वै, शेष में 'जु'।

(२) १. ना. धा. स. दौरि। २. मो. समहि (< संमुहि), शेष में 'संमुह'। ३. अ. चले शेष में 'चले'। ४. मो. बो (< बे), ना. बे, शेष में 'पे'। ५. मो. बालि (= बोलइ), ना. बुल्लै, शेष में 'बुल्लैं'। ६. अ. फ. सुरितान।

टिप्पणी—(२) संमुह < सम्मुख।

[२३]

पद्धडी— [१]बोलउ*[२] ति[३] चद हज्जूर[४] साहि[५] । (१)
बुम्मझ्इ*[१] त[२] वत्त[३] अप[३] पातसाहि[४] । (२)
वइराग[१] चदु तुम जोग[२] सत्ति[३] ।× (३)
जोगहि[१] विरुद्ध हम मिलन[२] मत्ति[३] ॥×[४] (४)

अर्थ—(१) [इस प्रकार] शाह (शहाबुद्दीन) ने चन्द को अपने हुजूर (समक्षता) में बुलाया, (२) और बादशाह आपही उससे यह बात पूछने लगा, (३) "हे चन्द [यदि] तुम विरागी हो और तुम में योग की शक्ति है, (४) तो हमसे मिलने की तुम्हारी मति योग के विरुद्ध है।"

पाठान्तर—*चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
×चिह्नित चरण ना. में नहीं है।
(१) १. मो. ना. शा. स. में इसके पूर्व है:
पहा सु बात दरबार साहि। हित अहित चित्त देख्यौ सु माहि।
आलम कहि सु करहि तथ। आवन दिहि किय कहि जथ।
२. मो. बोलु (= बोलउ), धा. वाल्यो, शेष में 'बुल्यौ'। ३. मो. ति, धा. तथा, शेष में 'सु'। ४. फ सु सर। ५. धा. गाहि, शेष में 'साहि'।
(२) १. मो. बुझि (= बुझइ) त, धा. पुच्छियइ सु, अ. फ. बूझी सु (रा—फ.), ना. बूझंत, शा. बुझ्झत। २. मो. वात, शेष में 'वत्त'। ३. मो. धा. अप, अ. फ. अपु, शा. स. अनु। ४. मो. पातसाहि, धा. पातिसाहि, शेष में 'पत्तिसाहि'।
(३) १. मो. विराग (= वइराग), धा. वइराग, शेष में 'वैराग'। २. मो. फ. योग (= जोग) धा. तथा शेष में 'जोग'। ३. मो. धा. सत्ति, धा तथा शेष में 'सत्त'।
(४) १. मो अ. फ. योगहि (= जोगहि), धा. जोगहि, शा. स. जोगह। २. धा. मिलण, मिलन। ३. मो धा मत्ति, शेष में 'मत्त'। ४. ना शा स में यहाँ और है (स.—पाठ):—
समझौ मान भानह हुजाब। तुर चल्यौ चद तुरे सहाब।
लै रचि मद्धि ठट्ठौ महल। सुव्वाम रास अदर चहल।
बठक सुरग सुम चित्रसाल। माहति अति उज्जास माल।
विरसाल महल वर रग धाम। प्रासाद उच मदप सिरोप।
वारग्रानि जाल पति भत्ति नूप। हिम थभ जाति जगमग सरूप।
दाम्कन कनक कुदन सुमाल। एवेक रूप रजत रसाल।
जग्गहि सजोति नग जटित जाम। राजत रवनि दमकथ वास।
अप काल रूप सरनी महल। कद्द इक कुंकुम रोचित रहल।
जालीय वार छनि गुरिदाम। नग जडु वद सज्जे सुवाम।
सत पत्र उच साला इएक। रहाँ मयन मयन सुप सेन नेक।
बनि गौप पट्ट सज्जे दुशाल। आछादि साम आसन उछार।
मूदा व गादि मदी सुपान। बैठा सुमाहि आसन उसान।
दप पच हथ्थ अधि चित्रमाल। सम फिरत मद्दि सहमरा मल।
उमरा व मीर बैठे सुतथ्थ। कुब्बत सूर संग्राम हथ्थ।

हंथे उतान चो अनूप। धनित्रिज मनहु मंडे सरूप।
ठड्डो सु कियौ कवि चद जानि। उम्मरा मीर सब अजि मान।

टिप्पणी—(१) हुजूर [फ़ा०] = समक्ष। (२) वत्त < वार्ता। अप < आत्म। (३) सत्ति < शक्ति। (४) मत्ति < मति।

[२४]

दोहरा— *हमहि मिलइ*[1] जि[2] चंद सुनि चरह[3] दलिद्दी लोभ[4]। (१)*
अरु जि[1] दुनी महि[2] संचरइ*[3] हम सउं* मिलत न[4] सोभ॥ (२)*

अर्थ—(१) "हमसे वह मिलता है जो, हे चन्द सुनो, चर (दूत), दरिद्री या लोभी होता है (२) और वह जो दुनिया में संचरण करता है, [तुम] हमसे मिलते हुए नहीं शोभा पाते हो।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. मिलि (= मिलइ), धा. ना. मिलहि, शेष में 'मिलै'। २. मो. जि, ना. जे, सा. शा. जै, धा. वे (< वे), अ. फ. वं। ३. ना. चरइ, ना. विरहि, अ. फ. ना. विरह। ४. मो. दलिद्दी लोभ, धा. अ. फ. दलिद्द (दरिद्र—अ. फ.) स लोभ, ना. शा. स. दरिद्राय लोभ।

(२) १ मो. जे (< जि), धा. जउ, अ. फ. जै, ना. शा. स. जु। २. मो. ना. शा. स. दुनी (= दुनी) महि, धा. दुनिअहि, अ. फ. दुनियह। ३. मो. सचरि (= संचरइ), ना. संचहि, शा. स. सचरहि, धा. अ. फ. अदरहि (अदरे—अ. फ.)। ४. मो. हम स. (= सउं) मिलत न, शा. स. हमसौं मिलत न, ना. तिन सु (= सउं) मिलित न, धा. हय गय गहि न, अ. फ. हय गय महि तन।

टिप्पणी— (२) दुनी < दुनिया [फ़ा०] = संसार।

[२५]

दोहरा— *तबहि[1] चंदु कवि उचरयउ* भल पुच्छइउ* [3]सुरतान[4]। (१)*
जोग भोग रह [1]रीति सह[2] सब जानउ[3] सुविहान॥ (२)

अर्थ—(१) तब चंद कवि ने कहा, "रे सुल्तान, तुमने अच्छा पूछा; (२) योग और भोग को उनकी गोप्य रीतियों के साथ सब तुम कल जानोगे।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. फ. तब सु। २. मो. चंदु कवि कचरयु = उचरयउ), ना. शा. स. चंद वि उचार्यो, धा. चंद अरदास क र, अ. फ चंद अरदासि (अरदास—फ.) किय। ३. मो. मल पुछु (= पुछइ), धा. भल पुच्छ्यो, अ. फ. भल पुछिठय, ना शा. स. सुभ पुच्छडु (पुच्छं—ना.)। ४. धा. सुलतान, अ. फ. सुविहान।

(२) १. मो. ना. यह, शा. स. इह, धा. अ. फ रह। २. मो. सह, धा. सब. अ. फ हो, ना. जो, शा. स. तो। ३. मो. सब जानुं (= जानउं), धा. सब जाणउ, अ. फ. सब जानौ, ना. साहि जानै।
४. मो. सवि आंन, धा. शा. स. सुविहान, ना. सुलतान, अ. फ. सुरितान।

टिप्पणी—(२) रह < रहस् = प्रच्छन्न, गोप्य।

[२६]

दोहरा— बालपणइ[1] प्रथिराज सह[2] अति मित्तत्तन[3] कीन्ह ।[4] (१)
जि[1] कछु सध्ध[2] मन मइ*[3] भइ* सब[5] इछ्छारस दीन्ह[7] ॥ (२)*

अर्थ—(१) ["इस समय तो यही निवेदन करना चाहता हूँ कि] बालपन में पृथ्वीराज के साथ मैंने अत्यन्त मित्रता की । (२) [उस समय] जो कुछ भी आकांक्षाएँ—अभिलाषाएँ मन में हुईं, उन समस्त इच्छाओं का रस (आनंद) पृथ्वीराज ने दिया ।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. बालापन, धा. बालपणइ, अ. फ. ना. बालप्पन, श. स. बालपनें । २ धा. ना संगि, अ. फ. संग (सग—फ), श. स. सम । ३. मो. मचित्तन, धा. अ. फ. मित्तरन, ना. मित्रातिन, श. स. मित्रतन । ४. अ. फ. कीन ।

(२) १. मो. जे (< जि), धा. तथा शेष में 'जु' । २. मो साध. धा. सद्ध, अ. फ सद्ध, ना. सुध, श. स. स्वाद । ३ मो. मि (= मइ), धा. महि, अ. फ. महि ना. में । ४. मो मइ, धा. अ. फ. भयौ, श. स. भयौ । ५. ना. सब, श. सो, स. संगि । मो. इंछा, धा. तथा शेष में 'इछ्छा' । ७. अ. फ. रस दीन, श. संगि लीन ।

टिप्पणी—(१) मित्तत्तन < मित्रत्व । (२) सध्ध < श्रद्धा ।

[२७]

दोहरा— इकु दिन[1] प्रथीराज रस मुष[2] कह्यौ तिह[3] वार । (१)
सिगिनि[1] सर पर भग विन[2] सत्त हनन[4] घरियार ॥ (२)

अर्थ—"एक दिन पृथीराज ने रस (आनन्द) में उसी वेला (बालपन) में मुख से [यह बात] निकाली, (२) 'सिंगिनी से [मेरे] शर श्रेष्ठ (तीक्ष्ण) अग्र भाग के बिना भी सात घड़ियालों को मार (बेध) सकते हैं ।'

पाठान्तर—(१) १. मो. इकु दिन, धा. एकै दिन, अ. फ. ना. इक स दिन, श. स. इक सु दिन । २. धा मुषि, मा. तथा शेष में 'मुष' । ३. मो. कह्यौ तिह, धा. कड्ढा किहूं अ. कढ्ढिय तिहि, फ. कढीय तिहि, ना. कह्यो तिहि ।

(२) १. धा. सिगन, ना. स्यगन, शेष में 'सिगिनि' । २. मो. ना. श. स. सरवर दृष्टि (दृष्टि—मा. श. स.) बिन, धा. सर कर अग्गि बिन, अ. फ. सर कर (कुर—फ.) अग्र बिनु । ३. मो. सतत, शेष में 'सत्त' । ४. फ. हन' ।

टिप्पणी—(१) वार = वेला । दृष्टि < दृष्टि अथवा 'ईक्षा' = देखने की क्रिया ।

[२८]

दोहरा— तिहि आयउ तुहि पास करि तुहि तु पास पहुचांन[1] । (१)*
सोइ दुरोग[2] लग्गइं मनइ कहन कउ[3] सु विहान ॥ (२)*

अर्थ—(१) "इसी से तुम्हारी आशा करके आया हूँ कि चहुआन तुम्हारे पास [अथवा पाश] में है; । (२) वही बुरा रोग मन में लगा है, और उसे इस प्रभात में निकालना है।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. ना. तिहि आयु (= आयउ, ना. आयौ), तुहि (तुह-ना.) पास करि तुहितु पास (पास-ना.)चहुआन, धा. अ. फ. अवमान (वर सुनत-शा. स.) कंयो (कहरो-धा.) हियां (हियौ-अ. फ.) दिल न रही (रहै-धा) विय थान (काम-धा.)।

(२) १. धा. दुरोग, मो. सोइ दुरोग, अ. फ. सुन दरोग, ना. सोइ दरोग, शा. स. सुद रोग। २. मो. लग्गहुँ मनह, धा. अ. फ. शा. स. मन रोग सो, ना लग्गै मनह। ३. मो. कढन कु (= कउ), धा. कढ़न कस्' , अ. कड्डन कों, फ. कड्डिन कों, ना. कढ़न को।

टिप्पणी— (२) पास < पाश्वं या पाश।

[२९]

त्रोटक[१]— [१]कढ्ढन कउ*[२] पतिसाहि तुही[४] । (१)
मन मम्भ[१] रहउ[२] कवि साल[३] जु ही[४] । (२)
गयउ* जु[×] आज करि पइजु* तुही[२] । (३)
वनि जाउ[२] साहि सुरतांन सही[२] । (४)

अर्थ—(१) "हे बादशाह, तू ही उसे निकालने को है—निकाल सकता है, (२) कवि के मन में जो यह शल्य रहा है, (३) [वह शल्य] आज गया ही है, यदि तू [उसके निकालने की] प्रतिज्ञा करे (४) और [तदनंतर] हे सुल्तानों के बादशाह, मैं वन अवश्य ही चला जाऊँ।"

पाठांतर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

(१) १. मो. में छंद का नाम नहीं है, धा. छंद, अ. फ. त्रोटक, ना. चौपई, शा. स. अरिल। २. धा. अ. फ. में यहाँ 'तिहि' भी है। ३. मो. कु (= कउ), धा. कूं, अ. फ. कौं, ना. को, शा. कुं। ४. मो. तुहि, शेष में 'तुही'।

(२) १. मो. मझ, धा. अ. फ. ना. मझि। २. मो. रहु (= रहउ), धा. अ. फ. ना. शा. स. रहयौ। ३. फ. साल्ह। ४. मो. जेहि, शेष में 'जु (जु-फ.) ही।'

(३) १. मो. ना. शा. स. गयु (=गयउ) जु (आयौ हु—शा. स., आयौ—ना.) आज (अज्जु-ना.) करी पिजु (= पइजु, पैज-ना. शा. स.) तुही (सही—ना.), धा. अ. फ. दे अज्जु किधौं करि है (करिहु-अ. कहिहौं-फ.) जु (कि-अ., के-फ.) नहीं।

(४) १. ना. जाइ। २. मो साहि सुरतान सहा, धा. अ. फ. सही पतिसाह (साहि-फ.) गही, शा. सुसाहि सहाव गही, ना. साहि साहावही।

टिप्पणी—(२) साल < शल्य। (३) पइज < प्रतिज्ञा। (४) ही < हृदय।

[३०]

दोहरा— सुनि सहाव गह गह हसौ[१] बे बे मइ सु मुट्ठ[२] । (१)
संधि हीन बल[१] हीन भयु[२] कह मग्गइ*[३] मति नट्ठ ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद की यह बातें सुनकर] शहाबुद्दीन जोरों से हँसा, [और उसने कहा,], "अरे भाट, यह बात झूठी है, (२) वह आँख हीन और बल हीन हो गया है, [ऐसी दशा में] ऐ नष्टमति, तू मुझसे [यह] क्या माँग रहा है?"

पाठांतर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. ना. शा. स. सुनि साहब गह गह हसे (हस्यौ—ना. शा. स.), धा. तब सहाब साहि उचरइ, अ. फ. सुनि सहाव हसि (हसु—फ.) उच्चरिय । २. मो. झु जट्ठु (= झुट्ठ ?), ना. शा. स झुट्ठ, धा. अ. फ. विनट्ठ।

(२) १. शा. स. मति । २. मो. मयु, धा. मउ (< मउ), शेष में 'भौ'। ३. मो. कह मगि (= मगइ), धा. को मग्गइ, अ. फ. का मंगे, ना. कहा मग्गौ, ना. वह मगै, स. कहा मगै।

टिप्पणी—(१) झुट्ठ [दे०] = झूठ। (२) नट्ठ < नष्ट।

[३१]

दोहरा— *धंपि विनट्ठौ[१] बल घटउ*[२] मति नट्ठौ[३] सुरतांन । (१)*

जि[१] *कछु मोहि अप्पण्ण कहउ*[२] *सु बोलु रहउ*[३] *परवांन*[४] *॥ (२)*

अर्थ—(१) [चंद ने कहा,] "[तुम्हारा यह कथन,] हे सुल्तान, [ठीक है कि] उसकी आँखें विनष्ट हो चुकी हैं, बल घट गया है, और उसकी मति भी नष्ट हो चुका है, (२) [किंतु] जो कुछ तुमने मुझे अर्पण करने के लिए कहा है, वह बोल (वचन) तो प्रमाण रहना ही चाहिए।"

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. अ. फ. अखि विनट्ठे, स. लंच हीन सौ। २. मो. घट्ठ (=घटउ), अ. फ. घटं, शा. घटव, शेष में 'घटियौ'। ३. अ. फ. नट्ठे।

(२) १. मो. जे (< जि) कछु, धा. सबै शेष में 'जु कछु (जु किछु—अ., जुकिछ—फ.)। २. मो. कहु (= कहउ), फ. कह्यौ, शेष में 'कह्यौ'। ३. मो. रहु (= रहउ), अ. फ. रहै, ना. होइ, धा. तथा शेष में 'रह्यौ'। ४. मो. जु विहान, फ. परमानु, शेष में 'परवांन'।

टिप्पणी—(१) विनट्ठ < विनष्ट। नट्ठ < नष्ट। (२) अप्पण < अर्पण। परवांन < प्रमाण।

[३२]

पद्धडी— *सुरतान जमन[१] फुरमान[२] दीय[३] । (१)*

पुर पुरह[१] मोरि[२] घरियार लीय[३] ।[४] (२)

मोकलउ[१] *चंदु तव राज*[२] *पास । (३)*

तुहि मंगहि नृपति हम[१] *दिपइं*[२] *तमास ॥ (४)*

अर्थ—(१) [यह सुनकर] यवन (मुसलमान) सुल्तान (शहाबुद्दीन) ने फर्मान दिया, (२) और पहले ही [समस्त पुर] के घड़ियाल छीन मँगवाए; (३) तब चंद को राजा के पास भेजा, (४) [और कहा,] "तुम राजा से [उसकी स्वीकृति] माँगो तो हम वह तमाशा देखें।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. जान, धा. उमन, अ. फ. साहि, ना पान, शा. स. जाम। २. मो. फरमान, शेष में 'फुरमान'। ३. मो. दीय धा. अ. फ दीन (दीन्ह-फ.), स. किन्न।

(२) १. मो. पुर पुरह, धा. अ. फ. ना. सब नयर। २. क. छोह। ३. मो. लोय, धा. अ. फ. ना. लीन (लीन्ह-फ.)। ४. शा. स. में चरण का पाठ है: हुज्जाव पान तिहि सथ्थ दिन्न (दीन-शा.)।

(३) १. मो. मोकलु (=मोकलउ), धा. मुकिलिउ, अ ना. मुकल्यो, फ. मुकल्योह, शा. स. ले जाहु। २. मो. तब राज, धा. अ. फ. ना. राजनह, शा. स. प्रथिराज (पृथिराज-शा.)।

(४) १. मो. ना. तुहि (तु-ना.) संगहि नृ-ति हम, धा तुम गहहु हम, अ फ तू संगि (संगु-फ.) हम सु (सि-फ.), शा. स. तु मगि हन। २. मो. दिपि (= दिषंइ), धा. अ. फ. दिखहि (दिषिहि-फ.), ना. शा. स. दिष्षै।

टिप्पणी—(१) फुर्मान [फा०] = राजादेश। (२) पुर < पुरस् = पहले। (३) मोकल [दे०] = भेजना, प्रेषित करना। (४) तमास < तमाशः [अ०] = मनोरंजक व्यापार, खेल।

[३३]

पधैडी—

[१]गयउ*[२] चद तब तेहि ठाहि[३] ।[१] (१)
नृप मिच वयहुउ* जहां चाहि[१×] ।[१] (२)
फुरमान साहि माहाब ईम[१] । (३)
दस हथ्थ रष्पि दीनी षसीस[१] ।[२] (४)
धर बंधु[१] राय अज्जान बाहु[२] । (५)
दुज्जने[१] राउ[२] वन वइर*[३] दाहु[४] ।[५] (६)
चालुक्क राय[१] पर[२] पइज*[३] पारि[४] । (७)
पंगुरे राय जगि जग्य[१] हारि[२] ।[३] (८)
धनुप धारि[१] अर्जुन नरेस । (९)
अरि बधि बंधि किए तीप मेस[१] । (१०)
मनमथ्थराय अवधूत धुत्त[१] । (११)
संभरिय राय सोमेस[१] पुत्त[२] ।[३] (१२)
जगि[१] रष्षि नांम[२] अजजर[३] सरीर । (१३)
चजि संग संग[१] आयउ*[२] सु मीर[३] । (१४)
राजा सु दान हइ*[१] सुगति[२] इक्कु । (१५)
[१]धरिआर सत्त सर[×] षघन निकु[२] ।[३] (१६)
विम देह नपतनह सुमग्ग[१] । (१७)
अंधि पांनि[१] मनु चितह[२] लग्ग[३] । (१८)
पहिचांनि[१] चंदु पर धुनिग सीस । (१९)
सिर न्यो नही मन[×] भई रीस[१] ॥ (२०)

अर्थ—(१) चन्द तब उस स्थान पर गया, (२) जहाँ पर उसने [अपने] राजा [और] मित्र पृथ्वीराज को बैठा देखा। (३) शाह शहाबुद्दीन का फरमान ऐसा था, [उसके अनुसार पृथ्वीराज से] दस हाथ [का अन्तर] रख कर [चन्द ने] पृथ्वीराज को आशीर्वाद दिया, [और कहा,] (५) "हे धरा के बन्धु राजा, हे आजानुबाहु, (६) हे दुर्जन राजाओं के वन (समूह) को वैर द्वारा दग्ध करने वाले, (७) तुमने चालुक्य राज (भीम) पर (के विरुद्ध) अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया, (८) जग (संसार) में पंगुराज (जयचन्द) के यश को नष्ट किया, (९) तुम धनुर्धारी अर्जुन हो, (१०) जिसने शत्रुओं को बाँध-बाँध कर स्त्री के वेश में [हाने के लिए विवश] कर दिया; (११) तुम मन्मथराज हो, अवधूत हो, और [शत्रुओं के लिए] धूर्त [भी] हो, (१२) तुम साँभर-नरेश और सोमेश्वर के पुत्र हो; (१३) जग में नाम (कीर्ति) रखकर जर्जर शरीर से (१४) एक सग (यात्री-समूह) के संग में संकट [की परिस्थितिओं] में [मैं यहाँ] आया हूँ। (१५) हे राजा, क्या तुझे एक दान की स्मृति है—एक दिया हुआ वचन स्मरण है ? (१६) वह सात घड़ियालों को [एक] शर से बेधने (बेधने) का था।" (१७) [यह सुन कर] उसका व्यग्र देह [मानो] सुभग नव तन [हो गया], (१८) और आँखों तथा हाथों में मानो चेतना आगई। (१९) [किन्तु पुनः] चन्द को पहचान कर उसने सिर पीट लिया, (२०) उसका सिर [नैराश्य से] झुक गया; और उसके मन में [शत्रु के प्रति] रिस नहीं हुई।

पाठान्तर— • चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

× चिह्नित शब्द ना. में नहीं है।

० चिह्नित चरण धा. अ. फ. में नहीं है।

(१) १. ना. शा. म. में यहाँ 'तब' भी है। २. मो. गयु (= गयउ), ना. शा. स. गयौ। ३. ना. नृप स्थ तप थाहि, शा. स. नृप सथ्थ थाह।

(२) १. नृप मित्त बयठु (= बयठउ) जाहाँ चाहि, ना. शा. स. जहां (नृप—ना.) मित्र बयट्ठो दिट्ठ (दिष्पि—ना.) चाहि (ना. में यह शब्द नहीं है)।

(३)-(४) १. इन दो चरणों के स्थान पर धा. मो. ना. शा. स. में है (धा. पाठ):—

दस हथ्थ (रहते दस हथ्थ—मो.) रष्पि दीनी असीस।

सिर नयो नयो नहि मान (सिर नाह नहो तिहि धरीय—मो., सिर नम्यो नहीं मनि धरीय — ना.) रोस। किंतु इस पाठ का दूसरा चरण समस्त प्रतियों में छन्द का अंतिम चरण है। २. धा. में यहाँ और है:

राज्जन है सरति इक्क। धरियार सत्त सर विद्ध नेक्क।

किन्तु ये चरण समस्त प्रतियों में स्वीकृत चरण (१५)-(१६) के रूप में आए हैं।

(५) १. मो. धर दांध, धा. अ. धर बध, फ. धर बंधु, ना धरि बंध, शा. धर 'ध, स. धर बंध। २. धा. फ. शा. स. आजानबाहु (आजानबाहु—धा.)।

(६) १. मो. दुर्जने, धा. अ. फ. दुज्जने, ना. दुर्जनिनि, शा स. दुरजन। २. मो. राउ धा. अ. फ. राइ, शा. स. हरि, ना. नरह। ३. मो. बन बीर (< विर—वैरा), धा. ना. बर बीर, अ. फ. बर वेर, शा. स. धर दाद। ४. फ. बाइ। ५. ना. में यहाँ और है:

अरि बद्दन पद्दन सु मुच्छ दारि।

(७) १. मो. चाहुकराय, धा. तथा शेष में 'चालुक्कराइ'। २. अ. फ. फिरि (फिर—फ.), ना. परि, धा. तथ शेष में 'पर'। ३. मो. पिन (= पइज), धा. तथा शेष में 'पंजु' (पंज—अ. शा. स.)। ४. शा. स. वार।

(८) १. मो. जगि जस, धा. जग जग्गु, अ. जग जस्स, फ. जब सत्र, ना. जगि जगि। २. शा. स. बार, फ. दा.। ३. शा. स. में यहाँ और है (स. पाठ):

वर वीर जित्ति मसिफ़त्त लिति । कम धज्जराय सिरदार किति ।
सुर वधि वंध जिहि किधी भेव । संमरे वस्त ममरि नरेस ।
रन थम थम जस मंडि पान । चालुक्क चपि जालौर थान ।

ना. में यहाँ और है : सजोगि भोग क्रत पंज पारि ।

(९) १. मो. धनुषधारि, धा. धर धरनि धार, अ. फ धनु धमं धीर (धाद–फ.), शा. स. धनुष धरि (धार–शा.), ना. धनुर्द्धार ।

(१०) १. अरि वधि वधि ति (= तइ) कीध भेस, धा. सुर वंध विद्धि जिहि कियउ केस, अ. फ. जिहि (जिह–फ.) अरसु (आसु–फ.) वंधि विद (बिव–फ.) लिय (लि–फ.) भेस, ना. अरि वदि वधि तैं कीय असेस, शा. स. जिद्धिया धीर दष्षिन सु देस ।

(११) मो अ. फ. ना. भूत ।

(१२) १. मो. शा. स. समरिय (समरी–शा.) राय (राव–स.) सोमेस, धा. संमरे रा समेसु, अ. फ. ना. संमरे राइ सोमेस । २. अ. फ. पूत । ३. ना. में यहाँ और है :

सक सूर थो संग्राम धीर । अद्भुत सुमंग दीपै शरीर ।
सावंत सूर सो रुहै न साय । दनपत्त मुत्ति दृ रहै हाथ ।

(१३) १. मो. जगि, धा. छुग, अ. फ. जुग, ना. शा. स. जग । २. धा रासु तासु, शेष में 'रष्पि नाम' । ३. मो. जर्जर, धा. अ. फ. जज्जर, ना. जर्जरि ।

(१४) १. ना. चलि लगि संगि । २. मा. आयु (= आयउ), धा. आयो, शेष में 'आयौ' । ३. मो. सु मीर धा. तथा शेष में 'स धीर' ।

(१५) १. मो. राजा जानहि, धा. राजन् सुदान है, अ. फ. राजनइ दान है, ना. राजदान दय, शा. स. राजदनइ । २. धा. सुरत, मो. तथा शेष में 'सुरति' । ३. अ. फ. एक, ना. शा. स. मेक ।

(१६) १. ना. में 'नै' और है । २. मो. सर बधन तिक्कु, धा. सिर बिधन इक्क, अ. सर बिधव मेक, फ. इन मरि बिमेकु, ना. बिधि एक, शा. स. सर बंधन तेक । ३. मो. ना. में यहाँ और है (मो. पाठ) :

अपियान मनु चिताइ लग । होइ सुजस तुअ नृपति सुमग । (तुल० चाप १८)

(१७) १. मो. विग्र देह नव तनइ सुमग, धा. विग्रार देहि उत्तर सुभग्ग, अ. फ. विधारि (विचारि–फ.) देहि (देहु–फ.) उत्तर सुमग्ग, ना. विग्रह सुदेह नव तनइ भग्ग, शा. स. विग्रह सुदेव नव तनह लग्गि ।

(१८) १. मो. अंधि थान, धा. अच्छहिम आन, अ. फ. यह सुनि अवन, ना. शा. स. दरि अंषि पानि । २. धा. अ. फ. चित्त । ३. शा. स. लगि ।

(१९) १. मो. पिहिचानि । १. अ. फ. सुनि, ना. बहिक ।

(२०) १. मो. सिर नाइ नही मन भई रीस, धा. अ. फ. सिर (सिरि–अ., सिद–फ.) नयो नयो नहि पान रीस, ना. शा. स. सिर नयो नहीं मन करिय (नहीं करिग–ना.) रीस (रीस–ना.) ।

टिप्पणी—(१) ठाइ < स्थान । (२) वाह < वांछ । (३) ईस < ईदृश–ऐसा । (५) अज्ञानवाहु < आजानवाहु । (७) पइज प्रतिज्ञा । पार < पालय । (१५) सुरति < स्मृति । (१७) विग्र < व्यग्र । नवतन < नूतन ।

[३४]

दोहरा— *सुनि कयिरा[1] वत्त चित्त किधउ*[2] दिसि दिमि[3] भूमय पाल*[4] । (१)*
रिस[1] धुनि सीसु निपेधु[2] करि[3] जिहुं[4] छुम्मिय[*] चंद मुहाल ॥ (२)*

(४) १. मो. अवसर सतु संचि, धा. अवसर सतु नचि, अ. फ. अवासरत नंच, ना. शा. स. अवसर सत नचि। २. मो. अछिया, अ. फ. अरिय, ना. शा. अरथ। ३. धा. छुटुअ, मो. छुटिय, शा. छुट्टहि। ४. मो मु (= मद), धा. मड, अ. तौ, फ. सौ, ना. शा. सा. मौ।

(५) १. मो. दि (= दइ), धा. दइ, ना. दे. शेष में 'दं'। २. मो. दानु, शेष में 'दानु' या 'दान' (दानि–फ.)। ३. मो. जांनु, धा. ना. जान, शेष में 'जानि'। ४. मो. संभरि, धा. सिंमर। ५. मो. वहु गाडु (= गडउ) तुहि उविलयहि, अ. फ. बहु गड्डिय तु उरहि अब, ना. शा. स. उरि गड्डिव, तुहि उलहि हनि।

(६) १. मो. दित अदित, धा. तथा शेष में 'दिति अदिति'। २. शा. स. इस। ३. धा. दुइ, मो. शा. स. दोउ, अ. फ. दै, ना. दो। ४. ना. चढि चलहि, शा. स. चढहि चलि। ५. मो. इह पुर काहा (<कदा) कवि, धा. इह उप्परि का कहुं (= कहउं) कवि, अ. फ. यहु उपाव (उपाउ–फ.) हौं करौं कव, ना. शा. स. इह उप्पर कह करहि (करै तु–ना.) कवि। ६. मो. में यहाँ निम्नलिखित चरण और है :

सोम अटक वह उचयु दिउयु दिउदि वयर काहा करहि कवि।

यह चरण अंतिम का पाठांतर लगता है।

टिप्पणी— (२) मित्तत्त < मित्रत्व। (४) अथ्थ < अर्थ। मउ < मय।

[३६]

दोहरा— तव[१] सुनि कवित[२] चल चित्तु किय अदभुत[३०] सुभित[०४] सरीर। (१)
मोह[१] अलुझ्यउ[*२] जानि कै[३] चित चरचउ[*] रणधीर[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] "तुम्हारी कविता सुन कर मैंने चित्त को चलायमान (क्रियाशील) किया, तो शरीर में अद्भुत [रस] शोभित होने लगा; (२) तुमने मोह [पंक] में आरुद्ध हुआ जान कर [ठीक ही] मेरे चित्त को रण-धीरता (वीररस) से चर्चित किया है।"

पाठांतर— ● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
० चिह्नित शब्द धा. में नहीं हैं।

(१) मो. के अतिरिक्त किसी में यह शब्द नहीं है। २. मो. कवि, शेष में 'कवित्त'। ३. मो. अधभुत, अ. अजहुं, फ. अजह। ४. मो. सुभित, अ. फ. चित्त, ना. सुमट, शा. स. मट्ट।

(२) १. मो. धा. मोह, शेष में 'मोहि'। २. मो. वलधुयु (= उलझ्यउ), धा. उरझ्यौ, अ. फ. अलुझ्यौ. ना. शा. स. उलझ्यौ। ३. मो. जान कै, धा. जान कवि, अ. फ. जानि (जानु–फ.) त्रिय, ना. शा. स. जानि कै। ४. मो. चित चरचु (= चरचउ) रणधीर, धा. हत प्रबोधन वीर, अ. फ. तात (तातु–फ.) प्रबोधन धीर, ना. चित चरच्चौ रन धीर, शा. स. चित्त प्रबुधन।

टिप्पणी—(२) अलुझ्यउ < आरुद्ध।

[३७]

दोहरा—धंपिहीन दोऊ भयउं[*१] तुं[*०] पहु धंपिन चूक[२]। (१)
असुर[२] दपु[२] किम[३] बिन सुरह[४] भइ[*] सुर मंघउ[*] मलूक[५] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद की] कविता सुनकर भूमिपाल (पृथ्वीराज) ने चित्त को दिशा-दिशा में चलाया; (२) किन्तु फिर रिस (रोष) से अपना सिर पीट कर निषेध किया [इस भाव से] जैसे चंद एक सुद्दाल (अलभ्य) वस्तु पर लुब्ध हुआ हो।

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. ना. चित्त चित्तं। २. मो. धा. शा. स. चल चित किय (कोउ = निश्चउ—मो.) अ. फ. चल (चलि—फ.) चद किय ना. इत मित वयन। ३. अ. फ. दस दिस, ना. इह दिस, स. दह दिस। ४. मो. धा. भूप पयाल, ना. भूप पयाल, अ. फ. भूपयपाल, स. भूम पयाल।

(२) १. स. सिर। २. मो. निषिधु (= निषेधु), अ. निषिद्ध, फ. रिषिद्ध, ना. निषद्ध। ३. धा. अ. फ. किय। ४. धा. जिय, ना. जिम, अ. फ. शा. स. में यह शब्द नहीं है। ५. मो. लभी अ. धा. लुभि, ना. लभ्भ, शा. स. लभ्भ, अ. फ. लोभी।

टिप्पणी (१) कवित्त < कवित्व। भुमय < भूमि। (२) लुम्म < लुभ्। सुद्दाल [अ०] = असंभव।

[३५]

कवित्त— संभरि नरेस करि रीस सीस[१] धुनहि न[२] धनु सज्जहि[३]। (१)
इह[१] मित्तत्त निमित्त[२] चित्त चिंतन सोइ वज्जहि[३]। (२)
निकट सुनइ*[१] सुरतांन[२] बांम दिसि उच्च हथ्थ[३] सउ[४]। (३)
जस अवसर सतु नंचि[१] अथ्थ[२] लुट्टिय[३] न करिय भउ[४]। (४)
दइ[१] दानु[२] जांनि[३] संभरि[४] धनिय उट्ठ° गड्डउ*° तुंहि° जल्लियहि°। (५)
दिति अदिति[१] वंस[२] दोउ[३] हंस उडि×इह[४] उप्पर कहा* करहि× कवि[५]॥[६] (६)

अर्थ—(१) हे साँभरनरेश, तू [शत्रु पर] रिस कर, सिर न पीट, धनुष साज। (२) यह मित्रता के निमित्त (नाते) [मैंने कहा है], और मेरे चित्त में उसी कार्य की चिंता है। (३) निकट ही सुल्तान बाईं दिशा में सौ हाथ की ऊँचाई पर सुन रहा है। (४) जैसे सौ अवसर [एक साथ] नाच उठे हों, [ऐसे समय में] अर्थ (प्रयोजन) लूट और भय न कर। (५) हे साँभर पति, तू जानकर यह [वचन] दे कि तू उसे [मारकर] गाड़ेगा और तू [स्वयं] भी जलेगा। (६) दिति और अदिति (दैत्य और देव) वंश के दो हंस (प्राण) उड़ चले, [इतना ही कवि कर सकता है,] इससे अधिक कवि क्या कर सकता है?"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. म. स. नहीं हैं।
× चिह्नित शब्द मो. में नहीं है।

(१) १. मो. शा. स. संभरि नरेस करि रीस, धा. संभरीस धरि रीस, अ. फ. संभरेस धरि रोस, ना. संभरि रिस धरि रोस। २. म. धुनिहि न, धा. अ. धुनहि न, फ. धुनिह, शा. स. धुनि न। ३. ना. सज्महि।

(२) १. अ. यह, शा. स. इहि। २. मो. मितत्तन मित्त, धा. मित्तत्तनु मित्त, ना. नितत्त्र निमित्त, शा. म. मित्ततन मित्त। ३. मो. चित्त न सोइ छज्जहि, धा. चिंतवि सो छज्जहि, अ. फ. चिंता तुव कज्जहि, स. चिंता सोइ सज्जहि, ना. चिंतत सोइ छज्जहि, शा. चिंता सोइ सज्जहि।

(३) १. मो. सुनि (= सुनइ), धा. सुनहि, अ. फ. सुनें। २. अ. फ. सुरिताम। ३. अ. उच्च हथ, फ. उच्च हथ्थ। ४. मो. सुं (= सउ) धा. सउ, शेष में 'सौ'।

(४) १. मो. अवसर सतु सचि, धा. अवसर सतु नचि, अ. फ. अवासरत नंच, ना. शा. स. अवसर सत नचि। २. मो. कज्यिा, अ. फ. कत्थि, ना. शा. कत्थ। ३. धा. लुट्टुम, मो. लुटिय, शा. लुट्टहि। ४. मो मु (= मइ), धा. मइ, अ. सौ, फ. सौ, ना. शा. सा. मो।

(५) १. मो. दि (= दइ), धा. दइ, ना. दे. शेष में 'दं'। २. मो. दानु, शेष में 'दानु' या 'दान' (दानि-फ.)। ३. मो. जांनु, धा. ना. जान, शेष में 'जानि'। ४. मो. समरि, धा सिमर। ५. मो. वहु गाडु (= गडउ) तुहि उविकयहि, अ. फ. वहु गड्डिय तु अरहि अव, ना. शा. स उरि गड्डहि, तुहि उलहि हवि।

(६) १. मो. दित अदित, धा. तथा शेष में 'दिति अदिति'। २. शा. स. इन। ३. धा. दुइ, मो. शा. स. दोउ, अ. फ. दै, ना. दो। ४. ना. चहि चलहि, शा. स. चहहिं चलि। ५. मो. इह पुर काहा (<कहा) कवि, धा. इह उप्परि का कहुं (= कहउं) कवि, अ फ यहु उपाव (उपाउ-फ) हौ करों कव, ना. शा. स. इह उप्पर कह करहि (करै ज्ञुन्ना.) कवि। ६. मो. में यहाँ निम्नलिखित चरण और है :

सोम मटल वह चवयु दिज्यु दिउदि वपर काहा करहि कवि।

यह चरण अंतिम का पाठांतर लगता है।

टिप्पणी—(२) मित्तत्त < मित्रत्व। (४) अथ्य < अर्थ। मउ < मय।

[३६]

दोहरा— तव[१] सुनि कविता[२] चल चितु किय अदभुत[३०] सुभित[०४] सरीर। (१)
मोह[१] अलुझयउ*[२] जानि के[३] चित परचउ* रणधीर[४]॥ (२)

अर्थ—(१) [पृथ्वीराज ने कहा,] "तुम्हारी कविता सुन कर मैंने चित्त को चलायमान (क्रियाशील) किया, तो शरीर में अद्भुत [रस] शोभित होने लगा; (२) तमने मोह [पंक] में आबद्ध हुआ जान कर [ठीक ही] मेरे चित्त को रण-धीरता (वीररस) से परिचित किया है।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) मो. के अतिरिक्त किसी में यह शब्द नहीं है। २. मो. कवि, शेष में 'कवित्त'। ३. मो. अधभुत, अ. अज्झुं, फ. अज्जह। ४. मो. सभित, अ. फ. चित्त, ना. सुभट, शा. स. भट्ट।

(२) १. मो. धा. मोह, शेष में 'मोहि'। २. मो. वलधुयु (= वलथयउ), धा. उलझ्यो, अ फ. अलुझयो. ना. शा. स. उलझ्यो। ३. मो. जान के, धा. जान कवि, अ. फ. जानि (जानु-फ.) जिय, ना. शा. स. जानि कै। ४. मो. चित परचु (= परचउ) रणधीर, धा. हत्त प्रबोधन वीर, अ. फ. तात (तातु-फ.) प्रबोधन धीर, ना. चित परच्यौ रण धीर, शा स. चिन्त प्रबुधन।

टिप्पणी—(२) अलुझयउ < आरुद्ध।

[३७]

दोहरा—धंधिहीन दोऊ भयउ*[१] तु*° षहु धपिन चूक[२]। (१)
असुर[१] दधु[२] किम[३] विन सुरइ[४] मइ* सुर पंधउ* अलुक[५]॥ (२)

अर्थ—(१) "[किन्तु] मैं दोनों आँखों से हीन हो गया हूँ, तू चार-दो शरीर और दो बुद्धि की-आँखों से भी [यह देखने में] चूक रहा है ! (२) असुर का सुर के बिना कैसे शमन है ? मैं सुर तो वैरी उल्लू [हो रहा] हूँ।

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
 ० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।

(१) १. मा. अंषिहीन दोउ भयु (= भयउ), धा. में अखिन सुरषि, अ. फ. तू बिहु अषिन अनुसरहि (अनुसरहि-अ.), ना अषिहीन बहु दुख भयौ, शा. स. वे अषिनहीनौ सु हौ। २ मो. चु (< चु) चहु अषिन चुक, धा चहु अषिन चुक, अ फ हौ बिहु (बिहौं-फ.) अषि उलूक (अलूक-फ.), ना. चुं चव अषिन चुक्क।

(२) १. मो. असु, शेष में 'असुर'। ना. वहौं, शा वधो, स वधौ। ३ मो ज ।., किमि, शेष में 'किम'। ४. अ फ. करि वरौ। ५. मो. मि (= मइ) सुरवधु (< वधउ) अलूक, धा. मै सुर बध्यो उलूक, अ. फ. सुपधंत अचूक, ना. मै सुर विध्यौ उलूक, शा. स. उर सुर दध्यो उलूक।

टिप्पणी—वधउ उलूक : प्रसिद्ध कथा है कि कौओं और उल्लुओं में अनबन हो गई, जिससे रात्रि में उल्लू कौओं के बच्चों को खा जाते। कौओं ने मित्रता का स्वाँग करके उन्हें अपना राजा मान लिया और अपने घोंसले उनके कोटरों के पास बनाने का बहाना करके वहाँ लकड़ियाँ इकट्ठा की। एक दिन उस काष्ठ-समूह में उन्होंने आग लगा दी। दिन में उल्लुओं को कुछ सूझ नहीं पड़ा और वे सब जल मरे।

[३८]

कवित्त— अरे*[१] नरिंद[२] वा बंध०[३] पिंड कच्चउ*[४] सुर० सच्चउ*[५] । (१)
 अपु[१] तेज समीर धरा[२] आयास[३] ज[४] पंचउ*[५] । (२)
 जरा जाल बंधियउ*[१] काल आनन महि खिल्लइ*[२] । (३)
 हं तुहं* तुं तुहं*[१] अजप[२] जप्पि सम पर[३] करि[४] मिल्लइ[५] । (४)
 जिम चलइ*[१] हंस हसी सरिस[२] छंडि मोह[३] तन पजरहि[४] । (५)
 प्रथीराज आज तिहिं मति करि[१] करि[२] नरिंद जिनि[३] उब्बरहि[४] ॥ (६)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा,] "अरे नरेन्द्र अथवा बन्धु [पृथ्वीराज], पिंड (शरीर) कच्चा है, और [उस शरीर में निवास करने वाला] सुर (चेतन जीव) सच्चा है। (२) आप (जल), तेज, समीर, धरा, आकाश—इन पाँच [से यह पिंड बना है]। (३) यह जरा (वृद्धता) के जाल में बँधा हुआ है, और काल के आनन (मुख) में खेलता [रहता] है। (४) 'अहंत्व', 'त्वत्व' ('मैं तुम हूँ', 'तुम तुम हो') का अजपा जाप और समानता (सम भाव) करके तू [ब्रह्म में] मिल जा। (५) जिस प्रकार हंस हंसिनी के साथ मोह और तन पजर का छोड़कर चल पड़ता है—हंसिनी के साथ वह भी प्राण त्याग कर देता है, (६) तू भी पृथ्वीराज, आज वही बुद्धि कर और [ऐसा कुछ] कर कि जिससे तू उबर जावे—मुक्त हो जावे।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
 ० चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
(१) १. मो. अरि (= अरे), अ. फ. रे, शेष में 'अरे'। २. ना. अन्व। ३. मो. बारंध, अ फ.

वा बन्ध (अन्धु—फ.), ना. शा. सामंथ। ४. मो. कान्नु (= काचउ), धा. कच्चौ, अ. फ. कच्चउ, ना. कच्चौ। ५. मा. साच (सचु=साचउ), धा. अ. सचा (संचौ—अ.) फ. ना. शा. स. सच्चौ।

(२) १. मो. अपु (= अप्पु), धा. अ. फ. आप, शा. स. अब। २. ना. धरी। ३. मो. अ. फ. आयस, ना. आयासु, शा. स. आकास। ४. मो. ज, धा. ना. स. ग, अ. गये, फ. ग। ५. मो. पंचु (= पंचउ), धा. तथा शेष में 'पंचौ' या 'पंचो'।

(३) १. मो. वधीयु (= बधियउ), धा. बंधियउ, अ. फ. बद्धयउ (बद्धयौ—फ.), ना. शा. स. बिद्धयौ। २. मो. मुख पील (= पीलउ), धा. मुह खिल्लइ, अ. फ. पर (पइ—फ.) पिल्ल, ना. स. महि पिल्लहि (पिल्ल—ना.), शा. महि पिलय पय।

(४) १. मो. हलइ (< हल्लइ < हल्लइ) तुलइ (< तुल्लइ), धा. हल हैलु, फ. हलं हलं, अ. हलं तह, ना. हलं तह, स. हलं पयिहं। २. ना. अजपा। ३. मो. सख्वर, धा. सरवस, अ. फ. स. सरवर, ना. सरवर। ४. मो. करि कर, ना. कर, शेष में 'करि'। ५. मो. मोलिहि (< मीलिहि = मिलिहि), धा. मिलइ, अ. फ. ना. मिलै, शा. स. मिलहि।

(५) १. मो. जिम चलि (= चलइ), धा. जुव चलै, अ. फ. चलि (= चलइ), ना. जिन चलै, शा स. उद चलै। २. मो. हसि (= हसइ) सरस, धा. हसहि मरिस, अ. हंसइ सरिस, फ. हसइ साहसि, शा. स. हसइ सरिस, ना. हसइ सरिस। ३. मो. मोह, शेष में 'जेह'। ४. धा. पंजरे, मो. ना. पंजरहि, अ. फ. पंजरहि (जजरहि—फ.)।

(६) १. मो. आजं तिहि मति करि, धा. आउ तब मुक्तिकर, अ. आज तुव कर मुकति, फ. आज तुव कति कति, ना.—आज कर मुक्ति तव, शा. स. सो मंत करि। २. धा. वह, फ. वह, शा. चिह, स. जस। ३. मो. जिनि, धा. जेहि, अ. जिहि, फ. वर, ना. जिम, शा. जग। ४. धा. उब्बरे, फ. उब्बरहि।

टिप्पणी—(१) बंध < बन्धु। (२) आयास < आकाश।

[२६]

चउपई[१]— तुं राजा सामर्थह धीर। (१)
सर्ग अर्थ जानइ* सह वीर[२]। (२)
अथ्थी[१] दोष° न° प×रवै°[२] राय[३]। (३)
वकलि[१] नरिंद बोलव्यउ*[२] साहि॥(४)

अर्थ—(१) [चन्द ने कहा] "हे राजा, तू सामर्थ्य का धीर (सामर्थ्यवान) है। (२) सर्ग (मोक्ष) तथा अर्थ—सभी, हे वीर, तू जानता है: (३) हे राजा, अर्थी (अर्थाकांक्षी, याचक) [बार-बार माँगने में भी] दोष नहीं देखता है; (४) [इसलिए मैं तुझ से पुनः याचना करता हूँ,] तू [वचन] बकश (दे); शाह ने बुला भेजा है।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
° चिह्नित शब्द धा. में नहीं है।
× चिह्नित अक्षर अ. में नहीं है।

( )-(२) १. मो. चुपी (= चउपई), धा. चउपई, अ. फ. छन्द, ना. स. चौपई, शा. चौपाई। २. इन दो पंक्तियों का पाठ विभिन्न प्रतियों में निम्नलिखित है :

मो. ना. : तुं (तू—ना.) राजा सामर्थइ धीर (समरथ अरु धीर—ना.)।
सर्ग अर्थ जाणहि (जानि = जानइ—मो.) सह (साहि—ना.) बीर।

धा. : अर्थ धर्म तू ... ... न।
सुर्ग अर्थ जिम अर्थ कीन।
शा. ग : तू राजा समरथ्थ सुजान।
सुरग अरथ जानहि सथान।
अ. फ. : राज दान समर्थ सु (स-फ.) किन्नौ।
स्वर्ग अर्थ जस रस सु किन्नौ।

(३) १. मो. अथ्थी, धा. अस्ति, अ. फ. अर्थी, ना. अर्थ, शा. स. अरथी। २. अ यति, फ पद्यति ना. देषै, शा. स. पूछिय। ३. धा. राइ, अ. रावा, फ. राआ।

(४) १. स. वयसि। २. धा. मो बुल्यो बोलीए (= बोलिअउ), अ बोलब्यव, फ. बोलविउ (< बोलव्यउ), ना. बुलायौ, शा. रू. बुलाऊ। ३. मा ना. शा. स. माहि (साह-शा.), धा. मंह, अ सायौ, फ. साभो।

टिप्पणी—(२) सद्द=समस्त। (३) अथ्थी < अर्थिन्। (४) बकस < बख्श [फा०] = दे।

[४०]

कवित— तबहि[१] चंदु विरदिया*[२] साहि अग्गइ[३] कर[४] जोडइ। (१)
कृपन[१] गठि जिम साहि[२] राज अब[३] गंठि न[४] छोरइ[५]। (२)
नट[१] नकार नहि करइ[२] जाउं जिहि[३] आस छोडि[४] तप[५]। (३)
अदभुत[१] रस[२] सुरतांन[३] जाय मुक्कि न बहु अरप[४]। (४)
छंडउ*[१] सु लोभ[१] जिम जंमु वहु[३] अब अतीव[४] अंतर रहउ*। (५)
फुरमान साहि सत्तहु वधउ*[१] विन फुर मानम सर[२] गहउ*[३]॥ (६)

अर्थ—(१) तब विरदिया चंद शाह (शहाबुद्दीन) के आगे हाथ जोड़ [कर कह] ने लगा, "(२) कृपिण की गाँठ के समान, हे शाह, राजा अब [मन की] गाँठ नहीं खोल रहा है। (३) वह नट-नकार (अस्वीकार) भी नहीं करता है, कि जिससे मैं [उसकी] आशा छोड़कर तपस्या के लिए चला जाऊँ। (४) एक अद्भुत रस [उपस्थित] है, जिसको बहुत अल्प भी छोड़ते नहीं बन रहा है। (५) उसने जीव और जन्म (जीवन) का लोभ छोड़ दिया है, [इसलिए] अब [पहले की तुलना में] अतीव अंतर पड़ गया है; (६) [वह कहता है,] कि शाह के फरमान से ही वह सातों घड़ियालों को बंधेगा (वेधेगा), और बिना [शाह के] फुरमान के शर भी नहीं ग्रहण करेगा।"

पाठांतर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. शा. स. तब सु। २. मो. वरदीया, धा तथा शेष में 'वरदाइ'। रचना में अन्यत्र विरदिया ही आया है, यथा, २. २९, ३. १, ५. २९, ८. ११, ८. १४। ३. मो. आगि (= आगइ), धा. 'अग्गइ' शेष में 'अगौ'। ४. फ. करि। ५. मो. जोडि (= जोडइ), धा. जोरइ, शेष में 'जोरै'।

(२) १. धा. फ. ना किपन। २. धा. दान जिम साहि, मो. गंठि जिम साहि, अ. दान निमि गंठि, फ. दान निम गठि, ना. कठि जिमसाहि। ३. अ. फ हिय। ४. मो. गंठ न, ना. गंठनि। ५. मो. छोरि (छोरइ), शेष में छोरै।

(३) १. धा. अ. फ. नटि, मो. तथा शेष में 'नट'। २. मो. करि (= करइ) धा करइ, ना.

टिप्पणी—(५) जम < जन्म=जीवन।

करहि, शेष में 'करें'। ३. फ. यिह। ४. मो. छोरि, धा. छोड़ि, अ. फ. ना. छंडि। ५. शा. स. सब।

(४) १. धा. मो. अदबुद, शेष में 'अद्भुत'। २. मो. रिस, शा. रस, शेष में 'रस'। ३. ना. शा. स. असमान। ४. मो. जाय मुकि न बहु अरप, धा. ना. जाइ मुक्यो (मुक्यौ–ना.) न बहु अप, अ. फ. सुं (सो–फ.) जु मुक्यौ न जाइ अप, शा. स. जाइ मुक्यौ न घन अप।

(५) १. मो. छंड्ड (< छड्डुं = छड्डउ ?), धा. छब्यो, ना. शा. स. छड्यौ, अ. फ. छडे। २. मो. ना. शा. स. सुलोभ, धा. सलोभ, अ. न मोह। ३. मो. जमु वड्ढ, धा. जनम को। ४. मो अब लब, धा. अब ओब, अ. फ. अबं तेब, ना. अब अतीव, शा. स. सावर (और–स.) अतिव। ५. मो. रहु (= रहउ), धा. अ. फ. रहे, ना. रहुं (= रहउ)।

(६) १. मो. सत्तह वधु (= बधउ), धा. सत्तउ बधइ, अ. फ सतो (सातो–अ.) विधे, ना. सत्तहि बधु (= बधउ), शा. स. सत्तहि बधौं (बँधौ–स.)। २. ना. निजरि, ३. मो. गहु (< गहु = गहउ), धा. अ. फ. गहे, ना स गहे, ना. गहु (= गहउ), शा. स. गहौं।

टिप्पणी—(५) जम < जन्म।

[४१]

कवित्त— झुकि ततार षा उठउ[*1] भट्ट जीवन पर रूट्ठउ[*2]। (१)
पातसाहि[1] गोरी नरिंद अग्गइ[2] भयु[3] जुट्ठउ[*4]।‡ (२)
तस[1] सुभरि[2] घटिआल अग्र बिन इकु[3] न विंधिइ[4]। (३)
मरद सु मुष उच्चरइ[*1] जि कछु[2] अग्गइ[*3] सब सधिइ[*4]। (४)
फुरमान साहि तुहि[1] तिन्न दिय[2] जउ[*3] चहुआनइ[*4] होइ फल। (५)
एइ[1] बान एह[*] सिंगिनि धरिय[5] इह[3] घरियार न विंधि[×] बल[4]॥ (६)

अर्थ—(१) ततार षा [यह सुनकर] झुक उठा—रुष्ट हो उठा, [और कहने लगा,] "हे भट्ट तुम अपने जीवन पर रूठ गए हो। (२) [ऐसा लगता है], तुम बादशाह गोरी नरेंद्र के आगे झुठे पड़े हो, (३) क्यों कि अग्र (बाण के अग्रभाग) के बिना एक भी सुभट घड़िआल नहीं विधेगा; (४) मर्द वह है जो मुख से जो कुछ उच्चारण करे आगे उस सब को साध सके। (५) बादशाह ने तुझे तीन फरमान दिए, यदि चहुआन (पृथ्वीराज) को [इतने से भी] फल (इतमीनान) हो; (६) यह बाण है और यह सिंगिनी [भी] रक्खी हुई है; [वास्तविकता यह है कि] इन घड़ियालों को बेधने का बल [पृथ्वीराज में] नहीं है।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
‡ चिह्नित चरण अ. फ. में नहीं है।
× चिह्नित शब्द शा. में नहीं है।

(१) १. मो. झुकि ततार षांन ऊठु (ऊठउ), धा. अ. फ. झुकि ततार षां बठो, ना. शा. स. तब ततार झुकि (झपि–ना.) उठ्यौ। २. मो. भट्ट जीवन पर रुट्ठु (= रुट्ठउ), धा. भट्ट जीवन पर तुट्ठउ, अ. फ. भट्ट जीवन (जीवनु–फ.) अनुरत्तो, ना. शा. स. भट्ट जीवन पर रूठो (परि रुट्ठो–ना.)।

(२) १. बादिसाह, मो. पातसाहि। २. मो. आगर, धा. अग्गर, शेष में 'अग्ग'। ३. मो. भयु, धा. भउ, शेष में 'भयौ'। ४. मो. जुठु (= जुठउ), धा. जुझ्झ, ना. जुठौ, शेष में 'झुट्ठौ'।

(३) १. मो. तस, धा. ना. शा. स. सत्त, अ. फ. सक्ष । २. मो. सुमरि पटिआल, अ. फ. समर पट्टियार धा. तथा शेष में 'सुमर पट्टियार । ३. धा. एकु, ना. अग्ग, मो. तथा शेष में 'इक्कु'। ४. मो. विधीइ धा. विद्धइ, अ. फ. विर्द्ध, ना. वधीय, शा. स. विद्धिय ।

(४) १. मो. सुमुष उचरि (उच्चरइ), धा. ज मुंष उच्चरहि, अ. फ. जु मुंष उचरे, ना. जेह मुष उच्चरहि, शा. स. सु मुष उच्चरे । २ मो. नि कहूं, धा. अ. जु कछु, फ. जु कुछ, ना. शा. स. होइ । ३. मो. आगि (=आगइ), शा. अगें धा. तथा शेष में 'अगें' । ४. मो. सत्त सधीइ, धा. सब सिद्धइ, अ. फ. सब सिद्धै, ना. शा. स. जो सिद्धिय ।

(५) १. ना. सुइ । २. मो. तिन दीय (=दिय), धा. तिन्न दिय, अ. फ. तीन दियै, ना. शा. स. तौ नहीं । ३. मो. जु (= जउ), धा. जइ, ना. ज, शेष में 'जउ' । ४. मो. चहुआनि (= चहुआनह), धा. फ. शा. स. चहुवानहि, अ. चहुवान नहि, ना. चहुवान न ।

(६) १. मो. एइ, धा. अ. फ. इय, ना. शा. स. इह । २ धा. ना. शा. स. ऐह (एह—ना. शा. स.) सींगनि (सिंगिन—ना. शा. स.) धरिय, धा. इयं सिंगिनिय वरि, अ. फ. इय (इयं—फ.) वर सगिनि (सिगुनि—फ.)। ३. म. इह, धा. इन, अ. फ. यनि, ना. ए । ४. मो. न विधि बल, धा. न विधहि बल, अ. फ. निविद्ध तल (बल—फ.), ना. स. न विद्द (विद्ध—ना.) बल ।

टिप्पणी— (४) मरद < मर्द [फा०] = पुरुष ।

[४२]

कवित्त— भयउ*[1] चंदु मुष[2] चंदु दंदु[3] गयु*[4] काम सपत्तउ*[5] । (१)
पातिसाहि[1] गोरी नरिंद दिन्नउ*[2] बोल निरत्तउ*[3] । (२)
बहुरि[1] चंद बरदाइ[2] फिरिय[3] राजन प्रति आयउ*[4] । (३)
जु[1] कछु तंत्त कउ*[2] मंत्त अंत कहि कहि समुझायउ[4] । (४)
मइ[1] दियउ*[2] दान चिंता म करि[3] चा*[4] होइ चंदु सदइ*[5] निरति[6] । (५)
फुरमांन काजि[1] अग्गइ[2] षरउ[3] देहि साहि मंगइ[4] नृपति । (६)

अर्थ—(१) चन्द बरदाई का मुख [प्रसन्नता से] चंद्रमा [के समान] हो गया, [उसका] द्वन्द्व चला गया और [उसकी] कामना संप्राप्त हो गई, (२) [क्यों कि] बादशाह गोरी नरेन्द्र ने स्पष्ट वचन दे दिया । (३) तदनन्तर चन्द बरदाई लौट कर राजा (पृथ्वीराज) के पास आया, (४) और जो कुछ तत्त्व का मंत्र था, उसका अन्त (रहस्य या मर्म) कह कह कर समझाया । (५) [राजा से उसने कहा,] "मैंने [तेरी ओर से बिना तेरे कहे ही वचन का] दान दे दिया है; तू चिन्ता न कर; चन्द के शब्द (वचन में) तुझे यावत (निश्चयपूर्वक) निरति (ममता, तल्लीनता) हो (६) फुरमान देने के लिए [शाह] आगे खड़ा है; तू, हे राजा, माँगे तो शाह दे ।"

पाठान्तर— * चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं ।

(१) १. मयु (=भयउ), शेष में 'भयो' या 'भयौ' । २. अ. फ मन । ३ दद्द फ. इंदु, शेष में 'दंदु' । ४. मो. ग्यु (< गयु=गयउ), धा. गउ, अ. फ. गय, ना. गौ । ५ ना. सपत्तु (= सपत्तउ), धा. सपत्तउ, शेष में 'सपत्तौ' ।

(२) १. धा. बादिसाहि, मो. पातसाह, शेष में 'पातिसाहि' । २. मो. दीउ (= दिन्नउ), धा. अ. फ. शा. दिय, स. दियौ, ना. तर । ३. निरत्तु (= निरत्तउ), धा. निरत्तउ, अ. फ. ना. निरत्त (निरत्तौ—अ.) ।

(३) १. मो. बहुरि, धा. ना. शा. स. तबहि, अ. फ. फिरिव। २. मो. वरदाय। ३. मो. फिरत, धा फिरिवि, अ. फ. बहुरि। ४. मो. आउ (= आयउ), धा. आयो, शेष में 'आयौ'।

(४) १. मो. कु, ना. जो, धा. तथा शेष में 'जु'। २. फ. जुछ। ३. मो. कु (= कउ,) धा. को, शेष में 'कौ'। ४. मो. समुझाउ (= समुझायउ), धा. समुझायो, फ. समझायौ, शेष में 'समुझायौ'।

(५) १. मो. मि (= मइ), धा. मइ, शेष में 'मैं'। २. मो. दीयु (= दियउ), धा. दियो, शेष में 'दियौ'। ३. मो. म करि, धा. न कर शेष में 'न करि'। ४. मो. या (= जा), यह शब्द और किसी में नहीं है। ५. मो. सदि (= सदइ), धा. ना. स. शा. सद्दे (सद्दै—ना. स. शा.), अ. फ. सद्द। ६. मो. नरति, धा. ना. शा. स. निरति, अ. फ. अरति (अरितु—फ.)।

(६) १. मो. धा. ना. काजि, अ. काज, फ. कज, शा. स. कज्ज। २. मो. आगइ, धा. अग्गइ, शेष में 'अग्गै'। ३. मो पउ (= परउ) धा. परउ, शेष में 'परौ'। ४. मो. मंगि (= मंगइ), धा. मगइ, शेष में 'मंगै'।

टिप्पणी— (१) दंदु < द्वन्द्व। सपत्त < संप्राप्त। (२) निरत्त < निरुक्त (?) = स्पष्ट। (४) तंत < तत्व। मंत < मंत्र। (५) जा < यावत्। सद < शब्द।

[४३]

दोहरा— सपत घात[१] घरिघार[२] घन[३] पंच धत्त[४] हनि जांन[५]। (१)
कठिन कम्म[१] गोरी हनन[२] अप्प देत[३] फुरमांन[४] ॥ (२)

अर्थ—(१) [चंद ने पृथ्वीराज से कहा,] "सप्त धातु के सघन घड़ियालों को यदि तुमने मार (वेध) दिया, तो [अपने] पंच धातु (पंच तत्वों) को मानो मार दिया [और तुम मुक्त हो गए]; (२) [यह जान लो कि] गोरी को मारना कठिन कर्म है; वह स्वयं फ़ुरमान दे रहा है।"

पाठान्तर—(१) १. अ. फ. धत्त, ना. घात। २. मो. घरिआल, शेष में 'घरियार'। ३. अ. फ. बिन (बिनु—फ.), ना. हन। ४. अ. फ. तत्त, ना. शा. स. धात (धातै—ना.)। ५. अ. फ. जाम।

(२) १. धा. कम्म, शेष में 'काम'। २. धा. गोरिय गहन, मो. ना. शा. स. गोरी हनन, अ. फ. गोरी वहन। ३. मो. ना. शा. स. देत, धा. देइ, अ. फ. देहि। ४. मो. फरमान।

टिप्पणी—(१) धत्त < धातु। (२) कम्म < कर्म। अप्प < आत्म = आप।

[४४]

दोहरा— सुणित राय[१] कहि चंद सउं[*२] गत्त रष्पि तुंहि प्रांन[३]। (१)
हनउं[*१] साहि घरिघार सउ[२] जउ[४] अप्पइ[५] बिय बांन ॥ (२)

अर्थ—(१) यह सुनकर राजा ने चंद से कहा, "[शाह के वध तक] गात्र में प्राणों को तुम रखना—प्राणों की रक्षा तुम करना; (२) यदि [शाह] दो बाण अर्पित करे (दे), तो मैं शाह को घड़ियालों के साथ मार दूँ।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

(१) १. मो. सुणित राय, धा फुनि राजन, अ. फ. फुनि राजा, ना. फुनि पृथिराज, शा. स. फेरि

राज। २. मो. कहि चद यं, धा. कइ चंद सं, अ. फ. कहि चंद सो, ना. कहि चंद सुं (=सउं), शा. स. इह वत कहि। ३. मो. गत (=गत्त) रवि (=रविव) तु हि प्रान, धा. सत रविरवहि प्रान, अ. फ. सत रष्षी हिय प्रान, ना. गनि रवि हि यह प्रवान, शा. स. बरदिय दे वर कान।

(२) १. मो. इनुं (इनउं), धा. ना. शा. स. हनौं, अ. हन्यौ, फ. हनौ। २. धा. अ. फ. रिपु, शेष में 'साहि'। ३. धा. घरियार सवं, मो. घरिआल सु (=सउं), अ. फ. घरियार सों (स्यौं-अ.), ना. घरियार सुं (=सउं), शा. स. घरियार सों। ४. मो. जु (=जउ), धा. जउ, शेष में 'जौ'। ५. मो. अपि (=अफइ), धा. अप्पइ, अ. अप्पौ, फ. ना. अप्पै, शा. स. अप्पौ।

टिप्पणी—(१) गत्त < गात्र। (२) सउं < समन्=साथ। अफ्फ < अर्पय्।

[४५]

कवित— एक बांन चहुआंन[१] राम[२] रावन उत्थप्पउ*[३] ।+(१)
एक बांन चहुआंन करन[१] सिर अरजन[२] कप्पउ*[३] । (२)
एक बांन चहुआंन त्रिपुर सिर संकर वध्धौ[१] । (३)
एक बांन चहुआंन भमर[१] लछ्छन[२] पारध्धौ[३]।[४](४)
सोइ एकु* बान संभरिधनी[१] बियउ* बांन नह संधियै*[२] । (५)
घरिआर एक लग मोगरिअ[१] एक बार नृप ढुक्कियै[२] ॥ (६)

अर्थ—(१) "[चंद ने कहा,] एक ही बाण से, हे चहुवान, राम ने रावण को उत्थापित (समाप्त) किया; (२) एक ही बाण से, हे चहुवान, कर्ण के सिर को अर्जुन ने काट दिया; (३) एक ही बाण से, हे चहुवान, त्रिपुर के सिर को शंकर ने बेधा; (४) एक ही बाण से, हे चहुवान, भ्रमर का लक्ष्मण ने शिकार (संहार) किया; (५) इसी प्रकार एक ही बाण, हे साँभरपति, तुम्हें मिला है, दूसरे बाण का संधान न करो; (६) एक घड़ियाल पर मुँगरी पड़ रही है; एक बार, हे राजा, भागो (प्रयत्न करो)"।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+ चिह्नित चरण अ. में नहीं है।

(१) १. धा. ना. इक बाण चहुवाण, मो. शा. स. एक बाम चहुआन, अ. फ. ना. इक बान चहुवान [और इसी प्रकार बाद के चरणों में भी]। २. मो. रामि, शेष में 'राम'। ३. मो. उथपु (=उथपउ), धा. उथ्थप्पिय, अ. उथ्थप्यौ, फ. सिर थप्यौ, ना. उथ्थप्पे।

(२) १. मो. करन, धा. करण, अ. फ. कर्ण, शा. स. क्रन। २. मो. अरजन, धा. तथा शेष में 'अर्जुन'। ३. धा. कप्पिय, मो. कपु (=कप्पउ), अ. फ. कप्यौ, ना. कप्पे।

(३) १. मो. ना. शा. स. त्रिपुर सिर सकर (सकरि-मो.) बधौ (बिधिय-ना. शा. स.), धा. कन्ह सिर बहुर न संधिय, अ. फ. ति (तिवि-फ.) संकर जिम सद्धिय।

(४) १. अ. भवर, फ. भउर, शा. स. भ्रमर। २. ना. लषमण। ३. मो. पारधी, धा. तथा शेष में 'पारध्धिय'। ४. मो. में यहाँ और है। एक बान बाला संकत सर बहुरिन संधी। (तुल० चरण ३)।

(५) १. मो. सोइ एरो (< एकु), (सो इक—धा. अ. फ. शा. स.) बान संभरि धनी (धणिय—धा.), ना. सो संभाण बाण तुम कर चढ़े। २. मो. बीउ (=बिअउ) बान नह सधीइ (=संधियइ), धा. अ. फ. बीउ (=बिअउ, बियो—अ. फ.) बार नह जपियइ (जपियै—अ., जपियौ—फ.), शा. स. बियो बान नह मुक्कियो, ना. सुकवि चंद सच्चो च [वें]।

(६) १. मो. परिवार एक लग मोगरिअ, धा. अ. फ. परियार इक इक मुग्गरिय, ना. चहुवान राग सँभरि धनी। २. मो. एक बार नृप ढुक्किअै (< ढुक्किय), धा इक बार मिप ढुकयइ, शा. स. इक वान नृप चुक्किय, ना. मम चुक्कि सि मोटै तवे।

टिप्पणी—(२) कप्प < कृ्प्=काटना, छेदना। (३) बधना=वेधना। (४) पारद्धि < पापर्द्धि=शिकारी। (५) मोगर < मोग्गर < मुद्गर। (६) ढुक < ढौक्=लगना, प्रवृत्ति करना।

[४६]

कवित— प्रथमि राज[१] कंमान[२] बांन[३] द्रिढ मुट्ठि गहहि कर[४]। (१)
जिन[१] बिसमउ*[२] मन[३] करहि करहि+[४] भुअपत्ति अप्पु बर। (२)
जि[१] पछु[२] दिअउ*[३] कयमास*[४] किअउ*[५] अप्पनउ सु पायउ*[६]। (३)
सोइ[१] संभरी नरेसु[२] तुंहि ज[३] अम्मरपुर[४] आयउ*[५]। (४)
विघना[१] विधान मेटइ*[२] कवन दीन मान दिन[३] पाइयइ[४]। (५)
सर एक[१] फोरि[२] संभरिधनी[३] सत्तहि सद्दु[४] गमाइयइ[५]॥ (६)

अर्थ—(१) "हे पृथ्वीराज, हाथों में कमान (धनुष) और बाण दृढ मुट्ठी करके ग्रहण कर; (२) तू मन में विस्मय न कर; हे भूपति, तू आत्म बल कर; (३) कैमास को जो कुछ (प्राणदंड) तू ने दिया था, वह अपना किया तुझको भी मिल गया; (४) वही अमरपुर (स्वर्ग), हे साँभर-नरेश, तुझे भी प्राप्त हो रहा है। (५) विधाता का विधान कौन मेट सकता है? दिए हुए के बराबर (अनुसार) ही दिन (जीवन) में [मनुष्य को] मिलता है। (६) हे साँभरपति, एक शर से फाड़ कर शत्रु के शब्दों को नष्ट कर दे।"

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. प्रथमि राजु, धा. प्रिथीराज, अ. फ. पृथियराज, ना. प्रथम राज। २. धा. कम्मग्ग, फ. चहुवान। ३. धा. धान। ४. मो. अ. फ. शा. स. द्रिढ (डिढ—अ. फ.) मुठि (मुठ्ठ—फ.) गहहि (गहिय—शा. स.) कर, धा. मुठि बाण गहे करि, ना. दिढ मुठि गहहि करि।

(२) १. धा. जिणि, मो. जिन, ना. जनि। २. धा. बिसमउ, मो बिशमु (=बिशमउ), शेष में 'बिसमो'। ३. अ. फ. न। ४. धा. करइ बरइ, मो. ना. शा. स. करहि करहि, अ. धरइ (धरै—फ.)।

(३) १. मो. अ. जि, धा. ना. ज, फ. शा. स. जु। २. अ. किछु। ३. मो. दहिअु (=कहिअउ), धा. तथा शेष में 'दियो'। ४ मो. किमास (=कयमास), धा. कैमास, शेष में 'कैमास' या 'कैवास'। ५. मो. कीअ (=किअउ), धा. कर्‌यो, शेष में 'कियो' या 'कियौ'। ६. मो. आपनु (=आपनउ) सु पायु (=पायउ), धा. अ. फ. अप्पणो (अप्पनो—अ. फ.) जु पायो, ना. अपनो सोइ, शा. स. अप्पनो सु।

(४) १. अ. फ. हुनि, शा. सोय। २. ना. सद्दाव। ३. अ. फ. ताहि। ४. ना. अमरापुरि। ५. मो. आयु (=आयउ), धा. आयो, शेष में 'आयो' या 'आयौ'।

(५) १. मो. विधिना, धा. तथा शेष में 'विघना'। २. मो. मेटि (=मेटइ), फ ना. शा. स. मेटै, धा. अ मिटै। ३. मो दिन, धा. स. दिन, अ. फ. पल, शा. दिन। ४. मो. पाइई, (=पाइइइ < पाइयइ), धा. फ. शा. स. पाइयँ, अ. पाइयइ।

(६) १. मो. ना. एक, धा. अ. फ. ना. इक्क। २. स. फौज। ३. धा. सिमर धणिय, शेष में 'समरि धनी'। ४. मो. सत्तहि सद्दह, धा. सत्त, अ. फ. सत्त, ना. सब्ब, शा. स. झुग्ग। ५. मो. गमाईई (= गमाइइइ < गमाइयइ), धा. गमाइई, अ. गवाइयइ, फ. गंवाइयै, शा. स. रहाइयैं।

टिप्पणी—(१) प्रथमि < पृथ्वी। (२) बिसमउ < विस्मय। भुअपत्ति < भूपति। अप्प < आत्म। (६) सत्त < शत्रु। सदुद < शब्द।

[४७]

दोहरा— इलि घसि[१] पांनि पविट्ठ[२] किय सिंगिनि[३] सर गुन[४] बंधि। (१)
परचि[१] चंद मुख[२] चंद मयु[३] मलिय[४] राज मन[५] संधि॥ (२)

अर्थ—(१) इला (भूमि) पर [पृथ्वीराज ने] हाथों को घिसकर [जिससे उनकी चिकनाहट दूर हो जावे और सिंगिनी और बाण कसकर पकड़े जा सकें] उनमें सिंगिनी और शर को प्रविष्ट किया और गुण (ज्या) बाँधी; (२) [यह देखकर] चन्द का मुख चर्चित हो कर चन्द्र [का-सा] हो गया, और राजा के मन की संधि (शंका) मलिन हुई।

पाठान्तर— (१) १. अ. फ. तर्वाह सु। २. अ. फ. ना. प्रविष्ट, धा. पविस्ट, मो. पविष्ठ। ३. मो. सींगनि, फ. संगन, शेष में 'सिंगनि'। ४. मो. गुरु, धा. गुण, शेष में 'गुन'।

(२) १. धा. वर्जि, मो. चरन्नि, फ. चरचि। २. धा. मुख्वि, मो. मुख अ. फ. मन। ३. मो. मयु, धा. मउ, अ. फ. भो, ना. शा. स. मय। ४. धा. अ. फ. मिली, मो. मलिय, ना. शा. स. मिलिय। ५. अ. मनि, ना. मनु।

टिप्पणी—(१) इल < इला = पृथ्वी, भूमि। पविट्ठ < प्रविष्ट। (२) मलिअ < मलित = मलिन। संधि = छिद्र, विवर (शंका)।

[४८]

कवित— भयउ*[१] एक[२] फुरमान[३] एक बानह ×गुन×[४] संधउ*[५]× । (१)
सोइ सबद् सरु बांन अग्ग× अग्गइ* षल बंधउ[१]* । (२)
भयउ*[१] बंध्य[२] फुरमान पंचि रष्षिअउ* श्रवन पर[३] । (३)
तीअउ* ×सबद× सुनंत×[१] सुनउ सुरतान परउ* धर[२] । (४)
लगि दसन रसन[२] दस संधिअउ*[३] बिहु× कपाट× बंधे× सघनं×[४] । (५)
धरि परउ* साहि पां पुकरउ*[१] भयउ*[२] चंद राजहि[३] मरनं× ॥ (६)

अर्थ—(१) एक (प्रथम) फरमान हुआ तो [पृथ्वीराज ने] एक बाण गुण (ज्या) से साँधा; (२) उसी शब्द और उसी बाण ने आगे-आगे [चलकर] खल (शहाबुद्दीन) को बाँध दिया। (३) दूसरा फरमान हुआ तो पृथ्वीराज ने [बाण को] कानों पर खींच कर रक्खा। (४) तीसरा शब्द (फरमान) सुनते ही सुना गया कि सुल्तान धरा पर गिरा। (५) रसना दाँतों से लग गई, [शरीर के] दस द्वार रुँध गए (अवरुद्ध हो गए), दोनों कपाट (ओष्ठ) सघन रूप से बँध

गए; (६) खाँ ने पुकारा कि शाह धरती पर गिर पड़ा है। [इसके अनन्तर] चन्द कहता है, राजा का मरण हो गया।

पाठान्तर—* चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।
× चिह्नित शब्द ना. में नहीं हैं।

(१) १. भयु (= भयउ), धा. भयो, शेष में 'भयौ'। २. मो. ना. शा. स. एक, धा. अ. फ. इक। ३. मो. फरमान, धा. तथा शेष में 'फुरमान'। ४. मो. एक बानह गुन, धा. इक बान निगुन, अ. फ. इक बानहि गुन, ना. तो इक–, शा. स. इक जोगिनपुर। ५. मो. सधु (=सधउ), धा. सज्जिउ, शेष में 'सध्यौ'।

(२) १. मो. अग्र अग्रि (अग्रइ) चलु बधु (= बधउ), धा. अ. फ. अग्ग (अग्र–अ. फ.) अविचल करि बज्जिउ (बंध्यौ–अ. फ.), ना.–गगह चलु बंध्यौ।

(३) १. मो. भयु (= भयउ), धा. भयो, शेष में 'भयौ'। २. धा. मो. ना. बीअ, (बीअ–धा.), ना. बीक, शेष में 'बियौ'। ३. मा. रथोउ (= रथ्थअउ) अवन पर, धा. अ. फ. पचि रथ्यो अवणनि (अवननि–अ. फ.) धर (वर–फ.), ना. पच्चि रथ्यौ अवननि पर, शा. स. पचिरथ्यो अवनतरि (अवननर–शा.)।

(४) मो. तीउ (= तीअउ) सबद सुनत, धा. तीय सबद सुणि निसुणि, अ. फ. भयो तियौ फुरमानु, शा. स. भयौ तियौ अनमयौ (न भयौ–शा.)। २. मा. सुन (< सुनु=सुनउ ?) सुरतान पर (= परउ) धर, धा. हण्यो सुलतान परया धर, अ. फ. परयौ सुरितान आनि (आनु–फ.) धर (परि–फ.), ना. हन्यौ सुरतान परयौ धर, शा. स. परयौ पातिसाहि धरतरि (धरतर–शा.)।

(५) १. मो. (< लि = लइ), धा. लइ, अ. फ. लगि, ना. लै। २. धा. दसण रसण, शेष में 'दसन रसन'। ३. मो. दस रुंधोउ (= रुन्धिअउ) भयु (= भयउ), धा. दस रंध्र हुइ, अ. फ. वहु रंध (रंधु–फ.) हुव, शा. स. तालुअ सघन, ना. रस रुन्धयो। ४. मो छदू (< विहू) कपाट बधि (=बधे) सघन, धा. बदु कपट विधिरग सघन, अ. फ. बिहु (बिहो–फ) कपाट रुन्ध्यो मरन, शा. स. सीस फट्टि (फुट्टि–शा.) दह दिसि गवन।

(६) १. मो. धरि पर (= परउ) साहि षां पोकरी (< पुकरइ=पुकरउ), धा. अ. फ. सुलताण (सुरितान–अ. फ.) परयो षां पुकरयो (पुकरयौ–अ. फ.), ना. शा. स. सुलतान (सुरतान–ना.) परयो षां पुकरे। २. भयु (= भयउ), धा. तदिन, अ. फ. शा. स. भयौ। ३. मो. राजहि, शेष में 'राजन'।

टिप्पणी—(३) बीअ < द्वितीय। (५) वि < द्वि। रुन्ध < रुध।

[५६]

कवित— *मरनं चंद बिरदिआ[1] राज धुनि साह हन्यउ* सुनि[2]। (१)*
पुहपंजलि[1] असमान[2] सीस छोडी[3] त देवतनि[4]। (२)
मेछ अवध्धित[1] धरणि धरणि+ नवत्रीय[2] सुहस्सिग[3]। (३)
तिनहि तिनहि[1] सं जोति जोति जोतिहि[2] संपत्तिग[3]। (४)
रासउ[1] असंभु नवरस सरस छंदु[2] चंदु किअ अमिअ सम। (५)*
श्रृंगार वीर करुणा बिभछ[1] भय अदभुत्तह संत सम[2]॥[3] (६)

अर्थ—(१) चंद बिरदिया कहता है, राजा के मरने और शाह के मारे जाने की ध्वनि सुनकर (२) देवताओं ने आकाश से [राजा के] सिर पर पुष्पांजलि छोड़ी। (३) जो धरणी म्लेच्छों से

आबद्ध हो गई थी, अब नव स्त्री के समान हँस पड़ी। (४) तृण (शरीर के भौतिक तत्व) तृणों (भौतिक तत्वों) को तथा ज्योति (जीव) ज्योति (परमात्मा) को समाप्त हुए। (५) यह अपूर्व 'रासो' नव रसों से सरस है, इसके छन्दों को चंद ने अमृत के समान किया (बनाया) है। (६) यह [प्रमुख रूप से] शृंगार, वीर, करुणा, बीभत्स, भय, अद्भुत और शान्त रसों से युक्त है।

पाठान्तर—● चिह्नित शब्द संशोधित पाठ के हैं।

+ चिह्नित शब्द अ. फ. में नहीं है।

(१) १. मो. वरदीआ, अ. फ. धा. स. बरदाइ, ना. विरदीय। २. मो. साह हन्यु (=हन्यउ) सुनि, अ. फ. सुनिव साहि हनि (हनु–फ.), ना. साहि हन्यौ सुनि।

(२) १. मो. पुष्पांजलि, अ. फ. धा. स. पुहपंजलि। २. ना. असनान। ३. मो. छोड़ि, ना. छोड्डिय, शेष में 'छोड़ो'। ४. अ. फ. सुदेवतनि (सुदेवतिनु–फ.), ना. देवदत्तनि।

(३) १. फ. ना. अवधति। २. अ. फ. नव नृप्प, ना. नव छत्र, धा. स. सव भोय। ३. अ. फ. सोहसिग।

(४) १. मो. तिही, शेष में 'तिनहि'। २. मो. योति योति योतिहि (=जोति जोति जोतिहि), ना. फ. जोति जोति जोतिहि, अ. जोति ज्योति ज्योतिहि। ३. धा. स. संपातिग।

(५) १. मो. राइ (=रासउ), शेष में 'रासो', ना. सौ। २. मो. अ. ना. चद, शेष में 'छद'।

(६) १. मो. विभछ। २. मो. भय (?) रुद सुत हसंत सम, ना. भय रुद्र अद्भुत संत शम। ३. धा. में इस पूरे छद के स्थान पर निम्नलिखित पंक्तियाँ हैं :—

सा ··· ··· ··· ··· मरण सु चंद नरिंद।

रासउ रसाल नवरस निबंधि अचरिज इंदु फणिंद॥

टिप्पणी—(२) पुहपंजलि < पुष्पांजलि। असनान < आसमान [फा.] (३) मेछ < म्लेच्छ। (६) बिभछ < बीभत्स। संत < शांत। सम < समन् = साथ, युक्त।

——

अनुक्रमणिका

शब्दानुक्रमणिका

इसमें केवल उन्हीं शब्दों को सम्मिलित किया गया है जिन पर ग्रन्थ में टिप्पणियाँ दी गई हैं। संख्याएँ क्रमशः सर्ग, छन्द तथा चरण का निर्देश करती हैं।

अपु <आप=गल ४.११.७

अपुव्व <अपूर्व २.३३.१, ६.२१.२

अपूठ <अपुष्ट ३.१७.३१

अप्प <अर्पय्=अर्पित करना २.२१.२,२.३७.१
१०.१३.२,१०.२० १,
१०.२२.१,११.९.४,१२.१.२

अप्प <आत्म १०.१६.१,१२.४१.२,१२.४६.२

अप्प <आत्मा ११.१२.२४

अप्पज्ज <अप्पउज्ज=आत्म-वश १०.२३.५

अप्पुब्ब <अपूर्व ६ ५.२७

अप्फ <अर्पय=अर्पित करना १२.४४.२

अब्भ <अभ्र=आकाश १२.६.१

अब्भिस् <अभ्यस्=अभ्यास करना १०.११.३८

अमग्ग <अमार्ग ८.२८.२

अमलत्तन <अमलत्व ४.११.१३

अमिअ <अमृत ८.३२.५

अमिय <अमृत ८.२३.३

अमीए <अमृत २.२०.१

अमु=उसको ६.१२.३

अम्भ <अभ्र=आकाश ५.३४.१,८.९.४,११.६.१

अय <अय्=जाना २.२२.२

अयान <अज्ञान ३.१.१८

अयास <आकाश २.५.२४,३.११.१६,८.९.१६.

अरत्ति <अरति ८.९.१५

अरीत <अरिक्त ८.२३.४

अरेन <करेण=कर से ८.८.१

अरोह <अरुद्ध=मुक्त ४.३०.१८

अलग्ग <अलग्न ५.३८.२५

अलुध्धि <अलक्ष्य ३.२०.१

अलुझ्झ <आरुद्ध ४.३०.२२,८.१४.५

अवगमन=अपसरण १२.११.११

अवधि <आयुध ४.२४.३१

अवर <अपर ३.१२.२

अवास <आवास ३.११.६,५.३९.२

असंभ <असंभुत=अपूर्व १०.२३.१,११.१०.२१

असंभु <असंभूत=अपूर्व ११.२०.१

असपति <अश्वपति ११.२०.२१

असमान <आसमान [फा०]=आकाश १२.४९.२

असमर <अ+स्मर=काम विहीन १०.२५.२

अस्तमन <अस्तमयन=अस्त होना ७.३.२

अस्सि <अश्व ८.३०.२५

अहारा <अक्खाडग <अक्ष+वाटक=अखाड़ा ६.५.१

अहिरम <अभि+रम्=क्रीड़ा करना २.१७.३

अहुट्ठिय <अधिस्थित ७.२३.२

आ=वह २.१६.२

आइस <आदेश १०.१८.१

आउझ <आयुध ६.५.६

आउरि <आवलि=पंक्ति १०.२२.२

आएस <आदेश ८.८.१

आगर <आगल <आ+कलय्=आकलन करना
२.१९.१

आप्त <आप्त=ज्ञानी पुरुष ६.२९.१

आदप्प <आदर्प=दर्पयुक्त ११.१०.१७

आन <अन्य ४.२१.४

आनि <अन्य ५.१० ४

आप <अर्पय्=अर्पित करना ३.४३.१.५.१३.११

आयस <आदेश ५.४.१,७.१२.२६,१०.१९.१,

आयास <आकाश ७.१७.२,८.११.५,८ २३.३

आयेस <आदेश १०.२३.१

आर <आरओ <आरतम्=समीप में, पास में २.३.३

आलि <अल्लि [दे०]=अहु, हठ २.१३.१

आल <काल ६ ३२.१

आल <आर्द्र ९.११.१

आवझ <आयुध ८.१०.१२

आवध्ध <आयुध ७.३०.२, ११.१२.९

आवर <आ+वृ=आच्छादन करना २.२०.४

आविधि <आयुध ७.३१.२५

आस <अश्व ६.५.१८

आहुट्ठ <अधिस्थित ७.२१.४

इंद <इन्द्र ३.३१.५,४.७.२,५.३१.२,६.२०.१,
६.१५.२

इत <अत्र=यहाँ ४.७.९

इतउ <इयत्=इतना २.११.१

इत्ती <इत्तिय <इयत्=इतनी २.१०.३

इयर <इतर ६.२८.४

इल <इला=पृथ्वी, भूमि १२.४७.१

उअर < उपरि=ऊपर ८.२६.४

उक <उक <उक्त=कथित ७.३१.२१

उक्कंठ <उत्+कण्ठा ३.१६.२

उच्च [दे०]=हीन ७.१५ ५

उप्पली <उवखलिय> उत्खण्डित=उन्मूलित, उत्पाटित ७.२२.५
उप्पिलिय <उत्खण्डित=रिक्त ? २.५.३७
उग <उत्+गम्=निकलना ५.३१.२
उच्च <उच्च=उत्तम ५.३४.१
उच्चाल=ऊँची या तीव्र चाल २.७.१०
उच्चासु <उच्चाश्व ७.६.६
उच्छ <तुच्छ=ओछा ३.१७.१३, ५.४१.२
उच्छह <उत्साह २.६.३
उछ <उच्छ <तुच्छ ४.११.६
उछंग <उत्सङ्ग=क्रोड, बाहुपाश ६.१५.८, ८.२४.३
उज्जय <उद्यत ७.१०.१
उड्डु <ओड्र=उड़ीसा देश का ५.३८.१०
उण <पुण <पू=पवित्र करना १.३.८
उतस <उत्+त्रासय्=उत्पीडित करना १२.१३.८
उतिठु <उत्थित=उठी हुई २.१७.२
उत्त <उक्ति ५.१८.२
उत्तंग <उत्तुङ्ग ७.६.४७
उनव <उण्णम <उद्+नम्=उन्नमित होना, उमड़ना ७.१२.२
उनहारि <अनुकार ५.१८.२, ५.४८.२
उनिंद <उन्निद्र ७.६.१९
उन <ऊन=हीन ४.५.१
उन्नव <उन्नमित=उठा हुआ ९.५.१
उपट्ट <उत्पाटय्=उखाड़ना ८.२१.३
उपाश्रय् <उत्+पादय्=उत्पन्न करना १०.१.३
उप्पट <उत्+पत्=उमड़ना ११.१०.२
उप्पय <उत्पद्=उत्पन्न होना १०.२८.५
उम <उब्भ <ऊर्ध्व=उठा हुआ ६.२०.१
उम्भ <उब्भ <ऊर्ध्व=उठा हुआ ६.११.१
उररि=बकरा १० ११.३७
उव् <उदय=उदय होना ५.१७.१
उवय <उदय ४.८.१, १२.१२.२
उविठु <उद्वेष्टित=बन्धन से मुक्त २.३.४०
उव्वार <उद्+वर्तय्(?)=उबारना ९.१४.४
उसासि <उच्छ्वास २.१०.७
एक मेग <एकमेक ११.१२.८
एग <एक ६.२३.९
एम <एव=इस प्रकार २.७.२०
एर्=प्राप्त करना, प्राप्त कराना ५.७.४
एप <एषु=शर १०.११.१२
एस <ईदृक्=ऐसा ३.२६.२, ६.१०.२
ओलग्गो <ओलग्गि <अवलागिन्=सेवक, भृत्य ११.१२.५
कइ <कदा=कभी ८.३.६
कउतिग <कौतुक ७.४.१२, ७.२८.५
कंख <काङ्क्ष्=चाहना ५.२५.१
कंत <कान्त ३.४.४, १०.२५.१
कंति <कान्ति ५.१६.१, ९.३.१
कंद <कंद ५.१९.४
कक्ख <कक्ष ३.२७.२
कागद <कागज़ [फ़ा०]=पत्र १०.२४.१
कच्छ <कक्षा ४.१४.८
कज <कार्य ८.२३.२
कतान=क्षौम ४.२५.१६
कत <कति <कियत्=कितना ७.१७.१६
कत्त <कृत्=काटना, छेदना २.१७.१
कत्तरि <कर्तरी=कतरनी ४.१८.२
कथ <कुत्र=कहाँ १२.३.२
कथ्थि <कथ्य=प्रशंसनीय ५.२२.२
कपट <कर्पट=कपड़ा ५.३४.१
कप्प <कल्पय्=काटना, छेदना १२.४५.२
कब्ब <काव्य ३.११.५, ३.२३.१, ३.२६.२, ४.१६.१
कमन <क्रमण=गमन ५.४१.२
कमलिय <कवलित ३.३३.६
कम्म <कर्म ३.३३.५, १२.४३.२
कयंद <कलिंद ३.१७.५
करवत्त <करपत्र=आरा २.५.३९
करार <कराल ४.४.१
करि <कलिका ५.२०.२
करेन <करेणु=हथिनी ६.१५.१२
कलत्र <कलत्र=स्त्री ३.३०.३
कल्यंठ <कलकण्ठ=कोकिल २.५.१९
कलयंठि <कलकण्ठ=कोकिल २.५.२९
कलस <कलश ९.५.४
कलिंदी <कालिन्दी ४.२०.१७
कलह <कलभ=कल १२.१५.१४
कवित्तण <कवित्व ८.८.६
कवियन=कविजन ४.१३.१, १२.१०.१

कपिर<कपिल=भूरा, मटमैला १.६.१
कव्व<काव्य १.४.२५,२.१.१०
कह<कथा ८.२४.४
कहल<केलि ३.९.२
कहा<कथम्=क्या ६.३०.२
कहिं<क्व, कुत्र=कहाँ ५.२६.१
काउ<कापोत=कपोत के रंग का ३.३४.१
कादल<कन्दल=युद्ध ७.४.१९
कार<काल ६.५.७
कित्ति<कीर्ति २.३.१६,३.३५.१,७.३१.२२
किन्न<किण्ण<कीर्ण ४.१.५
किम<कथम्=किस प्रकार १०.८.२
किरि<किल=ही १०.२४.२
किल<केलि ३.३६ ३
कीर<कीर ४.२० ३८
कुंज<कंचुकी ४.२५.११
कुडिल<कुटिल १०.१७.१
कुल्ल<कूल ७.१२.१३
कुफार<कुफ्फार [फा०]='काफिर' का बहु० ११.१४.१
कुसमेष<कुसुमेषु=कुसुम-शर १०.११.१२
कुहाव=गुथाना ४.२५.२९
केरी<केलि ७.६ ५०
केलि<कदली ७.६.२
केवि<कतिपय २,५ ३,२.७.१९
केसी<केशी ५.७.३
कोडि<कोटि ६.३३.५
कोह<क्रोध ७.२८ ३
खंजरिअ<खंजरीट २,५.१८
खग<खग्ग<खड्ग ११.८.६
खग्ग<खड्ग ७.१७.४, ८.१६.३ ८.२३.१
८.२६.१ ८.३२.१ ११.१२.१
षटभाषा : प्राकृत, संस्कृत, मागधी शौरसेनी, पैशाचिका, अपभ्रंश १.४.११
खत्त<क्षत्रिय ५.१०.३
खद<खाद्य=भोजन १.३.११
खल<स्खलित ७.२०.५
खिण<क्षण ९.१३.३
खित<क्षिति ९.१२.२
खिति<क्षिति २.९.२, ११.६.२

खित्त<क्षेत्र २.१.३
खित्री<क्षत्रिय २.३ २५, ११.६.२
खिन<क्षण ३.३८.१, १२ १.४
खिल्ल<खेल् २.५.४
खी<क्षि=क्षय होना ४.३३ ८
खीन<क्षीण १.२८ ४
खुंद<क्षुद=आक्रमण करना ६.२२.१
खुत्त<क्षिप्त=निमग्न, डूबा हुआ ५.३८ ८
खुर<खुट्ट<त्रुट=खंडित करना ४ २ २
खोडस<षोडश २ १.१८
गउख<गवाक्ष ९.५.१
गंठ<ग्रन्थि ६ १५.१४
गंठि<ग्रन्थि ६.१६.१
गध्रव<गन्धर्व ४.११.४
गजगाह<गजग्राह ६ ५.११
गज्ज<गर्ज्=गर्जन करना ८ ३०.१
गण<गणय्=गिनना २.११.१
गत्त<गात्र १२.४४.१
गन<गणय=गिनना ३.११.५
गव्व<गर्व २.३.२३,८.१२.२
गब्भ<गर्भ ३.३१.१,४.२०.२४
गम=मार्ग ४.७.१४
गय<गत ८.१७.१
गय<गज २.८.१,३ ४.६,४.२१.१,६.३१ २, ७.१०.१,११.४.२
गयंद<गजेन्द्र ४ २०.२५,५ ४८.४,८ ९ २४
गया<गताः २ २ १.२.२.२
गयन<गगन ५.१७.१,७.१७.१०
गरिट्ठ<गरिष्ठ ५.३.५
गुरुअर<गुरुतर ३.४२ २
गरुय<गुरु २.५ ३४
गल्ह<गल्ल या गल्ह=बात १२.१५.१४
गवक्ख<गवाक्ष ६.२८ ३
गव्व<गर्व ८.२.२
गहगह [दे०]=हर्ष से भर जाना ६.३४.१
गहिल्ल<ग्रहिल [दे०]=भूतग्रस्त, पागल, उद्भ्रान्त १.६.३
गाज<गर्ज्=गर्जन करना ७.६.१८,७.१७.८
गाड<गड्ड<गर्त्त=गड्ढा ३.२७.४
गामिनी<ग्रामणी=गाँव का मुखिया २.३.४०

जाम<याम=प्रहर ३ ४.१, १२.१२.१
जाय<जाती=जाती ४.२५.७
जाल<ज्वालय्=जलाना ३.३१.१, ८.१०.३
जिमन<यमुना ७.६ १५
जिम<यथा ४.३.२
जीह<जिह्वा २.१५.२
जुग< गत ४.११ १२
जुर<ज्वल् ११.१२.१२
जुलन<ज्वलन ३ ३३.३
जूप<यूप ३.१७ ९
जूह<यूथ ७ २५.१
जेम=यथा, जैसे, जिस तरह से २.१.१०
जोइत<योजित १०.१०.१
जोर<जोर [फ़ा०](?) ५.४७.२
जोव=बाट देखना ४.२५.२३
झकुलिय=झंखाड़ २.५.४३
झंप<भ्रम् (?)=घूमना फिरना, २.७.७
झड<झड्=गिरना २.३.३२
झाम=ध्वंस ११.१०.१०, २.५.४३
झिल्ल=ऊपर से गिरती हुई वस्तु को थामना ६.५.३
झीन<क्षीण १०.११.१९
झुंझलिय [दे०]=मुर्झाया हुआ ११.१०.१०
झुल्लि [दे०]=प्रवाहित ५.३८.८
झीर=झुंड ६.१५.१८
ठय<स्था ५.३१.२, ५.४५.२
ठान<स्थान=निवास १२.११.१०
डंग<दुर्ग=नगर ९.१४.१
डहू<दग्ध १.३२.३
डाड्मि<दाडिम ५ ७.१
डुल्लभ<दुर्लभ १.२२.२
ढाल<ढाल [दे०] ७.१०.२६
ढुक<ढौक्=लगाना, प्रवृत्ति करना ११.४५.६
णारी<नालीक=एक प्रकार का भाला ७.१०.२१
णिय=निज, ही ११.२८.१
त<तु=तो १.१.११
तइ<तदा=तब १०.२८.१
तउ<तदा=तब ३.२४.२
तंधिन<तत्क्षण १.४.५
तंत<तत्त्व ११.४२.४
तंमोर=ताम्बूल ६.७.१
तत्पिन<तत्क्षण १.८.४
तत्त<तत्त्व ५.३५.१
तत्तानि<तत्+तानि २.१८.४
तत्थ<तत्र=वहाँ, तब २.३ १०,३.४३.२,६.३३.२, १० २७.२,१२.१५.८
ततु=का १०.९.१
तमोर<ताम्बूल २ ५ १० ,५.४७.१
तमोरि<ताम्बूल ६.१५ २६
तर<तल १०.११.३
तर<वेग, बल ७ १०.११
तराइन<तारागण ७.४.१६
तलप<तल्प=पर्यङ्क ६.२५.३
तह<तथा=इस प्रकार ६.२३.४,७.५.४,८.३.५, ८,७.२,१२.७.१,५.४१.३
तहि<तथा=इसी प्रकार १०.२३.४
ताम<तमस् ८.१७.२
ताजे<तर्जित ७.१७.५
तान=वे वस्त्र जो तानापाई कर के बनाये गये हों ४.२५.१६
तार<ताल=ताली २.१३.३,५.३३.२,५.३७.२, ६.५.६
तारय<तारक ५.२४.११
ताल=ताली ११.१२.४
तिलोयन<त्रिलोचन ८ २३.६
तिथ्थ<तीर्थ ३.४१.३,८.३० २,१२.१५.६.
तिह<तथा १० १५.३,११.९.२
तीय<तृतीय २.६.२
तुच<त्वचा १२.७.४
तुज्ज<तुल्य (?)=तौला जाना वाला पदार्थ ४.२५.२७
तुट्ट<त्रुट्=टूटना २.७.९,७.५.३,८.१९.५, ८.२४.१
तुरंं<तूर्य ६.१५.२२
तुरा<त्वरा ५.४१.२
तुम<तुम १०.२६.२
तूर<तूर्य=तुरही ३.३०.२
तेगि<ताजी [अ०]=ताजी जाति का घोड़ा ६.१५.१५
तेह<तदनंतर (?) १०.२ ५/८

ध्या<ध्यै=ध्यान करना, चिन्तन करना २.१६.४
धाट<धाड=बाहर निकला हुआ, उमड़ा हुआ ४.२५.२९
धीठ<धृष्ट ८.१०.१५
धीय<दुहित=कन्या २.१६.२
धुत्त<धूर्त २.३.३४
धुन<ध्वनि ८.९.२,९.५.२
धुर<ध्रुव ४.२.१,६.५.२०
धूत<धूर्त २१.७.६
धूमर<धूम्र ३.१७.४
नइ=निश्चय-सूचक अव्यय ७.६.५०
नंष<नश=लुप्त होना, भागना ५.२५.३
नंष<नश्=फेंकना, समाप्त करना ३.१८.४
नंगा<नग्न ४.२३.२
नकम<लघ्=लाँघना ६.५.१८
नष्ष<नश्=काटना, बिताना ६.२६.४
नजरिमंद<नजर-मंदी [फ़ा०]=दर्शन १२.१३.४
नट्ठ<नष्ट २.५.५०,३.४.१,४.१०.१६
नथ्थ<न्यस्त=स्थापित ८.८.४
नय<नग ७.१२.२
नयर<नगर ४.१६.२ ४.२४.१, ५.८.३, ६.६.१
नरिंद<नरेन्द्र ६.१०.२
नरेसर<नरेश्वर ८.१.१
नभित<नष्ट ३.११.६
ना<ज्ञा=जानना, समझना १०.७.४
नाय<नव<नम्=गिराना ७.३१.१२
नाटक<णट्टक<नर्त्तक १२.६.१
नार<उक्ष ९.१४.१
निक्ष<निः=मरना ७.१०.२५, ८.६.२
निम<नीअ<नीच ४.११.१३
निंद<निन्द्=निंदा करना ६.१२.१
निग्गह<निग्रह=निरोध, अवरोध ३.२७.४
निठुर<निष्ठुर ७.१२.१९
निद्दर<निर्दर (?) ८.१०.१३
नित्ति<नित्य २.९.२
नित्त<नित्य ५.३५.२
निदारे कर=जिसके करों में तार न हो ३.२.२
निद<निद्रा ३.५.१,७.२१.३
निद्धारस<निद्धादिय<निर्धारित=निश्चित ५.४.१२

निधि<रत्नेभ्य ३.४.२
निधूथ<स्निग्ध ९.१४.१
निनार<णिण्णार<निर्नगर=नगर से निर्गत, निराला ६.५.११
निव्वीर<निर्वीर २.३.३६
निमट्ट<निवृत्त ३.२७.६
निम्म<निर्+मा=निर्माण करना ४.१८.२
निय<णिय<निज १.४.१२,४.१८.१
निरत्ता<निरुक्त (?)=स्पष्ट १२.४२.२
निरंधयो<निरस्त=निकाला हुआ १०.१२.१८
नर्मालो<निर्माल्य २.१८.३
निवाज<नमाज़ [फ़ा०] ११.८.४
नीचाल<णिच्चाल=गिराना, टपकाना २.७.७
नीर<निअर<निकट ४.७.१६
नु<णु=व्यय, अमान अथवा अपमान सूचक अव्यय ६.२८.२
नेह<णेह [दे०]=मधर १०.११.३२
नेक [न+एक]=बहुत ८.९.२६
नित्त<नृत्य ५.३५.२
नित्ति<नृत्य १०.११.४०
पइ<परि<पक्खे<पक्षे=से ५.१.४
पइट्ठ<प्रविश्=प्रवेश करना ८.८.१
पउमिनिय<पद्मिनी १०.१५.१
पंषि<पक्षिन् ९.५.३
पंग=ग्रहण करना १ ४.२०.४०
पचजन्न<पाञ्चजन्य=कृष्ण का शंख १०.११.२४
पछी<पक्षिन् ११.१०.२५
पंजर=यंत्र (जंतर) १०.२९.३
पंडिय<पंडित ३.१९.१
पक्क<पक्व १०.१२.२५
पष<पक्ष ७.१५.४,७.१०.२४,८.९.२३
पष्पर<पक्षधर=पक्षी ५.४८.४
पग्गह<पकृत=स्वाभाविक ३.७.११
पच्छ<पश्च ६.१२.४
पट्टरागिनीअ<पट्टराज्ञी ३.४.२
पट्टा<पट्टिया [दे०]=पाद-प्रहार ७.१०.११
पट्ठिअ<प्रस्थित ५.४६.१
पठ्ठिय [दे०]=विभूषित, अलंकृत ७.२८.६, ७.१९.१
पत्त<पत्र २.७.६,४.७.१०,५.१४.२,७.६.२, ८.१०.२२,९.९.४

फुर <स्फुर्=स्फुरित होना ८.२६.१
फुल्ल=खिला हुआ २.२४.१
बंक <वक्र २.२०.२, ५ ४६.१,५ ४७.१
बंभ <ब्रह्मन् २.३.६४
बय <बे=बिना १२.१४.२
बर <बल ६.३३.३,८.२५.२
बरज <वर्ये ४.११.१२
बल <वल्=चलना, जाना, घूम पड़ना ६ ९.१, ८.१३.१
बलिय=पीन, मांसल, स्थूल, मोटा २.५.११
बान <व्रज्=गमन करना ११.१२.९
बाज <बाघ ४.२३.२०
बार <बाला ६.१५.१
बिअ <द्वितीय ५.३६ ४
बिंब <बंब=चमक, छोर ७.१६.२
बिनान <विज्ञान ४.१४.२६
बिबि <द्वय ५.४६.१
बिय <द्वितीय ५.४५.४
बिरुंग <विकट ४.११.३
बिम्मअ <विस्मय १२.४६.२
बीअ। बीय <द्वितीय २.३.६४,२.५.२,३.२७.३, १२.४८.३
बुद्ध <बुद्धि ८.२.६
बे <द्वय ११.१२.२
बेकस <व्यक ६.५ ११
बोल <बाल्य्=डुबाना १०.२३.६
ब्यंब <बिम्ब २.३.६२,२.७.१५,५ ७.२
भंग <भिन <भग्न ४.१९.१
भच <भद्र ४.२५ ३४
भग्ग <भग्न=टूटा हुआ ७.३१.१९
भद <भाद्र=भादों १.३.१५
भद्दव <भाद्रपद=भादों ७.३.२
भम <भ्रम ३ १.१,३.४.३,११.१०.१६
भर <भर=योद्धा ५.१०.१,६.१९.१,७.४.२, ७.१२.१,७.३५.२,१०.२३.४,११.७.६
भर <भार ७.५.६
भर <भृ=धारण करना ५.१०.२
भरह <भरत १.५.२
भाज <भञ्ज्=तोड़ना २.५.२,३.८.३
भासिर्=द्युतिमान् १.६.४
भित्थुर <भिदगूल ७.१२.१९
भिय <भीत ५.१३.६
भीच <भिच्च <भृत्य ८.१.४
भीन <भिन्न १२.१५.१०
भीव <भीम २.१.१६
भुअ <भुजा ३.३९.४
भुअदंड <भुजदण्ड ४.१०.५
भुअपति <भूपति ५.४८.५,१२.४६.२
भुव <भुम <भुज ६ ३३ ३,६.३३.६,८.३०.६
भुव <भू <भू ४.२०.७
भुमि <भूमि ८.३४.४
भूज <भूर्ज=भोजपत्र ३.४.४
भूभत <भूभर्तृ=भूपति ३.५.१
भूम <भूमि ३.३१.४
भृत <भृत्य ६.२१.७,९.८.४,११.७.६
भेषि <भैक्ष्य (?)=भिक्षा ८.१८.२
भोआल <भूपाल ७.३१.२१
भोह <भ्रू १०.१७.१
भ्रतु <भृत्य १०.७.३
मउष > मयूख=किरण ९.४.२,१०.११.१६
मउष <मयूख=किरण ७.४.१८
मउर <मुकुल=बौर २.५.२५
मऊष <मयूख=किरण ८.९.९
मगूल=मंगोल ७.१०.९
मंत <मंत्र १.४.४,२.१.९,५ ३५.१,८.७.१
मंथ <मस्तक ६ ३१.१
मगन <मग्न २.३ ६३
मग्ग <मार्ग २.५.२५,२ १० १,८.१.२,८.५.२
मग्ग <मार्गय्=माँगना ८.१.२
मच्छ <मत्स्य ८.२६.३
मच्छर <मात्सर्य ७.७.२१
मझ <मध्य २.३.६
मत्त <मत्त १०.१३.२
मथ्थ <मस्तक ८.३२.५
मद <मृद्=मसलना ११.१०.१०
मधुलिह <मधुलेहिन्=भ्रमर २.५.११
मधुवहीय <मधुवासित=मधु देश की नगरी (मधुपुरी) २ ३.६३
मनं=मनु, मानो ७.१०.१८,१०.२५.२
मनसिन्=ध्यान रखने वाला १०.१४.२

विद्दान <विग्यान १२.१३.८,१२.२५.११
विहि <विधि ४.१८.२
बीज <विद्युत् ७ १०.२४
बीन <वीणा ९.६.४
बीह <वीधि=श्रेणी, पंक्ति ७ ५ २
बुट्ठिय <व्युत्थित ६.५ ७
बुठे <व्युत्थित ७.४ ६
वैनिय <वैणिक=वीणा से उत्पन्न ५.७.३
श्रोणि <श्रोणित ४.२२.५,१०.१०.६,११.२२ २२
समांन <सम्मान २.१३.४
सइंभरि <शाकंभरी २.३.१३
सउं <समन्=साथ १२.४४.२
संकुर <संकुड <संकुट=सिकुड़ना २.३.१२
संकुरि <संकुटित=सिकुड़ या सिकोड़ा हुआ, काम किया हुआ ३.४.३
संकति <संस्कृत ९.७.३
संच <सत्य ३.४२.१,५ ९.४
संबर <संवर २ ५ ३५,९.१३.२
संझ <संध्या ७.२९.१
संठव <संस्थापय् ८.२१ ६
संठा <संस्थान=रचना, सगठन ५ ४८.३
संत <शांत ७.६.२५,१२,४९.६
संथयउ <संस्थित १०,११.२७
संथुत्त <संस्तुत १२.४७.२
संधि=छिद्र,विवर (शंकर) १२.४७.२
संनेह <संनिभ ४.१०.२८
संपत्त <संप्राप्त ५.५०.३,८.१०.२२, ९ १.१,१०.२१.२
संमर <स्मरण ७ १५.५
समर <संस्मृ=स्मरण करना ६.११.२
संमरिवइ <शाकमरी पति=पृथ्वीराज ३ ३४.२
संमुह <संमुख ३.२९.२,७.९.२,११.१५.२, ११.१८.५
संवर <स्मर=कामदेव १०.११.५०
संवर <शम्बल १२.७.४
सकार <सत्कार <सत्कार ५.४५.५
सकिलिअ <संकीलित <संकीलित=कील लगा कर जोड़ा हुआ, दृढ़तापूर्वक गाड़ा हुआ २.१४.२
सक्क <ष्वष्क्=चलना, जाना ४.१४.७
सक्कि <शक ४.२०.२७

सजन <स्वजन १२.२.१
सज्ज <शय्या ९.१३.२
सत्त <शत्रु १२.४६.६
सत्त <सत्य ७ ३० ३
सत्त <शत या सप्त २.५.२,१२.१३.२५
सत्ति <शक्ति ५.३९.१
सत्थ <सार्थ=प्राणि-समूह, सभा ५.३.२,५ ३२.४
सद्द <सद्द <शब्द २.३.५७,२,१०.३,३,५ २, ४.२० ३१,८ ९.२१,८ २६ ५,९,७ २, ९.१०.२,११.२०.९
सद्द <शब्द १२.४२.५
सद्दूर <शार्दूल ८.१०.१८
सन्नीह <सन्निधि=संग्रह ८.१०.७
सपत्त <संप्राप्त १२ ४२.१
सबल <शबल २.१८.१
सबुद <शब्द १२.४६.६
सम <समन्=साथ, युक्त १२.४९.६
समक्ख <समक्ष ५.४४.२,५.४५,१,६.३४.१
समत्थ <समर्थ ६.१३.१
समप्प <समर्पय्=समर्पित करना ५ २८.२
समयि <समिइ <समिति ५.२२.२
समर <स्मृ ८.२४.२
समर <स्मर=कामदेव १०.२२.१
समव <सम्+अय=लगाना,प्रयुक्त करना ६.२८.१
समाइ <समाहित=भली भाँति व्यवस्थापित ५.१३.१
समान=साथ २.१.७,२.१.१७,५.२३.२
समुद्द <समुद्र ७.४.१
समुल्लव <समुल्लव <समुत्+लप्=बोलना, कहना ८.८.२
सम्मेव <समेव <समेत ५.४३.२
सम्मुह <सन्मुख ११.१.२
सय <शत २.१९.२,३.४३.१,८.९.१०
सयन <संकेत ३.४.६
सयन <सेना ११.१३.२
सयन <सैना १.८.१
सयल <सकल २.१.८,३.२१.१,५.४२.२,७.८.१ ८.१०.१८,९.१.१,९.१.२,९.१४.२
सयान <सज्ञान ३.४०.२
सरण <शरण ४.१९.१
सरवंगि <सर्वांग १०.१७.३

सोर<शोर [फा०] ९.६.१
सोवन<स्वर्ण २.३.५१
सोह<सौध=प्रासाद, मंदिर ४.२२.१
स्याल<शृगाल ८.५.१
हदप<हदफ[फा०]=निशाना, लक्ष्यवेध १२.१५.१३
हदफ [फा०]=निशाना, लक्ष्यवेध ११.२२.२
हउ<मउ ८.२.१
हमीर<अमीर [अ०] ११.८.३,११.१२.१७
हर<हृ=ग्रहण करना २.२०.३,४.१९.१
हलअ<लघुक=हलका ३.४२.१
हलिगना=हिलगना, पास आना ७.११.२
हिअअ<हृदय १२.४.१
हिर<ह्री=लज्जित होना १० २२.२
हीर<हेला=अनादर, तिरस्कार २.१.६
हे<अहो ६.१.१
हे<हय ८.२६.३
होम<भई (?) ७.१७ ३

छंदानुक्रमणिका

[नीचे दी हुई संख्याएँ क्रमशः सर्गों और छंदों की हैं।]

परिशिष्ट

अ. स्वीकृत के अतिरिक्त
धा० की
पाठ-सामग्री

पा०	मो०	भ० फ०	म०	ना०	द०	ह०
१	दो०	—[1]	—	१.६	१.१	१.२
३	,,	२. पद्द० २	२. पद्द० १-२	१.८१	१.१०१	१.२८२-३०५
४	,,	२. अडि० १	२. दीपक	१.८२	१.१०२	१.३०७
५	,,	२. दो० १	२. दो०	१.८३	१.१०३	१.३०८
६	,,	२. भुजं० ३-	२. भुजं०	१.८५	१.१०५	१.३१०-३१४
७	,,	२. कवि० २	२. कवि०	१.९३	१.११९	१.५२०
८	,,	२. दो० ३	२. दो० १	—	१.१२०	१.५२१
९	,,	२. दो० २	२. दो०	१.९४	१.१२१	१.५२२
१०	,,	२. कवि० १	२. कवि०	१.९५	१.१२२	१.५२४
११	,,	२. दो० ४	२. दो०	२.१०५	१.१२३	१.५२५
१२	,,	२. मो० ४	२. मो०	२.१०६	१.१२४	१.५२७-५३१
१३	,,	२. पद्द० ५	२. पद्द०	२.१०९	१.१२७	१.५३४-५३७
१४	,,	२. छाट० १	२. छाट० १	२.११४	१.१३०	१.५४३
१५	,,	२. दो० ५	—	२.११७	१.१३३	१.५४८
१६	,,	२. मो० ६	२. मो०	२.११९	१.१३५ अ	१.५५२-५५३
१७	२१	२. पद्द० ७	२. पद्द०	२.१२०	१.१३६	१.६०५-६१५
१८	२२	२. दो० ६	२. दो० ४	२.१२२	१.१४३	१.६८५
१९	२३	२. दो० ७	२. दो० ६	२.१२२ अ	१.१४७	१.७०३
२१	२६	२. दो० १०	२. दो० ८	१.१७	—	१.९०
२६	३२	२. दो० ११	२. दो० १	६.१६	८.२१	२४.१
२८	३५.	२. दो० २	२. दो०	१२.२७	२०.२३	१८.९६
२९	३६	२. दो० २२	२. दो० २	१२.२८/१	२०.२४	१८.१०४
३०	३४	२. दो० २२	—	१२.२८/२	१.१४५	१.६९४
६१	७६	७. दो० ३	—	२९.२१	३१.१९	५७.५६
६७ अ	—	७. दो० ४	८.१०	२९.३२ अ	३१.३२	५७.७८

[1] यह छन्द फ० में है और भ० फ० २. भुज० १ के पूर्व आता है।

धा०	मो०	अ० प०	म०	ना०	द०	स०
६९	८४	७. अनु० १	८.१९	२९.४१	३१.४२	५७.८८
७९	९४	७. रासा २	८.३१	२९.५०	३१.५३	५७.१७६
८०	९५	७. ग्गो० २	८.३२	२९.५१	३१.५४	५७.१७७-११०
८१	९६	७. गाथा २	८.३३	२९.५२	३१.५५	५७.१११
८२	९७	७. दो० १५	—	२९.५३	३१.५६	५७.१९४
११३	१३०	८. दो० १	१०.३२	३१.३ आ	३३.३	६१.१०२
११४	१३१	—	—	३१.४	३३.१	६१.७८
१२५	१४४	८. सार० १	१०.१३१	३१ अ.३४	३३.३२	६१.३२०
१२६	१४२	८. नो० ४	—	—	—	—
१४०	१५९	८. नारा० १०	१०.१७१	३१ आ. ६७	३३.६१ अ	६१.४२२-४१४
१४३	१६२	—	१० १८६	३२ २	३३.६५	६१.४५८
१४४	१६३	९. दो० २	१०.१८८	३२.३	३३.६७	६१.४६०
१४५	१६४	९. दो० ३	१०.१८९	३२.४	३३.६७ अ	६१.४६१
१५०	—	९. अडि० २	१० २२३/१	३२.१७/१	३३.७९/२	६१.४९९/१
१५६	—	९. मुडि० ३	१०.२२३/१ १०.२२३/२ १०.२३४/१	३२.१७/२	३३.७९/२ ३३.८२	६१.४९९/१ ६१.४९९/२ ६१.५१०/१
१५७	—	—	—	—	—	—
१९४	२२८	९. अनु० २	१०.४५०	३२.१५१	३३.१९६	६१.९२१
२०८	—	९. दो० ५८	११.९१/२ क	३३.३९	३३.२३७/२	६१.११५९/२
२२४	—	९. अनु० ३	११.१५५	३३ ७५	३३.२६३	६१.१२५५
२४३	—	१०. दो० १	१२.१४	३४.१४	३३.२९६	६१.१३४१
२९१	३१९	११. दो० १	३५.१८/२	३५.१६/१ ३५.१८/१ ३५.१८/२	३३.४००	६१.१७७१/१ ६१.१७७३/२
२९२	३२०	११. कवि० ४	१२.२४६	३५.१९	३३.४०१	६१.१७७५
३०८	३६८	—	—	३८.१२	३३.५२९	६१.२४९४
३४३	४१८	१४. दो० १		४२.८१ ४२.९३	३६.८५	६६.२८६
३४४	४२३	१४. दो० ३३		४२.१३०	३६.१२३	६६.३९६
३४५	४२४	१४. कवि० १४		४२.१३३	३६.१२४	६६.३९७
३५६	४४७	१५. दो० २३		४३.८१	३६.२७०	६६.८४५
३५७	४४९	—		४३.१०७	३६.२८९	६६.९४९
३५९	४५३	—		४३.१०३	—	—
३६१	—	—		—	३६.२९१	६६.९३१
३९०	५०६	१९. दो०		४६.९०	३७.१४०	६७.३१५
३९६	—	१९. दो० २८		४६.१०८	३७.२२१	६७.३६५
४०३	५२२	१९. पद्ध० १४/१		४६.१२५	३७.२३१	६७.३८८

धा०	मो०	अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
४०४	५२३	१९. दो० ३३		४६.१२६	३०.१९०	६७.३८९
४२१	—	१९. कवि० ११		४६.१७५	३०.२८०	६७.५५३

धा० १५७ : कवित्त— सघन पत्त घन थट्ट बेलि पसरी प्रवाळ घर।
सहां कमल उन्नयो मूळ बिन रह्यो फुहळ धर।
कंदल थंभ तिह लहहि सिंघ तिहि रह्यो मंदि घरि।
तिहि गज संक न करइ निरग्वि रिति रहिइंक भरि।
जैचन्द राय सुज्ञान गिरि राठोर राय गुन जानिहै।
कीर सुनहि सुगता फलहि इह अपुब्ब को मानिहै॥

धा० में निम्नलिखित गद्य-वार्तायें भी आती हैं जो प्रायः अन्य प्रतियों में नहीं हैं:—

धा० २५ के पूर्व : अथ आदि साटक।
धा० ३१ ,, : हिव कनवज का राजा की वात कहइ छइ।
धा० ४३ ,, : दूतिका प्रबोध। दूतिका नाम सातिका सुमंतिका सहचरिका मनहरिका संग राचि परठ वासि किसी परठ वासि।
धा० ५९ ,, [1]: अग्र सामंत वर्णनम्।
धा० ६८ ,, : वार्ता। राजा मिह आइ राजा की पटरानी पंवारि विग्रसाली दिखावन लागी तिहां कर्णाटी दासी कै महळ कैवास कै कछू सो सो भोग जानियइ। गन गंधर्व सुमिय...किन्नर कहत की कैवास हि कह लम्बई वेग ही उतरइ।
धा० ६९ ,, : वार्ता। एक वाण वो राजा चूक्यो चांद नै कांरा खिचि आघात भयो कइमास पान दारि दियै कइवासेनोक्तं।
धा० ७० ,, : वार्ता। दूसरउ वाण आन दियउ।
धा० ७२ ,, : वार्ता। राजा देखतो दाहिमो कयमास पर्यो है देखउ दासी के निमित्त कैमासहि अहमिति होइ भविष्यहुन मिटै।
धा० ७४ ,, : वार्ता। पांचहु तत्व की देवता हुइ चांद न मानइ।
धा० ७५ ,, : अथ राजा प्रिथीराज की वार्ता।
धा० ७९ ,, [2]: वार्ता। राजा महिल आरंभे नकीब ठौर ठौर प्रारंभे सूरवा सामंत बोले जीमसाने दुछोया प्रधानेन लोछे छत्रद्दपत्र जोन सिंहासन कीने गादी मूढा सामंतकू आसन दीने।
धा० ९४ ,, : वार्ता। कैवास कळत्र चांद पासि आइ टाढी रही देखि चांद सूं महावीर वरदायी हमार भो राजा पै वस पवाड चांद राजा पहि चलिवे को उद्यम कियउ चांद की भी पेट पकरी देखि चंद।
धा० ९७ ,, : वार्ता। हिव चद वरदायी कहै।
धा० ९९ ,, : वार्ता। तब चांद बोल्यउ।
धा० २०० ,, : वार्ता। हिव राजा प्रिथीराज चांद सूं कहण हुइ।
धा० ११२ के बाद: एवं षट् ऋतु वर्णनं।

[1] मो० में भी यह वार्ता है किंतु इसका प्रथम शब्द उसमें नहीं है।
[2] मो० में भी यह वार्ता है।

धा० ११५ के पूर्व : वार्ता। सावंत टारियान लागे कुण कुण।
धा० ११६ ,, : वार्ता। राजा प्रिथीराज चालता शकुन होइ तहइ।
धा० १२१ ,, : वार्ता। राजा कूँ इह उत्कंठा भयी। सावंतन की पाछली आस गई। राजा ने आइस दीनौ जे ठाकुर पंगराय प्रगट है तावौ आधीन हुइ के रूपो हुरायो चावी कैसा रूप हो। साथि आवउ सामंतनु मानिया निसा सुण एक रजनी।
धा० १२५ ,, : वार्ता। राजा गंगा जाइ देखी।
धा० १२७ ,, : वार्ता। राजा स्नान कीयो। सामंतन ने स्नान कीयो तब राजा गंगा को समरन करत है।
धा० १२८ ,, : वार्ता। तब लगि अरुनोदय भयो। गंगोदक भरिवे के निमित्त आनि ठाढी भयी मानों मुकति तीरथ दोऊ संकीरन भये यौं जानियतु है।
धा० १३० ,, : वार्ता। ते किसी एक पनिहारी है।
धा० १३८ ,, : वार्ता। संदेह देवी वर्णन छै।
धा० १४० ,, : वार्ता। अबहि नगर देखत है।
धा० १४६ ,, : वार्ता। चांद राजा के दरबार ठाढो रह्यो।
धा० १५० ,, : वार्ता। राजा ने पूछो दंद आडंबरी भेष धारी सुकवि च्यारि प्रकार भट्ट प्रवर्तंतु है। देखो धौं जाइ इनमें को है।
धा० १५१ ,, : वार्ता। छहे भाषा नो रस चांदु कहतु है।
धा० १५२ ,, : वार्ता। अब चांद भाट राजा जैचंद को वर्णवतु है।
धा० १५३ ,, : वार्ता। देख्यो ए भविष्यत् दरिद्र को छत्रु लिये फिरै। चौहान को बोल याकै मुहि क्यों निकसैं।
धा० १६५ ,, : वार्ता। राजा पूछइ ते चंद उत्तर देत हइ।
धा० १६६ ,, : वार्ता। देखो भलो भग्र है। जाकी छनि पानि खात है ताको पूरउ बोलत है। राजा मनि चिंतवत है।
धा० १६७ ,, : वार्ता। पुनः चंद वाक्यं।
धा० १७१ ,, : वार्ता। ता रनवास की दासी सुगंधादिक घनसार त्रिगमद हेम संपुट।
धा० १८० ,, : वार्ता। राजा अनेग हास्य करन लागे। अनेग राजन के मान अपमान सगि अंबर नौ दिनयर अदरसे।
धा० १८१ ,, : वार्ता। भइ निसा तो गओ जोगवी वहि निसा पंगुरहि को जाति है।
धा० १८७ ,, : वार्ता। राजा कइमी नींद विसारि।
धा० १८८ ,, : वार्ता। राम गते ये राजा अर्क सो देखयतु है।
धा० १९३ ,, : वार्ता। राजा अ हसु ते गीज सांधा चहुवान को भट्ट आयो है ताहि इतमो दउ्यो।
धा० २०० ,, : वार्ता। राजा प्रिथीराज वनचरनहि फिरि आवतु हइ। इतने सामंतन सूं पंगु राजा को कटकु म्ञव दाइ पहुंचे।
धा० २१४ ,, : वार्ता। ए तो राजा कूं सुख प्रापत भय। सामंतन की कुण अवस्था हुइ।
धा० २१७ ,, : वार्ता। तब तूं राजा आव देखइ जैसो मदमत्त हस्ती होइ।
धा० २२४ ,, : वार्ता। राजा यहै स्नान किसे को विवर्जित है।

धा० २३९ के पूर्व : वार्ता । राजा प्रिथीराज फौज मांरत है । अुमरावको छंद इही बांचीइ ।
धा० २८७ ,, : वार्ता । पहिली सामंत सुभ्‌ से तिनके भाउ अरु वरणनु कहतु है ।
धा० ३४६ ,, वार्ता । राजा पृथ्वीराज के सेना कहनु है ।
धा० ३६९ ,, : वार्ता । ए सिंघावलोकन कवितु जाणिज्यो ।
धा० ३७९ ,, : म्लेच्छ वर्णन ।
धा० ३८१ ,, : पातिसाह वर्णन ।
धा० ३८२ ,, : वार्ता । विरदावली लिखी दीन्ही । साहि हार साहिब सार बरिया साहि कधै कुदार । सबर माहि मान मर्दन । निबर साहि थापराचार । दुरी साहि घाटी तरक्क । नारी साहि मस्तक त्रिसूल । लोली साहि पूर्व साहि पश्चि साहि दम्मनी साहि । स्वामि पाहि बेल बीधालित बलेश्वर ।
धा० ३८७ ,, : वार्ता । इतने बात करत गोरी सुरतान जानि महल आय ।
धा० ३८८ ,, : वार्ता । इतनी बात सुणते ततारखा रुस्तमखां मापखां विहंदखां ए चारि खान सदर पर्जर आनि खरे होइ अरदास करी ।
धा० ३८९ ,, : वार्ता । तबहि सुलतान हस्या—बे ।
धा० ३९० ,, : वार्ता । तबहि वजीर बहुरे ठहुर ते अरदास करी ।
धा० ३९१ ,, : वार्ता । ये बोल्यो ।
धा० ४०४[1] ,, : वार्ता । हम तमासगीर हा भाइ वे हुनर स्या हवमी इसके साहिब कू दस हथ राखि गरद्दी करांउ राजा हइ दिखाउ किस्यो देख्यो ।
धा० ४०५ ,, : वार्ता । राजा है समस्या माहि आसीर्वाद दीनहु ।
धा० ४१५ ,, : वार्ता । सुरतान जलाल साह की होदि तीन फुरमान भई दिउगा ।
धा० ४१७ ,, : वार्ता । चद वरदिया कहतु हइ । अरे ।
धा० ४१८ ,, वार्ता । चांद अबरिज जाण्यउ तेन पुन० उक्तः ।
धा० ४२० ,, : वार्ता । चद फुरमाण मांगिवेकू जाइ गोरी बादसाहि प्रिथीराज फुरमाण मागइ । तबहि फुरमाण देवे कू बादिसाहि हजूर हुउ । तब चाद राजा सूं कह्यो प्रिथीराज सबदेश्वर सुरताण सइ मुख फुरमाण देता हइ ।

[1] यह वार्ता मो० में भी है ।

आ. स्वीकृत तथा धा० के अतिरिक्त मो० की पाठ-सामग्री

मो०	अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
१—२०[1]					
२४	२. दो० ८	२. दो० ७	२.१२३	२.१४८	१.७५९
२८	—	—	—	२.७१	२.५६४
३७	६. दो० १	खं०	२८.२	२८.४	४८.६
४४	—	—	२८.१९	२८.२०	४८.१०४
४५	—	—	२८.२४	२८.२५	४८.१२५
४६	—	—	२८.२५	२८.२६	४८.१२६
५५	—	—	—	—	—
७३	[७. साट० १]	८.२ आ	२९.२	३१.२	५७.९८
१२२	८. अनु० १	—	३१.१	३३.२	६१.५
१२९	—	—	३१.२	—	—
१५६	—[2]	१०.३५८	३१.६४	३३.५९	६१.४००
१५८	८. दो० २४	१०.१७०	३१.६६	३३.६१	६१.४३१
१६६	—	—	३२.६ अ	—	—
१६७	९. दो० ७	१०.२०५	३२.२ अ / ३२.८	३३.७२	६१.४७७
१७०	९. गाथा १	१०.२१०	३२.११	३३.७५	६१.४८२
१७१	९. दो० ८	१०.२१६	३२.१२	३३.७६	६१.४८८
१७७	—	१०.२३५	३२.२६	३३.८१	६१.५११
१७९	—	१०.२३६	३२.२७	३३.८४	६१.५१२
१९०	९. कवि० ३	१०.३११	३२.८१	३३.१३७	६१.६५५
२०३	—	१०.३५२	३२.९६	३३.१५०	६१.७२८

[1] मो० के प्रारम्भ में खण्डित होने के कारण जो छन्द नहीं रह गए हैं, अनुमान है कि वे लगभग बीस की संख्या में रहे होंगे (दे० भूमिका में मो० प्रति का परिचय)। ये छन्द कौन से रहे होंगे, कहा नहीं जा सकता है।

[2] यह छन्द फ० में ८. भुजं० ८ के बाद अतिरिक्त है।

मौ०	अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
२१९	—	१०.४४६	३२.१४९	३३.१९४	६१.९१७
२२१	—	१०.४५१	३२.१५२	३३.१९७	६१.९२२
२२४	—	११.७	३३.८	३३.२०५	६१.१००९
२२५	—	११.४२	—	—	६१.१०५८
२२९	—	११.२३	३३.९	३३.२०६	६१.१०२६
२३०	९. कवि० ९	११.४४	३३.१४	३३.२११	६१.१०५९
२३१	९. कवि० १०	११.४५	३३.१५	३३.२१२	६१.१०६०
२३२	९. दो० १३ (?)	११.४९	३३.१९	३३.२१६	६१.१०६४
२३३	९. कवि० १२	११.५१	३३.२०	३३.२१७	६१.१०७३
२३६	—	११.८८	३३.२७	३३.२२४	६१.११३४
२५१	९. दो० ६२	११.१४६	३३.६३	३३.२५६	६१.१२४५
२५२	९. अनु० ५	११.१८४	३३.१००	३३.२८२	६१.१२८४
२६७	९. कुंड० १	११.१७५	३३.८९	३३.२७७	६१.१२७५
२७०	—	११.१८०	३३.९३	३३.२८०	६१.१२८०
२७१	९. कवि० १४	११.१८३	३३.९४	३३.२८१	६१.१२८३
२७२	९. अनु० ५	११.१८४	३३.१००	३३.२८२	६१.१२८४
२७६	९. दो० ७४	१२.१०	३४.५	३३.२९२	६१.१३३७
२७७	९. दो० ७५	१२.११	३४.६	३३.२९३	६१.१३३८
२७८	९. दो० ७६	१२.१२	३३.१०८	३३.२९४	६१.१३३९
२७९	९. अनु० ६	१२.१६	३४.७	३३.२९७	६१.१३४३
२८०	९. दो० ७७	१२.१७	३४.८	३३.२९८	६१.१३४४
३०३	१०. राधा २	१२.४१८	३४.६१ / ३६.५	३३.४५७	६१.२०९४
३०४	—	१२.१८४	३४.८९	३३.३७०	६१.१६२१
३२४	११. दो० १/१	१२.२४२	३५.१६	३३.४००	६१.१७७१
३२५	—	१२.२४३	३५.२७	३३.३९९	६१.१७७२
३२८	—	—	—	—	—
३२९	१२. दो० २	१२.४२२	३६.९	३३.४६१	६१.२१००
३३०	१२. दो० ४	१२.४३०	३६.११	३३.४६२	६१.२१०९
३३८	१२. दो० ९	१२.४७१	३६.२१	३३.४७३	६१.२२०५
३४५	१२. दो० १४	१२.५१४	३६.३०	३३.४८१	६१.२२८४
३५८	१२. दो० ५	१२.४२१	३६.८	३३.४६०	६१.२०९९
३५९	११. दो० २६	—	३५.७२	३३.४१२	६१.२०८९
३६०	१२. दो० १	१२.४१४	३६.१	३३.४५१	६१.२०९०
३६१	१२. दो० ३	१२.४२९	३६.१०	३३.४६२	६१.२१०७
३६२	१२. दो० २७	१२.५१२	३७.१७	३३.५१५	६१.२४६३
३६४	—	४.१६	—	—	४९.४३
३६७	१३. मधा० [ ]	१२.६१६	१८.१६	३३.५३३	६१.२५१४-९

मो०	अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
३६८	१३. साट० १	१२.६१७	३८.२०	३३.५३४	६१.२५२२
३७६	१४. कवि० १		४२.५	३६.४[1]	६६.११९
३७७	—		४२.६	—	—
३७८	—		४२.७	—	—
३७९	—		४२.८	—	—
३८०	१४. अनु० १		४२.१२	३६.६ आ[1]	६६.१२४
३८१	१३. दो० १९		४२.१७	३६.११[1]	६३.१३२
३८२	१४. गाथा २		४२.१६	३६.१०[2]	६६.१२९
३८३	१४. गाथा १		४२.१०	३६.६[2]	६६.१२१
३८४	१४. दो० १		४२.२५	३६.१९[2]	६६.१४०
३८५	१४. दो० १ (?)		४२.२७	—	६६.१४२
४०४	—		४२.६३	—	—
४१३	[१४. दो० १८](?)		४२.७७	३६.७१	६६.२५०
४१५	—		४२.७५	३६.६९	६६.२४८
४१९	—		४२.११०	३६.१११	६६.३८०
४२०	१४. दो० २२		४२.१२१	३६.११३	६६.३८१
४२१	१४. दो० २७		४२.१२३	३६.११४	६६.३८३
४२३	१४. दो० ३३		४२.१३०	३६ १२३	६६.३९६
४२५	१४. दो० ३४		४२.१३६	३६.१२६	६६.४०१
४२६	१४. दो० ३५		४२.१३७	३६.१२७	६६.४०२
४२७	[१४. दो० ८](?)		४२.९४ / ४३.२	३६.८६	६६.२८७
४२८	—		४३.४	—	६६.६३२
४२९	१५. दो० १		४३.५	३६.१९९	६६.६३३
४३०	१५. दो० ४		४३.८	३६.२०२	६६.६४६
४३१	१५. दो० ५		४३.९	३६.२०४	६६.६४८
४३२	१५. दो० १		४३.५	३६.१९९	६६.६३३
४३३	१५. मम० [ ]		४३.६	३६.२००	६६.६३४-६४१
४३४	१५. दो० २		४३.७	३६.२०१	६६.६४३
४४०	१५. दो० १६		४३.१६	३६.२३७	६६.७६७
४४४	१५. कवि० १७		४३.५५	३६.२४६	६६.७७९
४५१	—		४३.१०२	—	—
४५६	—		—	—	—
४५७	—		—	—	—
४५८	४ कवि० १०	ल०	१५.१९	१४.२०	१३.६५
४५९	१२. दो० १८	१२.५३७	३६.३८	३३.४८८	६१.२३४९

[1] द० यहाँ पर खंडित है, यह छन्द-संख्या टॉड संग्रह की प्रति सं० १५७ की है।

मो०	अ० फ०	म०	ना०	द०	ध०
४६०	१६. रसा० ४		४३.१५८	३६.३४१	६६.११८८९९
४६१	—[१]		४३.१५९	३६.३४६	६६.१२०२
४६२	१६. रसा० ५		४३.१६६	३६.३४७	६६.१२०५-११
४६३	—		४३.१३२	३६.३१८	६६.१०१३
४६४	—		४३.१३३	३६.३१९	६६.१०१४-१९
४७२	१८. दो० १२		४६ ६	३७.१३[४]	६७.१७
४७२	१८. दो० १३		४६.८	३७.१४[४]	६७.१८
४७७	१९. दो० ५		४६.२५	३७.४४[४]	६७.१०८
४७८	१९. दो० ६		४६.२९	३७.५२[४]	६७.११७
४७९	१९. दो० ७		४६.३०	३७.५३[४]	६७.११८
४८०	१९. दो० ८		४६.३३	३७.५४[४]	६७.१२१
४८१	१९. दो० ९		४६.३४	३७.५५[४]	६७.१२७
४८२	१९. दो० १०		४६.३५	३७ ५६[४]	६७.१४०
४८३	१९. दो० ११		४६.३७	३७.५७[४]	६७.१०७
४९५	१९. दो० ६ (?)		४६ ५४	३७.९२[४]	६७.२३८
४९७	१९. दो० [ ]		४६.७३	३७.११५[४]	६७.२७६
४९८	१९. भुज० ७		४६.७४	३७.११६[४]	६७.२७७ ८६
४९९	१९. दो० [ ]		४६.७५	३७.१२६[४]	६७.२८७
५०५	—		४६.८२	३७.१३८[४]	६७.३०६
५०८	—		४६.९२	—	६७.३२०
५०९	१९. भुजं० ८		४६ ७६	३७.१३०[४]	६७.२८८-९४
५२०	—		—	—	—
५२५	—		४६.१२९	३७.२०४[४]	६७.४०१
५३०	१९. दो० ३४/१		४६.१३५	३७.२१०[४]	६७.४०८
५३१	—		४६.१३६	३७.२१३[४]	६७.४०९
५३६	[२]		४६.१४०	३७.२२०[४]	६७.४२३
५४०	[३]		४६.१४८	३७.२४६[४]	६७.४४०
५४१	—		४६.१४९	३७.२४७[४]	६७.४५४
५४५	१९. कवि० ८		४६.१६६	३७ २२६[४]	६७.५१९
५४६	१९. अनु० १ १९. अनु० २		४६.१६९	३७.२५१[४]	६७.५१२
५४७	१९. कवि० २		४६.१७०	३७.२१८[४]	६७.५२३
५४९	१९. द० ३७		४६ १७२	३७.२५४[४]	६७.५१६
५५०	—		४६.१७३	३७.२७७[४]	६७.५२७

१ यह छन्द फ० में अ० १६ कवि० ३ के बाद है।
२ यह छन्द फ० में अ० १९. दो० ३६ के बाद है।
३ यह छन्द फ० में अ० १९ कवि० ५ के बाद है।
४ यह छन्द-संख्या टॉड संग्रह की प्रति द० के अनुसार है, द० में यह सर्ग नहीं है।

मो० के उपर्युक्त छन्दों में से उनका पाठ जो स० में नहीं हैं, निम्नलिखित है :—

मो० ५५ : दोहरा—तब सबनि मिलि मंत्र कीउ दूती पठावहु च्यारि।
जिनही ग्यांन रिपु पूतजि श्रुत मूल विप्रयार॥

मो० १२९ : श्लोक—पटरितु द्वादस मासा ग्रहे तिष्ठती राजय।
श्रया विचार कनवजें गंतव्य सुभटो युत॥

मो० १६६ : दोहरा—सुनत हेत हंजम कहित किहि चंद कवि आयउ।
बलि समान बलिकरन सुत जिहि भूमि ओगन राउ॥

[ना० में स्वीकृत ५.२ इस दोहे का 'पाठांतर' कहकर दिया गया है।]

मो० ३२८ : दोहरा—पोडस सुधा अवगणित तेरह विदिल छटि।
अवर कहु तु अवर दल परटीड राउ सुदिठ॥

मो० ३७७ : दूहा—चलित दूत समहाय तर जिहि जगलवि चहुआन।
दरस भेस तिहि सचरि लीइ साह फुरमांन॥

मो० ३७८ : दूहा—दूतन दिन भये अति घने पूछहि सूर सुजांन।
अजहूं तिन कछु सुधि नही मनु जांनि गहे सुरतान॥

मो० ३७९ : अरिल—तब्ब पातिसाह सवार पान एह सुजीअ।
मरी वीडी ते बहु पबरि अजहू अनसूझीअ।
तब ततारपांन अरदास ज बूझीअ।
है कछु कछु पूब जून दूत कहुं पवरी लीय॥

मो० ४०४ : [दोहरा]—सुणत बोल दासीअ उठित आइ नृप दरबार।
कहि चंद गुरराज इही स्वांमि जणावहु सार॥

मो० ४५१ : [दोहरा]—मरण चित चितहि सुदितु भर भर सूक हि भट।
आज मइन अरु मइन नृपति निहारहिं पट॥

मो० ४५६ : दोहरा—तहां फिरु सलप पमार तांहां सिर नांइ प्रथीराज।
जय जय देव ति सवि करहि भइ दुहु दल गाज॥

मो० ४५७ : दोहरा—बोलि सलप प्रथीराज सुनि सो मोमहि इन बितु।
सवि सूर सामंतहि तिन ठगु तुंय छतु॥

मो० ५२० : दूहरा—तब सा साहिब फुरमान दीअ मुसे पांह सरीस।
दस हय रस स्याय नृपति सु जा दे आय असीस॥

उपर्युक्त के अतिरिक्त मो० में निम्नलिखित बियत वा वित (वार्ताएँ) आती हैं, जो प्रायः और प्रतियों में नहीं मिलती हैं :—

मो० ३० के पूर्व : पुन

मो० ४२ में २० चरणों के बाद : वसंत वर्णन।

मो० ५६ के पूर्व : दूतिका भाम।

मो० १२३ के पूर्व : वियतु। किरणाटी राणी कि आवासि राजा विदा मांगन गयु। तब किरणाटी कहू।

मो० १२४ के पूर्व : वियत। पछि राजा परमारि आवासि विदा मांगन गयु। तब परिमारि ही।

मो० १२५ के पूर्व : वित। पछि सुपुला आवासि विदा मांगन गयु। तब सांपुली इह कही।

मो० १२६ के पूर्व : वित। पछि राजा पावेली कै अपास विदा मांगन गयु। पछि पावेली इह कही।

मो० १२७ के पूर्व : वित। पछइ राजा कछवाही कइ आवासि विदा मांगन गयु। तब कछवाही इह कही।

मो० १२८ के पूर्व : वित। पछइ राजा भटिभानी के औवासि विदा मागन गयु। पछइ भटियानी इह कही।
मो० १८३ ,, : विरदावली।
मो० २०९ ,, : पात्रनर्मा।
मो० २११ ,, : संगीत नाम।
मो० २१६ ,, : दांन।
मो० २३५ ,, : अश्व वर्णन।
मो० २८४ के अंतिम १८ चरणों के पूर्व : वाजे के नाम।
मो० ३६३ के पूर्व : कोस गनन।
मो० ३७६ ,, : दूतचार।
मो० ३८१ ,,[1] : वात। तब वर्मान कायथ दिल्ली माहि दूतन कि षवरि दीनी। इतने कहति दूत आये। पातसाहि जिरीध।
मो० ३८५ ,,[2] : असूरी वचनिका। अजी मीसूल तार सुलतान जलालदीन जाया। फुरमान सिर फुरमान केदल वास केलास रोह पंधार गषर गिवार बार गिवान षुरासान मूलतान भटनेर भषरथान। फुरमान पेसि पूरपेशि दूसमन ओरी आइ इथाइ। सितावी वर परवर राय चामुंड वेरी मरे। सब सामंतन के मन जरे। रायजितसी पासि मेहरा छुटु। चंदीर लाहुर लूटु। देवरा दीवान छुटु। जादवे विर वडु। राय अुदा गयु देस मुकी। राय माल दे मोति चूकी। पलक आलम अलीय। जीव तिहा चहुआन पोई। हजरत पोदा हि पेल। आस मरदान छेन ठाई। सिंधुआ सुरतान साहाय दिल्ली सूहि चादर उठाई।
मो० ४२१ के पूर्व : वत। इहि विधि देख्यौ तब सब सामंत चले सुंदराय की वेरी कुटन। तब सुंदराज कहु।
मो० ४२५ के पूर्व : वत। तब राजा तरवारि छोडि सुंदराय के आगि धरी।
मो० ४७७ ,, : चंद पयांनु।
मो० ४९० ,, : म्लेच्छ वर्णन।
मो० ४९६ ,, : वत। तब चंदु डेरि आयु।
मो० ४९८ ,, : वीर मत्र।
मो० ५०० ,, : आतालि नील वर्णन।

—:#:—

[1] यह अ० फ० १४. वार्ता २, ना० ४२.११ तथा स० ६६-१२ अ/१ है।
[2] यह अ० फ० १४. वार्ता ३४, ना० ४२.२४ तथा २६, स० ६६.१६९ अ तथा १४० अ है।

इ. स्वीकृत, धा० तथा मो० के अतिरिक्त अ० की पाठ-सामग्री

अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
१. विरा० २	१. विरा०	३.१-५	२.४	२.३-६७
१. विरा० ४				
१. भुज० ३	१. भुज०	३.६-२६	२.५	२.६८-७८
१. साट० ३	१. साट०	३.२७	२.५ अ	२.७९
१. दो० १	१. दो० १	३.२९	२.६	२.८०
१. दो० २	१. दो० २	३.३५	२.१२	२.३२४
१. दो० ३	१. दो० ३	३.३६	२.१३	२.३२५
१. नारा० ५	१. नारा०/१	३.३७/१	२.१४/१	२.३२६-३१
१. नारा० ६	१. नारा०/२	३.३७/२	२.१४/२	२.३३२-३५
१. गाथा १	१. गाथा ३	३.३८	२.१५	२.३३६
१. दो० ४	१. दो० ४	३.३९	२.१६	२.३४१
१. स्रो० ७	१. स्रो०	३.४०	२.१७	२.३४२-४६
१. दो० ५	१. दो०	३.४२	२.१९	२.३५४
१. स्रो० ८	१ स्रो०	३.४३	२.२०	२.३५५-६५
१. दो० ६	१. दो० १	३.४९	२.२६	२.४२७
१. विरा० ९	१. विरा०	३.५१	२.२८	२.४२९-५५
१. दो० ७	१. दो० १	३.५२	२.२९	२.४५६
१. दो० ८	१. दो० २	३.५३	२.३०	२.४५७
१. दो० ९	१. दो० ३	३.५४	२.३१	२. ४५८
१. विरा० १०	१. विरा०	३.५५	२ ३२	२.४५९-६७
१. दो० १०	१. दो०	३.५६	२.३३	२.४६८
१. भुज० ११	१. भुज०/१	३.५७-५८	—	—
१. भुज० १२	१. भुज०/२	३.५९	२.३४	२.४६९-७८
१. दो० ११	१. दो० १	३.६०	२.३५	२.४७९
१. दो० १२	१. दो० २	३.६२	२.३७	२.४८१
१. दो० १३	१. दो० ३	३.६३	२.३८	२.४८३
१. स्रो० [१३]	१. स्रो०	४३.६	२.३९	२.४८४-८७

अ० फ०	म०	ना०	द०	उ०
१. दो० १४	१. दो० १	३.६५	२.४०	२.३०३ २.४८८
१. दो० १५	—	३.६६	२.४१	२.४८९
१. दो० १६	१. दो० २	३.६७	२.४२	२.४९०
१. दो० १७	१. दो० ३	३.६८	२.४३	२.४९१
१. दो० १८	१. दो० ४	३.६९	२.४४	२.४९२
१. दो० १९	१. दो० ५	३.७०	२.४५	२.४९३
१. दो० २०	१. दो० ६	३.७१	२.४६	२.४९४
१. भुज० १४	१. भुजं०	३.७२	२.४८	२.४९६-५०६
१. दो० २१	१. दो० १	३.७३	२.४९	२.५०७
१. भुज० १५	१. भुजं०	३.८२	२.६०	२.५१८-१९
१. निभं० १६	१. निभं०	३.८३	२.६१	२.५२०-३३
१. दो० २२	१. दो० १	३.८४	२.६२	२.५३४
१. रसा० १७	१. रसा०	३.८५	२.६३	२.५३५-४१
१. दो० २३	१. दो० ७	३.८६	२.४७	२.४९५
१. अडि० १	१. मुडि० १	३.९०	२.६६	२.५४५
१. अडि० २	१. मुडि० २	—	२.६७	२.५४६
१. दो० २४	१. दो० १	३.१०८	२.७०	२.५६३
१. दो० २५	१. दो० २	—	२.७२	२.५६५
१. [विरा० १८][1]	१. विरा० १	३.११०	२.७३	२.५६६-७०
१. [दो० २६][1]	१. दो० १	३.१११	२.७४	२.५७१
१. विरा० [१९]	१. विरा०	३.११२	२.७५	२.५७२-८४
२. साट० २	२. साट० २	—	१.१३१	१.५४४
२. दो० १ (?)	२. दो० १	२.११८	१.१३५	१.५५०
२. दो० १२	२. दो० २	—	८९३ अ	२४.३७०
२. दो० १३	—	६.७५	८.९४	२४.३७३
२. दो० १४	२. दो० ३	६.७८	८.९७	२४.३७६
२. दो० १५	२. दो० ४	६.७९	८.९८	२४.३८१
२. कवि० ३	२. कवि०	६.८०	८.९९	२४.३८३
२. दो० १६	२. दो०	६.८५	८.१०४	२४.३८७
२. कवि० ४	२. कवि०	६.१०६	८.१४३	२४.४८३
२. दो० १७	२. दो० १	१२.९	२०.१	१८.१
२. साट० ४	२. साट० १	१२.१०	२०.२	१८.२
२. दो० १८	२. दो० १	१२.११	२०.३	१८.३
२. कवि० ५	२. कवि० १	१२.१२	२०.४	१८.६

[1] ये छंद अ० की कुछ प्रतियों में नहीं हैं, किन्तु दो० २१ को सख्या बाद में आने वाले १. विरा० [१९] के बाद उनमें भी रक्खी हुई है; भा० (भागचन्द वाली प्रति) तथा फ० में ये छन्द हैं।

अ० फ०	म०	ना०	द०	स०
२. दो० १९	२. दो० १	१२.१३	२०.१९	१८.३५
२. दो० २०	२. दो० २	१२.१४	२०.२०	१८.४०
२. उधो० ८	२. अधू०	१२.१५	२०.२१	१८.४१-५६
२. कवि० ७	२. कवि० १	१२.१६	२०.२२	१८.५७
२. दो० २ (१)	२. दो० १	४.२१	३.२०	—
२. दो० २ (१)	२. दो० २	४.२२	३.२१	३.४४
३. कवि० १	३. कवि० १	१३.१	२५.१	४५ २०२
३. कवि० २	३. कवि० २	१३.२	२५.२	४५.२०३
३. दो० १	३.१	१३.३	२५.३	४५.२०४
३. दो० २	३.२	१३.४	२५.४	४५.२०५
३. दो० ३	३.३	१३.५	२५.५	४५.२०६
३. नारा० १	३.४	१३.६	२५.६	४५.२०७-०९
३. दो० [४]	३.५	१३.७	२५.७	४५.२१५
३. चौ० १	३ ६	१३ ८	२५.८	४५.२१६
३. दो० ५	३.७	१३ ९	२५.९	४५.२१७
३. कवि० ३	३ ८	१३.१०	२५.१०	४५.२१८
३. दो० ६	३.९	१३ ११ अ	२६.११	४६.२८
३. दो० ७	३.१०	१३.१२	प्र०	४७.२९
३. दो० ८	३.३१	१६.३१	२७.१	४७.१
३. दो० ९	—	—	२७.२	४७.२
३. दो० १०	३.१६	१३.१९	२६.१४	४६.३२
३. दो० ११	३.१५	१३.१८	२६.१३	४६.३०
३. दो० १२	३.१७	१३.२१	२६.३६	४६.५६
३. दो० १३	३.१८	१३.२१ अ	२६.३७	४६.५७
३. श्रो० २	३. श्रो०	१३.२२	२६.३८	४६.५८-६५
३. दो० १४	३. १९	१३.२३	—	४६.६६
३. दो० १५	३.२०	१३.२४	—	४६.६७
३. रड्ड १	३.२१	१३.२५	२६ ३९	४६.६८
३. मोद० १	३.२२	१३.२६	२६.४०	४६.६९-७१
३. कवि० ४	३.२३	१३.२७	२६.४१	४६.७२
३. रासा [१]	३. [२४]	१३.५३	२६.७२	४६.१०७
३. मुडि० १	३.२५	१३.५४	२६ ७३	४६.१०८
कवि० ५	३.२६	१३.५५	२६.७४	४६.१०९
३. दो० १६	३.११	१३.१३	—	—
३. कवि० ६	३.१४	१३.१६	२४.३	४५.५१
३. अनु० १	३. श्लो०	१३.१७	२४.४	४५.५२
३. पद्ध० ५	३. २८	१६.३३	२६.९	४६.१०-२६
३. कवि० ७	३.२७	१३.५६	२६.७६	४६.१११

अ.क.	म.	ना.	द.	स.
३. अनु० २	३.२९	१३.५७ १६.३४	२६.१०	४६.२७ ४८.१०१
३. दो० १७	३.३०	१३.५८ १६.३०	१५.२६ १५.२८	४६.११२ १४.१६३
४. कवि० १	३.३२	१४.१	१३.१ २६.७८	१२.१
४. कवि० २	३.३३	१४.१३	१३.२३	१२.५४
४. दो० १	३.३४	१४.१४	१३.२४	१२.५५
४. दो० २	३.३५	१४.१५	१३.२५	१२.५६
४. कवि० ३	३.३६	१४.१४ अ	१३.२६	१२.५७
४. कवि० ४	३.३७	१४.५२	१३.७८	१२.१५४
४. दो० ३	३.३९	१४.५४	१३.८०	१२.१५६
४. कवि० ५	३.४०	१४.५७	—	१२.१६५
४. कवि० ६	३.४१	१४.५८	१३.८३	१२.१६६
४. कवि० ७	३.४२	१४.६१	१३.८६	१२.१६९
४. कवि० ८	३.४३	१४.६२	१३.८७	१२.१७०
४. कवि० ९	खंडित	१५.६	१४.७	१२.३५ १२.१७१
४. दो० ४	,,	१५.१७	१४.१८	१३.६२
४. भुजं० १	,,	१५.१८	१४.१९	१३.६३-६४
४. कवि० ११	,,	१५.२०	१४.२१	१३.६६
४. कवि० १२	,,	१५.२१	१४.२२	१३.६७
४. दो० ५	,,	१५.२२	१४.२३	१३.६८
४. अडि० १	,,	१५.३३	१४.३८	१३.१२९
४. दुमि० २	,,	१५.३४	१४.३९	१३.१३०-३२
४. कवि० १३	,,	१५.४२	१४.५०	१३.१५४
४. कवि० १४	,,	१५.४१	१४.४९	१३.१५३
४. अडि० २	,,	१५.४३	१४.५१	१३.१५५
४. दो० ६	,,	१५.३५	१४.४० १४.४८	१३.१५२
४. कवि० १५	,,	१५.४४	१४.५२	१३.१५६
५. चौ० १-१०	,,	१४.७०	१३.९७	१२.२१७-२०
५. साट० १	,,	१४.७१	१३.९९	१२.२२०
५. गाथा १	,,	१४.७३	१३.१००	१२.२२२
५. नारा० १	,,	१४.७२	१३.९८	१२.२२८
५. त्रिभं० २	,,	१४.८३	१३.१११	१२.२५१-५६
५. अडि० १	,,	१४.७५	१३.१०२	१२.२२८
५. त्रिभं० ३	,,	१४.८४	१३.११४	१२.२६३

दो

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
५. दो० १	ल०	१४.८५	—	१२.२३९
५. कवि० १	,,	१४.८६	१३.११५	१२.२७२
५. भुजं० ४	,,	१४.९१ अ	१३.१२१	१२.२७८
५. साट० २	,,	१४.९२	१३ १२२	१२.२७९
५. साट० ३	,,	१४.९३	१३.१२३	१२.२८०
५. साट० ४	,,	१४.९४	१३.१२४/१	१२.२८१
५. साट० ५	,,	१४.९५	१३.१२४/२	१२.२८२
५. चूर्णिका १	,,	१४.९५ अ	१३.१२१ अ	१२.२७८ आ
५. दो० २	,,	१४.१०३	१३.१३८	१२.३०४
५. दो० ३	,,	१४.१०४	१३.१३९	१२.३०५
५. भुजं० ५	,,	१४.१०५	१३.१४०	१२.३०६
५. कवि० २	,,	१४.१०६	१३.१४१	१२.३०७
५. भुजं० ६	,,	१४.११४	१३.१४९	१२.३१८
५. कवि० ३	,,	१४.११५	१३.१५०	१२.३१९
५. दो० ४	,,	१४.११६	१३.१५१	१२.३२०
५. भुजं० ७	,,	१४.११७	१३.१५२	१२.३२१
५. कवि० ४	,,	१४.११९	१३.१५४	१२.३२३
५. कवि० ५	,,	१४.१२०	१३.१५५	१२.३२४
५. दो० ५	,,	१४.१२१	१३.१५६	१२.३२५
५. कवि० ६	,,	१४.१४७	१३.१८३	१२.३५५
५. कवि० ७	,,	१४.१४८	१३.१८४	१२.३५६
५. दो० ६	,,	१४.१४९	१३.१८५	१२.३५७
५. भुजं० ८	,,	१४.१५०	१३.१८६	१२.३६३
५. वेली० ९	,,	१४.१५० अ	१३.१८७	१२.३६६-७३
५. दो० ७	,,	१४.१५१	१३.१८९	१२.३८५
५. दो० ८	,,	१४.१५२	१३.१८८	१२.३८४
५. दो० ९	,,	१४.१५३	१३.१९०	१२.३८६
५. दो० १०	,,	१४.१५४	१३.१९१	१२.३८७
५ कवि० ८	,,	१४.१५५	१३.१९२	१२.३८८
५. रसा० १०	,,	१४.१५६	१३.१९३	१२.३८९-९१
५. कवि० ९	,,	१४.१५७	१३.१९४	१२.३९२
५. भुजं० ११	,,	१४.१५८	१३.१९७	१२.३९५-९७
५. दो० ११	३.३८	१४.५३	१३.७९	१२.१५५
५. दो० १२	खं०	१६.२९	१५.२७	१४.१६४
६. अनु० १	,,	१६.३५	२८.३	४७.३
६. नारा० [२]	,,	२८.१ / ३०.०	२८.३ अ	४८.२-५
६. दो. ६	५.२२	२८.५८	२९.१७	५०.२५

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
६. गाथा ३	२३०	२८.८	२८.१०	४८.७६
६. गाथा ४	,,	२८.१०	२८.१२	४८.८०
६. गाथा ५	५.१७	२८.५३ अ	२९.१२	५०.२१
६. दो० ९	५.४०	२८.६६	२९.२६	५०.४४
६. दो० १०	५.३९	२८.६५	२९.२५	५०.४३
६. गाथा ६	२३०	२८.१४	२८.१६	४८.८६
६. दो० ११	—	२८.५५	२९.१४	—
६. दो० १२	५.१४	२८.५१	२९.१०	५०.१५.
७. कवि० १	८.२	२९.१	३१.१	५७.९७
७. अनु० [ ]	८.८	२९.३२	३१.२९	५७.७२
७. दो० ६	८.१३	२९.३५	३१.३५	५७.८२
७. दो० ७	८.१४	२९.३६	३१.३६	५७.८३
७. दो० ८	८.१५	२९.३७	३१.३७	५७.८४
७. दो० ९	८.१६	२९.३८	३१.३८	५७.८५
७. दो० १०	८.१७	२९.३९	३१.४०	५७.८६
७. गाथा ४	८.४०	२९.६१	३१.६४	५७.२३५
७. गाथा ५	८.४२	२९.६५	३१.६६	५७.२३८
८. भुजं० १	१०.२८	३१.५ आ	३३.६	६१.१०९-३२
८. दो० २	१०.५८	३१.१७	३३.१३	६१.१७८
८. दो० ३	१०.५७	३१.१६.	३३.१२	६१.१७७
८. दो० ४	१०.५९	३१.१८	३३.१४	६१.१७९
८. दो० ५	१०.६०	३१.१९	३३.१५	६१.१८०
८. दो० ६	१०.४८	३१.७	३३.८	६१.१४२
	१०.५०			६१.१४४
८. कवि० २७	१०.५१	३१.८	३३.९	६१.१४५
८. दो० ३ (?)	१०.५३	३१.९	३३.१०	६१.१५५
		३१.१३		
८. दो० ८	१०.५६	३१.१५	३३.११	६१.१७६
८. दो० १५	१०.१२९	३१ अ. २८	३३.२९	६१.३१८
		३१ अ. ३७		
८. दो० १६	—	३१ अ. २९	३३.३०	६१.३११
८. मुदि० [१]	१०.१२८	३१ अ. ३०	३३.३१	६१.३१४
८. मुद्रि० २	१०.१३२	३१ अ. ३५	३३.३३	६१.३२१
८. दो० १७	१०.१३५	३१ अ. ३६	३३.३४	६१.३२५
९. दो० १	१०.१७६	३१ अ. ७०	३३.६४	६१.४४८
९. दो० ४	१०.१९९	३२.७	३३.७१	६१.४७१
९. अनु० १	१०.१९६	३२.५	३३.६९	६१.४६८
९. दो० ५	१०.१९८	३२.६	३३.७०	१.४७०

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
९. भुजं० १	१०.२२०	३२.१४	३३ ७८	६१.४९२-९६
९. छन्द २	१०.२२४-२७	३२.१८-२१	३३.७९	६१.५००-०३
९. दो० ९	१०.२४८	३२.३३	३३.९१	६१.५५०
९. दो० १०	१०.२६३	३२.३४	३३.९२	६१.५६७
९. कवि० १	१०.२६६	३२.३५	३३.९३	६१.५७०
९. दो० १८	१०.२७९	३२.४६	३३.१०२	६१.५९०
९. दो० १९	१०.२८०	३२.४७	३३.१०३	६१.५९१
९. पद्ध० ४	१०.२८१	३२.४८	३३.१०४	६१.५९२-९६
९. दो० २०	१०.३१६	३२.७८	३३.१३४	६१.६५२
९. दो० २१	१०.२६९	३२.४३	३३.९६	६१.५७९
९. दो० २२	१०.३३३	३२.८४	३३.१४०	६१.६८९
९. दो० ३३	१०.३८९	३२.११८	३३.१७०	६१.८१५
९. मुड्डि० ६	१०.३१०	३२.११९	३३.१७१	६१.८१६
९. मुड्डि० ७	१०.३९१	३२.१२०	३३.१७२	६१.८१७
९ मुडि० ८	१०.३९२	३२.१२१	३३.१७३	६१.८१८
९. मुड्डि० ९	१०.३९३	३२.१२२	३३.१७४	६१.८१९
९. मुडि० १०	१०.३९४	३२.१२३	३३.१७५	६१.८२०
९. मुडि० ११	१०.३९५	३२.१२४	३३१.१७६	६१.८२३
९. दो० ३४	१०.३९८	३२.१२६	—	६१.८२५
९. दो० ३५	१०.४०२	३२.१२९	३३.१७९	६१.८३०
९. दो० ४४	१०.४४९	३२.१५०	३३.१९५	६१.९२०
९. दो० ४९	—	३३.१३	३३.२१०	—
९. कवि० ६	११.१	३३.१	३३.२०१	६१.९८१
९. कवि० ७	११'२	३३.२	३३.२०२	६१.९८२
९. कवि० ८	११.५	३३.६	३३.२०३	६१.१००७
९. कवि० ११	११.४६	३३.१६	३३.२१३	६१.१०६१
९. दो० ५१	११.५२	३३.२१	३३.२१८	६१.१०७४
९. [कवि०] १३	११.५३	३३.२२	३३.२१९	६१.१०७५
९. दो० ५२	११.५४	३३.२३	३३.२२०	६१.१०७६
९. गाथा ३	११.११६	३३.५९	३३.२५२	६१.१२०९
	११.१२३			६१.१२१६
९. गाथा ४	११.११७	३३.६०	३३.२५३	६१.१२१०
९. दो० [ ]	११.१६१	३३.७७	३३.२६६	६१.१२६१
९. मुड्डि० १६	११.१६८	३३.८२	३३.२७१	६१.१२६८
९. दो० ६७	११.१६९	३३.८३	३३.२७२	६१.१२६९
९. दो० ६८	११.१७०	३३.८४	३३.२७३	६१.१२७०
९. दो० ६९	११.१७१	३३.८५	३३.२७४	६१.१२७१
९. कवि० १५	११.१८५	३३.१०१	३३.२८३	६१.१२८५

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
९. कवि० १६	११.१९६	३३.१०३	३३.२८५	६१.१२९६
९. गाथा ४	१२.१	३४.१	३३.२८८	६१.१३२८
९. दो० ७१	१२.२	३४.२	३३.२८९	६१.१३२९
९. दो० ७२	१२.३	३४.३	३३.२९०	६१.१३३०
९. दो० ७३	१२.९	३४.४	३३.२९१	६१.१३३६
१०. कवि० १	१२.३९	३४.२२	३३.३११	६१.१३९९
१०. दो० ५	१२.४२	३४.२४	३३.३१३	६१.१४०२
१०. दो० ६	१२.४४	३४.२५	३३.३१४	६१.१४०४
	१२.४५	३४.२६	३३.३१५	६१.१४०५
१० दो० ७	१२.४७	३४.२७	३३.३१६	६१.१४०७
१० कवि० २	१२.४८	३४.२८	३३ ३१७	६१.१४०० ६१.१४०८
१०. दो० [ ]	१२.५०	३४.२९	३३.३१८	६१.१४१०
१०. दो० ८	१२.५१	३४.३०	३३.३१९	६१.१४११
१०. दो० ९	१२.५२	३४.३१	३३.३२०	६१.१४१२
१०. दो० २ (१)	१२.१११	३४.४९	३३.३३८	६१.१५३०
१०. कवि० ३	१२.५६	३४.३५	३३.३२४	६१.१४२३
१०. कवि० ४	१२.११३	३४.५२	३३.३४१	६१.१५३२
१०. कवि० ६	१२.११७	३४.५४	३३.३४३	६१.१५३६
१०. दो० ११	१२.१२३	३४.५८	३३.३४७	६१.१५४६
१०. कवि० ८	१२.१२९	३४.६३	३४.३५१	६१.१५५२
१०. दो० १२	१२.१३३	३४.६४	३३.३५२	६१.१५५७
१०. कवि० ९	१२.१३४	—	३३.३५३	६१.१५५८
१०. कवि० १०	१२.१४५	३४.७१	३३.३५६	६१.१५६९
१०. कवि० ११	१२.१४६	३४.७२	३३.३५७	६१.१५७०
१०. दो० १३	१२.१४७	३४.७३	३३.३५८	६१.१५७१
१०. मुक्ति० १	१२.१८८	३४.९१	३३.३७२	६१.१६२९
१०. कवि० १२	१२.१९८	३४.९८	३३.३७९	६१.१६५८
१०. कवि० १३	१२.१९९	३४.९९	३३.३८०	६१.१६५९
१०. कवि० १४	१२.२०१	३४.१००	३३.३८१	६१.१६६४
११. मोती० १	१२.२३२ १२.२३७/२	३५.१०	३३.३९३	६१.१७३५-४३ ६१.१७५३-५४
११. कवि० ५	१२.२३८	३५.११	३३.३९४	६१.१७५६
११. दो० २	१२.२३९	३५.१२	३३.३९५	६१.१७५७
११. पद्ध० २	१२.२४०	३५.१३	३३.३९६	६१.१७५८-६९
११. दो० ४	१२.२४७	३५.१५ ३५.२०	३३.३९८	६१.१७७६
११. कवि० ६	१२.२४८	३५.२१	३३.४०२	६१.१७७७

अ क्र०	म०	ना०	द०	स०
११. छंद ३	१२.२४९	३५.२२	३३.४०३	६१.१७७८-८७
११ दो० ५	१२.२५०	३५.२३	३३.४०४	६१.१७८८
११. दो० ६	१२.२५१	३५.२४	३३.४०५	६१.१७८९
११. कवि० ७	१२.२५२	३५.२५	३३.४०६	६१.१७९०
११. कवि० ८	१२.२७७	३५.२६	३३.४०७	६१.१८३०
११. कवि० ९	१२.२७८	३५.२७	३३.४०८	६१.१८३१
११. छंद ४	१२.२७९	३५.२९	३३.४१०	६१.१८३२-४५
११. कवि० १०	१२.२८०	३५.३०	३३.४११	६१.१८४६
११ कवि० ११	१२.३१४	३५.३१	३३.४१२	६१.१९१७
११. दो० ७	१२.३१५	३५.३२	३३.४१३	६१.१९१८
११. मोट० ५	१२.३१६	३५.३३	३३.४१४	६१.१९१९-२३
११. दो० ८	१२.३२२	३५.३६	३३.४१६	६१.१९३४
११. दो० ९	१२.३२३	३५.३७	३३.४१७	६१.१९३५
११. दो० १०	१२.३२४	३५.३८	३३.४१८	६१.१९३६
११. कवि० १३	१२.३२५	३५.३९	३३.४१९	६१.१९३७
११. कवि० १४	१२.३२६	३५.४०	३३.४२०	६१.१९३८
११. कवि० १५	१२.३२७	३५.४१	३३.४२१	६१.१९६१
११. दो० ११	१२.३४१	३५.४९	३३.४३०	६१.१९७१
११. कवि० १६	१२.३४२	३५.५०	३३.४३१	६१.१९७२
११. कवि० १७	१२.३४३	३५.५१	३३.४३२	६१.१९७३
११. दो० १२	१२.३४८	३५.५२	३३.४३३	६१.१९८५
११. दो० १३	१२.३५०	३५.५३	३३.४३४	६१.१९८७
११. दो० १४	१२.३४४	३५.५४	३३.४३५	६१.१९७४
११. दो० १५	—	३५.५५	३३.४३६	—
११. कवि० १८	१२.३६३	३५.५६	३३.४३७	६१.२००८
११. दो० १६	१२.३६४ आ	३५.५७	३३.४३८	६१.२०१०
११. कवि० १९	१२.३७६	३५.५८	३३.४३९	६१.२०३६
११. कवि० २०	१२.३७८	३५.५९	३३.४४०	६१.२०३८
११. भुजं० ७	१२.३७९	३५.६०	३३.४४१	६१.२०३९-४१
११. कवि० २१	१२.३८०	३५.६१	३३.४४२	६१.२०४२
११. दो० १७	१२.३८१	३५.६२	३३.४४३	६१.२०४३
११. दो० १८	१२.३८२	३५.६३	३३.४४३ आ	६१.२०६४
११. दो० १९	१२.४१५	३६.२	३३.४५४	६१.२०९१
११. दो० २०	१२.४१७	३६.३	३३.४५६	६१.२०९३
११. त्रो० ८	१२.४१९	३६.६	३३.४५८	६१.२०९५-९७
११. दो० २१	१२.४२०	३६.७	३३.४५९	६१.२०९८
११. कवि० २८	१२.४०६	३५.६४	३३.४४४	६१.२०७९
११. कवि० २९	१२.४०७	३५.६५	३३.४४५	६१.२०८०

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
११. दो० २२	१२.४०८	३५.६६	३३.४४६	६१.२०८१
११. दो० २३	१२.४०९	३५.६७	३३.४४७	६१.२०८२
११. दो० २४	१२.४१०	३५.६८	३३.४४८	६१.२०८३
११. भुज० १०	१२.४११	—	३३.४४९	६१.२०८४-८६
११. कवि० ३०	१२.४१२	३५.७०	३३.४५०	६१.२०८७
११. दो० २५	१२.४१३	३५.७१	३३.४५१	६१.२०८८
१२. कवि० २	१२.४७०	३६.२४	३३.४६६	६१.२२०४
१२. दो० २१	१२.५६४	३७.४	३३.५०४	६१.२४०२
१२. कवि० १३	१२.५७६	३७.७	३३.५०५	६१.२४३४
१२. दो० २२	१२.५७०	३७.८	३३.५०६	६१.२४३५
१२. कवि० १४	१२.५६२	३६.४४	३३.४९४	६१.२४०१
१२. कवि० १५	१३.५७२	३७.१	३३.५००	६१.२४३०
१२. कवि० १६	१२.५७३	३७.२	३३.५०२	६१.२४३१
१२. कवि० १७	१२.५८०	३७.९	३३.५०७	६१.२४३८
१२. दो० २३	१२.५७४	३७.३	३३.५०३	६१.२४३३
१२. भुजं० २	१२.५८१	३७.११	३३.५०८	६१.२४३९-५२
१२. कवि० १८	१२.५८७	३७.१३	३३.५१०	६१.२४५८
१२. दो० २४	१२.५८९	३७.१३ अ	३३.५११	६१.२४६०
१२. दो० २५	१२.५९०	३७.१४	३३.५१२	६१.२४६१
१२. दो० २६	१२.५९१	३७.१५	३३.५१३	६१.२४६२
१२. कवि० २०	१२.५८३	३७.१६	३३.५१४	६१.२४५४
१२. कवि० २१	१२.५८५	३७.१८	३३.५१६	६१.२४५६
१२. कवि० २२	१२.५८६	३७.१०	३३.५१७	६१.२४५७
	१२.६०७			६१.२४८९
१२. दो० २९	१२.५९९	३७.२१	३३.५२०	६१.२४८०
१२. पद्ध० ३	१२.५९८	३७.१९	३३ ५१९	६१.२४६९-७९
१३. दो० १	१२.५९६	३८.१	३३.५१८	६१.२४६७
१३. दो० २	१२.६००	३८.२	३३.५२१	६१.२४८१
१३. दो० ३	१२.६०१	३८.३	३३.५२२	६१.२४८२
१३. दो० ४	१२.६२२	३८.५	३३.५२४	६१.२५३७
१३. गाथा १	१२.१३७७[1]	३८.४७	३३.५३५	६१.२५४६
१३. दो० ८	१२.१३८१[1]	३८.५१	३३.५४०	६१.२५५०
१३. दो० ९	१२.३८४[1]	३८.५५	३३.५४३	६१.२५५३
१३. दो० १०	१२.६२६	३८.१८	३३.५४४	६१.२५४१
१३. [ ]	९.४	३९.४	३५.५	६२.१

[1] म० की ये छन्द-संख्याएं पूरे कन्नौज-प्रकरण की सम्मिलित छन्द-संख्याएं लगती हैं।

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
१३. [ ]	९.३	३९.५	३४.४	६६.२०२/१ ६१.२१-२४
१३. [ ]	९.७	३९.११	३४.११	६१.३१
१३. [ ]	९.८	३९.१२	३४.१२	६१.३२-३४
	९.१२	३९.१५ ४१.२	३४.१४ अ	६१.४३-४५
१३. कवि० १		३९.१७	३४.१५	६४.९
१३. कवि० २		३९.१८	३४.१६	६४.१०
१३. कवि० ३		३९.१९	३४.१७	६४.२७
१३. कवि० ४		३९.१६ ३९.२१	३४.१९	६४.३४
१३. कवि० ५		३९.२०	३४.१८	६४.२८
१३. दो० ११		३९.२२	३४.२०	६४.३५
१३. भुजं० [ ]		३९.२३ ३९.२५	३४.२१ ३४.२३	६४.३६-३८ ६४.४०-४२
१३. कवि० [ ]		३९.६७	३४.६१	६४.१४८
१३. दो० १२		३९.२६	३४.२४	६४.५१
१३. कवि० ६		३९.२७	३४.२५	६४.४५
१३. कवि० ७		३९.२८	३४.२६	६४.५०
१३. कवि० ८		३९.३३	३४.२८	६४.७७
१३. कवि० ९		३९.३६	३४.३०	६४.८७
१३. दो० १३		३९.३७	३४.३१	६४.९२
१३. कवि० १०		३९.३९	३४.३३	६४.१०६
१३. कवि० ११		३९.४०	३४.३४	६४.१०७
१३. कवि० १२		—	३४.३५	६४.११०
१३. कवि० १३		३९.४१	३४.३७	६४.११५
१३. कवि० १४		३९.४३/१	३४.३८	६४.११६
१३. कवि० १५		३९.४३/२	३४.३९	६४.११८
१३. दो० १४		३९.६३	३४.५९	६४.१४६
१३. अनु० १		३९.६५	३४.६०	६४.१४७
१३. कवि० १६		३९.४५	३४.४१	६४.१२२
१३. कवि० १७		३९.७०	३४.६६	६४.१५५
१३. कवि० १८		३९.८१	३४.७५	६४.१८५
१३. दो० १५		३९.८५	३४.७९	६४.१९१
१३. कवि० १९		३९.८९	३४.८१	६४.१९३
१३. कवि० २०		३९.९३	३४.८४	६४.१९६
१३. कवि० २१		३९.१०७	३४.९७	६४.२२३
१३. छंद [ ]		३९.११३	३४.१०५	६४.२३१-४५

अ. क.	म.	ना.	द.	स.
१३. छंद [ ]		३९.१२१	३४.११२/१	६४.२८३-३०१
१३. [कवि० २२]		३९.१२३	३४.११४	६४.३३५
१३. छंद [ ]		—	३४.११४	६४.३४२-४५
१३. [कवि० २३]		३९.१२४	—	६४.३४६
१३. दो० १६		३९.१३८	—	६४.३६३
१३. दो० १७		३९.१४०	३४.१३०	६४.३६४
१३. दो० १८		३९.१४२	३४.१३१	६४.३६६
१३. कवि० २४		३९.१४४	३४.१३४	६४.३७१
१३. [ ]	९.१५	४१.५	३४.१७३	६१.५४-५९
१३. [ ]	९.१९	४१.८	३४.१७७	६१.६५-७१
१३. [ ]	९.२२-२३	४१.१२	३४.१८०	६२.१२९-४०
१४. कवि० ६		४२-१०३	३६.८७	६६.३२२
१४. कवि० ७		४२.१०४	३६.९७	६६.३५४
१४. कवि० ८		४२.१०८	३६.१०१	६६.३६०
१४. कवि० ९		४२.१०९	३६.१०२	६६.३६२
१४. कवि० १०		४२.११०	३६.१०३	६६.३६४
१४. कवि० ११		४२.११४	३६.१०७	६६.३७२
१४. दो० १ (?)		४२.११६	—	६६.३७५
१४. दो० २ (?)		४२.११५	—	६६.३७४
१४. कवि० १२		४२.११७	३६.१०८	६६.३७६
१४. दो० २१		४२.११८	३६.१०९	६६.३७८
१४. दो० २३		४२.११९	३६-११०	६६.३७९
१४. दो० २४		४२.१२५	३६.११७	६६.३८८
१४. दो० २५		४२.१२४	३६.११६	६१.३८५
१४. दो० २६		४२.१३८	३६.१२८	६६.४०३
१४. दो० २८		४३.१३४	३६.१२५	६६.३९९
१४. दो० [ ]		४२.१३९	३६-१२९	६६.४०५
१४. दो० २८ (?)		४२.१४०	३६.१३०	६६.४०६
१४. दो० २९		४२.१३२	३६.११८	६६.३९०
१४. दो० ३०		४२-१२६	३६.११९	६६.३८६
१४. कवि० १३		४२.१२७	३६.१२०	६६.३९१
१४. दो० ३१		४२.१२८	३६.१२१	६६.३९२
१४. दो० ३२		४२.१२९	३६-१२२	६६.३९४
१४. दो० ३६		४२.१४१	—	६६.४११
१४. भुज० २		४२.१४२	—	६६.४१३-१५
१४. दो० ३७		४२.१४३	—	६६.४२१
१४. कवि० १५		४२.१४५	—	६६.४२४
१४. कवि० १६		४२.१४६	३६.१३१	६६.४२५

अ. क.	म.	ना.	द.	स.
१४. रसा० ३		४२.१४७	३६.१३६	६६.४२६-३२
१४. कवि० १७		४२.१४८	३६.१३७	६६.४३३
१४. कवि० १८		४२.१४९	३६.१३८	६६.४३४
१४. कवि० १९		४२.१५०	३६.१३९	६६.४३५
१४. कवि० २०		४२.१५१	३६.१४०	६६.४३६
१४. कवि० २१		४२.१५२	३६.१४१	६६.४३७
१४. दो० ३८		४२.१५३	३६.१४२	६६.४४०
१४. भुजं० ४		४२.१५८-५९	३६.१४६	६६.४४६ ५८
१४. दो० ३९		४२.१६०	३६.१४७	६६.४५९
१४. दो० ४०		४२.१६१	३६.१४८	६६.४६१
१४. दो० ४१		४२.१६२	३६.१५०	६६.४६२
१४. दो० ४२		४२.१६७	३६.१५५	६६.४७४
१४. कवि० २२		४२.१६९	३६.१५७	६६.४७८
१४ कवि० २३		४२.१७०	३६.१५८	६६.४७९
१४. कवि० २४		४२.१७१	३६.१५९	६६.४८०
१४. दो० ४३		४२.१७२	३६.१६०	६६.४९०
१४. कवि० २५		४२.१७३	३६.१६१	६६.४८१
१४. कवि० २६		४२.१७४	३६.१६२	६६.४८२
१४. कवि० २७		४२.१७५	३६.१६३	६६.४८७
१४. कवि० २८		४२.१७६	३६.१६४	६६.४८८
१४. कवि० २९		४२.१७७	३६.१६५	६६.४८९
१४. कवि० ३०		४२.१७८	३६.१६६	६६.४९१
१४. कवि० ३१		४२.१८१	३६.१६९	६६.४९५
१४. कवि० ३२		४२.१८३	३६.१७१	६६.४९६
१४. कवि० ३३		४२.१८२	३६.१७२	६६.४९७
१४. कवि० ३४		४२.१८४	३६.१७२	६६.५०१
१४. कवि० ३५		४२.१८७	३६.१७५	६६.४९९
१४. छंद ५		४२.२०३	३६.१८९	६६.५७९-८२
१४. दो० ४४		४२.१८०	३६.१६८	६६.४९४
१४. दो० ४५		४२.१७९	३६.१६७	६६.४९३
१४. कवि० ३६		४२.१८८	३६.१७६	६६.५०४
१४. कवि० ३७		४२.१८९	३६.१७७	६६.५०६
१४. कवि० ३८		४२.१९३	—	६६.५१६
१५. कवि० १		४३.१	३६.१९७	६६ ६१२
१५. मोती० १		४३.२	—	६६.६१४-२०
१५. दो० ३		४३.१०	३६.२०३	६६.६४७
१५. दो० ६		४३.११	३६.२०५	६६.६५६
१५. कुंड० १		४३.१२	३६.२०६	६६.६५८

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
१५. कुंड० २		४३.१४	३६.२०८	६६.६६४
१५. कवि० २		४३.१५	३६.२०९	६६.६६६
१५. कवि० ३		४३.१६	३६.२१०	६६.६७०
१५. मुडि० २		४३.१८	३६.२११	६६.६७२
१५. कवि० ४		४३.१९	३६.२१२	६६.६७३
१५. दो० ७		४३.२०	३६.२१३	६६.६७६
१५. दो० ८		४३.२१	३६.२१४	६६.६७७
१५. कवि० ५		४३.२२	३६.२१५	६६.६७९
१५. कवि० ६		४३.२३	३६.२१६	६६.६८०
१५. कवि० ७		४३.३०	३६.२२३	६६.७००
१५. कवि० ८		४३.३१	३६.२२५	६६.७०१
१५. कवि० ९		४३.३२	—	६६.७०३
१५. कवि० १०		४३.२४	३६.२१७	६६.६८७
१५. कवि० ११		४३.२५	३६.२१८	६६.६८८
१५. दो० ९		४३.३३	३६.२२६	६६.७१२
१५. दो० १०		४३.३४	३६.२२७	६६.७१३
१५. कवि० १२		४३.३५	—	६६.७१५
१५. कवि० १३		४३.३७	३६.२२९	६६.७२५
१५. कवि० १४		४३.३८	३६.२३०	—[1]
१५. कुंड० ३		४३.३९	३६.२३१	६६.७६१
१५. दो० ११		४३.४१	३६.२३३	६६.७६२
१५. दो० १२		४३.४२	३६.२३४	६६.७६३
१५. दो० १३		४३.४३	—	६६.७६४
१५. दो० १४		४३.४४	३६.२३५	६६.७६५
१५. कुंड० ४		४३.४५	३६.२३६	६६.७६६
१५. कवि० १८		४३.१२२	३६.३१४	६६.१००८
१५ दो० २५		४३.१०५	३६.२९३	६६.९२९
१६. कवि० १		४३.१११	३६.२९९	६६.९५२
१६. कवि० २		४३.११२	३६.३००	६६.९५३
१६. कवि० ३		४३.१२७	३६.३१५	६६.१०१०
१६. कवि० ४		४३.१३४	—	६६.१०२१
१६. कवि० ५		४३.१३५	३६.३२२	६६.१०५७
१६. भुज० ३		४३.१३६	३६.३२३	६६.१०६७-७३
१६. कवि० ६		४३.१५०	—	६६.११२५
१६. कवि० ७		४३.१५१	३६.३३८	६६.११७५
१६ कवि० ८		४३.१५२	३६.३४०	६६.११७७

१ यह छन्द प्रा० में है और उसका ६२.२८५ है।

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
१६. कवि० ९		४३.१५२	३६.३३९	६६.११७६
१६. दो० १		४३.११०	३६.२९८	६६.९९४
१६. कवि० १०		४३.१६०	३६.३४८	६६.१२१३
१६. कवि० ११		४३.१५५	—	६६.११८२
१६. दो० १२ (१)		४३.१५६	३६.३४२	६६.११८४
१६. कवि० १२		४३.१५७	३६.३४४	६६.११८५
१६. कुंड० १		४३.१७२	३६.३५०	६६.१२४६
१६. दो० ४		४३.१७१	३६.३४९	६६.१२४५
१६. दो० ५		४३.१६२	३६.३५१	६६.१२२२
१६. दो० ६		४३.१७३	३६.३५२	६६.१२२३
१६. दो० ७		४३.१७४	३६.३५३	६६.१२४८
१६. मुड़ि० १		४३.१५४	३६.३४१	६६.११७८-७९
१६. कवि० १३		४३.१८३	—	६६.१४४८
१६. कवि० १४		४४.२	—	६६.१४३९
१६. कवि० १५		४३.१७५	—	६६.१४४९
१६. रसा० ६		४३.१७६	३६.३५४	६६.१४१७-२२
१६. कवि० १६		४३.१७७	—	६६.१२५८
१६. कवि० १७		४३.१७८	३६.३५६	६६.१२६८
१६. कवि० १८		४३.१७९	३६.३५७	६६.१२९०
१६. कवि० १९		४३.१८०	३६.३५८	६६.१४२३
१६. कवि० २०		४३.१८१	३६.३५९	६६.१४२४
१६. कवि० २१		४३.१८२	३६.३६०	६६.१४२५
१६. कवि० २२		४३.१८४	३६.३६१	६६.१४५०
१६. कवि० २३		४३.१८५	३६.३६२	६६.१४५३
१७. कुंड० १		४४.१	—	६६.१४५४
१७. कवि० १		४४.३	—	६६.१४३८
१७. त्रोट० [१]		४४.७	३६.३६९	६६.१४४३-४७
१७. कुंड० २		४४.८	३६.३७०	६६.१४२६
१७. कवि० २		४४.१३	३६.३७५	६६.१३२७
१७. कवि० ३		४४.१४	३६.३७६	६६.१३२८
१७. कवि० ४		४४.१५	३६.३७७	६६.१३२९
१७. विज्० [२]		४४.१७	—	६६.१३३०-३२
१७. कवि० ५		४४.१८	३६.३७९	६६.१३३५
१७. कवि० ६		४४.३२	३६.३९३	६६.१३३९
१७. कवि० ७		४४.३४	३६.३९५	६६.१३४९
१७. साट० १		४४.२२	३६.३८३	६६.१४७१
१७. साट० २		४४.२३	३६.३८४	६६.१४७२
१७. साट० ३		४४.२४	३६.३८५	६६.१४७३

अ. प.	म.	ना.	द.	स.
१७. साट० ४		४४.२५	३६.३८६	६६.१४७४
१७. साट० ५		४४.२६	३६.३८७	६६.१४७५
१७. साट० ६		४४.२७	३६.३८८	६६.१४७६
१७. साट० ७		४४.२८	३६.३८९	६६.१४७७
१७. कवि० ८		४४.२९	—	६६.१३२६
१७. कवि० ९		४४.३०	३६.३९१	६६.१३२७
१७. कवि० १०		४४.३१	३६.३९२	६६ १३२८
१७. कवि० ११		४४.३३	३६.३९४	६६.१३३०
१७. दो० १		४४.३५	३६.३९६	६६.१४०६
१७. दो० २		४४.३६	३६.३९७	६६.१४०७
१७. भुजं० ३		४४.३७	—	६६.१४०८-१२
१७. कवि० १२		४४.३८	३६ ३९८	६६.१४७८
१७. कवि० १३		४४.३९	३६.३९९	६६.१४७९
१७. कवि० १४		४४.४०	३६.४००	६६.१४८०
१७. मोती० ४		४४.४३	—	६६.१४८१-८३
१७. कवि० १५		४४.१९	३६.३८०	६६.१४५६
१७. कुंड० ३		४४.२०	३६ ३८१	६६.१४५७
१७. त्रो० ५		४४.२१	३६.४०१	६६-१४५८-६४
१७. दो० ३		३८.२०	३५.७	६२.९
१७. मुद्रि० १		३८.२१	३५.८	६२.८
१७. मुद्रि० २		३८.२२	३५.९	६२.१०
१७. कुंड० ४		३८.७०	३५.४९-५०	६२.१०३
१७. दो० ४		४४.४४	३६.४०१	६६.१४८४
१७. दो० ५		४४.४५	३६.४०२	—
१७. दो० ६		४४.४६	३६.४०३	६६ १५००
१७. दो० ७		४४.४७	३६.४१४	६६.१५०१
१८. दो० १		४४.४८	३६.४०५	६६.१५०२
१८. कवि० १		४५.१	३६ ४०६	६६.१५०३
१८. भुजं० [१]		४५.२	३६.४०७	६६.१५०४-०७
१८. कवि० २		४५.३	३६.४०८	६६.१५१३
१८. कुंड० १		४५.४	३६.४०९	६६.१५२३
१८. कवि० ३		४५.८	३६.४११	९६.१५२५
१८. कवि० ४		४५.८ अ	३६.४१२	६६.१५२६
१८. कवि० ५		४५.१३	३६.४१७	६६.१५३५
१८. कवि० ६		४५.१४	३६.४१८	६६.१५३७
१८. कवि० ७		४५.१५	३६.४१९	६६.१५३६
१८. कवि० ८		४५.१६	३६.४२०	६६.१५३९
१८. दो० २		४५.१७	—	६६.१५४०

अ. क.	म.	ना.	द.	स.
१८. दो० ३		४५.१८	३६.४२१	६६.१५४१
१८. छंद २		४५.१९/१	३६.४२२/१	६६.१५४२-४३
१८. छंद [३]		४५.१९.२	३६.४२२.२	६६.१५४४-४७
१८. दो० ४		४५.२०	३६.४२३	६६.१५४८
१८. दो० ५		४५.२१	३६.४२४	६६.१५४९
१८. कवि० ९		४५.२२	३६.४२५	६६.१५५०
१८. छंद ४		४५.२३	—	६६.१५५१-५४
१८. दनि० ५		४५.२४	३६.४२६	६६.१५५८-६५
१८. कवि० १०		४५.२५	३६.४२७	६६.१५६६
१८. कवि० ११		४५.२८	३६.४:२	६६.१५९५
१८. मो० ६		४५.२९	३६.४३३	६६.१५९६-९८
१८. कवि० १२		४५.३०	३६.४३४	६६.१५९९
१८. गाथा १		४५.३४	३६.४३८	६६.१५५६
१८. कवि० १३		४५.३५	३६.४३९	६६.१५५७
१८. कवि० १४		४५.३६	३६.४४०	६६.१५५८
१८. कवि० १५		४५.३७	३६.४४१	६६.१५५९
१८. कवि० १६		४५.३८	३६.४४२	६६.१५६०
१८. कवि० १७		४५.३९	३६.४४३	६६.१५६१
१८. कवि० १८		४५.४०	३६.४४४	६६.१५६२
१८. कवि० १९		४५.४१	३६.४४५	६६.१५६३
१८. कवि० २०		४५.४२	३६.४४६	६६.१६०४
१८. कवि० २१		४५.४३	३६.४४७	६६.१६०५
१८. कवि० २२		४५.४४	३६.४४८	६६.१६०६
१८. कवि० २३		४५.४५	४६.४४९	६६.१६०७
१८. कवि० २५		४५.४६	३६.४५०	६६.१६०९
१८. कवि० २६		४५.४८	३६.४५२	६६.१६११
१८. कवि० २८		४५.४९	३६.४५६	६६.१६१७
१८. गाथा २		४५.५०	३६.४५४	६६.१६१९
१८. मो० ८		४५.५७ अ	—	६६.१६७१-७४
१८. दो० १०		४५.६६	—	६६.१६७५
१८. कवि० २९		४५.६७	३६.४६५	६६.१७०५
१८. कवि० ३०		४५.६८	३६.४६६	६६.१७०६
१८. दो० ११		४५.६९	३६.४६७	६६.१७११
१८. कवि० ३१		४६.१	३७.१¹	६७.२
१९. दो० १		४५.७३	३६.४७१	६७.१४
१९. भुजं० १		४६.११	३७.२५-२८¹	६७.५८-६३

¹ केवल संख्याएँ दोहा छंद की भाँति ६० की हैं । द० में यह पाठ नहीं है ।

अ. फ.	म.	ना.	द.	स.
१९. छंद २		४६.२०	३७.२९-३३[*]	६७.६४-७५
१९. रासा० ३		४६.४०	३७.६०-६५[*]	६७.१६६-७१
१९. चौ० १२		४६.९९	३७.१७० ७२[*]	६७.३४३ ४८
१९. अनु० २		—	३७.२५१[*]	६७.५२२,२
१९. कवि० १३		४६.१८	३७.२४[*]	६७.५४
१९. कवि० १४		—	—	६८.२२१

अ० फ० के उपर्युक्त छंदों में से उनका पाठ जो स० में नहीं है, अ० के अनुसार नीचे दिया जा रहा है :—

१. भुजं० ११ :

कहं बग्ग धारी निहारे विहारे।
कहं कोइलं बोल सोहै सहारे।
मनो लाल पेरोज पुक्तं गोरे।
कहं जाइ जंभीरि तालं तमालं।
कहं मालती सेवती पुष्प जालं।
कहं ससरं केलि कूल्हंट घोरं।
कहं बग्ग पप्पीह सोहंति सोरं।
कहं मोर सापक्क ते बोल लंदे।
कहं दाष विज्जौर हेलं ति गंदे।
कहं नारि वेल्ली सुफूली सुहायं।
कहं मालती माछ हालं ति घायं।
कहं केतकी कूज बरु बेल कुल्हं।
कहं चूव गुल्लाव वेली ति हल्लं।
कहं चौर सी मोर लागं सुहायं।

२. दो० २ (?) : अनंगपाल पुच्छैं नृपति कहहु भट्ट धरि ध्यान।
किहि संवत मेवार पति बंधि लियो सुरतान॥

३. दो० १६ : सहु निअच्छि निरच्छि जहं सहं तरु इक्क सहार।
गंध्रव गंध्रव केलि सुनि जिहि रस उदिम मार॥

६. दो० ११ : पुछुउन हारि सु पुछुयौ धाइ सुउत्तर देइ।
जिमि द्विज कह सु पंजरै घट घट उत्तर लेइ॥

९. दो० ४९ : जानि पंगु चहुवान सौं सुप दंप्पौ यह बैनु।
बोलि सूर सामंतस्यौ करौ एक ठौ सैनु॥

११ दो० १५ : थय प्रसन्न गिरिजा भई संगि मंगन हार।
पुत्री ते यह पुत्र करि धन कुल रष्षन हार॥

१५. कवि० १४ : दिय कपाट चहु कोद चंद देवल महि सुप्यो।
हृष्ष न सूझइ दृष्ष लष्ष सष डाढा लष्षो।
मिलि जानौ सुलतान लियौ सुलतान लिपाई।
हौं पर्वत कौ राज धरन पंजाब सुपाई॥

[*] ये छंद संख्यायें टॉड संग्रह की प्रति ६० की है। द० में यह खण्ड नहीं है।

ई. स्वीकृत, धा० मो० तथा अ के अतिरिक्त फ० की पाठ-सामग्री

म.	ना.	द.	स.
[अ० १. सा़ट० १ के पूर्व]			
—	२.१२७	१.१५१	१.७६२
—	२.१२८	१.१५२	१.७६३
—	२.१३०	१.१५४	१.७६७
—	२.१३१	१.१५५	१.७६८
—	२.१३२	१.१५६	१.७८१
—	२.१३४	१.१५७	१.७८२
—	२.१३५	१.१५८	१.७८३
—	—	—	—
—	—	—	—
[अ० १. विरा० १ के अनन्तर]			
१. अहि०	—	२.२	२.२
—	—	—	२.८१
[अ० १. विरा० २ के अनंतर]			
—	—	—	२.८३-९१
—	—	—	२.१०५
—	—	—	२.१०६-१०९
—	—	—	२.११०
—	—	—	२.१११
—	—	—	२.११२
—	—	—	२.११३-१२९
[अ० २. मुख० १ के पूर्व]			
—	१.६	१.१	१.२

यह छन्द समाप्त नहीं हुआ है तभी फ० का कुछ अंश खंडित हो गया है।
न

फ.	म.	ना.	द.	स.
		[अ० २. भुजं० १ के अनंतर]		
[ ]	—	—	१.९३	१.२५२
१	—	—	१.९४	१.२५३
[ ]	२. कवि०	—	१.९६	१.२५५
[ ]	२. दो०	१.७६	१.९७	१.२५६
[ ]	२. कवि०	—	१.९९	१.२८०
१	—	—	—	—
२	—	—	—	—
		[अ० २. पद्ध० २ के अनंतर]		
[ ]	२. दो०	२.८२	—	१.४९१
		[अ. २. दो० १० के अनन्तर]		
११	—	१.३	—	१.६९
		[अ. २. दो० १९ के अनन्तर]		
२०	२. अ. मुडि० १	—	—	—
		[अ. ३. कवि० १ के पूर्व.]		
[ ]	—	१२.३१	२१.४	१९.२८
[ ]	—	१२.३२	२१.५	१९.२९-३४
३	—	१२.३३	२१.६	१९.३५
[ ]	—	१२.३४	२१.७	१९.३६
[ ]	—	१२.३५	२१.८	१९.३७-४२
१	—	१२.३६	२१.९	१९.४३
[ ]	—	१२.३७	२१.१०	१९.४४
[ ]	—	१२.३८	२१.११	१९.४५-५८
१	—	१२.४०	२१.१३	१९.९१
६	—	—	—	—
१	—	१२.४२	२१.१५	१९.९३
२	—	१२.४३	२१.१६	१९.९४
३	—	१२.४४	२१.१७	१९.९५
७	—	१२.४५	२१.१८	१९.९६
[ ]	—	१२.४६	२१.१९	१९.९७
४	—	१२.४७	२१.२०	१९.१०२
[ ]	—	१२.४८	२१.२१	१९.१०३
		[अ. ३. कवि० ३ के अनन्तर]		
५	—	१२.२९	२१.२	१९.२५
		[अ. ७. अनु० १ के अनन्तर]		
१२	८.४	२९.१९	३१.१७	५७.४७

फ.	म.	ना.	द.	स.
[श. ६. दो० ३ के अनन्तर]				
१	१०.१८७	३२.१	३३.६६	६१ ४५९
[श. ६. भुजं० ७ के अनन्तर]				
५३	११.५५	३३.२४	३३.२२१	६१.१०७७
[श. ६. दो० ५८ के अनन्तर]				
[ ]	—	३३.४४	३३.२४२	६१.११६९
[श. १३. कवि० १५ के अनन्तर]				
१६		३९.४४	३४.३६	६४.११२
[श. १३. कवि० १६ के अनन्तर]				
१७		—	—	—
१८		३९.५१	३४.४८	६४.१२४
१९		३९.५२	३४.५८	६४.१३३
२०		३९ ६१	३४.५६	६४.१४४
२१		३९.५३	३४.५०	६४.१३१
२२		३९.५४	३४.५१	६४.१३२
[श. १३. कवि० १७ के अनन्तर]				
[ ]		३९.५५	३४.५२	६४.१३८
२४		३९.५८	३४.५३	६४.१३९
२५		३९.५६	३४.५४	६४.१४३
२६		३९.६८	३४.६४	६४.१५३
२७		३९.६०	३४.६५	६४.१५४
२८		३९.७२	३४.६७	६४.१५६
२८ अ		३९.७४	३४.७२	६४.१६०-६४
[श. १३. कवि० २२ के पूर्व]				
३०		३.७५	३४.७३	६४.१६५
३१		३९.७६	३४.७४	६४.१८४
३२		३९.८२	३४.७६	६४.१८६
३४		३९ ८३	३४.७७	६४.१८७
३५		—	३४.७८	६४.१८९
३६		—	—	६४.२१४
३९		४०.१६	३४.१५८	६४.४३४
४०		३९.९१	३४.८३	६४.१९५
४१		३९.१०८	३४.९९	६४.२२५
४२		३९.११४	३४.१०६	३४.२४८
४		३९.११५	३४.१०७	६४.२५१-५९
[ ]		३९.११८	—	६४.२७२

फ.	म.	ना.	द.	स.
[ ]		३९.११९	—	६४.२७३-७६
[ ]		३९.१२०	३४.११०	६४.२८२
[अ. १४. दो० ९ के अनन्तर]				
१		४२.५७	३६.५३	६६.२२५
२		४२.५८	३६.५४	६६.२२६
[अ. १४. कवि० १० के अनन्तर]				
२		४३.११३	३६.१०६	६६.३७१
[अ. १५. कवि० ११ के अनन्तर]				
४३		४३.२८	३६.२११	६६.६९८
[ ]		४३.२९	३६.२२२	६६.६९९
[अ. १७. कवि० २ के अनन्तर]				
१		४३.१५९	३६.३४६	६६.१२०२
[अ. १८. दो० ९ के अनन्तर]				
१		—	—	६६.१४८५-९७
[अ. १९. दो० ३१ के अनन्तर]				
१		३६.१४०	३७.२२०[1]	६७.४२३
[अ. १९. कवि० ५ के अनन्तर]				
१		४६.१४८	३७.२४६[1]	६७.४४०

फ० के उपर्युक्त छन्दों में से जो स० में नहीं हैं, उनका पाठ निम्नलिखित है :—

अ० १. साट० १ के पूर्व : दोहा—मछ कछ सुनि पंगहरि चद्को पति पीवन।
सगुन विचारीय चंद चित धरी पिम1 महिमन्न ॥८॥

" : दोहा—सीय जोगन संभोग सजि मंडल भाउ भपुड।
नमौ वमौ उमह हरि भाभरनु जह मंडन जटजुह ॥

अ० २. भुजं० १ के अनन्तर : कवित—सहस अठवासी रिपि होम कीयो आबूतल।
तह दानउ उछलीय संक नहौ मानै रवितल।
आहघाम तिन कीयौ रिपि जोवंता सारैं।
अनलकुंड झलहलीय पुरप उपनो स पीयारौ।
कर पगा गहबिनह अंतरहि जैमाला दीन्ही सुरह।
पमारु उपंन्न ता दिवसु कुल पैंतीसौ उपरह ॥१॥

" : कवित—होम घोम अर्बुद सयल पलही गहणगह।
अनल कुंड सलहल्यौ झल्कि झालियलि सुरिंदह।
दिशा दिगंत मारपीय वै सुन्दर अप्यौ।
पशा अप्पाणी जाह आइ सिंहासन थप्यौ।

[1] ये संख्याएँ टॉड संग्रह की प्रति ह० के बानबेध खंड की हैं, यह खंड द० में नहीं है।

कामंदल इभ रिप रजीय अस्म धुरिधर विमलमैंह ।
सिर काटि भसल पीसल तणौ धौम राइ म... ॥२॥

अ० २, दो० १९ के अनन्तर : अडिल—राजा प्रथीयराज चौहुवानं ।
धूइयौ काइथ भीमं दीवानं ।
अरु कैवास कान्ह आलोचं ।
दिल्ली राज लैनं करो सोचं ॥२०॥

अ० ३, कवि० १ के पूर्व : दोहा— चाले तब दिल्लीय दिसा लीयौ साहि फुरमान ।
वेष स सोफी यति सज्यौ चितइ चित्त इमांनु ॥६॥

अ० १३, कवि० १६ के अनन्तर : कवित—जे हिंदू पालोल मोल बोलै सिरहिता ।
किन अंबरूड कीयौ समुद्द किन सैंसुपरित्ता ।
किनी सिमी जंजाह भारकहैं भुज डिल्लै ।
किन खिपारा ससाह हाह मुरली सुर ढिल्लै ।
किन भसभ पान पतीय पहर किनु सुरतान सुसद्द भड ।
नामी नवाह पुंडीर कुल सेर न सकह पढ्ढीयौ ॥१७॥

उपर्युक्त के अतिरिक्त निम्नलिखित वार्त्ताएँ भी इसी प्रकार की हैं—

अ० ७, अनु० १ के अनन्तर : वात लागत कैवास भूइ आइ परयौ ।
,, : वात । राजा इस प्रकार करि कैवास मार्‍यो सु तोहि पूछैगो सुपने आइ भवानी कह्यौ ।

अ० १४, दो० ९ के अनन्तर : वचनिका । इते बीच इच्छनि पामारि का दासी आइ ठाढी रही ऐसे कह्यौ जपु राजा कै डोल बराबर है । तब वै कवि सौं गुद सौं-मतौं हारि करिन लागी ॥

अ० १४, दो० १५ ,, : तब दासी हाथ परु कागुद लै राजा कै सामुही ठाढी रही ।

उ. स्वीकृत धा० मो०, अ० तथा फ० के अतिरिक्त म० की पाठ-सामग्री

छंद[1]	ना.	द.	स.
अ. १. नारा० ६ के अनंतर (गाथा लक्षण)	—	—	—
,,	—	—	—
अ. १. दो० ४ के अनंतर (घोटक लक्षण)	—	—	—
अ. १. दो० ५ के अनंतर (मोतीदाम लक्षण)	—	—	—
अ. १. भुज० १४ के अनंतर	३.७३	२.४९	२.५०७
,,	३.८२	२.६०	२.५१८-१९
,, त्रिभं०/१ (त्रिभंगी लक्षण)	—	—	—
,, त्रिभं०/२	३.८३	२.६१	२.५२०-३३
अ. २. भुजं १ के अनंतर	—	१.२७/२	१.९४
,,	१.३१	१.४८	१.१३६-१४३/१ १.१४६/२ १.१४७/१
,,	१.३२	१.४९	१.१४८
,,	१.३३	१.५०	१.१४९-५२
,,	१.५४	१.५१	१.१५४
,,	१.५४ अ	१.५२	१.१५५-६७
,,	१.३५	१.५३	१.१६८
,,	१.३६	१.५४	१.१६९
,,	१.३७	१.५५	१.१७०
,,	१.३८	१.५६	१.१७१
,,	१.३९	१.५७	१.१७२
,,	१.४०	१.५८	१.१७३-७६

[1] ग्रंथ के प्रारम्भ से खंड २ के प्रथम कुछ छंदों तक म० में छंदों की क्रम-संख्या नहीं दी गई है, इसलिए ऐसे छंदों का स्थान अ० फ० के पाठ-क्रम में कहाँ आता है यह बताया गया है। शेष छन्दों को म० की क्रम-संख्या दी गई है।

छंद[1]	ना.	द.	म.
२. भुजं० १ के अनंतर	१.४१	१.५९	१.१७७
,,	१.४२	१.६०	१.१७८
,,	१.४३	१.६१	१.१८९
,,	१.४८	१.६६	१.१९२
,,	१.५१	१.६९	१.१९८
,,	१.५३	१.७२	१.२०१
,,	१.५५	१.७४	१.२०३-१२
,,	१.५९	१.७६	१.२१७
,,	१.६०	१.७७	१.२१८
,,	१.६२	१.७९	१.२२१
,,	१.६४/१	१.८१/१	१.२२६-३४
,,	१.६८	१.८४	१.२४३
,,	१.६९	१.८८	१.२४७
,,	१.७०	१.८९/२	१.२४८
,,	१.७३	१.८८	१.२४७
,,	१.७४	१.८९/२	१.२४८/२-४९
,,	१.७४ अ	१.९०	१.२५०
,,	१.८०/१	१.९८/१	१.२५७-६८
म २. साट० २ के अनंतर दो० १	—	१.१३५	१.५५०
म २. पद्ध० ७ ,, दो० १	—	—	—
,, ,, २	—	—	—
,, ,, ३	—	—	—
म. २. दो० ६ ,, दो० ५	—	—	—
म. २. दो० १० के अनंतर दो० ५	—	—	—
म. २. दो० १० ,, कुंड०	—	—	—
,, ,, दो०	—	—	—
,, ,, कवि०	—	—	—
म. ३. दो० १६ के अनंतर दो० १२	११.१४	२४.१	४५.१
,, ,, दो० १३	११.१५	२४.२	४५.५०
म. ४. २	—	—	४९.१८-२१
४. ५	—	२९.७/२	४९.२९-३१
४. ६	—	—	४९.३२
४. ७	—	—	४९.३३
४. ७ अ	—	—	४९.३४

[1] ग्रंथ के प्रारम्भ से खंड १ के प्रथम कुछ छंदों तक म० में छंदों की क्रम-संख्या नहीं दी गई है, इसलिए ऐसे छंदों का स्थान ना० प्र० के पाठ-क्रम में कहाँ आता है यह बताया गया है। शेष छंदों की म० की क्रम-संख्या दी गई है।

म.	ना.	द.	स.
४.८	—	—	४९.३५
४.९	—	—	४९.३६
४.१०	—	—	४९.३७
४.११	—	—	४९.३८
४.१२	—	—	४९.३९
४.१३	—	—	४९.४०
४.१४	—	—	४९.४१
४.१५	—	—	४९.४२
४.१६	—	—	४९.४३
५.२	—	—	५०.२
५.३	—	—	५०.३
५.४	—	—	५०.४
५.५	—	—	५०.५
५.६	—	—	५०.६
५.७	—	—	५०.७
५.८	—	—	५०.८
५.९	—	—	५०.९
५.१०	—	—	५०.१०
५.११	—	—	५०.११
५.१२	—	—	५०.१२.
५.१३/१	—	—	५०.१३
५.१३/२	—	—	५०.१४
५.१९	—	—	५०.२३
५.२०	—	—	५०.२४
५.२१	—	—	५०.२५
५.२२	—	—	५०.२६
५.२५	—	—	५०.२९
५.२८	—	—	५०.३१
५.२९	—	—	५०.३२
५.३१	—	—	५०.३४
५.३६	—	—	५०.३९
५.३७	—	—	५०.४०
५.४२	—	—	५०.४६
५.४४	—	—	५०.४८
५.४६	—	—	५०.५०
५.४७	२८.७०	२९.२९	५०.५१
५.४९	—	—	५०.५३
५.५०	—	—	५०.५४

म.	ना.	द.	स.
९.५१	—	—	५०.५५
९.५३	—	—	५०.५७-६४
९.५४	—	—	५०.६५
म. खंड ६	—	—	स. खंड ५१[२]
म. खंड ७	—	—	स. खंड ५२
म. ७. घाट० १ के अनंतर[१]	२९.४४ अ	—	—
म. ७. दो० १२ ,, [१]	—	—	—
म. ७. कवि० ६ के पूर्व[१]	२९.६८	३१.७१	५७.२६२
म ९.२	३९.३	३४.२	६१.२०
९.६	३९.७	३४.६	६१.२९
९.९	४१.१	३४.१३	६१.४०
९.११	३९.१४	३४.१४	६१.४१
९.१४	४१.४	३४.१७२	६१.५३
९.१७	—	३४.१७५	६१.६४
९.१८	४१.९	३४.१७६	६१.७३
९.२१	४१.११	३४.१७९	६१.१०
९.२५	—	—	६१.९९
१०.१	—	—	६१.७३
१०.२	—	—	६१.७४
१०.३	—	—	६१.७५
१०.४	—	—	६१.७६
१०.५	—	—	६१.७७
१०.७	३१.५	—	६१.७९
१०.८	—	—	६१.८०
१०.९	—	—	६१.८१
१०.१०	—	—	६१.८२
१०.११	—	—	६१.८३
१०.१२	—	—	६१.८४
१०.१५[३]	—	—	६१.८५
१०.१६	—	—	६१.८६
१०.१७	—	—	६१.८७
१०.१८	—	—	६१.८८
१०.१९	—	—	६१.८९

[१] म० में इन छन्दों की क्रम-संख्या नहीं दी गई है, इसलिए इन छन्दों का स्थान म० क० के पाठ-क्रम में कहाँ आता है यह बताया गया है। शेष छन्दों की म. की क्रम-संख्या दी गई है।

[२] स० का केवल ५१.५७ म० में नहीं है।

[३] म० में यहाँ से क्रम-संख्या में दो की वृद्धि हो गई है।

म.	ना.	द.	स.
१०.२०	—	—	६१.९०
१०.२१	—	—	६१.९१
१०.२२	—	—	६१.९२
१०.२३	—	—	६१.९३
१०.२४	—	—	६१.९४
१०.२५	—	—	६१.९५
१०.२६	—	—	६१.९६
१०.२७	—	—	६१.९७
१०.२८	—	—	६१.९८
१०.२९	—	—	६१.९९
१०.३०	—	—	६१.१००
१०.३१	—	—	६१ १०१
१०.३२	३१.५ आ	—	६१.१०३
१०.३३	३१.३ आ	३३.४	६१.१०४
१०.३५	—	—	६१.१०६
१०.३६	—	—	६१.१०७
१०.३७	—	—	६१.१०८
१०.३९	—	—	६१.१३३
१०.४०	—	—	६१.१३४
१०.४१	—	—	६१.१३५
१०.४२	—	—	६१.१३६
१०.४३	—	—	६१.१३७
१०.४४	—	—	६१.१३८
१०.४५	—	—	६१.१३९
१०.४६	—	—	६१.१४०
१०.४७	—	—	६१.१४१
१०.४९	—	—	६१.१४४
१०.५२	—	—	६१.१४६-५४
१०.५४	११.१४	—	६१.१५७
१०.५५	—	—	६१.१५८-७५
१०.६४	११ अ. १८	११.१९	६१.१८४
१०.६५	—	—	६१.१८५
१०.६६	११.१०	—	६१.१८६
१०.६७	११.१२	—	६१.१८७
१०.६८	—	—	६१.१८८
१०.६९	—	—	६१ १८९
१०.७०	—	—	६१.१९०
१०.७१	—	—	६१.१९१/१ ६१.१९२/२

म.	ना.	द.	स.
१०.७२	—	—	६१.१९३
१०.७३	—	—	६१.१९४-९७
१०.७४	३१ अ. १५	—	६१.१९८
१०.७५	३१ अ. १६	—	६१.१९९
१०.७६	—	—	६१.२००
१०.७७	—	—	६१.२०१
१०.७८	—	—	६१.२०४
१०.७९	—	—	६१.२०५
१०.८०	—	—	६१.२०६
१०.८१	३१ अ. १९	—	६१.२०७-१७
१०.८२	—	—	६१.२१८
१०.८३	—	—	६१.२१९
१०.८४	—	—	६१.२२०
१०.८५	—	—	६१.२२१-२८
१०.८६	—	—	६१.२२९
१०.८७	३१ अ. १	—	६१.२३०
१०.८८	३१ अ २	—	६१.२३१-४२
१०.८९	,,	—	६१.२४३
१०.८९ अ	—	—	६१.२४४-५६
१०.९०	—	—	६१.२५७
१०.९१	—	—	६१.२५८
१०.९२	—	—	६१.२५९
१०.९३	३१ अ. ३	—	६१.२६०
१०.९४	३१ अ. ४	—	६१.२६१
१०.९५	३१ अ. ५	—	६१.२६२
१०.९६	३१ अ. ६	—	६१.२६३
१०.९७	३१ अ. ७	—	६१.२६४
१०.९८	३१ अ. ८	—	६१.२६५
१०.९९	३१ अ. ९	—	६१.२६६
१०.१००	३१ अ. १०	—	६१.२६७
१०.१०१	३१ अ. ११	—	६१.२६८
१०.१०२	३१ अ १२	—	६१.२६९
१०.१०३	३१ अ. १३	—	६१.२७०
१०.१०४	३१ अ. १४	—	६१.२७१
			६१.२७३
१०.१०६	—	—	६१.२७४
१०.१०७	—	—	६१.२७५
१०.१०८	३१ अ. २१	३३.२२	६१.२७६
१०.१०९	—	—	

म.	ना.	द.	स.
१०.११०	—	—	६१.२७७
१०.१११	—	—	६१.२७८
१०.११२	—	—	६१.२७९-८४
१०.११३	—	—	६१.२८५
१०.११४	—	—	६१.२८६
१०.११५	—	—	६१.२८७
१०.११६	—	—	६१.२८८
१०.१२१	—	—	६१.३००
१०.१२४	—	—	६१.३०३
१०.१२५	—	—	६१.३०४
१०.१२७	—	—	६१.३१३
१०.१३०	—	—	६१.३१९
१०. [१३१]	—	—	६१.३२२
१०.१३१ अ. (वचनिका)	—	—	६१.३२२ अ
१०.१३३	३१.४०	३३.३७	६१.३२३
१०.१३७	३१ ३९	३३ ३६	६१.३३०
१०.१३७ अ (वचनिका)	—	—	६१.३३० अ
१०.१३८	—	—	६१ ३३१-३४
१० १४०	—	—	६१ ३३६
१०.१४२	३१.४५	३३.४१	६१ ३४८
१०.१२७[1]	३१.४८	३३ ४४	६१.३५१
१० १३०[1]	३१.५१	३३ ४७	६१.३५४
१०.१३२[1]	३१.५३	३३ ४९	६१.३५६
१०.१३४[1]	—	—	६१.३७०
१०.१३५[1]	—	—	६१.३७१
१०.१३६[1]	—	—	६१.३७२
१०.१३७[1]	—	—	६१ ३७३
१०.१३८[1]	३१.५६	३३.५१	६१.३७४
१०.१३९	—	—	६१.३७५
१०.१४०	—	—	६१.३७६
१०.१४१	—	—	६१.३७७
१०.१४२	—	—	६१.३७८
१०.१४३	—	—	६१.३७९
१०.१४४	—	—	६१.३८०
१०.१४५	—	—	६१.३८१
१०.१४६	—	—	६१.३८२

[1] ये संख्याएँ दुहरा गई हैं। ये पहले आ चुकी हैं।

म.	ना.	द.	ष.
१०.१४७	—	—	६१.३८३
१०.१४८	—	—	६१.३८४
१०.१४९	—	—	६१.३८५
१०.१५०	—	—	६१.३८७
१०.१५१	—	—	६१.३८६
१०.१५३	३१.५९	३३.५४	६१.३९५
१०.१५४	३१.६०	३३.५५	६१.३९६
१०.१५५	३१.६१	३३ ५६	६१.३९७
१०.१५६	३१.६२	३३.५७	६१.३९८
१०.१५७	३१.६३	३३.५८	६१.३९९
१०.१५९	—	—	६१.४०१
१०.१६०	—	—	६१.४०२
१०.१६१	—	—	६१.४०३-०७
१०.१६२	—	—	६१.४०८
१०.१६३	—	—	६१.४०९
१०.१६४	—	—	६१.४१०
१०.१६५	—	—	६१ ४११-१४
१०.१६६	—	—	६१.४२२
१०.१६७	—	—	६१.४२३
१०.१६८	—	—	६१.४२४
१०.१७५	—	—	६१.४४७
१०.१७७	—	—	६१.४४९
१०.१७८	—	—	६१.४५०
१०.१७९	—	—	६१.४५१
१० १८०	—	—	६१.४५२
१०.१८१	—	—	६१.४५३
१०.१८२	—	—	६१.४५४
१०.१८३	—	—	६१ ४५५
१०.१८४	—	—	६१ ४५६
१०.१८५	—	—	६१.४५७
१०.१९०	—	—	६१.४६२
१०.१९१	—	—	६१.४६३
१०.१९३	—	—	६१.४६५
१०.१९४	—	—	६१.४६६
१०.१९५	—	—	६१.४६७
१०.१९७	—	—	६१.४६९
१०.२००	—	—	६१.४७२
१०.२०१	—	—	६१.४७३

म.	ना.	द.	स.
१०.२०२	—	—	६१.४७४
१०.२०३	—	—	६१.४७५
१०.२०४	—	—	६१.४७६
१०.२०७	—	—	६१.४७९
१०.२०८	—	—	६१.४८०
१०.२११	—	—	६१.४८३
१०.२१२	—	—	६१.४८४
१०.२१३	—	—	६१.४८५
१०.२१४	—	—	६१.४८६
१०.२१५	—	—	६१.४८७
१०.२१७	—	—	६१.४८९
१०.२१९	—	—	६१.४९१
१०.२३०	—	—	६१.५०६
१०.२३१	—	—	६१.५०७
१०.२३२	—	—	६१.५०८
१०.२३३	—	—	६१.५०९
१०.२३८	३२.२८	३३.८६	६१.५१४
१०.२३९	—	३३.८७	६१.५१५
१०.२४०	३२.२९	३३.८७ अ	६१.५१६-२३
१०.२४२	—	—	६१.५२५
१०.२४३	—	—	६१.५२६
१०.२४५	—	—	६१.५२८
१०.२४७	—	—	६१.५२९-४८
१०.२४९	—	—	६१.५५१
१०.२५०	—	—	६१.५५२
१६.२५१	—	—	६१.५५३
१०.२५२	—	—	६१.५५४
१०.२५३	—	—	६१.५५५
१०.२५४	—	—	६१.५५६
१०.२५५	—	—	६१.५५७
१०.२५६	—	—	६१.५५८
१०.२५७	—	—	६१.५५९
१०.२५८	—	—	६१.५६०
१०.२५९	—	—	६१.५६१
१०.२६० (पचनिका)	—	—	६१.५६१ अ
१०.२६१	—	—	६१.५६२
१०.२६२	—	—	६१.५६३-६६
१०.२६४	—	—	६१.५६८

म.	ना.	द.	स.
१०.२६५	—	—	६१.५६९
१०.२६९	३२.३७	३३.९७	६.१.५८०
१०.२७०	३२.३८	—	६१.५८१
१०.२७१	३२.४०	३३.९८	६१.५८२
१०.२७२	—	—	६१.५८३
१०.२७३	३२.३९	—	६१.५८४
१०.२७४	३२.४१	३३.९९	६१.५८५
१०.२७५	—	—	६१.५८६
१०.२७६	—	—	६१.५८७
१०.२७८	३२.४५	३३.१०१	६१.५८९
१०.२८२	—	—	६१.५९७
१०.२८३	३२.४९	३३.१०५	६१.५९८
१०.२८४	३२.५०	३३.१०६	६१.५९९
१०.२८५	३२.५१	३३.१०७	६१.६००
१०.२८६	३२.५२	३३.१०८	६१.६०१
१०.२८७	३२.५३	३३.१०९	६१.६०२
१०.२८८	३२.५४	३३.११०	६१.६०३–०७
१०.२८९	३२.५५	३३.१११	६१.६०८
१०.२९०	३२.५६	३३.११२	६१.६०९-१८
१०.२९१	३३.५७	३३.११३	६१.६१९
१०.२९२	३२.५८	३३.११४	६१.६२०
१०.२९३	३२.५९	३३.११५	६१.६२१
१०.२९४	३२.६०	३३.११६	६१.६२२
१०.२९५	३२.६१	३३.११७	६१.६२३
१०.२९६	३२.६२	३३.११८	६१.६२४
१०.२९७	३२.६३	३३.११९	६१.६२५
१०.२९८	३२.६४	३३.१२०	६१.६२६
१०.२९९	३२.७४	३३.१२१	६१.६२७
१०.३००	३२.६५	—	६१.६२८
१०.३०१	३२.६६	३३.१२२	६१.६२९–३०
१०.३०२	३२.६७	३३.१२३	६१.६३१
१०.३०३	३२.६८	३३.१२४	६१.६३२
१०.३०४	३२.६९	३३.१२५	६१.६३३
१०.३०५	३२.७०	३३.१२६	६१.६३४–४२
१०.३०६	—	—	६१.६४३
१०.३०७	३२.७१	३३.१२७	६१.६४४
१०.३०८	३२.७२	३३.१२८	६१.६४५
१०.३०९	—	—	६१.६४६

म.	ना.	द.	ष.
१०.३१०	३२.७३	—	—
१०.३११	३२.७५	३३.१२१	६१.६४७
१०.३१२	—	—	६१.६४९
१०.३१५	—	—	६१.६५१
१०.३२०	—	—	६१.६५६
१०.३२२	—	—	६१.६५८
१०.३२३	—	—	६१.६५९
१०.३२४	—	—	६१.६६०
१०.३२५	—	—	६१.६६१
१०.३२६	—	—	६१.६६२
१०.३२७	—	—	६१.६६३
१०.३२८	—	—	६१.६६४
१०.३२९	—	—	६१.६६५-८५
१०.३३०	—	—	६१.६८६
१०.३३२	—	—	६१.६८८
१०.३३४	३२.८५	३३.१४१	६१.६९०
१०.३३७	—	—	६१.७१२
१०.३३९	—	—	६१.७१५
१०.३४०	—	—	६१.७१६
१०.३४२	—	—	६१.७१८
१०.३४३	—	—	६१.७१९
१०.३४४	—	—	६१.७२०
१०.३४५	३२.८९	३३.१४५	६१.७२१
१०.३५०	—	—	६१.७२६
१०.३५४	३२.९५	३३.१५१	६१.७३०
१०.३५५	—	—	६१.७३१
१०.३५६	३२.९७	३३.१५२	६१.७३२
१०.३५७	३२.९८	३३.१५३	६१.७३३
१०.३५८	३२.९९	३३.१५४	६१.७३४
१०.३५९	३२.१००	३३.१५५	६१.७३५
१०.३६०	३२.१०१	३३.१५६	६१.७३६-४१
१०.३६१	३२.१०२	३३.१५७	६१.७४२
१०.३६२	३२.१०३	३३.१५८	६१.७४३
१०.३६३	३२.१०४	३३.१५९	६१.७४४
१०.३६४	३२.१०५	३३.१६०	६१.७४५
१०.३६५	—	—	६१.७४६
१०.३६६	—	—	६१.७४७-५०
१०.३६७	—	—	६१.७५२

म.	ना.	द.	स.
१०.३६८	—	—	६१.७५३
१०.३६९	—	—	६१.७५४
१०.३७०	३२.१०६	३३.१६१	६१.७५५-६५
१०.३७१	३२.१०७	३३.१६२	६१.७६६
१०.३७२	३२.१०८	३३.१६३	६१.७६७-७९
१०.३७३	—	—	६१.७८१
१०.३७४	३२.१०९	३३.१६४	६१.७८२
१०.३७५	३२.११०	३३.१६५/१	६१.७८३
१०.३७६	३२.१११	३३.१६५/२	६१.७८४
१०.३७७	३२.११२	३३.१६५/३	६१.७८५
१०.३७८	३२.११३	३३.१६५/४	६१.७८६
१०.३७९	३२.११४	३३.१६६	६१.७८७
१०.३८०	३२.११५	३३.१६७	६१.७८८
१०.३८१	३२.११६	३३.१६८	६१.७८९
१०.३८३	—	—	६१.७९१
१०.३८४	३१.३२	—	६१.७९२
१०.३८५	३१.३३	—	६१.७९३-८०७
१०.३८६	—	—	६१.८०८
१०.३८७	—	—	६१.८०९
१०.३८८	—	—	६१.८१४
१०.३९४	—	—	६१.८२२
१०.३९६ (वार्ता)	—	—	६१.८२३ अ
१०.३९९	—	—	६१.८२६
१०.४००	३२.१२८	३३.१७८	६१.८२७
१०.४०१	—	—	६१.८२९
१०.४०३	—	—	६१.८३१
१०.४०५	—	—	६१.८३३
१०.४०६	—	—	६१.८३४
१०.४०७	—	—	६१.८३५
१०.४०७ अ	—	—	६१.८३६-४३
१०.४१०	—	—	६१.८४६
१०.४११	—	—	६१.८४७
१०.४१४	—	—	६१.८६०
१०.४१७	—	—	६१.८६३
१०.४१८	—	—	६१.८६४
१०.४२०	—	—	६१.८६६
१०.४२१	—	—	६१.८६७
१०.४२२	—	—	६१.९८-३६

म.	ना.	द.	स.
१०.४६५ (?)	३२.१६०	—	६१.९७७-७९
१०.४६७	३२.१६१	—	६१.९८०
११.३	३३.४	—	६१.९८३-१००४
११.४	३३.५	—	६१.१००५
११.५	३३.३	—	६१.१००६
११.६	३३.७	३३.२०४	६१.१००८
११.८	—	—	६१.१०१०
११.९	—	—	६१.१०११
११.१०	—	—	६१.१०१२
११.११	—	—	६१.१०१३
११.१२	—	—	६१.१०१४
११.१३	—	—	६१.१०१५
११.१४	—	—	६१.१०१६
११.१५	—	—	६१.१०१७-१८
११.१६	—	—	६१.१०१९
११.१७	—	—	६१.१०२०
११.१८	—	—	६१.१०१८
११.१९	—	—	६१.१०२२
११.२०	—	—	६१.१०२३
११.२१	—	—	६१.१०२४
११.२२	—	—	६१.१०२५
११.२४	—	—	६१.१०२९
११.२५	—	—	६१.१०३०
११.२६	—	—	६१.१०३१
११.२७	—	—	६१.१०३२
११.२८	—	—	६१ १०३३
११.२९-३०	—	—	६१.१०३४-४१
११.३१	—	—	६१.१०४२-४५
११.३२	—	—	६१.१०४६
११.३३ अ	—	—	६१.१०४८
११.३४	—	—	६१.१०४९
११.३७	—	—	६१.१०५२
११.३८	—	—	६१.१०५३
११.३९	—	—	६१.१०५४
११.४०	—	—	६१.१०५५
११.४१	—	—	६१.१०५६
११.४२	—	—	६१.१०५७
११.४३	—	—	६१ १०५८

म.	ना.	द.	स.
११.९८	३३.३५	३३.२३२	६१.११५२
११.९० (?)	३३.३६	३३.२३३	६१.११५३-५७
११.९२ (?)	३३.४०	३३.२३८	६१.११६०-६४
११.९३ (?)	३३.४१	३३.२३९	६१.११६५
११.९४ (?)	—	—	६१.११६६
११.९५ (?)	३३.४२	३३.२४०	६१.११६७
११.९७ (?)	—	—	६१.११७०
११.९२ (?)	—	—	६१.११७२
११.९३ (?)	—	३३.२४४	६१.११७३
११.९७ (?)	३३.५५	३३.२४९	६१.११८६
११.९८ (?)	—	—	६१.११८७
११.९९	—	—	६१.११८८
११.१००-१०१	—	—	६१.११८९-९२
११.१०२	—	—	६१.११९२
११.१०३	—	—	६१.११९३
११.१०४	—	—	६१.११९४
११.१०५	—	—	६१.११९५
११.१०६	—	—	६१.११९६
११.१०७	—	—	६१.११९७
११.१०८	—	—	६१.११९८
११.१०९	—	—	६१.११९९
११.११०	—	—	६१.१२००
११.१११	—	—	६१.६२०१
११.११२	—	—	६१.१२०२ ०५
११.११४	—	—	६१.१२०७
११.११८	—	—	६१.१२११
११.११९-२२	—	—	६१.१२१२-१५
११.१२३	—	—	६१.१२१६
११.१२४	—	—	६१.१२१७
११.१२५	—	—	६१.१२१८
११.१२६	—	—	६१.१२१९
११.१२७-३५	—	—	६१.१२२०-२८
११.१३५ (?)	—	—	६१.१२२९
११. [ ]	—	—	६१.१२३०
११. [ ]	—	—	६१.१२३१
११.१३७	—	—	६१.१२३२
११.१३८	—	—	६१.१२३३
११.१३९	—	—	६१.१२३४-३८
११.१४०	—	—	६१.१२३९

म.	ना.	द.	स.
११.२४१	—	—	६१.१२४०
११.२४२	—	—	६१.१२४१
११.२४३	—	—	६१.१२४२
११.२४८	—	—	६१.१२४७
११.२५१	३३.६७	३३.२६०	६१.१२५०
११.२५७	—	—	६१.१२५७
११.२५८	—	—	६१.१२५८
११.२५९	—	—	६१.१२५९
११.२६५	—	—	६१.१२६५
११.२६६	—	—	६१.१२६६
११.२७४	—	—	६१.१२७४
११.२७६	—	—	६१.१२७६
११.२७७	—	—	६१.१२७७
११.२७८	३३.९१	३३.२७८	६१.१२७८
११.२८०	३३.९३	३३.२८०	६१.१२८०
११.२८१	३३.९६	—	६१.१२८१
११.२८२	३३.९७	—	६१.१२८२
११.२८६	—	—	६१.१२८६
११.२८७	—	—	६१.१२८७
११.२८८	—	—	६१.१२८८
११.२८९	—	—	६१.१२८९
११.२९०	—	—	६१.१२९०
११.२९१	—	—	६१.१२९१
११.२९२	—	—	६१.१२९२
११.२९३	—	—	६१.१२९३
११.२९४	—	—	६१.१२९४
११.२९७	—	—	६१.१२९७
११.२९८	—	—	६१.१२९८
११.२९९	—	—	६१.१२९९
११.२००	—	—	६१.१३००
११.२०१	—	—	६१.१३०१
११.२०२	—	—	६१.१३०२
११.२०३	—	—	६१.१३०४
११.२०४	—	—	६१.१३०५
११.२०५	—	—	६१.१३०६
११.२०६	—	—	६१.१३०७
११.२०७	—	—	६१.१३०८
११.२०८	—	—	६१.१३०९

म.	ना.	द.	स.
११.२०९	—	—	६१.२३१०
११.२१०	—	—	६१.२३११
११.२११	—	—	६१.२३१२
११.२१२	—	—	६१.२३१३
११.२१३	—	—	६१.२३१४
११.२१४	—	—	६१.२३१५
११.२१५	—	—	६१.२३१६-१७
११.२१६	—	—	६१.२३१८
११.२१७	—	—	६१.२३१९
११.२१८	—	—	६१.२३२०
११.२१७ (?)	३३.१०९	३३.२८७	६१.२३२१
११.२२१	—	—	६१.२३२३
११.२२२	—	—	६१.२३२४
११.२२३	—	—	६१.२३२५
११.२२४	—	—	६१.२३२६
११.२२५	—	—	६१.२३२७
१२.४	—	—	६१.२३३१
१२.५	—	—	६१.२३३२
१२.६	—	—	६१.२३३३
१२.७	—	—	६१.२३३४
१२.८	—	—	६१.२३३५
१२.१५	—	—	६१.२३४२
१२.२१	—	—	६१.२३५७
१२.२२	—	—	६१.२३५८
१२.२३	—	—	६१.२३५९
१२.२४	—	—	६१.२३६०
१२.२५	३४.१२	१३.३०२	६१.२३६१
१२.३३	—	—	६१.२३८७
१२.३४	—	—	६१.२३८८-९२
१२.३५	—	—	६१.२३९३
१२.३६	—	—	६१.२३९४-९५
१२.३७	—	—	६१.२३९७
१२. [३८]	—	—	६१.२३९८
१२.४६	—	—	६१.२४०६
१२.४९	—	—	६१.२४०९
१२.५७-६२	—	—	६१.२४२४-२९
१२.६३	—	—	६१.२४३०-३५
१२.६४-६७	—	—	६१.२४३६-३९

म.	ना.	द.	स.
१२.६८	—	—	६१.१४४०-४४
१२.६९-७०	—	—	६१.१४४५-४६
१२.७१	—	—	६१.१४४७-४९
१२.७२	—	—	६१.१४५०
१२.७३	—	—	६१.१४५१
१२.७४	—	—	६१.१४५२
१२.७५	—	—	६१.१४५३
१२.७६	—	—	६१.१४५४
१२.७७	—	—	६१.१४५५
१२.७८	३४.३५	३३.३२६	६१.१४५६ ६१
१२.७९	—	—	६१.१४६२
१२.८०	—	—	६१.१४६३
१२.८१	३४.३७	३३.३२६	६१.१४६४
१२.८२	३४.३८	३३.३२७	६१.१४६५-८२
१२.८३	३४.३९	३३.३२८	६१.१४७३
१२.८४	—	—	६१.१४७४
१२.८५	३४.४०	३३.३२९	६१.१४७५
१२.८६	३४.४१	३३.३३०	६१.१४७६
१२.८७	३४.४२	३३.३३१	६१.१४७७-७२
१२.८८	—	—	६१.१४८३
१२.८९	—	—	६१.१४८४
१२.९०	३४.४३	३३.३३२	६१.१४८५
१२.९१	३४.४४	३३.३३३	६१.१४८६
१२.९२	३४.४५	३३.३३४	६१.१४८७
१२.९३	—	—	६१.१४८८
१२.९४	३४.४६	३३.३३५	६१.१४८९
१२.९५	३४.४७	३३.३३६	६१.१४९०
१२.९६	—	—	६१.१४९१
१२.९७	—	—	६१.१४९२
१२.९८	—	—	६१.१४९३
१२.९९	—	—	६१.१४९४
१२.१००	—	—	६१.१४९५-१५००
१२.१०१	—		,, १५०१
१२.१०२	—		,, १५०२
१२.१०२ अ	—		,, १५०३
१२.			
१२.			
१२.			

म.	ना.	द.	ध.
१२.१०७	—	—	६१.१५२२
१२.१०८	—	—	६१.१५२३
१२.१०९	३४.४८	३३.३३७	६१.१५२४
१२.११०	—	—	६१.१५२५-२९
१२.११६	३४.९२	३३.३७३	६१.१५३५
१२.११८	—	—	६१.१५३७
१२.११९	—	—	६१.१५३८-४२
१२.१२१	३४.५६	३३.३४५	६१.१५४४
१२.१२२	३४.५७	३३.३४६	६१.१५४५
१२.१[illegible]४	—	—	६१.१५४७
१२.१२८	—	—	६१.१५५१
१२.१३०/१	—	—	६१.१५५३
१२.१३०/२	—	—	६१.१५५४
१२.१३१	—	—	६१.१५५१
१२.१३२	—	—	६१.१५५६
१२.१३५	—	—	६१.१५५९
१२.१३६	—	—	६१.१५६०
१२.१३८	—	—	६१.१५६२
१२.१३९	—	—	६१.१५६३
१२.१४१	—	—	६१.१५६५
१२.१४२	—	—	६१.१५६६
१२.१४४	—	—	६१.१५६८
१२.१४९	—	—	६१.१५७३
१२.१५२	—	—	६१.१५७६
१२.१५३	—	—	६१.१५७७
१२.१५४	—	—	६१.१५७८
१२.१५५	—	—	६१.१५७९
१२.१५६	—	—	६१.१५८०
१२.१५७	—	—	६१.१५८१
१२.१५८	—	—	६१.१५८२
१२.१५९	—	—	६१.१५८३
१२.१६०	—	—	६१.१५८४
१२ १६१	—	—	६१.१५८५
१२.१६२	—	—	६१.१५८६
१२.१६३	—	—	६१.१५८७
१२.१६५	—	—	६१.१५८९
१२.१६६	—	—	६१.१५९०
१२.१६७	—	—	६१.१५९१

म.	ना.	द.	स.
१२.६८	—	—	६१.१४४०-४४
१२.६९-७०	—	—	६१.१४४५-४६
१२.७१	—	—	६१.१४४७-४९
१२.७२	—	—	६१.१४५०
१२.७३	—	—	६१.१४५१
१२.७४	—	—	६१.१४५२
१२.७५	—	—	६१.१४५३
१२.७६	—	—	६१.१४५४
१२.७७	—	—	६१.१४५५
१२.७८	३४.३५	३३.३०६	६१.१४५६ ६१
१२.७९	—	—	६१.१४६२
१२.८०	—	—	६१.१४६३
१२.८१	३४.३७	३३.३२६	६१.१४६४
१२.८२	३४.३८	३३.३२७	६१.१४६५-८२
१२.८३	३४.३९	३३.३२८	६१.१४७३
१२.८४	—	—	६१.१४७४
१२.८५	३४.४०	३३.३२९	६१.१४७५
१२.८६	३४.४१	३३.३३०	६१.१४७६
१२.८७	३४.४२	३३.३३१	६१.१४७७-७२
१२.८८	—	—	६१.१४८३
१२.८९	—	—	६१.१४८४
१२.९०	३४.४३	३३.३३२	६१.१४८५
१२.९१	३४.४४	३३.३३३	६१.१४८६
१२.९२	३४.४५	३३.३३४	६१.१४८७
१२.९३	—	—	६१.१४८८
१२.९४	३४.४६	३३.३३५	६१.१४८९
१२.९५	३४.४७	३३.३३६	६१.१४९०
१२.९६	—	—	६१.१४९१
१२.९७	—	—	६१.१४९२
१२.९८	—	—	६१.१४९३
१२.९९	—	—	६१.१४९४
१२.१००	—	—	६१.१४९५-१५००
१२.१०१	—	—	६१.१५०१
१२.१०२	—	—	६१.१५०२
१२.१०२ अ	—	—	६१.१५०३
१२.१०३	—	—	६१.१५०४-०८
१२.१०४	—	—	६१.१५०९
१२.१०५	—	—	६१.१५१०

म.	ना.	द.	ध.
१२.१०७	—	—	६१.१५२२
१२.१०८	—	—	६१.१५२३
१२.१०९	३४.४८	३३.२२७	६१.१५२४
१२.११०	—	—	६१.१५२५-२९
१२.११६	३४.९२	३३.२७३	६१.१५३५
१२.११८	—	—	६१.१५३७
१२.११९	—	—	६१.१५३८-४२
१२.१२१	३४.५६	३३.२४५	६१.१५४४
१२.१२२	३४.५७	३३.३४६	६१.१५४५
१२.१२४	—	—	६१.१५४७
१२.१२८	—	—	६१.१५५१
१२.१३०,१	—	—	६१.१५५३
१२.१३०/२	—	—	६१.१५५४
१२.१३१	—	—	६१.१५५१
१२.१३२	—	—	६१.१५५६
१२.१३५	—	—	६१.१५५९
१२.१३६	—	—	६१.१५६०
१२.१३८	—	—	६१.१५६२
१२.१३९	—	—	६१.१५६३
१२.१४१	—	—	६१.१५६५
१२.१४२	—	—	६१.१५६६
१२.१४४	—	—	६१.१५६८
१२.१४९	—	—	६१.१५७३
१२.१५२	—	—	६१.१५७६
१२.१५३	—	—	६१.१५७७
१२.१५४	—	—	६१.१५७८
१२.१५५	—	—	६१.१५७९
१२.१५६	—	—	६१.१५८०
१२.१५७	—	—	६१.१५८१
१२.१५८	—	—	६१.१५८२
१२.१५९	—	—	६१.१५८३
१२.१६०	—	—	६१.१५८४
१२ १६१	—	—	६१.१५८५
१२.१६२	—	—	६१.१५८६
१२.१६३	—	—	६१.१५८७
२.१६५	—	—	६१.१५८९
२.१६६	—	—	६१.१५९०
२.१६७	—	—	६१.१५९१

म.	ना.	द.	स.
१२.१६८	—	—	६१.१५९२
१२.१६९	—	—	६१.१५९३
१२.१७०	३४.७८	३३.३६३	६१.१५९४
१२.१७१	—	—	६१.१५९५
१२.१७२	—	—	६१.१५९६
१२.१७३	—	—	६१.१५९७
१२.१७४	—	—	६१.१५९८
१२.१७४ अ	३४.७९	३३.३६४	६१.१५९९
१२.१७५	३४.८०	—	६१.१६००
१२.१७६	३४.८१	३३.३६५	६१.१६०१
१२.१७७	३४.८३	३३.३६६	६१.१६०२
१२.१७८	३४.८४	—	६१.१६०३
१२.१७९	३४.८५	—	६१.१६०४
१२.१८०	३४.८६	—	६१.१६०५
१२.१८१	३४.८२	३३.३६७	६१.१६०६
१२.१८२	३४.८७	३३.३६८	६१.१६०७-१९
१२.१८३	३४.८८	३३.३६९	६१.१६२०
१२.१८४	३४.८९	३३.३७०	६१.१६२१
१२.१८५	—	—	६१.१६२२-२४
१२.१८६	—	—	६१.१६२५-२७
१२.१९०	३४.९४	३३ ३७५	६१.१६३२
१२.१९१	—	—	६१.१६३३-३६
१२.१९२	—	—	६१.१६३७
१२.१९३	—	—	६१.१६३८
१२.१९४	३४.९६	३३.३७७	६१.१६३९
१२.१९६	—	—	६१.१६५०
१२.१९७	३४.९१	—	६१.१६५१-५७
१२.२००	—	—	६१.१६६०-६३
१२.२०१	३४.१०१	३३.३८२	६१.१६६५
१२.२०३	—	—	६१.१६६६
१२.२०४	—	—	१६.१६६७
१२.२०५	—	—	६१.१६६८
१२.२०६	३५.१	३३.३८३	६१.१६६९
१२.२०७	—	—	६१.१६७०
१२.२०८	—	—	६१.१६७१-७६
१२.२०९	३५.२	३३.३८४	६१.१६७७
१२.२१०	—	—	६१.१६७८
१२.२११/१	—	—	६१.१६७९

म.	ना.	द.	स.
१२.२११/२	—	—	६१.१६८०
१२.२१२	—	—	६१.१६८१
१२.२१३	—	—	६१.१६८२
१२.२१४	—	—	६१.१६८३-९३
१२.२१५	—	—	६१.१६९४
१२.२१७	—	—	६१.१७०५
१२.२१९	—	—	६१.१७०७
१२.२२१	—	—	६१.१७०९
१२.२२२	—	—	६१.१७१०-१६
१२.२२३	—	—	६१.१७१७
१२.२२६	—	—	६१.१७२०
१२.२२७	—	—	६१.१७२१
१२.२२८	—	—	६१.१७२२
१२.२२९	—	—	६१.१७२३-३२
१२.२३१	—	—	६१.१७३४
१२.२३३	—	—	६१.१७४४
१२.२३४	—	—	६१.१७४५
१२.२३५	—	—	६१.१७४६
१२.२३६	—	—	६१.१७४७
१२.२३७/१	—		६१.१७४८-५२
			६१.१७५५
१२.२४२/२	—	—	६१.१७७१/२
१२.२४४/१	—	—	६१.१७७३/१
१२.२४५	—	—	६१.१७७४
१२.२५३	—	—	६१.१७९१
१२.२५४	—	—	६१.१७९२
१२.२५५	—	—	६१.१७९३
१२.२५६	—	—	६१.१७९४
१२.२५७	—	—	६१.१७९५
१२.२५८	—	—	६१.१७९६
१२.२५९	—	—	६१.१७९७-९८
१२.२६०	—	—	६१.१८००
१२.२६१	—	—	६१.१८०१
१२.२६२	—	—	६१.१८०२
१२.२६३	—	—	६१.१८०३-१०
१२.२६४	—	—	६१.८११
१२.२६५	—	—	६१.१८१२
१२.२६६	—	—	६१.१८१३-१

म.	ना.	द.	स.
१२.२६७	—	—	६१.१८२०
१२.२६८	—	—	६१.१८२१
१२.२६९	—	—	६१.१८२२
१२.२७०	—	—	६१.१८२३
१२.२७१	—	—	६१.१८२४
१२.२७२	—	—	६१.१८२५
१२.२७३	—	—	६१.१८२६
१२.२७४	—	—	६१.१८२७
१२.२७५	—	—	६१.१८२८
१२.२७६	—	—	६१.१८२९
१२.२८१	—	—	६१.१८४७
१२.२८२	—	—	६१.१८४८
१२.२८३	—	—	६१.१८४९
१२.२८४	—	—	६१.१८५०
१२.२८५	—	—	६१.१८५१
१२.२८६	—	—	६१.१८५२
१२.२८७	—	—	६१.१८५३
१२.२८८	—	—	६१.१८५४
१२.२८९	—	—	६१.१८५५
१२.२९०	—	—	६१.१८५६
१२.२९१	—	—	६१.१२५७-६२
१२.२९२	—	—	६१.१८६३
१२.२९३	—	—	६१.१८६४
१२.२९४	—	—	६१.१८६५
१२.२९५	—	—	६१.१८६६
१२.२९६	—	—	६१.१८६७
१२.२९७	—	—	६१.१८६८
१२.२९८	—	—	६१.१८६९
१२.२९९	—	—	६१.१८७०
१२.३००	—	—	६१.१८७१
१२.३०१	—	—	६१.१८७१अ
१२.३०२	—	—	६१.१८७२
१२.३०३	—	—	६१.१८७३
१२.३०४	—	—	६१.१८७४
१२.३०५	—	—	६१.१८७५-९८
१२.३०६	—	—	६१.१८९९
१२.३०७	—	—	६१.१९००
१२.३०८	—	—	६१.१९०१

म.	ना.	द.	प.
१२.३०९	—	—	६१.१९०२
१२.३१०	—	—	६१.१९०३-१३
१२.३११	—	—	६१.१९१४
१२.३१२	—	—	६१.१९१५
१२.३१३	—	—	६१.१९१६
१२.३१७	—	—	६१.१९२४
१२.३१८	—	—	६१.१९२५
१२.३२१	३५.३५	३३.४१५	६१.१९३३
१२.३२७	३५.४२	३३.४२२	६१.१९३९
१२.३२८	३५.४३	३३.४२३	६१.१९४०
१२.३२९	३५.४४	३३.४२४	६१.१९४१-४७
१२.३३०	—	—	६१.१९४८
१२.३३१	३५.४५	३३.४२५	६१.१९४९
१२.३३२	३५.४६	३३.४२६	६१.१९५०-५६
१२.३३३	—	—	६१.१९५७
१२.३३४	—	—	६१.१९५८
१२.३३५	—	—	६१.१९५९
१२.३३६	—	—	६१.१९६०
१२.३३८	३५.४७	३३.४२८	६१.१९६२
१२.३३९	—	—	६१.१९६३-६९
१२.३४०	३५.४८	३३.४२९	६१.१९७०
१२.३४५	—	—	६१.१९७५-८२
१२.३४६	—	—	६१.१९८३
१२.३४७	—	—	६१.१९८४
१२.३४९	—	—	६१.१९८६
१२.३५१	—	—	६१.१९८८
१२.३५२	—	—	६१.१९८९-९०
१२.३५३	—	—	६१.१९९१-९९
१२.३५४	—	—	६१.२०००
१२.३५५	—	—	६१.२००१
१२.३५६	—	—	६१.२००२
१२.३५७	—	—	६१.२००३
१२.३५८	—	—	६१.२००४
१२.३५९	—	—	६१.२००५
१२.३६०	—	—	६१.२००६
१२.३६१	—	—	६१.२००७
१२.३६४	—	—	६१.२००९
१२.३६५	—	—	६१.२०११

म.	ना.	द.	स.
१२.३६६	—	—	६१.२०१२
१२.३६७	—	—	६१.२०१३
१२.३६८	—	—	६१.२०१४-२२
१२.१६९	—	—	६१.२०२३
१२.३७०	—	—	६१.२०२४
१२.३७१	—	—	६१.२०२५
१२.३७२	—	—	६१ २०२६
१२.३७३	—	—	६१.२०२७
१२.३७४	—	—	६१.२०२८
१२.३७५	—	—	६१.२०२९-३५
१२.३७७	—	—	६१.२०३७
१२.३८३	—	—	६१.२०४५
१२.३८४	—	—	६१.२०४६
१२.३८५	—	—	६१.२०४७
१२.३८६	—	—	६१.२०४८
१२.३८७	—	—	६१.२०४९
१२.३८८	—	—	६१.२०५०
१२.३८९	—	—	६१.२०५१
१२.३९०	—	—	६१.२०५२
१२.३९१	—	—	६१.१०५३
१२.६९२	—	—	६१.२०५४
१२.३९३	—	—	६१.२०५५
१२.३९४	—	—	६१.२०५६
१२.३९५	—	—	६१.२४५७
१२.३९६	—	—	६१.२०५८
१२.३९७	—	—	६१.२०५९
१२.३९८	—	—	६१.२०६०-६६
१२.३९९	—	—	६१.२०६७
१२.४००	—	—	६१.२०६८
१२.४०१	—	—	६१.२०६९
१२.४०२	—	—	६१.२०७०-७५
१२.४०३	—	—	६१.२०७६ ७८
१२.४२१	—	—	६१.२०९९
१२.४२४	—	—	६१.२१०२
१२.४२५	—	—	६१.२१०३
१२.४२६	—	—	६१.२१०४
१२.४२७	—	—	६१.२१०५
१२.४२८	—	—	६१.२१०६

म.	ना.	द.	स.
१२.४३१	—	—	६.१२११०
१२.४३२	—	—	६.१२१११
१२.४३३	—	—	६१.२११२
१२.४३४	—	—	६१.२११३
१२.४३५	—	—	६१.२११९
१२.४३६	—	—	६१.२१२०
१२.४३७	—	—	६१.२१२१
१२.४३८	—	—	६१.२१२२
१२.४३९	—	—	६१.२१२३
१२.४४०	—	—	६१.२१२४
१२.४४१	—	—	६१.२१२५
१२.४४२	—	—	६१.२१२६
१२.४४३	—	—	६१.२१२७-३२
१२.४४४-४५	—	—	६१.२१३३-३४
१२.४४६	—	—	६१.२१३६
१२.४४७	—	—	६१.२१३७
१२.४४८	—	—	६१.२१३८
१२ ४४९	—	—	६१.२१३९-४२
१२.४५०	—	—	६१.२१४३
१२.४५१	—	—	६१.२१४४
१२.४५२	—	—	६१.२१४५
१२.४५४	—	—	६१.२१४७
१२.४५५	—	—	६१.२१४८
१२.४५६	—	—	६१.२१४९
१२.४५७	—	—	६१.२१५०-६०
१२.४६१	—	—	६१.२१६५
१२.४६२	—	—	६.१२१६६
१२.४६३	—	—	६१.२१६७
१२.४६४	—	—	६१.२१६८-७७
१२.४६६	—	—	६१.२१७९
१२.४६७	३६.२०	३३.४७२	६१.२१८१-९५
१२.४६८	—	—	६१.२१९६
१२.४६९	—	—	६१.२१९६-२२०३
१२.४७२	—	—	६१.२२०६
१२.४७५	—	—	६१.२२०९
१२.४७६	—	—	६१.२२१०
१२.४७७	—	—	६१.२२११
१२.४८०	—	—	६१.२२१४

म.	ना	द.	श.
			६१.२२२६
१२.४८१	—	—	६१.२२२८-३०
१२.४८२	—	—	६१.२२३१
१२.४८३	—	—	६१.२२३२
१२.४८४	—	—	६१.२२३३
१२.४८५	—	—	६१.२२३८
१२.४८६	—	—	६१.२२३९-४६
१२.४८७	३६.२८	३३.४०८	६१.२२४८
१२.४९९*	—	—	६१.२२४९-५१
१२.५००	—	—	६१.२२५२
१२.५०१	—	—	६१.२२५३
१२.५०२	—	—	६१.२२५४-६१
१२.५०३	—	—	६१.२२६२
१२.५०४	—	—	६१.२२६३-६५
१२.५०५	—	—	६१.२२६६
१२.५०६	—	—	६१.२२६७-७१
१२.५०७	—	—	६१.२२७२
१२.५०८	—	—	६१.२२७३
१२.५०९	३६.२९	—	६१.२२७४
१२.५१०	—	—	६१.२२७५
१२.५११	—	—	६१.२२७६-८१
१२.५१२	—	—	६१.२२८५
१२.५१५	—	—	६१.२२८६-९६
१२.५१६	३६.३१	—	६१.२२९८
१२.५१८	—	—	६१.२३००
१२.५२०	—	—	६१.२३०१
१२.५२१	—	—	६१.२३०२
१२.५२२	—	—	६१.२३०३
१२.५२३	—	—	६१.२३०४-११
१२.५२४	—	—	६१.२३१३
१२.५२६	—	—	६१.२३१५
१२.५२८	—	—	६१.२३१६-२३
१२.५२९	—	—	६१.२३२४
१२.५३०	—	—	६१.२३२५-४२
१२.५३१	—	—	६१.२३४३
१२.५३२	—	—	६१.२३४४
१२.५३३	—	—	

* प्रति में भूल से १० की संख्या वृद्धि हो गई है।

म.	ना.	द.	ग.
१२.५३५	—	—	६१.२३४७
१२.५३६	—	—	६१.२३४८
१२.५३८	—	—	६१.२३५०-५८
१२.५३९	—	—	६१.२३५९
१२.५४०	—	—	६१.२३६०
१२.५४१	—	—	६१.२३६१
१२.५४४	—	—	६१.२३६४
१२.५४५	—	—	६१.२३६५-७१
१२.५४७	—	—	६१.२३७३
१२.५४८	—	—	६१.२३७४
१२.५४९	—	—	६१.२३७५
१२.५५१	—	—	६१.२३७७
१२.५५२	—	—	६१.२३७८
१२.५५३	—	—	६१.२३७९
१२.५५४	—	—	६१.२३८०
१२.५५५	—	—	६१.२३८१
१२.५५६	—	—	६१.२३८२
१२.५५८	—	—	६१.२३८४
१२.५५९	—	—	६१.२३८५-९१
१२.५६०	—	—	६१.२३९२
१२.५६१	—	—	६१.२३९३-९८
१२.५६२	—	—	६१.२३९९
१२.५६३	—	—	६१.२४००
१२.५६३ [?]	—	—	६१.२४०० [?]
१२.५६३ [?]	—	—	६१.२४०१ [?]
१२.५६६	—	—	६१.२४०४
१२.५६७	—	—	६१.२४०५
१२.५६८	—	—	६१.२४०६-२०
१२.५६९	—	—	६१.२४२१
१२.५७०	—	—	६१.२४२२-२७
१२.५७१	—	—	६१.२४२८-२९
१२.५७५	—	—	६१.२४३२
१२.५७८	—	—	६१.२४३६
१२.५७९	—	—	६१.२४३७
१२.५८२	३५.३	३२.३८६	६१.२४५३
१२.५८४	३७.१२	३२.५०९	६१.२४५५
१२.५८८	—	—	६१.२४५९
१२.५९३	—	—	६१.२४६४

पाँच

म.	ना.	द.	स.
१२.५९४	—	—	६१.२४६५
१२.५९५	—	—	६१.२४६६
१२.५९७	—	—	६१.२४६८
१२.६०२	—	—	६१.२४८३
१२.६०३	—	—	६१.२४८४
१२.६०४	—	—	६१.२४८५
१२.६०६	—	३३.५२६	६१.२४८८
१२.६०७	—	—	६१.२४८९
१२.६०८	—	—	६१.२४९०
१२.६०९	—	—	६१.२४९१
१२.६१२	३८.१२	३३.५२९	६१.२४९४
१२.६१३	—	—	६१.२४९९-२५०५
१२.६१४	—	—	६१.२५०६
१२.६१५	—	—	६१.२५०७-११
१२.६१८	—	—	६१.२५२३
१२.६१९	—	—	६१.२५२४-३४
१२.६२०	—	—	६१.२५३५-३६
१२.६२३	—	—	६१.२५३८
१२.६२४	—	—	६१.२५३९
१२.१३७८	३८.४८	—	६१.२५४७
१२.१३७९	३८.४९	३३.५३८	६१.२५४८
१२.१३८०	३८.५०	३३.५३९	६१.२५४९
१२.१३८२	३८.५२	३३.५४१	६१.२५५१
१२.१३८३	३८.५३	३३.५४२	६१.२५५२

म. के उपर्युक्त छन्दों में से जो छन्द स. में नहीं पाए जाते हैं, उनका पाठ निम्नलिखित है:—

अ. फ. १. नारा० ६ के अनन्तर : अथ गाहां—पढमो बारहमत्ते बीयो अठार साहिणा भट्टो।
जहां पढमंतहां तीयौ ददपंचमि भूमीयं गाहा ॥१॥
जां पढम ताय पंचम सत्तम असेस होइ गुरुद्दग।
गुरिवणी विण पाईणा गाहा दोस पयासई ॥२॥

[तुलना० प्राकृत पैंगल १.५४,५५]

अ. फ. १. दो० ४ के अनन्तर : त्रोटक— सगुणा जिह च्यारि पवंत परी।
रचि सोळह मत्त विसामु करी।
सुणि प्यंगलि- णाजहि चीरइयं।
यह सोडय जाणहु पायवियं ॥१॥

[तुलना० प्राकृत पैंगल १.१२६]

अ. फ. १ दो० ५ के अनन्तर : मोतीदाम— पयोहर च्यारि पसिद्ध तांम।
ति सोळह मत्तह मुत्तीय दाम।

-- णपुयह हाए मरे हय अन्त।
ति भठइ भगल छपण मंत।

[तुलना० प्राकृत पैंगल २.१२२]

द्वर गय आइस माल्हु किज्ज।
कला ससि सय पते गुरु दिज।
जगणिहि होइ पयास विसाय।
सगुर पयंपै मुत्तीय दाम॥

अ. फ. १ भुजं० १४ के अनन्तर : त्रिभंगी—पढमं दह हरणं अट्टसइहरणंफुनि वसुहरणं पद्दहरणं।
भं ते गुर मोहैं सवद्दुनन मोहै सिठि सरोहै परतोहै।
जय परय पयोहर हारै मनोहर सास करें।

अ. २. पद्ध० ७ के अनन्तर : दोहा— भूपति सोमेसर भलौ कही विहद दीवान।
दुनियारी पै दाहिबौ दाह राव प्रधान॥१॥
ग्यारै सै सीदोतरै घोड़ा पढीयो वेघ।
सोमेसुर राजातरै कीया यगनह घेघ॥२॥
सोमेसुर थाप्यो सहह त्रिभीपुर दीयौ नाम।
कोली उकीली तें भई नागपुर परनाम॥३॥

अ. २. दो० ६ के अनन्तर : दोहा— ग्यारे सै चवदोतरै आसुस दिठ विजाण।
प्रिथीराज सु जनमीयौ वस चहुवाणां भाण॥५॥

अ. २. दो० १० के अनन्तर : कुंड०—ग्यारह सै पंदरोत्तरै अहिपुर बसीयौ वास।
माहाराज पीथल महा कही मंत्र कवास॥
कही मंत्र कैवास नाह सुदि आठमि आपा।
दीपै पुषि नषत्र थनैं रविवार ज दापा।
भीम अनैं कैवास चिहु जगि लीयौ जसवास।
ग्यारै सै पंदरोत्तरे अहिपुर वसीयौ वास॥

,, दोहरौ—ग्यार नै बीसअठ पाटू कीयो दुरंग।
सोहागिनि सूहविदि सोहै महल सुचग॥

,, कवित— मैंगल इक मद्दमत्त मत्त वेढी ज पयटौ।
आना सागर माधि था चढि भीष पयटो।
माथुर बुधि विचारि लीह चिहुंदीस ज कारीय।
बाहरि गज निकासि भई रज कंवर भारीय।
धरबाई चंद इण परि भणे राजा रीझे वृझीयौ।
कायथ भीम मच्छीहल सुतन इण परि हायी तुकीयौ॥

अ. ७ साट० १ के अनन्तर : साटक—नंत्री देसब निसूवंसे मं विलवन घता।
पिन गानर अंत न सुपररया निरपीयत चित्ता।
द्रिव्याधन नरपीय दिवसा सुमह पापारि द्वारेलिहं।
आवास हासीय सघनं अद्दनिर सर पवास॥१॥

अ. ७. दो० १२ के अनन्तर : गाथा—निद्रावीस रययो दसमि दिनु आइस चत पासि।
अंधामि जामि निसया सरसे सपति सुकवि भवाई॥१८॥

म. ३१० : दूहा— लुटि रिधि सुलतान की अठ सहस हय कढि ।
सिर कीन्हो सुलतान कै नव दीन्हो सो छंडि ॥

उपर्युक्त के अतिरिक्त इसी प्रकार निम्नलिखित वार्तायें भी म. में ऐसी है, जो स. में नहीं हैं:—

म. २. दो० १० के कुछ अनन्तर : वचनिका—एक दिवस राजा प्रिथीराज आनासागर झूलण जल क्रीड़ा करण आयौ तठै चंद नै राजा पूछै छु भो हाथी कितना मण छै ।

क. स्वीकृत, धा०, मो०, अ०, फ० तथा म० के अतिरिक्त

ना० की

पाठ-सामग्री

ना.	द.	स.	ना.	द.	स.
१.४	१.१०	१.६८	१.४९	१.६७	१.१९३-९६
१.७	१.२	१.३	१.५०	१.६८	१.१९७
१.९	१.५	१.४३	१.५२	१.७०	१.१९९
१.१०	१.६	१.४४	१.५६	१.७५/१	१.२१३
१.११	१.१२	१.७६	१.५७	१.७५/२	१.२१४
१.१२	—	१.७७	१.५८	१.७५/२	१.२१५-१६
१.१३	१.१३	१.७८	१.६१	१.७८	१.२१९
१.१४	१.१४	१.७९	१.६३	१.८०	१.२२२
१.१५	१.१५	१.८०	१.६६	१.८२	१.२४१
१.१८	१.१७	१.८२	१.६७	१.८३	१.२४२
१.१९	१.१८	१.८३	१.७० अ	१.८५	१.२४४
१.२०	१.१९	१.८४	१.७१	१.८६	१.२४५
१.२१	१.२०	१.८५	१.७२	१.८७	१.२४६
१.२२	१.२१	१.८६	१.७८	१.९१	१.२७९
१.२२ अ	१.२२	१.८७	१.७९	१.१००	१.२८१
१.२३	१.२३	१.८८	१.८४	१.१०४	१.३०९
१.२४	१.२४	१.८९	१.८६	१.१०६	१.३१५
१.२५	१.२५	१.९१	१.८७	१.१०७	१.३१६
१.२६	१.२६	१.९२	१.८८	१.११२	१.३२१-२३
१.२८	१.९२	१.२५१	१.८९	१.११३	१.३२४
१.२९	—	—	१.९०	१.११४	१.३२५
१.३०	—	—	१.९१	१.११६	१.३२७
१.४४	१.६२	१ १८०	१.९२	१.११७	१.३२८
१.४५	१.६३	१.१८१-८७	२.१	—	१.३२९
१.४६	१.६४	१.१८९	२.२	—	१.३३०
१-४७	१.६५	१.१९०	२.३	—	१.३३२

ना.	द.	स.
२.४	—	१.३३३
२.५	—	१.३३४
२.६	—	१.३३५
२.७	—	१.३३६
२.८	—	१.३३७
२.९	—	१.३३८
२.१०	—	१.३३९
२.११	—	१.३४०
२.१२	—	१.३४१-४४
२.१३	—	१.३४५
२.१४	—	१.३४६
२.१५	—	१.३४७
२.१६	—	१.३४८
२.१७	—	१.३४९-६०
२.१८	—	१.३६१
२.१९	—	१.३६२
२.२०	—	१.३६३
२.२१	—	१.३६४ ६९
२.२२	—	१.३७०
२.२४	—	१.३७१-८३
२.२५	—	१.३८४
२.२५ अ	—	१.३८५
२.२६	—	१.३८६
२.२८	—	१.३८७-९४
२.२९	—	१.३९५
२.३०	—	१.३९६
२.३१	—	१.३९७
२.३२	—	१.३९८
२.३३	—	१.३९९
२.३४	—	१.४००
२.३५	—	१.४०१
२.३५ अ	—	१.४०२
२.३६	—	१.४०३ ४
२.३७	—	१.४०५
२.३८	—	१.४०६
२.३९	—	१.४०७
२.४०	—	१.४०८
२.४१	—	१.४०९

ना.	द.	स.
२.४३	—	१.४१०
२.४४	—	१.४११
२.४५	—	१.४१२
२.४६	—	१.४१३
२.४७	—	१.४१४
२.४८	—	१.४१५
२.४९	—	१.४१६
२.५०	—	१.४१७
२.५१	—	१.४१८
२.५२	—	१.४१९
२.५३	—	१.४२०-३२
२.५४	—	१.४३३
२.५५	—	१.४३४-३७
२.५६	—	१.४३८
२.५७	—	१.४३९-४८
२.५८	—	१.४४९
२.६०	—	१.४५०-६०
२.६१	—	१.४६१
२.६२	—	—
२.६३	—	१.४६२
२.६४	—	१.४६३
२.६५	—	१.४६४
२.६६	—	१.४६५
२.६७	—	१.४६६
२.६८	—	१.४६७
२.६९	—	१.४६८
२.७०	—	१.४६९
२.७१	—	१.४७०
२.७२	—	१.४७१
२.७३	—	१.४७२
२.७४	—	१.४७३
२.७५	—	१.४७४-७७
२.७६	—	१.४७८
२.७७	—	१.४७९
२.७८	—	१.४८०
२.७९	—	१.४८१
२.८०	—	१.४८४
२.८१	—	१.४८५-९०

ना.	द.	स.
२.८३	—	१.४९४
२.८४	—	१.४९५
२.८५	—	१.४९२
२.८६	—	१.४९३
२.८७	—	१.५०६
२.८८	—	१.५०७
२.८९	—	१.५०८
२.९०	—	१.५०९
२.९१	—	१.५१०
२.९२	—	१.५११
२.९३	—	१.५१२
२.९४	—	१.५१३
२.९५	—	१.५१४
२ ९६	—	१.५१५
२.९७	—	१.५१६
२.९९	—	१.५१७
२.१००	—	१.५१८
२.१०१		—
२.१०२		—
२.१०३		—
२.१०४		—
२.१०७	१.१२५	१.५३२
२.१०८	१.१२६	१.५३३
२.११०	१.१२८	१.५३८
२.१११	१.१२९	१.५४२
२.११५	१.१२१अ	१.५४६
२.११६	१.१२२अ	१.५४०
२.११८	१.१३४	१.५४९
२.१२१	—	१.५७०
२.१२५	१.१५०	१.७६०
२.१२६	—	१.७६१
२.१२९	१.१५३	१.७६६
३.२८	२.१	२.१
३.३०	२.७	२.३०२
३.३१	२.८	२.३०४-०६
३.३२	२.९	२.३०७
३.३३	२.१०	२.३०८
३.३४	२.११	२.३०९-२०

ना.	द.	स.
३.४१	२.१८	२.३५३
३.४४	२.२१	२.३६६
३.४५	२.२२	२.३७५
३.४६	२.२३	२ ३८१
३.४७	२.२४	२.३८८
३.४८	२.२५	२.३९०
३.५०	२ २७	२.४२८
३.६१	२.३६	२.४८०
३.७४	२.५०	२.५०८
३.७५	२.५१	२.५०९
३.७६	२.५२	२.५१०
३.७७	२.५३	२.५११
३.७८	२ ५६	२.५१२
३.७९	२.५७	२.५१३
३.८०	२.५८	२.५१४
३.८१	२.५९	२.५१७
३.८७	२.६४	२.५४३
३.८८	२.६५	२.५४४
३.९१	२.६८	२.५४७
३.९२	—	२.५४८
३.९३	—	२.५४९
३.९४	—	२.५५०
३.९५	—	२.५५१
३.९६	—	२.५५२
३.९७	—	२.५५३
३.९८	—	२.५५४
३.९९	—	२.५५५
३.१००	—	२.५५६
३.१०२	—	२.५५७
३.१०३	—	२ ५५८
३.१०४	—	२ ५५९
३.१०५	—	२.५६०
३.१०६	—	२.५६१
३.१०७	२.६९	२.५६२
३.१०९	२.७६	२.५८५
३.१०९ अ	२.७७	२ ५८६
३.११३	—	—
४.२	३.२	१७.७८

[सहचर]

ना.	द.	ध.
४.३	३.५	३.४
४.४	३.२	३.२
४.५	—	—
४.६	३.६	३.९
४.७	३.७	३.१०
४.८	३.८	३.२०
४.९	—	३.१२
४.१०	—	३.१६
४.११	४.९	३.२१
४.१२	४.११	३.२३
४.१३	४.१०	३.२२
४.१४	४.१२	३.२४
४.१५	३.२३	३.२५
४.१६ आ	३.१५	३.२७-४०
४.१७	३.१६	३.४१
४.१८	३.१७	३.४२
४.१९	३.१९	३.४३
४.२०	३.१८	३.४५
४.२३	३.२२	३.४६
५.१	—	—
५.२	१६.१	९.१
५.३	—	—
५.४	१६.२	९.२
५.५	१६.३	९.३
५.६	—	९.५
५.७	१६.४	९.६
५.८	१६.७	९.९
५.९	१६.८	९.१०
५.१०	१६.९	९.११
५.११	१६.१०	९.१२
५.१२	१६.११	९.१३
५.१३	१६.१३	९.१८
५.१४	१६.१४	९.२१
५.१५	१६.१५	९.२२
५.१६	१६.१७	९.२३
५.१७	१६.१७ अ	९.२४
५.१८	१६.१८	९.२५
५.१९	१६.१९	९.२६

ना.	द.	ध.
५.२०	१६.२३	९.२९-३८
५.२१	१६.२४	९.३९
५.२२	१६.२६	९.४०
५.२३	१६.२५	९.४१
५.२४	१६.२७	९.४२
५.२५	१६.२८	९.४३-४५
५.२६	१६.२९	९.५६
५.२७	१६.३०	९.५७
५.२८	१६.३१	९.५८
५.२९	१६.३२	९.५९
५.३०	—	९.६०
५.३१	—	९.६१
५.३२	१६.३३	९.६२
५.३३	१६.३४	९.६३
५.३४	१६.३५	९.६४
५.३५	१६.३७	९.६६
५.३६	१६.३८	९.६७-७५
५.३७	१६.३९	९.७६
५.३८	१६.४०	९.७७
५.३९	१६.४२	९.७९
५.४१	१६.४३	९.८०-९०
५.४२	१६.४४	९.९१
५.४३	१६.४५	९.९२
५.४५	१६.४६	९.९३-१०४
५.४६	—	९.१०५
५.४९	—	९.१०८
५.५०	—	९.१०९-१२
५.५१	—	९.११३
५.५२	—	९.११४
५.५३	—	९.११५-१९
५.५४	—	९.१२०
५.५५	—	९.१२१-२९
५.५५ आ	—	९.१३०
५.५६	—	९.१३१
५.५७	—	९.१३२
५.६०	—	९.१३४
५.६१	—	९.१३५
५.६२	—	९.१३६

ना.	द.	स.
५.६३	—	९.१३७
५.६४	—	९.१३८
५.६५	—	९.१३९-५४
५.६६	—	९.१५५
५.६७	—	९.१५६
५.६८	—	९.१५७
५.६९	—	९.१५८
५.७०	—	९.१६७
५.७१	—	९.१६८
५.७२	—	९.१६९
५.७३	—	९.१७०-८८
५.७४	—	९.१८९
५.७५	—	९.१९०
५.७६	—	९.१९१
५.७८	—	९.१९२-२०२
५.७९	—	९.२०३
५.८०	—	९.२०४
५.८१	—	९.२०५
५.८२	—	९.२०६
५.८३	—	९.२०८
५ ८४	—	९.२०९
५.८५	—	९.२१०
६ १	८.१	१७.१
६.२	८.४	१७.१३ २०
६.३	८.५	१७.२१
६.४	८.६	१७.२५
६.५	८.८	१७.२६
६.६	८.९	१७.२७
६.७	—	१७.२८
६ ८	८.१०	१७.३०
६.९	—	१७.३६
६.१०	८ ११	१७.३८
६.११	८.१४	१७.३९
६.१२	८.१५	१७.७१
६.१३	८.१९	१७.७५
६.१५	८.२०	१७.७६
६.१७	८.२२	२४.२
६.१८	८.२३	२४.३

ना.	द.	स.
६.१९	८.२४	२४.४
६.२०	८.२५	२४.५
६.२१	८.२६	२४.७
६.२२	८.२८	२४.१८
६.२३	८.२९	२४.१९
६.२४	८.३०	२४.२०
६.२५	८.३१	२४.२१
६.२६	८.३२	२४.२२
६.२७	८.३३	२४.२३
६.२८	८.३४	२४.२४
६.२९	८.३५	२४.२५
६.३०	८.३६	२४.२६
६.३१	८.३७	२४.२७
६.३२	८.३८	२४.२८-३३
६.३३	८.३९	२४.३६
६.३४	८.४०	२४.३७
६.३५	८.४१	२४.३८
६.३७	८.४२	२४.३९
६.३७ अ	८.४३	२४.४०
६.३८	८.४४	२४.४१
६.३९	८.४५	२४.४२
६.४०	८ ४६	२४.४३
६.४१	८.४७	२४.४४
६.४२	८.४८	२४.४५
६.४२ अ	८.४९	२४.४६
६.४३	८.५०	२४.४७
६.४४	८.५१	२४.४९
६.४५	८.५२	२४.५०
६.४६	८.५३	२४.५१
६.४७	८.५४	२४.६०
६.४८	८ ५५	२४ ७२
६.४९	८.५६	२४.७७ ८२
६.५०	८.५७	२४.९९
६ ५१	८.५८	२४.१०१
६.५२	८.५९	२४.१२४
६.५३	८.६०	२४.१०९-१२
६ ५४	८.६१	२४.११३
६.५५	८.६२	२४.११४

ना.	द.	स.	ना.	द.	स.
६.५६	८.६३	२४.१२५	६.९७	—	२४.४३१
६.५७	८.६४	२४.१२७	६.९८	८.१२५	२४.४३६
६.५८	८.६५	२४.१३८	६.९९	८.१२६	२४.४३७
	८.६६	२४.१४४	६.१००	८.१२७	२४.४३८
६.५९	८.७६	२४.१८१	६.१०१	८.१२८	२४.४४०-४५
६.६१	८.७७	२४.१८३-९६	६.१०५	८.१३६	२४.४६०
६.६२	८.७८	२४.१९७	६.१०७	८.१३९	२४.४६४-६६
६.६३	८.७९	२४.१९८	६.१०८	८.१४०	२४.४६७
६.६४	८.८०	२४.१९९	६.१०९	८.१४२	२४.४६९
६.६५	८.८२	२४.२०१	६.११०	—	२४.४७०
६.६६	८.८३	२४.२०२	६.१११	१.१४४	१.६९६
६.६७	८.८४	२४.२०३	७.१	—	७.३
६.६८	८.८५	२४.२०४	७.२	—	७.२
६.६९	८.८६	२४.२०५	७.३	४.३	७.९-११
६.६९अ	८.८७	२४.२०६	७.४	४.४	७.१२
६.७१	८.८८	२४.२५६-६३	७.५	४.५[1]	७.१४
६.७२	८.९०	२४.३६५	७.६	—	७.१५
६.७३	८.९१	२४.३६६	७.७	४.८[1]	७.२१
६.७४	८.९२	२४.३६७		४.१०[1]	
६.७६	८.९५	२४.३७४	७.८	४.९[1]	७.२७
६.७७	८.९६	२४.३७५	७.९	४.११[1]	७.२९
६.८१	८.१००	२४.३८३	७.१०	४.१२[1]	७.३१
६.८२	८.१०१	२४.३८४	७.११	४.१५	७.३४
६.८३	८.१०२	२४.३८५	७.१२	४.१६	७.३५-५४
६.८४	८.१०३	२४.३८६	७.१३	४.१७	७.५५
६.८६	८.१०५	२४.३८८	७.१४	४.१८	७.६८
६.८७	८.१०६	२४.३८९	७.१५	४.१९	७.६९
६.८८	८.१०७	२४.३९४	७.१६	४.२५	७.९४-१०१
६.८९	८.१०८	२४.३९५-९९	७.१९	—	७.४७
६.९०	८.१०९	२४.४००	७.२०	४.२६	७.१०७
६.९१	८.११०	२४.४०२-०८	७.२१	४.२७	७.११३
६.९२	८.१११	२४.४०९	७.२२	—	७.११४
६.९३	८.११२	२४.४१०	७.२३	४.२८	७.११५
६.९४	८.११३	२४.४११	७.२४	४.२९	७.११६
६.९५	८.१२२	२४.४२४	७.२६	४.३०	७.११७-२५
६.९६	८.१२३	२४.४२९	७.२७	४.३१	७.१२८

[1] ये छन्द-संख्यायें टीट ६० की हैं, शब्द-संख्यायें मात्र द० की हैं, द० में यह अंश त्रुटित है

ना.	द.	स.
७.२८	४.३३	७.१३७
७ २९	४.३५	७.१६६
७.३०	४.३६	७.१४२
७.३१	४.३७	७.१४३
७.३२	४.३८	७.१४४
७.३३	४.३९	७.१४६
७.३४	४.४०	७.१४७
७.३५	४.४१	७.१४८
७.३६	४.४२	७.१४९
७.३७	४.४३	७.१५०
७.३८	४.४४	७.१५१
७.३९	४.४८ अ	७.१५२-५६
७.४०	४.४५	७.१५९
७.४१	४.४९	७.१६८
७.४२	४.५३	७.१७२-७५
७.४३	४.५४	७.१७७
७.४४	४.५५	७.१७८
७.४५	४.५६	७.१७९
७.४६	४.५७	७.१८०
७.४७	—	७.१८२
७.४८	४.५९	७.१८५
८.१	९.१	८.१७
८.२	९.२	८.२१-२३
८.३	९.३	८.२७
८.४	९.४	८.२८
८.५	९.५	८.२९
८.६	९.६	८.३७-४१
८.७	९.७	८ ४२ अ
८.८	९.९	८.४४
८.९	९.१०	७.१८६
८.१०	९.१२	८.५४
८.११	९.११	८.५०-५२
८.१२	—	८.५३
८.१३	९.१३	८.६१-६८
८.१४	९.१४	८.६९
९.१	२४.५	४५.३३
९.२	२४.६	४५.५४
९.३	२४.७	४५.५५
९.४	२४.८	४५.५६
९.५	२४.९	४५.५७
९.६	२४.१०	४५.५८
९.७	२४.१७	४५.६७
९.८	२४.१८-२०	४५.६८-७०
९.९	२४.२१	४५.७१
९.१०	२४.२४	४५.७४
९.११	—	—
९ १२	२४.३२	४५.९०
९.१३	२४.११	४५.५९
९.१४	२४.२२	४५ ७२
९.१५	२४.२३	४५.७३
९.१६	२४.३३	४५ ९२
९.१७	२४.३४	४३ ९३
९.१८	२४.३५	४५.९४
९.१९	२४.३६	४५ ९५
९.२०	२४.३७	४५.९६
९ २१	२४.३८	४५.९७
९.२१ (?)	२४.१२	४५.६०-६४
९.२२ (?)	—	४५.१५६
९.२३	२४.१३	४५.६५
९.२४	२४.१६	४५ १५७
९.२६	२४.२५	४५ ७५
९.२७	२४.२७	४५.७७
९.२९	२४.२८	४५.७८-८६
९.३०	२४.६७	४५.१५१
९.३१	२४.७०	४५.१५४
९.३२	२४.७१	४५.१५५
९.३३	२४.७४	४५.१६०
९.३४	२४.७३	४५.१५९
९.३५	२४.७५	४५.१६१
९.३६	२४.७७	४५.१६३
९.३७	२४.७८	४५.१६४-६८
९.३८	२५.११	४५.२१९
खंड१०	—	खंड ५[1]
११.१	—	—

[1] स० के ५.४६, ५.८२, ५.९५-९७ के अतिरिक्त उसके खंड ५ के सभी छन्द ना० में खंड १० में है और ना० के १०.५२ के अतिरिक्त ना० के खंड १० के सभी छन्द स० के खण्ड ५ में है।

ना.	द.	स.
११.२	—	६.१
११.३	—	६.२
११.४	—	—
११.५	—	६.३-१०
११.६	—	—
११.७	—	६.१३
११.८	—	६.१४
११.९	—	६.१५
११.१०	—	६.१६
११.११	—	६.१७
११.१२	—	६.१९
११.१३	—	६.२०
११.१४	—	६.२१
११.१५	—	६.२२
११.१६	—	६.२३
११.१७	—	६.२५
११.१९	—	६.२६
११.२०	—	६.२७
११.२१	—	६.२८
११.२२	—	—
११.२३	—	६.२९
११.२४	—	६.३०
११.२५	—	६.३१
११.२६	—	६.३२
११.२७	—	६.३३
११.२८	—	६.३४
११.२९	—	६.३५-४८
११.३०	—	६.६१
११.३२	—	६.६२
११.३३	—	६.५०
११.३४	—	६.५१
११.३५	—	६.५२
११.३६	—	६.५३
११.३७	—	६.५४
११.३८	—	६.५५
११.३९	—	६.५६
११.४०	—	६.५७
११.४१	—	६.५८
११.४२	—	६.५९
११.४३	—	६.६०
११.४४	—	६.६३
११.४५	—	६.६४
११.४६	—	६.६५
११.४७	—	६.६६-९२
११.४८	—	६.९३
११.४९	—	६.९४
११.५०	—	६.९५
११.५१	—	६.९६
११.५२	—	६.९७
११.५३	—	६.१०४
११.५४	—	६.१०५
११.५६	—	६.१०६
११.५७	—	६.१०७
११.५८	—	—
११.५९	—	६.१०८-०९
११.६०	—	६.१२१
११.६१	—	६.१२२
११.६२	—	६.१२३
११.६३	—	६.१२४
११.६४	—	६.१२५
११.६५	—	—
११.६६	—	६.१२६
११.६७	—	६.१२७
११.६८	—	—
११.६९	—	६.१२९
११.७०	—	६.१३०
११.७१	—	६.१३१
११.७२	—	६.१३२-३६
११.७३	—	६.१३७
११.७४	—	६.१३८
११.७५	—	६.१४०
११.७६	—	६.१४१
११.७७	—	६.१४२
११.७८	—	—
११.७९	—	६.१४३
११.८०	—	६.१४४

ना.	द.	स.
११.८१	—	६.१४५
११.८२	—	६.१५०
११.८३	—	६.१६७-६९/१
११.८४	—	६.१६९/२
११.८५	—	६ १७०
११.८६	—	६.१७१
११.८७	—	६.१७२
११.८८	—	६ १७६
११.८९	—	६.१७८
१२.०	—	१९.२५१
१२.१	२०.६ २१.७६	१८.११
१२.२	२०.७	१८ १२
१२.३	२० ७अ	१८.१३
१२.४	२०.१५	१८ २१
१२ ५	२०.१५अ	१८.२२-३०
१२.६	२०.१६	१८.३१
१२.७	२०.१७	१८.३२
१२.८	२०.१८	१८.३३
१२.१७	—	१८.५८-७६
१२.१८	—	१८.७९
१२.१९	—	१८.८०
१२.२०	—	१८८१
१२.२१	—	१८८२
१२.२२	—	१८.८३ ९१
१२.२३	—	१८.९२
१२.२४	—	१८.९३
१२.२५	—	१८.९४
१२.२६	—	१८.९५
१२.३०	२१.३	१९.२६
१२.३९	२१.१२	१९.७८
१२ ४१	२१.१४	१९.९२
१२ ४९	२१.२२	१९.१०४
१२.५०	२१.२३	१९.११३
१२.५१	२१.२४,१	१९.११४/१
१२.५० (!)	२१.२४/२	१९.११४/२
१२.५१ (!)	२१.२५	१९.११५-१७
१२.५२	२१.२६	१९.११८
१२.५३	२१.२७	१९.११९
१२.५४	२१.२८	१९.१२०
१२.५५	२१.२९	१९.१२१
१२.५६	२१.३०	१९.१३८
१२.५७	२१.३१	१९.१३९
१२.५८	२१.३२	१९.१४०
१२.५९	२१.३३	१९.१४१-४६
१२.६०	२१.३४	१९.१५४
१२.६१	२१.३६	१९.१५५
१२.६२	२१.३७	१९.१५६
१२.६३	२१.३८	१९.१५७
१२.६४	२१.३९	१९.१५८
१२.६५	२१.३४	१९.१४८-५३
१२.६६	२१.४१	१९.१६०
१२.६७	२१.४२	१९.१६३-६५
१२.६८	२१.४३	१९.१६६
१२.६९	२१.४४	१९.१६७
१२.७०	२१.४५	१९.१६८-७०
१२.७१	२१.४६	१९.१७२
१२.७२	२१.४७	१९.१७३
१२.७३	२१.४८	१९.१७४
१२.७४	२१.४९	१९.१७५
१२.७५	२१.५०	१९.१७६
१२.७६	२१.५१	१९.१७७
१२.७७	२१.५२	१९.१७८
१२.७८	२१.५३	१९.१८३
१२.७९	२१.५४	१९.१८४-८९
१२.८०	२१.५५	१९.१९०
१२.८१	२१.५६	१९.१९३
१२ ८१ अ	२१.५७	१९.१९४-९८
१२ ८२	२१.५८	१९.१९९
१२.८३	२१.५९	१९.२००-०४
१२ ८४	२१.६०—	१९.२०५
१२.८५	२१.६१	१९.२०६ ११
१२.८६	२१.६२	१९.२१२
१२.८७	२१.६३	१९.२१३-१७
१२.८८	२१.६४	१९.२१८
१२.८९	२१.६५	१९.२१९-२४

ना.	द.	स.
१२.९०	२१.६६	१९.२२५
१२.९१	२१.६७	१९.२२६-३९
१२.९२	२१.६९	१९.२४१
१२.९३	—	१९.२४२
१२.९४	२१.७०	१९.२४३
१२.९५	२१.७१	१९.२४४
१२.९६	—	१९.२४७
१२.९७	२१.७२	१९.२४५
१२.९८	२१.७३	१९.२४६
१२.९९	२१.७५	१९.२५०
१३.११	२६.६	४६.७
१३.२०	—	४६.५५ अ
१३.२७ अ	२६.४२	४६.७३
१३.२८	२६.४३	४६.७४
१३.२९	२६.४४	४६.७५
१३.३०	२६.४५	४६.७६
१३.३१	२६.४६	४६.७७
१३.३२	२६.४७	४६.७८
१३.३३	२३.४८	४६.८९
१३.३४	२६.४९	४६.८०
१३.३५	२६.५०	४६.८१
१३.३६	२६.५१	४६.८२
१३.३७	२६.५६	४६.८८
१३.३८	२६.५७	४६.८९
१३.३९	२६.५८	४६.९०
१२.४०	२६.५९	४६.९१
१३.४१	२६.६०	४६.९५
१३.४२	२६.६१	४६.९३
१३.४३	२६.६२	४६.९४
१३.४४	२६.६३	४६.९५
१३.४५	२६.६४	४६.९६
१३.४६	२६.६५	४६.९७
१३.४७	२६.६६	४६.९८
१३.४८	२६.६७	४६.९९
१३.४९	२६.६८	४६.१०३
१३.५०	२६.६९	४६.१०४
१३.५१	२६.७०	४६.१०५
१३.५२	२६.७१	४६.१०६

ना.	द.	स.
१४.२	१३.२	१२.२
१४.३	१३.३	१२.३
१४.४	१३.४	१२.४
१४.५	१३.५	१२.६
१४.६	१३.७	१२.९
१४.७	१३.८	१२.१०
१४.८	१३.९	१२१२
१४.९	१३.११	१२.१४
१४.१०	१३.१२	१२.१५
१४.११	१३.१३	१२.१६
१४.१२	१३.१५	१२.१८-२२
१४.१५अ	१३.२० १३.२७	१२.४१
१४.१६	१३.२८	१२.५८
१४.१७	१३.२९	१२.५९
१४.१८	१३.३०	१३.६०
१४.१९	१३.३१	१२.६१
१४.२०	१३.३२	१२.६२-६५
१४.२१	१३.३३	१२.६६
१४.२२	१३.३४	१२.६७
१४.२३	१३.३६	१२.६९
१४.२४	१३.३७	१२.७०-७५
१४.२५	१३.३८	१२.७६
१४.२६	१३.४०	१३.७८-८४
१४.२७	१३.४१	१२.८५
१४.२८	१३.४२	१२.८८
१४.२९	१३.४३	१२.८९
१४.३०	१३.४४	१२.९१
१४.३१	१३.४५	१२.९२
१४.३२	१३.४६	१२.९५
१४.३३	१३.४९	१२.१०४-०६
१४.३४	१३.५१	१२.१०७
१४.३५	१३.५३	१२.११०
१४.३६	१३.५४	१२.११२-१४
१४.३७	१३.५५	१२.११७
१४.३८	१३.५७	१२.११९
१४.३९	१३.५८	१२.१२०
१४.४०	१३.५९	१२.१२१

ना.	र.	ग.	ना.	र.	ग.
१४.४१	१३.६०	१२.१२३	१४.९८	१३.१२८	१२.२८७
१४.४२	१३.६३	१२.१२८	१४.९९	१३.१३०	१२.२८९
१४.४३	१३.६२	१२.१२६	१४.१००	१३.१३१	१२.२९०
१४.४४	१३.६४	१२.१२९	१४.१०१	१३.१३३	१२.२९२
१४.४५	१३.६७	१२.१३२	१४.१०२	१३.१३४	१२.२९३
१४.४६	१३.६८	१२.१३४	१४.१०१ अ	१३.१३५	१२.२९४
१४.४७	१३.६९	१२.१४४	१४.१०२ अ	१३.१३७	१२.३०२
१४.४८	१३.७०	१२.१४६	१४.१०७	१३.१४२	१२.३११
१४.४९	१३.७१	१२.१४७	१४.१०८	१३.१४३	१२.३१२
१४.५०	१३.७२	१२.१४५	१४.१०९	१३.१४४	१२.३१३
१४.५१	१३.७५	१२.१५०	१४.११०	१३.१४५	१२.३१४
१४.५५	१३.८१	१२.१५७-५९	१४.१११	१३.१४६	१२.३१५
१४.५६	१३.८२	१२.१६०	१४.११२	१३.१४७	१२.३१६
१४.५९	१३.८४	१२.१६७	१४.११३	१३.१४८	१२.३१७
१४.६०	१३.८५	१२.१६८	१४.११८	१३.१५३	१२.३२२
१४.६३	१३.८८	१२.१७२	१४.१२२	१३.१५७	१२.३२६
१४.६४	१३.८९	१२.१७३-८१	१४.१२३	१३.१५८	१२.३२७
१४.६५	१३.९०	१२.१८४	१४.१२४	१३.१५९	१२.३२८
१४.६६	१३.९१	१२.१८५-९१	१४.१२५	१३.१६०	१२.३२९
१४.६७	१३.९४	१२.२१०	१४.१२६	१३.१६२	१२.३३१
१४.६८	१३.९५	१२.२१३	१४.१२७	—	—
१४.६९	१३.९६	१२.२१४	१४.१२८	१३.१६४	१२.३३३
१४.७४	१३.१०१	१२.२३७	१४.१२९	१३.१६५	१२.१३४
१४.७६	१३.१०३	१२.२४१	१४.१३०	१३.१६६	१२.३४१
१४.७७	१३.१०४	१२.२४२	१४.१३१	१३.१६७	१२.३३७
१४.७८	१३.१०५	१२.२४३	१४.१३२	१३.१६८	१२.३३८
१४.७८ अ	१३.१०६	१२.२४४	१४.१३३	१३.१६९	१२.३३९
१४.७९	१३.१०७	१२.२४५	१४.१३४	१३.१७०	१२.३४१
१४.८०	१३.१०९	१२ २४७	१४.१३५	१३.१७१	१२.३४३
१४.८१	१३.११०	१२.२४८	१४.१३६	१३.१७२	१२.३४४
१४.८२ अ	१३.११२	१२.२५९	१४.१३७	१३.१७३	१२.३४५
१४.८३ अ	१३.११३	१२.२६१-६२	१४.१३८	१३.१७४	१२.३४६
१४.८७	१३.११६	१२.२७३	१४.१३९	१३.१७५	१२.३४७
१४.८८	१३.११७-१८	१२.२७४	१४.१४०	१३.१७६	१२.३४८
१४.९०	१३.११९	१२.२७६	१४.१४१	१३.१७७	१२.३४९
१४.९१	१३.१२०	१२.२७७	१४.१४२	१३.१७८	१२.३५०
१४.९६	१३.१२५	१२.२८३	१४.१४३	१३.१७९	१२.३५१
१४.९७	१३.१२७	१२.२८[illegible]	१४.१४४	१४.१८०	१२.३५२

ना.	द.	स.
१४.१४५	१३.१८१	१२.३५३
१४.१४६	१३.१८२	१२.३५४
१५.१	१४.१	१३.१
१५.२	१४.५	१३.५
१५.३	—	१३.६
-१५.४	—	१३.७, १२
१५.५	१४.६	१३.२४
१५.७	१४.९	१३.३७
१५.८	—	१३.३८
१५.९	१४.१०	१३.३९
१५.१०	१४.११	१३.४०
१५˚११	१४.१२	१३.४१-५२
१५.१२	१४.१४	१३.५५
१५.१३	१४.१५	१३.५६
१५.१४	१४.१५ अ	१३.५७
१५.१५	१४.१६	१३.५८
१५.१६	१४.१७	१३.५९-६१
१५.२३	१४.२४	१३.६९
१५.२३ आ	१४.२६	१३.७१-७८
१५.२४	१४.२७	१३.७९
१५.२५	१४.२८	१३.८२-९५
१५.२६	१४.२९	१३.९६
१५.२७	—	१३.११०
१५.२८	१४.३२	१३.११२-१७
१५.२९	१४.३३	१३.११८
	१४.३४	
१५.३०	१४.३५	१३.११९
१५.३१	१४.३६	१४.१२५-२७
१५.३२	१४.३७	१३.१२८
१५.३६	१४.४१	१३.१३३
१५.३७	१४.४२	१३.१३४
१५.३८	१४.४३	१३.१३५
१५.३९	१४.४४	१३.१४७-४८
१५.४०	१४.४५	१३.१४९
१५.४५	१४.५५	१३.१५९
१६.१	१५.१	१४.१
१६.२	१५.२	१४.२
१६.३	१५.३	१४.३

ना.	द.	स.
१६.४	१५.४	१४.४
१६.४अ	—	—
१६.५	१५.५	१४.८
१६.६	१५.६	१४.९
१६.७	१५.७	१४.१०
१६.८	१५.८	१४.१३
१६.९	१५.९	१४.१५
१६.१०	१५.१०	१४.१६
१६.११	१५.११	१४.१८
१६.१२	१५.१२	१४.२२
१६.१३	१५.१३	१४.२५
१६.१४	१५.१४	१४.२७
१६.१५	१५.१५	१४.२८-२९
१६.१६	१५.१६	१४.४८
१६.१७	१५.१७	१४.४९-५१
१६.१८	१५.१८	१४.५३
१६.१९	१५.१९	२१.६८-९२
१६.२०	१५.२०	१४.६०
१६.२१	१५.२१	१४.६१
१६.२२	१५.२२	१४.६२-६३
१६.२३	१५.२३	१४.६४
१६.२४	१५.२४	१४.६५
१६.२५	१५.२५	१४.६६ ६९
१६.२६	—	१४.१०२
१६.२७	—	१४.१३७
१६.२८	१५.२६	१४.१३९/१
१२.२५अ	२७.४	४७.४-६
१६.३६	—	४७.८
१६.३७	—	४७.३६
१६.३८	—	४६.३७
१६.४०	—	४७.३८
१६.४१	—	४७.३९
१६.४२	—	४७.४१
१६.४३	—	४७.४०
१६.४४	—	४७.४२
१६.४५	—	४७.४३
१६.४६	—	४७.४४
१६.४७	—	४७.४६

ना.	द.	स.
१६.४८	—	४७.४७
१६.४९	—	४७.४८
१६.५०	२७.४९	४७.४९-५६
१६.५१	२७.५०	४७.५७
१६.५२	२७.५१	४७.७७
१६ ५३	२७.५२	४७.७८
१६.५४	२७.५२ अ	४७ ८८
१६.५५	२७.५३	४७ ८९
१६.५६	२७.५४	४७.१००
१६.५७	२७.५५	४७.१०१
१६.५८	२७.५६	४७.१०२
खंड १७	खंड १०	खंड २८
१८.१	११.१	१५.१३/२-१७
१८.२	११.२	१५.१८
१८.३	११.३	१५.१९
१८.४	११.४	१५.२०
१८.५	११.५	१५.२१
१८.६	११.६	१५.२२
१८.७	११.७	१५.२३-३०
१८.८	११.८	१५.३३
१८.९	११.९	१५.३४-३५
१८.१०	११.१०	१५.३६
१९.१	१२.१	३१.१
१९.२	१२.२	३१.२-७
१९.३	१२.३	३१.१३
१९.४	१२.४	३१.१४
१९.५	१२.५	३१.१५-४६
१९.६	१२.६	३१.१२९
१९.७	१२.७	३१.१३०
१९.८	१२.८	३१.१३१
१९.९	१२.९	३१.१३२-३९
१९.१०	१२.१०	३१.१४०
१९.११	१२.११	३१.१४१
१९.१२	१२.१२	३१.१४२-४५
१९.१३	१२.१३	३१.१४६
१९.१४	१२.१३ अ	३१.१४७
१९.१५	१२.१४	३१.१४८
१९.१	१२.१५	३१.१५४

ॐः

ना.	द.	स.
१९.१७	१२.१६	३१.१५७
१९.१८	१२.१७	३१.१५८
१९.१९	१२.१८	३१.१६१
१९.२०	१२.१९	३१.१६२
१९.२१	१२.२०	३१.१६७
१९.२२	१२.२१	३१.१६८
१९.२३	१२ २२	३१.१७२
१९.२४	१२.२२ अ	३१.१७३
१९ २५	१२.२३	३१.१७४
१९.२६	१२.२४	३१.१७५
१९.२७	१२.२५	३१.१७६
१९.२८	१२.२६	३१.१७८
२०.१	३०.१	५५.१
२०.२	३०.२	५५.२
२०.३	३०.३	५५.३
२०.४	३०.४	५५.४
२०.५	३०.५	५५.५
२०.६	३०.६	५५.६
२०.७	३०.७	५५.७
२०.८	३०.८	५५.८
२०.९	३०.९	५५.९
२०.१०	३०.१०	५५.१०
२०.११	३०.११	५५.११
२०.१२	३०.११ अ	५५.१२-१५
२०.१३	३०.१२	५५.१६
२०.१४	३०.१३	५५.२०
२०.१५	३०.१४	५५.२१
२०.१६	३०.१५	५५.२२
२०.१७	३०.१६	५५.२४
२०.१८	३०.१७	५५.२५
२०.१९	३०.१८	५५.२६
२०.२०	३०.१९	५५.२७
२०.२१	३०.२१	५५.२८-३१
२०.२२	३०.२२	५५ ३८
२०.२३	३०.२३	५५.३९
२०.२४	३०.२४	५५.४०
२०.२५	३०.२५	५५.४१-४४
२०.२६	३०.२६	५५.४५

ना.	द.	स.
२०.२७	३०.२७	५५.४६
२०.२८	३०.२८	५५.४८
२०.२९	३०.२९	५५.५२
२०.३०	३०.३०	५५.५३
२०.३१	३०.३१	५५.५४-६८
२०.३३	३०.३२	५५.७१
२०.३४	३०.३३	५५.७२
२०.३५	३०.३४	५५.७३
२०.३६	३०.३५	५५.७४
२०.३६ अ	३०.३६	५५.७५-८४
२०.३७	३०.३७	५५.९४
२०.३८	३०.३८	५५.९६
२०.३९	३०.३९	५५.१२०
२०.४१	३०.४१	५५.१२३
२०.४२	३०.४२	५५.१२४
२०.४३	३०.४३	५५.१२५
२०.४४	३०.४४	५५.१२६
२०.४५	३०.४५	५५.१२७
२०.४६	३०.४६	५५.१२९
२०.४७	३०.४७	५५.१३३
२०.४८	३०.४८	५५.१३४-४०
२०.४९	३०.४९	५५.१४१
२०.५०	३०.५०	५५.१४२
२०.५१	३०.५१	५५.१४३-४९
२०.५२	३०.५२	५५.१५०
२०.५३	३०.५३	५५.१६९
२०.५४	३०.५४	५५.१७०
२०.५५	३०.५५	५५.१७१
२०.५६	३०.५६	५५.१८८
२०.५७	३०.५७	५५.१८९
२०.५८	३०.५८	५५.१९१
२०.५९	३०.५९	५५.१९२
२०.६०	३०.६०	५५.१९३
२०.६१	३०.६१	५५.१९४
२०.६२	३०.६२	५५.१९५
२१.१	२२.१	५६.१
२१.२	२२.२	५६.२-४
२१.३	२२.३	५६.५

ना.	द.	स.
२१.४	२२.४	५६.६
२१.५	२२.५	५६.७
२१.६	२२.६	५६.८
२१.७	२२.७	५६.९
२१.८	२२.८	५६.१०
२१.९	२२.९	५६.११
२१.१०	२२.१०	५६.१२-१४
२१.११	२२.११	५६.१५
२१.१२	२२.१२	५६.१६
२१.१३	२२.१३	५६.१८
२१.१४	२२.१४	५६.१९
२१.१५	२२.१५	५६.२०
२१.१६	—	५६.२१
२१.१७	२२.१६	५६.२२-२९
२१.१८	२२.१७	५६.३०
२१.१९	२२.१८	५६.३२
२१.२०	२२.१८ अ	५६.३३
२१.२१	२२.१९	५६.३३-४२
२१.२२	२२.२०	५६.४३
२१.२३	२२.२१	५६.४५
२१.२४	२२.२२	५६.४६
२१.२५	२२.२३	५६.५०
२१.२६	२२.२४	—
२१.२७	२२.२५	—
२१.२८	२२.२६	५६.५१
२१.२९	२२.२७	५६.५२
२१.३०	२२.२८	५६.५३
२१.३२	२२.२९	५६.५४-६०
२१.३३	२२.३०	५६.६१
२१.३३ अ	२२.३१	५६.६२-६७
२१.३४	२२.३२	५६.६८
२१.३५	२२.३३	५६.६९
२१.३६	२२.३४	५६.७०-७३
२१.३७	२२.३५	५६.७४
२१.३८	२२.३६	५६.७५
२१.३९	२२.३७	५६.७६
२१.४०	२२.३८	५६.७७-८३
२१.४१	२२.४०	५६.८६

ना.	द.	स.
२१.४२	२२.४१	५६.१००
२१.४३	२२.४२	५६.१०१
२१.४४	२२.४३	५६.१०२-०५
२१.४५	२२.४४	५६.१०६
२१.४६	२२.४५	५६.१०७
२१.४७	२२.४७	५६.१०९
२२.१	२३.१	३०.५
२२.२	२३.२	३०.६-९
२२.३	२३.३	३०.१०
२२.४	२३.४	३०.११-२३
२२.५	२३.५	३०.२४
२२.६	२३.६	३०.२५
२२.७	२३.७	३०.२६-३२
२२.८	२३.८	३०.३३
२२.९	२३.९	३०.३४-३९
२२.१०	२३.१०	३०.४०
२२.११	२३.११	३०.४१
२२.१२	२३.१२	३०.४२
२२.१३	२३.१३	३०.४३
२२.१४	२३.१३ अ	३०.४४
२२.१५	२३.१४	३०.४५-४८
२२.१६	२३.१५	३०.४९
२२.१७	२३.१६	३०.५०
२२.१८	२३.१७	३०.५१-५६
२३.१	१७.१	३९.२-७
२३.२	१७.२	३९.८
२३.३	१७.३	३९.९
२३.४	१७.४	३९.१४
२३.५	१७.५	३९.१५-२७
२३.६	१७.६	३९.२८
२३.७	१७.७	३९.३०
२३.८	१७.८	३९.३१
२३.९	१७.९	३९.३२
२३.१०	१७.१०	३९.३३
२३.११	१७.११	३९.३४
२३.१२	१७.१२	३९.३५
२३.१३	१७.१३	३९.३८
२३.१४	१७.१४	३९.४३-४६
२३.१५	१७.१५	३९.४७
२३.१६	१७.१६	३९.४८
२३.१७	१७.१७	३९.४९
२३.१८	१७.१८	३९.५०
२३.१९	१७.१९	३९.५१
२३.२०	१७.२०	३९.५३-५७
२३.२१	१७.२१	३९.५८
२३.२२	१७.२२	३९.६०
२३.२३	१७.२३	३९.६२
२३.२४	१७.२४	३९.६४-६७
२३.२५	१७.२५	३९.६८
२३.२६	१७.२६	३९.६९
२३.२७	१७.२७	३९.७२-७६
२३.२८	१७.२८	३९.७८
२३.२९	१७.२९	३९.७९
२३.३०	१७.३०	३९.८०
२३.३१	१७.३१	३९.८१-८३
२३.३२	१७.३२	३९.११६
२३.३३	१७.३३	३९.११७
२३.३४	१७.३४	३९.११८
२३.३५	१७.३५	३९.११९
२३.३६	१७.३६	३९.१२०
२३.३७	१२.३७	३९.१२१
२३.३८	१७.३८	३९.१२२
२३.३९	१७.३९	३९.१२३
२३.४०	१७.४०	३९.१२४
२३.४१	१७.४१	३९.१२५
२३.४२	१७.४३	३९.१२९-३३
२३.४३	१७.४४	३९.१३४
२३.४४	१७.४५	३९.१४१
२३.४५	१७.४६	३९.१४४
२३.४६	१७.४७	३९.१५०
२३.४७	१७.४८	३९.१५१
२३.४८	१७.४९	३९.१५२

ना.	द.	स.
२७.२०	१९.२१	३६.२३३-३५
२७.२१	१९.२२	३६.२३६
२७.२२	१९.२३	१६.२३७
२७.२३	१९.२४	३६.२३८
२७.२४	१९.२६	३६.२४०
२७.२५	१९.४१	३६.२५१
२७.२६	१९.४२	३६.२५२
२७.२७	१९.४३	३६.२५३
२८.४	—	४८.७०
२८.७	२८.९	४८.७५
२८.१२	२८.१४	४८.८३
२८.१७	२८.१८	४८.१०२
२८.१८	२८.१९	४८.१०३
२८.२०	२८.२१	४८.१०९-२०
२८.२१	२८ २२	४८.१२२
२८.२२	२८.२३	४८.१२३
२८.२३	२८.२४	४८.१२४
२८.२३ अ	२८.२५	—
२८.२७	२८.२८/२	४८.१२८-५०
२८.२८	२८.२९	४८.१५१
२८.२९	२८.३०	४८.१५९-६८
२८.३०	२८.३१	४८.१७३
२८.३१	२८.३२	४८.१७४
२८.३२	२८.३३	४८.१७८
२८.३३	२८.३४	४८.१८०-८१
२८.३४	२८.३४ अ	४८.१८२
२८.३५	२८.३५	४८.१८३
२८.३६	२८.३६	४८.१८४
२८.३७	२८.३७	४८.१८६
२८.३८	२८.३७ अ	४८.२०४-२८
२८.३९	२८.३८	४७.२३३
२८.४०	२८.३९	४८.२३४
२८.४१	२८.४०	४८.२७३
२८.४४	२९.३	४९.१
२८.४६	२९.५	४९.२-१४
२८.४७ अ	—	—
२८.५० अ	२९.१०/१	५०.१४

ना.	द.	स.
२८.५२	—	—
२८.५२ अ	—	—
२८.६० अ	—	—
२८.७२ अ	—	—
२९.४	३१.४	५७.१
२९.५	३१.५	५७.२
२९.६	३१.६	५७.३
२९.७	३१.७	५७.१६-२६
२९.८	३१.८	५७.२७
२९.९	३४.१०३	६४.२३७
२९.१०	३४.१०४	६४.२३८
२९.११	—	५७.३१
२९.१२	३१.१०	५७.३५
२९.१३	३१.११	५७.३८
२९.१४	३१.१२	५७.३९
२९.१५	३१.१३	५७.४३
२९.१६	३१.१४	५७.४१
२९.१७	३१.१५	५७.४२
२९.२०	३१.१८	५७.४९-५२
२९.२२	३१.२०	५७.५३
२९.२३	३१.२१	५७.५४
२९.२४	३१.२२	५७.५७
२९.२५	३१.२३	५७.५९
२९.२७	३१.२५	५७.६४
२९.२८	३१.२६	५७.६९
२९.४४	३१.४६	५७.९२
२९.४४ इ	—	—
२९.४८	३१.५१	५७.१७०
२९.५० अ	—	—
२९.६२ अ	—	—
२९.६६	३१.६९	५७.२५१-५८
२९.६९	३१.७२१	५७.२६३
२९.७०	३१.७३	५७.२६५
२९.७१	३१.७४	५७.२६६
२९.७२	३१.७५	५७.२६७
२९.७६	३१.७९	५७.२७२
२९.८६ अ	—	—

ना.	द.	स.	ना.	द.	स.
खंड २४[1]	खंड १८[1]	खंड ४४[1]	२५.२९	६.६५	२५.३७४
२५.१	६.१	२५.८१	२५.३०	६.७०	२५.३८६-९४
२५.२	६.२०	२५.१०९	२५.३१	६.७४	२५.३९७
२५.३	६.२१	२५.११०	२५.३२	६.७५	२५.४००-०९
२५.४	६.२२	२५.११४	२५.३३	६.७६	२५.४१९
२५.५	६.२३	२५.११५	२५.३४	६.७७	२५.४५३
२५.६	६.२४	२५.१२५	२५.३५	६.७८	२५.४५४
२५.७	६.२५	२५.१२६	२५.३६	६.६९	२५.३८५
२५.८	६.२६	२५.१२७	२५.३७	—	२५.३३३
२५.९	६.२७	२५.१२८	२५.३८	—	२५.७५७-७३
२५.१०	६.२८	२५.१२९	२५.३९	६.११४	२५.७८९
२५.११	६.२९	२५.१३०	खंड २६[2]	खंड ५[2]	खंड २१[2]
२५.१२	६.३०	२५.१३१-५२	२७.१	१९.१	३६.२०
२५.१३	६.३१	२५.१५३	२७.२	१९.२	३६.१०७
२५.१४	६.३२	२५.१६५-७०	२७.३	१९.४	३६.१११
२५.१५	६.३३	२५.२३८	२७.४	१९.५	३६.११२
	३३.७		२७.५	१९.६	३६.११३
२५.१६	६.३४	२५.२३९	२७.६	१९.७	३६.११४
२५.१७	६.३७	२५.२४१	२७.७	१९.८	३६.४८-५४
२५.१८	६.४०	२५.२४५	२७.८	१९.९	३६.१३८
२५.१९	६.४३	२५.२४७-५६	२७.९	१९.१०	३६.१३९
२५.२०	६.४४	२५.२६४	२७.१०	१९.११	३६.१४०
२५.२१	६.४९	२५.२९३	२७.११	१९.१२	३६.१४१
२५.२२	६.५०	२५.२९७	२७.१२	१९.१३	३६.१४३
२५.२३	६.५३	२५.३०९	२७.१३	१९.१४	३६.१४४
२५.२३अ	६.५२	२५.३०२-०५	२७.१४	१९.१५	३६.१४५-४७
२५.२४	६.५४	२५.३१०-२७	२७.१५	१९.१६	३६.१४८
२५.२५	६.५६	२५.३४१	२७.१६	१९.१७	३६.२२४
२५.२६	६.५७	२५.३४६	२७.१७	१९.१८	३६.२२५-३०
२५.२७	६.५८	२५.३५८-६८	२७.१८	१९.१९	३६.२३१
२५.२८	६.६४	२५.३७३	२७.१९	१९.२०	३६.२३२

[1] ना० द० में स० के केवल निम्नलिखित छन्द नहीं हैं : ४४. २-२०, ४४. २६-२८, ३०-८७, ४४.५०-५२, ४४.५७, ४४.५९-६१, ४४.६३-७८, ४४.८०, ४४.८७, ४४.९८-४४.१२२, ४४.१२९-८०, ४४.१४७, ४४.१५६, ४४.१५७, ४४.१५९ ४४.१६३-७४, ४४.१७१ ४४.१९२, ४४.१९३, ४४.१९५, ४४.१९६, ४४.२०३-२०५ ।

[2] द० में ना० २६.२३ (=स० २१.९४-९९) नहीं है तथा ना० में स० २१.२, २१ २१.१०-२५, २१.२७-९५, २१.३२-५४, २१.६८-९२, २१.१००-२०९ नहीं हैं। ना० तथा द० के सभी छन्द हैं।

ना.	द.	स.
२७.२०	१९.२१	३६.२३३-३५
२७.२१	१९.२२	३६.२३६
२७.२२	१९.२३	१६.२३७
२७.२३	१९.२४	३६.२३८
२७.२४	१९.२६	३६.२४०
२७.२५	१९.४१	३६.२५१
२७.२६	१९.४२	३६.२५२
२७.२७	१९.४३	३६.२५३
२८.४	—	४८.७०
२८.७	२८.९	४८.७५
२८.१२	२८.१४	४८८३
२८.१७	२८.१८	४८.१०२
२८.१८	२८.१९	४८.१०३
२८.२०	२८.२१	४८.१०९-२०
२८.२१	२८ २२	४८.१२२
२८.२२	२८.२३	४८.१२३
२८.२३	२८.२४	४८.१२४
२८.२३ अ	२८.२५	—
२८.२७	२८.२८/२	४८.१२८-५०
२८.२८	२८.२९	४८.१५१
२८.२९	२८.३०	४८.१५९-६८
२८.३०	२८.३१	४८.१७३
२८.३१	२८.३२	४८.१७४
२८.३२	२८.३३	४८.१७८
२८.३३	२८.३४	४८.१८०-८१
२८.३४	२८.३४ अ	४८.१८२
२८.३५	२८.३५	४८.१८३
२८.३६	२८.३६	४८.१८४
२८.३७	२८.३७	४८.१८६
२८.३८	२८.३७ अ	४८.२०४-२८
२८.३९	२८.३८	४७.२३३
२८.४०	२८.३९	४८.२३४
२८.४१	२८.४०	४८.२७३
२८.४४	२९.३	४९.१
२८.४६	२९.५	४९.२-१४
२८.४७ अ	—	—
२८.५० अ	२९.१०/१	५०.१४

ना.	द.	स.
२८.५२	—	—
२८.५२ अ	—	—
२८.६० अ	—	—
२८.७२ अ	—	—
२९.४	३१.४	५७.१
२९.५	३१.५	५७.२
२९.६	३१.६	५७.३
२९.७	३१.७	५७.१६-२६
२९.८	३१.८	५७.२७
२९.९	३४.१०३	६४.२३७
२९.१०	३४.१०४	६४.२३८
२९.११	—	५७.३१
२९.१२	३१.१०	५७.३५
२९.१३	३१.११	५७.३८
२९.१४	३१ १२	५७.३९
२९.१५	३१.१३	५७.४३
२९.१६	३१.१४	५७.४१
२९.१७	३१.१५	५७.४२
२९.२०	३१.१८	५७.४९-५२
२९.२२	३१.२०	५७.५३
२९.२३	३१.२१	५७.५४
२९.२४	३१.२२	५७.५७
२९.२५	३१.२३	५७.५९
२९.२७	३१.२५	५७.६४
२९.२८	३१.२६	५७.६९
२९.४४	३१.४६	५७.९२
२९.४४ इ	—	—
२९.४८	३१.५१	५७.१७०
२९.५० अ	—	—
२९.६३ अ	—	—
२९.६६	३१.६९	५७.२५१-५८
२९.६९	३१.७२२	५७.२६३
२९.७०	३१.७३	५७.२६५
२९.७१	३१.७४	५७.२६६
२९.७२	३१.७५	५७.२६६
२९.७६	३१.७९	५७.२७२
२९.८६ अ	—	—

ना.	द.	स.
२९.८७	३१.८९	५७.३१४-२१
खंड ३०[1]	खंड ३२[1]	खंड ५८[1]
३१.१ अ	—	—
३१.३	—	—
३१.६	६.३३ / ३३.७	२५.२३८ / ६१.१४३
३१.७ अ	—	—
३१अ.२२	३३.२३	६१.२८९अ
३१अ.२४	३३.२५	६१.२९९
३१अ.३१	—	—
३१अ.४३	—	—
३१अ.५४	—	६१.३५७
३२.४ अ	—	—
३२.२३	—	—
३२.३५ अ	—	—
३२.४४ अ	—	—
३२.१२५	३३.१७६	६१.८२३ अ
३२.१४६	—	६१.९३५-७३
३३.३०	—	—
३३.३७	३३.२३४	—
३३.३८	३३.२३५	—
३३.४८	३३.२४६	६१.११७५
३३.४९	२.३८ / ३३.२४७	६१.११७६
३३.५१	सं०	४७.३६
३३.५२	—	—
३३.५३	—	—
३३.५४	—	—
३३.५७	—	—
३३.६८	—	—

ना.	द.	स.
३३.६९	—	—
३३.७०	—	—
३३.८६	—	—
३३.८९ अ	—	—
३३.९०	—	—
३३.९५	—	—
३३.९८	—	—
३३.९९	—	—
३३.१०४ अ	—	—
३३.१०५	—	—
३४.१८	३३.३०७	६१.१३७०
३४.५२ अ	—	—
३४.६८	—	५२.६८
३४.६९	—	५२.६९
३६.४	—	—
३६.२५	—	—
३७.५	—	—
३७.६	—	—
३८.४	३३.५२३	—
३८.४ अ	—	—
३८.६	—	—
३८.१५	—	—
३८.१९	३५.३-६अ	६२.३-७
३८.२३	३५.९ अ	६२.११
३८.२४	३५.१०	६२.१५
३८.२५	३५.११	६२.१६
३८.२६	३५.१२	६२.२२-२५
३८.२७	३५.१३	६२.२६
३८.२८	३५.१४	६२.२८
३८.२९	३५.१५	६२.२९

[1] ना. ३०.४७ स० ५८.२३८ द. में नहीं है, द० के निम्नलिखित ना. में नहीं हैं द. ३२.१ (=स. ५८.५), ३२.२३ (=स. ५८.१७९), ३२.२२ (=स. ५८.१८८), ३२.३३ (=स ५८.१९८), ३२.३७ (=स. ५८.१९८), ३२.४१ (=स० ५८.२१३), ३२.५५ (=स ५८.२५९), ३२.५९-६० (=स. ५८.२६३-६७) और स. के निम्नलिखित छन्द ना. द. में नहीं हैं स. ५८.६, ५८.२४-५०, ५८.५२ ५९, ५८.६३-७२, ५८.७४-७६, ५८.७८-७५, ५८.९४-१३० ५८.१४५-५२, ५८.१५४-५६, ५८.१५९, ५८.१६१-६६, ५८.१९२-९४, ५८.१९६-९७, ५८.२०३ ५८.२१४-१५, ५८.२१७/१-२२०/१, ५८.२२२-२३, ५८.२३५-३७, ५८.२४६-४८, ५८.२५८ ।

ना.	द.	स.
३८.३०	३५.१६	६२.३०
३८.३१	३५.१८	६२.३१
३८.३२	३५.१९	६२.३२
३८.३३	३५.२०	६२.३३
३८.३४	३५.२१	६२.३४
३८.३५	३५.२२	६२.३५
३८.३६	३५.२३	६२.३६
३८.३७	३५.२४	६२.३७-४०
३८.३८	३५.२५	६२.४२
३८.३९	३५.२६	६२.४४
३८.४०	३५.२७	६२.४५
३८.४१	३५.२८	६२.४६
३८.४२	३५.२९	६२.४७
३८.४३	३५.३०	६२.६७-७०
३८.४४	—	६२.७३
३८.४५	—	६२.७४
३८.४६	—	६२.७५
३८.५४	३५.३४	६२.७६-७८
३८.५६	३५.३५	६२.७९
३८.५७	३५.३२	६२.७२
३८.५८	३५.३७	६२.८३-८७
३८.५९	३५.३८	६२.९०
३८.६०	३५.३९	६२.९१
३८.६१	३५.४०	६२.९२
३८.६२	३५.४१	६२.९३
३८.६३	३५.४२	६२.९८
३८.६४	३५.४३	६२.९५
३८.६५	३५.४४	६२.९६
३८.६६	३५.४५	६२.९७
३८.६७	३५.४६	६२.९८
३८.६८	३५.४७/१	६२.९९
३८.६९	३५.४७/२	६२.१००
३८.७१	३५.५० अ	६२.१०२
३८.७२	३५.५१	—
३९.१	—	—
३९.८	३४.७	६४.११
३९.९	—	६४.१३
३९.१०	३४.९	६४.१४-२२
३९.२४	३९.२२	६४.१९
३९.२९	—	६४.२१७
३९.३०	—	६४.२२०
३९.३१	—	—
३९.३२	३४.२७	६४.७४
३९.३४	—	—
३९.३५	३४.२९	६४.७८
३९.३८	—	—
३९.४२/१	—	—
३९.४२/२	—	६४.१३७
३९.४६	३४.४२	६४.१२५
३९.४७	३४.४३	६४.१२६
३९.४८	३४.४४	६४.१२७
३९.४९	३४.४५	६४.१२८
३९.५०	३४.४६	६४.१२९
३९.५७	३४.५५	६४.१४०
३९.६२	३४.५७	६४.१३५
३९.६४	—	—
३९.६६	—	—
३९.६९	३४.६३	६४.१५२
३९.७१	—	—
३९.७३	३४.६८	६४.१९०
३९.७७	३४.६९	६४.१५७
३९.७८	३४.७०	६४.१६६
३९.७९	३४.७१	६४.१५९
३९.८०	—	—
३९.८४	—	—
३९.९२	—	—
३९.९४	३४.८५	६४.१९७
३९.९५	३४.८६	६४.१९८
३९.९६	३४.८७	६४.१९९
३९.९७	३४.८८	६४.२००
३९.९८	३४.८९	६४.२०१
३९.९९	३४.९०	६४.२०२
३९.१००	३४.९१	६४.२०३-०८
३९.१०१	—	६४.२०९
३९.१०२	—	६४.२१०
३९.१०३	—	६४.२११

ना.	द.	स.	ना.	द.	स.
३९.१०४	—	६४.२२२	४०.३	३४.१४५	६४.४१०
३९.१०५	३४.९६ / ३४.९८	६४.२२४	४०.४	३४.१४६	६४.४११
			४०.५	३४.१४७	६४.४१३
३९.१०६	—	—	४०.६	३४.१४८	६४.४१४
३९.१०९	३४.१००	६४.२२६	४०.७	३४.१४९	६४.४१९
३९.११०	३४.१०१	६४.२२७	४०.८	३४.१५०	६४.४२१
३९.१११	३४.१०२	६४.२२८-३६	४०.९	३४.१५१	६४.४२५
३९.११२	—	—	४०.१०	३४.१५२	६४.४२७
३९.११३	३४.१०८	६४.२३८	४०.११	३४.१५३	६४.४२८
३९.११७	३४.१०९	६४.२६४-७१	४०.१२	३४.१५४	६४.४२९
३९.१२२	—	६४.३३६	४०.१३	३४.१५५	६४.४३०
३९.१२५	३४.११७	६४.३४७	४०.१४	३४.१५६	६४.४३१
३९.१२६	३४.११८	६४.३४८	४०.१५	३४.१५७	६४.४३३
३९.१२७	३४.११९	६४.३४९	४०.१७	३४.१५८	६४.४३५
३९.१२८	३४.१२०	६४.३५०	४०.१८	३४.१५९	६४.४४१
३९.१२९	३४.१२१	६४.३५१	४०.१९	३४.१६०	६४.४४३
३९.१३०	३४.१२२	६४.३५२	४०.२०	३४.१६१	६४.४४५
३९.१३१	३४.१२३	६४.३५३	४०.२१	३४.१६२	६४.४४७
३९.१३२	३४.१२५	६४.३५५-५६	४०.२२	३४.१६३	६४.४४८
३९.१३३	३४.१२४	६४.३५४	४०.२३	—	६४.४४९
३९.१३४	३४.१२६	६४.३५७	४०.२४	३४.१६६	६४.४५०
३९.१३५	३४.१२८	६४.३५९	४१.७	—	—
३९.१३६	३४.१२९	६४.३६१	४१.१३	३६.१	६६.१००
३९.१३७	३४.१२ अ	६४.३६२	४१.१४	—	—
३९.१३९	—	—	४१.१५	—	—
३९.१४१	—	—	४१.१६	—	—
३९.१४३ १	—	—	४१.१७	—	—
३९.१४५	३४.१३६	६४.३७१	४१.१८	—	—
३९.१४६	३४.१३७	६४.३७२	४१.१९	—	—
३९.१४७	३४.१३८	६३.३७२ अ	४१.२०	—	—
३९.१४८	३८.१२६[1]	६३.३७५	४१.२१	—	—
३९.१४९	३४.१३१	६४.३७४	४१.२२	—	—
३९.१५०	३४.१४०	६४.३७५	४१.२३	—	—
३९.१५१	३४.१०४	६४.२३८	४१.२४	—	—
४०.१	३४.१४३	६४.३९५	४१.२५	—	—
४०.२	३४.१४४	६४.३९६	४१.२६	—	—

१ यह छन्द-संख्या रॉट क० के वाजसनेय अंक की है, वाजसनेय खंड द० में नहीं है।

ना.	द.	स.
४१.२७	—	५८.५३ ५७,१
४१.२८	—	—
४१.२९	—	—
४१.३०	—	—
४१.३१	—	—
४१.३१ अ	—	—
४१ ३२	—	—
४१.३४	—	—
४१.३५	—	—
४१.३६	—	—
४१.३७	—	—
४२.१	३६.१	६६ १००
४२.२	३६.२	६६.१०१
४२.३	३६.३	६६.१०२
४२.४	—	—
४२.९	—	—
४२.१३	३६.७[1]	६६.१२५
४२ १४	३६.८[1]	६६.१२७
४२.१५	३६ ९[1]	६६.१२८
४२.१८	३६.१३[1]	६६.१३३
४२.१९	३६.१६/१[1]	६६.१३५ १
४२.२०	३६ १४/१[1]	६६.१३७/२
४२.२१	३६.१४/२[1]	६६.१६७/१
४२.२२	३६ १६/२[1]	६६.१३५/२
४२.२३	—	—
४२.२८	—	६६.१४४
४२.२९	—	—
४२.३०	—	६६.१८०
४२.३१	३६ २५	६६.१८१
४२.३२	३६.२६	६६ १८२
४२.३३	३६.२७	६६.१८३
४२.३४	३६.२९	६६.१८४
४२.३५	३६.३१	६६.१८५
४२.३६	—	६६.१८६
४२.३७	३६.३२	६६.१८७
४२.३८	३६.३३	६६.१८८

ना.	ब.	स.
४२.३९	३६.३४	६६.१९०
४२.४०	—	६६.१९१
४२.५५	३६.५०	६६.२२०-२३
४२.५६	३६.५१	६६ २२४
४२.६६	३६.६१	६६.२३८
४२.६८	३६.६३	६६.२४०
४२.७४	—	—
४२.८२	—	—
४२.८३	—	६६.२५६-२६५/१
४२.८४	३६.७६	६६.२७०
४२.८५	३६.७७	६६.२७२
४२.८६	३६.७८	६६.२७३
४२.८७	३६.७९	६६.२७४
४२.८८	३६.८०	६६.२७५
४२.८९	३६.८१	६६.२७७
४२.९०	३६.८२	६६.२८०
४२.९१	३६.८३	६६.२८१
४२.९२	३६.८४	६६.२८५
४२.९५	—	६६.२८९-९६/१
४२.९६	३६.८८	६६.२९७
४२.९७	३६.८९	६६.२९९
४२.९७अ	३६.९१	६६.३०२ २०
४२.९८	३६.९२	६६.३२४
४२.९९	३६.९३	६६.३२५-३४
४२.१००	—	६६.३३८
४२.१०१	३६.९४	६६.३३७
४२.१०२	३६.९५	६६.३३९-५०
४२.१०५	३६.९८	६६.३५७
४२.१०६	३६.९९	६६.३५८
४२.१०७	३६.१००	६६.३५९
४२.१११	३६.१०४	६६.३६६
४२.११२	३६.१०५	६६.३६७
४२.१२२	—	६६.३८२
४२.१२५	—	—
४२.१४४	—	—
४२.१५४	३६.२०३	६६.४४३

[1] ये ग्रन्थ-संख्याएँ टॉड ६० की हैं, ग्रंथ-संख्या मात्र द० की है; द० यहाँ मुद्रित है।

ना.	द.	ध.
४२.१५५	३६.१४४	६६.४४४
४२.१५६	३६.१४५	६६.४४५
४२.१५७	—	४४.७३
४२.१६३	३६.१५१	६६.४६३
४२.१६४	३६.१५२	६६.४६४
४२.१६५	३६.१५३	६६.४६६ ७१
४२.१६६	३६.१५४	६६.४७२
४२.१६८	३६.१५६	६६.४७७
४२.१८५	३६.१७३	६६.५०३
४२.१८६	३६.१७४	६६.५०९
४२.१९०	३६.१७८	६६.५७८
४२.१९१	३६.१७९	६६.५८३
४२.१९४	—	६६.६०९
४२.१९५	३६.१९१	६६.६११
४२.१९६	—	६६.५१९
४२.१९७	—	६६.५२०-२८
४२.१९८	३६.१८४	६६.५३२
४२.१९९	३६.१८५	६६.५४८-६५
४२.२००	३६.१८६	६६.५६६
४२.२०१	—	६६.५६७-७६
४२.२०२	३६.१८८	६६.५७७
४२.२०४	३६.१९०	६६.५३३
४२.२०५	३६.१९१	६६.५३४
४२.२०६	३६.१९२	६६.५३५-४५
४२.२०७	३६.१९३	६६.६०८
४२.२०८	३६.१९४	६६ ६१०
४२.२०९	३६.१९१	६६.६११
४३.१३	—	—
४३.१७	—	६६ ९४९
४३.२६	३६.२१९	६६.६९४
४३.२७	३६.२२०	६६.६९६
४३.३६	—	६६.७१८-२४
४३.४०	३६.२३२	६६.७२८
४३.५३	—	—
४३.५६	३६.२४७	६६.७८०
४३.५७	३६.२४८	६६.७८१
४३.५८	३६.२४९/१	६६.७८२/१
४३.५९	३६.२४९,२	६६.७८२/२

ना.	द.	ध.
४३.५९अ	—	६६.७८३-९०
४३.६०	३६ २५१	६६.७९१
४३.६१	३६.२५२	६६.७९६
४३.६२	३६.२५३	६६.७९७
४३.६३	३६.२५४	६६.७९८
४३.६४	३६ २५५	६६ ७९९
४३.६५	३६.२५६	६६.८००
४३ ६६	३६.२५७	६६.८०१
४३.६७	३६.२५८	६६.८०२
४३.६८	३६.२६०	६६.८०३
४३.६९	३६.२६१	६६.८०४
४३ ७०	३६.२६२	६६ ८०५
४३.७१	३६.२६३	६६.८०६
४३.७२	—	६६.८०७-१५
४३ ७३	३६.२६४	६६.८२१
४३.७४	३६.२६५	६६.८२२-२५
४३.७५	३६.२६६	६६.८२६
४३.७६	३६.२६९	६६.८२७
४३.७८	—	—
४३.८०	३६.२९२	६६.९२८
४३.८१	३६.२७१	६६.८८६-५२
४३.८३	३६.२७२	६६.८५३
४३ ८४	३६.२७३	६६.८५४
४३.८५	३६ २७४	६६.८५५
४३.८६	३६.२७५	६६.८५६
४३.८७	३६.२७६	६६.८५७
४३.८८	३६.२७७/१	६६.८५८
४३.८९	३६.२७७,२	६६.८५९
४३.९०	३६.२७८	६६.८६०
४३.९१	३६.२७९	६६.८७१
४३.९२	३६.२८०	६६.८७२
४३.९३	३६.२८१	६६.८७३
४३.९४	३६.२८२	६६.८७४
४३.९६	३६.२८३	६६.८८७-९८
४३.९७	३६.२८४	६६.८९९
४३.९८	—	६६.९०० २७
४३.९९	३६.२८६	६६.९४६
४३.१००	३६.२८७	६६.९४७

ना.	द.	ए.
४३.१०१	३६.२८८	६६.९४८
४३.१०८	३६.२९६	६६.९८८
४३.१०९	३७.२९७	६६.८६१-७०
४३.११३	३६.३०१	६६.९५४
४३.११४	३६.३०२	६६ ९५५
४३.११५	३६.३०३	६६.९५६
४३.११६	३६.३०४	६६.९५७
४३.११७	३६.३०५	६६.९५८
४३.११८	३६.३०६	६६.९५९
४३.११९	३६.३०७	६६.९६०
४३.१२०	—	६६.९६१
४३.१२१	—	६६.९७२ ८६
४३.१२२	३६.३१०	६६.९९६
४३.१२३	—	६६.९९७-१००५
४३.१२४	३६.३१२	६६.१००६
४३.१२५	३६.३१३	६६.१००७
४३.१२८	३६.३१६	६६.१०११
४३.१२९	३६.३१७	६६.१०१२
४३.१३०	३६.३२०	६६.१०३५
४३.१३१	३६.३२१	६६.१०४१
४३.१३७	३६.३२४	६६.१०७४
४३ १३८	३६.३२६	६६.१०७५
४३.१३९	—	६६.१०७६ ७९
४३.१४०	३६.३२७	६६.१०८०
४३.१४१	३६.३२८	६६.१०८२-९६
४३.१४२	३६.३२९	६६.१०९७
४३.१४३	३६.३३०	६६.१०९८
४३.१४४	३६.३३१	६६.१०९९-१११५
४३.१४५	३६.३३२	६६.१११७
४३.१४६	३६.३३३	६६.१११८-२०
४३.१४७	३६.३३४	६६.१११६
४३.१४८	३६.३३५	६६.११२५
४३.१४९	३६.३३६	६६.११२६
४३.१६१	—	—
४३.१६२	—	६६.१२००
४३.१६४	—	—
४३.१६५	—	—

ना.	द	ह.
४३.१६७	—	—
४३.१६८	—	६६.१२३४
४३.१६९	—	६६.१२३५
४३.१७०	—	६६ १२३६-४४
४४.४	—	६६.१४४०
४४.५	३६.३६७	६६.१४४१
४४.६	३६.३६८	६६.१४४२
४४ ९	३६.३७१	६६.१४२७
४४.१०	३६.३७२	६६.१४२८
४४.११	३६.३७३	६६.१४२९ .
४४.१२	—	—
४४.१६	—	—
४४.४१	—	६६.१५१४-२०
४४.४२	—	६६.१५२२
४५.५	—	—
४५.६	—	—
४५.२६	३६.४२९	६६.१५६९
४५.२७	३६.४३०	६६.१५७०-८९
४५.३१	३६.४३५	६६.१६००
४५.३२	३६.४३६	६६.१६०१
४५.३३	३६.४३७	६६.१६०२
४५.५२	—	—
४५.५३	—	—
४५.५४	—	—
४५ ५५	—	—
४५.५६	३६.४३६	६६.१६०१
४५.५७	४६.४३७	६६ १६०२
४५.५८	—	६६.१६७६
४५.५९	३६.४५८	६६.१६८७
४५.६०	३६.४५९	६६.१६८८-९८
४५.६१	३६.४६०	६६.१७००
४५.६२	३६.४६१	६६.१७०१
४५.६३	३६.४६२	६६.१७०२
४५.६४	३६.४६३	६६.१७०३
४५.६५	३६.४६४	६६.१७०४
४५.७०	३६.४६८	६६.१७१२
४५.७१	३६.४६९	६६.१७१३

ना.	द.	स.
४५.७२	३६.४७०	६६.१७१४
४६.२	३७.२-९[1]	६७.३-१०
४६.३	३७.१०	६७.११
४६.४	३७.११	६७.१५
४६.७	—	—
४६.१०	३७.१६	६७.२०
४६.११	३७.१७	६७.२१
४६.१२	३७.१८	६७.२२
४६.१३	३७.१९	६७.४२
४६.१४	३७.२०	६७.४३
४६.१५	—	६७.८२
४६.२२	३७.३५	६७.९४
४६.२३	३७.३६	६७.९०
४६.२४	३७.३७.४३	६७.९६-१०५
४६.२६	३७.४५	६६.१०९
४६.२७	३७.४६	६६.१०९-१५
४६.२८	३७.५१	६७.११६
४६.३१	२४.६५	४५.२४९
४६.३२	—	—
४६.४३	३७.६८-७३	६७.१७६-८१
४६.४६	—	—
४६.५२	—	—
४६.५५	३७.९३	६७.२४२.४५
४६.५६	३७.९६	६७.२४६
४६.५७	३७.९७	६७.२८७
४६.५८	३७.९८-१००	६७.२४९
४६.५९	—	६७.२५०
४६.६०	—	६७.२५१
४६.६१	—	६७.२५२
४६.६२	—	६७.२५३
४६.६३	३७.१०१-१०७	६७.२५९-६५
४६.६४	—	६७.२६६
४६.६५	३७.१०८	६७.२६८
४६.६६	३७.१०९	६७.२६९
४६.६७	३७.११०	६७.२७०

ना.	द.	स.
४६.६८	३७.१११	६७.२७१
४६.६९	३७.११२	६७.२७२
४६.७०	—	—
४६.७२	३७.११३	६७.२७४
४६.७९	३७.१३६	६७.२९८
४६.८४	—	६७.३०९
४६.८५	—	६७.३१०
४६.८६	—	६७.३११
४६.८७	—	६७.३१२
४६.८८	—	६७.३१३
४६.८९	—	६७.३१४
४६.९३	३७.१४३	६७.३२१
४६.९४	३७.१४७	६७.३२२
४६.९५	३७.१४८-५५	६७.३२३-३०
४६.९६	३७.१५६	६७.३३१
४६.९८	३७.१६९	६७.३४२
४६.१००	३७.१७३	६७.३४५
४६.१०१	३७.१७४	६७.३४६
४६.१०२	३७.१७५	६७.३४८
४६.१०३	३७.१७६-८०[1]	६७.३४९-५३
४६.१०४	—	६७.३५५
४६.११३	—	—
४६.११७	३७.११८	६७.३७८
४६.११८	३७.१८९	६७.३८१
४६.११९	३७.१९५	६७.३८२
४६.१२०	३७.१९६	६७.३८३
४६.१२१	३७.१९७-९८	६७.३८४-८
४६.१२२	३७.१९९	६७.३८६
४६.१२३	३७.२००	६७.३८७
४६.१२४	—	—
४६.१३०	—	—
४६.१३४	३७.२०९	६७.४०७
४६.१३९	—	—
४६.१४१	३७.२२३	६७.४१९
४६.१४२	३७.२२४	६७.४२०

[1] ये ऊपर द० खंड ३७ में दिखाई गई समस्त छन्द-संख्याएँ खंड ३० के खंड ३४ की हैं, यह खंड नहीं है।

ना.	द.	स.	ना.	द.	स.
४६.१४३	३७.२२७[1]	६७.४३१	४६.१५८	३७.२४३	६७.४७३
४६.१४४	३७.२२८-३७[1]	६७.४३२-३४	४६.१५९	—	६७.४७४
४६.१५१	—	६७.४५६-६२	४६.१६०	३७.२५५-६५	६७.४७५-८४
४६.१५२	३७.२३८	६७.४६३	४६.१६१	३७.२६६	६७.४८५
४६.१५३	—	६७.४२१	४६.१६२	—	६७.४८६
४६.१५४	—	—	४६.१६३	—	६७.४८७
४६.१५५	३७.२४०	६७.४७०	४६.१६८	—	६७.५२१
४६.१५६	३७.२४१	६७.४७१	४६.१७७	—	६७.५६६
४६.१५७	३७.२४२	६७.४७२	४६.१७८	—	—

ना० के वे छंद और पचनिकाएँ जो स० में नहीं हैं, निम्नलिखित हैं:—

ना० १.२९ : दोहा—चतुरानन चिति जग्य कजि सजि मंडप सुथान।
सत्रु आसुर अनुसंकिसह की उच्चिष्ट उथान॥

ना० १.३० : कवित्त—चतुरानन मन चिंति असुर वधि अवनि विचारीय।
जगि जीव उच्चिष्टक··· ···क्रित हारीय।
स्वरनि अस संग्रहै हरथनह हथ्थड वच्चह।
सो उपाय सज्जिय··· ···असुर सह।
निम्मौं स सूरसंग्राम नर अरि असंख खडै सुपल।
समपरै जग्यि कारणिसकल विमल सहि सुम्यै सकल॥

ना० १.६९ : दूहा—हौ बीसल धर्माधि सुत मोहि हुए गुर सिद्धि।
राजधर्म चाकै हुई ग्रात क्यौ फिरि युद्ध॥

ना० २.१०१ : पद्धरी—सत पुत्र नाम कहत जीविसास। प्रथमी सजात दुच्ची उदास।
जुरि ज्येष्ट अरातन रजुधन्न। पर संगरीय राय वरणु सपन्न।
सुति देवराज सूरसिंदेव। दुय चंपराय हरिसिंघदेव।
सोनिगराय नरसिंघ जेम। नौभाग कीय वसुधा वनेंन।
जुरि ज्येष्ट सुचन साहस समत्थ। महसिंघ सिंघ संग्राम पत्थ।
सुवचंद सुपत्त सावंत रुथ। मति प्रसंग राय आरेम भूप।

ना० २.१०९ : दोहा—रहे राज सारंगदे सारंग सारग हथ्थि।
गौरी गरुय अरनिक हुयौ सारंग हीकै सथ्थि॥

ना० २.१०३ : सो पिता सारंगदे सँभरि रहूयो नरिंद।
सहस सत्तर असवार मिलि सोगुन तीस गयंद।

ना० २. ०४ : अनिक कुंड आबू शिखर आदि ब्रह्म को अंस।
कै सुग्ह घरा चलाइहै कै करिहै निरवंश॥

ना० ३.२२३ : दोहा—सुद्ध मत्ति कीनी सुकवि कहत कथ पृथीराज।
सत्त सहस रासौ रसिक चरवानी मुनिराज॥

ना० ४.५ : दोहा—सोवत ही मति जगत है इह आनन्द सु चीन्ह।
के जुग्गनीपुर जुग्गनीय सुहथ्थि हरिथ तिन दीन।

[1] ऊपर द० नं० ३७ में दिखाई गई समस्त छंद-संख्याएँ टॉड ६० के छंद ३४ की हैं; द० में यह छंद नहीं है।

ना० ५.१ : दोहा—दुजी पर्वपहि प्रति दुजहि सुमन मनोहर मिष्ट।
सुनत कथा पत्थारिवर आनंदीय मन इष्ट॥

ना० ५.३ : दोहा—आनंदी गंध्रव्य तब कहौ सुनहि द्विग पवि।
अति विस्थारि कथा विथरि कहुं तोहि विवरेनि॥

ना० १०.३ : दूहा—धन चालुक्क नरिंद भर जिन रखी रज लाज।
इतें विसासीय कहनवर खिज्यो कुवर प्रथीराज॥

ना० ११.१ : दोहा—सुकी कहै सुक संभरौ कहो कथा निसि मन्न।
किम बरदाई चदगुरु हुइ स बीर प्रसन्न॥

ना० ११.४ : दूहा—विधिना नल अवतार कीय त्रेता कलिजुग साज।
प्रिथिराज सोमेस कुंवर चढि आखेटक राज॥

ना० ११.६ : दूहा—तपे पुत्र विरचइ कुमर अमर किति कविकाज।
इककसमैं आखेटवर चल्यौ चित्त महाराज॥

ना० ११.२२ : दूहा—दह निरमल नटनूत तर तातरि सिला सुभाइ।
ता उप्परि कवि चंदवर डेरा कीन सुभाय॥

ना० ११.५८ दूहा—चल्यौ राज निजथान वर कहि परिहार सुमंत।
अंगजाइ भुमजंत फ करौ को गोठि सुमसत॥

ना० ११.६५ : दूहा—अगिराज प्रथिराजवर अलसित नैन अँदाति।
वीररूप वीराधिवर अति सरूव नित गात॥

ना० ११.६८ : गाथा—शुभ दिन शुभ प्रमं होल लभे शुभौ मसानं।
छहूप चोर सुमरन्यं धवलं चहोयं मसव॥

ना० ११.७८ : दूहा—प्रसन हुवे कहि वीरसह वर दिन्हौ तिन बीर।
जयति राज जुदह सजै तहां करौ हम भीर॥

ना० १४.१२७ : दोहा—अत दंत पय फहिरह बहर रूप धावे अछग।
पग पग ति रथंभु पग पग मुकति भुगति लम्य किती सुजग।

ना० १६.४ अ : वार्ता—सोलंकी पत्तनाधीश पमार सल्प तस्य पुत्र जैत्प पुत्री इच्छनि सा भोरा मीमंगदेव परनयनार्थं याचिता न दत्ता अर्बुदाचलत्यक्त्वा पृथ्वीराज पार्श्वे आगतः तेन विरोधेन भीमंगदेव पृथ्वीराज सार्द्ध युद्धं कृतं भीम हारितः पश्चात्सल्पेन निज भगिनी इच्छनि पृथ्वीराजस्य परणियता तद्विवाह वर्बने लिख्यते।

ना. २४.२६ : दूहा—तब अप्पुव राव कहि सभी कहै भ्रसि दंद।
एक किलें करि दुख्य है एक मिलें बहु दंद॥

ना. २४.२७ : कवित्त—कहिव समर वर सिंध अगस्ति कवि दुख्यन सागर।
काली कर दुरयोधन रगत बीजह अगणित घर।
इंद्र हथ्य दुरयोधन पंख परवत पहारत।
राह हथ्य दुर्जन चंद तारक रवि भारत।
दुज्जेन हथ्थबर करणि स्यंध मंस काजि विभूति घर।
संग्राम काम साईं सुकृत थकहि न रण रजपूत कर॥

ना. २८.२३ अ : वचनिका—श्री राजा प्रथीराज ढिल्ली मैं यो सुन्यौ जु साढे तीन मन सोने को पृथीराज द्वारपाल करि राख्यौ है आपुन राजा जयचन्द और सबरय

करि राजसू जग्य आरम्भौ है तब यह बात राजा प्रथ्वीराज सुनी सेन्या आपुनी बुलाई ब्यास बोलि दिन पुछ्यौ पंडित सुर व्यास रंग ज्योति की पुत्र ताएं राजा पूछ्तु है।

ना. २८.५२ : वचनिका—कनवज्ज मधि पुकार भई कैसी पृथिराज राजा दल साजि आयौ कनवज्ज थपित भई।

ना. २८.५२ : दोहा—नृपति विचार्यौ बहुत मन अब कहि कीजै साजु।
सुमति सबै मिलि संचरहु जिहि सम्यौ जग्य कौ काजु ॥

ना. २८.५२ अ : वचनिका—तब सब मंत्रिनि मिलि मंत्र विचारयौ दूती पठाइ जै संजोगिता कुं समझावै सो दूती है राजा सु आदेश दीनौं संजोगिता कुं ले आवो दुबुद्धि दूरि करौ दूती आदस ले संयोगिता के ढिग चली ॥

ना. २७.६० अ : ए बात दूती ने कही तेरे पिता ने ऐसे राजा जीते इन मैं तू कहे तासौं व्याहै तब संजोगिता बोली।

ना. २८७२ अ : इह बात पृथीराज सुनी तब सामंत सूर मिलि मंत्र दीनौ राजा जयचन्द कै मैं तैं पृथीराज आपेटक व्रत लीनौं।

ना. २९.४४ इ : वचनिका—राज पृथीराज षट्मास मंत्री मारयौ तब सारदा देवी जाइ चन्द सुं कह्यौ कि पृथीराज षट्मास मंत्री सर सु मारि कै महल के आंगन मे गाड्यौ है तो ति तुझे तब बताइये तब चन्द भट्टै कह्यौ मोहि परतीत तौ होइ जो माता कुं परतिच्छ देखुं ॥

ना. २९.५० अ : वचनिका—अब राजा सभा सावंत सोरह सूर बठे तिनकौ आसीष दीनी ॥

ना. २९.६३ अ : वचनिका—यह बात सुनत ही राजा प्रिथीराज उठि भीतरि पधारे सब सभा बहुराइ उठि चली आप आपहुं अब घारे राजा ने भीतरि कोई आवने न दीये आपु राजा चलिके रानी पवारि करनाटी कै महल आए राजा कुं जानि रिसाइ सब सभा बहुराइ भाट चन्द बरदाई एक सभा मैं बैठि रह्यौ कि राजा बोलैंगे तायैं धीरजु रह्यौ ॥

ना. २९.८६ अ : वचनिका—श्री राजा पृथीराज षट्वास चन्द कौं दीनौं स तिनि ले भरतार सहगवनु कीनौं राजा पृथीराज चंद पैं बोल लीनो पहौं कि मोहि पंगुरे कौ जग्य देषन कुं मन भीनौं इतनी बात भई राज पृथीराज कै करनाट कै करनाट के राजा की बेटी पटरानिनी पवारि तापैं राजा सीष मांगन गए तब रानी राजा सु विनती करतु है अहो नरेस्वर एच्छह मास षट ऋतु ऐसैं मैं चलिये नाही।

ना. ३१.१ अ : वचनिका—ऐसी रीति कर्णाटी राजा पृथीराज कनवज्ज चलने कुं आतुर भए। सेना सावधान भई ॥

ना. ३१.३ : दूहा—तब प्रथिराज नरिंद कह तिन दिनों प्रिय आजु।
सत सुभट छै संगुही पंगु राय जग्य काजु ॥

(तुलना० ना० ३१.४२=स० ६१.७८)

ना. ३१.७ अ : वार्त्ता—कंक शक्ति देव्या ईश्वर अर्ध नारी नारेस्वर रूप गृहवा दर्शितं। सो कैसी नारी अचरिज रूप मिलो।

ना. ३१. अ ३१ : दोहा—जब दिष्यौ गंगा दरस अप्यौ नृपति पृथीराइ।
सु कविचंद सुभइ सुं कहुं कछु जस बरन सुनाइ ॥

ना. ३१ म. ४३ : वचनिका—श्री गंगा जी के टटीन कनवज्ज की पनिहारी पानी भरत है।
तिनकौ वर्नंनु चंद वरदाई पृथीराज आगे करत है।

ना. ३२ ४ अ : वचनिका—तीन लाख जन चौकीदार दिन का २ लाख राति का चौकीदार
मिल्या देखि पृथीराज सामंत चकित हुइ हथियार संबाहयर ॥

न'० ३२.२३ : उत्तरी शुक भाषा च हंस भाषा च पश्चिमी।
दक्षिणी मयूर भाषा च काक भाषा च पूरबी ॥
मध्ये शुक भाषा च कंठी बलूक मेवच ॥

ना० ३२.३५ अ : विरुदावली राजा जैचन्द की करे।

ना० ३२ ४४ अ : वचनिका—जैचन्द कहैं छै। उणरा, मां मारे ने म्हारो पितारं प्रेम हूंतो।
जए म्हारा पितारी चाकरी कीधी तिम तिम बध्या राजा सोमेश
दिल्ली परण्यो। ताइरो म्हारा बड़े रा सुं बात करी घणों घन
मांगि लीधी ॥

ना० ३३.२० : वचनिका—श्री राजा प्रथीराज कनवज्ज देखन को चढ़ लियो। श्री गंगाजी के
कूल जहां संजोगिता कुंवरी को। मवलगइ कीनो सा अस्थान क
प्रथीराज आनि घोरे कुं पानी प्यावन लागे इतनो करी माछरी
टटि आई मोरे। आगे तिनकों राजा मुगता डारे है। सु तोरी
गंगा जी कुं समरपन लागो। मानो फल दानता प्रस्तावि
संजोगिता की नजरि परयौ। दिष्टि आगे तब संजोगिता जान्यौ।
यहै राजा प्रथीराज होइ परीछया कीनै। तब दूती बिचच्छन कुं
बुलाइ आइस दीनों। बड़े बड़े मोतीय हायन के कंठमाल के ले
सब एक ठौर करि के थार भरि के जहां राजा पृथीराज है तहां
ले जाहु। जो राजा पृथीराज होइ है तो फिरि हाथ करेंगे तब तू
मूठी भरि के देत जइए। बोले जानि बोलैं ते रोस करैंगे।

ना० ३३.३७ : दोहा— मच्छ उछंगनि मुत्तिकर रसमइ सं दिन दिष्ट।
प्रीति अचरचै रूप रस अब सु फिरीय तन दिट्ठि ॥

ना० ३३.३८ : दोहा— वर सफर मुच्छिय सखी सुधिवर सुपर सहेस।
गनक सुजपि गंधर्व दिय किन सुदि सुद नरेस।

ना० ३३.५२ : दोहा— तबहिं दासी विचारकीय इह पृथीराज नरिंद।
जाइ कहयौ संजोगि सुं तिन सुं कीयौ आनंद ॥

ना० ३३.५३ : दोहा— पंगु पुत्ति सुनि बैन इन गइ जहां संभरि धाइ
निरषि नयन भौ कामवसि मूकी बाह बिचाइ ॥

ना० ३३.५४ : दोहा— सुंदरि कहै मैं पंगुकीय मरन जीय तुम साथ।
सुनत मंगदीय साकि तब नृप नारो गहि हत्थ ॥

ना० ३३.५७ : दोहा— लिचहि वर गंग वार कहुं मझु सजन तन मार
चकति उत्तंग तुरंग मुष सरसें भरि लीन सार।

ना० ३७.९ : दोहा— उनतीस सहस लाष भर सिषक छत्रपति राज
कहै गहै चहुवान कौं इत मंगद छुव्यो बाजु।

ना० ३७.६ : कवित्त—मंगर मेर मरद हद दुंदुभि जुध किन्हो
सिंधति पति सरभहो घाइ पगवर दुंद किन्हो

मर दइ गिर टुट्टलि मंच दोई मर मल्ले ।
स्वामि सदन छुट्टलि देव दुट्टलि मिलि चल्ले ।
दल राज मुरयौ दच्छिन सनौं हय रव्वति विहि हंक सुनि ।
जैचन्द राय दल दपती दुषी किन्ह प्रथीराज फुनि ॥

ना० ३८.४ : दोहा— हय गय रथ कनवज प्रगट्ट र्मिलि ढिल्ली धर भग्ग ।
रग रथ मद सु प्रछरिपि दवाइ बिहि कीय अग्ग ॥

ना० ३८.४ अ : वचनिका—राजा प्रथीराज सुं महा जुद्द भयौ । राजा जैचन्द फिरि डेरा दिया दश कोश ढिल्ली या तहा से घेरा कीनौं । जैचन्द राजा कुं सब मंत्रिनि मिलि मन दीनौं कि राजा जैचन्द जु अब राजा प्रथीराज न पकरयौ जाइ । न मारौं जोति गौ ता उपरान्त राजागिता वौं मरिवै पानि गहि सौंपिगौ । तब राजा जैचन्द मैं मानी न्याइ बिधि सौं ज सर पदाई । आपु कनवज की ओर चलिवे की बुद्धि ठाई ॥

ना० ३८.६ : दुहरा— उभय सहस मैंगल मुदित बारह सहस तोषार ।
सौमन सोपन रजक करि मनिमोती दश भार ॥

ना० ३८.१५ : वचनिका—राजन महल आरंभे । सजोगित श्रृंगार प्रारंभे । किं श्रृंगाराय किं आभूषणाय ॥

ना० ३८.७२ : दोहा— ह्रत रस तिथि दइ पंच निश्चि समुप भसम सर मास ।
कुछ ग्रीषम ग्रीषम सुषम पावस प्रसव प्रभात ॥

ना० ३९.२ : कवित्त—तोला सहस कपूर सेर बत्तीसइ आमन ।
चौवा बावन सेर नित मंजे सिर कामनि ।
बीस पान के बीस सहस बोला सौ बीरा ।
एक सहस दुकपत्त सुतो इक बरमे चीरा ।
फुलेल तेल चारास मन नित चराक सइजै जरे ।
इतनौ रज सुंज संजोगि कै नित्त नेम नेमी भरे ॥

ना० ३९.३१ : वचनिका—राजा प्रिथीराज आगे धीर पातिसाह पकरिवे की पैंडु करी जालंधर आदि माता की जात चलिवैं कु मन धरी । चावडराइ जैतराइ पातिसाह सु पकरि दिवाई । मादिलों नै कपट करि धीर पकराई ॥

ना० ३९.३४ : वचनिका— ह्रामदेव गब्बर कपट करि जालंधर नगरकोट आयौ । आठ हजार गब्बर फकीर को भेष बनायौ । धीर के पकरिये कुं ह्रामदेव धायौ । मुगति धीर पांड प्रित मांगि बोलि सुनायौ ॥

ना० ३९.३८ . वचनिका— ह्रामदेव गब्बर धीरकौ पकरि ल्यायौ । आनि पातिसाह कै हजूर गुदरायौ । विध पलै पार मेले सब धीर सुं पातिसाह झूठा त हजूरि पूछि तब ।

ना० ३९.४२/१ : वचनिका— तब पातिसाहजी कहतु है । धीरतू जोवकै लालचि हरामखोर है । तब धोर कह्यो पातिसाह जो हुं झूठ न बोल्यो । झूठ मैं सुर ता आउगी तहे ।

ना० ३९.६४ : वचनिका— तब पातिसाह साहाबदीन च्यारि बडे उजीर बुलाए । तिनके नाउ ततारषांन १ षुरसानषं २ रुस्तमषां ३ दरियाषां ४ ए च्याइ

सात

सुरतान कै दिग आए। साहि कह्या वे दरीयाखां अदब करि बात कहि इस धीरकुं मया दीजीये। तब प्यारुं ने कह्या कि पातिसाह जी इसहि निवाजीये ॥

ना० ३९.६६ : वचनिका— तब साहबदी सुरतान कह्यौ जे बीसा सौ घोरे बीसा सौ कबाइ दोइ मदकै हाथी ल्यावौ। पूब पूब कपरे हथ्यार आनि इसहि पहिनावौ। तब धीर बोल्यौ अब कछु न लेउं। जिस दिन पातिसाहिजू को पकरुंगौ तिस दिन पातिसाह की मौज कबूल करुंगौ ॥

ना० ३९.७१ : वचनिका— तब सुरतान फेरि धीरसुं कही। मेरी कही तू जानीयै सही। जिस दिन तुमे दिल्ली में जानना मरद लगी होइ तो सवाहि लरन आवना ॥

ना० ३९.८० : दूहा— चंल्यौ बल सुरतान सौं जालंधर भेटि पधार।
बहकसान मेच्छान सह हवस हवसि गंधारि ॥

ना० ३९.८४ : वचनिका— तब धीर पुंडीर राजा पृथीराज कै दरीषाने आए। इहां राजाजू ने लडाई को सूर सामंत सब लोक बुलाए। और बेर धीर आवत मया जीवमैं धरते। तादिन धीर आवत देषि राजाजू नजरि नीची कीनी। बैठे हीं हाथ पसारि अंकयारि दीनी। चावडराय जैतराय बैठे देषि धीर राजा आगे नीची नजरि ठाढे हैं। धीरमन मैं महा अनराव। इतने मैं चामंडराय जैतराय हसे है।

ना० ३९.९२ : वचनिका— चामंडराय जैतराय गारी दे बोलि सुनायौ। तब धीर माथौ उंचौ उठायौ। कह्यौ काहिह सुरताल की फौज जीति जब लेउं। पातिसाह कुं पकरि प्रथीराज कै हाथ देउं।

ना० ३९.१०६ : वचनिका— इतनौं कहि धीर डेरां आए। रजपूत सामदेव करि चढाए। धीर पुंडीर राजा आगें पैज करि दल सामिधौ कीयो। आठ हजार पुंडीर गिनती हुए मुहला लीयो ॥

ना० ३९.११२ : वचनिका—राजा पृथीराज साहाबदीन सुरतान दोउं मुद मिलि लरन चढे। धुसाऊ निसान बज्जे। पातिसाह धीर कै डर निवारइ पातिसाह करै। हस्ति तुंग पयदल सबल की दिग सबनिकै सिर छत्र धरे।

ना० ३९.११९ : वचनिका—बोज लपवाइ धीर सौ कहतु हैं पातिसाह जी कुं पकरि ले जाइ हीं। चामत्र छत्र रपत रपत धीर जु युग्द कुं निहोरो यो लोक स्रुस्त है रावत ॥

ना० ३९.१४१ : वचनिका—राजा पृथीराज जूल राई जीति ठाढे भए। चामंडराय जैतराय ए वचन भए। धीर लराई में यें भाजि गयौ। तब राजा कुं दुप भयौ। तब साहि के चाकर पातिसाह कु देखन आए। सुरतान साहावदी देवतें में न पाये तब उनि राजा पृथीराज सुं षबरि पूछी। पातिसाह जू नहिं देषियत। अरोप भए भई एक घरी ॥

ना० ३९.१४३/१ : वचनिका—तब राजा पृथीराज धीर कै घरि चले। सूर सामंत साथि लिए मेल चले। धीर के दरबार जाइ ठाढे भए हैं। तब बीजुल पवास भीतरि जाइ षबरि दए हैं। धीर जु राजा जु आए है। तब धीर

रिसानो। कह्यौ गुलाम य तेरे काम। पांढो काढि मारन
दौर्यौ। मैं तेरी कहां छ' रार्यौ माम। तब बीजल धीर प्रति
कहत है। राजा को च्यार... ...तिम इया रविवै को परत है।
यह विचार सुद्ध पहुपास। पाछ चढ़ि धीरह धीर आए।

ना० ४१.७ : कवित्त— मंद किरण दिनीयरह हीम प्रजरै कमळ बन।
जबहि धीर नहि घरति काम जब आइ गहै तन।
पति विहून परचंड कवन जीवन भव तंपहि।
बचन एक सम छोह छहीयौ इम कम्पह।
सुनि घरनि सिखावहि सिखवहि चित्र हरन चंद्रह वदनि।
मन करहु कंत पर देस गम ससिर मास यहै रमणि॥

ना० ४१.१४ : रासा—क्रीडंति काम सुठान मनहु रति रंग।
मिलि तरणी रसराज सुम जितराज अग।
छिर कंत एक सुपकह दंपति प्रेम घण।
केदंम जव्व सुरन्दि मदूरित ताम घण॥

ना० ४१.१५ : दोहा—जाम एक नृप तरणि मम क्रीडत रंग सुप्रवळ।
तजि पासम भावरीय आवत [मंत्र महवळ॥

ना० ४१.१६ : पद्धरि— आर्वत महल पृथीराज राज। सिंघासण आसण रजक साज।
सिरसेत छत्र रजि हेम दंड। रज्जु सुयान भ जिम अपंड।
शिर ढरहि चमर जुगपच्छिलेत। आयत महल पृथिराज हेत।
भासन अप्प मूरी सुगाह। यानक रोहिनिन्न निग्न साहि।
महलीय रचीय सामंत सूर। वासवह सम्भ जमु देव पूर।
बिधि बिधि नाद तंती सुनाल। कौतिग विवधि भकि करहि माल।
गावहि सुविध गुन फागरंग। वह्यौ सुहास रसरास अंग।
घट पंच अगर रसपूरि तार। केसरि सुघट दह सत [सार।
भरि द्रोण पंच गुदशाल भार। अब्बीर भास सम ससुर भास।
आलेनि सव्व सामंत भट्ट।
कम धज्ज उठि निहुरहि ताम। मिल्यौ सुअंग पृथीराज साम।
समघट्ट एक पान रंग। पूरे सु राज प्रति प्रति अंग।
चौसट्ठि पन्न बीटक अनेह। कप्पूर कचूरी जुत तेह।
दीनो सुनव्व सामंत सूर। सोभी सुभावति नाकनूर।
बोलाइ महि दासी सुराज। सप दुन आए सिंगार साज।
गावंत भायत कहे विसूर। वर्ज्यौ सुहास रसरास भूर।
दिन प्रति केलि इम करत राज। बामेक मिरप्पत देव साज॥

ना० ४१.१७ : दोहा—वारी बन्न विहारथल करत राजवर केलि।
रचत फाग नर नारि मिलि सम नारी रसपेलि॥

ना० ४१.१८ : कवित्त— इह विधि आप हतास विप्रवर पवि वेडसर।
श्रीफल सवनि तास गनिक को गनिदत्त नर।
पूजीय विप्रहु तास पूजि भर सामत सूरह।
पूजे हय गय दाम विविधि वर प्रीति सपूरह।

सुनि विप्र वेद आयस लगि श्रीफल लये सुत सहस।
सालनीय उज्जाल भप्पे नृपति विवद आहारीय अन्नरस ॥

ना० ४१.१९ : दोहा— रज उच्छय राजन करीय क्रीडा विविधि कल्लाव।
रज उच्छय मार्तहि नृपति गमन चित चित चाव ॥

ना० ४१.२० : कवित्त— करि भोजन दिल्लीश सयन सुप ध्यान सपत्तौ।
बंध बल सभरी साइ मन्नी गुर धत्तु।
चढ्यौ अप्प चहुवान बोलि जद्दव जामानं।
तोमर राय पहार सुभर बलिभद्र समानं।
कुम्मार रयण बंधव बरण सिव सतत्रय तह सथ सजि।
सेन्नाह सग लीनीय सकल झम्भु सु आहुर अप्प गजि ॥

ना० ४१.२१ : अवर सेन सामंत आहु पहु पुट्ठि सपत्ते।
सहस पंच असवार मिले रपराज सुरत्ते।
इक जोजन नय थान वरु असर करहु रथानं।
मध्य हृक यक्क विमल देखि दंपति सन्मानं।
संभापि घध हन संद करि आहारि चहनि सुनर।
... ... ॥

ना० ४१.२२ : निज भय्यौ गज वाजि अप्प आरुह्यौ दिल्लीसुर।
भर विट्टे चिहुं पासि विट्टि पयदल्ह चामवर।
सुपनधारि निकास मुप्प रप्पये सुवेतं।
वर कूकर करे जिद्दि रप्पये सुचेतं।
चहुवान चवयौ सामंत सम मत्त सुभर मुच्छहि परे।
चहुवान भान सोमेस की विन सुघात भय्या जुरे ॥

ना० ४१.२३ : नीसाणी—सुनिज राह कूकर कुलाह उठयो ओझक्की।
मनु पल वट्टे पान अप्प विन्नौ रण हक्की।
को वप्रमन वृद्धि बढ़ जनु बाव तनक्की।
वर विशाल दुअ नैन जनि जुअ भूमि झलक्की।
सकल सेन उद्धननि परी जनु सीस सरक्की।

ना० ४१.२४ : कवित्त—सुनि अवाज केसरि सुगाज कूकर कर छुट्टे।
के भगे केई लगे भाय सनमुष सजुट्टे।
पय उझारि वर नारि देपि दल कुंच सगज्जं।
उभय प'''असवार अप्प आरुज्यौ सुरज्जं।
छंडेव मुप्प सारप्प भर हनि उझारि कूकर कहर।
करि गात गज्जि सम गज्जि पर झप्पौ अप्प उप्पारि कर ॥

ना० ४१.२५ : आवत ईपै राज सघ उप्पारि पुच्छ कर।
हयौ खचिकर वर आरोह निहरयौ पुट्ठि पर।
लगि घान थोरान सीस छुट्टयो सु गज्जं।
पगि हारि पृथीराज धरणि नपयौ सुधज्जं।
लगी सुगंत गज दंत वर फुटि उदर कटारी कल।
फिरि गह्यो गज नप पानिवर मंडि चहद्दीय दुब्भवल ॥

ना० ४१.२६ : सा बावनि ता समय आइ कपि पुट्ठि सपत्ती ।
सूर भगा जो सनी मिली संभली सुभत्ती ।
चढ्यो हस कुम्मार रयण छिसि दक्खिण सोह ।
जाम हकि मिधुसून ताम लग्गी असि रोहं ।
धर परयौ अश्व अधरन्नि पर हाय हाय सब सूर हुअ ।
हय ठेलि ··· ··· परीय श्रोणि दोय टूक हुव ॥

ना० ४१.२८ : सकपसेन चहुवान आयौ पर कुमार ।
जय जय सद्द सुजवि अरिय नयो सुडवार ।
फिर्यौ ताम दिल्लीस करत आखेट असमानं ।
हय वराह दह अट्ठ धाग उत्तरे सुथानं ।
जल जंत्र सुभर जल उब्भरहि भरहि दीर्घ तृप वढ्ढाहि ।
मह ठ च अनोपम रिद्धि भर सुरपसास साधक्करहि ॥

ना० ४१.२९ दोहा— बाग निरप्प जल बिमल धूप्प विचित्र बिहार ।
मन उनमोदन सुप्पउन पेरन पेरे ढार ॥

ना० ४१.३० : तहां सघन दिल्लीसवर मधि धारा गृह थान ।
जलपूरण जल दीघिका वत्तर सुभर समान ।

ना० ४१.३१ : गाथा— फिरि यनराज बिराज साज अनेक बलिल नी भारं ।
सारं कुजकल सारं मार नसप् पिणे सार ॥

ना० ४१.३१अ : माधव साधव तरुणी रज्जे मज्जेव भप्प सुवसार ।
मार घण धवमारं दर दरिति हीयणो वहिणो ।

ना० ४१.३२ : मधवन रितु वर धरीय भरायं लोप लोप आमोद ।
उर पुलकि दह अट्ठं सप्पो समीर दप्पि दक्खिन ॥

ना० ४१.३४ : मोतीदाम— प्रतिबिंबित माधव मद्ध सुरंभि । प्रफुल्लित पादप लोपय रंभि ।
मिमलित माऊत कोस नि॰रा । दिशा मिलि मंजर जानि अहित्त ।
उमहित उदित गावहि लोइ । छिरक्कहि कुकम केशर सोह ।
गुलाल सु गुंज अबीर सहीर । दरें मिलि बलीय बधि सुनीर ।
कपकप पूरि सुगध सुमंत । नौरचीय मोदीय लात बसत ।
अरक्कहि सूरत कथादि हु तास । सुमहाट चदन श्रीफल ताम ।
, करी जुग पट सु अबुज केलि । दपट्टपु पट्ट सु सोहद पेलि ।
सुनीपट दारम सहचारि दास । आयौ दल सज्जि सुसतीय धाम ।
हलोरत कुपल नीत सु घात । पलाद्रुम पीत मधुगुर धात ।
प्रफुल्लीय बल्लीय मिलल्लीय सीस । अलीगुन पतीय थाय सरीस ।
सुमहाइ मद्धि मधू मत राज । मनु सर पुप मन मथ साज ।
मनमथ सायक मंजरि भास । मनुं छिदपत्र पथि पिय जास ।
लहकहि लत्त पवन्न परास । सजिहप धाप जनु रति ईस ।
पहं लगि दीर्घ पजूरि अभार । मनुं सजि छत्र धूमिर मार ।
घनं भरि श्रीफल नीप बिहंग । धरि जनु हास आघाने अर्थंग ।
धरणीय अप पिइदलति पाल । मनुं कर हार पलापीय माल ।
करणि कपारि कुसुम्मदि रोहि । नूत सुत हेम मरगद सोहि ।

... स उच्च उहास। जनु जन मद्ध भूअप्पति ग्रास।
मधू मध किंसुकि केहरि नख। विदारण द्रुम ससीर अमख।
छता वर मूरति हल्लति दीन। डरे जनु चौर सुमद्धव सीस।
कुसमित वल्लीय पिल्लीय साल। सुराजहि सूर सुअस्सहि भाल।
रमालह पंत सुमध सुवान। अभूत सु ंत सुमंधीय जान।
करणीय फुलीय रचीय रास। नरजान उच्च किरणीय भास।
विहस्सीय मन्न मिली वर रोह। सुरिदह आगम सज्जन सोह।
हिमं जति फुल्लीय मिल्लीय राजि। मनु पहु पत्र सिंगारहु साजि।
कुसमह केतकि अम्र वधारि। वियोगनि सल्लीय काम कटारि।
पुहप्पह पूरित चंपक माल। सिंगारीय भीप प्रतिप्पीय जात।
पर्न भर सोभ तरुणीय भास। फल फथ उच्च संभीरी भास।
दसासह वासन बंधु अजीव। किरकह कक्ष दसन्नह कीव।
दुती पम कुंद कली डस जानि। असो कह पल्लव अगुलि पानि।
कुसुम्मह बौलसिरी नवफुल्लि। घ्रन मन वासन सम्मन तुल्लि।
पुछदर पानि सु हत्थह जानि। सम विधि सोभ मजातिय जानि।
पके फल पूर वसु मन सांहि। मधू कजि वासन आसव रोहि।
सरोहीय पादप पल्लीय छीप। मिली जनु ग्रीय पथक्कहि ग्रीव।
रह सिर फूल तथक्कह दीश। सज्यो जनु माधव री हर सीस।
अली अति गाइन राग अलाप। पुराण कली रवि हुंजन आप।
घंदी सुर कोइल मागध मोर। मसिग्गर सारि करूवर रोर।
समीरह आप सुरभर बध। उरक्कय सीत मिलछिरि लंध।
विद्धु रह जान गवघद काज। भई गति मंद प्रयच्छिन लाज।
सुरंतन आप सुरंतर मद्धि। त्रिगुणह वान मनु सु परिद्धि।

ना. ४१.२५ : गाथा—घर जूट जूट घिराज मानं मून रवि रूप साजं।
फन हांभले त्रिआजं चूवे भूपाल सोभि गुण जाजं।

ना. ४१.२६ : पीरण फले विरछी रची दुजने कजिरि कुल पछी।
फुल्लर कोरण रचे मानं तव पंति पंखिणो पखिणो ॥

ना. ४१.२७ : कवित्त—तहां ततरि प्रथीराज सुभट सामंत सूरि सवि।
अवर सरथ समछीय हिपि घन राज मन मदि।
करीय गोठ रुधिर सात मिष्ठान विवह भति।
मंस गात रस अत्ति मुनि भूछि वास मति।
संजुत्त साथ भोजन करीय आहारे तंबोर बर।
अभ्यंग अंग उप्फट सुमति आरोह परजंक भर।

ना० ४२.४ : वचनिका—राजा प्रथीराज छम्मास लौं गोर महल रहे। संजोगिता कै अव
कामंध होइ रहै और पवरि छाड़ी और रानी छारी दई। सा
प्रधान को जिउ अति चितवनु भयौ तब गढ़ गजने तै गो
साहावदीन गोरी दूत देपन पठाए सो दूत ढिल्ली आए।

ना० ४२.९ : मुडिल—कर कगर दुज्जर दिल्ली घर। भूमि कंपि अरु कंपि जवरबर।
बाल वृद्ध अरु ज्वान सवानह। रहे टगटगी चित्त चितानह।

ना० ४२.२३ : गाथा—राजनदर कुरषारं पावारं षहन सेसं ।
सा करगद हद वारं हक्के चं··· गोरीय साहि ॥

ना० ४२.२९ : पाघड़ी—राुश्रम साह थीघर सुसाह । धनवंत साह कुव्बेर राह ।
अमरेस सेठ,अवनी अधीर । केहन साह रूपक बजार ।
आगम जान विनान बुद्दि । जे लहे भनु देसनि सुध ।
नाछहि मरम छाया विचार । कोटिक्क धजन बंधी अपार ।
मिळी एक सकल एक तहाँ महाजन्न। सुहांसि सेम रतिवस राजन्न।

ना० ४२.७४ : दोहा—त्रिदर तेज तरकस सुकति भौ भग्गी सगमगि ।
मनु गोरी दल षहन कुं जनु दावानल लगि ॥

ना० ४२.८२ : वचनिका—राजा पृथीराज संजोगित के महल मास छह कामंध ग्रस्य रहे ।
ता प्रस्ताव या बात सुरतान साहावदी सुनित है । सुनत ही राजा
राजा पृथीराज परिदल मेलि चले । सिंध नदी कै वराहै डेरा दए ।
तब चंद बरदाई गुरराज आनि पृथीराज सु कही । तब पृथीराज
जू मुहला दीनों सही । तब राजा पृथीराज जैतराउ वग्गरी
कछवाहो भलिभद्र पुंडीर जैतराउ इनसौं कह्यो । चलो समरसी
रावल की विदा करै ज्यु वे गढ़ चितोर जाइ राज करै संजोगिता
कुं साथि ले श्री राजा पृथीराज जू समरसिंघ रावल के पधारे ।

ना० ४२.१३५ : वचनिका—तब पृथीराज तरवार छोरि चामंडराय के आगे धरी । तब पायन
रै वेरी का ढत पैज करी ।

ना० ४२.१४४ : वचनिका—जमुना जी मैं एक सिला हुती । तिहां राजा पृथीराज रावर समर
सिंघ सब सामंत चंद भाट्ट तहां जाइ मतै बैठे । तहां वीर जाग्यौ
सो वीर कहां रहतु है ।

ना० ४३.१३ : वचनिका—तब पावस पुंडीर दोउ हाथ जोरि राजा पृथीराज सु बीनती करी
हौं बार हजार असवार लै राजा के काम को संग्राम करन आयो ।
मोसुं राजि की नजरि फेरि कृपया धरी ।

ना० ४३.५३ : वचनिका—इतनों सैनु राजा पृथीराज को एकठौ भयौ दोइ हजार असवारनि
च्यारि च्यारि तरवारि बाधि पैज करी । उतै पातिसाह कै कटक
समुरति अति कि सिंधू नदि उतरी ॥

ना० ४३.७८ : दोहा—चढ्यौ साहि साहाब रत निसक हिंदू बन जानि ।
पथ नियो पृथिराज दल भई पलानि पलानि ॥

ना० ४३.१६१ : पचद सहस असवार धरि विजि मरे गज ठंद ।
तीन घरी बिनु सिर लर्यौ रनह राइ चामंड ॥

ना० ४३.१६४ : कवित्त—पर्‌यो पुहमि चामंड सरहि सबसेन जैत परि ।
सुभर लष्ष -सारद मीर अगमंग जंग लरि ।
स्वामि दज्ज गुरलज्ज मज्ज मनि न भग्ग भर ।
सुवर गत्त तिम मत्त तिन्न तारन्नि धनुद्धर ।
पाहिल चाल बंधी बहसि रहसि टहरि पम्मार परि ।
कधसे छोक कहून उमय छोह सुहागे स्वामि हरि ॥

ना० ४३.१६५ : भुजग प्रयात—दिवी दप्पिनी जैत भग्नी सुजीतं । सूर सेत छत्रं सरेभी विमीतं ।

सहस्स सुबीसं हय उंच गातं। सिलह पष्परं पूरि पूरं सु गातं।
निसं निमलं नीर नेह सु दंसं। धरन्न समन्नी तिथि स्वामि सीसं।
गुरं गज घास संघात रूभेवं। गिनै तुछ प्रानं समानं समेव।
उलघे सिर उद्द पार अपार। भयं जुद्धमयं सूर सोपन्न सार।
गहक्कै सहक्कै परं पेम पूसं। मनं मंडि मन्ने सगन्ने उरेसं।
निरष्षी अनी जैत साहाब तामं। प्रसंसे भर अप्प हीजत्त नामं।
निरष्षे अपं छत्र पत्री करार। बजे घोर बजित्र तांपे जितार।
चपै चाहि भवे दलं दुट्ट पेत। सजयौ जुद्ध भारी सधारी सनेत।
सुनी साहि बत्तं नदे मीर नदे। तिनं तिन्न मन्ने चढ़े चाल बंधे।

ना० ४३.१६७ : मोतीदाम— सहस्सह धीस सरूवार एक। अनी सजि जैत तिरच्छीय सेक।
सपनह साहस सारघ लष्ष। मिले दुमसेन धरे जुध भष्ष।
... ... । उहस्सीय जैत सुयुद्ध उछाह।
पनेपन बज्जहि पग्ग निपग्ग। मिले नहि पच्छ धरे पय अग्ग।
जपै मुष हिंदु तुष रामहिराम। महम्मद दीनह दीन उचाम।
हथक्कहि सींगीय सेल सुनेज। पटा हर हारहि हार हाहि तेज।
सट सट जूमण तुट्टहि भार। धरै धर पड धारद्दर धार।
होमंति विहारु सरीर तुहार। मनुं करवत्त रधंति रुहार।
हुई समजूसन पड विहंड। धरं जुध जित्ति जुर जम दंड।
उमट्टहि मट्टहि उट्ठहि सीस। चढी जमु चढीय भासुर दीस।
षिहुट्टहि पग्ग करष्षर घुरि। मनु घरमाल समंच्छर नंपि।
उढै हर पग्ग सुमीस सुभीस। पसारीय पवि परज्जिग जीस।
भमक्कहि भौन अभौन प्रवाह। घट्टै पगमद्धि चिरंड उछाह।
तडफ्फहि सूर सुतुट्टहि प्रान। परे कटि पग्ग मनुं मछवार।
षद्दिग्गह दतीय दतनि उद्ध। विहंडहि कुंभ ढरै धर सुद्ध।
हयै असि डुट्टि मसुंद निसुंड। धरै धर मुच्चित हुकम उथड।
छरक्कहि सीस महावत जास। मनुं तरछुम्मि पपा गृहदीस।
प्रहै कर वेंग उलक्किहि पुत्त। हनीज मदह्ह धुरी वर भेस।
उरभहि झुज्झहि लथ्थ निपथ्थ। प्रभारहि जानि उहान उरथ्थ।
करे असि पाड अघाड अजीत। हुचै सम पंड स आसिस उभात।
गहक्कहि हेकहि चंपि पचार। धरद्दर तुट्टहि धारनि धार।
निरष्षीय जैत सु पच्चीय गज्ज। प्रसंसहि सूर सबा सिर लज्ज।
निरष्षीय जैत उभारीय नेज। हयो सिर सष्भ पवार सहेज।
चहे गज कुंभ सु हत्थय पग्ग। धरा गज डाहि मसूद स मग्ग।
ढल्यौ कर कांढ कदार मसूद। हयौ मर जैत अभीस जुरूद।
प्रहै उर चंपिग पूर पमार। विभा कर हंस धरन्नीय ढारि।
परयौ पतिसेन सुवध सहाव। निरष्षीय सेन हहुक्किय ताय।

ना० ४४.१२ : दोहा— दुद्द्ज समर विरच्यो विषभ उदय देषि रवि व्योम।
रुच पष्पि सायम तृतीय भयौ सु कद्दल भोम॥

ना० ४४.१६ : कहै साहि साहावदी समहु मान अभिवान।
गहहु चपि पृथीराज कुं यह टह्यौ चहुवान॥

ना० ४५.५ : कवित्त— द्वै सहस असवार धीर पुंडीर भयंकर।
सोल सहस लगरह मीर सिल्लार पयंकर।
... ...। ... ... पग्ग पेनक्कै।
विसर धार धसमसिग तेज झन झन झनक्कै।
हय चंदन री वारन तुमह अत तनु तनु तप्पयौ।
सुश्रो न धीर सुव सहसद्दै विलप वदन चहुवानयौ॥

ना० ४५.६ : दोहा— विलप वदन चहुवान कौ सव दिख्यौ चहुंपास।
सावत सूर सुझो भकौ मन चिंतन उदास॥

ना० ४५.५२ : सोरठी— छिनु नर दै बंधान लिखत यम कपार पर।
अमर ग्रहयौ प्रथिराज सुनि संजोगि परंत घर॥

ना० ४५.५३ : दोहा— समर गहन परवल परन मर दिख्यै बहु हथ्थ।
रसह न आइ कंत तुम वीरह बस हम सत्य॥

ना० ४५.५४ : संजोगिता यात निवेदन—
त्रोटक— परीतु संजोगि पुच्छियई। नहि सास उसासति अंग हई।
भर नारीय सारीय पानि गहै। मन स्वेद प्रस्वेदति पूरवहै।
उतरी बहु बिद्धि सषी सुकरै। असुवानति नैन प्रवाह हरै।
को चंदन मलय झकोरहि गातु। को चंचल बलय झकोरहि गातु।
इक विपर सौंठिति लावहिं दौरि। इक कर अंडहि दावहि तौर।
बहु बुद्धि करहि बुलावहि बैनु। संजोगि अचेतन पोलहि नैनु।
चेत तिचेत अचेत सही। सुतौ सास भुवंगम डादगही।
दुष्य करैहि सर्व मिलिनारि। उठैह न सुन्दरि चीर सम्हारि।

ना० ४५.५५ : अरिल— मजन करहु संवारहु केस। अन संवारहु ... ... ।
... ... अवलोहि अवास। छांडि छांडि तन अग उदास॥

ना० ४६.७ : वचनिका— चंद बरदाई जालंधर माता की जात सिघाए हुते। पाच्छै राजासुं इह भई चद घर आयौ स्त्री सुं पुच्छयौ राजा जू कहा करतु है। तब पतीव्रता भली कहै॥

ना० ४६.३२ : कवित्त— मेघ मोर ज्युं मिले चद ज्युं मिले चकोरह।
हस मानसर मिले रैनि जानिक मिलि चोरह।
भमर कुसम रस मिले जमक ज्युं मिले भुवंगह।
तरुणि धाम रत मिले नाद चित मिले कुरंगह।
इतने नाइ पे सब रस मिले सुनी चंद आयौ जन नहिं।
गोल नाहु हम तुम्ह जपत जिम सुरंक पायौ रतन॥

ना. ४६.४६ : वचनिका— साहावदी सुरतान गोरी के दरीवाने इवनी जाति पठान म्लेच्छ हैं। गारी गारते उतपन्न भए हैं। साहायदी सुरतान की उत्पत्ति चद-बरदाई कही यति। गढ गजनी माझ कोई एक ढोलगर की जोरू महीना नौ के अधीन सुं मुई थी गाडी गोर के ऊपर परीआ दै रापी। ऊपरि सुनि रहई केतुक वरष बीते सुरतान अलाल्दीन राज

करे है। एकहि दयोस जलाल दीन ठाढ़े रहि चल्यौ है। मन मैं कछी कोई छिद्र है। तब बालक बहुरि दिपाई दई। तब उजीर नैं पूछ्या। सुरतान क्या ठाढे रहे। तब पातिसाह उनसूं कहै है। अने इस गोरस्तान मैं बिच ही कापुं गडा गड्या क्या सूरति पाक है। तब उजीर वाले दीवान चलो इस कु देषीये नाहीं न कोऊ बल देवत है। तब पातिसाह कह्या। ना ये इह बनि आदम है सही। तब पातिसाह··· ···षोदि देषै तौ क्या कालबूत ऊपरि पुंगरे देह दुराई तब कह्या कि गाम माहि षबरि करो। यह गोर किसकी है। तब उनका कोऊ आया तिनैं कह्या। दीवान यह इसुं जोरू पेट आधान सहेत गाडी थी। तब पातिसाह उस लडके कै ताईं उहा थी निकासि घोडे परि चढाया। कह्या आज पीछै तूं मेरा पूत है। तेरा नाम साहाबदी गोरी सुलतान है। तुझे षुदाइ ने सहाउ रष्या। गोरी पठान है। अद्भुत साहब दीन गोरी को राजु। हरी पानै सभा मैं म्लेच्छ वर्नन साजु ॥

ना ४६.५२ : श्रीपातिसाहिब जू ब ठे, तब पीठे चंद बरदाइ बोलै।

ना. ४६.७० : गाथा—देषी दरसन दीय आप रूप मतेनं।
प्रफुल्लित मन चंदो हूवो दूर दह दिशित ॥

ना. ४६.११३ : दोहा—बुधि मन मै रखी सालु इह देह आजु कैं कह जाहि।
बन जाउं सही पति साहि साहि मिलुं जोग जोगेंद्रनि गाहि।

ना. ४६.१२४ : बचनिका—तब पातिसाह हजाब जा हबसी कुं फुरमान दियौ ले जाउ।
इसके साहिब खेती दस हाथि राधि इसे गस्हा कराउ।
तब हुजाब पाहबसी चंद कुं राजा पै ले चल्यौ।
कवेंद्र ··· ··· ··· ··· हबसी आनन उच्छल्यौ।

ना. ४६.१३० : दोहा—तरुणि सहन बर अगनि मैं भरि पकरयो सुनि पीड।
ता मैं एक संजोगिता हाकहि तजयो जीउ ॥

ना. ४६.१३९ : कवित्त—सभरि साथ कमान बान गहि गहि सर सचहि।
चढि महल भट सध्य मन चित चितइ सो इच्छहि।
··· ··· ··· ··· ··· ··· गुरु अप्वर चंद भनिय।
सुदहि स सरवर सत दहा सुहि सामंत इकइ गनीय।
उस पंग भास निस भूप दिय गरय धुनित अगह सही।
छायौ न उरह मरिंद सुनि बाम सुरतान धर ग्यान गहि ॥

ना. ४६.१५४ : दोहा—मीर न करि फम्मान सक बहु तोरी पृथीराज।
नृप कीडी हुस्सेन हथ सो दीनी सजि साज ॥

ना. ४६.१७८ : साथ सहस रासो रसिक कहौ चव बिरदाय।
पढत सुनत श्रीपति जयौ भटजु पत्तति माय ॥

—:*:—

ए. स्वीकृत, धा०, मो०, अ०, फ०, म० तथा ना० के अतिरिक्त द० की पाठ-सामग्री

द.	स.	द.	स.	द.	स.
१.४	१.४२	१.१११	१.३२०	४.४८	७.१६७
१.२७/१	१ ५३	१.११५	१.३२६	४.५०	७.१६९
१.२९	१.१०८	१.११८	१.५१९	४.५१	७.१७०
१.३०	१.१०९	१.१३२	१.५४५	४.५२	७.१७१
१.३१	१.११०	१.१३७	१.६१६	४.५८	७.१८३
१.३२	१.१११	१.१३९	१.६५६	५.२	२१.२
१.३३	१.११२	१.१४०	१.६४९-५२	५.७	२१.८/२
१.३४	१.११३	१.१४१	१.६६९	५.९	२१.१४
१.३५	१.११४-१५	१.१४२	१.६७०	५ १७	२१.५०-५४
१.३६	१.११६	१.१४६	१.७०४	५.२५	२१.६८ ९२
१.३७	१.१२१-२२	४.१	७.४	५ २७	२१.९४-९९
१.३८	१.१२३	४.२	७ ८	५.२८	२१.१००
१.३९	१.१२४	४.६[1]	७.१७	५.२९	२१.१०१
१.४०	१.१२५	४.७[1]	७.१८	५.३५	२१.२१२
१.४१	१.१२६	४.१३	७.३२	५.३६	२१.२१३
१.४२	१.१३०	४.१४	७.३३	६.२	२५ ८३
१.४३	१.१३१	४.२०	७.७०	६.३	२५ ८४
१.४४	१.१३२	४.२१	७.७१	६.४	२५ ८५
१.४५	१.१३३	४.२२	७.७२	६.५	२५.८६
१ ४६	१.१३३ अ	४.२३	७ ७४	६.६	२५.८७
१.४७	१.२२०	४ २४	७.७३	६.७	२५.९८
१.७१	१.२००	४.३२	७.१२९-३३	६ ८	२५.८९
१.१०८	१.३१७	४.३४	७.१३९-४१	६.९	२५ ९०
१.१०९	१.३१८	४.४६	७.१६०	६.१०	२५ ९१-९४
१.११०	१.३१९	४.४७	७.१६२	६.११	२५.९५

[1] द० का पाठ यहाँ त्रुटित है, ये छन्द दाँव १५७ से हैं।

द.	स.	द.	स	द.	स.
६.१२	२५.९६	६.८९	२५.४९८	८.१६	१७.७२
६.१३	२५.९७	६.९०	२५.४९९	८.१७	१७.७३
६.१४	२५.९८	६.९१	२५.५००	८.१८	१७.७४
६.१५	२५.९९	६.९२	२५.५०१	८.२०	२४.७
६.१६	२५.१००	६ ९३	२५.५०२	८.६५	२४.१२८
६.१७	२५.१०६	६.९४	२५.५०३	८.६६	२४.१४४
६.१९	२५.१०७	६.९५	२५ ५०५-१८	८.६७	२४.१४५ ४७
६ १९ अ	२५.१०८	६.९६	२५.५२०	८.६८	२४.१४८
६.३५	२५.२२६-३५	६.९७	२५.५२७	८.६९	२४.१४९
६.३६	२५.२४०	६.९८	२५.५२८ ३६	८.७०	२४.१५०
६.३८	२५.२४२	६.९९	२५.५४६	८.७१	२४.१५१
६.३९	२५.२४३	६.१००	२५.५४८	८.७२	२४.१५२
६.४१	२५.२४५	६.१०१	२५.५५३-५८	८.७३	२४.१५३-५७
६.४२	२५.२४६-५६	६.१०२	—	८.७४	२४.१५८
६.४५	२५.२८८	६.१०३	२५.५६८	८.७५	२४.१५९-६६
६.४६	२५.२८९	६.१०४	२५ ५७४	८.८१	२४.२००
६.४७	२५.२९१	६.१०५	२५.५७५	८.८९	२४ २६४
६.४८	२५.२९२	६.१०६	२५.५७६	८.९३	२४.३६८
६.५१	२५.३०१	६.१०७	२५.५७७	८.१०१	२४.३८४
६.५५	२५.३१८	१८.३५	४४.१२१	८.१०२	२४.३८५
६.५९	२५.३५१	६.१०८	२५.५८४	८.१०३	२४.३८६
६.६०	२५.३५२	६.१०९	२५.५८५	८.११४	२४.४१३
६.६१	२५.३५३	६.११०	२५.७७४	८.११५	२४.४१६
६.६२	२५.३५४	६.११२	२५.७७५	८.११६	२४.४१७
६.६३	२५.३१९	६.११३	२५.७७६	८.११७	२४.४१८
६.७१	—	७.१	२६.१	८.११८	२४.४१९
६.७२	२५.३९५	७.२	२६.२	८.११९	२४.४२०
६.७३	२५.३९६	७.३	२६.१५-२०	८.१२०	२४.४३९
६.७९	२५.४५५	७.४	२६.२२	८.१२१	२४.४२१-२३
६.८०	२५.४५९	७.५	२६.२३	८.१२४	२४.४३२
६.८१	२५.४६०	७.६	२६.२४	८.१२९	२४.४४६
६.८२	२५.४७४	७.७	२६.२५	८.१३०	२४.४४७
६.८३	२५.४९१	७.८	२६.२७-३८	८.१३१	२४.४४८
६ ८४	२५.४९२	७.९	२६.२९-४३	८.१३२	२४.४५६
६.८५	२५.४९३	८.२	१७.८	८.१३३	२४.४५७
६.८६	२५.४९४	८.३	१७.९	८.१३४	२४.४५८
६.८७	२५ ४९५	८.११	१७.३१	८.१३५	२४.४५९
६.८८	२५.४९६	८.१२	१७.३७	८.१३७	२५.४६१

[एक सौ नौ]

द.	स.
८.१३८	२४.४६३
८.१४१	२४.४६८
८.१४४	—
१३.६	१२.८
१३.१०	१२.१३
१३.१४	१२.१७
१३.१६	१२.२८
१३.१७	१२.३४-३७
१३.१८	१२.३६
१३.१९	१२.३८
१३.२१	१२ ५२
१३.२२	१२.५३
१३.२५	१२.६८
१३.२९	१२.७७
१३.४७	१२.९७
१३.४८	१२.९८
१३.५२	१२.१०९
१३.५६	१२.११८
१३.६१	१२.१२४
१३.६५	१२.१३०
१३.७३	१२.१४८
१३.७४	१२.१४९
१३ ७६	१२.१५२
१३.७७	१२.१५३
१३.९२	१२.१९४
१३.९३	१२.१९५-२०९
१३.१०८	१२.२४६
१३.१२६	१२.२८५
१३.१२९	१२.२८८
१३.१३२	१२.२९१
१३.१६१	१२.३३०
१३.१६३	१२.३३२/२
१३.१९५	१२.३९३
१३.१९६	१२.३९४
१४.२	१३.२
१४.३	१३.३
१४.४	१३.४ ◬
१४.८	१३.३६

द.	स.
१४.१३	१३.५४
१४.३०	१३.१०९
१४.३१	१३.१११
१४.४६	१३.१५०
१४.४७	१३.१५१
१४.५३	१३.१५७
१४.५४	१३.१५८
१६.५	९.६
१६.६	९.८
१६.१२	९.१४
१६.२०	९.२७
१६.२१	१०.६
१६.४७	
१६.२२	९.२८
१६.३६	९.६५
१६.४१	९.७८
१६.४७	१०.६
१६.२१	
१६.४८	१०.७
१६.४९	१०.८
१६.५०	१०.९
१६.५१	१०.१०
१६.५२	१०.११
१६.५३	१०.१३
१६.५४	१०.१५
१६.५५	१०.१६
१६.५६	१०.१७
१६.५७	१०.१८
१६.५८	१०.२५
१६.५९	१०.२६
१६.६०	१०.२७
१६.६१	१०.२८
१६.६२	१०.२९
१६.६३	१०.३०
१६.६४	१०.३१
१६.६५	१०.३२
१६.६६	१०.३३
१६.६७	१०.३९

द.	स.
१७.४२	३९.१२७
१७.५७	४४.१९३
१९.२५	३६.२३९
१९.२६	—
१९.३४	—
१९.३९	—
१९.४०	—
२०.५	१८.७
२०.८	१८.१४
२०.९	१८.१५
२०.१०	१८.१६
२०.११	१८.१७
२०.१२	१८.१८
२०.१३	१८.१९
२०.१४	१८.२०
२१.१	१९.१
२१.४०	१९.१६१
२१.६८	१९.२४०
२१.७४	१९.२४८
२२.७६	५६.१०८
२४.१४	४५.६६
२४.१५	४५.६६ (!)
२४.२९	४५.८७
२४.३०	४५.८८
२४.३१	४५.८९
२४.३९	४५ ९८
२४.४०	४५.९९
२४ ४१	४५.१००
२४.४२	४५.१०१
२४.४३	४५.१०२
२४.४४	४५.१०३
२४.४५	४५.१०४
२४.४७	४५.१०५-१७
२४.४८	४५.११८
२४.४९	४५.१२०
२४.५०	४५.१२१
२४.५१	४५.१२२
२४.५२	४५.१२३

द.	ध.	द.	ध.	द.	ध.
२४.५३	४५.१२४	२४.९८	४५.१९९	२८.२	—
२४.५४	४५.१२५	२४.९९	४५.२००	२८.६	४८.८
२४.५५	४५.१२६	२६.१	४६.२	३१.९	५७.३१
२४.५६	४५.१२७	२६.२	४६.३	३१.३०	५७.७३
२४.५७	४५ १२८	२६.३	४६.४	३१.३९	—
२४.५८	४५.१२९	२६.४	४६.५	३२.५	५८.५
२४.५९	४५.१३०-४२	२६.५	४६ ६	३२.२३	५८.१७९
२४.६०	४५.१४३	२६.७	४६.८	३२.३२	५८.१८८
२४ ६१	४५.१४४	२६.८	४६ ९	३२.३३	५८.१८९
२४.६२	४५.१४५	२६.१५	४६.३३	३२.३७	५८.१९८
२४.६३	४५.१४६	२६.१६	४६.३४	३२.४५	५८.२१३
२४.६४	४५.१४७	२६.१७	४६ ३५	३२.५५	५८.२५९
२४.६६	४५.१५०	२६.१८	४६.३६	३२.५८	५८.२६३
२४.६८	४५.१५२	२६.१९	४६.३७	३२.५९	५८.२६५
२४.६९	४५.१५३	२६.२०	४६.३८	३२.६०	५८.२६७
२४.७२	४५.१५८	२६ २१	४६.३९	३५.३१	६२.७१
२४.७६	४५.१६२	२६.२२	४६.४०	३५.३६	६२.८०-८१
२४.७९	४५.१६९	२६.२३	४६.४१	३४ ८	६४.१२
२४.८०	४५ १७०	२६ २४	४६.४२	३४.१०	६४.२५
२४.८१	४५.१७१	२६.२५	४६.४३	३४.४०	६४.१२०
२४.८२	४५.१७२	२६.२६	४६.४४	३४.४७	६४.१३०
२४.८३	४५.१७३	२६.२७	—	३४.८०	६४.१९२
२४.८४	४५.१७४-७८	२६.२८	४६.४५	३४.८२	६४.१९४
२४.८५	४५.१७९	२६.२९	४६.४६	३४.११३	६४ ३२४
२४.८६	४५.१८०	२६.३०	४६.४७	३४.१२७	६४.३५८
२४.८७	४५.१८१	२६.३१	४६.४८-५१	३४.१३२	६४.३६८
२४.८८	४५.१८२	२६.३२	४६.५२	३४.१३३	६४.३७०
२४ ८९	४५,१८३	२६.३३	४६.५३	३४.१३५	६४.३८३
२४ ९०	४५.१८४	२६ ३४	४६.५४	३४.१४१	६४.३७६-८२
२४.९१	४५.१८५	२६.३५	४६.५५	३४.१४२	६४.३८४-९३
२४.९२	४५.१८६-९०		४७.५९	३४.१७०	६१.४३
२४.९३	४५,१९१	२६.५२	४६.८३	३६.५[1]	६६.१४५
२४.९४	४५.१९२	२६.५३	४६.८४	३६.१२[1]	६६.१२२अ
२४.९५	४५.१९३	२६.५४	४६.८५	३६.१५[1]	६६.१३६अ
२४.९६	४५.१९४-९७	२६.५५	४६.८६	३६.१७	६६.१२६(१)
२४.९७	४५.१९८	२८.१	४८.१०१	३६.२२	६६.१४३

[1] ये छन्द-संख्याएँ राज १५७ की हैं, रा० में यह अंश त्रुटित है।

द.	स.	द.	स.	द.	स.
३६.२३	६६.१४६	३७.१४६[1]	६७.३१४	३७.२७४[1]	—
३६.२८	६६.१४२	३७.१८१[1]	६७.३५४	३७.२७५[1]	६७.५३७
३६.११५	६६.३८२	३७.२०२[1]	६७.३९७	३७.२७६[1]	६७.४८६
३६.१८०	६६.५१५	३७.२०५[1]	—	३७.२७८[1]	—
३६.१९५	६६.६०९	३७.२११[1]	६७.३७२	३७.२८१[1]	६७.५५४
३६.२९५	६६.९८७	३७.२१२[1]	६७.५००	३७.२८२[1]	६७.५५५
३६.३०८	६६.९७१	३७.२१४[1]	६७.४१७	३७.२८४[1]	—
३६.३७४	—	३७.२१७[1]	६७.४२०	३७.२८५[1]	६७.५६८
३६.४५३	६६ १६१७	३७.२२९[1]	६७.३५७	३७.२८६[1]	६८.२४०
३७.२१[1]	६७.१०८	३७.२६७[1]	६७.५३०		
३७.१२९[1]	६७.२९६	३७.२६८-७१[1]	६७.५३१		

द० के वे छंद जो स० में नहीं हैं, निम्नलिखित हैं :—

६.७१ : कवित्त— परयो धार जहाँ नरयंद निरति कमधज न कीनी।
धनि साहस भर पुंज बाग लावनि परि लिनी।
सुनी बीर तिहिं बेर राज तामस गुन भीनी।
चल दुर्जन बसि करहु नहीं तन धन रन छीनी।
तन मोषु बंधि धर मोह तजि केसरि बसतर इंगईं।
धरबरनि बीर बरनीय बरन सुबर बीर सों रन गही॥

६.१०२ : कवित्त— सब उम्रह पुह पुंज छनु दीप हारि विहत्थं।
भइ सुमरण बर बेर अप्पि रचामिहि जुहीं सत्थ॥
इमु ध्रमं छत्री प्रमान नृपति दिष्षित भर झुसै।
रा छत्री कों दोसु स्वामि उभै आलुइंत।
इहि वंस को न भउयो सुन्यो अरु किहि न दोष कुल लगयो।
सो तात भीम 'भंजन' सहर भान सु छल बल भगयो॥

८.१४४ : कवित्त— तिरि जि राज आहुठि रजि रजवि ग्रिह आईय।
घर गोरी सुरतान रहि गजी बधाईय।
रविवार धीर पचम सु मद दिल्ली धाम सु आइयां।
सिसि मत बूद वर घटनँ सत्तम वार सुणाइयां॥

१९.२६ : गाहा— नीली अंबर दिठो अरु णोरायो मेर वतंय।
तुम सुद मंद तेडो गणियं नेय पच सत्तंमि॥

१९.३४ : पिय चैणे मा रणे तु रवास हिए जीह अकुटयो।
चित्तं तेरह पुहए आवा जिया गुणं मघुडए॥

१९.३९ : एणी रह गुठडीय कुष्ण पुक नाई वडी इगिह।
सुध मुहगुलि गहिय धाइ ति पिम इहणेय।

१९.४० : नैनह नेह पविस द ह हं ता कथा कहयामि।
मम मोचण सपीयं हंता णव मोचि सिंगार॥

[1] ये छंद-संख्याएँ टॉड द० की हैं, द० में यह छद नहीं है।

२६.२७ : गाहा— अरवै तुं प्रकार जै कंन्या भय विधिनी।
प्रोह न आंणे चाह ॥

२८.२ : सिसि कोटि दस छप्पय सत्या सीति सहस्रक।
प्रतानि द्वि गुणी कृत्य भार संख्या मुनी प्रवीत् ॥

३१.३९ : चोपई— जानति जच्छी कन्‍रान जानं मुनि घर सथं।
आइ अपुरप पद्दी भपइ आही। दासिय महल मनो सहाही।

३६.३७४ : दूहा— दुइ ज समर विन्यो विषम उदय देषि रवि व्योम।
सेत पष्य श्रावन म्रितीय भयो सुकइल सोम ॥

३७.२०५ : चौपई— बात कहूं प्रिथीराज सुनि सर इक्के आई।
सर चुके न्रिप पाछिली मांमू गमाई।
कोरि पवारे किद्ध तें अमि भग्गे जद्दे।
इंक सरि आइ बिलपीयां नाहि सरसहि पद्दे।

३७.२७४ : कवित्त— सबल नरेसर पोहोवि राय दव हठि जित्तो।
कटि सुभट्ट सर विकट कलह धवर पर वित्तो।
गजि गोरी हंमी तुरक्क मारीया बताई।
चंद्दे साहाबद्दी कीयो अजमेरि चढाई।
इम जंपै चंद बरद्दीया कव्वि कीद्द कहं कनै।
दस सहस लद्द रो इंद मैं अजहुं थक्के गज्जनै ॥

३७.२७८ : कवित— सुगहि बान चहुआंन सोषि सायर सर मद्द्यो।
सुगहि बांन चहुवांन राम रावन सिरु पद्द्यो।
सुगहि बांन चहुआंन हनू परवत सम पारयो (रयो)।
सुगहि बांन चहुआंन पथ करि करन सवार्‌यो।
करि तवक वक्क संद्दे सुसर राह राह पछैं भवे।
चहुआंन रान संभरिद्धनो सुमम सुवके माट सवे ॥

(तुल० स० ६७.५२१)

३७.२८४ : दूहा— सुनि सुपनंतर न्रिप मन घर संजोइय लग्गि।
हुय अवरसि चहुआन किय सुनिय प्रांन गये भग्गि ॥

—:॥:—

शुद्धि-पत्र

पृथ्वीराज रासउ (भूमिका)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	२५	पंथूवजा	पथूवजा
४	८	को	की
५	३	पाठनार्थ	पठनार्थ
६	२४	परमारि सुपुर्ली	सुपुली आवमि
६	३३	विचार	विचारि
६	३८	१२४अ,तथा१२५अ	१२४ अ
७	६	सुत्र	सुध
८	१८	सेत	पेत
१०	२६	कव्यि	कव्वि
११	४	१८४१-५६	१८.४१-५६
११	१३	घर	धर
१२	१८	हय	हम
१२	३४	इनमें	इममें
१३	२५	को	की
१५	३४	चका	चली
१९	२०	प्रतिलिप	प्रतिलिपि
२२	८	बनाउ	बताउ
२३	१५	इकू	इमक
२४	११	अधो	अप्पौ
३०	२९	सामन्तों में	सामन्तों के
३०	३४	मिलनो	मिलता
३१	२८	मो०	मो०
३१	३१	का	की
३२	१६	उ [द] धुत:	उ [द] धृत:"
३४	२६	अनुमान	अनुमान है
३५	१९	प्रतियाँ	प्रतियों
३८	२	विपनान जानि	विवना म जानि
"		कयिता	कविता
४१	१	कथोपनथन	कथोपकथन
४१	२	से	में
४२	११	छन्द-शृंखलायें	छन्दों की रचना-शृंखलायें
४५	५	चन्द के	चन्द जयचन्द के
४५	१३	कानिनो	कामिनी
४६	६	वर 'उठ्ठिय	'वर उठ्ठिय
४६	१२	धा० २४२	धा० २४२ में
४७	१३	'सपड्डिय'	'सपट्ठिअ'
४८	६	५८२	१८२
४९	११	पुकीसो	पुहरोयो

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२	३६	धाउ	धरउ
५७	३०	पाठ बुद्धि-जनित	न पाठ वृद्धि-जनित
६०	२५	स० ४५. १२२	स० ५५. १२२
६१	२०	मा०	म०
६७	२७	फा०	फ०
६८	१०	२ को	२ के
७२	३८	धा० ६७ अ	धा० १९, धा० ६७ अ
७२	६	२२ ३५	२२–३५
७२	८	निम	निम्न
७३	१३	की	को
७३	२०	यह म० ब० स०	म० ब० स०
७३	२१	जौवन	जोवन
७४	१७	पौ	पौर
७५	७	ना० [बा] ड्ड	, ना '[बा] ड्ड
७५	२७	फ' ० कवि	फ० 'कवि
७६	१८	और कर उसके	और उसके
७७	१८	'विदारति' 'विराजति'	'विदारहि' 'विराजहि'
७७	३४	दास	दासि
७८	९	शा० म० हुअ)'	शा० स०) हुअ'
७९	१८	नलनी	महनी
८०	५	अ० फ०	अ०
८१	४	कैंवर	'कैवर
८४	७	हो !"	हो !"'
८८	१४	५७ १२२,	५५.१२२ ।
९६	१८	४६.७८	४६.७७ अ
९६	३३	५६.९७	४६.९७
९६	३४	४६.१२७	४६.१२५, ४६.१२७
९६	३५	४६.१३१	४६.१३१,४६.१३४
९६	३६	४६.१३५	४६.१३७
९८	९	मार	सार
९९	१२	[संयोगिता	[जयचंद द्वारा अपमान और संयोगिता
१०४	२	बह मौन बद	वह मौन कर
१०४	२३	स्वप्न में एक सुन्दरी उससे	"स्वप्न में एक सुन्दरी तुम्हें
१०५	२८	तो	,
१०९	२२	मर्दन बनो	मदन बनो

११० २३ की (८.४) थी	की थी (८.४)
१११ ३१ १८.२७-२८	१२.२७-२८
११२ ३० बलीराम	बलीराय
११३ ५ १२२९	१२.२९
११३ १० प्रतीत है	प्रतीत होती है
११७ २५ सं० १२०० ई०	१२०० ई०
११७ २८-२९ सन् ११९३	११९३ ई०
११८ ३-४ 'विजय' 'पण्डित' को	'पण्डित' को 'विजय'
१२२ २ सतः	स्वतः
१२३ १४ उसने	वह
१२३ २० उसके	उससे
१२३ २३ आकाश को	आकाश की ओर
१२४ २६ हाडसन	डाउसन
१२६ १० मन्री य	मंत्री
१२७ ३ निपकमित	निष्कासित
१३६ २६ हत्थु	हत्थु
१४२ १५ कि	किन्तु
१४८ २६ कशाचित्	कदाचित् सबके सब

१४९ १५ पहुंचतता	पहुँचता
१५५ ३९ धा० छद ८४-९०	२. धा० छद ८४-९
१५६ १५ संपादितापठ	संपादित पाठ
१६१ २१ निर्विभक्तक	निर्विभक्तिक
१६४ २१ विद्यापिति	विद्यापति
१६७ २४ चार पीढ़ियों	तीन पीढ़ियों
१६९ २६ २.१९.४	३.१९ ४
१७० ३२ चद्द<चद	चन्द्र>चंद
१७३ १४ लगभग होगी	लगभग की होगी
१७५ २२ वैभव के	वैभव को
१७६ ३७ पुरातत्व	पुरातन
१७९ २५ है होगा	होगा
१८८ २ विलासता	विलासिता
१९० २८ हरउ	हरुअ
१९६ १ चन्द चन्द	चद चन्द
२०५ २६ शिशर	शिशिर
२१२ १० सामान्य शैली	सामान्य रूप
२१७ १३ एक	एक-सा

पृथ्वीराज रासउ (पाठ)

३ अन्तिम नासिनी	नासिनी[६]
४ १६ विना	विधना
५ २३ बिराजंत	बिराजंत छंद
५ ३० सरपं	सरूप
६ ३४ नाम ×एक×	नाम+एकं+
७ ३५ मामी	भामी
८ ६ कठें	कंठं
८ २४ तिन	तिनै
११ १९ गौण रज्जत	गौध रप्पत
११ ३७ जीमृत	जीमूत
१३ ७ गताः	गत
१५ ५ विर[३] कार्य[४]	काय कोर्य[३]
१५ ६ माम	सोम
१५ २३ (११)	(२१)
१५ २९ पृथ्वी, नरेश	पृथ्वी-नरेश
१६ ५ वद	हंदे
१६ १८ पाफठ	पाठ के
१६ २७ (३) मो आर, अ.क. शाह	३.मा. आर, अ. फ. शाह
१७ ९ धा. १.।	१२. धा.
१७ २५ ३.	२.
१८ १८ मा.	म.

१९ २६ सजिन	सधिन
१९ ३५ (४५)	(४७)
२२ १ रम्म[३]	रम्म[२]
२२ ५ जिन कंत	जिन[२] कत्त[३]
२४ २२ जो	जोट
२५ ४ शक्रगिय	शक्कुगिय
२५ २७ प्रमान+	प्रमान+[५]
२५ ३१ (प्रामाणिक रूप) के से	(प्रामाणिक रूप से)
२६ १० मो. अतिरिक्त	मो. के अतिरिक्त
२८ २४ मो.	३. मो.
२९ १७ जिनिअ	जितिअ
२९ २१ कथने	करने
२९ २२ हूँ	है
३० २ कर[१]	[१]कर
३१ १० मो.	२. मो.
३१ ११ २.	३.
३१ २२ उसारि	उसार
३१ ३५ जुवधि	जुवत्ति
३२ ८ <यत	<यत्
३२ ३१ गगहि	गर्गहि
३३ ४ संभव	संपर्क

४

९८ २० पट्टने[४] ग्रेह[३] — पट्टने[१] ग्रेह[२]
१०१ १३ दहाय[२] । — दहाय[२] ।[३]
१०१ २२ पांम — पांम[१]
१०२ २ ओप●[२] — ओप●[३]
१०३ १५ काचतु — कोच तु
१०३ २० सीता — सीत
१०३ २७ तहाय — दहाय
१०३ ३३ ज्ञ — जु
१०५ १३ तौलि — तौला
१०६ ५ पायउ●[२] — पायउ●[३]
१०७ ९ गुजर — गुजार्
१०७ ३४ गरठु — गरिठु
१०८ ७ (२) सथ्थ<साथ — (४) सथ्थ<सार्थ
११० ५ बिबाउ — ब्यंबाउ
१११ १४म. उ. स. कीनो — कीनौ
११५ ३९ =नित्र — =तित्र
११६ २२ बिर्झापाल — फ. बिर्झपाल
११७ २६ रन[१] हथ्थगारु[२] — रन हथ्थगरु[१]
११७ २६ चद[३] — चद[२]
११९ १० दिदि — दिदि[६]
११९ १२ हथ्थि — हथ्थि[४]
१२१ २० कथ्थ — कथ्थ
१२२ ३ अप्सरसि — अप्सरस्
१२६ ४ उपविष्ठ (?) — विष्ट
१२७ २६ पृथ्वीराज सिंघासन — पृथ्वीराज संघासन
१२८ ११ कथ्यति — कथ्थहि
१२८ १४ मृदद — मृदंग
१२९ १ धनसार — घनसार
१२९ १० मा. महलउच — मा. उच महिल
१३१ १८ सेघर[६] करककस — सेघर करक्कस[३]
१३१ २२ धुने — धुने[१]
१३१ २५ पर्द — बद
१३४ १३ ममंत — ममत
१३४ १४ ममति — ममति
१३४ ३१ प्ररंभ — प्र+रम्
१३४ ३१ अतड्डल — अतड्ल
१३४ १४ अलस्य — अलक्ष्य
१३६ १५ +चिहित — ×चिहित
१३७ ९ जिहि — जिह
१३७ ३१ समथ्या — समथुग्रा
१३८ १५ हथ्थ[४] — हथ्थ[२]
१३८ १६ चद बरदिया को — चंद बरदिया की
१३९ १० <रुधग्=रोकना,बंद करना — <रुधा=रुकना

१३९ १६ उठकर...देखा — और उसकी श्रेष्ठ।
१४० ५ पियो — अप्पियौ
१४० २१ स्थितव — स्थित
१४१ १० संठ<संगठन — संठा<संस्थानः
१४३ २ किन — कित
१४३ ३).धी...हसि — (=लिने), पा. कत०
१४४ १३ तेज झुठ्ठे — तोज झुठ्ठे[२]
१४४ १५ वारा।[३।४] — वारा[३] ।
१४४ ३० (=अक्केक) — (=अक्केक)[२]
१४५ ९ [उनके...है — वे ताजी छूटने पर ऐसे।
१४६ १ ५. — ४.
१४६ २३ 'फदे' या 'फदे' — 'फदे' या 'फदे'
१४६ ३६ निनें — तिनें
१४७ २६–२७ नंघ<कंघ — नध<लंघ्
१४७ ३७ घुर — धुर
१४७ ३८ प्र+ईक्ष — प्र+ईक्ष्
१४८ १५ दक्खन — दक्खिन
१५० २८ अडरत — अडर
१५० ३० अंग — अग
१५१ ७ संस्मर् — सं+स्मृ
१५१ ३१ पंगुरा — पगु राइ
१५४ ४ मोरी[२] अप्पिय — मोरि[३] अप्पियं[४]
१५५ २० २. — ३
१५५ २८ छडि ४. । ना. — छडि । ३. ना.
१५६ अंतिम दीढ — दिढ
१५७ ९ ४. मो. सुध, — ४. मो. सु, ध
१५७ २१ धा. जोगिन — ४. धा. जोगिन
१५७ २१ ४. धा. पुरह — ५. धा. पुरह
१५७ २५ टंग — धंग
१६३ २१ ५. — ४
१६३ २५ नष्ठ — नष्
१६३ ३१ सभाउ[१] तुरी जिम — समाउ तुरी जि
कुहर●[२] — कुहर●
१६४ १८ छव[२] — छवै[१]
१६५ ४ वजिना — वजिना[२]
१६५ अंतिम कथम्<कथा — <कथम्=कथा
१६६ २६ विज्दवधन — विद्द्धन
१७० ९ चहुवान — चहुवान की
१७० १३ आगरत गढ़ — अगस्त गढ़
१७० १५ <अस्तमायन — <अस्तमयन
१७० २० मनं — मनं[३]
१७० २३ धुरे — धुरे[१]
१७१ ४ धर धायर बहरियं — धर[१] धायर ब

९८ २० पट्टने[४] ग्रेह[३] — पट्टने[१] ग्रेह[२]
१०१ १३ ढहाय[२] । — ढहाय[२] ।[३]
१०१ २२ पांम — पांम[१]
१०२ २ ओप●[२] — ओप●[३]
१०३ १५ कामतु — कोच तु
१०३ २० सीता — सोत
१०३ २७ तहाय — ढहाय
१०३ ३३ सु — जु
१०५ १३ सौले — सौला
१०६ ५ पायउ●[२] — पायउ●[३]
१०७ ९ गुजर — गुज्जर्
१०७ ३४ गरठु — गरिठु
१०८ ७ (२) सथ्थ<साथ — (४) सथ्थ<सार्थं
११० ५ विराउ — ब्यौराउ
१११ १४म. उ. स. कीनो — कीनौ
११५ ३९ =निम्न — =तिम्न
११६ २२ विज्जैपाल — फ. विज्जैपाल
११७ २६ रन[१] हथ्थगाह[२] — रन हथ्थगाह[१]
११७ २६ चंद[३] — चद[२]
११९ २० दिहि — दिहि[१]
११९ २२ हथ्थि — हथ्थि[४]
१२१ २० कथ्य — कथ्य
१२२ ३ अप्सरसि — अप्सरस्
१२६ ४ उपविष्ठ (१) — विष्ट
१२७ २६ पृथीराज सिघासन — पृथीराज संघासन
१२८ ११ कथ्यति — कथ्यहि
१२८ १४ मृदद — मृदंग
१२९ १ धनसार — घनसार
१३०, १० मा. मह्वरुच्च — मा. उच्च मह्विक
१३१ १८ सेपर[१] करक्कसं — सेपरं करक्कसं[३]
१३१ २१ धुने — धुने[३]
१३१ २५ पर्द — बर्द
१३३ १३ मर्मत — भमंत
१३३ १४ ममति — मर्मति
१३४ ३३ प्ररंभ — प्र+रम्
१३४ ३१ मरुड्डल — मरुंडल
१३४ ३४ अलस्य — अलक्ष्य
१३६ १५ +चिह्नि — ×चिह्नि
१३७ ९ जिहि — जिह
१३७ ३१ समथा — समथुला
१३८ १५ हथ्थ[४] — हथ्थ[५]
१३८ १६ चंद बरदिया को — चंद बरदिया की
१३९ १० <रध्ग्=रोकना,बंद करना — <रधा=रुकना

१३९ १६ उठकर...देखा — और उसकी श्रेष्ठ
१४० ५ पियो — अप्पियो
१४० २१ स्थितय — स्थित
१४१ १० संठ<संगठन — संठा<संस्थान=
१४३ २ किन — कित
१४३ ३).धी...हसि — (=लिने), धा. कत
१४४ ११ तेज ध्रुठ्ठे — तेजि ध्रुठ्ठे[२]
१४४ १५ वारा।[४] — वारा[३] ।
१४४ ३० (=अक्रोक) — (=अक्रोक)[२]
१४५ ९ [उनके...है — ये ताजी छूटने पर ऐसे
१४६ १ ५. — ४.
१४६ २३ 'फादे' या 'फद्दे' — 'फंदे' या 'फदै'
१४६ ३६ निनै — सिनै
१४७ ३६–३७ नंघ<लंघ — नघ<लंघ्
१४७ ३७ घुर — धुर
१४७ ३८ प्र+ईक्ष — प्र+ईक्ष्
१४८ १५ दक्खन — दक्खिन
१५० २८ अउरत — अउर
१५० ३० अँग — अग
१५१ ७ संस्मर् — सं+स्मृ
१५१ ३१ पंगुरा — पंगु राइ
१५४ ४ मोरी[२] अप्पियं — मोरि[३] अप्पियं[४]
१५५ २० २. — २
१५५ ३८ छडि ४.। ना. — छंडि। ३. ना.
१५६ अंतिम दीढ — दिट्ठ
१५७ ९ ४. मो. सुध, I. — ४. मो. सु, धा
१५७ २१ धा. जोगिन — ४. धा. जोगिन
१५७ २१ ४. धा. पुरह — ५. धा. पुरह
१५७ २५ टंग — घंग
१६३ २१ ५. — ४.
१६३ २५ नश — नश्
१६३ ३१ समाउ[१] तुरी जिम कुद्दर●[२] — समाउ तुरी जिम कुद्दर●
१६४ १८ छवं[२] — छवै?
१६५ ४ वजिता — वजिता[२]
१६५ अंतिम कथन्<कथा — <कथन्=कथा
१६६ २६ विउधवधन — विद्धधन
१७० ९ चहुवान — चहुवान को
१७० १३ आगस्त गहु — अगस्त गहु
१७० १५ <अस्तमायन — <अस्तमयन
१७० २० मनं — मनं[३]
१७० २३ घुरे — घुरे[१]
१७१ ४ [illegible]

७१ २१ मुर्णो — मुर्णो
७२ १० धा. अ. दहनविन — धा. दहनंविन
७२ १० पनंनविन — पननकिन
१७२ १७ सवाहिनि — सवाहिनि
१७२ २५ धर — घर
१७४ १६ रहियं [१] — रहियं [३]
१७४ २७ नहियं — नहियं [२]
१७५ ६ फनिंद* — फनिंद [२]
१७५ ३१ मृगा — मृगा
१७७ २२ धून घूमे — धून घूमे
१७७ २२ धो धुम्मे (धूमे--म.) — धोम धुम्मे (धूमे–म.)
१७७ ३१ उच्चेसुवा — उच्चेसवा
१७७ ३२ वहाँ — तहाँ
१७८ १० धर हिलय — धर हिलिय
१७८ २७ गित — गिनं
१७८ २९ अ. फ. ना. उ. स. — अ. फ. ना. म. उ. स.
१७९ ४ माचिनि अग — म. चिछनि अंग
१७९ ६ लगरि — लग्गी
१७९ ८ लग्गी पुहामी — धा. ◡ग्गो पुहामी
१७९ १५ जोगिंद्रे — जोगिंद्र
१७९ १६ कोइ सज्जइ — कोइ सज्जइ
१७९ २० वाजिन्न — वाजिन्न
१७९ ३२ सुगगा — सुमंगा
१८० ७ हयं — हयं
१८० ११ ना. बहु — ना. बहुं
१८० १३ अ. फ. उप्प पंड — अ. फ. लप्पम पंड
१८० १४ ना. ओपम पड — ना. ओपमा पंड
१८० २१ अच्छछरिम — अच्छरिम
१८० ३२ चाह–उ. स. — चाह–उ. स.
१८१ ९ १. अ.फ.म.उ.स. — १. अ.फ ना.म.उ.स.
१८१ १५ पनि — धनि
१८१ ३२ धा. दित्तवइ — धा. दिप्पइ
१८२ १७ धुरंगा [३] — धुरगा [२]
१८२ २० कंपइ* — कंपइ* [३]
१८२ २२ लप्पे+ [१] — लप्पं+ [१]
१८३ २० छप सह रंग — म. छप सह रंग
१८३ २४ अद्दूल — अद्दून
१८३ ३३ सिह नहि, नहि — सिह नहि,
१८४ १० पवनराइ — वनराइ
१८४ ३० मिधि–म. — मधि–म.
१८४ ३७ सर<वेग, बल — सर=वेग, बल
१८५ ८ मिलि — मिलि
१८५ १० (उठि–म.) — (चढि–म.)
१८६ १२ आप [१] विच्छुरे — आप विच्छुरे [१]
१८७ ३ मिंद — मिंद
१८७ १३ वासके — वामरे
१८७ ३० स. मुत्त मगि — ना. स. मुत्त मंगि
१८७ ४० संजुत्त — संधुत्त
१८८ २७ १. मरो दोइ — १. ना. मरो दोइ
१८८ ३१ उधरें — उप्परें
१८९ ४ रणी [१] । — रणी [१] । [२]
१८९ ७ बनेच — बनेचरं
१८९ १० धी [१] । — ओ [१] । [२]
१८९ १३ व्याग का [सा] — बाण व्याघ का [सा]
१९० ३ मो म. रणी, दोष में — मो. रणी दोष में
१९० १२ बिम्भारथी । लोट — बिम्भारथी । लोइ
१९० २३ स्वामि ना. — स्वामिना,
१९० २८ म. पवंग — अ. पवंग
१९१ ४-५ १. फ···नहीं है — [न होना चाहिए]
१९१ १४ लग्गं [३] — लग्गं [२]
१९३ २३ मो लग्गं — मो. लागं
१९३ २५ हेम — हेम
१९४ २ अ. संधि — म. संधि
१९४ ५ १. जुरै — १. ना. जुरै
१९४ १० मैं संत — मैमंत
१९४ २९ पंचियं — पंचियं
१९५ ४ मिले–ना. — मिळे–ना.
१९५ १० सुंमै — सुमै
१९५ १२ रोसं — दोसं
१९५ १८ 'जितो' — 'जिते'
१९५ २५ गजं — गर्वं
१९५ २६ 'रीस < हर्ष — रीस < सद्दश
१९६ १४ थिट्यो — थिट्यो
१९७ २ पह (= परउ) — पहू (= परउ)
१९७ २० कमधज्ज रहउ* — कमधज्ज [२] रहउ* [३]
१९७ २० आहुट्टउ* [२] — आहुट्टउ* [४]
१९७ २४ वोग — मोग
१९७ ३४ (= सुकवारह) — (= सुकवारह)
१९८ २ नीद न, घुट्यो — नीद न घुट्यो
१९८ ४-५ [पाठान्तर २, ३ — क्रमशः ३, २ होने चाहिए]
१९८ १५ जिमि — जिम
१९८ ३० सुव — सुव
१९९ २० मन्न दव्वु — मन दव्वु
१९९ २३ भव्वु — मव्वु
१९९ २७ नीरे — नीर
२०० १ ज्यो मह– , — ज्यो मेई–उ.

अशुद्ध	शुद्ध
०० ४ महनी	ग्रेहनी
०० २० जुह	जुद्द
२०९ २ अ. फ. रा.	अ. फ. ना.
२०९ ५ परिन	फ. परनि
२०९ २७ मरन 'मय'	'मरन मय'
२१० १ धा० साइंत	साइंतो
२१० १० < मदमत्तो	< मदमत्त
२१० ३५ रपिन	रपति
२११ २ रवर्ते	रवन्ते
२११ १० राह कह	राइ कह
२११ २८ तै रप्पयौ	तं रप्पौ
२१२ २ छदों	च्हो
२१२ ६ मरणि	मरणि
२१२ ८ धराधर	धराधर
२१२ १४ पंटिअर	पडिअर[४]
२१२ २६ अ प.	अ. फ.
२१२ २७ म.	म.
२१२ २९ स. क्रपन	स. क्रियन
२१२ ३० उ. स. दिस	अ. उ. स. दिस
२१२ ३४ मरन दो	मरन की
२१३ ४ कमधज्ज स.	कमधज स.
२१३ १२ नथ्थउ[४]	नथ्थउ[४]
२१३ १६ ना. अंठ	ना. अठं
२१३ २८ धा. लग्गयेव	धा. लग्गये
२१३ २९ कह्यो	दह्यो
२१३ ३० धरि	धरि
२१३ ३२ वैठें	बैठै
२१४ २ सूरिया	सूरिमा
२१४ २ धा. उ. स. पिक्ख	धा. उ. स. पिक्ख
२१४ ४ बर्थ्य	बर्थ
२१४ ५ परनि राई	परनि राइ
२१४ १० कवित्तनो	कवित्तनौ
२१४ २० संश स	मशोचित
२१४ २२ मिटयौग	मिटयौ।
२१४ २२ र. म. उ.।	र. अ. ण।
२१४ २३ दहनो	कहनौ
२१४ २४ गरणो	गहणौ
२१४ २५ 'गय नहीं है	'गय' नहीं है
२१५ ३ म. उ. स. सिनह	म. उ. स. सितम
२१५ ६ म. उ. स. परनयं	म. उ. म. पुरंद रैन
२१५ ७ (=ज़ोगिनि >	(=जोगिनि)
२१५ ७ (जोगिनि-धा.), ना. पुरपति,	(जोगिणि-धा.) पुरपति, ना.
२१५ ८ ज़ुगिनि पति मर	जुग्गिनि पति भ
२१५ ८ मो ना. पारसौ	मो. ना. पारस
२१५ १६ वनं	वनं[४]
२१५ १९ परी३	परी[२]
२१६ ४ डुठक	ठडुक
२१६ ३२ उ. स. कटिकंति	[न होना चाहि
२२५ ३ दीठि	दीठि[४]
२२५ ९ गया	गयौ
२२५ १२ ना. मा उ. स	ना. म. उ. स.
२२५ १६ उप्परि	उप्परि[६]
२२६ १० फ. विरिढा जयवर	फ बिटिया ज प
२२६ १२ जय सिध	जय सिघ
२२६ २७ म. न रिठवर	म. नरिंद वर
२२६ २८ धा. निहरु	धा. निडरु
२२६ २९ ना. द ज़ुझि गय	ना. जुज्झि गय
२२६ ३२ पग मय	पग मय
२२८ ३२ <ज़ुद्	<नुद्
२२९ १६ धा अप्पहो	धा. अप्पहो
२२९ १६ म. उ. स.	म. उ. स.
२२९ २२ बह मारे	यह मारे
२३० १२ मो रफि	मो. रंकि
२३१ ६ स्वर्गं क	स्वर्गं की
२३१ २० हीनु (> दीनव)	दीनु (< दीनउ)
२३१ २३ [बढ़ाइए ! ३. धा. अच्छरिउ।]	
२३१ ३५ < स्मरथ्	< रघ्
२३१ ३६ < अप्सरा	< अप्सरस्=अप्सरा
२३२ अंतिम छप्पय	उ. मुक्त
२३३ ११ वन (<छत पति परि।	वन (<छत) पति पर
२३४ २० अ.फ.जसहीन न गयउ	अ.फ. जसहीन न
२३५ २ अमग्ग	अमग्ग
२३५ २ < वल्य्	वल्
२३५ १२ छम. वीटि	उ. स. वीटि
२३५ १३ विट<वेष्टिन	विट<वेष्टय्=वेष्टन करन
२३५ ३० राइरूप	राइ रूप
२३६ ६ जव (कन-फ.)	जय (वज-फ.)
२३७ १ तुफिग०	तुफिग०[४]
२३७ २२ अमावलि	अंतावलि
२३७ २९ धम	घन
२३७ ३१ धुन्य	धुन्यौ
२३८ ९ ग्रुमिल	ग्रुमेल
२३८ १२ बिह्लीपरहि	दिल्लीय रहि
२३८ २५ घर	धर
२३९ ११ रपि (=रपइ)	मो. रवि (=रपइ

टट्टर	२५७ ३८ (४) उसके	(३) उसके
निठ्ठर	२५८ ८ निरस्त	निरत्त
मंचोव	२५८ १८ कसे	के से
पुर	२५८ २० अवनो	अवर्णो
गुरु	२५९ २ सुचंम	सुचंमरे
प्रगटित	२५९ २ या सयोग	मो. संयोग
रान्न धृति	२५९ २ (भा. पाठ)	[न होना चाहिए]
सय	२५९ ८ लध्यन	लध्यनं
म. ति मनइ	२५९ १३ धा. परसत	२. धा. परसत
८पक्षिन्	२५९ ३७ कुद	कुड
विराजहि	२६० १९ अ. बंकसी	अ. फ. बकसी
दें	२६० २८ ध.	फ.
ना. बधौ गुत	२६० २९ अलितम	अलिलस
१२.६३०	२६० ३७ तस	तसु
सा³	२६० ३९ भौसचौ-फ.	सोसयौ-फ.
अ.फ. यक्तगा। २. धा.	२६१ ४ अविलावि	अविलंवि
पद्मामि ते⁴	२६१ ११ सच्छायी	सुच्छयां
मुगना मुक्तामि³	२६१ १५ ययो	संथयत
धा.पत्तेपत्त	२६१ १६ सठिलया	सुठिलया
न म.मेंह। २.धा. मुगता	२६२ ८ अ मुगवे	अ. मुग्गवे, फ. मुग्गवे
सज्जा	२६३ ९ रा.	सा.
निष्प	२६४ ११-१२ पयलगिग,	पय लग्गिय,
म. बारणी च	२६४ २० रेतु	रेतु॰
बधारवा	२६४ २१ आमरनेन	आमरनेन⁴
४.	२६४ २७ तु॰	तुल॰
अ. कलह कियउ	२६४ ३२ सा.	स.
धा. यामिनि	२६५ ३ कहिय	कहिय⁴
जानहि॰²	२६६ ११-आवलि॰²	आउरि॰²
वरि⁴	२६६ २५ आउरि<अवली	आउरि<आवलि-अवली
कामदेव	२६६ ३० मीर°	मीर॰
धा. पर।	२६७ २९ < असंभाव्य	असंभूत ?
निवरय करु	२६८ १३ धा. कइ	धा. कहे
४. मो.मोर्टु (=मोहउ),	२६९ ६ निसि	स. निसि
धा. मोहो	२६९ ७ दिन सो	धा. दिन सो
अ. फ. मिहि	२६९ ८ २. मो.	२. धा. मो
नत्थी	२६९ ११ २. मो धा. धर,	२. मो धर, धा.'
'समी'	२६९ १४ २. धा. दसु	२. धा. असु
रहा ता है	२६९ १४ २. अ फ. इस जस;	२. धा.अ.फ. इस जसु
ल (टाकोरे खा रहा) है	२६९ १४-१५ म. इस तउ	मो. इस तह
फ. सिव	२७० ९ सुवनह	सुवनह
जंघनं¹	२७० १८ उप्पयउ॰	उप्पइउ॰⁴
नासिका	२७१ ६ जप	जंपे
श्रवन²	२७१ ९ दुइ	तुइ

अशुद्ध	शुद्ध
२७१ २३ अधि	प्रति
२७१ २७ किय	किय४
२७२ ७ १. सुनिवि	१. धा. सुनिवि
२७३ ८ धा. स. मुलिय	ना. धा. सा. मुलिय
२७५ ८ मो. संमुह	मो. संमह
२७६ १३ सरताण	सुरताण
२७७ १७ ३. मान	३. प. पान
२७७ २६ फ. बंधिवि	अ. बंधिवि
२७७ अंतिम तिहि	तिह
२७९ ७ सन्निवार	सन्निवार[१]
२८० २४ मुकवि	मुकवि
२८२ २९ (१८)	३(१८)
२८४ ८ लग्गे	लग्गं
२८४ १२ अ. फ. तुट्टे	अ. फ. तुट्टै
२८४ ३३ = चढ्ढे	= चढै
२८६ ९ उवलय्	उवल्
२८७ १ मो. धा. स.	४. मो. धा. स.
२८७ २१ वाहत	वाहत[६]
२८८ १९ पर	पर[६]
२८९ १४ जप	जंपै
२८९ १८ गम्वहु	गव्वहु
२९१ १ (परिग्रु–फ.)	(परिग्रु–फ.)
२९१ ५ मो. गजनेव रह	३. मो. गजनेव रह
२९१ ५ अ. फ.	अ. फ. ना.
२९२ ७ मुग्घ<मुग्ध	मुग्ध<मुग्ध
२९२ ९ पीर	पीर[४]
२९३ १६ 'गयो या 'गयो'	'गयो' या 'गयो'
२९४ १४ १.	२.
२९४ १९ मो. बापंडधन, पापंड धन	मो. बापड धन, अ. पापंड धन
२९४ २१ १. रहि	१. मो. रहि
२९५ ३ गुदरह०	गुदरह०[३]
२९५ ८ [सुल्तान]	[सुल्तान के
२९५ २५ धा. पुनि	धा. सुनि
२९५ ३१ परदार	परदार
२९६ २० अंप्पयी	अप्पणी
२९७ २० सगे	सबगे
२९७ २७ हा.	धा.
२९८ ६ अहंणल	अहणंल[४]
२९८ १८ पहर	पहुर
२९९ ३ (१४)	[२](१४)
२९९ ११ रुकयउ०	रुकयउ०[१]
३०० ११ फरि	करि
३०० १४ धा. नजरि	धा. निजरि
३०० १७ मानहु	सोभ मानहु
३०० २० अ. उतसु	अ. उतसु
३०० २९ सुरियतहि	सुरिय नहि
३०० ३४ अ. सुध दनुज	अ. गुरु दनु
३०१ २ सजय	सज्यो
३०१ ५ सदेश	सुदेश
३०१ ६ सरंग	छरग
३०१ २५ है	द्दै
३०१ २६ सथान	सुथान
३०१ २८ उत्+श्र.म्	उत्+श्वास
३०२ २५ रंधि	रंधि
३०२ २९ तेहि	तेहि३
३०३ ३४ पारक्ठि	पालँ
३०४ २२ गहक	गल
३०४ अंतिम वर+ङना	वर+अङ्गना
३०५ ११ इम अप्पे स	इमि अप्पे स
३०५ अंतिम बांन	पांन
३०६ ११ =वहराग	=वइराग
३०६ १३ ना. सुर	ना. सुर
३०७ ३ पुछउयह	पुच्छियह
३०७ ११ सध	सप[१]
३०७ २१ जाय (<जाय)	जाव (<जाय
३०९ १७ मिलत न,	मिल्त न,
३११ ५ हिया	हियो
३११ २८ कहिहौं–फ.	परिहौं–फ.
३११ २९ सहा	सहो
३१३ ४ २. क. छोर	२. फ. छोर
३१४ १० परिस्थितिओं	परिस्थितियों
३१५ ११ धा. संमरे रा	धा. संमरे रा
३१६ ३० २. म धुनिहि न	२. मो. धुनि
३१६ ३१ ना. नितत्तत्र	ना. मितत्र
३१७ २० तमने	सुमने
३१७ २५ मो. समित	मो. सुमित
३१७ २८ अबोधन	प्रबोधन
३१९ ७,८ पिल	पिल्लै
३१९ ९ सुरह	सुपह
३२० ७ अ. यति	अ. इयति
३२० अंतम	[न होनी चाहिए]